अप्रैल १९६३

भारतवर्ष में जन्म लेने के लिये पहले ऋषि, मुनि, देव, किन्नर आदि तरसते थे। स्वयं भगवान भी ऐसे अवसरों को अपना सौभाग्य मानते थे। पर आज दानव तरसते हैं। ऐसा न कहिये दानवराज में सौन्दर्य, कला, धर्म, योग, ज्ञान, प्रेम आदि नहीं है। जो परखना चाहते हैं वे शहर, बाजार, कालेज, कचहरी, देवमन्दिर नेता मन्दिर, धूर्त मन्दिर आदि तीर्थ स्थानों की ओर नजर दौड़ायें। साहित्यकार साधु, कवि, कलाकार, आदि की ओर भी जिज्ञासा भरी दृष्टि से नेत्र फैला-फैला-कर देखें। फिर भी जिन्हें कुछ नजर नहीं आता वे हिन्दी के पत्र-पत्रिकायें पढ़ कर देखें। सुप्रसिद्ध धर्मयुग साप्ताहिक के प्रत्येक अङ्क में कम से कम तीस-पैंतीस चित्र स्त्री रूप के ऐसे-ऐसे रंग-विरंगे मिलेंगे कि गरीब मर्दों के होश ही उड़ जायेंगे। उसे तो भारत सरकार पुरस्कार देगी ही और वह सर्वत्र गरमा-गरम बिकेगा भी। ब्लिट्ज सम्पादक जैसे देश-काल-परिस्थिति जानकर कलम उठाने वाला एक शेर-दिल सम्पादक आज दुर्लभ है समूचे विश्व में। उसके प्रत्येक अङ्क में किसी न किसी कामिनी की किसी न किसी कोने से पूरी कला की ही झांकी दर्शा देंगे। और ब्लिट्ज को ताजा आमलेट के जैसे मिनिट में कला प्रेमी भारतीय पुरुष समाज (लड़के, युवक, बयस्क और बूढ़े सभी) समान रूप से लूट लेंगे ही। पर बेचारी प्राच्य भारती, हाय हाय !! एक सुप्रसिद्ध पुस्तक विक्रेता ने उस मूर्ख प्राच्य भारती सम्पादक को समझाया था, "सजाइये साहब पत्रिका को ! भीतर मैल भी रहे तो कोई बात नहीं, कला दर्शाइये पृष्ठ पृष्ठ, कला कुमारियां की बात सुनाइये पंक्ति पंक्ति, बाहर से टायलेट, और नायलिन, मेकअप और चुस्ती दुरुस्त रखिये। देखियेगा एक ही दिन में इन्द्र भी पीछे लग जायगा। वैभव और यश अलग।" पर उस अभागे सम्पादक को अकल रहे तब तो ! किस्मत है जी, मरो भूख और सहो लात ! जो जमाना नहीं समझता उसकी ऐसी ही गति होती है........"

हिन्दी निर्माण परिषद्

मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर

बिहार

हिन्दी निर्माण परिषद् की एकांकी प्रतियोगिता

का फल

इस दिसम्बर में अन्त हुई तिमाही की एकांकी प्रतियोगिता के विजेताओं के नाम और पते निम्नलिखित हैं।

(१) अबीर पारसनाथ सिंह, छपरा
(२) डा० रामचरण महेन्द्र, नयापुरा, कोटा, राजस्थान।
(३) प्रो० सूर्यकांत 'विमल' जे० आर० एस० कालेज जमालपुर।
(४) बी० एल० राजोतिया 'विकल' पोद्दार कालेज, नवलगढ़, राजस्थान
(५) शिवराज, जिला कांग्रेस कमेटी, अलीगढ़, यू० पी०

अगली बार निबंध प्रतियोगिता; पांच-पांच पुरस्कारों की व्यवस्था

प्रथम पुरस्कार ५१)
द्वितीय पु० ४१) —तृतीय पु० ३१)
चतुर्थ पु० २१) —पंचम पु० ११)

हरिवल्लभ नारायण पारितोषिक

का चौथा आयोजन

प्रथम जनवरी से प्रारम्भ हुई वर्ष की पहली तिमाही के लिये इस परिषद् ने निबंध प्रतियोगिता रखी है। विषय रहेगा—'भारत-चीन सीमा-समस्या का समाधान'। निबंधकार अपनी रचना को ३००० शब्दों में ही सीमित रखें। इस प्रतियोगिता में भाग लेने वाले व्यक्तियों को योग्यता क्रम के अनुसार ५१) ४१, ३१, २१,११ रुपये के पांच पुरस्कार प्रदान करने की व्यवस्था है। निबंध मौलिक, अप्रकाशित तथा अप्रसारित होना चाहिए। अनूदित रचना नहीं ली जायगी। पुरस्कृत रचनाएँ प्राच्य भारती मासिक पत्रिका में सुविधानुसार प्रकाशित की जायंगी। ३० मार्च तक निम्न पते पर निबंध पहुंच जाना चाहिए। पुरस्कार की राशि पुरस्कृत रचनाकार को तुरन्त ही भेज दी जायगी।

मंत्री,
हिन्दी निर्माण परिषद्

पो०— मंदार विद्यापीठ,
जि०—भागलपुर, बिहार

प्राच्य भारती

(हिन्दी निर्माण परिषद् की मासिक मुख पत्रिका)
बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत
सम्पादक
वार्षिक चन्दा ५) • आनन्द शंकर माधवन • प्रतिअंक ५० नं० पै

वर्ष ४] अप्रैल—१९६३ [अंक

विषय-सूची

"भ्रमरा....नीलकमल ..मुरझाये..."

किसी कवि ने एक बार संसार भर के भ्रमरों के नाम संवाद भेजा था -
मरा ..नीलकमल ..मुसकाये ....'' संवाद पाकर दुनिया के कोने कोने से
र लोग दौड़े सरोवर की ओर। जिसमें अंग्रेज भ्रमर, नीग्रो भ्रमर, साम्यवादी भ्रमर,
सी भ्रमर, हिन्दू भ्रमर, मुसलमान भ्रमर, ज्ञानी भ्रमर, विज्ञानी भ्रमर, साधु
, लंपट भ्रमर, मूर्ख भ्रमर, चोर भ्रमर, राजा भ्रमर, रंक भ्रमर, बच्चा भ्रमर,
भ्रमर, औरत भ्रमर, मर्द भ्रमर; सभी प्रकार के, सभी गुण के, सभी तबके के
द थे। सभी ने अपनी अपनी काबिलियत, ग्रहणशीलता और आवश्यकता के
बार उन्मत्त हो सौन्दर्य-भोग किया, उसके भीतर स्थित मधुकलश को लूटा
इस तरह पृथ्वी के इस देवदुर्लभ अमृतकुंभ का यथेष्ट आस्वादन किया।
कमलिनी ने कुछ नहीं कहा, कुछ भी प्रतिवाद नहीं किया। अपने ऊपर अचानक
इस अत्याचार बलात्कार और बहुभोग को उसने चुपचाप बर्दाश्त किया।
में थकी-मान्दी आहत और निर्जीव हो वह व्यभिचरित विष्णुकन्या मुरझा
गिर गयी। पृथ्वी माता ने एक दीर्घ सांस लेते हुए उसे अपनी कोख में ले ली।
कारोबार सबों की नजर के सामने गुजरा और बहुत ही अल्प काल में।
लोग भी सब जैसे जुटे थे वैसे बिदा भी हो गये। प्राच्य भारती सम्पादक
क् हो शून्य की ओर दृष्टिपात किये सोचता रहा — 'हे भगवान, मेरा कवि कहां
को उस सुकुमारी कमलिनी का भीतरी आर्तनाद सुनायी दिया, जिनको उस असहाय
पराध कुसुम कन्या की अश्रुधारा दिखायी दी! हे नागराज कैलासपति, और
न मिले तो न सही, कम से कम हमें अपने व्यासदेव को ही लौटा दें जो
रे इस सूखे वन प्रदेश में एकाएक और अकारण प्रकट हुए इस माधवी पुष्प का
भाव-रहस्य बता सकें, जो हमारे इस गन्दे और दीर्घकाल से उपेक्षित पड़े सरो

बर में बगैर बुलाये प्रकट हुई इस साध्वी कमलिनी की सौन्दर्य-गरिमा का व्याख्या कर सकें।

कवि कैसे प्रकट होगा? राम सत्य था। तभी वाल्मीकी संभव हुआ। कृष्ण यु द्रौपदी आदि सत्य थी। तभी वेदव्यास संभव हुआ। सीता सत्य थी। तभ संभव हो सका। राधा सत्य थी। तभी कृष्ण संभव हो सका। राम के संसार में एक ही स्त्री थी। बाकी सभी मां बहनें थीं, पूज्य भी। तभी राम को सीता के प्रति इतनी निष्ठा और प्रेम कृष्ण अच्युत थे—यानी जिनका वीर्य कभी च्युत नहीं। तभी वे सभी स्त्रियों के समान प्रेम हासिल कर सके। हम-आप मौका पाने पर किसी भी महिला को पत्नी पद पर आ सकते हैं, और इसे बहादुरी समझेंगे। इस लिये हम राम नहीं हो स हम कहां से वाल्मीकि और वेदव्यास को पायेंगे? जैसे हम वैसे हमारे कवि संसार में आज भ्रमर-न्याय है।

काश, पुष्पन्याय होता! पुष्प को यह विश्वास नहीं था कि उसका गल जायगा। उसने एक संभव मानवव्यवस्था का परिचय देना चाहा था। उस का अग्रिम प्रतिनिधि बनकर आया था। मगर उसका संकेत कोई ग्रहण न सका। सांप बिच्छुओं और बाघ भालुओं के बीच क्रान्तदर्शी कहां से आने से भी क्या प्रयोजन सिद्ध करता? आस्मान के अनगिनत तारों से संभव है यह पृथ्वी के श्वान-समुदाय क्या जानेगा? इसलिये गुलाब बे हुआ। क्यों कि वह अनामंत्रित था। अनामंत्रितों पर पशु समाज में जो वह उन पर भी बीता। सब मिलाकर हमें यही कहना है कि परमेश्वर अनुपम बागीन की शोभा इससे बहुत कुछ घट गयी है। बगान अब लगता है। चारों ओर से भयंकर भयंकर तूफान उठ खड़े होने की भी आशंका दे रही है। तरुलताओं के अभाव रहने से नन्दन कानन भी रेगिस्था जाता। ऐसे ऐसे विषम काल में ही राक्षस शासन जोर पकड़ता है। है ये भ्रमर सब किस ओर गये, कहां छिपे! स्थिति को नाजुक और पूर्ण सन्नाटा और गंभीरता देख प्राच्य भारती संपादक को कवि न होते हु पुष्प पर मृत्यु गीत सुनाने का मन कर रहा—"भ्रमरा··· नीलकमल ...मुरझाये

और मैं इस श्मशान घाट पर खड़ा हूँ। अन्त-यात्रा के अवसर पर अ ने जो भी मेहरवान आये सभी कब न बिदा हुए। अब इस शून्य नीरव कोई आकृष्ट नहीं। मृत पुष्प से भ्रमर को क्या रस? मृत सुन्दरी को कौन रेगा? हाय रे सौन्दर्य भोग करने वाले! मधुकलश लूटने वाले! अमृत कुंभ ले, तुम्हें स्वस्थ सुन्दर जीवित स्त्री शरीर से ही तात्पर्य है! उसी पर

ा। उर्वशी पर ही काव्यरचना संभव है। उस वृद्ध अनसूया या अह- पर क्यों नहीं कलम चलायी जाती? उस वेश्या गली की लाचार देवकन्या पर नहीं कलम उठा लेते? क्यों खेत पर काम करने वाली उस भूखी अर्ध संथाल कन्या पर काव्य रचना नहीं हो रही? क्यों मृत अथवा वृद्धा, अशक्ता, ा, अपमानिता, गणिका आदि के लिये कोई रोमियो प्रकट नहीं होता? उन पर काव्यरचना नहीं हो रही? साहब, हम आप को एक दम समझ गये हैं। हमें यही कहना है कि परमेश्वर भी आपको बिलकुल समझ गये हैं और ा भी। साहित्य-साधना अर्थ-साक्षात्कार या मूर्ख समाज में यशोवृद्धि करने लिये नहीं। वह परमेश्वर साक्षात्कार और ज्ञानियों के बीच सम्मान प्राप्ति लिये है।

आज की भारतीय विषमता या दुरूह समस्या यह है कि महाभारत लड़े गये या लड़े जा रहे हैं। कृष्ण युधिष्ठिर आदि जो प्रक थे, एक एक करके सब बिदा हो गये। अब सिर्फ जन्मेजय का ज्ञ ही बाकी रह गया। मगर अब तक भी व्यासदेव नहीं प्रकट हुए। दिग दिग आज गूंज रहा—हे कृष्ण द्वैपायन, हे पराशर नन्दन, गणेश को साथ लिये एक और बैठ जा। हम जन्मेजय के बाद से नेहरू तक की भारत-कथा सिलसिला रूप में सुनना चाहते हैं। आ जा कवि फिर इस देश में एक बार और प्रकट जा। तुम्हारे अलावा कोई भी इस मर्मभेदी इतिवृत्त को लिपि रूप देते हुए रहस्य भरी गुत्थियों की आध्यात्मिक व्याख्या करते हुए भविष्य भारत को ैतिक पथ पर आरूढ़ कराने क पुण्य प्रयास नहीं कर सकेगा।

शाम को पिंजड़े में वापस पहुँच दोनों पति-पत्नी पंछी सोचते—सुबह होते हम सूर्य लोक की ओर उड़ चलेंगे। यह दुनिया अब रहने लायक नहीं क्योंकि ानव भी अब उड़ने लगे हैं. हम से भी तेज रफ्तार से, हम से भी ऊंचे स्तर पर। मगर ह होते ही जठराग्नि उन्हें इतनी परेशान कर देती है कि झपटने ही लगते क्षुद्र भिखमंगे जैसे दुनिया की ओर बेइज्जत होने, आत्म सम्मान खोने। मनसूबों वही जिन्दगी कट जाती है बेचारों की।

आकाश की ऊंचाई से अज्ञात दिशा को ओर जाने वाले उस बादल समूह को व रेगिस्थान ललचा—हाय, हम पर भी कुछ नीर वर्षा होती! कैसे रेगिस्थान में रेदियां जन्मेगी, पुष्प खिलेगा? समस्या आज यही है। राजस्थान की मरुभूमि ानव-पराक्रम (!) का परिणाम रही है। प्रत्येक रेगिस्थान अलकापुरी बन सकता। प्रत्येक नरक स्वर्ग बन सकता है। प्रत्येक पापी देवता बन सकता है। यह अद्भ ान बनाने के लिये ही कमलिनी खिली थी। पशु मानव, देव मानव के रूप

परिणत हुए बगैर समस्यायें सुलझ नहीं सकतीं। दण्ड विधान या शासन यंत्र यह कार्य सम्पन्न नहीं होने का।

राग गायन बार बार सुनने से राग मर्मज्ञता मिलती है। बागान के बीच से पुष्प में रस आता। सत्पुरुषों के बीच रहने से उनके जैसे बनने की अभि जोर पकड़ती है। पूजा पूज्य के अनुरूप बनने की मानसिक चेष्टा और ब क्रिया को कहते हैं। विवेक शक्ति, धर्माधर्म बोध और ज्ञानानुशीलन ये ही सब तो ब चाहे वह व्यक्ति का हो या राष्ट्र का। ज्ञान-विज्ञान में हम अग्रगण्य नहीं हो सके थे। लिये कुमुदिनी जब आधी रात को सरोवर में खिली और हमलोगों की प्रतीक्षा रही थी और प्रेम साक्षात्कार के लिये तैयार खड़ी थी तो हम सोये ही पड़े गये। नींद, समस्या समाधान के लिये न उपाय बताता न अवसर ही प्रदान कर सतत विकासशील जागरूकता ही मानव के सामने वह देव-मार्ग प्रशस्त कर स जिसके दोनों ओर ही पुष्प लतायें नजर आयेंगी। इस लिये हम ऐसा करें कि इस रेगिस्थान में लाख-लाख नदियां बहें, लाख-लाख फूल खिलें, ल लाख कोयल नित-नित नव-नव वसन्तबहार का आलाप करें।

जानवरों को क्या रस रहेगा पुष्प में? संस्कृत पंडित क्या जानेगा साहित्य में क्या है। इसलिये आपकी नासमझी किसी वस्तु या व्यवस्था हीनता का परिचायक नहीं है। भगवान रामकृष्ण ने कहा था—दिन को आ में तारे नजर नहीं आते। इसका यह अर्थ नहीं आसमान में तारे हीं नहीं किसी बंगाली लेखक ने कहा था—चैतन्य देव को सिर्फ साढे तीन आदमियों ने ही स था। हम आप में भी कौन किसे समझते हैं? कौन पति अपने पत्नी को ही स का या पत्नी अपने पति को ही समझने का प्रयास करती? हम आप में प्र के भीतर जो भाव-विचारों का उदय-अस्त होता रहता है उसके संचालक स्थापक कौन है? कौन जाने? हम लोगों के इस शरीर रूपी "स्पुतनिक" वैज्ञानिक ने छोड़ा, कौन जाने? और किन किन प्रकार के अद्‌भुत अद्‌भुत इस शरीर-यान के ही भीतर स्थापित हैं और वे कब तक क्रियाशील किस कार्य के लिये क्रियाशील रहेंगे, कौन जाने? यह सब जानने का कौन करता? कविता लिखते! पुस्तकें रचते! शासन यंत्र घुमाते! तत्वज्ञान झाड़ते! हैं! बजाते हैं! क्या जानते हैं, महाशय जी, आप? बताइये राजेन्द्र कौन थे किस अज्ञातलोक से आये थे क्यों आये थे और किस अ दुनिया की ओर चले गये और क्यों चले गये? कुछ समझ में आ रहा है कविता लिखना।

प्राच्य भारती के युद्ध विशेषांक के सम्पादकीय पढ़कर एक सरकारी औ

कह रहे थे — ये ... हैं। जब भक्ति का युग था तो भक्ति गीत लिखे। जब भोग का युग आया तो भोग पर लिखे। जब लड़ाई का युग था उस पर लिखे। जब खिलाफत आन्दोलन छिड़ा तो उस पर लिखा, जब खादी आया तो उस पर लिखा, हरिजनोद्धार और ग्रामोद्योग का नारा शुरू हुआ तो और दौड़े। अब चीन बन्दूक लेकर आया तो सब कलम लेकर नेफा होकर की ओर दौड़े घर में बैठे बैठे ही—कल्पना जगत् के भावयान द्वारा! पर भी अपनी साधना और परिश्रम के बल पर यह न पता चला सका कि कौन थे और क्यों आये थे। किसी महापुरुष के या किसी महान व्यवस्था अनुयायी अनुगमन या अधीनस्थ रहने का यही तात्पर्य है कि उसके को समझना, अनुभव करना, अनुशीलन करना न कि उनकी मूर्तियां करना, जयन्तियां मनाना या उन पर पुस्तकें लिखना। बनना ही सबसे बड़ा अभिनन्दन है। राम जैसे बनना ही राम की सबसे बड़ी है। मन्दिरें खड़ा करना परमेश्वर को धोखा देना है उनका शोषण करना है। आफत के अड्डे भी हैं। इससे लाभ नहीं, हानि ही हाथ लगनी है। जय बोलना कोई साधना भी नहीं, न उससे कुछ लाभ ही। जो राम को भूल सकते हैं वह राजेन्द्र बाबू को कितने दिन तक याद रखेंगे? वह पारिजात पुष्प! क्या हम उनके लायक थे? हैं?

पंडावाद

भारतवर्ष में आजकल पण्डावाद का ही जोर है। साम्यवाद, समाजवाद, सर्वोद व्यर्थवाद, पूंजीवाद, स्वार्थवाद, भतीजावाद, पैरवीवाद, धूर्तवाद' जिद्दवाद, द, शुद्ध स्वछन्द गुण्डावाद आदि सब प्रकार के वादों से आगे बढ़ कर पंडावाद को ही देश ने अपनाया है। धर्म स्थानों में ब्राह्मण नामधारी ही पंडे करते हैं। पर राजनीतिक नेताओं के आवास पर और मंत्रियों की कोठी पर सी पंडे और अफसर पंडे भी धन्धे कर लेते हैं। इन महाप्रभुओं के आवासों को मन्दिर ही कहा जाना चाहिये,—नेता-मन्दिर, मंत्री मन्दिर! ये पंडे लोग प्रकार के और सब करम के होते हैं, कोई जरूरी नहीं ब्राह्मण नामधारी ही बगैर इन लोगों की मेहरबानी के भक्तवृन्द और दुखी लोग दर्शन-

सुख के लिये और सांत्वना प्राप्ति के लिये भीतर प्रवेश नहीं कर सकते। एक बार पं
जवाहर लाल नेहरू के इलाहाबादवाला आनन्दभवन देखने यह लेखक गय
करीब आठ दस बरस पहले की बात है। फाटक पर दो चार आदमी को देख
कहा—आनन्द-भवन देखने आया। किस कोठरी में मोतीलालजी रहते थे? कि
कोठरी में जवाहरलाल जी खेलते थे और कहां इन्दिराजी भोजन करती थ
उन्होंने यत्र तत्र इशारे से बताते हुए कहा—बाहर ही से देख संतोष कर लीजियेग
मैं फाटक ही पर खड़ा खड़ा आंखों से ही सब कुछ अध्ययन कर, संतोष प्राप्त क
जाने को हुआ, तो उन लोगों में से एक ने कहा—कुछ पैसा दीजिये न साहब! बोलने व
मध्यवयस्क था! मैंने कहा—साहब, जरूर हनुमान करके पेट पोसिये। इस आधु
पंडागिरी से वही बेहतर है। उन्होंने कहा—ओ, समझ गया। आप जरूर कांग्रे
नहीं। व्यर्थ ही खादी पहने रहते हैं। जरूर रंगे सियार हैं! भीतर के सा
वादी हैं।" मैंने कहा—साहब मामूली गुरु मात्र हूँ। वे कहने लगे—बन्धु, गुरु को
हिम्मत कहां? आप जरूर कोई पुराने खिलाड़ी हैं!

मुझे घूमने फिरने में बड़ा रस रहता है। जब सम्पादन कार्य से मन ऊब ज
है तो उठकर किसी ओर चल देता हूँ। जहां भी जाता हूँ वहां के देवस्थ
में अवश्य जाता हूँ—चाहे वे गिरजाघर हों, जैन मन्दिर हों, मसजिद हों या
मन्दिर! एक बार एक मशहूर मसजिद देखने उसके दरवाजे पर पहुँचा तो एक ग
मौलवी ने जो फाटक पर बैठा न जाने क्या सोच रहा था, मुझे देख पूछा
हिन्दू हैं क्या? मैंने कहा—हिन्दू नहीं? लामजहब हूँ। तब उन्होंने उठकर खड़े
हुए कहा—जाइये साहब! लामजहबों का सड़क ही स्थान है। यहां क्या दे
चला आ रहा है? पर मौलवी मेरी आंखों को रोक नहीं सके। मैं वहां
नजदीक ही के एक जैन मन्दिर देखने गया। वहां के पुजारी एक मैथिल ब्रा
थे। मैंने एक जैन से पूछा—ऐसा क्यों? आप जानते हैं अतीत युग में ब्रा
जैन देवस्थानों को कितना बुरा कहा करते थे। आज वे यहां के पुजारी! अद्भुत विपरी
है! उन्होंने झेंपते हुए उत्तर दिया ब्राह्मण पुजारी सस्ते मिलते हैं इसलिये
पकड़ते हैं। मैंने भीतर प्रवेश करके उस ब्राह्मण पुजारी से पूछा—पंडित
आप तो जैन हैं नहीं। यहां इस गैर हिन्दू मन्दिर में बैठ क्या यह नापाक काम
रहे हैं? उन्होंने जरा भी विचलित हुए बगैर उत्तर दिया—इसमें हानि ही
है? भाई यह तो मेरा पेशा है। पूजा कराने कहीं भी बुलावे तो मैं जाऊंगा। मग
को और जनता को ले जाने की किसी भी धार्मिक क्रिया में हम पुरोहित काम कर स
हैं! और यही तो हमारी जीविका भी!" मैंने कहा—तब तो मस्जिद में भी जाइ
मुसलमानों को नमाज भी पढ़वाइये। उन्हें मौलवी बड़े महंगे मिलते होंगे। गिर

मैं भी जाइये। वहां पादरी और फादर लग भी बड़े महँगे हैं।" उन्होंने हँसते हुए ईषत् झेंपते हुए कहा—मेरे ख्याल में इसमें भी कोई हर्ज नहीं होना चाहिये कहा—साधु साधु,! तारीफ है इस उदारता को? कोशिश की जाय? कहीं मस्जिद कोई नौकरी बेहतर मिल जाय!

आजकल के प्रत्येक अनुष्ठान में पण्डे आवश्यक हैं। अन्यथा काम ही नहीं चल अंग्रेजी के पंडे, हिन्दी के पंडे, खादी के पंडे, कोर्ट कचहरी के पंडे, वेश्याओं पंडे, साधुओं के पंडे, अखबारों के पण्डे कवि और गायकों के पन्डे बस कुछ पूछिये मैं चाहता हूँ इस फिहरिस्त को पाठक ही पूरा कर लें।

देश स्वाधीन होते ही बंगाली मद्रासी को कौन पूछे, यहां जो अंग्रेज,चीनी आदि गये थे वे भी कहने लग गये थे—अब हिन्दी सीखना ही पड़ेगा, नहीं तो हिन्दु छोड़ हमें जाना पड़ जा सकता है। देश के किसी ओर भी जाओ हिन्दी के पुजारी सर्वत्र आते थे—हिन्दी के पण्डे उस समय कहीं भी देखने को नहीं मिलते थे। सभी पुजारी मगर आज तमाम हिन्दी के पण्डे ही नजर आते हैं और अंग्रेजी के पण्डे भी बहुत ताद त्र दिखायी दे रहे हैं उन दोनों पण्डों के फौज में यत्र तत्र फसाद और युद्ध हो जाते हैं। मद्रासी, बंगाली और कुछ बिहार, यू० पी० के लोग भी खुलेआम लगे हैं, बगैर अंग्रेजी के हम सूने ही रह जायेंगे। सर्वत्र फिर अंग्रेजी वापस जमाने पुण्य प्रयास हो रहा है। भारतीय स्वतन्त्रता के पन्द्रह बरस के इतिहास का यह चमत्कारपूर्ण सफलता है। ठहरिये, सफलता और बड़ी-बड़ी आ रही है। अब के कांग्रेसी पण्डे, और समाजवादी पण्डे, मुस्लिम लीग पण्डे, हिन्दू सभा पण्डे स्वयं मंडल भेजकर पत्रों और भेंटों द्वारा भी ब्रिटिश राजनीतिज्ञों और ब्रिटिश पार्लामेन्ट के समक्ष यह अनुरोध करेंगे कि "हे भाई, आप लोगों जैसे देव-संस्कृति लोग इस भूमंडल में अन्य नहीं है वस्तुतः आप लोग भी तो आर्य हो र वेद एवं वेदान्त के भी सच्चे अनुयायी हैं। हम आप लोगों को अपने समाज के अंग ही समझते हैं, सिर्फ रोटी-बेटी का रिश्ता छोड़ अन्य सब में आप लोगों के साथ हम आर्य-सन्तान भारतीयों का जन्म जन्मान्तर से सम्बन्ध स्वीकरिये हे आत्म प्रियबन्धु. आइये हमारे इस पुण्य भूमि का संचालन अब आप स्वयं करिये हमने आप के किसी भी चीज को नष्ट करने की मूर्खता भाग्य से नहीं की है जो भाषा ज्यों की त्यों भारत में जिन्दा है। उसके लिये तड़प अब और भी पर है अंग्रेजी रीतिरिवाज उत्सव समारोह, पोशाक, भोजन, पेय, नाच सभी प्रकार के मोद-प्रमोद, दोष और गुण यहां पूर्ववत सुरक्षित ही नहीं बल्कि और भी ऊँचे स्तर पहुंचे हुए हैं। आप लोगों की मूर्तियां तक जो यत्र-तत्र स्थापित थीं ज्यों की त्यों ही हैं। सारांश यह कि अशरीर रूप में आप भारत की शासन-गद्दी पर और

शेषांश ७० पृष्ठ पर देखें

चीन की चुनौती

सत्यनारायण सिंह—संसदीय मंत्री, भारत सरकार, नयी दिल्ली

भारत एक शान्तिप्रिय देश है। सदियों पुराने उसके इतिहास में ऐसे अनेक युग आये हैं, जब भौतिक सम्पन्नता की दृष्टि से उसे संसार के चोटी के देशों में मान्यता प्राप्त रही है। परन्तु, आज तक एक भी ऐसा उदाहरण नहीं मिलता, जब कि उसने अपनी उस शक्ति का दुरुपयोग किसी अन्य राष्ट्र की स्वतंत्रता का अपहरण करने अथवा उनके किसी भाग को बलपूर्वक अपने अधिकार में लाने में किया हो। अलबत्ता, इन युगों में अनेक उत्कृष्ट संस्कृतियों और कलाओं का उद्‌गम-क्षेत्र होने के कारण भारत को एशिया, अफ्रीका और यूरोप के कई देशों के बीच सांस्कृतिक और व्यापारिक आदान प्रदान का केन्द्र होने का गौरव प्राप्त रहा है। भारत और चीन का आपसी सम्बन्ध भी, जो कम से कम दो हजार वर्ष पुराना है, प्रधानतः इसी क्षेत्र में रहा है।

पिछले पन्द्रह वर्षों में, जब उसे एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में अपना नवनिर्माण स्वयं करने का अवसर मिला है, भारत ने शान्ति और सह-अस्तित्व की इसी ऐतिहासिक परम्परा को अपनी राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय नीतियों का आधार-स्तम्भ बनाया है। राष्ट्रीय क्षेत्र में हमारा सम्पूर्ण प्रयत्न लोकतंत्रीय प्रणाली से ए[...] कल्याणकारी समाज की रचना पर [...] रहा है। और इस महत्वपूर्ण का[...] प्रगति में कोई बाधा न पड़े तथ[...] आगे बढ़ाने में संसार के समृद्ध[...] का सहयोग प्राप्त होता रहे, इसके[...] भारत ने सभी देशों के साथ मै[...] सम्बन्ध स्थापित किया और जह[...] भी मतभेद या तनाव की स्थिति [...] हुई, वहां शान्ति और सद्‌भाव [...] करने में सहयोग दिया। इन [...] के फलस्वरूप जहां एक ओर देश के [...] और सामाजिक विकास में प्रग[...] वहीं दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय [...] भारत की प्रतिष्ठा भी बढ़ी।

हमारे पड़ोसी और पुराने मि[...] को, जिसके साथ हमारे इतने स[...] सम्बन्ध चले आ रहे थे और जिस[...] से कुछ ही वर्ष पहले हमारे साथ [...] पंचशील के आदर्श एवं सिद्धान्त को [...] किया था, हमारा इस तरह आगे [...] बिलकुल पसन्द न आया। उसने अ[...] से प्रशान्त और सुस्थिर हमारी [...] सीमाओं पर न केवल नये दावे ह[...] आरंभ कर दिए, बल्कि ऊपर से [...] का ढोंग कायम रखते हुए चो[...] हमारे कुछ क्षेत्र भी हथिया लि[...]

चीन की करामात थी, जो अपने 'जनवादी' कहता है और संसार के तों और पीड़ितों के उद्धार का दम कभी नहीं थकता। यह वही जनवादी है, जिसे भारत ने सन् १६४८ में ग में शासनारूढ़ होते ही तत्काल ता दी थी और जिसे संयुक्त राष्ट्र को उचित स्थान दिलाने के लिए वह जोरों से प्रयत्न करता रहा है। द्वारा किये गये एहसानों के प्रति की कृतघ्नता यदि यहीं तक सीमित तो भी गनीमत थी। परन्तु, गत तीन वर्षों और खास कर पिछले दो महीनों में चीन के जो शत्रुतापूर्ण मे प्रकाश में आये हैं, उनसे हमारे को गहरा आघात पहुँचा है। त्र और पड़ोसी देशों के बीच अधिक जघन्य विश्वासघात की कल्पना हीं की जा सकती।

तिब्बत और भारत के बीच एक से सांस्कृतिक सम्बन्ध चले आ रहे भारत में अंग्रेजी शासन के दिनों प्रशासनिक सम्बन्ध विकसित हो गये चीन इसे अपने आंतरिक मामलों हस्तक्षेप मानता था तथा भारत तंत्र होने पर इस साम्राज्यवादी को समाप्त करने के लिए बार-आग्रह किया करता था। सन् १६५४ परिस्थिति पर एक नये दृष्टि-विचार करने तथा भविष्य में चीन मैत्री के रास्ते को हमेशा के साफ कर देने के उद्देश्य से भारत ने तिब्बत पर चीन की प्रभुसत्ता को स्वीकार किया। उस समय हमें क्या मालूम था कि ऐसा करके हम न केवल तिब्बत की जनता को भूखे भेड़ियों के हाथों में सौंप रहे हैं, बल्कि अपनी सारी उत्तरी सीमा को भी विस्तारवादी चीन के लिए खोल रहे हैं।

आज परिस्थिति यह है कि पिछले पांच-सात वर्षों में चीन ने तिब्बत से लगनेवाली हमारी सारी सीमा पर सड़कें और हवाई अड्डे बनाकर तथा लाखों की संख्या में सेना इकट्ठी करके हमारे विरुद्ध एक जबरदस्त सैनिक मोर्चा खड़ा कर लिया है। लद्दाख में उसके हमलों का सिलसिला काफी पहले से चल रहा था, लेकिन २० अक्तूबर के बाद से हमारी उत्तर-पूर्वी सीमा पर उसने जो कुछ किया है, वह अभूतपूर्व है। देश के इतिहास में हमारी इस सीमा पर यह पहला आक्रमण है और इसने देश की सुरक्षा सम्बन्धी हमारी अब तक की सभी धारणाओं को छिन्न-भिन्न कर दिया है। इतना ही नहीं, भारत को शान्ति-वार्ता के धोखे में फंसा कर जिस सामरिक तैयारी और बर्बरता से मदान्ध देश के एक ऐसे खतरनाक इरादे का पता चला है, जिसका हमें कभी विश्वास नहीं था। चीन की इस भयंकर धोखेबाजी ने हमें दिखा दिया है कि हिटलर और मुसोलिनी के विनाश के बीस वर्षों के भीतर ही संसार को तीसरे विश्वयुद्ध की विभीषिका में ढकेलनेवाले एक नये दानव का आविर्भाव हो गया

है। साम्राज्यवादी चीन की ये भयंकर गति-विधियां न केवल भारत के लिए, वरन् सारे विश्व के लिए एक गंभीर चुनौती है।

जहां तक भारत का प्रश्न है, उसने इस चुनौती को स्वीकार लिया है। उत्तर पूर्वी सीमा पर अब तक किए जानेवाले चीनी हमलों के आरंभिक और अन्तिम दिनों में हमारे जवानों को जिस बुरी तरह पीछे हटना पड़ा, चाहे वह हमले की असाधारण तीव्रता के कारण हो या बचाव-सम्बन्धी सामरिक आवश्यकता के रूप में—उससे हमारे राष्ट्रीय सम्मान को काफी बड़ा धक्का लगा है। सारे देश में दुश्मन के विरुद्ध क्रोध और क्षोभ की एक लहर-सी दौड़ गयी है। लेकिन जैसे कि हमारे प्रधान मंत्री ने कहा है, बिना ठोकर खाये और बिना कठिनाइयों से जूझे राष्ट्रों के जीवन में भी ढीलापन आ जाता है। स्वतंत्रता-प्राप्ति की दूसरी हो दशाब्दी में हम नए निर्माणों और नए लाभों तथा सुविधाओं के कारण कुछ ऐसी ही मनःस्थिति में पड़ते जा रहे थे। चीन के हमले ने हमें याद दिला दिया कि स्वतंत्रता का मूल्य सतत सजगता द्वारा ही चुकाया जा सकता है। इसके लिए हमें चीन का धन्यवाद करना चाहिये और प्राणपण से इस देश की सुरक्षा के काम में जुट जाना चाहिए।

पिछले एक सप्ताह से हम भारत-चीन के मौजूदा सम्बन्धों में एक ऐसे दौर से गुजर रहे हैं, जिसे हमारे इस चालबाज दोस्त का शान्ति-अभियान कहा जा है। बिजली की-सी तेजी से अपनी को बामडिला और बलांग जैसे म प्रदेशों में झोंक देने के बाद नाटकी से एकाएक और एकतरफा युद्धबन्दी घोषणा करके चीन ने सारे संसार को कर दिया है। उसके इस विचित्र व के पीछे क्या रहस्य छिपे हुए हैं, अनेक अटकल-बाजियां हो रही हैं अजीब दुविधा की सी स्थिति उत्पन्न गयी है। लेकिन, जहां तक हमारा सम्बन्ध है, हमें इन अटकलबाजियों से भी लेना-देना नहीं है। अब तक चीन से काफी धोखा खा लिया इससे आगे अब और धोखे के लिए गुंजाइश नहीं होनी चाहिए।

सौभाग्य से आज हमारे देश बागडोर भारत के एक ऐसे तपे हुए के हाथों में है जो न केवल हमारे त्रता-संग्राम का महान् सेनानी रह वरन् जिसे अब तक के स्वतंत्र भारत निर्माता होने का गौरव भी प्राप्त चीन ने हमें यह दिखाने का मौ दिया कि भारत मां के इस महान् जननायक जवाहरलाल के एक इशा इस देश की कोटि-कोटि जनता सर्वस्व निछावर करने के लिए तैया सकती है। अतएव, जहां तक चीन मौजूदा कूटनीतियों के प्रति भारत की -निर्धारण का प्रश्न है, हमें यह अपने इस नेता के ऊपर छोड़ देना चा भारत के राष्ट्रीय सम्मान और हित

सके अधिक जागरूक प्रहरी दूसरा कोई हीं हो सकता।

अब हमारे सामने जो समस्या है, केवल सीमा रक्षा की नहीं, वरन् यों के संघर्ष के बाद प्राप्त हुई हमारी त्रता तथा अनादि काल से चली आ हमारी जीवन पद्धति की सुरक्षा की या है। इस महान् कार्य में हमारे के प्रत्येक नागरिक को अपना सहयोग है और वह भी न केवल इन संकट दिनों में हो, बल्कि आनेवाले अनगिनत यों तथा साम्राज्यवादी चीन के र पंजों से अपनी अजादी की रक्षा के लिए हमें अब तक के अपने सोचने, ने और काम करने के ढंग को भी ना होगा और अपनी सारी गतिवि- को एक लम्बे समय के लिए युद्ध र पर लाना होगा। उसका यह मतलब कि हम लोकतंत्रीय विधि से कल्या- ी समाज की स्थापना और शान्ति सह-अस्तित्व के अपने मूलभूत आदर्शों याग देंगे। सच तो यह है कि हमें सारे नये प्रयत्न, जिनमें शत्रु के फ युद्ध की तैयारी भी शामिल है, आदर्शों की रक्षा के लिए करने पड़ेंगे। आप को मालूम है कि आजकल के एक सिपाही मोर्चे पर सफलतापूर्वक काम कर सके, इसके लिए दस व्यक्तियों को उसके पीछे काम की आवश्यकता होती है। दूसरे में इसका अर्थ यह हुआ कि यदि चाहते हैं कि हमारे जवान एक-एक आक्रमण-कारी को हमारी भूमि पर हटाकर बाहर फेंक दें, तो इसके हममें से प्रत्येक को, चाहे वह जिस में काम कर रहा हो, एक नये उत्साह और नयी लगन से अपने काम पर जाना है! हमें अपनी पंचवर्षीय योजनाओं के अन्दर चल रहे कामों की गति —चाहे वे शिक्षा या समाज कल्याण से सम्बन्धित हों, चाहे खेती-बारी औद्योगिक उत्पादन से—एक नयी तीव्रता लानी होगी। ऐसा करके हम अपनी स्वतंत्रता की रक्षा तो करेंगे ही, साथ ही हमारी योजनाओं को ईर्ष्या की दृष्टि से देखनेवाले चीन को मुँह-तोड़ उत्तर भी दे सकेंगे।

जहां तक चीनी हमले से उत्पन्न मौजूदा परेशानियों का सवाल है, मेरे विचार में वह कोई इतनी बड़ी समस्या नहीं है कि हम उससे घबरा जायं। भारत के लम्बे इतिहास में न जाने कितने उतार चढ़ाव आये हैं और बाहर से आनेवाले न जाने कितने लोगों से उसका पाला पड़ा है। इनमें से कोई अच्छे इरादे से आया और कोई बुरे से, लेकिन भारत भूमि की कुछ ऐसी महिमा रही कि जो भी बाहरी आया, वह या तो यहां की धरती में खप गया, या फिर, इधर उधर टक्कर मार कर अपनी राह चलता बना। ढाई तीन हजार वर्षों से अनवरत चले आ रहे भारतीय जीवन के प्रभाव में इनमें से कुछ के क्षीण अवशेष तो भले दृष्टिगोचर होते हों, लेकिन इन क्षणिक

शेष पृष्ठ १६ पर

श्री अरविन्द और वर्तमान संकट

मनिभाई—बम्बई, १९

यह एक तथ्य है कि प्राचीन समय के योगी और संत सांसारिक समस्याओं से अधिक सम्पर्क नहीं रखते थे। यह भी सर्वविदित है कि विश्व-विकास के नये चक्र की बेला पर कोई नैसर्गिक व्यक्तित्व एक अभिनव एवं मौलिक परिवर्तन करने के लिए प्रकट होता है।

कृष्ण ने सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मवाद का उपदेश दिया है किन्तु उसके साथ ही उन्होंने हमें जीवन में पूर्णता एवं कर्म का पाठ ही नहीं बल्कि एक आचार भी प्रदान किया है। उन्होंने हमें एक तरफ मानवता के साथ एकत्व-बोध एवं एकता स्थापित करने का संदेश दिया है तो दूसरी ओर आभ्यांतरिक एवं वाह्य जीवन के विनाशकारी तमसावृत उन तत्वों को, जो मनुष्य या एक राष्ट्र की प्रगति में वाधक हैं नष्ट करने का मन्त्र। अहिंसा में सत्य है लेकिन वह अर्द्ध सत्य ही है। हिंसा में भी सत्य और लक्ष्य है इसे हमें नहीं भूलना चाहिए। इनमें किसी की उपेक्षा करना कठिनाई, अव्यवस्था एवं विनाश को निमन्त्रण देना है।

श्री अरविन्द का संदेश गीता से भी उच्चतर स्तर का है। यह जीवन की पूर्णता एवं मानव-परिवर्तन की राह दर्शाता है। उनका संदेश पाठ मात्र नहीं वरन् वे अभी भी विश्व गगन में गतिशील रूप से सक्रिय हैं—मानव जाति के लिए आवश्यक परिण प्राप्ति के लिए।

जैसा कि माता जी का कथन है, "वि इतिहास में श्री अरविन्द की जो देन है न तो उपदेश है न अभिव्यक्ति अपितु सर्वो सत्ता का निश्चित कर्म है।"

अपने सम्बन्ध में श्री अरविन्द ने लि है, "मैं विश्व-विधान की बड़ी घटना के में अपनी किसी आकांक्षा को अन्त में वि होते नहीं देखा है, यद्यपि उसकी पूर्ति लिये विश्वशक्तियों को अधिक समय सकता है।"

अरविन्द ने कहा कि द्वितीय विश्व मनुष्य-मनुष्य या राष्ट्र-राष्ट्र के बीच वरन् अन्धकार, असत्य और उस प्रकाश बीच था जो धरती पर प्रकट हो रहा माता जी ने अपने दिनांक ७-५-४१ संदेश में इसे इस प्रकार व्यक्त किया "हिटलर के माध्यम से जो आसुरी विश्व पर प्रभुत्व स्थापित करना चाहत वह श्री अरविन्द के कार्य का विरोध ही बल्कि उसकी नैसर्गिक पूर्णता को ही करने की चेष्टा करती आ रही है।" दि ३-९-४२ को श्री अरविन्द ने अपने शिष्य को उत्तर देते हुये कहा था, "यदि यह मालूम हो जाय कि मित्र राष्ट्र विजय का दुरुपयोग करेंगे या शांति से

ेंगे या उस विजय से प्राप्त विश्वजन के सर का अंशतः नाश करेंगे तोभी मैं ों के पीछे अपनी शक्ति लगाऊँगा क्योंकि लर के अधीन जितनी स्थिति खराब ी उसके शतांश भी तब नहीं होगी।

उक्त कथनों से यह स्पष्ट है कि श्री विन्द और माताजी विश्व की सभी ाओं से सम्बन्धित हैं और अपने कार्य पूर्ति के लिए जहां आवश्यक है वहां वे नी शक्तियों का प्रयोग कर रहे हैं। व है कि दुनिया उनसे अनभिज्ञ है।

भारत की यह परम्परा रही है कि ाट और शासक सदा सन्तों एवं ऋषियों मार्ग-दर्शन एवं परामर्श लेते रहे हैं। नी इच्छा के प्रतिकूल होने पर भी वे कभी अस्वीकार नहीं करते थे। आदर्श और ार मानसिक बन्धन मात्र हैं। जो योगी ऋषि घटनाओं के पीछे नैसर्गिक इच्छा सर्वव्यापी शक्तियों के उद्देश्य को परखने क्षमता रखते हैं उनसे उन क्षुद्र मानवीय र्शों एवं विचारों की तुलना नहीं की सकती। श्री अरविन्द ने सर्वदा भारतीय ा का मार्ग दर्शन करने का प्रयत्न किया परन्तु यह एक शोचनीय बात है कि मार्ग-दर्शन की उपेक्षा की गई एवं उचित सम्मान कभी नहीं दिया गया। में नैसर्गिक इच्छा की ही जीत होती किन्तु यदि भारतीय जनता उसका ना-माध्यम बनती तो उसकी कठिनाइयां या इतनी कम हो जातीं कि यथेष्ट फल शीघ्र प्राप्ति होती।

देश के प्रति श्री अरविन्द के मार्ग-दर्शन एवं दृष्टिकोण सम्बन्धी कुछ दृष्टान्त निम्न है—

१—द्वितीय विश्व-युद्ध में श्री अरविन्द ने राष्ट्र से कहा कि मित्रराष्ट्रों को पूर्ण हृदय से समर्थन किया जाय और क्रिप्स प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए गांधी जी के पास एक विशेष संदेशवाहक भी भेजा गया था। किन्तु वह अस्वीकृत हुआ जिसके फलस्वरूप भारत दो खंडों में विभक्त हुआ। श्रीअरविन्द ने सर स्टैफर्डक्रिप्स को एक संदेश लिखा था जिसमें उन्होंने बड़ी आशा व्यक्त की थी। उसके एक अंश इस प्रकार है—"मैं यह भी आशा करता हूँ कि बृटेन और भारत में पिछले संघर्षों के स्थान में ऐसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित होंगे जो बृहतर विश्व एकता की दिशा में एक कदम होगा जिसमें एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में भारत की आध्यात्मिक-शक्ति मानव जाति के लिये सुन्दर एवं स्वस्थ जीवन निर्मित करने में सहयोग देगी। यदि आप के कार्य में सहायक हो तो मैं जन-समर्थन का आश्वासन देता हूँ।" ३१-३-४२

२—भारत विभाजन के बाद भी श्री अरविन्द ने आशा की दृष्टि से यह व्यक्त किया, 'यदि यह विभाजन रहता है तो भारत अत्यन्त कमजोर ही नहीं बल्कि पंगु हो जायगा ; गृह-कलह होने की सम्भावना बनी रहेगी, साथ ही नये आक्रमण एवं विदेशी जीत की भी। भारत का आन्तरिक विकास एवं उसकी उन्नति में बाधा पड़ सकती है, राष्ट्रों में उसका स्थान शक्तिहीन हो सकता

है तथा उसका भाग्य-संकट में पड़ कर शोच-नीय। इस स्थिति से बचने के लिये विभाजन का अन्त करना चाहिए।...... इस प्रकार किसी न किसी रूप में एकता अन्त में आ सकती है। किन्तु किसी भी साधन एवं मार्ग से विभाजन का अन्त होना ही चाहिए। एकता अवश्य प्राप्त होगी क्योंकि भारत के भविष्य के लिए यह आवश्यक है।"

(१५-८-४७)

विभाजन का अन्त करने के लिये आवश्यक परिस्थिति तैयार की गई लेकिन राष्ट्र की गलत मनोदशा के कारण हम सुअवसरों से लाभ उठाने में असमर्थ रहे। श्री अरविन्द ने इसको इस प्रकार वर्णन किया है, "वह व्यक्ति या राष्ट्र अभागा है जो नैसर्गिक अवसर उपस्थित होने पर भी सुप्तावस्था में रहता है या उसका उपयोग करने के लिए उद्यत नहीं होता है, क्योंकि अवसर का स्वागत करने के लिए दीप नहीं सजाया गया और उसकी पुकार पर कान बन्द कर दिये गये। किन्तु जो शक्ति सम्पन्न एवं उद्यत होते हुए भी अपनी शक्ति खो देते हैं या अवसर का दुरुपयोग करते हैं उन्हें धिक्कार है। उनकी भारी क्षति या उनका महाविनाश अवश्यम्भावी है।"

३—कोरियन युद्ध के समय श्री अरविन्द ने राष्ट्र को अपने दिनांक २८ जून १९५० के संदेश में चेतावनी दी—"इन उत्तरी भागों पर कब्जा करना साम्यवादी योजना के कार्यान्वयन का प्रथम चरण है। तत्पश्चात तिब्बत के द्वार से भारत होकर दक्षिणी पूर्वी एशिया पर अधिकर ज[...] की उनकी नीति है। इस प्रकार वे महादेश पर छा जाना चाहते हैं।"

उपर्युक्त संदेश के फलस्वरूप राष्ट्[...] शीत रक्त में प्रवाह उत्पन्न हुआ और [...] के बहुत से समाचारपत्रों ने उन्हें [...] प्रचारक की संज्ञा देते हुए निन्दा करने की धृष्टता की। इसका कारण यही थ[...] राष्ट्र के रक्त में अहिंसा-विचार का [...] प्रवेश हो गया था और युद्ध के विष[...] सोचना भी जनता के लिये भयावह [...] राष्ट्र अनुद्यत रहा पर अब देश से [...] प्रकार के अन्धकार, द्वेष एवं आलस्यत[...] उन्मूलन करने की परिस्थिति उत्पन्न[...] गई है। अपनी लम्बी निद्रा को त्य[...] आन्तरिक एवं बाह्य दृष्टि से शक्ति[...] एवं साहसी बनने के लिए वर्तमान परि[...] या संकट भारत को नैसर्गिक वरदान [...] प्राप्त है। यह परिस्थिति चाहे कितन[...] कठिनाईपूर्ण एवं अवांछनीय क्यों न [...] विश्व में दैवी कार्य के निमित्त अनुकुल[...] बनाती हुई यह राष्ट्र में आमूल प[...] करेगी। दैवी कृपा के वर्तमान हो[...] अन्तिम विजय हमारी है।

श्री अरविन्द के कार्य को माताज[...] आगे बढ़ा सकती हैं। देश के लिए [...] समय है कि आज के संकट में वह [...] जी को समझे और अपने मा[...] तथा अपनी सहायता के लिये उनको [...] करे। श्री अरविन्द ने माता जी को [...] में शक्तिशाली एवं गतिशील कार्य के[...]

अधिक महत्व दिया है। वे कहते हैं, ताजी की और मेरी चेतना एक ही है। एक दैवी चेतना दोनों में है क्योंकि खेल के लिये आवश्यक है। बिना ी (माताजी) जानकारी और शक्ति के उनकी चेतना के कुछ नहीं हो सकता। उपर्युक्त तथ्यों से हम देख सकते हैं कि रविन्द और माताजी का भारत से कम सम्पर्क नहीं है बल्कि अन्य वह किसी से अधिक है। क्योंकि उनके विश्व का जीवना-दर्श भारत के द्वारा ही पूर्ण हो सकता है। अतः भारत को उठना एवं जागना चाहिये।

हम अब आशा करें कि अपनी आध्यात्मिक तत्त्व को पुनर्जीवित करने एवं शीघ्र आने वाले नवयुग के स्वागत के लिये राष्ट्र नैसर्गिक माता की शरण में प्रविष्ट होना सीखे।

पृठ १२ का शेषांश

दबावों ने हमारी संस्कृति की धारा को कहीं रोक या मोड़ दिया ऐसा कभी नहीं हुआ और न भविष्य भी होगा। व्यक्तिगत रूप से मुझे के उज्ज्वल भविष्य में अटूट आस्था और अपने देशवासियों से मेरा निवेदन कि वे अपनी इस आस्था को कभी धूमिल न होने दें।

संकट की इस घड़ी में हमें यह न चाहिए कि हमारे इतिहास के में राष्ट्रों के उत्थान पतन से घत अनेक अमूल्य शिक्षाएँ भरी हुई स्वतंत्र स्वतंत्र भारत के नव निर्माण में उन शिक्षाओं से पूरा लाभ है। पिछले युगों में जब कभी ने सम्प्रदायों, धर्मों, भाषाओं के ऊपरी झगड़ों में पड़कर राष्ट्रीय की आधारभूत एकता को भुलाया भी हम दुर्बल हुए हैं और देश के ऊपर विपत्तियां आयी हैं। पिछले पांच वर्षों से हमारी यह दुर्बलता फिर से दृष्टिगोचर होने लगी थी। परायी भूमि के भूखे चीन ने हमारी उत्तरी सीमाओं के ऊपर हमला बोलकर हमें इस गंभीर खतरे की तरफ से जल्दी ही सावधान कर दिया। खतरे की जंजीर खिंचते ही किस प्रकार भारत का बच्चा बच्चा उठकर खड़ा हो गया और देश के कोने कोने से मातृभूमि की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर देने की होड़ सी लग गयी, इसे देखकर आज सारा संसार चकित रह गया है। हमें भी लगा जैसे राष्ट्र की एक नयी आत्मा ने जन्म लिया है। हमारी सबसे बड़ी शक्ति यही है और जब तक यह हमारे पास है, दुनिया की बड़ी से बड़ी ताकत भी हमारी तरफ आंख नहीं उठा सकती। भुक्खड़ चीन की बिसात ही क्या ?

—o—

आदमी कितना बड़ा है

नन्दकिशोर प्रस

हिम्मत के हिमालय पर देखो खड़ा है ।
कहो, आदमी वह कितना बड़ा है !!

भीतर से चाहे, लाखों हो टूटा,
दुनियां से चाहे, जितना हो छूटा,
बन-बन के सपने, बिगड़ते हों लाखों,
फिर भी हमेशा, सपनों भरा है !
कहो, आदमी वह कितना बड़ा है !!

सब के बुझे दीप जो बढ़कर जला दे,
रेती में हँसकर जो नैया चला दे,
जादू है जीने का, उसको ही आता,
बवंडर में भी जो अविचल खड़ा है !
कहो, आदमी वह कितना बड़ा है !!

जो बढ़ाता है सब को, देकर सहारा,
दुनिया में रहता, वही बेसहारा,
ऐसे ही लोगों के आगे हमेशा,
झुकता गगन है, झुकती धरा है !
कहो आदमी वह, कितना बड़ा है !!

उठकर के देखो, सपना है कैसा ?
पराया है कैसा, अपना है कैसा ?
खुद को संभालो ; सच तो यही है,
रोयेगा वही जो सोया पड़ा है !
कहो, आदमी वह कितना बड़ा है !!

विपदा कुचल कर जो आगे है बढ़ता,
ऊँगली से पत्थर में मूरत है गढ़ता,
अर्चना धरा पर है उसकी ही होती,
औ, हथेली पै उसीकी हिमालय धरा है !
कहो, आदमी वह कितना बड़ा है !!

शेष पृष्ठ २० पर

कौमी ललकार

कविवर रामेश्वर झा "द्विजेन्द्र"

बढ़ो जवानो, देश तुम्हारे साथ है।
बढ़ो जवानो, विजय तुम्हारे हाथ है॥

शर्मनाक हैं ये चढ़ाइयां चीन की,
तौहीनी है तोपों की—संगीन की,
दोस्त नहीं—भाई का रिश्ता जोड़कर,
वह निकला काली नागिन आस्तीन की॥

नाग हो कि नागिन हो, परम कराल हो,
छोटी हो अथवा वह परम विशाल हो,
उन्हें कुचलना खूब तुम्हें मालूम है,
काल हो कि वह आफत का परकाल हो॥

ये चीनी वंचक हैं—धूर्त्त शृगाल हैं,
चाउ—माउ का झूठ बजाते गाल हैं,
अपनी ही हरकत से अपनी कौम के
ये बनते जाते जोखिम—जंजाल हैं॥

इस दुनियां की सब से झूठी जात है,
सोने-से दिन को कहता यह रात है,
एक रूस को छोड़ सभी यह जान गए,
दगाबाज़ चीनी की झूठी बात है॥

भूल गया वह नानीकीन के रेप को,
भूल गया वह अपनी बेकस झेंप को
भारत ने ही खुल कर किया विरोध था,
भूल गया वह हमदर्दी के लेप को॥

निगल जायगा चीन को अपना पाप ही,
उसे जला देगा अपना संताप ही,

गद्दारी का यही नतीजा होता है,
दुश्मन मर जायेगा अपने आप ही ।।

उसमें लड़ने का माद्दा है ढाल का,
नहीं पकड़ना आया है करबाल का,
अभी हमारे नौजवान का बल देखे,
क्या देखे वह वीर जवाहर लाल का ।।

वह वाकिफ है तवारीख मजबून से,
पथ्थर पर लिखते हैं हम नाखून से,
आज साक्ष्य में सूरज, चांद, सितारे हैं,
खून का बदला लिया जायगा खून से ।।

तुम रक्षक हो भारत देश विशाल के,
तुम प्रहरी हो मुल्की जानो माल के,
शेर बबर-से तुम दहाड़ते चले चलो,
तुम सैनिक हो वीर जवाहर लाल के ।।

फौलादी दिल और कदम तूफानी है,
कड़ा तुम्हारी तलवारों का पानी है,
दुनियां की तारीख बोलती है हरदम,
हिन्द फौज की बहादुरी लासानी है ।।

कौन कहे तुम सिक्ख, ईसाई, जाट हो,
राजपूत, मुसलिम हो, ब्राह्मण, भाट हो,
तुम सपूत भारत के—अपने देश के
एक एक तुम जिसके जंगी लाट हो ।।

माँ की आन बचाना तुम को आज है ।।
माँ की शान बचाना तुम को आज है,
लगा लगा कर बाजी अपने जान की
माँ की जान बचाना तुमको आज है ।।

कसम तुम्हें राणा प्रताप के मान की,
कसम तुम्हें है वीर शिवा की आन की,
शेरशाह, पंजाब - केशरी की कसमें,
तुम्हें कसम है फिर शहीद उसमान की ।।

काशमीर, भूटान, सिक्किम के वीर बढ़ो,
राज्य-राज्य के बलवीरों के तीर बढ़ो,
तोड़ ताव से आलस्य की जंजीर, बढ़ो,
बिजली की तासीर लिये शमशीर बढ़ो ॥

निरातंक यह तुंग तिरंगा झूम रहा,
स्वाभिमान यह आसमान को चूम रहा,
इसे सलामी दे जौहर दिखलाना है,
सौ हजार सदियों से जिसका धूम रहा ॥

बढ़े कदम अविराम, न रुकने पाए,
और लक्ष्य का तीर नहीं चुकने पाए,
युग-युग से निर्भीक तनी अपनी गर्दन,
किसी रूप में—कभी नहीं झुकने पाए ॥

बढ़ो जवानो, यह कौमी ललकार है,
लाख-लाख जनता की यही पुकार है,
कौंध जाय दुश्मन पर जो बिजली बनकर
बढ़ो जवानो, यह नंगी तलवार है ॥

दुःख में जो संग दे, अपना वही है,
जो जीवन में सच हो, सपना वही है,
बड़ी ही तपन है, तपस्या में देखो,
दुखिया का सपना मोती-भरा है!
कहो, आदमी वह कितना बड़ा है!!

चुपके है सहता, न कहता कथा को,
मन में ही रखता है, मन की व्यथा को,
खुद को मिटाकर है, जग को बनाता,
वह उससे बड़ा है, जो जिन्दा-मरा है!
कहो, आदमी वह कितना बड़ा है!!

हरदम बढ़े औ' बढ़ाए सभी को,
हरदम चढ़े औ' चढ़ाए सभी को,
सिर न झुके, चाहे सिर भी कटे क्यों,
प्रण पर जो अपने शिला-सा अड़ा है!
कहो, आदमी वह कितना बड़ा है!!

लद्दाख की कहानी

अखिल विनय
गाडर वाडा— मध्यप्रदेश

आज विश्वासघाती चीन ने हमें चुनौती दी है। युद्ध-विराम प्रस्ताव के बाद भी बर्बर चीनियों ने ब्रिगेडियर होशियार सिंह को जिस अमानुषिकता से मारा, उसकी मिशाल इतिहास में ढूँढ़ने पर भी न मिलेगी। २० अक्टूबर १९६२ को पूर्वोत्तर सीमान्त (उपूसी) और लद्दाख में एक साथ सुनियोजित आक्रमण किये गए। २२ अक्टूबर को चीनियों द्वारा दक्षिणी लद्दाख के पैंगोंग झील क्षेत्र में भारतीय चौकी के खिलाफ पहली बार टैंकों का प्रयोग किया गया। उस चौकी में ३० या ३२ भारतीय जवान थे और हमलावरों की संख्या कई गुनी थी, फिर भी हमारे सैनिकों ने टैंक लाने से पूर्व तीन बार चीनियों को पीछे हटाया था और आक्रांताओं को बहुत बड़ी संख्या में हताहत किया था। उसी युद्ध में राइफलमेन तुलसीराम थापा ने जिस वीरता का प्रदर्शन किया, वह रेडियो और समाचार पत्रों से प्रकाश में आ चुका है।

लद्दाख की घाटियों में भारतीय जवान अपने खून से जो इतिहास लिख रहे हैं, वह युगों तक विश्व भर में पठनीय और वंदनीय समझा जायगा। लद्दाख स्काउट के हवलदार सरूप सिंह ने, अपने दो साथियों के मरने के बाद, लद्दाख की अग्रिम चौकी पर अकेले ही ७ घण्टे चीनियों को रोके रखा और इस प्र[...] हमारे सैनिकों को पिछली चौकी [...] अवसर दिया कि वे तैयार हो जायँ। [...] सिंह की राइफल से निकली ५०० गोलि[...] ने चीनियों को भून दिया! [...] गु[...] राइफल्स के मेजर धनसिंह थापा को लद्[...] में वीरता के लिए मरणोपरांत "परम[...] चक्र" दिया गया।

जाट रेजिमेंट के मेजर अजित [...] ने लद्दाख में नालाजंक गर्म पानी [...] झरने के पास दुश्मनों से लड़ते हुए अ[...] पूर्व वीरता दिखायी। उन्हें 'महा[...] पुरस्कार दिया गया। यह पुरस्कार ल[...] में एक चौकी चांदनी के कमांडर सूबे[...] सुनाम तपोधन को भी अन्तिम सैनिक [...] अन्तिम गोली तक लड़ने के लिए मिल[...] जम्मू तथा कश्मीर मिलिशिया के जमा[...] इस्त तुन्दुप वहां छागला चौकी के कम[...] थे। उन्होंने बड़ी बहादुरी से चीनि[...] का मुकाबला किया। उन्हें तथा उ[...] सहायक हवलदार सतिनगियान पुं[...] को भी 'महाचक्र' प्रदान किया गया[...] आज भी हमारे सैनिक लद्दाख के म[...] पर १८ तथा २० हजार मील की ऊं[...]

, जहां तापमान जमावबिन्दु से भी कई
श नीचे है, चीन और शर्दी (दोनों
मनों) से लोहा ले रहे हैं और
का हौसला ऊँचा है।

ाख में भारत-चीन की असंदिग्ध सीमा
चीन ने लद्दाख के बहुत बड़े भाग
हाल में ही दावा किया है और वहां
ने भारत के बहुत बड़े भाग को
त् हथिया लिया है। नेफा में, बोम-
ग क्षेत्र में आज पुनः भारतीय झण्डा
रो बठा है, किंतु लद्दाख में चीनी
े नहीं हटे हैं। चीन जिसे तथा-
गत परम्परागत सीमा बताता है,
उसकी हाल की ही बनायी हुई है।
लद्दाख को भारत का अंग बनाने
विचार जम्मू के महाराज गुलाबसिंह
१८६० विक्रमी में आया। उन्होंने
सेनापति जोरावरसिंह को ६०००
रों के साथ भेजा था। उस समय
ख का राजा मुर्तमौपिन था और उसने
नरेश की अधीनता स्वीकार की थी।
ख और तिब्बत के बीच सीमा रेखा
स्पष्ट पता १० वीं शताब्दी से चलता
और सत्रहवीं शताब्दी के तिब्बत के
ास (ला द्वगास रयाल रब्स) में
उल्लेख है। चीन और तिब्बत
दोनों ने १६८४ और १८४२ की सं
यों में इसी परम्परागत सीमा की पु
की। १८५२ के कश्मीर के महाराजा त
तिब्बत के प्रतिनिधियों ने जो समझौ
किया, उसमें भी इस सीमा की पुष्टि
गयी थी। अब चीन सरकार कहती
कि वह १८४२ की संधि मानने
बाध्य नहीं है!!

चीन का अतिक्रमण

चीनियों के अतिक्रमण की कहान
जून १६५५ से शुरू होती है, जब
उत्तर प्रदेश के बाराहूती क्षेत्र में आ
थे और उन्हें २८ जून १६५
को भारत की ओर से विरोध पत्र भेजा
गया था। सितम्बर-अक्टूबर १६५८ में
अक्साईचिन क्षेत्र में उनके प्रवेश के लिए
विरोध किया गया। २८ जुलाई १६५६ को
वे पैंगांग झील (पश्चिम) क्षेत्र में घुस
आए थे। नेफा में उन्होंने लोंगजू पर
२५ अगस्त १६५९ को आक्रमण किया था।

चीन की विस्तारवादी नीति का ही
परिणाम यह है कि उसने पंचशील के
सिद्धान्त भुलाकर अपने ही मित्र की पीठ
में छुरा घोंपा। १६६० के बाद तो उनके
आक्रमणों की लम्बी कहानी है जिसे
नीचे के आंकड़े स्पष्ट करेंगे—

स्थान	आक्रमण की तिथि	भारत के विरोध की तिथि
तसांग गोम्पा	३ जून १६६०	२६ जुलाई १६६०
ा ला	२० सितम्बर १६६०	२७ सित० १६६०
हिंप्रम्स	अक्टूबर १६६०	३१ अक्टूबर १६६०
ल	मई १६६१	३१ अक्टूबर १६६१
ाकार पोआ	जुलाई १६६१	३१ अक्टूबर १६६१

न्यागजू	अगस्त १९६१	३१ अक्टूबर १९६१
दाम्बूगुरु	अगस्त १९६१	” ”
७८°१२' पूर्व ३५° १२' उत्तर	सितम्बर १९६१	” ”
रोई गांव	जनवरी १९६२	१८ अप्रैल १९६२
चिपचैप	जनवरी १९६२	१४ मई १९६२
समदो	अप्रैल १९६२	१५ अप्रैल १९६२
स्पांगुर	मई १९६२	२१ मई १९६२
७८° ३५' पूर्व ३५° ३६' उत्तर		
७९° ८' पूर्व ३४° ३३' उत्तर	जून १९६२	१६ जून १९६२
७८°१५' पूर्व ३५° १५' उत्तर	जून १९६२	२८ जून १९६२
गलवान घाटी	१० जुलाई १९६२	१० जुलाई १९६२
चिपचैप चोगचेनमो और		
पैगांग क्षेत्र	जून-जुलाई १९६२	१२ जुलाई १९६२

८ सितम्बर के बाद और अक्टूबर १९६२ में तो उनके आक्रमण ने नेफा और लद्दाख में भयंकर रूप से एक साथ हुए। इसीलिए तो हमारे प्रधानमंत्री ने शान्ति वार्ता का प्रथम चरण यही बतलाया है कि चीनी लोग ८ सितम्बर १९६२ की स्थिति में चले जायं। लेकिन चीन अपने त्रिसूत्री प्रस्ताव पर अड़ा हुआ है। १७ नवम्बर १९५९ की स्थिति का अर्थ यही है कि लद्दाख में चीनी सेना भारत की सीमा में साढ़े बासठ मील से भी अधिक घुसी रहे और उत्तर प्रदेश व आसाम के उत्तर पूर्व सीमांत के महत्वपूर्ण दरों को चीनियों के कब्जे में छोड़ दिया जाय; अर्थात देश के उत्तरी द्वारों की कुँजी चीन के हाथ दे दी जाय ताकि जब कभी वह चाहे फिर हमारे घर में घुस आये! और आगे बढ़ता आये !!

भारतीयों की अग्नि-परीक्षा का स

चीन ने भारत पर क्यों आ किया, यह आज एक अन्तर्राष्ट्रीय बन गया है। परन्तु हम तो यही हैं कि चीन के साम्यवादी शासक के काफी बड़े भाग को गुलाम ब भारत के सम्मान को चोट पहुँ चाहते हैं। चीन के तानाशाह हैं कि भारत की आर्थिक और साम स्थिति उलट-पुलट कर दें और इसे करें। इसीलिए आज हमारी अग्नि प का समय है।

सीमान्त के मोर्चे पर डटे हुए ही सैनिक नहीं हैं, आज भारत प्रत्येक नागरिक जीवन के हर मोर्चे सैनिक है। हमें अपनी आजादी रक्षा के लिए सतत सन्नद्ध होगा।

हमारे पापों का प्रायश्चित —यह युद्ध

सुरेन्द्र नाथ तिवारी
२२—तुलारामबाग, इलाहाबाद-६

हमारा भारत सदा से ही धर्म प्रधान है। 'यतो धर्म स्ततो जय' इसका नारा है। सृष्टि का आदि इसी देश से था। हमारे पूर्वज ऋषि मुनियों अपने तपोबल से सब प्रकार से इस को शक्तिमान, ज्ञानवान, तथा कर्म बनाया था और इतना ऊँचा उठा था कि सारे संसार में इसका बोल- था। हमने सिकन्दर ऐसे महान विजेता से भी लोहा लिया था इसे सबक सिखाया था।

समय के फेर से हम पहिले कुछ बर्बर ...ियों के चपेट में आये। उनके सामने ...ो नहीं चली। इसके कारण अनेक उस समय हममें एकता न थी न था कोई संगठन। अपनी अपनी पड़ी थी। इसका जो परिणाम चाहिये था, वही हुआ।

मुसलमानों के काल में, यद्यपि वे ... थे, पर उन्हें तो अपना राज्य करना तथा बढ़ाना था। धर्म पर ने ही अपना कुठार चलाया था ...ी सफल नहीं हुए। बाद को अंग्रेज में आये। ये लोग शिक्षित और थे। पर थे पूरे खटमल। विदेशी ! पर रहा उनका राज्यकाल औरों ... अच्छा। सदियों की पराधीनता तथा गुलामी से हमारी आत्मिक शक्ति सर्वथा क्षीण हो गई थी और शासन संस्कार बिलकुल समाप्त हो गये थे।

किसी सन्त की तपस्या से भारत स्वतन्त्र हुआ पर जब शासन अपने हाथों में आया तो कुछ को छोड़ कर किसी को शासन का क ख ग तक मालूम न था। ओछे गुणों की कमी न थी। मरभुखे इतने लालच में पड़े कि 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' सिद्धान्त भी भूल गये। झूठ 'फरेब' मकर का बोलबाला हो गया। जाति पांति विहीन होकर हमारा देश धर्म निरपेक्ष राज्य बना दिया गया— वही धर्म जिसके प्रभाव से यहां के लोग कभी 'वसुधैव कुटुम्बकं' का नारा लगाते थे।

शासन लीप-साप, लल्लो-चप्पो और भैया बच्चा से नहीं चलता। इसके लिये मजबूत दिल मजबूत दिमाग और मजबूत हाथों की जरूरत होती है। शासक को लौह पुरुष बनना पड़ता है। साम, दाम, दंड, भेद सभी से काम लेना पड़ता है। अपनी आन तथा शान पर मर मिटना होना है। सबको राजी रखने का प्रयत्न शासन की एक लचर नीति है जिसमें सदा धोखा होने की संभावना रहती है। वर्तमान आपत्काल में यदि गुटबन्दी की

बात न होती, जैसी आजकल चल रही है, तो हमारे सहायकों की भी शायद मौखिक सहानुभूति ही न होती, जैसी अधिकांश दिखाई देती है और सहायता आते-आते यहां का ख़ाका ही इतना न बदल जाता।

हमने अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग भी किया। चाहिये था स्वतन्त्रता को हम सुदृढ़ बनाते। देश के जन-मानस को सुशिक्षा द्वारा उदबुद्ध प्रबुद्ध करते। उनकी शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों का विकास करते। पर हमने इन बातों की बिलकुल उपेक्षा की। हमारी शिक्षा का स्तर अंगरेजों के समय से भी गया गुजरा है। शिक्षा के पाठयक्रम में सदाचार, सद्व्यवहार, समाजिकता, धार्मिकता आदि का कहीं नाम भी नहीं रहा। और तो और अभी अभी यह भी हुआ है कि राम, कृष्ण आदि के पावन चरित तथा उनके नाम भी पाठय-क्रम की पुस्तकों में नहीं रहेंगे। यही हमारी स्वतन्त्रता है। हमने सोलह आने अंग्रेजों की शासन-नीति को अपनाया है—जनता को कमजोर रक्खो शिक्षा और शक्ति से। जनता सम्पन्न न होने पाये चन्द उनके पोषकों को छोड़ कर। जैसे भो हो और जो भी मिले अपने अपने क्षेत्र में मुक्त कंठ से खाओ, पेट चाहे फट ही क्यों न जाय। वर्तमान युद्ध से कितनों को चिन्ता होगी, कुछ बिरलों को छोड़ कर। बना रहे उनका बैंक बालेन्स और हवाई जहाज सरकारी।

यहीं तक नहीं। हमारी पाप प्रवृति इतनी नीच हो गई है कि जिसे सोच कलेजा मुंह को आता है। एक भद्र ग भी अपना धर्म समझता है। घर के आश्रित प्राणियों को वह खिला- कर पहिना-ओढा कर तब अपने सोचता और करता है। हमारे राज का भी यही ध्येय था। पर हमारी व सरकार ने खिला खिला कर हमें अमे कनाडियन, सार-हीन सड़ा गेहूँ हमारे को बिलकुल खोखला बना दिया घी, दूध का नाम निशान मिटा कर, ड खिला खिला कर, हममें बुनियादी कम पैदा कर दी है। यदि यही क्रम जारी तो अगली पीढ़ी निरी घासलेटी हो अब मुसीबत आ जाने पर हमारे देश बलिदान होने को कहा जाता है। हमारे खून में लालिमा शेष है। खौलता है। पर हमारे हाथों पैरों भी तो सामरिक शक्ति होनी चाहिये

धर्म निरपेक्ष राज्य कायम करके क्षत्रिय वर्ग के शौर्य सन्स्कारों का स कर डाला गया। हमारे देश के राज सिक्ख तथा पहाड़ी, जिनका हम ही संसार लोहा मानता था, आज सभी बनिया हो गये हैं। अपना स्वत्व बैठे हैं। पहिले इन्हें कोतल घोड़े तरह पाला जाता था और समय पर इनसे काम लिया जाता था। आज सब कहां गया और इसका दोषी है?

अपना और अपने पिट्ठुओं का मरने के लिये शासन को इतना ख

रक्खा है जिसकी नाजीर हमारे किसी देश में नहीं होगी। लम्बी-ी तनखाहें, बड़े-बड़े भत्ते, हवाई जहाज, , मकान, नौकर चाकर सभी कुछ हैं। सब कुछ अपनी सुख-सुविधा के है। यही कारण है कि देश की आय अधिकांश भाग इसी में चला जाता है। से अन्य शासन-सम्बन्धी सभी कार्य हैं। योजनाओं के लिये कर्ज का खुल गया। 'ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत्' रहा है। अभी उस रोज हमारे सम्मान्य सुन्दर लाल जी, जो उसी समय को गये हुए एक डेपुटेशन से लौट आये थे, चीन के सुगठित तथा स्थित शासन की बातें बता रहे कम से कम लोगों द्वारा वहां शासन चलाया जाता है। विभागीय उच्चतम कारी वहां एक हजार से अधिक नहीं पाता जब कि यहां तीन चार र तक केवल वेतन मिलता है। केवल तम अधिकारी के पास ही एक कार है। घर तथा घर के नौकर-चाकर शासन को कोई सम्बन्ध नहीं। वह कार सरकारी कार्य में ही प्रयुक्त होती हवाखोरी, मेहमानदारी या तरकारी लाने में उसका प्रयोग नहीं होता। विरुद्ध हमारे यहां सभी बातें उलटी चल रही हैं और यही कहते हुए वे रो दिये थे।

देश पर मुसीबत के बादल उमड़े चले आ रहे हैं। देश की निर्धन जनता अपनी रोटी काटकर, भूखे रहते हुए, जो कुछ हो सकता है, देश-सुरक्षा-कोष में अपने गाढ़े की कमाई देती है। हमारे सुख से दिन काटने वाला सम्पन्न वर्ग भी, किसी भावना से ही, ५१ या १०१ देता है। बड़े-बड़े मिल-मालिक, सेठ-साहूकार तथा कल-कारखाने वाले भी हजारों और लाखों की संख्या में देते हैं। पर हमारे शासकों में कितनों के दिल पसीजे हैं? कितनों ने क्या दिया है भगवान ही जाने। भय लगता है, यार लोग इस अवसर से भी लाभ उठाने में क्या बाज आयेंगे!

इतने महान पापों का बोझ हम पर लदा हुआ है। इसमें किसी प्रकार की कमी होने के बजाय, ज्यों ज्यों भीजे कामरी, त्यों त्यों भारी होय, सूद दरसूद लगाकर वह भारी ही होता चला जा रहा है। अब प्रायश्चित्त का समय आ गया है। 'खुशी टेक, खुशी नो टेक' की बात इसमें नहीं है। प्रायश्चित्त करना ही होगा हम तो हर तरह से इसके लिये तैयार हैं और प्रायश्चित्त कर भी रहे हैं। पर देखें हमारे कर्णधार क्या करते हैं?

o—o

साहित्यिक संस्मरण

साहित्य के पुजारी गंगा प्रसाद सिंह अखौरी

रामनारायण सिंह 'मधुर'
प्राध्यापक—हिन्दी विभाग, मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार)

भाई गजाननजी सीढ़ियों पर दौड़ते हुए ऊपर आये और हांफते हुए बोले— " 'मधुर' ! मैंने हीरा पा लिया"। मैंने अर्थशास्त्र की भारी भरकम पोथी मेज पर पटक दी और विस्फारित नेत्रों से उनकी ओर देखने लगा। वे हँसने लगे— "अरे भाई ! इस तरह से क्या देखते हो ? आज मुझे हीरे की प्राप्ति हुई है।"

'तब तो तुम बड़े आदमी हो गये। फैक्टरी खोल दो और सेठ बन कर बैठ जाओ। लेकिन मित्र मुझे अपना चपरासी रख लेना।" मैंने कहा।

"तुम तो मखौल कर रहे हो, मुझे सचमुच में हीरा मिल गया है। किंतु वह हीरा निर्जीव पत्थर नहीं, सजीव प्राणी है।" और वे मुझे हीरे का दर्शन कराने के लिए घसीट ले चले। संसार प्रेस (वाराणसी) में पहुँचकर उन्होंने जिस हीरे की ओर इशारा किया—वे थे वर्तमान 'संसार' के सम्पादक, महा मनस्वी, साहित्य के पुजारी श्री गंगाप्रसाद सिंह अखौरी। सचमुच का हीरा और वह भी पारस। पारस के सम्बन्ध में महाकवि सूरदास ने लिखा है—

इक लोहा पूजा में राखत,
इक घर बधिक परो।
यह दुविधा पारस नहीं जान
कंचन करत खरो॥

तभी तो उन्होंने मुझ जैसे पा
अवगुणी, दुर्विनीत, अयोग्य-अकिंचन को
के साथ अपना लिया। दुआ-सलाम के
गजानन मिश्र ने मेरा परिचय कराय
उन्होंने किंचित मुस्कान बिखेरते
कहा—"तो आप सिंह हैं! सिंह लोग
बहुत खतरनाक होते हैं।"

'परन्तु नाम के तो अन्त में 'म
लगा हुआ है।' गजानन जी ने कहा

'इससे क्या हुआ ? पहले सिंह
बाद में 'मधुर' है। यह बात अवश्य
कि 'मधुर' विशेषण लग जाने से
मधुरिमा तो अवश्य आ गई है।" अख
जी ने मेरी ओर देखते हुए कहा।
चुपचाप केवल बातों का आनन्द ले
था। कुछ समय पश्चात वे एकाएक ब
ड़ाने लगे—"न जाने कैसे लोग एम०
पास हो जाते हैं, शुद्ध-शुद्ध दस व
भी नहीं लिख सकते, तिस पर तुर
कि रचना रोज छपनी चाहिए। सम्प

वार क्या करे, छापो तो मुसीबत न छापो मुसीबत।" फिर वे बड़ी देरतक रच-ओं के साथ उलझे रहे। दूसरे दिन ने का वादा करके हम लोग वापस आये।

÷ ÷ ÷

दूसरे दिन, 'उर्वशी-श्राप' शीर्षक एक ता लेकर पहुँचा। कविता उन्होंने न से पढ़ी और प्रसन्न होकर बोले— ह! कविता तो बड़ी अच्छी है। अर्जुन उर्वशी को मां कहना आधुनिक सभ्य-ज के ऊपर करारा तमाचा है। मधुर! ाओं को लोग कितना पतिता कहते हैं, की कितनी खिल्ली उड़ाते हैं और फिर थाली को जूठा कहकर घृणा से मुँह छोड़ते हैं, उसी में खाना खाते हैं। लानत है इस समाज को। क्या वेश्याओं पास हृदय नहीं होता, समाज में अपमा- होकर, पद दलित होकर कौन जीना ता। कोई माई का लाल नहीं जो प्रतिष्ठा के साथ अपने घर में बिठा उन्हें मां और बहन का दर्जा दे।"

ा नहीं होगा कि वह कविता छपी और छपी देख कर उस समय मुझे जो हुई शायद डर्बी की लाटरी पाकर न होती। मैं बहुत दिनों तक नाचता ा और अपने मित्रों में उसका प्रदर्शन ा रहा। उसके बाद तो मैं अखौरी जी सम्पर्क में आता गया और धीरे-धीरे ा प्रिय भाजन बन गया। अब तो भेंट पर वे मुझे छोड़ते ही नहीं।

÷ ÷ ÷

साठ-सत्तर वर्ष की अवस्था, पके बा गोरा रंग, दुबला-पतला शरीर, नाटा क यही उनकी हुलिया है। दाढ़ी-मूछ सा रखते हैं। खद्दर का कुर्ता और खद्दर व धोती, पैरों में साधारण सी चप्पल औ हाथ में छड़ी। मुंह हमेशा पान से भरा रहता है। इस बुढ़ापे की अवस्था में भी वे जवानी का हौसला रखते हैं। रात अध्ययन-मनन-चिन्तन और सम्पादकीय लिखने में व्यतीत करते हैं और दिन प्रेस में। इस बुढ़ापे की अवस्था में भी वे इतना परिश्रम करते हैं कि दांतों तले अंगुली दबानी पड़ती है। उनके प्रत्येक विचार स्पष्ट और सुलझे हुए होते हैं। निरर्थक बात तो वे कभी करते ही नहीं हां, व्यंग और विनोद का पुट अवश्य देते चलते हैं। आपको सुन कर आश्चर्य होगा कि वे कांग्रेसी होते हुए भी कांग्रेस की आलोचना करते हैं। कांग्रेस में आये हुए दुर्गुणों से उन्हें बहुत ही सन्ताप रहता है। कभी-कभी तो वे बौखला कर यहां तक कह डालते हैं कि कांग्रेस सरकार बिलकुल निकम्मी है, अब इसकी कोई आवश्यकता नहीं। जिस देश की सरकार चोरों-लुटेरों-बटमारों को पैदा करती है, जिस देश में न्याय पैसे पर बिकता है, जिस देश में बड़े-बड़े बांध करोड़ों की लागत लगाकर बनते हैं और सहज ही में ध्वंस हो जाते हैं, जिस देश के युवक अकर्मण्य होकर, चरित्र और बल खोकर मारे-मारे फिरते हैं, जिस देश में

स्त्रियों का सौदा किया जाता है, उस देश को भगवान ही बचाये।

अपने सम्पादकीय में वे राष्ट्र विरोधी तत्वों की भर्त्सना तीव्र शब्दों में करते हैं। जनता को भ्रम में रक्खा जाय, उनसे बेगार करायी जाय और उन्हें टैक्सों के बोझ से कुचल डाला जाय यह अखौरी जी को कत्तई पसन्द नहीं। उनका क्रोध कभी-कभी नेहरू जी पर भी उबल पड़ता है और वे कहने लगते हैं—मैं कहता हूँ साहब! भारत किसानों का देश है और यहां के प्रधानमंत्री को भी किसान ही होना चाहिए। तभी वे किसानों की बात सोचेंगे, उनके दुख-दर्द की बात सोचेंगे और उनके जीवन को सुधारने का प्रयत्न करेंगे।

एम० ए० पास कर चुकने के बाद एक दिन प्रेस में बैठा हुआ था कि उन्होंने पूछ दिया—'आजकल क्या कर रहे हो?"

'सत्तू-पिसान बांधकर नौकरी खोज रहा हूं।"

"कहीं चारा बैठा?"

'जी नहीं।"

इतना सुनते ही उनका चेहरा मलीन हो गया। दुख की हँसी हँसते हुए उन्होंने कहा—"नौकरी कहां से मिलेगी? जब किसी मन्त्री का साला नहीं, दामाद नहीं, किसी एम. पी०, एम० एल० ए० से परिचय नहीं तथा प्रशासन के किसी बड़ी कुर्सी वाले की सिपारिश नहीं। हे भगवान, इस देश का क्या होने वाला है, जहां ऐसे-ऐसे पढ़े-लिखे नवजवान बेकार हैं। देश में यदि कोई बी० ए० बेकार है यह उनके लिए कलंक की बात है यदि कोई एम० ए० बेकार है तो कलंक की। मुझे तो ऐसा लगता है वह दिन दूर नहीं जब बेकारों का सड़ पर जुलूस निकलेगा और चिल्लायेगा—तो रोजी-रोटी दो, नहीं तो गोली दो।" फिर उन्होंने आश्वासन दिया मुझ से जो कुछ हो सकेगा मैं करूँगा

÷ ÷ ÷

एक दिन एक नये कवि अपनी क लेकर उनके पास आये। उन्होंने प्रेम उनको कविता पढ़ी, कुछ संशोधन और कुछ आवश्यक निर्देश भी दिये छाप देने का आश्वासन भी। कवि मह का रोम-रोम खिल उठा। देखने पर मानो साक्षात जूही की कली खिल हो। कवि महोदय ने कहा—"मैंने नो कविता को कई सम्पादकों को दिख और कई पत्रों में भेजा भी, परन्तु भी छापने को तैयार नहीं हुआ। जो मुझे प्रोत्साहन दिया है. उनका ब में किन शब्दों में करूँ?"

अखौरी जी खिल खिला कर हँस पड़े बोले—"भाई मुझे तो सबने प्रोत्सा किया, जिस किसी के पास भी गया नि होकर नहीं लौटा तब फिर मैं क्यों को निरुत्साहित करूँ? यदि सभी पुराने साहित्यकारों को ही प्रश्रय उन्हीं को बढ़ावा देंगे तो विचारे क्या करेंगे। मुझे तो नये लेखकों

शेष पृष्ठ ४१ पर

चापलूस चीन का मुँहतोड़ मुकाबला

शंभुनाथ बलियासे "मुकुल"
सार्वजनिक हिन्दी पुस्तकालय देवघर

[प्र]धान मंत्री पण्डित जवाहर लाल [जी] ने अपने एक वक्तव्य में ऐसा कहा [कि] चीन ने हमारे मुल्क पर जो आक्र[मण] किया है उसका मूल कारण है "चीन [को] धारणा हो गयी है कि तिब्बत [में] जनक्रांति हुई थी उसकी प्रेरणा [भारत] ने ही दी थी। और शायद इसी [से] वह भारत पर बहुत ज्यादे क्रुद्ध [हो ग]या है।" किन्तु भारत के भू-भाग पर [चीनी] आक्रमण के इतिहास को यदि देखा [जाय] तो पता लगेगा कि इस आक्रमण [के पी]छे उसकी बर्बरतापूर्ण प्रसारवादी [नीति] ही है अन्य कुछ नहीं। वह भारतीय सीमान्त के इलाकों को पहले से [अ]पने कब्जे में कर लेने का मनसूबा बांधे [था]। तिब्बत की जनक्रांति ने भारत [पर आ]क्रमण करने के लिये उसे बाध्य किया [ऐ]सी कोई बात इतिहास से प्रमाणित [नहीं] है। भारतीय क्षेत्रों में चीनी आक्र[मण] तिब्बती जनक्रांति के बाद नहीं, [ब]ल्कि उसके बहुत पहले से छिट-फुट रूप [में हो]ते रहे हैं।

[अ]गस्त १९५६ के सितम्बर महीने में [जब] 'खम्पा' में तुफान आया था तभी [...]ला दर्रा' में चीनियों ने भारतीय [सीमा] का अतिक्रमण किया था। लद्दाख में उनकी सड़क पहले से ही बन रही थी, जो १९५७ में आकर पूरी हो गयी। उत्तरी-पूर्वी सीमांत में भी चीनियों ने तिब्बती क्रांति के पूर्व ही आक्रमण कर दिया था। लोंगजू' में सितम्बर १९५८ को आक्रमण किया गया था जबकि तिब्बत की क्रान्ति मार्च १९५९ में शुरू हुई। इन प्रमाणों के आधार पर यह साफ है कि किसी खास कारण या घटना विशेष के चलते चीन ने हमारे देश पर आक्रमण किया है ऐसी बात नहीं है, प्रत्युत, यह कम्यूनिस्ट चीन की विस्तारवादी नीति का ही वीभत्स परिणाम है।

आज सारे विश्व में चीन के इस हमले के उद्देश्य को, उसकी भीतरी इच्छा को समझने की चेष्टा, विभिन्न तर्क वितर्कों एवं प्रमाणों के आधार पर की जा रही है। और लोग चाहे जो समझें, लेकिन मैं इसके भीतर उसकी विस्तारवादी नीति को ही मानता हूँ अपनी इस नीति को सफल करने के लिये उसका इतिहास ही इजहार कर रहा है। मौका पाकर उसने बारी-बारी से अपने हर पड़ोसी राष्ट्र पर झपटने का प्रयत्न किया है। यह दूसरी बात है कि हर झपटन में उसे सफलता ही नहीं हासिल हुई है। इधर तिब्बत, सिंकियांग पर झपटा मारने में उसे जो अनायास सफलता मिल गया,

जिसे भारत जैसे देश तक ने मान्यता दे दी, सम्भवतः इन्हीं आकस्मिक, विजयों ने उसके हौसले को बढ़ाकर बर्बर कर दिया। १९५५ में हुए बांडुंग सम्मेलन के बाद चीन द्वारा पड़ोसी देशों पर झपेटन मुद्रा का प्रयोग एवं बर्बरता पूर्ण व्यवहार द्वारा उनकी स्वतन्त्रता का अपहरण किया जाना विश्व के सारे देशों में घृणा तथा शंका की दृष्टि से देखा जाने लगा। क्योंकि उक्त सम्मेलन में विभिन्न देशों के साथ चीन, भारत और पाकिस्तान भी सम्मिलित थे। बांडुंग सम्मेलन में शामिल हुए सभी देशों ने एक साथ इसकी शपथ ली थी कि हम एक-दूसरे देश की अखंडता का सम्मान करेंगे और दो देशों के बीच होने वाले झगड़ों को शान्तिपूर्वक निबटायेंगे, पंचशील के सिद्धान्त का अक्षरशः पालन करेंगे और सहअस्तित्व की भावना को प्रचार-प्रसार देंगे तथा अपने आचरण में उतारेंगे। किन्तु चीन ने सैन्य शक्ति के बल पर एक के बाद एक पड़ोसी देश को बर्बरता पूर्ण आक्रमण के द्वारा हड़पना शुरू कर दिया। सिद्धान्त में शान्ति और क्रियात्मकता में युद्ध, सिद्धान्त में सहअस्तित्व की रक्षा और क्रियात्मकता में सैन्य बल पर अस्तित्व का हरण करना इससे अधिक घृणा पैदा करनेवाली और क्या बात हो सकती है? साथ ही साम्राज्य-विस्तार और सैन्य-संख्या विस्तार की बातें देख कर प्रति द्वंद्वी राष्ट्रों तथा कमजोर राष्ट्रों में शंकाओं के सिवा और क्या पैदा हो सकती है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि शांति प्रिय भारत-भूमि पर चढ़ाई कर बर्बर चीन ने अप[नी] रही-सही प्रतिष्ठा पर कालिख पोत ली[।] आज विश्व के सारे राष्ट्र, अलबानिया[,] उत्तरी कोरिया और उत्तरी वियतनाम [को] छोड़कर, भारत के साथ हैं और चीन [को] दगाबाज, फरेबी, लुटेरा, आक्रमक आ[दि] की संज्ञा से अविहित कर रहे हैं।

आज के युग में कोई भी देश अकेल[ा] रह कर अपनी राजनीतिक, और आर्थि[क] स्थितियों को सुदृढ़ बनाये नहीं रख सकता[।] उसे निश्चत रूप से इसके लिये अप[ने] मित्र देशों की ओर सहायता[र्थ] दौड़ना पड़ेगा। पर यह एक अजीब दे[श] चीन है, जिसकी सूझ बूझ का कोई ठिकान[ा] नहीं चलता है। यह एक एक कर स[भी] मित्रों के साथ धोखेबाजी करने का व्र[त] सा ले चुका है। मित्रता कायम करने [में] इसे जो चापलूसी हासिल है धोखेबाज[ी] करने में उससे चार कदम आगे कमा[ल] हासिल है। आज सारे देश चीन की इ[स] चापलूसी और गद्दारी को काफी अच्छ[ी] तरह से समझ गये हैं। इसके लिये वे [न] किसी के इजहार की अपेक्षा करते और [न] किसी प्रकार के जिरह करने की ही इच्छ[ा] रखते हैं।

अवकाश प्राप्त ब्रिगेडियर गुरुदीप सिं[ह] ने अपने अनुभवों के आधारपर चीन[ी] हमले के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए कह[ा] है कि "चीन के इस हमले का उद्देश[्य] हिमालय के पार्वत्य प्रदेश की कुछ मी[ल] भूमि हड़पना भर नहीं है। भारत में घुस[ने] के बाद भूखे चीन की भूख और बढ़ेगी

का उद्देश्य भारत को उसके पड़ोसियों नजरों में गिराना और हमारे प्रधान को कलंकित करना है। चीन एशिया नेता बनना चाहता है। इस क्षेत्र उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी हो उसे यह बर्दाश्त कर सकता।"

स्पष्ट है कि भारत की बढ़ती हुई ठा को देखकर चीन बौखला उठा भारत पर बिना किसी कारण के आक्रमण यानी बिल्ली खंभा नोचने के समान कोई देश या व्यक्ति किसी महा देश नेता या अगुआ अपने आदर्श आचरण े बनता है—दगाबाजी, फरेब या लाहट प्रगट करने से नहीं। इस सदर्भ अधिक बौखलाहट आने का एक कारण है कि कम्यूनिस्त संसार में भी चीन ी ओछी मनोवृत्ति के चलते पद-दा प्राप्त नहीं कर सका वहां रूस ने दौलत्तो चलाई कि बेचारा चीन ने चित्त हो गया। भारत पर विजय करने के बाद या भारत का चीनी-ा कर लेने के बाद सारी दुनियां की ब करीब आधी जनसंख्या उसकी अपनी जाती है और तब वास्तव में विश्व किसी मुल्क के पास यह ताकत या ा नहीं रह जाती है, जो उसे सर्व कसम्पन्न मुल्क घोषित होने से रोक । इस तरह से भारत पर आक्रमण ा के पीछे अपने श्रेष्ठ कम्यूनिस्त मुल्क रूस को मात देने का भी उसका मूल श्य छिपा हुआ है। पता नहीं चीन भाई घोषित करने वाले मुल्क सोवियत रूस को इसकी जानकारी है या नहीं।

अपने इस नापाक उद्देश्य की पूर्ति के लिये चीन ने काफी सावधानी और चापलूसी से काम लिया था। बांडुंग सम्मेलन के समय ही भारत विरोधी नीति के प्रमाण स्वरूप उसने पाकिस्तान के साथ सांठ-गांठ शुरू कर दी थी। उस समय उसकी इस हरकत को नादानी समझ कर भारत ने माफ कर दिया था। भारत बराबर उसके साथ एक मित्रराष्ट्र का व्यवहार करता रहा।

सभी जानते हैं कि लद्दाख जम्मू-कश्मीर राज्य का एक हिस्सा है। चीनियों ने १९५६-५७ में ही उसपर हमला कर दिया और हमारी बारह हजार वर्गमील भूमि पर कब्जा कर लिया। भारत के बार बार विरोध करने पर भी वह रुका नहीं। लाचार भारत को उस ओर अपनी सेना भेजनी पड़ी। लद्दाख इलाके में ४५ चौकियां बनायी गयीं जिनमें सब पर चीनियों ने कब्जा कर लिया और अब वह उनमें से एक को भी छोड़ने को तैयार नहीं है। ये सारी धोखेबाजी और गद्दारी की बातें हैं।

पर आश्चर्य की बातें है कि लद्दाख और नेफा क्षेत्र पर विजय प्राप्त करने के बाद अब चीनी शान्ति का प्रस्ताव उपस्थित करते हैं। वे शान्ति का पत्र देकर भारतवर्ष और साम्राज्यवादी अमेरिका की निन्दा करते हैं क्योंकि उनके इस कपटपूर्ण प्रस्ताव में अब कोई आने वाला नहीं है साथ हा उनकी धोखेबाजी

पूर्ण हरकतों का मुँह तोड़ जवाब दिया जाने वाला है। आज चीन के मूर्ख कम्यूनिस्त १६३६ के हिटलर की तरह या जर्मन जनता की तरह छटपटा रहे हैं। उस समय युद्ध स्थगन प्रस्ताव उपस्थित कर स्तालिन के रूस के साथ हिटलर के जर्मन ने सिर्फ अनाक्रमण समझौता पत्र पर हस्ताक्षर ही नहीं किया था, प्रत्युत उनलोगों ने पोलेंड के बंटवारे के लिये गोपन सन्धि भी की थी। आज कम्युनिस्त चीन ठीक हिटलर के चरण चिन्ह पर चलता दिखलाई पड़ रहा है। वह भारत के सामने तो शांति या युद्ध स्थगन का प्रस्ताव रखता है साथ ही पाकिस्तान के साथ अनाक्रमण समझौता करता है। ये बातें चीनियों की कूटनीतिज्ञता को प्रमाणित करती हैं। चीन की इस नीति के संबन्ध में राजनीति के प्रकांड पण्डित पाश्चात्य विद्वान मिस्टर फेलिक्स ग्रास ने अपने एक लेख में लिखा है कि "War is for Mao, the highest form of class struggle. The essence of his strategic and tactical policy is to move slowly, from one stage to another without unnecessary risks What he says is that the first stage is to capture a lease area. The next is to reorganise forces, consolidate the positions, during temporary armistice on other halt in the fighting, such as may be the case when the Hi[malayan] winter sets in··· an opportune moment next stage begins which almost a repitition of first stage and is follo[wed] by a further period consolidation."

उक्त उद्धृतांश से पाठक स्वयं [समझ] जायेंगे कि "तोवांग" के पतन के स[ाथ] साथ गत २४ अक्तूबर को चीन ने [युद्ध] बन्दी का प्रस्ताव क्यों उपस्थित किया फिर "नेफा" दखल करने बाद २१ न[वम्बर] को पुनः वही प्रस्ताव क्यों दुहराया मेरे ख्याल से माओत्सेतुंग राज[नीतिक] कूटनीतिज्ञता के द्वितीय चरण में पहुँच[े] हैं। राजनीतिक कूटनीतिज्ञता का [प्रथम] चरण उन्होंने तिब्बत दखल कर ले[ने] बाद ही समाप्त कर दिया। इसके स[म्बन्ध] में मिस्टर फेलिक्स ग्रास आगे [लिखते] हैं कि—"China's invasion [of] India began with the [inv]asion of Tibet. After co[nso]lidating his position in T[ibet] Mao bade his time al[low]ing his ambassadar to [talk] peace with India while [he] prepared his staging area [for] the next phase."

ऊपर के उद्धरण में मिस्टर ग्रा[स ने] माओत्सेतुंग की जिस नीति का वि[वेचन] किया है हमारे सामने वह भ[...]

णित होती दिखलाई पड़ रही है। गोत्सेतुंग शांति या युद्धसम्बन्धी का
व उपस्थित कर झाड़ी की आड़ से
ार खेलना चाहते हैं। माओ की
नीतिज्ञता के चलते भारत, नेपाल और
स्तान परस्पर एक-दूसरे से विच्छिन्न
चले जा रहे थे। इन प्रतिवेशी देशों
वाक-युद्ध तो आरम्भ हो ही गया था।
था, यदि ये समय पर नहीं सचेत
जाते, तो कलांतर में एक-एक कर चीनी
ी सर्वहारा बनाकर स्वयं धन्ना सेठ
जाते—सब पर एकाधिपत्य कायम लेते।
ने किस तरह से भारत के इन प्रतिवेशी
राष्ट्रों को बरगला कर उलटी खोपड़ा
ना दिया था इस पर जरा सोच कर
ये। जो नेपाल बराबर अपने को भारत
अंग मानकर चलता रहा, उसने चीनी
वे में आकर भारत को गालियां देना
म कर दिया था. छिट-फुट
करना भी आरम्भ कर दिया था और
को रसद देने तक को तैयार हो
था। जिस पाकिस्तान के सामने
दस वर्षों से भारत शांति-पूर्ण समझाने
ताव रखता आया वही आज कम्यू-
चीन द्वारा अनाक्रमण समझौता का
उपस्थित करते ही उसकी ओर
पड़ा और उसे आलिंगन करने को
हो गया। यह इन प्रतिवेशी राष्ट्रों
ति विपाक का ही परिणाम है। चीन
यदि अपनी इस चापलूसी में कहीं सफ
हो जाता, तो बड़ा ही भयानक परिणा
सामने आ जाता यानी तृतीय विश्व महायु
अवश्यम्भावी हो जाता।

किंतु चीन की चापलूसी और कू
नीतिज्ञता तुरत पकड़ में आ गयी। भारत
काफी सचेत हो चुका है। अपने मित्र-
राष्ट्रों की सहानुभूति ने इसके मनसूबे को
बहुत अधिक बढ़ा दिया है। इसके बच्चे-
बच्चे को मातृ भूमि की बलिदेवी पर न्यो-
छावर होने के लिये उत्तेजित कर दिया है।

भारत अब प्रतिज्ञाबद्ध हो चुका है
कि वह चीनियों को उसकी बर्बरता का
मजा चखायेगा और अवश्य चखायेगा।
काफी लम्बी अवधि के बाद भारतीय जनता
ने अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिये,
शत्रु का मुकाबला करने के लिये अस्त्रधारण
किया है। इतिहास साक्षी है कि रोब या
आँखें दिखा कर कोई विदेशी कभी भारत
का शासक नहीं बन सका। चीन का यह
हौसला पस्त कर देने के लिये प्रत्येक भारतीय
तन, मन, धन न्योछावर करने को तैयार
हो गया है। अस्तु चीन सोये सिंह को
जगा कर मृत्यु को आमंत्रण कर रहा है।
विश्व के अधिकांश राष्ट्रों का विश्वास
तो वह खो ही चुका है, यदि अब भी नहीं
सचेत हुआ तो उसे तिब्बत तक को अपने
हाथ से खोना पड़ेगा।

मनीषी हेनरी डेविड थोरो : एक विहंगावलोकन

गिरिजा शंकर
बांका (अलीगंज) भागलपुर

आज एक शताब्दि बीत चुकी है, इतिहास के संश्लिष्ट व्यक्तित्व मनीषी हेनरी डेविड थोरो का देहावसान हुए। इस कवि, लेखक और प्रकृतिवेत्ता को अपने जीवन काल में बहुत ही कम प्रसिद्धि मिल सकी थी। इनकी मृत्यु पर कोंकर्ड के कुछ लोगों ने और कुछ पत्रिकाओं ने शोक प्रकट किया था। इनके गुरु और मित्र दार्शनिक राल्फ-वाल्डो एमर्सन ने इनके अन्तिम संस्कार श्रद्धांजली पर कहा था, "थोरो से ज्यादा सही अमेरिकन पैदा नहीं हुआ।"

कुछ विद्वानों का विचार है—एमर्सन एवं थोरो का अमेरिका में आविर्भाव परमात्मा की एक भौगोलिक भूल थी। इन्हें भारत में पैदा होना चाहिये था। कुछ ने तो इन्हें अमेरिकी ब्राह्मण की संज्ञा से विभूषित किया है। किन्तु नहीं, महान पुरुष सार्वभौमिक और सार्वकालिक होते हैं, उनकी संस्कृति विश्वसंस्कृति होती है। उनका कोई सीमा बन्धन नहीं।

इन्होंने संसार के सारे धर्मग्रन्थों का गहन अध्ययन किया था। लेकिन ये हिन्दू, चीनी और परसियन के अत्यधिक निकट थे। इन्हें भारतीय जीवन पद्धति से बड़ी आस्था थी। भारतीय संस्कृति के प्रति इन्हों[ने] अनेक जगह अपना सच्चा प्रेम प्रद[र्शित] किया है। प्रथम दिन ही जब इन्हों[ने] गीता का अध्ययन किया तो उसमें व[र्णित] सिद्धान्तों से ये आसाधारण रूप से प्र[भा]वित हुए थे। रात भर इनका मस्ति[ष्क] उन दिव्य सिद्धान्तों से उद्वेलित रहा [और] परिणामस्वरूप मुर्गे की बांग के पहले ही [...] बैठे। गीता में इनकी अटूट श्रद्धा थ[ी] अपने एकान्त चिन्तन में जाते वक्त भी इसे साथ ले गये थे। विश्व विख्यात प्र[...] 'वाल्डेन' में इन्होंने गीता, महाभारत [और] कबीर का जिक्र किया है।

इनकी १८४१ में लिखी 'सविनय अव[ज्ञा] आन्दोलन' सम्बन्धी कुछ पुस्तकों से गांधीजी ने असहयोग आन्दोलन की प्रेर[णा] और आत्मानुभूति प्राप्ति की थी। इन[के] लेख 'आन दी ड्यूटी आफ सिविल डि[स]आविडियेन्स' से ही गांधीजी को 'सत्याग्र[ह]' के लिये उपयुक्त शब्द मिल पाया थ[ा।] वास्तविकता को लक्षित किया जाय तो गांधीजी और टाल्सटाय की प्रेरणा पृष्ठभू[मि] थे।

अनन्य भक्त गांधीजी ने २६ अक्टू[बर]

१८०६ को अपनी डायरी में लिखा है — "थोरो एक महान लेखक, दार्शनिक और कवि थे, पर इसके विरुद्ध ये अत्यन्त व्यावहारिक पुरुष भी थे, यानी ये किसी चीज का उपदेश नहीं देते थे, जिसे वे स्वयं कार्यरूप में परिणत करने के लिये उद्यत न हों। अमेरिका ने जो महान पुरुष पैदा किए हैं उनमें थोरो की गणना होती है।"

इस महापुरुष की जन्मभूमि अमेरिका के बोस्टन नगर से २० मील दूर 'कोंकर्ड' है। पिता का पेशा पेंसिल बनाना था। माता एक पादरी की कन्या थी। बाल्यावस्था से ही इनको खेल से विरक्ति और प्रकृति से प्रेम था। जिस समय और लड़के खेल का मजा लेते, ये नदियों, झीलों, पहाड़ियों और जंगली वीरान राहों में भटका करते। पढ़ने में साधारण लड़कों से आगे न थे। बीस साल की उम्र में हारवर्ट विश्वविद्यालय से स्नातक की परीक्षा पास कर अध्यापन का कार्यारम्भ किया था। १८३८ तक इनका एकमात्र साथी इसका भाई ही था। इन्हीं दिनों रेल्फ वेल्डो एमर्सन 'कोंकर्ड' आये, जिनसे इनकी गहरी दोस्ती हो गई। १८४२ में इनके भाई की मृत्यु हो गई, यह दुःख का बवंडर इन्हें पथ से विचलित कर देता, अगर एमर्सन की सहानुभूति और ढाढ़स की शीतल छाया इनके ऊपर न होती। लगभग दो साल तक दोनों प्रकृति प्रेमी साहित्यिक मित्र साथ ही रहे। इन्हीं दिनों प्रसिद्ध साहित्यकार नेथेनियल हाथोर्न भी कोंकर्ड आ गये। थोरो से इनकी कोई घनिष्ठता नहीं रही लेकिन परिचय अच्छा रहा। हाथोर्न ने १ जुलाई १८४२ को अपनी डायरी में लिखा था — "... अपने में एक ही है। इस पुरुष में प्राकृतिक चमत्कार है, हालांकि यह असुन्दर है। ... इसकी लम्बी है। मुंह चपटी है। ... में बिल्कुल देहाती सा लगता है। पर इसकी कुरुपता में वह ईमानदारी और ... है, जो उसे सुन्दरों से भी अधिक सु... बना देता है।"

थोरो ने अपने सम्बन्ध में कहा है— "एक स्कूल अध्यापक, प्राइवेट ट्यूटर, पर्यटक, बागवान, किसान, बढ़ई राजमजदूर, पेंसिल बनानेवाला, लेखक और कभी-कभी कविता रस लेने वाला हूँ।"

१८५० तक ये साहित्यकार की गणना में नहीं आये थे, यद्यपि इन्होंने कुछ ले... और कवितायें लिखी थीं। लेकिन कों... की सड़कों पर उन समय तक लोग इ... आदर की निगाह से देखने लग गये थे। इनकी साहित्यिक प्रतिमा का जागरण १८५५ में हुआ जब उन्होंने 'वाल्डेन' तालाब के पास कुटी बनाकर दो वर्षों ... प्रकृति का साक्षात किया।

ये स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दतापूर्ण ... भोग की ओर अतिप्रेरित थे। निर्द्व... जीवन-यापन इनकी तीव्र पिपासा थी... जीवन तत्वों के सूक्ष्म ज्ञान के जिज्ञासु ... जीवन की गहराई में पैठने के इच्छुक थे ... इस गहराई से जीवन के भविष्य को नि... लने के महत्वाकांक्षी थे। आखिर एक ... १८४५ को एकान्त प्रेमी थोरो वन्य जी... यापन के लिए कोंकर्ड से एक मील दूर वा...

जलाशय के निकट चले आये। यहां इस प्रकृति सन्यासी ने ओक और पाइन वृक्षों से घिरे एक टिले पर अपने हाथ से पेड़ काट कर एक पर्णकुटी का निर्माण किया। दो साल तक अपना एकान्त जीवन प्रकृति के बीच बैठ इसके महान दर्शन में गुजारा। अति आकर्षक और प्रेरणादायक हरी-भरी पर्वतमालाओं से घिरी विशाल झील वाल्डेन के किनारे बैठ मनन किया। क्षितिज के छोर के सीमाहीन संसार, प्रकृति की एकान्त नीरवता और पानी पर झिलमिलाते सूर्य की स्वर्णिम किरणों का सुखद सौन्दर्य आदि, इनके अति सवेदनीय मस्तिष्क पर असाधारण प्रतिक्रियाओं में फलित हुए। इस घोर बीरान स्थलों में इन्होंने प्रकृति और जीवन का साक्षात्कार किया, दोनों में सामञ्जस्य पाया और कहा नहीं जा सकता कि इन्होंने इसका कितना मनन किया। इस प्रकृति प्रेमी सन्त के विषय में एमर्सन ने कहा है—"प्रकृति की प्रत्येक वस्तु इन्हें डुबो लेती थी और ये अपनी डायरियाँ सतर्क निरीक्षण परिणामों से भरते रहते थे।"

इन्होंने अपने प्राकृतिक अनुभवों के सतत् मनन पर दो साल तक जो रोजनामचा लिखा था, वह जीवन और कला की अद्भुत कृति १४ खण्डों में प्रकाशित हुई थी। इनके रोजनामचे में जीवन और कला का महान दर्शन है। बाह्य और अन्तर प्रकृति का महान समन्वय है और प्रकृति की सूक्ष्मता को लखने का अपना दृष्टिकोण है। हम यह भी कह सकते हैं कि इनकी प्रतिदिन की दिनचर्या इनका जीवन गीत है और प्राकृतिक अनुभवों की असाधारण क[illegible] नाओं का झंझावात है।

अपने इन्हीं रोजनामचे का प्रयोग इन्ह[illegible] अपनी महान कलाकृति 'वाल्डेन' में की [illegible] इनकी इस पुस्तक को अन्तर्राष्ट्रिय ख्य[illegible] प्राप्त है। अमेरिका की बहुत कम पु[illegible] इतनी अधिक भाषाओं में प्रकाशित [illegible] हैं। आज भी यह पुस्तक अमेरिकी पु[illegible] बिक्रेताओं की दूकान पर लोकप्रिय है। [illegible] जीवन काल में दो ही पुस्तक 'कौन[illegible] और 'मेरी मेक नदियों' में एक सा[illegible] प्रकाशित हो पाई थी। जिसकी केवल [illegible] प्रतियां ही बिकी थी।

(थोरो सर्वदा निर्द्वन्द्व जीवन यापन[illegible] ओर सतत प्रेरित थे। इन्होंने लिखा है—[illegible] would say to my fellows, o[illegible] for all, as long as possible [illegible] f eeand uncommitted. It ma[illegible] but little difference whet[illegible] you are committed to a fa[illegible] or a country jail.") एक जगह [illegible] ने बड़ी रोचक और मनोरंजक बात [illegible] है—'मुझे पहले इस बात का अत्य[illegible] फिक्र रहा करता था कि ईमानदारी से ज[illegible] कोपार्जन कर अपना इतना समय कैसे [illegible] पाऊँ जिससे अपने प्रिय कार्यों को [illegible] सकूँ। पर उन दिनों में रेल की सड़[illegible] नजदीक रखा हुआ एक बहुत बड़ा [illegible] देखा करता था। मजदूर लोग रा[illegible] अपने हथियार उसी में रखकर ताला [illegible] दिया करते थे। मेरे मन में यह [illegible] उठा कि जिसे तकलीक हो वह इस

सन्दूक तीन डालर में खरीद ले और
हवा आने-जाने के लिये छेद कर दे।
होने पर आदमी उसमें घुस कर और
र से ढक्कन देकर मजे में अपनी रात
ा सकता है। इस प्रकार उसकी आत्मा
न्त्र रहेगी और वह स्वाधीनतापूर्वक
े प्रिय विषय का अनुशीलन भी कर
गा, न किराये का झंझट है और न
न मालिक के तकाजों का। कितने ही
मी दर असल इससे बड़े सन्दूक में
ी हैं और किराया देते-देते मरते हैं।"

टहलने की वास्तविक योग्यता का परदा-
करते हुए इन्होंने कहा—"अगर तुम
े माता-पिता, भाई-बहन, स्त्री बच्चे और
सबको छोड़ने के लिए और कभी उन्हें
देखने के लिए तैयार हो, अगर तुम
ा कर्ज चुका दिया और अपनी वसीयत
र दी है, अपने सभी झगड़ों का फैसला
दिया है और बिल्कुल स्वतन्त्र हो तब
कना चाहिये कहीं तुम में टहलने की
ता है।"

कुछ लोगों ने एक बार इनसे कहा—
ा आप कृपाकर मेरे साथ टहलने को
गे?" थोरो ने उत्तर दिया—"कह नहीं
ता। मेरे लिये भ्रमण सबसे अधिक महत्व-
चीज है और भ्रमण का समय मेरे पास
ा फालतू नहीं कि मैं दूसरों को अपने
ले सकूँ।"

इस विशिष्ट व्यक्तित्ववादी थोरो का
न अति व्यवहारिक और सादा था।
े दो साल के एकान्त जीवन में ये
रत की चीजों का उत्पादन खुद कर
लिया करते थे। श्रम से इन सारी वस्तु
को जुटा लिया करते थे। ये सेम और आ
उपजाते थे और उसे बेच कर जरूरत
और चीजें खरीद लेते थे। प्रथम तो
पाकी थे लेकिन शाकाहारी (सिर्फ जलाश
मछलियों के अलावा) हो गये थे। इन
सब्जी उगाना—सब्जी बेचना, मछली प
ड़ना, कुटिया की मरम्मत करना बताता
कि सभ्य मनुष्य प्रतिद्वन्दिता की जिन्द
से दूर सादगी और स्वच्छन्दता की विशा
राह से जीवन को ले जा सकता है।

जब ये वन्य जीवन से लौटे तो सादग
की विजय और प्रकृति तादात्म्य पर अप
विचार व्यक्त किये, बिना यह कहे कि य
सादगी वाल्डेन जैसी हो। इसके बाद
वर्षों में तो इन्होंने अनेकों व्याख्यान दि
अनेकों लेख लिखा और भूमि निरीक्षक
पद पर कार्य भी किया। इन्होंने अपन
शादी नहीं की थी।

भारतीय महात्माओं का मूलमन्त्र 'उ
विचार और सादा जीवन', इनके जीवन व्या
पार से घुला-मिला था। एन्टिक्वेरियन
हाउस नामक अद्भुतालय (अपने महा
पुरुषों को जीवित रखने में दक्ष अमेरिकियों
ने इस अद्भुतालय का निर्माण किया है
में रखी थोरो की कुर्सी और चारपाई यह
सिद्ध कर रही है। इनका विश्वास थ
आत्मा की आवश्यकताओं की पूर्ति
लिये धन की जरूरत नहीं है। इनकी सादग
से सम्बन्धित कथन का अभिप्राय है—उन
चीजों का इस्तेमाल करो जो आवश्यक हो
उन वस्तुओं का मूल्य न चुकाओ जिसे वास्त

में नहीं चाहते हो।

एन्टिक्वेरियन हाउस में भारत भक्त एमर्सन और थोरो की वस्तुओं और उनके द्वारा प्रयुक्त पुस्तकों का एक आकर्षक प्रदर्शन है। इन प्रयुक्त पुस्तकों से यह स्पष्ट है कि वे दोनों सिर्फ आध्यात्मवादी ही नहीं थे वरन् स्वाध्यायशील थे और उनके अन्दर ज्ञानार्जन की तीव्र पिपासा जाग्रत थी। और इसी सबल आधार का उन्मुक्त जिज्ञासु एमर्सन ने गीता से प्रेरणा प्राप्त कर भारतीय दर्शन का पुष्कल अध्ययन किया था और समान गुण भूषित थोरो को भी उस ओर प्रेरित किया था।

अमेरिकी जन जीवन में भारतीय प्रेम की आध्यात्मिक ध्वजा फहराने वाले एमर्सन और थोरो ही थे। इन दोनों के सहयोग और परिश्रम से फहरायी गई ध्वजा अभी भी वहां स्पष्ट स्थायी रूप से दिखायी दे रही है। अमेरिकी विद्वानों ने इससे प्रेरणा पाकर और प्रभावित होकर ही भारतीय संस्कृति और साहित्य का अध्ययन करना प्रारंभ किया।

सफलता और शान्ति प्रदायक कर्मयोग-कर्म करने का मनुष्य को अधिकार है, फल का नहीं, इसे ईश्वर पर छोड़ दो—की व्याख्या करने वाली गीता में दोनों की अटूट श्रद्धा थी और इसी की निर्मल छाया में विकास के स्वर्णिम भविष्य की ओर दोनों का जीवन अग्रसर हुआ।

अमेरिकी दर्शन इतिहास के प्रणेता श्री हर्बर्ट स्नेटर ने कहा है—"थोरो की चिंतन धारा में भारतीय तत्त्व इतना ज्यादा समाविष्ट हो चुका था कि वे वनवासी भारतीय ही बन गये थे।"

साम्प्रदायिकता के ढोंगीपन और पा
ण्डीपन में इन्हें आस्था न थी। ये सं
विग्रहवाद के परे और मूर्त्ति-पूजा के
विरोधी थे। इनकी उक्ति थी प्रत्येक
ईश्वर का अनुभव करना चाहिये पर
साम्प्रदायिक नहीं बनाना चाहिये।
हरि, बुद्ध, ग्रेटस्पिरिट और ईश्वर
में इनकी आस्था थी।

इनकी गणना अमेरिका के दार्श
विचार धारा के अतीन्द्रियवाद के प्रतिपाद
में की जाती है। संसार के मूलभूत आध्या
तत्त्व में कभी-कभी ये इतने तल्लीन
जाते थे कि भौतिक वातावरण को
ही जाते थे। अतीन्द्रिय ज्ञान की उपल
ही इनके वास्तविक जीवन का स्रोत
यह एक ऐसे ज्ञान की उपलब्धि है
भौतिक इन्द्रियों द्वारा प्राप्त नहीं कि
जा सकता। थोरो की यह दार्शनिक वि
धारा अद्वैतवाद से भिन्न नहीं है।
आध्यात्मिक दृष्टिकोण से बिल्कुल भार
बन गये थे। भौतिकवाद की निस्सा
और क्षणभंगुरता पर जोर देने वाला
सिद्धान्त बिल्कुल भारतीय अद्वैतवाद है

१८४८ में वाल्डेन तालाब के पा
अपनी कुटिया छोड़ने के पश्चात् ये दा
उन्मूलन आन्दोलन की ओर क्रमशः स
होते गये। अन्याय ये कभी सहन नहीं
सकते थे। ये कहते थे दासता अनुचित
इसे किसी भी कीमत पर हटाना है
इसके लिये ये सतत् सक्रिय होकर दा

स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त किये थे।
वाल्डेन गमन से पूर्व, इनका कहना
जो सरकार दासता को प्रश्रय देती है
कर देना अनुचित है। इसे उन्होंने
ार में लाया और कर देने से इन्कार
पर गिरफ्तार किये गये। इन्हें बड़ी
हुई कि इनके सिद्धान्त परीक्षण का
सुअवसर आया है। लेकिन कुछ और
के पूर्व ही उनकी चाची ने कर भुगतान
दिया और ये मुक्त कर दिये गये।
ा ये बड़े क्षुब्ध हुए थे। इस विषय में
कहानी प्रचलित है कि जब एमर्सन
में थोरो से मिलने गया, तो एमर्सन
पूछा —"तुम यहां क्यों हो?" थोरो
त्तर दिया —'तुम यहां क्यों नहीं हो?"
े सिद्धान्त में इनकी गजब की आस्था
दृढ़ता थी। आत्मबल में हीरा की
रता और चमक थी।

५७ में इनकी भेंट उन्मूलनवादी केप्टन
ब्राउन से हुई और वे इनसे काफी
वित हुए। उत्तर वर्जीनिया के दासों
मुक्ति प्रयत्न के आरोप में केप्टन ब्राउन
पकड़े जाने और मुकदमा चलने पर
ो को 'प्ली फौर केप्टन ब्राउन' लिखने
प्रेरणा मिली। ये सर्व प्रथम अमेरिकन
जिन्होंने व्यक्ति स्वातंत्र्य के लिये संघर्ष
केप्टन ब्राउन की बचाव के लिये सार्व-
नक रूप से भाषण किया था और राज्य
अन्याय का घोर विरोध किया था।

अमेरिकी अक्षर व्यक्तित्वों में महान
ो में फक्कड़पन भी गजब का था। इनके
ड़पन पर तो कभी-कभी बड़ी हँसी
आती है। ये कभी भी किसी भोज
सम्मिलित नहीं होते थे। ये कहने थे—
"They make their pride in
making their dinner cost muc
I make my pride in makin
my dinner cost litte."

इनके टेबुल पर तीन सफेद पत्थर
टुकड़े थे। इन्होंने देखा कि इसे झाड़
पोछने में समय लगता है, इसलिये इन्हों
इसे खिड़की से बाहर यह कह कर फें
दिया कि अपने दिमाग को झाड़ने-पोछ
का काम मुझे कौन थोड़ा है जो इ
झंझट को रखूं।

समाचार पत्र के विषय में आपने ए
पत्र में लिखा था—"Blessed ar
they, who never read a new
spaper, for they shall se
Nature and through her god."

अपने एक मित्र को पत्र में इन्हों
लिखा था —"मैंने कभी भी आपसे य
वायदा नहीं किया था कि आपको चिट्ठ
लिखूंगा और जब मैं चिट्ठी लिख रहा हूँ
तो इसका मतलब है. मैं अपने वायदा
ज्यादा लिख रहा हूँ।"

इनका कहना था कि आज कल ६ दिन
का काम होता है और एक दिन रविवा
की छुट्टी, यह क्रम बदल देना चाहिये
६ दिन की छुट्टी होनी चाहिये और ए
दिन का काम।

इस महान आत्मा का कष्टमय जीवना
बड़ा हृदय विदारक है। ४० वर्ष की अवस
से ही इनका स्वास्थ्य गिरने लगा था
बर्फीली जगह में मजदूरी करते हुए ए

संध्या को इन्हें सर्दी लग गई। ये बीमार पड़ गये। इस रोग ग्रस्त शरीर की पीड़ा को दो साल तक मृत्यु सज्जा पर पड़े ढोते रहे और ६ मई १८६२ को दुखद प्रभात में इनके प्राण पखेरू उड़ गये।

अपनी जीवितावस्था में ही इन्होंने अपनी समाधि स्थल निश्चित कर लिया था। इनकी समाधि के निकट ही इनकी दोनों बहनों, पिता, माता और भाई की समाधि बनी हुई है।

इस भारतीय संस्कृति के परम निष्ठावान महात्मा थोरो की समाधि पर श्रद्धा के दो फूल चढ़ाने के निमित्त इन्हें भारत के जन-साधारण में प्रवेश करा लेना है। जिनके राष्ट्रपिता बापू अनन्य भक्त थे उनका मु भी अनन्य भक्त बनना है।

शेष पृष्ठ २६ का

जितना प्रेम है, उतना पुराने लेखकों से नहीं। हिन्दी में नये-नये साहित्यकारों की अवतारणा करना मैं अपना धर्म समझता हूँ।"

राष्ट्रभाषा की समस्या को लेकर चलने वाले विवादों से उन्हें बेहद खेद है। उनका कहना है कि हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है जिसे देश की सर्वाधिक जनता बोलती और समझती है। अंग्रेजी को वे ही लोग पसन्द करते हैं जिन्हें राष्ट्र से प्रेम नहीं अंगरेजियत से प्रेम है और वे अपने लाभ के कारण हिन्दी की प्रतिष्ठा नहीं चाहते, क्योंकि हिन्दी के आते ही उनकी प्रतिष्ठा छिन जायगी।

अखौरी जी ने कई ग्रन्थों का प्रणयन, सम्पादन और अनुवाद किया है। जिनमें पद्माकर की काव्य साधना बहुत ही प्रसिद्ध ग्रन्थ है। कहते हैं हिन्दी में पद्माकर के सम्बन्ध में सबसे पहली उपयोगी पुस्तक यही है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में इनका उल्ले किया है। कविता, कहानी, उपन्या निबन्ध आदि विविध क्षेत्रों में इन्हें अपनी लेखनी दौड़ाई है। आचार्य पं रामचन्द्र शुक्ल, बाबू श्यामसुन्दर दास, आचा केशव प्रसाद मिश्र की छत्र छाया में उन विकास हुआ है। अतः इस बात में क अत्युक्ति नहीं कि अखौरी जी योग्य गुरु योग्य शिष्य हैं। उन्होंने कई पत्र पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया है और आजक संसार प्रेस वाराणसी से निकलते 'संसा के सम्पादक हैं।

अखौरी जी उद्भट आलोचक औ साहित्य के मर्मज्ञ हैं। प्रतिभा तो उनकी चेरी है। दुख के साथ कहना पड़ है कि ऐसे मनस्वी एवं साहित्य के पुजा को हिन्दी संसार प्रतिष्ठा क्यों नहीं करता पता नहीं कब हम लोगों में सुबु आयेगी जिससे ऐसे तपस्वी साधकों सम्मान हो सकेगा।

ुग का राही

दामोदर शास्त्री
उच्चतर मारवाड़ी पाठशाला
भागलपुर

× ० *

कौन धरा-सा धीर विनत है नभ मण्डल सा ,
सागर-सा गंभीर विमल है गंगा जल-सा ?

कौन शान्ति का कमल क्रान्ति का अनल लिये है ,
चन्द्रचूड़-सा कौन गरल का पान किये है !

कौन विश्व का माप-दण्ड बन आज खड़ा है ,
कौन सत्य पर अङ्गद पद सम अडिग अड़ा है ?

किसने छल से कूटनीति को पृथक किया है ,
सत्य-शिला पर राजनीति को खड़ा किया है ?

व्यक्ति-कमल में कौन समष्टि-पराग सजाता ,
कौन समष्टि-गगन में रवि का तेज जगाता ?

किसने मन की वाणी को निर्बंध किया है ,
प्राण लेखनी को किसने स्वच्छन्द किया है ?

शोषण-विष इस ओर उधर है तानाशाही ,
कौन ढूँढ़ता मध्यम पथ को युग का राही ?

कौन तना गिरिशृंग सदृश है तूफानों में ,
सजा रहा मधु स्वप्न कौन गीले गानों में ?

टिकी आज जगती की किस पर कोमल आशा ,
कौन शान्ति की आज दे रहा नव परिभाषा ?

कौन विश्व का सर्वाधिक विश्वास पात्र है ,
कौन विश्व का केन्द्र बिन्दु बस, एकमात्र है ?

राजेन्द्र बाबू के प्रति

शकुन्तला प्रसाद
गर्दनीबाग, पटना

सोच रही थी
बहुत दिनों से
पत्र
लिख पाती
तुझे एक बार
किन्तु
मन का
मन में ही
रह जाता था
सोच-सोच कर
रुक जाता था
कि तुम अभी
ऐसी जगह हो
जहां फुर्सत नाम की
कोई चीज नहीं होती है
किन्तु
जब तुम
बालक की तरह
लौट आये अपना घर
तब
मेरी बाल्य प्रवृति ने
तुझ से ढिठाई करनी चाही
सुना कि—
तुझे लोगों ने
कीमती उपहार दिये है
एक लालसा
जग उठी मन में
'उपहार' नाम की
मैं भी कुछ दे पाती
किन्तु—
जो कुछ मैं दे पाऊँ
वे सब
तो तेरे पास हैं
हे राजेन्द्र!
तब तो थे तुम
राज्य के इन्द्र
किन्तु अब तो
मन का इन्द्र बने बैठे हो
इसलिये,
तीन अक्षर की 'कविता' में
बस 'आदर' शब्द
समाहित है
लेकिन खुश हूँ
कि
तीन अक्षरों का
महत्व नहीं कम होता
तीन से ही
बस बना 'संसार' है
और जिसमें हम तुम बसे हैं
वह 'जीवन'
क्या अमूल्य नहीं ?

भागते किनारे

—:महेन्द्र नारायण सिंह 'मस्ताना':—

किनारे भी भागते हैं'—सुना तो र्य सा लगा, जैसे घोड़े के मस्तक पर सींग। लेकिन हां, उसे पढ़ा। बार-पढ़ा। सोचा और समझा। समझा सोचा। तो इस निष्कर्ष पर आना के एक ओर जहां इस आणविक-युग ज्ञानिकों ने कमाल हासिल किया है — पर महान विजय प्राप्त कर तो ओर वहीं हमारे समर्थ साहित्यिकों ने कला के माध्यम से दुनियां को इस तरह के में डाल दिया है कि मानव जिसे अटल, अजेय और अमर समझता उसमें भी स्थायित्व नहीं। आखिर क्यों? हाँ, तो इसके समाधान में जा सकता है कि बुरे दिन जब सावन-की अन्धेरी निशा की तरह पग-पग ठोकर खाने को मजबूर करते हैं इन्सान -तो अपने भी पराये बन जाते हैं, भी अन्धकार का बुर्का पहन लेता है, भी राख बन जाते हैं और बन जाते चलते हुए फूल भी चुभते हुए शूल। विषम परिस्थिति में पत्थर-दिल का मानव हिम्मत का बांध तोड़कर अपनी मासूम गी की मजार सजाने को प्रस्तुत हो है। किन्तु 'भूदानी सोनिया' शस्वी कलाकार श्री उदयराज सिंह ने 'भागते किनारे' का प्रणयन कर चैलेंज कर दिया है कि मनुष्य भी विपत्तियों के असह्य प्रहार को सहन कर 'वर्चुअससोल' और 'सिजन-टिम्बर' की तरह अविनाशी बन जाता है जिसे प्रकृति का कोई भी प्रहार असर नहीं करता। इसका सजीव चित्र तो हमारे समक्ष 'माला' प्रस्तुत करती ही है।

'भागते किनारे' इधर के कुछ महत्वपूर्ण प्रकाशनों में अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। ऐसा इसलिए कहा जा सकता है कि यह तात्विक कसौटी पर निस्सन्देह खड़ा उतरता है। क्योंकि आज-कल यदा-कदा ऐसे भी उपन्यास देखने को मिलते हैं जिसकी समीक्षा 'टेकनीक' को मद्दे नजर रखकर करना ही बेकार है। शेक्सपीयर के पात्र के विषय में किसी ने कहा है—"His all characters are real beings of flesh and blood, they speak like a man not like author." सचमुच माला तो इसकी एक सजीव प्रतिमा है जीवन की निर्दोष पगडंडी पर उसे कभी सुख न मिला, प्यार न मिला। हाँ, मिली सदा सिसकती वेदना ही तो। उसने मुसीबतों को प्यार कर संसार के चौराहे पर अपनी हिम्मत का नगाड़ा पीट दिया कि

इस विशाल-विश्व में कोई ऐसी भी एक नारी है जो बिपत्तियों से उसी प्रकार प्यार करती है—जैसे अपने परदेशी प्रियतम को उसकी प्राण प्यारी प्रियतमा। 'माला' को देखते हुए हमें हठात् श्री माधवन लिखित 'अनामन्त्रित मेहमान'-का दशवर्षीय नायक 'यशवन्त' की याद हो आती है, जिसे अपने जीवन के दस वसन्त में ही मुसीबनों से अविराम जूझना पड़ा। किरण जैसी महान हृदया नारी और अरुण कुमार जैसा दरिया-दिल पुरुष सचमुच आज के समाज में लाख प्रयत्न करने पर भी मिलना मुश्किल है। लता का चरित्र चित्रण कर लेखक ने नारी-चरित्र का एक अलबम ही हमारे सामने रख छोड़ा है।—'देख अपनी दुलारी बेटी की काली करतूत! अंजोत के यहाँ से फीस के पैसे मनिआर्डर से मँगाये जाते हैं।...आवारा शोहदा! हमारा घर बर्बाद कर रहा है।" इस तरह चरित्र-चित्रण में लेखक ने अपनी क्षमता और उदारता का परिचय दिया है।

देश काल के ख्याल से तो 'भागते किनारे' ध्रुव सत्य सत्य सा नजर आता है। सच्चे शब्दों में सफल उपन्यास वही कहा जा सकता है जो कल्पना और भावना के शीशमहल का वर्णन न कर धरती की धूल में लोटनेवाले का वर्णन करता हो। 'भागते किनारे' एक समस्या प्रधान उपन्यास है। 'विवाह समस्या तो आज के मध्यमवर्गीय परिवार के लिए कोढ़ ही है। तभी तो 'माला' जैसा सुकुमार पुष्प अर्थाभाव के कारण समाज के फौलादी पंजे का शिकार बनता है। बेमेल विवाह के कारण आज हमारे सभ्य समाज के कितने ही स्त्री-पुरु को यातनायें सहनी पड़ती हैं—कहा न जा सकता। इस ख्याल से "भाग किनारे" आधुनिक समाज की एक मौलि समस्या का पूर्णरूपेण स्पर्श किया है।

कथोपकथन की सजीवता ने तो उपन्यास के चमत्कार में और भी चार च लगा दिया है। छोटे छोटे वाक्य तो ख की तरह फुदकते चलते हैं—"तुम्हारे पर कौन कौन हैं?"

'माँ, दीदी!"

"बस"

"जी"

"नाम क्या है?"

"माला।"

सचमुच, मुझसे अगर कोई पूछे तो कहूँगा कि लेखक 'कथोपकथन' का ट्रेंड मास्टर थे।

इस उपन्यास की कथावस्तु बड़ी अच्छी बन पड़ी है। क्योंकि हमारे स की, आज की, अभी की, हमारी आपकी समस्या को इस प्रकार सरल, सरस बनाकर रखा गया है—कि एकदम समीचीन बन गया है। कथा-वस्तु ही किसी भी उपन्यास की आत्मा है। स सादे और स्पष्ट ढंग से कथावस्तु का कर लेखक ने अपनी अद्भुत क्षमता परिचय दिया है।

भाषा-शैली—गंगा और यमुना की कल-कल, छल-छल करती हुई प्रवाहित रही हैं। देखें हम इसका एक गि

शेष पृष्ठ ४६ पर

निराला जी की अन्तिम काव्य कृति गीत गुंज

डा० शिव गोपाल मिश्र,
२५, अशोक नगर, इलाहाबाद—१

'गीतगुंज' निराला जी की अन्तिम य कृति है जिसमें ३५ गीत संग्रहीत इन गीतों का रचनाकाल सन् १९५३ सन् १९५७ तक है। ५ वर्षों में लिखे गीतों की इतनी अल्प संख्या यह संकेत ी है कि अन्य कृतियों के विपरीत तगुंज' किन्हीं विषम अवस्थाओं में ही ूत हुआ। बात भी ऐसी ही थी। ाधनो' के लेखन के पश्चात सन् १९५३ ही निराला जी ने यह योजना बनाई कि अब जो वे गीत लिखेंगे, उन्हें 'गीत-' के अन्तर्गत संकलित किया जावेगा तु केवल एक ही गीत लिख पाये थे उनके हाथों एवं पांवों की अस्थियों भीषण वेदना प्रारम्भ हुई। सन् १९५४ ुछ काल के लिये स्वस्थ हुये तो कई एक लिखे। फिर प्रायः अस्वस्थ ही रहे और पत्रिकाओं के सम्पादकों के आग्रह वश कुछ गीत लिख पाये। ३ वर्ष पूर्व शित गीतगुंज के द्वितीय संस्करण के ात् निराला जी ने प्रायः इतने ही गीत लिखे होंगे परन्तु वे अभी तक प्रकाशित हो पाये अतः उनके सम्बन्ध में यहां कुछ लिखना प्रासंगिक न होगा।

'गीतगुंज' के द्वितीय संस्करण ा वाह्यसज्जा इतनी आकर्षक एवं भीतर ा प्रत्येक पृष्ठ इतना अलंकृत है कि उसे देखक निराला जी ने एक बार कहा था—इसका मूल्य डेढ़ रुपये नहीं, दस रुपये होना चाहिये यह तो टी० एस० इलियट के काव्य सकल को भी मात करता है। खेद का विषय कि निराला जी की इस कृति का विवेच न तो उनके जीवन काल में हो पाया औ न मृत्यु के पश्चात् ही किसी ने इस ओ ध्यान दिया। सम्भव है गीतों की न्यून संख्या के कारण आलोचक मौन रहे हों

'गीतगुंज' के सूक्ष्म अध्ययन से यह पत चलता है कि इसके अधिकांश गीत प्रकृ से सम्बन्धित हैं। इन गीतों में बसन्त वर्षा तथा शरद् ऋतुओं का सूक्ष्म किन् चित्रमय वर्णन है। यदि हम यह कहें ि 'गीतगुंज' में निराला नितान्त प्रकृतिवाद हैं, तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। निराल जी प्रारम्भ से प्रकृति के कवि रहे परन्तु उन वर्णन मोहक न होकर यथार्थ के चित्र प्रस्तुत करने वाले होते रहे। 'गीतगुं

के गीतों में कहीं पुष्पों के नाम गिनाये गये हैं तो कहीं अन्नों के। केशर एवं कलिकायें तो मानो निराला के काव्य की लड़ियां हों। 'जुही की कली' निराला जी की प्रथम कविता थी। 'जुही' उन्हें अत्यन्त प्रिय थी। चमेली भी कम प्रिय न थी। गीतगुंज में भी इन्हें यत्रतत्र देखा जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि सन् १९४६ के पश्चात सन्यास धारण कर लेने पर निराला जी पर प्रकृति परिवर्तनों का गहरा प्रभाव पड़ा था। ऋतु के अनुसार गीतों में चित्रण प्रस्तुत करना, मानों उनका स्वभाव सा बन गया हो।

किन्तु नहीं, वे सदैव ही ऐसे गीत नहीं लिखते थे। कभी कभी अपने जीवन के आदर्शों को गीतों में उतार कर रख देते थे। ये गीत भावों की दृष्टि से अनुपम हैं। प्रत्येक पाठक को उनसे प्रेरणा का सतत् स्रोत उमड़ता दिखेगा। "जी में न लगी जो विकल प्यास" ऐसी ही रचना है। "मधुर मधुर मृत्यु मधुर," "प्यार की पाती यह थाती अथवा "समझे मनोहारी" अन्य गीत हैं जो प्रकृति वर्णन को प्रस्तुत न कर गीतों के वर्ण्य विषय में विविधता उत्पन्न करते हैं।

"अर्चना" एवं "अराधना" की ही पंक्ति में समादरित होने योग्य "गीतगुंज काव्य कृति एक ओर जहां भाषा तथा शैली में उन्हीं की परम्परा का निर्वाह करती है, वहीं भावों या गीतवस्तु की दृष्टि से उनसे भिन्न भी है। "अर्चना" में समास शैली अपने चरम पर है, 'अराधना' में कुछ शिथिल परन्तु "गीतगुन्ज" में समास शैली और विचित्र हो गई। उदाहरणार्थ:

बौरे आम कि मौरे बोले।
प्रात कि गात पात के तोले॥
+ + +

इस गीत में "कि" का प्रयोग कितना व... है (जैसे ही आम बौरे कि मौरे बो... लगे, दूसरी पंक्ति में "गात पात तोले" का अर्थ बहुत ही माथापच्ची... बाद निकलेगा—पत्तों के समतुल्य हुये—बदन हल्का हल्का हो गया।

आगे की दो पंक्तियां और देखें:—

कैसी ज्योति छांह से छलकी
दुर्बल ने हद कर दी बल की

इनमें छांह से ज्योति का छलकना निर्बल द्वारा बल की पराकाष्ठा प्राप्त क... दो दूर दूर के विचार न जाने कैसे लगते...

एक दूसरा गीत लें जिसकी अन्तिम पंक्तियां हैं:—

जीवन पर जीवन बल खाया
श्याम नील की फैली माया
हरा भरा नीचे लहराया
बिजली की बिजली दिखलाई।

इसमें बादलों से आच्छादित नील गग... बिजली के चमकने और उसकी प्रतिच्छ... का हरे भरे मैदानों में भरे जल में दि... देना वर्णित है।

एक और गीत देखें:—

धिक मनस्सब, मान, गरजे बदर...
झूले झिले, गान सरजे बदरवा
चीर के धनुष के तीर छूटे-छूटे

बून्द के बारि के वसन बूटे-बूटे,
गले के चले गायन, चरायन पटे,
पेड़ के तल, अतल, गरजे बदरबा
इसमें "चीर के धनुष के तीत्र" (इन्द्र
-सतरंगी साड़ी के तीर) तथा "बून्द के
के वसन बूटे बटे" (पानी की बून्दों को
कर वस्त्रों में खचित बूटे डिजाइनें बनाये
हैं—अंश बड़ी परिश्रम से समझ
पाते हैं। अगली पंक्ति में चरायन पटे
अर्थ—चारागाह पटे हुये हैं होगा।
इस प्रकार गूढ़ शैली के द्वारा प्रकृति
में प्रथम दृष्टि में जो दुरूहता प्रतीत
है वह अर्थ की गम्भीरता के लिये
सम्भ कर किया गया है। जहां विचारों
रतम्य नहीं जान पड़ता वहां पाठक का
है, कविता का नहीं।

गीतगुंज में कुछ ऐसे ही शब्द प्रयोग
हैं जो अटपटे प्रतीत होते हैं जैसे 'उड़े
पैंग से निकलें' में सिकले (सिकुड़े
तथा "अन्धार सुचि केश कुटिल ऋजु"
सुचि (सूची मेद्य घना अन्धकार)।
न, छलकन, की सृष्टि भी निराला जी
अपनी विशेषता है। बहुबचनों के
में कमरखियां, पखियां, छूबियां,
, पंगतलों (पैरों के नीचे) द्रष्टव्य है।
कहीं कारक चिन्हों (प्रातिपदिकों का
विचित्रता पैदा कर देता है यथा—
यों के हारों बहुत प्रकार' में हारों
ों से) अथवा 'झरी रेणुयें क्लान्तों
तों' में प्रान्तों (प्रान्तों में)। वस्तुतः निराला
की काव्य शैली की ये विशेषतायें हैं
हैं उनके समकालीन कवि नहीं प्रयुक्त कर
पाये।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है गीतगुंज के गीतों की विशेषता है प्रकृति का वर्णन ये वर्णन रीतिकालीन प्रकृति वर्णन से सर्वथा भिन्न है। प्रतीकों के द्वारा संकेत मात्र है। एक ही गीत में कई चित्र एक साथ गुम्फित करने का निराला जी ने प्रयास किया है। इसे भावश्रृंखला का टूटना न कह कर भावों की विविधता मानना समीचीन होगा।

एक चित्र वर्षा का है—फिर से बादल छा गये हैं चपला चमकने लगी है। ऐसा प्रतीत होता है मानों परि के समान सुन्दरी प्रिया के अलकबन्ध में लगी बिजली चमकी हो। सुख के आंसू बून्द बन लुढक-लुढक कर पृथ्वी पर आ रहे हैं। बदली के कारण मानों दिन में ही रात के सुखद सपने आ रहे हैं, क्षणिक घाम और क्षणिक छाया से सारा देश घिरा है। गर्मी के कारण कुम्हलाये हुए, फूल के सदृश मुंह अब अच्छे लग रहे हैं। गीत इस प्रकार है।

फिर नभ घन घहराये।
छाये बादल छाये।
कौंधी चपला अलक बन्ध की
परी प्रिया के मुख की छवि सी
बून्दों सुख के आंसू ढलकर
पृथ्वी के उर आये।
दिवस निशा का सुखद स्वप्न है
ज्योतिश्छाया देश लग्न है
आतप के कुम्हलाये खुलकर
मुख प्रसून भाये।

शरद्कालीन वर्णन में बादलों का क्रम

अदृश्य हो जाना, पति के आ जाने पर प्रेयसी का प्रफुल्लित होना तथा पक्षियों का अपने नीड़ों में चला जाना प्रमुख आकर्षण बिन्दु है—

शरत् की शुभ्र गन्ध फैली,
खुली ज्योत्सना की सित शैली।
काले बादल धीरे-धीरे
मिटे गगन की चीरे-चीरे
पीर गई उर आये पी रे
बदली द्युति सैली।

शीतावास खगों ने पकड़े
चहचह से पेड़ों को जड़ड़े

× × ×

'गीतगुंज' के गीत संख्या में क[म]
हुए भी निराला जी की प्रकृति-अवलो[कन]
सूक्ष्म दृष्टि, उनकी समासशैली, शब्दों के
एवं चमत्कारिक प्रयोगों की पुष्टि कर[ते]
इन गीतों के विशद् विश्लेषण की अवश[्यकता]
है क्योंकि उनके द्वारा निराला जी के अ[न्तिम]
काल के मनोभावों का पता चलेगा।

पृष्ठ ४५ का शेषांश

"पुरुष और नारी—नारी और पुरुष—विधि के हाथों गढ़ी दो अप्रतिम प्रतिमाएँ, ही प्रतिमा की जड़ी आंखों की दो पुतलियां एक ही तने की दो डालियां, एक ही डाली की दो टहनियां,— बाहर से दो,— अन्तर में एक, फिर भी दोनों में कितना अन्तर-- कितना दुराव! एक धरती, दूसरा आसमान। एक मोम दूसरा बज्र। एक सब कुछ सहकर भी चुप, दूसरा एक खुट पर तूफान उठाने को तैयार।" भाषा और शैली ही तो भाव का चिर-नूतन परिधान है। लेखक भाषा का एक सफल जादूगर सा जान पड़ता है।

जहां तक उद्देश्य का प्रश्न है, लेखक को इसमें पूर्ण सफलता मिली है। सच्चा कलाकार तो वही है, जो गगन-मण्डल मुसकियाने उन चांद-सितारों से सम्बन्ध विच्छेद कर धरती पर आह और कराह की विदारक आवाज से द्रवित होकर सेवा में लग जाय और उसे चंगाकर इ[स] की जिन्दगी जीने का मौका दे। न[ये] लेखक ने बेपनाह 'नाला' की मर्म[स्पर्शी] कहानी उपस्थित कर समाज के लोगों [की] आँख खोलने का सबक दिया है।

सचमुच, 'भागते किनारे' नाम अ[क्षरशः] सत्य है। क्योंकि "ललक पुलक से एक निश्छल बाला कैसे प्रतिकूल परिस्थि[तियों] के प्रहार से पीड़ित, समाज की बाधाओं से प्रताड़ित, तीखे व्यंगों से व्य[थित] सब ओर से उपेक्षित, एक ऐसी नारी [बन] गयी है जिसके जीवन की नौका जब तूफानी थपेड़ों से निकलकर किसी कि[नारे] लगने को आई—किनारे ही खिसकते ग[ये] खिसकते गये ....."

"ईहामृग"

एक समीक्षात्मक परिचय

देवी प्रसाद गुप्त
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट कालेज, कोटपूतली, जयपुर-राजस्थान

डा० वचनदेव कुमार कृत 'ईहामृग" कविता-संग्रह सन् १९६२ की एक उपलब्धि है। इसका मुद्रण नागरी [illegible]रणी सभा काशी एवं प्रकाशन-सर्जना [illegible]न, पटना से हुआ।

'ईहामृग' प्रयोगों तथा वादों की परंपरा [illegible]वमुक्त ६३ मुक्तक कविताओं का सुन्दर [illegible]न है। संकलन की अधिकांश कवि-[illegible] कवि की आत्मानुभूत मान्यताओं [illegible]व्यंजना हैं। युग जीवन के व्यापक [illegible]श में रचनाकार ने स्वयं को समर्पित [illegible] कतिपय सत्य खण्डों को संक-[illegible] किया है। जिसके लिये माध्यम स्वरूप [illegible]ो चिंतना, साधना, कल्पना और अनु-[illegible] आद्योपांत क्रियमाण रही है। इन [illegible]ाओं में जीवन सत्य को युग सत्य के [illegible]ख में भी रखा गया है। इसीलिए [illegible]ाओं को स्थायी महत्व है। उनमें [illegible] के पुनीत स्वर हैं. उनमें साधना का [illegible]न हुआ है, उनमें अनुभूतियात्मक [illegible]जन है, उनमें बौद्धिक विचार विनिमय [illegible] भी है और चिंतन परितोष के लिए [illegible]चत सामग्री भी। वास्तव में विज्ञान [illegible] में कविताओं का कोई महत्व नहीं। वह युग के बुद्धिजीवी (भाव प्रवण कम) पाठक के चेतना स्तरों में अनुभूति के प्रति आस्था, जीवन की विवशताओं के प्रति विश्वास, सामाजिक संघर्षों के लिए समर्पण भाव और स्व की स्वार्थ प्रवञ्चना में फं[illegible] मानव मन के लिए परात्म का भावोदय रागात्मक सम्बन्धों से स्थापित न कर सके। मैं कहने में निःशंक हूँ कि 'ईहामृग' की अनेक कविताओं में यह शक्ति है। कतिपय उद्धहरणों से अधिक स्पष्ट होगा।

विश्वास के स्वर 'आस्थागीत' की इ[illegible] पंक्तियों में देखिए—

"मैं अपनी राह बनाता हूँ।
× × ×
जिस अनजाने अन्धियारे में
वैज्ञानिक शक्ति परास्त हुई,
मैं उसी कटीले खंडहर में
अपना मृदु हास रचाता हूँ।" (पृ० २[illegible]

जीवन के प्रति अदम्य आस्था के स्[illegible] 'प्रयाण गीत' कविता में है:—

"साहस का नाम जिंदगी,
तू साहस से काम ले,
मिहनत का गान जिंदगी,
तू मेहनत को ठान ले।
× × ×
पारिवारिक चिंताएँ हों,

वैयक्तिक विपदाएँ हों,
छलन के चक्रव्यूह हों,
या दानव दैत्य समूह हों।
लड़ने का नाम जिंदगी,
तू लड़ने की ठान ले।।" (पृष्ठ ४०

युग जीवन में व्याप्त संघर्ष की प्रवञ्चनाओं से कवि व्यथित लगता है। वह संघर्ष के कारण को क्षुद्र, तुच्छ और नीच मानता है। इस विडम्बना का निदान वह अस्त्र-शस्त्रों से नहीं वरन् मोहम्मद मूसा के लघु लगुड़ से चाहता है:—

"दीनता रूग्णता का
अशिक्षा कुशिक्षा का
हो रहा सर्वत्र ताण्डव नृत्य—हे ईश्वर!
× × ×
जाति के नाम पर, नाम पर भाषा के,
रंग के नाम पर, नाम पर धर्म के,
सम्प्रदाय के नाम पर, नाम पर राष्ट्र के,
कर रहे उल्कापात, अनगिनत रक्त लिप्सु
रक्तबीज।
नहीं चाहता मैं गांडीव या पिनाक
पाशुपतास्त्र, ब्रह्मास्त्र या सुदर्शनचक्र
चाहता बस, एक लघु लगुड मुहम्मद मूसा का
आघात-मात्र जिसके
हो जायँ सारी अनीति-अनरीति छूमन्तर,
धूम्रधर्मों।"
(जबें कलीम कविता पृ० ५५)

पौराणिक उपाख्यानों में उल्लिखित त्रिपुर कल्पना का समाहार बड़े सुन्दर ढंग से, किन्तु अत्यल्प शब्दों में त्रिपुर-भेद, शीर्षक कविता में हुआ है। जिसमें मानव के मन द्वन्द्व की सामायिक व्याख्या भी है। इसमें तृष्णा, मोह और अज्ञान नामक [...] का भेदन संकल्प रुद्र से किया गया है:—

"तृष्णा का कांचन द्युलोक
मोह का राजत अन्तरिक्ष
अज्ञान का आयस भूलोक
मेरे विराट अंतस में गतिमान
उत्पन्न करते दानवोल्या अ[...]
हे संकल्प रुद्र।
अलम है तुम्हारा शरसंधान
त्रिपुर भेदनाथ—शान्ति संस्थापना
(पृ०

"हमारी सभ्यता" शीर्षक कवित[...] सभ्यता को प्रच्छद-परदर्शी कह कर व[...] युग के ही कटु सत्य को व्यक्त किया [...] है:—

"भावों का प्राणघात?
सिद्धान्तों का भ्रूणपात?
भाषा का सन्निपात?...
लगता है अन्तर का सत्य सदा होत[...]
अविचारणीय विधवा के भाग्य
तो महसूस होता है
आज की हमारी सभ्यता ही प्रच्छद प[...]
है।" (पृ०

"नया महाभारत" शीर्षक कवित[...] विश्व जीवन की ध्वंसकारी प्रवृतियों [...] प्रभाव को ही प्रगट किया गया है। स्वदेश प्रेम की मंगल कामना कवि कृष्ण [...] सार्थवाह बनने में ही मानता है:—

"सं भावित है महाभारत
आज पुनः दो प्रभुत्व प्रसारकामी व[...]
कुरुक्षेत्र सम्प्रति होगा अन्तरिक्ष
जहां अठारह लम्बे दिनों की भर्वा[...]

एक क्षण में बिन्दुगत हो जायगी।

\+ + ÷

ओ कृष्ण !
सार्थवाह होना ! तुम भी आज भारत के
जो शोक संविग्न मानस हो
बैठता नहीं रथोपस्त हो।" (पृ० ४२)

लेखक की आस्था तक्षक को भी बन्धु
ने में है। यह भावना मानव के आध्या-
क मूल्यों का महिमांकन ही है:—

"जीवन का अर्थ-सदोशयता
मानव का पर्याय—परदुःख कातरता
ए! मेरे तक्षक बन्धु!
तुम्हारी भागीरथ निष्ठा है डँसना

× ÷ =

किंतु क्या छोड़ दूँ ?
अपनी आस्था का दूध लावा देना
ना. ना है बड़ा दुःसाध्य,
निर्मम नास्तिक होना।" (पृ० ३८)

इस प्रकार की अनेक कविताएँ इस
ग्रन में हैं, जिनमें जीवन को अदम्य
ह और अपूर्व बल देने की क्षमता है।
लगता है कि इन कविताओं का
यक बलवती प्रेरणा से जागरूक कला
है। वह अपनी कृतियों से हतदर्प
हतप्रभ नहीं। उसे प्रगति पथ पर
र करने वाले सोपान चतुष्टय वह है:-

"...पोस्टरों या पैम्फलेटों से
कविता जीती नहीं—जीती है वह,
अन्तर्बल से, प्राण स्फूर्जन से।
आज भले अनसुनी कर दो मेरी बात
कर दो भले मेरी कीर्ति कृतियों को
रद्दी की टोकरी के साथ
किंतु, हतप्रभ, हतदर्प मैं होता नहीं।
कारण यह पथ दर्शिका ऋचा है मेरी
उपेक्षा, उपलंभ, उपहार एवं उपासना
यही तो सोपान चतुष्ट्य हैं
जीवन विकास के।" (पृ० २०)

कलाविधि की दृष्टि से भी 'ईहामृ
सफल संकलन है। तारक सप्तकों, के प्रकाश
अर्थात् प्रयोगवादी (नई कविता) काव्य पर
म्परा की सृजन वेला में 'ईहामृग' में शिल्प
का समुन्नत रूप है। भाषा उदात्त ए
भाव संप्रेषय है। कविताएँ स्वानुभुतपर
होते हुए भी पाठक को सुबोधगम्य एवं सह
ग्राह्य हैं। प्रतीक एवं उपमान एक ओ
वैदिक पौराणिक होते हुए पुरा प्राचीन
तो दूसरी ओर दैनिक जीवन के संदर्भों
सुसंयोजित होने कारण अति अर्वाची
नवीन भी हैं। कवि की कल्पना शक्ति
सराहनीय है। प्रस्तुत संकलन की 'शाप
नामक कविता में पगडण्डी को एक अभागि
माना गया है, जो अपने प्रिय राजमार्ग
मिलने को उत्कण्ठित है। पगडंडी के म
में बड़ी बड़ी अभिलाषाओं की साध है।
वह नगर निवासी राजमार्ग प्रिय से मिले
किन्तु चलते चलते मार्ग में ही उसे सुर
सी मुँह फैलाये सौतिन नदिया मिलती है
वहां घाट पर कोई नाविक भी नहीं जो उ
पार पहुँचा दे। अब उसे प्रणय भार असह
वेदना तुल्य हो जाता है। वह व्यग्र है रा
के श्याम की भाँति श्यामल राजमार्ग
मिलने को। किन्तु—

"किन्तु हाय यह नदिया जो है

शेष पृष्ठ ५६ पर

मुंशी पुरी

(आशमा)

(पात्र और प्रसंग का परिचय पढ़ते पढ़ते स्वयं विदित हो जायगा)

"ये महात्माजी कौन हैं भाई ?"

"महात्मा नहीं हैं साहब ! आहत और अवहेलित कांग्रेसी शेर हैं। इन दिनों मेरे साथ हैं।"

"क्या करते हैं यहां ?"

"मुझे समझाना और प्रवचन सुनाना।"

"बस ? इतना ही ?"

"और क्या काम है कांग्रेसियों का ?"

"और भी उनके कुछ काम रहते हैं भाई"

"क्या ?"

"एक दूसरे को मिटाना भी।"

"हां, यह आप ठीक कह रहे हैं।"

"जबतक सत्ता प्राप्त नहीं हुई, सभी एक साथ एक सूत्र में बंधे रहे। सत्ता हाथ लगते ही सभी एक दूसरे से भिड़ गये।"

"सभी देशों में शायद राजनीतिक दलों का यही हाल होगा।"

"सभी देशों में क्यों कर होगा ? हां, जहां मूर्ख बसते हैं, पापियों का बोलबाला है वहां अवश्य यह काम होरहा है।"

"आप ठीक कह रहे हैं। एसियाई देशों की भीतरी हालत अन्यन्त दर्दनाक है। ईराक के कासिम का क्या हाल ब[illegible] टर्की के मैंडर्स पर क्या गुजरा ? स्वयं [illegible] को लोगों ने क्या किया ?"

"गनीमत यही है कि हमारे देश में आलोचना, निन्दा, गाली तक ही आ[illegible] लोग सीमित रह जाते हैं। कोई बन्दूक में नहीं उठा रहे हैं। क्योंकि गांध[illegible] बाद यहां फिर किसी नेता पर हमला [illegible] हुआ।"

"तब तो कुछ तरक्की हुई।"

"हां, कुछ तो हुई ऐसा कह[illegible] सकता है। यह तरक्की अगर चालू [illegible] तो काल क्रम में गाली और निन्दा भी [illegible] हो जायगी ऐसी उमीद हम कर सकते [illegible]

"तरक्की का भी क्या रहस्य है समझ में नहीं[illegible]

"तरक्की से मेरा मतलब समझ[illegible] से है, ज्ञान चेतना से है, धर्म बोध से [illegible] और क्या ? विलायत के लोगों को देख[illegible]

"वे भी तो लड़ाई में उतरते हैं[illegible]

"हां, पर आपस में नहीं। बात [illegible] कि जब दुनियां में डकैत और खूंखार ज[illegible] बढ़ने लगते हैं तो भला आदमी को अ[illegible] रक्षा और धर्म के सनातन स्वरू[illegible] कायम रखने के लिये बन्दूक हाथ में [illegible] पड़ना है राम रावण युद्ध और महा[illegible]

...इस लिये लड़े गये थे। प्रत्येक ...ासुर संग्राम ही हैं।"

...म संतोष कर लें कि हमारा देश ...री की ओर बढ़ रहा है। पर मुझे यह है कि क्या देश सिर्फ राज... के मनमाने इस्तेमाल के लिये हो हैं? ...हित्यकारों को प्रभुत्व नहीं मिलता? ...ों को क्यों मजदूरी पर खरीद ...ती? क्यों गायकों का मंत्री मंडल नहीं ...इन राजनीतिज्ञों का ही बोलबाला क्यों?"

भाई मेरे, सभी कुछ जनता की शक्ति पर ही तो निर्भर रहेगा। ...सदा से गुलाम ही रहती आयी ...तक राजा की गुलामी थी तो आज ...तज्ञों की! जब तक जनता यह समझेगी ...तक उसकी मुक्ति कैसे संभव है! प्रत्येक ...नी मूर्ख पुरुष को पाद दासी होते ...पत्नी नामक मोहक माया जाल में ...कर अपने को सुखी और स्वतंत्र ...झती है! प्रत्येक कुत्ता अपने स्वामी का ...होते हुए भी अपने को सुखी और ...ही समझता है। बैल को भुसा ...लगता है। बल्कि वह उसे अमृत ...ा है। पर मनुष्य भूसा नहीं खा सकता। ...को खीर पसन्द है। देवता को ...खीर से घृणा हो जैसे हमें भूसा ...। सुख और स्वतंत्रता भी अपनी-...समझ के अधीन सापेक्ष होता है। ...के ब्राह्मण मुसलमानों के अधीन भी ...को ब्राह्मण ही समझते थे, अंग्रेजों ...धीन भी ब्राह्मण ही समझते थे। ...ब्राह्मण की परिभाषा यही बनायी गई है कि जब वे देखते हैं, अपना देश पराधीनता और पतन की ओर मुड़ रहा है तब या तो उसे अपनी तपस्या और साधना के बल पर सत् दिशा की ओर घुमा देगा या उस भगीरथ प्रयत्न में अपने को मिटा देगा। पर आज ब्राह्मण की परिभाषा भात बेचना और पण्डागिरी करना रह गया। सभी कुछ जन मानस के धरातल पर अवलम्बित रहता है, राष्ट्र भी स्वतंत्रता भी, सुख भी, शब्द भी और उसका अर्थ भी।

"खैर"

"अरे हमलोग कहां से कहां आगये? आप मुझे इस आहत कांग्रेसी शेर की बात कहिये। इनकी दाढ़ी हाल की उपज है या पुरानी है?"

'बिलकुल हाल की है और उसका भी अत्यन्त दिलचस्प किस्सा है।"

"सुनाओ तो"

"बात यों हुई। आप जानते ही हैं मुझ पर एक संस्था का बोझ है। और मैं एक गरीब आदमी हूँ। न विद्वान या नेता ही। ऐसी स्थिति में मुझ पर कितनी अधिक दिक्कतें हो रही होंगी आप सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। यहां के सभी कार्य-कर्त्ताओं के भोजन, आवास, हजाम धोबी; सभी का खर्च मुझ को ही व्यवस्था करना पड़ता है। हाथ में जब पैसा रहता है तो सभी व्यवस्था दुरुस्त चलती है। पर जब हाथ में पैसा नहीं रहता तो मिजाज झुंझला उठता है। एक दिन हजाम ने आकर मुझसे कहा—"आज को

री मजदूरी साढ़े तीन रुपये हुए सो पा करके दीजिये।" मैं अवाक् रह गया। मिजाज भी गरम होने लगा। मैंने कहा, भाई, इतनी मजदूरी इन दिनों एक बी० ए० को भी नहीं मिलती। तुम तो उन लोगों से बेहतर है। मगर आज से मैं तुम्हें पैसा नहीं दूंगा। जिन का बाल बनाया इन्हीं से पैसा भी लेना।" उसने सीधे जाकर हमारे इस कांग्रेसी शेर से पैसा मांगा? इन्होंने बिगड़ कर कहा—"जाकर बाबू से मांग। तंग करते हो?" हजाम ने कहा—"बाबू ने कहा आप ही से लें।" यह सुनते ही ये उछल कर खड़ा हो गया—"क्या कहा? मुझ से लें? हो नहीं सकता? इतना मूर्ख वह नहीं है। संसार जानता है आजतक मैंने हजाम को पैसा एक नहीं दिया। सभी हजाम आज तक मेरा काम करना पुण्य समझता रहा है, तुम कौन हो अभागा कहीं का?" हजाम ने धीरे से कहा—"पर हजूर, मैं बाल बच्चा वाला हूँ? कितने दिन तक मैं पुण्य करता फिरूंगा?" यह सुनते ये गरजा 'भाग सामने से। जवाब देता? मार मार कर हाड़ तोड़ दूंगा। क्या समझ रखा है? कह दिया न जाकर बाबू से पैसा मांग" हजाम गिड़गिड़ाया—'हजूर, बाबू ने कदम इनकार कर गया।" हमारे शेर के लिये यह घोर अपमान जैसा लगा। उन्होंने आसमान की ओर दृष्टि गड़ाये यह भीष्म प्रतिज्ञा की—"तब तो यह दाढ़ी अब कभी नहीं कटेगी। यह तौहीनी, यह तिरस्कार, यह बेइज्जती? यह मैं बर्दास्त नहीं कर सकता। अब इस चेहरे पर किसी हजाम का अस्तुरा चढ़ नहीं सकता। न उन सालों को कभी यह चेहरा छूने का भाग्य ही प्राप्त होगा।" हजाम यह असाधारण प्रतिज्ञा सुनकर घबरा गया। दुखित भी। उन्होंने कहा—"हजूर ऐसा क्यों कहते हैं? मुझे पैसा नहीं चाहिये। मैं आया जाया करूंगा?" और गरजा—"अरे, मुझे तुम्हारी मेहरबानी नहीं चाहिये। साले, जान प्यारी है तो भाग सामने से। अब जिन्दगी में कभी मेरे सामने नहीं आना। समझे?" हजाम बेचारा जान लेकर भागा। भला, इस रोब के सामने कौन ठहरता? तब से इनकी दाढ़ी और माथे के बाल दोनों बढ़ रहे हैं।"

"भाई, तुम्हीं ने गलती की।"

"हां, भाई, क्या बताऊं? बाद मैंने इतना पछताया, इतना इनके सामने गिड़गिड़ाया, आरजू मिन्नत की क्या कहूँ? पर इन्होंने मेरी एक भी नहीं सुनी। कहने लगे अब यह दाढ़ी बढ़ेगी ही।"

"अलबत्त जिद्द है!"

"सिर्फ जिद्द ही, अलबत्त यह रोब भी।"

"सभी कांग्रेसियों का ऐसा ही प्रताप स्वभाव है। वे मर मिटेंगे। पर दबेंगे नहीं देवता के समक्ष भी।"

"मैं दंग हूं किसने इन लोगों में ऐसा एक उज्वल लौह-चारित्र्य का और प्रताप आत्म सम्मान का गठन किया।"

"गांधी! और किसका यह कार्य था। वह कमाल आदमी था भाई।"

"संघर्ष में ही व्यक्ति का और देश का चरित्र बनता है"

"कोई घर द्वार इन्हें है या नहीं?"

"घर की बात तो और मजेदार है।"

"सो कैसे ?"

"सुनो न तुम वह भी। बात अब कुछ नी हो गयी है। कांग्रेस के नेताओं मंत्री पद मिला तो उनका रोब बढ़ा। नेताओं को एम० एल० ए० पद ा तो उनका भी थोड़ा बहुत रोब बचा। उससे भी छोटे या उसमें से छूटे नेता मंत्रियों का मित्र और एम० एल० लोगों का सलाहकार बनकर औफीसरों को फ बनाने और नकी नजर में अपने न को जमाये रखने में थोड़ा बहुत सफल र किसी तरह अपना प्रताप जमाये रखते जो उससे भी छोटे थे या उसमें सफल ए वे शुद्ध पैरवी और मुकदमेंबाजी तर कर अन्धाधुन सरकारी कामों में ल देने और सर्वत्र अपने प्रभाव को प्रताप का परिचय देते फिरे। जिनको सब धन्धा अच्छा न लगा और अपनी स्कृत पद-मर्यादा से ऊबे वे सर्वोदय, भूदान ी आदि संघटनों में प्रवेश किया। को वहां भी स्थान नहीं मिला या कार्य पसन्द नहीं आया वे अन्य कुछ भी ना न देख साधु होकर निकल गये। ने ही अखण्ड पद यात्रा में उतरे। पर ऐसे भी हैं जो अभी भी यत्र तत्र भड़क हैं इनके जैसे।"

"बहुत दर्दनाक किस्सा सुनाया भाई ! , कोई ऐसा कर्णधार रहते जो इन्हें के लिये उपयुक्त किसी महत्व पूर्ण जिम्मेदार पर आरूढ़ करा देते !"

"कर्णधारों का क्या कहा जाय भाई। सभी ऐबों का ये कर्णधार लोग ही तो जिम्मे हैं। इन कर्णधारों ने ही इतनी बड़ी सं को, इतने महान और सुसंघटित इस संस्था के इनके विश्वस्त ईमानदार और रोबदार कार्यकर्त्ताओं को बिलकुल हतप्रभ कर दिया प्रतिष्ठा और शक्ति न पाकर ये बिलकु मृत ही हो गये हैं। अब कर्णध पूछते हैं कांग्रेस का यह पतन क्यों आश्चर्य है इस अकल का भी ! जो नेता अप विश्वस्त कार्यकर्त्ताओं का अनादर अविश्वाश करता, निर्जीव और नाकाम कर वह कभी उस संस्था को बचा नहीं सकेगा कितनी मुश्किल से भारतीय मानव समुद्र महात्मा जी ने इन मोतियों को चुन एक प्लेटफार्म पर एकत्रित किया था एक सूत्र में गूंथा था। आज सभी छि भिन्न हैं। किसको इसका दर्द है ?"

"भाई मेरे, चुप रहो। अब मु सुना नहीं जाता। आखें भर आने लगतीं देश ही अभागा है, और क्या कहा जाय"

"बहाओ तुम अपने आंसु ! और न हो तो इतना पुण्य ही सही। संसार यही एक देश अभागा है ? अजीब ब है। एक हजार बरसों से यह ज पतनोन्मुख है ! पतनोन्मुख ! आखि यह पतनोन्मुखता क्या है ? इसका अन्त कही होगा या नहीं ?"

"भला, मैं अब इन चीजों का जवाब दूं ? मुझे कुछ सूझता ही नहीं"

"तब कौन जवाब देगा ? सूझेगा ?"

"अरे भाई, कोई दूसरा गप्प उठा

मुझे तो माथा दर्द ही होने लगा है !"

"जा सिनेमा, माथा शीतल हो जायगा।"

"क्या मुसीबत है! क्यों तुम इस तरह मेरे पीछे पड़े हो? मैं क्या जवाहर लाल हूँ कि इन सब बातों का समुचित उत्तर दे सकूं?"

"तुम में दस जवाहर लाल नेहरू की ताकत है।"

"साढ़े बाइस हैं! मूर्ख कहीं का। तब क्यों पचपन रुपये के लिये इस तरह उस स्कूल में पड़ा सड़ता?"

"छोड़ दो स्कूल। उतरो मैदान में। देशभक्ति और त्याग ज्ञान चेतना में और सेवा कार्य में तुम सर्वश्रेष्ठ बनो तपस्या में हराओ जवाहर लाल को। तभी न तुम देखोगे मेरा कथन सही है या गलत!"

"तुम क्यों नहीं उतरते?"

"तुम उतरो पहले।"

"तुम उतरो।"

"तुम उतरो।"

"चुप भी रहोगे या नहीं? व्यर्थ की गप्प में क्या मजा है? तुम मुझे उस कांग्रेसी शेर की किस्सा सुनाओ। क्या क्या हुआ उनके घर में?"

"देश की जीवन-मौत की समस्या सामने आती तो आकर्मण्यों को सिर दर्द होने लगता है। खैर, तो सुनो उस शेर ही की बात। स्वाधीनता संघर्ष से फुरसत होते ही इन्होंने सोचा, इन्हें कोई प्रतिष्ठित कार्य मिलेगा। जब किसी ने बुलाकर यह कार्य नहीं दिया तो इन्होंने स्वयं कुछ यत्र-तत्र अपने नेताओं के पास दौड़-धूप की। फिर भी कुछ हाथ न लगा तो ये घर आकर बैठ घर वाले इस महामानव को अपने च दिवारी के भीतर पचा न सके। घर ही इनका वक्र मस्तिष्क ने क्रिया आ की। पचासों मुकदमा चालू कर दि चार ही पांच बरस के भीतर घर की जमीन ही बिक गयी। तब इनके लक्ष्मण जैसे भाइयों ने घबड़ाकर बँटवार प्रश्न इनके सामने लाया। उन्हें अपनी बचाने की फिक्र थी। ये बिगड़े, ग समझाये। पर इनका कुछ न चला। भा ने नम्रता से कहा—देखिये, बात यह है हम मूरख हैं। घर में बाल-बच्चे भी जमीन ही एक आसरा है। सब बिक तो हम क्या करेंगे? इसलिये जो भी में अब बचे हैं हमें सुपुर्द कर दिया जाय

कोई उपाय न देखकर भाइयों को मूरख उपाधि देते हुए बँटवारा कर दिया ग अब ये अपने हिस्से की जमीन ही के पर फिर मुकदमा लड़ने लगे। घर में इ पत्नी यह सब हालत से परेशान रहने ल उनकी शान्ति बिल्कुल नष्ट हो गई। भर फिक्रमंद रहने लगी कब किस पर क्य गुजरे। वह प्रार्थना करने लगी ये फिर क में ही वापस चले जाय। एक दिन मुलायम देकर उसने धीरे से हिम्मत की "मुझे कुछ कहना है।"

"क्या है" शेर गरजा।

"आप क्यों इस तरह घर बैठे रहते क्यों नहीं कांग्रेस में वापस जाते?"

"कांग्रेस कब न मरी? अब जाएँ

जाएँ ?"

"पर इस तरह घर बैठा रहना शोभा ।"

"ओ, तुम ऊब गयी ? मैंने तुम्हारा कुछ ड़ा ? अपने घर बैठा हूँ ।"

"घर तो औरतों के बैठने के लिये है !"

"तुम्हारे दोनों देवर जो बैठे हैं।"

"वे दोनों भी तो औरतें ही हैं।"

"आखिर क्या कहना चाहती हो ?"

"मैं कहती हूँ आप कहीं बाहर ही रह कुछ बड़ा काम कीजिए। आप घर के नहीं हैं।"

"अरे मैं तुम्हारी राजनीति समझ गया। मुझसे अब ऊब गयी और कहीं मुझे देना चाहती हो। यही बात है।"

"नहीं-नहीं, यह बात नहीं, भला अपने को भगा देने की बात कोई औरत सकती है ?"

"तुम्हारे मन में जरूर कुछ ऐसी ही है। बात क्या है साफ-साफ बोल। मैं र करूँगा।"

"बात साफ यह है कि आप बैठे-बैठे नष्ट कर रहे हैं। जमीन सभी गयी। अब जो बचो है उसे मैं खतम नहीं चाहती। मुझे बाल-बच्चे हैं। को उनकी फिक्र तो है नहीं।"

"अरे मुकदमे में मेरी जीत हुई तो सभी री होगी या नहीं ?"

"मुझे कुछ भी नहीं चाहिए। मैं एक भी मे की चीज नहीं चाहती। उसमें पाप ।"

"तुम्हें जरूर तुम्हारे उन मूर्ख देवरों ने भड़काया।"

"मुझे किसी ने नहीं भड़काया। मेहरबा करके मेरी जान छोड़ दीजिये। कर जोड़ हूँ। मेरा घर नष्ट हो गया। आप जब आए एक दिन भी शांति से नहीं सोयी हूं।"

"बेइज्जत मत करो।"

"बेइज्जत नहीं कर रही। अपने बा बच्चों की जान बचाने की फिक्र कर र हूँ।"

"तब तो मैं ही काल हूँ।"

"यह मैं कहां कह रही हूँ ? मैं इतन ही प्रार्थना करती हूँ, मुझ गरीब पर मेहर बानी की जाय। मैं आप को हजम क नहीं पा रही हूँ।"

"ठीक है। जब मैं ही तुम्हारा का हूँ तो मुझे जाना ही उचित है। अ कभी यह नापाक चेहरा तुम्हें दिखाने न आऊँगा। हमेशा के लिए बिदा हो रहा हूँ खुश रहो।" और वह शेर उसी दिन उस क्षण इस तरह वहां से उठ कर चल दि जैसे राइफल से बुलेट निकला जाता हो।"

"यहां कैसे पहुँच गये ? और तुम क्या समझकर इन्हें अपने पास रख लिया।"

"घूमते-घामते यहां पहुँचा। मुझे इन रोब भरा चेहरा और प्रतापी स्वभाव बहुत प्रेरणाप्रद लगा। इसलिये मैंने इन्हें अ पास रख लिया। और मुझे इनका प्रवच सुनने का भी बड़ा शौक है।"

"सो क्यों ?"

क्योंकि तब पूरा हिन्दुस्तान मेरे साम नग्न नाचता नजर आने लगता। ये प लिखे बिलकुल नहीं। पर चूंकि कांग्रे

हैं इसलिए सभी विषयों पर इन्हें कमाल हासिल है और सब प्रकार के पढ़े-लिखे इनके सामने बिलकुल गाय बैल जैसे अज्ञ हैं।"

"सच ?"

"एकदम सच। आप अजमाकर भी देख सकते हैं।"

"किस किस प्रकार के मुकदमे ये लड़ने थे।"

"उसका भी एक नमूना पेश करत सुनो। इस दृष्टान्त से तुम्हें इनकी वि बक्रगति और अलभ्य लक्ष्य का पता जायगा। एक गरीब पर मुकदमा च इन्होंने डेढ़ हजार की डिग्री कर उस बेचारे ने भीतर-भीतर इन्हें गाली डेढ़ हजार रुपये कोर्ट में जमा किया।

पृष्ठ ५२ का शेषांश

धनपति कुबेर की शाप सर्पिणी
जो वर्ष भर नहीं
आजीवन विश्लेषित करने को
आक्रोशित फन फैलाये
डंसने को फुँकार रही,
उत्कट दैन्य पर विद्रूप कर रही।"
(पृ० ३०)

कवि की सुन्दर कल्पना का एक और उदारण 'बीती अनबीती' कविता में देखिए—

बीती ! मेरी परिणीता पत्नी है।

अनबीती ! मेरे स्वप्नों की,
नारायण कन्या मन्मथ जन्मा परकीया

जन्मजात चित्रकार की कला का कमाल
है बीती !
जन्मजन्मान्तर के उसकी मलाल है
अनबीती !(पृ० १३)

प्रकृति चित्रण के सुन्दर स्थल 'रात: चित्र १, 'बदली' 'शाप' 'अमावस' 'पेड़ अमलतास का' और 'शहरी गुलमुहर वो' आदि कविताओं में देखे जा सकते हैं। भाव सौन्दर्य एवं प्रेम व्यंजना की छटा 'तुम्हारे दरस पाने को' 'तुम्हारे रूप का गर' 'चुम्बन और चाट' और प्यार तुम्हार आदि कविताओं में अवलोकनीय हैं। हृदय श्रद्धांजलियां 'बिहार केसरी के और 'भंडारनायक के निधन पर' कविताओं में द्रष्टव्य है।

"अलबम मेरा खाली है" या ' जैसी एकाध कविताएँ स्तरीय नहीं क्योंकि इनमें अनगढ़ कल्पना ने प्रयोग लिए प्रयोग किया गया है। उनमें गांभीर्य का ही अभाव नहीं वरन् वैच अपरिपक्वता भी है।

समष्टि रूप में 'ईहामृग' एक सफल है। रचना के मुख पृष्ठ परिचय से होता है कि डा० वचनदेव कुमार उदीयमान कलाकार हैं। उसी पृ से विदित हुआ कि उनकी सृजन क्षमता प्रसार उपन्यास, कहानी, निबन्ध, समालो आदि विभिन्न क्षेत्रों में हो रहा 'ईहामृग' के आधार पर हम उनकी प्र से सृजन की सुन्दर संभावनाएँ करते हिन्दी काव्य जगत में 'ईहामृग' अभिनन्द है।

ोल के मार्फत उनके ताईद ने रुपये करके अपने नाम पोस्टल सेविंग जमा किया और इन्हें "आज कल" परेशान करने लगे। इन्होंने क्रोध में वकील पर मुकदमा चला दिया। वकील च था। इनके हाथ में कोर्ट खर्च के लिये नहीं थे। एक किरानी इनके लिए ा लड़ने का खर्च देने लगा। उन्हें एक का हैंडनोट लिख दिया। ाईद पर भी एक झूठमूठ का केस गढ़कर ने दायर किया। दोनों केस बड़े जोरों े। दोनों में ये हारे। तब किरानी ने हैंडनोट को पेश करके इन कदमा चलाया। इस बीच वकील और पर इन्होंने हाईकोर्ट में अपील करना । यह सब अनन्तगति देखकर ही इनकी घबड़ा गयी थी।"

"तुम्हारे पास ये अपनी वक्रगति नहीं ते ?"

"समझाते तो बहुत हैं। पर मैं संभल हता हूँ।"

"नाम इनका क्या है ? घर कहां है ?"

"नाम मुन्शी पुरी है। घर छपरा है। में दो बार लिट्टी ये चबाते हैं।"

"लिट्टी क्या है ?"

"लिट्टी गोल है, टेनिस बाल जैसे। आ और सत्तू से बनती है, गोबर की आग में पकती और घी में डुबाकर खायी जाती है मैंने एक बार खाकर देखा था। मेरे पे में वह ईंट के टुकड़े जैसे सात दिन तक ज्यों की त्यों पड़ी रही।"

"बाप रे, तब तो गजब की वस्तु है। मैं नमूना देखना चाहता हूँ। ये कितनी लिट्टी एक बार चलाते है।"

"इन्हें एक बैठक में नौ लिट्टी तक चल मैंने देखा है। एक बार ये साढ़े चार से गरम दूध एक ही सांस में पी गये। मैंने सोचा इनका पेट जरूर चलेगा। पर इन्हें कु भी नहीं हुआ।"

"वाह रे छपरिया, वाह वाह! गंग माई का यह सब प्रताप है! जियो बन्धु, जिय जियो। आबाद रहो। अकबर इलाहाबादी एक बार कहा था, "इलाहाबाद में है ही क्य सिवा अकबर और अमरूद के।' उसी तर में भी कहता हूँ "भारतवर्ष में है ही क्या सि पुरी और लिट्टी के।"

एक पत्र

सुना था 'आरण्यरोदन' का कोई प्रभाव नहीं होता है। लेकिन मैं जहाँ तक समझता हूँ, भले उसे कोई सुने नहीं पर अपना जी तो हल्का होता ही है। "रहिमन निज मन की बिथा मन ही राखो गोय, सुनि अठिलैहैं लोग सब बाँट न लैहैं कोय" किन्तु मुझे ऐसा लगा यह पूर्णत: सत्य नहीं। अगर एक भी सहृदय ने व्यथा सुनी और समझी हो तो जी हल्का होता है।

समय की गति ने मुझे एक ऐसे चौराहे पर ला खड़ा किया है, जहां मैं बहते हुए जीवन को विभिन्न पहलुओं से देख और परख रहा हूँ। अभी तो शुरुआत ही है और खड़े-खड़े यह दृश्य देखना शायद बहुत दिनों तक चले। अगर मेरी जगह कोई लेखक खड़ा होता तो चित्रों का अम्बार लगा देता, लेकिन मेरी दृष्टि तो सीमित परिधि तक हो जा पाती है, सिर्फ देख भर लेता हूं--अधिक गहराई तक मनन नहीं कर पाता।

खैर जो देख पाता हूँ, उसे लिख लेता हूँ। इस आशा में कि शायद कभी अन्तर्दृष्टि रखने वाला कोई सहृदय इसे नवीन कलेवर देकर कुछ लोगों को दे सकें।

स्वार्थ का नग्न रूप रोज ही देखने को मिलता है। इस भयानक बीमारी से हमारा भारतीय जन-जीवन इतना आक्रान्त है कि

वह पागलपन की स्थिति पर पहुँच चु
मुझे तो सारा देश ही Lunatic as
की तरह दीख पड़ता है। कोई भ
मतलब के नहीं मिलता—हाथ त
उठाता—'गँजेड़ी यार किसके दम ल
खिसके!' सारा का सारा जन-जी
चन्डूखाने की जमात सा नजर आता

सभी जानते हैं इस बात को, सभ
वाकिफ हैं, किन्तु कितना ढोंग है।
सैकत राशि पर उँडेल रहे हैं—नी
जड़ को गुड़ से सींच रहे हैं। दली
"रसरी आवत जात ते सिल पर
निशान।" लेकिन यहां तो शील क
ही नहीं तो घर्षण कैसे उत्पन्न हो।
पर पत्थर मारने से ही चिनगारी
पत्थर को गोबर पर मारने से छीं
पड़ेंगे। बिना पात्र की पात्रता का
किए—'बन्दर के हाथ नारियल' की ही
वत चरितार्थ होगी। आदमी तो अ
बना नहीं—योजनाएँ बन रही हैं।
होगा उन योजनाओं का ? खाक
ही रहेगी—आग नहीं बन सकती व
वह अपनी सारी उष्णता लुटा चुकी
जब देखता हूँ आदमी अपने स्वार्थ के
अपनी क्षुद्र आवश्यकताओं की पूर्ति
लिए जब स्कूल, अस्पतालों की इमारतें
सीमेंट की जोड़ाई 'का दाम वसूल कर

रे पर उसकी नींव जोड़ता है—तो हो आती है— जी चाहता है कि उसका मरोड़ दूँ। किन्तु यहाँ तो जनतन्त्र स्वतन्त्रता है, तो सिर्फ रोकर मन हल्का लेता हूँ।

कितना उत्साह था मन में। सोचा —निर्माण और विकास की इस बड़ी न का एक नट ही बन सका तो मेरा तो कुछ महत्व होगा, योगदान होगा। पर वह कुछ नहीं मिल पाया जो सोचा हृदय परिवर्तन की बात कुछ समझ हीं आती। यह तो रिसते हुए पुराने पर मात्र मलहम चढ़ाना है जब कि श्यकता है अपरेशन की ताकि सारा मवाद जाय। मलहम चढ़ाने से तो वह सड़ दुःसाध्य हो जायगा और संक्रामक ही गा, मिट नहीं सकता—जा नहीं सकता छोटी बुद्धि में तो यही बात आती है। कन नक्कारखाने में तूती की आवाज कौन ? आज का समाँ कुछ और है—मेंड़-ान है। आगे की मेंड़ यदि कुएँ में तो सारा का सारा रेवड़ ही कुएँ में।

मैं सोचता हूँ इस 'देश की जनता को ुष्य बनाने की कोई योजना बनेगी या नहीं र बिना उस योजना के क्या इन लाख-लाख जनाओं का कोई परिणाम होगा। आर्थिक थति तब तक सुधर नहीं सकती जब तक हाथ ईमानदार न हो जायँ जो इन ोजनाओं को सम्पादित करते हैं। जब क यह नहीं होता तब तक यही होगा कि वनोबा के यज्ञ में चन्दन की समिधाएँ नहीं ड़ेंगी। उदार चेता 'ग्रैंड ट्रंक रोड' तक

दान भी देते रहेंगे। विनोबा ने इत गहरी डुबकी लगाई पर हाथ क्या लगा सीपी और कुछ घोंघे। दुनिया ने आ बिछाई थी, पर होंठ ही बिचका पाई। से क्या होने को है, पर यहाँ तो सोचते हुए लोग नादान हैं। जगा हु अगर सोता हो तो जगाना मुश्किल है, हुए को जगाना आसान है। सच पूछिये आजादी हमने कोई बहुत बड़ी कीमत हासिल नहीं की है, इसीलिए आजादी कीमत हमारी आंखों में कुछ भी नहीं उसके लिये कोई दर्द नहीं है।

गांव-गांव में मूर्खतापूर्ण प्रतिद्वन्दिता ऐसी प्रतिद्वन्दिता है कि अगर गांव के में एक आदमी मरा तो पश्चिम में भी आदमी का मरना आवश्यक है, नहीं तो पीछे रह जायेंगे।

समान मताधिकार एक मजाक ही गया है। कुदाल चलाने वाला मजदू यह जानते हुए कि उसकी जाति के उ वार उसका कुछ भला नहीं कर पायँगे उधर को ही गिराता है। देश की अधि जनता सिर्फ प्रतीक को वोट देती है। वर देखकर, उसको आत्मा में झांकने प्रयास कितना है, यह सभी जान रहे हैं तो जो जन साधारण की मानसिक है, उसी के अनुसार काम करने की है उसे बदलने की नहीं।

भगवान जाने इस व्यामोह से देश कैसे छुटकारा मिलेगा। जैसी स्थिति रही है, उससे तो नहीं मिलेगा।

कल की ही बात है, चीन की चढ़ा

कुछ अभियान चला, स्वर्णदान, द्रव्यदान तथा रक्तदान। एक हंगामा बरपा हो गया, लोगों ने ऊपर से देखा और कहा कि देश एक हो गया—देशभक्ति का समुद्र तरंगायित हो उठा—पर क्या था निकट से देखने वाली आँखें कहेंगी—'बासी कढ़ी में उबाल आया था। कितनों ने सोना देने की प्रतिज्ञा कर आज तक नहीं दिया।

सेठों ने इसलिये दिया कि चीन का रंग लाल है और यदि वह आ गया तो उनके गालों की लाली खत्म होगी। देश-भक्ति तो मात्र आवरण था। कुछ ने डर कर दिया—सुना कि वे बर्बर हैं—औरत की अस्मत की कीमत उनकी नजर में कुछ नहीं। गरीबों ने मांगनेवाले हाथ को देख कर दिया। यह बात लोगों को कुछ अजीब लगे, होठों से कहें भी यह बिल्कुल सनकी दिमाग की बात है, लेकिन उसी समय मन में इसकी वास्तविकता कबूल करेंगे।

प्रमाण है कि जब बामडिला का पतन हुआ और उनके कदम डिगबोई की ओर बढ़े तो लोगों में दहशत छा गई, रेडियो पर मर्राई आवाजें सुनाई पड़ने लगी। मैं नहीं कहता कि सारा देश भीरु है, सारा देश भीरु नहीं है। अगर सारा देश भीरु होता तो कब का मिट चुका होता। यही वजह है कि इतनी जातियों और देशों के विजय के बावजूद भी वह जिन्दा है। सभी मुखिया यह नहीं कहते हैं कि जो करता है भगवान करता है, हमलोगों के किए कुछ नहीं हो सकता। पर अधिकांश ऐसे ही हैं।

मैं कुछ गौर के साथ क
हूँ कि इसमें कुछ तथ्य है—अग
क्यों नहीं लोग ग्राम-रक्षा दल
लिखवाते। भय है वे लड़ाई में
दिये जांय और मैं देखता हूँ सा
नब्ज इसी रफतार से चल रही
पर पड़ेगा वह छा लेगा। देश को
किसने है, वे हैं कितने, मुट्ठी भर

देश में ऐसे कितने हैं जो
में तीन चार घंटे सोते हों और
धन से देश के हित में लगे हों
ही यह प्रश्न उठता है इसके
'Who after Nehru' और
इसका समाधान करते हों यह कह
निकट भविष्य में यह प्रश्न उठनेवा
क्योंकि उसका स्वास्थ्य सुन्दर है।
जवाब तो दे देते हैं पर अपने को
वे मन से यह जानते हैं, यह प्रश्न
है। पर वे क्या करें, लाचार हैं,
की झेंप मिटाने के लिये ऐसा कहते

कुछ दिन पहले 'ब्लाक अ
ट्रेंच खोदने का अभ्यास दून
सगर्व अखबारों में निकलता था अ
में इतने रिहर्सल हुए और सम्बनि
धिकारी प्रसन्न होते थे। इसमें अ
स्तता का बखान करते थे। कि
एक व्यक्ति की भर्त्सना से वह सार
समाप्त हो गया। आँखें थक
उन समाचारों के लिये, पर उस
लेना भी अब गुनाह है। इससे
हुआ? आप समझें वही प्रश्न
भयंकर रूप में सामने आता है—

Nehru,

...सी प्रकार मझले भाइयों की बातें ... किसी ने अगर कह दिया बीजू ...हुत ही अच्छा है, सर्वश्रेष्ठ है बस ...छना बीजू आम के पेड़ों की गिनती 'बीजू आम लगाओ' आन्दोलन चल ... बीजू आम की प्रदर्शनी हुई। ...न हुआ। बड़े-बड़े लेख निकले। ...रियल कालम रंगे गए। खोज पूर्ण ...काशित हुए और किसी को तो डाक्ट-...की उपाधि भी मिल गई। बीजू आम ...ने गुण आरोपित किए गये जो बीजू ...के गढ़नेवाले भगवान को भी नहीं थे।

...से-ऐसे कितने उदाहरण हैं इस ... जो नित्य मिल सकते हैं। आंख ...को ... ही तो कहते हैं।

और मैं उसी चौराहे पर खड़ा-खड़ा सोचता हूँ, देश किधर जा रहा है, निर्माण और विकास की ओर या विनाश की ओर, यह भेड़ चाल मिटेगी या नहीं, आदमी से आदमी बनानेवाली कोई राह बनेगी या नहीं, कोई ऐसी योजना बनेगी या नहीं, या यह नाव इसी तरह पाल ताने हुए हवा की दिशा पर आश्रित इधर से इधर भटकती फिरेगी, इसे कोई पतवार और सबल हाथ मिलेंगे या नहीं। सुना तो है कि हर काले मेघ के किनारे चमकदार होते हैं, लेकिन शायद उसके लिए भी प्रबल प्रभंजन की आवश्यकता है।

—ममो...

यदि हम शांति का नारा बुलन्द कर सकते हैं तो युद्ध-गान भी गा सकते हैं। शहनाई के साथ-साथ रणभेरी बजाना कोई हमसे सीखे। हमारे सोने में भी जागरण है और रुदन में भी गान। प्रलय की आंधी के बीच मुस्कान बिखेरना हमारी अपनी विशेषता है। आज जबकि चीन ने हमारे ऊपर आक्रमण कर दिया है तब हमें अपना उन सभी विशेषताओं को रक्षा करते हुए उसे मार भगाना है और उसे ऐसी सीख देनी है जिससे वह दुबारा आँख उठाकर इस देश की ओर देखने का साहस न कर सके।

—रामनारायण सिंह 'मधुर'

वैदिक अणुशक्ति

सत् कार्य के विकास में धन आवश्यक है। विरोधी शक्तियों से मुकाबिला में भी धन उत्साह और शक्ति प्रदान करता है। कष्ट सहने में भी धन हिम्मत इसलिये सुखी जीवन के लिए धन एक आवश्यक चरण है।

संघ शक्ति से ही शत्रु संहार संभव है। संघ के अधीन पर्याप्त धन है यह संभव है। धन प्रचुर मात्रा में रहने से छोटी-छोटी संघशक्ति भी बड़े बड़े कर सकती है। धनाभाव और संगठन के अभाव में बड़े-बड़े विशाल जन-समा कमजोर और शत्रुओं के अधीन हो जाता है।

ज्ञान ही वह अजेयशक्ति है जिसके संरक्षण और शासन में रहकर संघशक्ति लनीय बल और ऐश्वर्य को प्राप्त कर सकेगी। शस्त्र और शास्त्र सर्वश्रेष्ठ बने बगैर संहार असंभव है।

नाना मुखी विपरीत शक्तियों को जीतने की जिसमें क्षमता है उन्हें ही समझा जा सकेगा। दण्ड देने के अधिकारी पद पर तथा शासन सूत्र को चला मर्म स्थान पर वे ही विराजमान हो सकते हैं जो ज्ञान और गुण में सर्वश्रेष्ठ हैं। उ दिल और दिमाग, चारित्र्य और आचार-विचार आसमान जैसे गंभीर और निर्मल सूर्यगोल जैसे उज्ज्वल और समदर्शी होना चाहिए। तभी वे अपने उन जिम्मेदारियों सुचारु रूप से चला सकेगा।

जो नेता है यानी शासन व्यवस्था और समूह की सुरक्षा और विकास की जिनके हाथ में है तथा जो गृहस्थ हैं यानी उत्तम संतानों से भरे परिवार की संचालन आदि जिनके हाथ में है, और जो आध्यात्मिक है यानी सर्वोच्च ज्ञान ला लिये जो रात दिन एकान्त निष्ठा के साथ प्रयत्नशील और साधना-तत्पर है—वे समान रूप से सम्मान और स्तुति के पात्र हैं।

सूर्य प्रकृति की हर वस्तु से सिर्फ उत्तम चीजों को ग्रहण करता है और उसी को प्रचुर मात्रा में लौटा भी देता है। वैसे ज्ञानी शासक भी जन समूह र उत्तम चीज को ग्रहण करके यानी उसके उत्तम आकांक्षाओं को समझ उनके उत्त णों का साकार सजीव प्रतिनिधि बन सदा उन्हीं पर उन गुणों, उन आकांक्षाओं फल वर्षा करते रहते हैं।

ज्ञान पृथ्वी माता जैसा है। वही मानव को सब प्रकार से सुखी सम्पन्न औ क्तिशाली बना सकता है। ज्ञान से अनन्त विभूतियां संभव है। ज्ञान ही एकमा

ीज है जिससे मानव सभी कुछ प्राप्त कर सकता है। ज्ञानहीन अथवा ज्ञान के
ो पिपासु नहीं वह अभागा है, गरीब है, दुखी है, कमजोर है।
ज्ञान और तत् सम्बन्धी विभूतियां उन्हें ही प्राप्त होंगी जिन्हें उन्हें प्राप्त करने
मिट प्यास हो, अथक संघर्षशीलता हो।

सार बात यह है कि वेद का प्रत्येक मंत्र अनुपम ज्ञान भण्डार से भरा है। इसलिए
द-मंत्रों का अध्ययन करना उसमें प्रतिपादित बातों को समझना, अनुशीलन करना
को ऐश्वर्यसम्पन्न बनाने का यही एकमात्र उपाय है। जीवन सिर्फ ज्ञानानुशीलन
ा है।

ज्ञानानुशीलन में एक अजीब किस्म की चमत्कारपूर्ण आभा है। यह आभा ज्ञान-
को सर्वमान्य एवं सर्वपूज्य बना देती है। ज्ञानी दुनियावालों के लिए महादेव ही
ता है। वह इतना महान और गंभीर बन जाता है।

अग्नि और जल के सफल प्रयोग से नाना प्रकार के ऐश्वर्य सम्भव हैं। ज्ञानी
जो इन चीजों का सूक्ष्म से सूक्ष्म और सफल प्रयोग जानता है। ज्ञानी
हो प्राणी मात्र के परम सुख का लक्ष्य करके सदा प्रयोग में लाते रहें।

आकर्षित करने की शक्ति ज्ञानी में ही सम्भव है। सब प्रकार के सौन्दर्य
में ही निहित रहता है। ज्ञानानुशीलन ही सौन्दर्य-साधना है।

ज्ञान चर्चा से बढ़कर कोई सेवा कार्य नहीं, कोई पूजा-पाठ नहीं, कोई साधना भी
जीवन में ऊँचा उठने का एकमात्र उपाय ज्ञान-साधना है।

ज्ञान साक्षात्कार के बगैर स्थायी सुख और शान्ति असम्भव है।

ज्ञान उत्कट और सतत गतिमान क्रियाशीलता है। आलस्यता अज्ञान की ही
यिका है। उत्तम मार्ग पर आरूढ़ हुए बगैर ज्ञान साधना, ज्ञानानुशीलन असम्भव है।

अभिलाषाओं की जननी ज्ञान है और उसे प्राप्त करने का उपाय भी ज्ञान है।
तक ज्ञान से सम्भव है। वस्तुतः कोई ऐसी चीज नहीं जो ज्ञान द्वारा प्राप्त नहीं
ा सकेगी।

राष्ट्र के ऊपर विपत्ति के बादल जब मंडराने लगते हैं तो राष्ट्र की सामूहिक
और ऐश्वर्य से ही हम उसका मुकाबिला कर सकते हैं। इसीलिए ज्ञानी हमेशा ऐसा
उठाते रहते हैं कि राष्ट्र और समूह सदा शक्तिसम्पन्न, पूज्य और ऐश्वर्ययुक्त रहें।
जो केन्द्रीय शक्ति है वही सबके स्वामी है।

किसी विचार का अभिनन्दन करना उसको साक्षात्कार करने का प्रारंभिक
न है।

....पर गूंज रह जाती है

रचयिता—नन्दकिशोर
प्रकाशन—अरुणा प्रकाशन, भागलपुर
मूल्य—२ रुपये २५ नये पै०

गद्य में गीत और गीत में मधुमय संगीत के सफल प्रणेता कविवर नन्दकिशोर की "गूँज" वह गूंज है जो बारह वर्ष की अविराम साधना के फलस्वरूप ही आज जन-जन के मन-मन में एकाएक गूँज उठी बसन्त की दीवानी कोयल की तरह—"सितार के तार टूट जाते हैं, पर गूँज रह जाती है"

गद्यगीत के कंटीले चमन में कवि ने अपनी कड़वी अनुभूति, अनुपम अभिव्यक्ति, बेजोड़ भाषा शैली और गद्य में गेयता की कड़ी जोड़कर वह पाटल-पुष्प खिलाया है जिसकी चिर नूतन सुगन्ध युग-युग तक दिग-दिगन्त में सुगन्धित होती रहेगी। इसलिये कि नन्दकिशोर जैसा कवि किसी युग का नहीं, युग विशेष का नहीं बल्कि युग-युग का कवि होता है।

कवि पुरानी लकीर का फकीर नहीं ने स्वयं गद्य गीत में क्रान्ति लाकर एक नवीन दर्शन का निर्माण किया है—"मैं परिमाण में नहीं, परिणाम में विश्वास करता हूँ।" तभी तो असंभव को संभव करने का दुस्साहस किया है एक सफल विजेता की तरह—"मुझे पुरइन के पत्ते पर पानी की बूंदों को बिठाना है...

क्योंकि हूँ मैं पुतला मोम का ही,
कलेजा इस्पात का है,
पंजा फौलाद का है।"

सचमुच, "चौंको मत ऐसा होता है, कोई माने न माने, पर मैं मानता हूँ, नींव की ईंट और बलिदानी कवि नन्दकिशोर की हिन्दी साहित्य-संसार के लिये एक बड़ी देन है। इस पंक्ति के लेखक का दृढ़ विश्वास है कि...पर गूंज रह जाती है, गद्य गीत की मिटती परम्परा का जीर्णोद्धार और हिन्दी-साहित्य में एक अभिनव प्रयोग है।

छपाई, सफाई सुन्दर और गेटअप नयनाभिराम है। इस सुन्दर प्रकाशन के लिये कवि को मेरी सौ-सौ बधाई है साथ ही निकट भविष्य में ऐसे ही प्रकाशन के लिये आग्रह भी।

—महेंद्र "मस्ताना"

चरित्र सम्पत्ति

लेखक—गोपाल कृष्ण मल्लिक
प्रकाशन —अ० भा० सर्व-सेवा संघ राजघाट, काशी
मूल्य—७५ न० पै०

विद्वान लेखक श्री मल्लिक ने अपनी ालिस पन्ने की एक छोटी सी पुस्तिका ाकर गागर में सागर भरने का सफल ास किया है। सचमुच, चरित्र-सम्पत्ति कर कोई भी पतन की खाई से निकल उत्थान के उत्तुंग शिखर पर ज्ञान का ा जलाकर एक दूसरे का पथ प्रदर्शन सकता है। तारीफ तो यह है कि विश्व की घटनाओं के द्वारा उदाहरण ा कर यशस्वी लेखक ने एक गूढ़ विचार ी इतना सरल बना दिया है कि लगता ह गंगा की पवित्रता को प्राप्त कर है।

इस छोटी सी पुस्तिका में वह दम जो चोर को साधु, पापी को पुण्यात्मा को विद्वान, कंजूस को उदार, रोगी को स्वस्थ, हैवान को इंसान, कामचोर को प श्रमी तथा बेईमान को ईमानदार ब में समर्थ है।

मैं बिहार सरकार क्या, भारत सर से अनुरोध करूँगा कि इसका अनुवाद भा की सभी सबल भाषाओं में करवा कर त करोड़ों प्रतियाँ छपवाकर यहां की सभी शिक्ष संस्थाओं में मुफ्त वितरण करें - जिस सबों में चारित्र्य-बल-तेज जगे और जीवन-समर में एक सफल योद्धा की तर जूझ सकें।

छपाई, सफाई सुन्दर है। इस अनुप रचना के लिये मैं लेखक को बहुत-बहु धन्यवाद स्वीकार करने को बाध्य करता हूँ।

महेंद्र "मस्तान"

पुरोधा (त्रैमासिक)

प्रकाशक—श्री अरविन्द सोसायटी पांडेचेरी—२
वार्षिक चन्दा—५) रुपये

'पुरोधा' किशोर जगत की अन्धेरी राह जगमग-ज्योति विकीर्ण करने वाली ात्रिका है जिनके नित नूतन आलोक ारे किशोर स्वयं अपने हाथों ज्ञान ाशाल लेकर पूरी सामर्थ्य के साथ पथ पर बढ़ सकेंगे। सचमुच श्री अरविंद और श्री माँ की रचना से 'पुरोधा की महत्ता में और भी चार चांद लग गया है। ऐसा कहा जाता है कि आज के बच्चे ही कल राष्ट्र के कर्णधार बनेंगे। अगर यह कथन सत्य माना जाय तो मैं दावे के साथ कहूँगा कि

'पुरोधा' के जितने भी किशोर लेखक और कवि हैं सभी कुछ दिनों के बाद हमारे सामने सूर, तुलसी, वाल्मीकि, निराला, महादेवी, प्रसाद तथा प्रेमचन्द बनकर आयेंगे। खासकर शीला, रेवा, अरुणा, सुमित्रा, और शकुन्तला तो उषादेवी मित्रा सुभद्रा कुमारी चौहान तथा महादेवी वर्मा की उत्तराधिकारिणी बनने की क्षमता रखती हैं।

'पुरोधा' का बहिराकण तो नयनाभिराम है ही अन्तरंग भो 'मानस' और 'गीता' को तरह नित मनन और चिन्तन करने लायक है—किशोर वया, वयस्क लिये भी।

छपाई, सफाई और अनुपम सामग्रियों की त्रिवेणी पर 'पुरोधा' प्रकार जाज्वल्यमान हो उठा है जैसे की पूनम रजनी में बादलों को मुसकुराता हुआ निर्मल तथा दुग्धो चांद। सम्पादक मंडल के सभी सदस्यों को इसके लिये सौ सौ धन्यवाद करता हूँ मैं।

महेन्द्र नारायण 'मस्तान'

परमानंद संदेश

संपादक—श्री अजित मेहता

वार्षिक चन्दा—५)

"परमानंद संदेश" विशुद्ध अध्यात्मिक धार्मिक सचित्र मासिक पत्र है। मनुष्य में सतत दो तरह की प्रवृत्तियां चलती रहती हैं। एक को हम उर्द्धगामी वृति कहते और दूसरे को अधोगामी वृति। समाज शास्त्री का कहना है कि "मनुष्य सामाजिक पशु है।" पशु के निकट संबंध रहने के कारण अधोगामी वृति की ओर उन्मुख होना सरल है—बिना प्रयास से ही सुलभ है। पर उर्द्धगामी वृति केलिये मनुष्य को पुरुषार्थ करना पड़ता हैं। इसी पुरुषार्थ से देवत्व का जागरण होता है। मानव का यही लक्ष्य है। धर्म, भक्ति, वैराग्य, उपासना, जप, तप, सदाचार इसके साधन हैं।

संत इस जगत का चलता फिरता ईश्वर है। इनका सम्पर्क दुर्लभ "परमानंद संदेश" इन सबों का संग्रह कर पाठकों को घर-घर पहुँचाता है।

यह विशेषांक उपनिषदों की को लेकर मानवता की ऊर्द्ध वृत्तियों सबल किया है।

आशा है सभी जनता इसे अपना लाभ उठायेगी।

—रामप्रसाद मंडल

८वां पृष्ठ का शेषांश

विचारों और भावों में, खून के बूंद बूंद में सजीव और सक्रिय है। जब हम मिटा नहीं सकते, मिटाना भी नहीं चाहते तो फिर हमारे बीच आप लोगों अशरीर अस्तित्व से क्या हानी? इस लिये प्रिय, प्रिय श्री, प्रियवर, प्रियतम, प्रियतम, आइये, इस भारत वसुन्धरा के आबाल वृद्ध धर्म परायण जनता को सुचारु संचालन करने का पुण्य कार्य को स्वयं संभालिये। अस्तु, हम आप के ईमानदार भारतीय जनता के राजनीतिक, साहित्यिक सांस्कृतिक और धार्मिक प्रतिनिधि बन गांधी के कुछ भारतीय पण्डे सारे संसार से भी कुछ अपने वृत्ति के लोगों साथ लिये चीन की ओर बढ़ रहे हैं। यह नयी आफत देख युद्ध के कुछ पं हमने बिगड़ने और झुंझलाने भी लगे हैं। इन दिनों किसी न किसी किसी न किसी क्षेत्र के या अनुष्ठान के या व्यक्ति विशेष के पण्डे बनने में प्राण और प्रतिष्ठा है। पैसे और सुख भी इसी में है। पैसा तो सबसे ज्यादा तारिकाओं के पण्डों को ही प्राप्त होता है। धाक और बल सबसे ज्यादा यों के पण्डों को! मुसीबत यह है कि भारतीय किसान इन बहुधन्धी सर्व पण्डों की फौज को देख हैरानी से आंखें फाड़ न जाने किनसे पूछने लगे हैं—, एक नहीं, दो नहीं, दस नहीं, हजार नहीं, इतने इतने निकम्मों को कैसे पोसूँगा। एक चीज सदा ध्यान में रखना कल्याणप्रद है। आसुरी संस्कार का अशेष संहार है। दैवी संस्कार के कमजोर पड़ने पर ही आसुरी संस्कार जोर पकड़ता जब असुरत्व जोर पकड़ता है दैवी संस्कार के उन्नयन से ही उसे दबा सकते हैं लिये स्वयं देवता बने बगैर हमें कल्याण मार्ग नजर नहीं आयगा। स्वयं देवत्व से बढ़ कर कोई देशसेवा और राष्ट्र-सम्मान कार्य भी संभव नहीं। बगैर इस इस भारतीय स्वाधीनता और राष्ट्रीय सम्मान को बेदाग बचाये रख भी नहीं सकते प्रकार की समस्याओं का यही एक निदान है—देवत्व का अनुशीलन करना। इसमें सा खर्च है, न मेहनत है। जिन्हें चाहिये उनके लिये बिलकुल सरल है—एक मात्र ही पर्याप्त हैं।

भारत में आजकल नरक के लिये sterling balance 'विदेशी मुद्रा' बिलकुल और सस्ती हो गयी है। पासपोर्ट का भी दफ्तर सर्वत्र खुल चुका है। सफर से है। उस ओर जाने का सड़क भी बिलकुल विशाल और अतीव साफ भी कर दिया हैं। सब प्रकार से आरामदेह है। इस लिये "चलो हम नरक तो बिलकुल सच्चा साम्यवाद भी नजर आता है! हिन्दु, मुसलमान, सिख, ईसाई विद्वान, मूर्ख, औरत, मर्द, सभी तबके के सभी विचार के सभी धर्म के आबाल वृद्ध एक साथ एक रुख होकर एक ही नारा और एक ही झंडे के नीचे संघटित निकले हुए हैं— नरक की ओर, पाप की जय बोलते हुए!

बन्धु, वह जो अस्मान के बादल से आवाज जो सुनायी दे रही है जिसे सुन आप भद्रगण एक क्षण निस्तब्ध हो जाते हैं, प्राण ही हिल उठते है वह बादल का गरज नहीं, यमराज का हँसना है ! बस, तैयार हो जाइये। गांधी खड़े रो रहे हैं ! इसी आसमान से यह पानी है ! क्यों कि स्वर्ग लोक ब्याज खाली है। और नरक में भी और गांधी जो ही नहीं, ईसा मुहम्मद बुद्ध -महावीर जैन आदि भी आश्चर्य और दुख से खड़े खड़ो लम्बी लम्बी सांसें भर रहे हैं क्यों कि उन्हीं के ही सब विश्व कर्णधार यमराज के दरबार में अत्यन्त खतरनाक अपराधी और अविश्वनीय गुनाहगार के में पकड़े गये हैं ! जय हो कांग्रेस की ! महात्मा गांधी की जय ! अल्ला होअकबर ! आमीन ! महावीर भगवान को जय ! बुद्धम शरणम गछामी, धम्मम शरणम गछामी संघम शरणम गछामी ! वाकायदा प्रतिक्षण नव नव केन्द्र खोला जा रहा है झूठ, पाप और चोरी छीनना सिखाने को कालेजों और विश्व विद्यालयों में, फिर सरकारी दफ्तरों फिर बजारों में, घर घर में, द्वार द्वार में, घाट घाट, बाट बाट, प्रशिक्षण पाप झूठ का, वेइमानी का, अहंकार और ढोंग का ! वस्त्र की जय ! टायलट की जय आइना कंघी की जय ! पेट की जय, कोठी की जय, नेता की जय, मंत्री की जय उर्वशी की जय ! मेनका की जय ! रोमियो की जय ? मजनू की जय ? जय नेहरू जय नेहरू, जय नेहरू, जय नेहरू ..

एक बिहारी लड़की ने मुझे पत्र लिखा

बताइये साहब, अब उसकी शादी कभी हो सकती ? और शादी न होगी वह खायगी क्या ? उसकी रोजी क्या होगी और वह रहेगी कहां ? यह नासमझी इस मीन-मस्तिष्का ने कर दी ! (मीनाक्षी उपमा अब पुरानी पड़ गयी है) यह खतरनाक हिम्मत इस बेचारी को अब बचने दे सकती ? इसका समाज यह सुनेगा इस पर क्या नहीं बीतेगा सोचा जाय—विचारा जाय ! जाति के लड़के अब हजार हजार रुपए देकर फुसलाने ललचाने पर भी इस पाप-सुन्दरी के बोझ को अपने सु कन्धों पर उठायेंगे नहीं। मां बाप का रो रोकर बुरा हाल बीतेगा या नहीं मगर आजकल के इन फैशनपरस्त गजरूपाओं और कोकिल-नयनाओं को (गजगामिनी और कोकिलकण्ठी आदि उपमायें भी अब समयोचित नहीं रही है) इन सारी सं मुसीबतों का कुछ भी ख्याल नहीं रहता। और लिखा भी किसको ? एक मद्रासी को जो लाख नाक रगड़ने से भी कभी बिहारी हो नहीं सकता, जो लाख पुस्तकें हिन्दी लिखने पर भी, सैकड़ों बरस बिहार में रहकर नाती पोता पैदा करने से भी अहिन्दी भाषी और मद्रासी ही कहलायगा। और लिखा भी क्या ? एकदम आग ! पढ़ते ही मेरा दिल दिमाग धुंआँ बन अन्तरिक्ष की ओर उठने लगा। फिक्र और बेचैनी से रात रात भर शीतल हवा में ठहलता रहा। हे भगवान, यह क्या नया झंझट आ खड़ा हुआ सिर पर

उसका आरोप है प्राच्य भारती सम्पादक को औरतों से घृणा है, बिहारी महिला
और भी। यह सदा अपनी बदतमीज कलम से स्त्रियों का मुंह नीचा करने का प्रयास करता
है—खासकर बिहारी स्त्रियों के। उन्हें यह दम्भी बिलकुल गाय मैंस
कुछ भी नहीं समझता है। उसे आश्चर्य है हिन्दी के वैभव सम्पन्न लेखक और
इस अविवेकी सम्पादक को इस तरह खुला खेलने क्यों दे रहे हैं? सर्वत्र
हैं यद्यपि पिछले दो वरसों से इस पापी का वह अशुभ कलम लगातार
रहा है! वह हैरानी और परेशानी से पूछती है इस दो वरस के भीतर
अभद्र सम्पादक ने किस को अछूता छोड़ा? जिन्हें सन्देह और अविश्वास है
वह नापाक पुस्तक अनल शलाका पढ़ कर देखें। स्वयं भगवान पर भी
फेंके हैं। उसका कहना है यह त्योहीनी और बेइज्जती अब नाकाबिले बर्दाश्त
वह चाहती है जैसे वारेन हेस्टिंग्स को ब्रिटीश पार्लमेंट ने इम्पीच किया था
भारती सम्पादक को भी इम्पीच कराया जाय!

अगर मेरी लेखनी से स्त्रियाँ यही समझती है कि मैं उनका अनादर कर रहा हूँ
अब लिखना ही नहीं चाहिये। मेरे सम्पादयीय लेख पढ़ कर मेरे पाठकों
अश्रद्धा और विरक्ति हो रही है तो मुझे धिक्कार है, मेरी कलम को
लाख धिक्कार! क्या जाने वे क्या सोचते और बोलते होंगे इस लड़की के पत्र
भीतर बहुत गहरा आघात पहुँचा दिया। और मैं प्रथम वार कलम नीचे रख
ओर मुड़ कर देखा कि इस दो वरस के भीतर मैंने क्या क्या नापाक चीजें लिखी!
लिखना मेरा कोई पेशा नहीं, न व्यसन ही, मैंने संयोग या, दैव योग से यह भी
कर दिया। मैं तो मामूली अध्यापक मात्र हूँ—एकदम सर्वलोक बहिष्कृत गुरु—
बिल्कुल कच्चा! क्या जानेगा साहित्य क्या? उसका मर्म क्या? जब कभी अपनी रचना
के हाथ में देखता हूँ तो संकोच और भय से कहीं छिप जाने का मन हुआ करता है
मुझे अपनी सम्मान्य बहन से एक ही चीज निवेदन करनी है। यह बिहार
भूखण्ड अपनी समस्त अच्छाइयों और बुराइयों के साथ अपकी चीज है। इस
समस्याओं को समझो और मनन करो। बगैर समस्याओं द्वारा अन्तस को चोट पहुँचे
उदय नहीं हो सकता। बगैर भावोदय के वाणी मिलना कठिन है। भाव, नाद द्वारा
जित होने पर ही स्वर प्रकट होता और शब्द द्वारा व्यंजित होने पर ही कविता भी
युग को मुलायम करके उसे एक दैवी संस्कृति के भीतर संघटित करना है
मुलायम करने की क्रिया लेखनी से ही संभव है। अहंकार और अज्ञान
के भीतर पड़ी कहराने वाली जनता को मुक्ति देने के लिये उस दुर्ग को चूर
देने की जरूरत पड़ जाती है। यह सूक्ष्म मुक्तिदान साहित्यकार ही कर
क्यों कि उनके हृदय गरल समुद्र नहीं, क्षीर सागर है, वहां शेष, शय्या है
पर स्वयं विष्णु का अस्तित्व है।

प्राच्य भारती का घोषणा पत्र

611/7-1

समक्ष

श्री अवर प्रमण्डल पदाधिकारी, बाँका।

प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन आफ बुक एक्ट न० २५ सन् १८६७ के अंतर्गत एक मासि जो प्राच्य भारती नामक मासिक पत्र कहलायगा, प्रारम्भ करने की घोषणा।

मैं आनन्द शंकर माधवन, पिता का नाम श्री परमेश्वर, संस्थापक संचालक, निर्माण परिषद् मंदार विद्यापीठ, थाना बाँका. जिला भागलपुर घोषणा करता हूँ "प्राच्य भारती" नामक मासिक पत्र (हिन्दी में) का मुद्रक और प्रकाशक हूँ। जो निर्माण-परिषद, मंदार विद्यापीठ का है तथा जो मन्दार विद्यापीठ प्रेस मदार विद्यापीठ से और हिन्दी निर्माण-परिषद्, मंदार विद्यापीठ में प्रकाशित होगा और उक्त मासिक सम पत्र के सम्बन्ध में नीचे दिये गए ब्योरे जहाँ तक मेरी जानकारी और विश्वास है, सही

१। समाचार पत्र का नाम ...."प्राच्य भारती"

२। भाषा जिसमें इसका प्रकाशन किया जानेवाला है... हिन्दी

३। प्रकाशन की नियत कालिकता और दिन, तारीख जब वह प्रकाशित हो-- में एक बार हर माह की १ली तारीख

४। समाचार पत्र का खुदरा दाम ... चौवालीस नये पैसे।

५। प्रकाशक का नाम...हिन्दी निर्माण-परिषद्, मंदार विद्यापीठ राष्ट्रीयता—भा
पता— डाकघर—मंदार विद्यापीठ भागलपुर।

६। मुद्रक का नाम ... आनन्द शंकर माधवन राष्ट्रीयता—भारतीय
पता— डाकघर—मन्दार विद्यापीठ भागलपुर।

७। संपादक का नाम—"आनन्द शंकर माधवन" राष्ट्रीयता—भारती
पता— डाकघर—मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर।

८। जिस मुद्रणादि में मुद्रण हो उसका सही और संक्षिप्त विवरण—शबरी डाकघर मन्दार विद्यापीठ भागलपुर, बिहार।

९। प्रकाशक का स्थान— हिन्दी निर्माण परिषद्, मन्दार विद्यापीठ, भाग

श्री आनन्द शंकर माधवन, पिता का नाम श्री परमेश्वर ग्राम—मन्दार, थाना—बाँका. जिला—भागलपुर जिन्हें श्री शालीग्राम प्रसाद घोष ने पहचाना यथारीति प्रतिज्ञा पूर्वक घोषित करते हैं कि उनकी जानकारी और विश्वास के अनुसार इस घोषणा पत्र की बातें सत्य हैं।

आनन्द शंकर मा
संस्थापक-संचाल
हिन्दी निर्माण प
पो०—मन्दार विद्यापीठ भाग

कीर्त्त प्रसाद सिंह
अवर प्रमंडल पदाधिकारी, बाँका
७।१२।६२

Identified and attested signature of Sri An Shankar Madhavan. Shali Pd. Ghosh, Pleader 7-12-

मन्दार विद्यापीठ प्रेस में आनन्द शंकर माधवन द्वारा मुद्रित एवं हिन्दी निर्माण परिषद् द्वारा प्रकाशित

मई, १९६३

जौनपुर बालिका इंटर काळेज की छात्रा कुमारी तारासेठ ने आनंद प्रकाश नामक एक रोमियो पर अपनी मर्यादा-रक्षा के संघर्ष में बीच सड़क पर एक मामूली साग-सब्जी काटने की छुरी से हमला कर दिया और उस आधुनिक प्रेमी की तत्काल मृत्यु हो गई। सेशन जज ने लड़की की बयान को सत्य मानते हुए उसे निर्दोष घोषित कर दिया और कहा कि मजनू को उचित ही सजा मिली।

अपने मान सम्मान की रक्षा के लिये जो इस प्रकार का भी साहस कर सकती हैं उन्हीं का मान सम्मान बच सकता, वे ही वीरप्रसविनी होकर राष्ट्र और विश्व का भी स्तर, मर्यादा प्रौढ़ बना सकेंगी।

हिन्दी निर्माण परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर
बिहार

हिन्दी निर्माण परिषद् की एकांकी प्रतियोगिता
का फल

इस दिसम्बर में अन्त हुई तिमाही की एकांकी प्रतियोगिता के विजेताओं के नाम और पते निम्नलिखित हैं।

(१) अधीर पारसनाथ सिंह, छपरा
(२) डा० रामचरण महेन्द्र, नयापुरा, कोटा, रास्थान
(३) प्रो० सूर्यकांत 'विमल' जे० आर० एम० कालेज, जमालपुर
(४) वी० एल० राजोतिया 'विकल' पोद्दार कालेज, नवलगढ़, राजस्थान
(५) शिवराज, जिला कांग्रेस कमेटी, अलीगढ़, यू० पी०

अगली बार निबंध प्रतियोगिता; पांच-पांच पुरस्कारों की व्यवस्था

प्रथम पुरस्कार ५१)
द्वितीय पु० ४१) —तृतीय पु० ३१)
चतुर्थ पु० २१) —पंचम पु० ११)

हरिवल्लभ नारायण पारितोषिक
का चौथा आयोजन

प्रथम जनवरी से प्रारम्भ हुई वर्ष की पहली तिमाही के लिये इस परिषद् ने निबंध प्रतियोगिता रखी विषय रहेगा—'भारत-चीन सीमा-समस्या का समाधान'। निबंधकार अपनी रचना को ३००० शब्दों में सीमित रखें। इस प्रतियोगिता में भाग लेने वाले व्यक्तियों को योग्यता क्रम के अनुसार ५१) ४१, ३१, २१,११ रुपये के पांच पुरस्कार प्रदान करने की व्यवस्था है। निबंध मौलिक, अप्रकाशित तथा अप्रसारित होना चाहिए। अनूदित रचना नहीं ली जायगी। पुरस्कृत रचनाएँ प्राच्य भारती मासिक पत्रिका में सुविधानुसार प्रकाशित की जायंगी। ३० जून तक निम्न पते पर निबंध पहुंच जाना चाहिए। पुरस्कार की राशि पुरस्कृत रचनाकार को तुरन्त भेज दी जायगी।

मंत्री,
हिन्दी निर्माण परिषद्

पो०—मंदार विद्यापीठ,
जि०—भागलपुर, बिहार

प्राच्य भारती

(हिन्दी निर्माण परिषद् की मासिक मुख पत्रिका)

बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत

सम्पादक

वार्षिक चन्दा ५) • आनन्द शंकर माधवन • प्रति अंक ५० न० पै०

वर्ष ४ | मई १९६३ | अंक ४०

विषय-सूची

सम्पादकीय

कलिया, खिल जा........खिल जा....

हे कली, तुम्हारे उस अतिशय सौन्दर्य-सरिता में सारा संसार स्नान करना चाहता है। पर वह तुम्हें बचा नहीं सके। तुम्हारे उस अलौकिक सुगन्ध सुधापान करके वह जन्म साफल्य पाना चाहता है। पर वह उसे न तो अक्षुण्ण रख सकेगा और न तुम्हारे उस दिव्य मधु-कलश को ही वह उन लम्पट भ्रमर राक्षसों से बचा सकेगा। सारांश, इस खिलने की क्रिया में उन्हें कोई लाभ नहीं। तुम मात्र अपना परिचय दे सकोगी इस उमीद से कि संसार इससे लाभान्वित हो सकेगा। पर लाभान्वित हो जाय, इसका भी कोई भरोसा नहीं। क्योंकि सब गंगा स्नान करने वालों का पाप नहीं कटता। सब पूजा-पाठ और प्रार्थना-नमाज करने वाले दिव्य चेतना से लाभान्वित नहीं हो रहे। फिर भी हे कली, तुम खिल। यह जान कर भी कि तुम्हारा इसमें व्यभिचार है, शोषण है, मरण है, तुम खिल। क्योंकि अन्यथा हमें कोई आधार ही न रह जायगा, हम अपना अस्तित्व ही खो देंगे।

पुष्पों की भी अपनी अपनी किस्मत है। सब पुष्प शंकर जी के कंठहार नहीं बनते। कोई कोई कमलिनी राक्षस वृत्ति के नरपिशाचों की क्रीत दासी बन लाचार जीवन भी व्यतीत करती है। यह भी है कि पुष्पों के साथ कीड़ों को भी कभी शंकर जी के कण्ठहार में परिणत हो उनकी तौहीनी और शोषण करने का मौका मिल जाता है। यह सबके रहते हुए भी चन्द्रमा खूबसूरत है। यह स्वीकार करने में संसार हिचकेगा नहीं यद्यपि उसके काले धब्बे सब की नजर में प्रत्यक्ष सत्य है। अतः पूर्ण रूप से प्रकट होकर अपने स्वरूप और चारित्र्य का पूर्ण परिचय देने में ही चन्द्रमा का भी कल्याण और महानता है। सूर्य भी अपनी तेजस्विता को कभी छिपाने का प्रयास नहीं करता। इस लिये हे कली, खिलो ही। मृत्यु और परिहास का आलिंगन करने के लिये ही सही तुम खिलो।

सवेरे सूर्य देवता नेपथ्य से प्रकट हुआ तो पृथ्वी की अतुलनीय रूप लावण्य देखकर मुग्ध हो गया और वह अपने उन अनगिनत रश्मि सखियों द्वारा उसे अपना प्रणय संदेश भेजा। पृथ्वी ने कोई उत्तर नहीं दिया। रश्मियों को जब सफलता नहीं मिली तो वे क्रोध से राक्षस तुल्य बन पृथ्वी को कष्ट देने लगी। मगर फिर भी पृथ्वी कुछ नहीं बोली। शाम को उत्पीड़ित अपमानित और मृतप्राय होकर पृथ्वी सो गयी तब रात्रि आई, चन्द्रमा आया। दोनों मिलकर के उस बेकसूर व्यभिचारित पृथ्वी को अपनी सेवा परिचर्या से नव जीवन प्रदान किया। सब प्रेमी पुजारी और सेवा वृत्ति के नहीं होते। कोई कोई तो चूसना ही प्रेम समझते हैं। सौन्दर्य और यौवन चूसे जाने के लिये नहीं। गाय के दूध पर मनुष्य का क्या हक है? वह तो उस बछड़े की चीज है गरीब की खूबसूरत बेटी पैसे वालों के व्यभिचार करने के लिये ही जन्मी है? अनाज जिसे आप भोजन में व्यवहार करते हैं वस्तुतः उस अंकुर रूप कोमल शिशु का भोजन है। खेतों में जो बीज हम बोते हैं वहां उस अनाज को भीतर खाकर ही अंकुर उग कर जिन्दा खड़ा होता है। जब तक उसकी जड़ पृथ्वी के भीतर से भोजन ढूँढ निकाल कर लाने में असमर्थ है तब तक उसका यही खुराक रहता है। व्यवहार और व्यभिचार दोनों दो चीज हैं। किसी वस्तु को व्यवहार में लाना और व्यभिचार में लाना दोनों दो भिन्न कोटि की मनोवृत्ति का परिचय देना मात्र है। हर स्त्री पत्नी नहीं है, पति के घर में भी। कोई कोई वहां शोषित हैं और व्यभिचारित है—पति के द्वारा भी। इस लिये पुष्प पूजित हो अथवा शोषित दोनों ही स्थिति में वह सम्मानित होना चाहिये। क्योंकि स्पर्श कर्ता की रुचि के अनुसार ही उसका सम्मान है। इस में उनका वश ही क्या? अतः प्रत्येक स्त्री सम्य रूप से सम्मानार्थी है चाहे वह किसी भी कुल, स्थिति, वृत्ति या पेशा की हो।

भारत भाग्य लक्ष्मी खिली १९४७ में। अगर उसकी पूजा होती, सम्मान होता तो हम उससे लाभान्वित होते। पर उसके साथ हमने व्यभिचार ही आरंभ किया मनमाना। तभी तो हम भी व्यभिचरित हैं, हम भी शोषित हैं। राधा से प्यार कर कृष्ण स्वयं सम्मानित हुए। वह प्यार ही ऐसी पूजा था। हम भी प्यार करने जाते क्यों नहीं सम्मानित होते? 'प्यार, पूजा' बन्धु, 'आराधना है, समर्पण है, पारस्परिक चरण वन्दना है'।

आज कल किसी को भी राजा बनने का शौक नहीं। क्योंकि जनता जग चुकी और तमाम राजाओं को अपनी उस दीर्घकालीन मौज का बड़ा महँगा दाम देना पड़ा। पर अब नेता बनने का शौक है। नेता! क्या है नेता! मानवों का वह नेता है! सेवक नहीं, नेता है! किस गुण, वैभव, ज्ञान या तपस्या से यह स्थान प्राप्त किया है की आपने? और किसने दिया? भले आदमी अपने को जनसाधारण के नेता कह

में शरम अनुभव करेंगे। नेतृत्व शब्द ही लज्जाजनक है। सेवा शब्द ही उचित है। नेता व्रत ही गांधी जी ने प्रारंभ किया था। पर यह नेता-व्रत कबसे प्रकट हुआ समझ में नहीं आता। इन तथाघोषित स्वनियुक्त नेताओं को देख मेरा तो मिजाज उबलने लगता है।

जयप्रकाश नारायण ने हाल में दल विहीन गणतंत्र व्यवस्था के सम्बन्ध में वक्तव्य दिया तो सभी नेता हँसने लगे। पर उसमें बहुत बड़ा तथ्य था। हँसते इसलिये कि उसमें नेतृत्व संभव नहीं था। जनपद के सबसे ज्ञानी तपस्वी और निस्वार्थ सेवक को जन प्रतिनिधि बना कर विधान सभाओं में भेजते तो राज शासन कितना सुन्दर चलता। ऐसी बात नहीं कि देश में सत्पुरुष का एकदम अकाल है। क्या विधायक और मंत्री लोग समूह के सर्वश्रेष्ठ सत्पुरुष हैं? सर्वश्रेष्ठ ज्ञानी और त्यागी हैं? अगर नहीं हैं तो ये सब होशियार और धूर्त किस अनुष्ठान पद्धति से ऊपर आये अन्धकार के तीर जैसे हमें वेध रहे हैं? समाज के सब सरकारी और गैर सरकारी पदों के लिये योग्यता निर्धारण किया गया है सिवा विधायक, मंत्री और नेतागिरी के! अपूज्य शासन ही सम्पूर्ण समस्याओं की जड़ है।

भारतीय वाङ्मय में अमृत और हलाहल को दो विपरीत तथ्य के रूप में बताया गया है। हैं भी वस्तुतः ये दोनों दो विपरीत ही तत्व। आजकल के युग में मनुष्य हलाहल के अस्तित्व पर संदेह नहीं करते, पर अमृत को कवियों और योगियों का मनगढ़न्त कल्पना मात्र मानने लगे हैं। हमें यहां यही निवेदन करना है कि अगर दिन सत्य है तो रात भी सत्य है अगर राक्षस प्रकृति के लोग नाराज आ रहे हैं तो देव प्रकृति के लोग भी अवश्य मौजूद हैं, इसलिये अगर हलाहल सत्य है तो अमृत भी सत्य है।

साधारण अवस्था में मनुष्य शरीर की ताप-मात्रा सन्तानबे डिग्री है, किन्तु इसी शरीर में अंठानबे डिग्री भी पायी जाती है। पर शरीर ज्वरग्रस्त होने लगता तो ताप मात्रा निन्नानबे, एक सौ, एक सौ एक, एक सौ दो इस तरह धीरे धीरे बढ़ती है। पंचानवे चौरानबे के नीचे ताप मात्रा उतरने पर मनुष्य शरीर जीवित रहता भी नहीं। सेंटिग्रेड थरमामीटर के सौ डिग्री ताप पर जल उबलने लगता है और शून्य डिग्री ताप पर जल बरफ हो जाता है। सारांश यह है कि ताप भेद के अनुसार वस्तु में भाव भेद और रूप भेद दृष्टिगोचर होते हैं। हमारे विचार आचार में भी, भाव-प्रतिभाव का भी ताप भेद रहता है और तदनुसार हमें अमृतपान अथवा हलाहल पान करना पड़ता है। इसमें परमेश्वर का या नियति का दोष नहीं, सम्पूर्ण जिम्मेदारी अपनी ही समझ बूझ का है। उस दिन अखबार निकला था— एक पचीस बरस के एक युवक को जब फांसी की सजा सुनायी गयी तो वह रामायण हाथ में

लेता फिरता था, पूजापाठ और चन्दन तिलक करता था और अपनी आंखों को दान भी देना चाहा था। पर पचीस बरस के जितने युवक समाज में आज सर्वत्र घूम रहे हैं उनमें एक के भी हाथ में रामायण नजर नहीं आ रही है। जिन्दगी से नाउमीद होने लगा तो रामायण खोजता! जन्म लेते ही क्यों न यह समझ में आता? प्रतिनिमिष क्यों न यह सत्य दिखलाई देता! यह जिन्दगी नाउमीदगी का ही तो इतिवृत्त है"

प्रत्येक विचार और भाव से एक प्रकार के द्रव्य का प्रादुर्भाव होता है, एक प्रकार की चमक का प्रादुर्भाव होता है। विचार अथवा भाव की गरिमा लघुता के अनुसार इस भाव और चमक का भी गुण दोष विवेचन है। हलाहल या अमृत जिसे कहते हैं वह इस प्रकार के द्रव्य पदार्थों का ही नाम है। कहते हैं योगी लोग सदा अमृत पान करते रहते हैं। इसका तात्पर्य क्या है? सतत् उज्ज्वल चिन्तन और मनन से सात्विक भाव और विचार के अनुशीलन से उत्पन्न उस अमृत रस को भी वे सदा पान करते हैं। हम आप सदा हलाहल पान ही करते हैं। इस हलाहल पान से उत्पन्न उत्पीड़न से कराहते समय हम यह कहने लगते हैं अमृत तत्व एक मिथ्या कल्पना है। सबों ने देखा गांधी जी सदा मुस्कुराते रहते हैं—एक अजीब किस्म की दिव्य-युक्त मुस्कुराहट! मालूम होता था वह मुस्कुराहट और पूर्ण हास्य इस संसार की वस्तु न हो। ऐसे तो हम आप भी हँस लेते हैं पर हमारी हँसी मुस्कुराहट का संसार के साहित्य में गीत नहीं बनता। पर उनकी हँसी मुस्कुराहट का साहित्य सृजन हुआ। बहुतों ने गांधी बनना चाहा। उनके जैसे उपवास भी करके देखा, फलाहार का भी प्रयोग किया। अर्धनग्न भी रहे। लिखे और बोले भी, प्रार्थना प्रवचन भी करके देखे। पर सभी थककर बैठ गये। गांधी जी के सामने खादी की प्रतिष्ठा थी, आज परिहास है। गांधी जी के जमाने में हिन्दी का मान था, अब अपमान है। गांधी के जमाने में जेल तीर्थ था, आज नरक है। गांधी जी के जमाने में आश्रम पवित्र था, आश्रमवासी देवता थे, प्रत्येक भारतीय नरनारी पवित्रता की ओर अग्रसर होने लगी थी। आज गंगा की धार उलटी है। आज भागीरथी वापस विष्णुपाद की ओर लौट जाना चाहती। आप में क्यों भगीरथ तत्व प्रकट नहीं हो रहा? आप क्यों शिव को प्रसन्न कर उनको गंगा के स्वागत के लिये तैयार नहीं करा पाते? यह सारा परिश्रम भागीरथ ने अपने पूर्वजों को मुक्ति दान करने के हेतु किया था। आप ऐसा कर सकते? आप को जीवित माता पिता और भाई बन्धु घास हैं, मृत माता पिता के उद्धार के लिये श्रम और तप करना दूर की बात है। आप श्रम और तप कर रहे हैं अवश्य! किनके उद्धार के लिये मैं कहना नहीं चाहता, किनको सुख देने के लिये मैं बोलूँगा नहीं। कवि दिनकर अपनी उस अतु-

लनीय काव्य रचना—उर्वशी में कहते हैं, भरत मुनि का श्राप गरज उठा और उर्व
को अपना सारा सुख और शांति अपनी सारी अरमान और अभिलाषा को
इस पृथ्वी को छोड़ जाना पड़ा। काश कवि दिनकर यह भी कह देते कि आज भा
वासियों पर किस मुनि का श्राप इतना जोर जोर से गरज रहा है ! किस श्र
के श्राप से उनकी भीतरी कलियां खिले बगैर आज झुलस झुलस कर झड़ रही हैं
श्राप-मोक्ष का रास्ता बताने वाले कोई मुक्त कृपा दर्शाने वाले गुरु गोसाई भी
नजर नहीं आ रहा।

हम प्रत्येक के भीतर वह अनन्त सौरभयुक्त कलि मधुभरा वह अक्षय कलश
खिलने की अरमान और छटपटाहट से व्यग्र हो खड़ी है हम ही उसको आवश्य
व्यवस्था और परिस्थिति प्रदान नहीं करते। जैसे निम्बू से रस चूस चूस कर निका
जाता वैसे ही इस दुनिया से हम सुख लेने के लिये ही पैदा हुए हैं। पर हम प्रतिदिन
दुख ही मोल ले रहे हैं। मेरी समझ में नहीं आ रहा—बेइमानी, झूठ, शोषण
स्वार्थ के प्रयोग करके देश के इन देवता लोगों ने कौन सा नफा और कौन सी प्र
ष्ठा प्राप्त की है ? प्रेम और अहिंसा नहीं, स्वार्थ और शोषण ही मूल मंत्र है
सत्य नहीं धोखा ही हथियार बना। फल यह देखने को मिला कि देश की एक समस
भी हल नहीं हो रही हैं। एक भी हल हो जाती तो सभी हल हो जाती जैसे सं
स्कार लोग कहते—एक साधे तो सब सधे। क्योंकि ये सारी ही समस्यायें अन
न्याश्रित मात्र है।

स्वामी रामेश्वरानन्द ने हिन्दी की मान प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिये पार्लियाम
में हवन ही प्रारंभ किया। 'हिन्दी बचाओ' सम्मेलन भी यत्र-तत्र प्रारंभ किया
कुछ लोग हिमालय बचाओ सम्मेलन करते फिरते हैं। इन सम्मेलनों से हिन्दी
हिमालय बचेगा नहीं। बम्बई में एक राम नामक साधु, ने भारत में अंग्रेजी की
प्रतिष्ठा करने के लिये हवन प्रारंभ किया। अंग्रेजी बचाओ सम्मेलन शुरू हो गय
हजारों मद्रासी, मुसलमान, क्रिस्तान, फारसी, औफिसर, बंगाली आदि इसमें शा
हो रहे हैं। इस तरह का एक परिहास जनक नाटक संसार के अन्य किसी भी
में देखने को नहीं मिलता है। हिन्दी लिपि को देवनागरी कहते, संस्कृत को देव
कहते। कौन हैं ये देव! आप ? आप जो रात दिन दुराचार करते रहते हैं देव
हिन्दी लिपि अगर देवनागरी है तो निस्संदेह वह विश्वनागरी के रूप में परिणत होत
परिणत करके जब तक दिखाते नहीं तब तक देवता चैन नहीं लेते। हिन्दी अगर
भाषा है तो वह विश्व भाषा अवश्य बन जाती! संसार के सबसे अधिक प्रति
भाषा भी वही बनकर रहती। यह सब काम भागीरथ जैसे तपस्वी ही करके दि

सकते । पारिश्रमिक और रायल्टी के पिट्ठू और प्रकाशक के सामने नाक रग
वाले पौरुषहीन तथाकथित साहित्यिक और शिल्पकार यह कमाल काम करके
दिखा सकते । हिन्दी की प्रतिष्ठा आज के ये दरिद्र साहित्यकार कभी नहीं
सकते । उसको जो कुछ भी प्रतिष्ठा प्राप्त है दयानन्द, गांधी, सुभाष आदि
चलते हुई । अब वे ही वापस आवे तो प्रतिष्ठा स्थापित होगी । मद्रासियों बं
लियों, मुसलमानों क्रिस्तानों, फारसियों अफसरों, विदेशियों आदि सैकड़ों प्र
के विरोधियों को मुलायम करके उन्हें अनुकूल स्थिति में रख हिन्दी तथा देश
श्रीवृद्धि बढ़ाने का अनुष्ठान आज के ये पेटपालतू साहित्यकार नहीं कर सकते,
कर सकते । हिन्दी की समस्या देश की प्रतिष्ठा की समस्या है । भाषा की प्रति
गिर रही हैं । इस देश में अंग्रेजी रही तो यहां के देशवासियों की हड्डी
सीधी नहीं होगी । इन लोगों के मस्तिष्क से अंग्रेजों के अनुकरण, अनुगमन
की शक्ति कभी नहीं जायगी और इनके दिल दिमाग में मौलिक अनुष्ठान आरम्भ
नहीं हो सकता । मौलिक अनु ा न ही किसी भी देश को उठाने का उपक्रम प्र
करता । अंग्रेजी विश्व भाषा के रूप में इस लिये नहीं प्रतिष्ठित कि उसका सा
सर्वश्रेष्ठ है । अंग्रेजों का जीवन, विचार, आचार, व्यवस्था, विधान संस्था ये
सब तो सर्वश्रेष्ठ है । इसलिये इनकी भाषा का भी प्रचार और प्रसार हुआ ।
देश में अंग्रेजी नहीं वह सब क्या पंगु होकर कराह रहा है ? भारतीय मस्ति
ही गजब की चीज बनी हुई है । सत्रह बरस के स्वाधीन अस्तित्व के बाद
यह आपस में लड़ने में ही प्रवीण हुए । महानता, प्रेम, सच्चाई आदि कहीं भी
भी क्षेत्र में नहीं है । अंगरेजों की सार्वजनिक संस्थायें उनकी सरकारी व्यव
से लाखों गुणा श्रेष्ठ है । पर इस देश की सार्वजनिक संस्थायें बिलकुल नरक
ऐसा क्यों ? ऐसा इसलिये कि जनता ही ऐसी है । जो भी कुछ करने के
आगे बढ़े तो उन्हें प्रतिष्ठा और सुख का कोई सवाल ही नहीं, उलटा वह परिह
और मूर्खों द्वारा भी अपमानित है । अर्थाभाव में उनकी सारी ईमानदारी
प्रतिभा कुंठित हो जाती और किसी भी समय किसी मूर्ख शासक के किसी सुर के
आकर नष्ट प्राय हो जाती । सारी समस्याओं के मूल में एक ही बात है । जनता की
मानसिक हालत ! प्रत्येक व्यक्ति द्वारा देवत्व को अपने भीतर सतत जागृत और सक्रिय
बगैर इस देश की समस्यायें हल होने वाली नहीं है । प्रत्येक नर-नारी के भीतर भूल
पड़ी कली को आप्लावित करके उसे खिला देने की स्थिति पैदा करने की जरू
है । यहां पर ही सत् साहित्य की आवश्यकता पड़ती है । यह अनुष्ठान ऋषितु
साहित्यकार ही कर के दिखा सकते हैं । मनुष्य में देवत्व को प्रतिष्ठित करना, देव

ा अनुशीलन कराना— उसके क्रूर या जड़ स्वभाव को नवनीत सदृश मुलायम करना सर्में प्रेम का अमृत रस भरना—यहीं पर हो उस दिव्य कलम की जरूरत पड़ती है। स महान यज्ञ के लिये जो कलम हाथ में लेने को तैयार है वे ही हिन्दी की मा तिष्ठा बढ़ाने में अनुकूल वातावरण पैदा कर सकेंगे। हिन्दी सिनेमा का प्रचार में युग साप्ताहिक की बिक्री देख आप यह न समझिये हिन्दी का विकास हो रहा । ऐसा तो दुराचार का भी प्रचार बढ़ रहा है। बीड़ी और ताड़ी की भी दि नी रात चौगुनी बिक्री बढ़ रही है आप कहां तक महान हैं संसार की कतार में आपका कहां स्थान है आपकी स्त्री का कहां तक पहुँच है, वहां तक ही हिन्दी की तिष्ठा बढ़ी है - पर मुसीबत इस देश में यह है कि डाक्टर लोग इलाज करते हैं और रोग का अध्ययन किये। समस्या सुलझाने चलते हैं बगैर स्थिति को और मू ाग का अध्ययन किये। अपने बेटे को अगर हम प्यार करते तो इसका यह अ हीं आपकी बेटी को घृणा करते। बात यह है कि मेरी बेटी ही मेरी आत्मा है, पज है और वही मुझे काम देगी, मेरी प्रतिष्ठा भी बढ़ायगी। यही बात है। ारत में कुछ ऐसे भाई ज्ञानी है जिन्हें गोरा चमड़ा और गोरी मुस्कुराहट बहुत संद हैं उन्हें भारत की देहाती लड़कियां पसन्द नहीं आसकती। क्योंकि म्मा देना नहीं जानती, प्रेम पत्र लिखना नहीं जानती, क्रीड़ा कलाओं से अनभि । पर उसके उस तथाकथित अज्ञानान्धकार के भीतर एक ऐसी मणि है जिस ामने एक दिन सारा संसार झुकेगा। तब तक के लिये हे भारतीय अंग्रेजी, ो राज्य कर, तू भी मौज कर।

भारतीय मूर्त्तिकला का मर्म

श्री अरविन्द

अपनी प्राचीन कला का सही मूल्य आंकने के लिये हमें विदेशी दृष्टिकोण की समस्त दासता से अपने आपको मुक्त करना होगा और, जैसा कि पहले में अपनी स्थापत्य-कला के बारे में संकेत कर चुका हूं, हमें अपनी भास्करकला एवं चित्रकला को उसके अपने गंभीर उद्देश्य एवं उसके मूलभाव की महानता के प्रकाश में देखना होगा। जब हम इस पर इस प्रकार दृष्टि डालेंगे तब हम यह देख पायेंगे कि प्राचीन और मध्ययुगीन भारत की मूर्तिकला कलात्मक उपलब्धि के अति उच्चतम स्तरों पर स्थान पाने का दावा करती है। मुझे मालूम नहीं कि कहां हमें कोई ऐसी मूर्तिकला मिलेगी जिसका उद्देश्य इससे अधिक गंभीर हो, भाव अधिक महान् हो, कार्य संपन्न करने का कौशल अधिक सुसमंजस हो। हां, हीन कोटि की रचना भी देखने में आती है, ऐसी रचना जो असफल हो गयी है या केवल कुछ अंश में ही सफल हुई है, पर इस कला को यदि इसके समूचे रूप में देखें, इसके उत्कर्ष की चिरस्थायिता में, इसकी सर्वोत्कृष्ट कृतियों की संख्या में और इसकी उस शक्ति में इसे देखें जिसके साथ यह एक जाति की आत्मा और मन को व्यक्त करती है तो हम आगे बढ़कर इसके लिये प्रथम स्थान का दावा करने के लिए लाला-यित होंगे। निःसंदेह, मूर्ति-शिल्प के प्राचीन देशों में ही अत्यधिक फूला फ है जहां इसकी परिकल्पना, इसकी स्वाभावि पृष्ठ-भूमि एवं आधार, अर्थात् मह वास्तु कृति के सहारे की गयी थी। मि यूनान और भारत को इस प्रकार की रच में प्रथम स्थान प्राप्त है। मध्यकाल और आधुनिक यूरोप ने ऐसी निपुणता, प्रचुर और विशालतावाली कोई भी चीज न रची जब कि उधर चित्रकारी में .पर यूरोप ने बहुत कुछ किया है और वह समृद्ध रूप में तथा दीर्घकाल-व्यापी अ नित-नूतन अंतः प्रेरणा के साथ। वि उत्पन्न होने का कारण यह है कि ये कलाएँ भिन्न-भिन्न प्रकार की मनोवृत्ति अपेक्षा करती हैं। जिस साधन-सामग्री हम काम करते हैं वह सर्जनशील आत्मा अपनी विशेष मांग करती है, अपनी स भाविक शर्तें रखती है, जैसी कि रसि ने एक भिन्न प्रसंग में निर्देश किया पत्थर या कांसे से मूर्ति बनाने की क मन की ऐसी बनावट की मांग करत जो प्राचीन लोगों में थी पर आधुनिक लो में नहीं है या फिर उनमें से विरले व्यक्ति में ही पायी जाती है, वह एक ऐसे कला

न की मांग करती है जो न तो अत्यन्त गपूर्वक चलनेवाला हो और न अपने भाव आसक्त हो और न अपने व्यक्तित्व में भावावेश के तथा उत्तेजित करके विलुप्त जानेवाले स्पर्शों के अत्यधिक वश में हो, वल्कि सुनिश्चित विचार और तर्दशन के किसी महान आधार पर प्रतिष्ठित हो, स्वभाव में स्थिर हो, अपनी कल्पना उन्हीं चीजों पर एकाग्र हो जो दृढ़ र स्थायी हैं। इस अधिक कठोर उपादान मनुष्य आसानी से अपने इच्छानुसार खिलवाड़ नहीं कर सकता, वह इन चीजों केवल श्री-शोभा एवं बाह्य सौंदर्य अधिक स्थूल, चंचल और हलके रूप में कर्षक उद्देश्यों के लिये चिरकाल तक या रक्षित रूप में रत भी नहीं रह सकता। सौंदर्यात्मक स्व-तुष्टि जिसके लिये रंग की आंतर भावना हमें स्वीकृति देती है तथा आमंत्रित तक करती है। जीवन की उस चल क्रीड़ा का आकर्षण जिसके लिये की, लेखनी या रंग की रेखा स्वतंत्रता दान करती है—ये दोनों यहां निषिद्ध अथवा यदि किसी हद तक इन्हें चरितार्थ या भी जाय तो केवल एक सीमारेखा भीतर ही जिसे पार करना खतरनाक और शीघ्र ही विनाशकारी होता है। यहां कृति के आधार के रूप में आवश्यकता महान या गंभीर उद्देश्यों की, एक या अधिक गहराई में बैठने वाली आध्यात्मिक दृष्टि या शाश्वत वस्तुओं की सी अनुभूति की। मूर्ति-शिल्प स्थिति-

शील, स्वयंपरिपूर्ण, अनिवार्यतः दृढ़, या कठोर होता है और इसके लि ऐसी सौंदर्य भावना की अपेक्षा होती इन गुणों को धारण करने में समर्थ हो आधार पर भी जीवन की एक विशेष प्रका गतिशीलता और रेखा की एक कु श्रीसुषमा अवश्य आ सकती परन्तु यदि पूर्ण रूप से उपादान के मूल धर्म स्थान ले लेता है तो इसका अर्थ यह है कि बृहत मूर्ति में क्षुद्र मूर्ति की प्रविष्ट हो गयी है और तब हमें हो जाना चाहिये कि हम अवनति के पहुँच रहे हैं। यूनानी मूर्तिकला इस का अनुकरण करती हुई फिडियस प्रैक्सिटेलीज (Praxiteles) की स्व आसक्ति में से गुजरकर अपने क्ष अवस्था में जा पहुँची। कुछ एक व्यक्ति एक ऐंजेलो (Angelo) का, ए (Rodin) के द्वारा निर्मित किसी कृति के होते हुए भी परवर्ती मूर्तिकला में अधिकतर असफल हो है, क्योंकि उसने पत्थर और कांसे के बाहरी रूप में खेलवाड़ किया, इन्हें के चित्रण का एक माध्यम समझा, गंभीर दृष्टि या आध्यात्मिक प्रेरक भा पर्याप्त आधार नहीं पा सका। इनके वि मिस्र और भारत में मूर्तिकला ने सृजन की शक्ति को कई महान् तक सुरक्षित रखा भारत में जो प्रा तम कृति हाल में खोज निकाली गयी वह ईसा से पूर्व पांचवी सदी की है वह प्रायः पूर्णतया विकसित है

उसके पीछे और भी पहले की पूर्ण रचना का इतिहास स्पष्ट रूप से विद्यमान है, और किसी प्रकार का उच्च मूल्य रखने वाली अत्यन्त अर्वाचीन कृति हमारे अपने समय से कुछ ही सदियां पहले की ठहरती है। मूर्तिकला के क्षेत्र में सर्वांगपूर्ण सृष्टि के दोसहस्र वर्षों के सुनिश्चित इतिहास का होना किसी जाति के जीवन का एक असाधारण और महत्वपूर्ण तथ्य है।

भारतीय मूर्तिकला की इस महानता और अविच्छिन्न परंपरा का कारण भारत जाति के धार्मिक और दार्शनिक मन तथा सौंदर्यात्मक मन के बीच घनिष्ट संम्बध ही है। हमारे युग से कुछ काल पूर्व तक इसका बचे रहना उस दर्शन और धर्म में विद्यमान प्राचीनपंथी मन की गठन के बचे रहने के कारण ही संभव हुआ. ऐसे मन की जो सनातन वस्तुओं से परिचित था, विराट दृष्टि पाने में समर्थ था और जिसके चिंतन और अवलोकन की जड़े अंतरात्मा की गहराइयों में, मानव आत्मा की अत्यंत अंतरंग, अर्थगर्भित और स्थायी अनुभूतियों में थीं। निःसंदेह इस महानता की भावना, प्रस्तरगत यूनानी कृति की सीमित पूर्णता. उज्ज्वल श्रेष्ठता या प्राणिक सूक्ष्मता और भौतिक सुषमा से ठीक उलटे छोर की है।——प्राचीनतर एवं अधिक पुरानी यूनानी शैली में कोई ऐसी चीज अवश्य थी जो मिश्र और पूर्व से प्राप्त प्रथम सर्जनात्मक मूल प्रेरणा का स्मरण कराने वाले स्पर्श के समान प्रतीत होती है, परन्तु वह प्रभुत्वपूर्ण विचार तो वहां पहले से ही विद्यमान है जिसने यूनानी सौंदर्य का रूप निश्चित किया और साथ ही यूरोप के परिवर्त्ती मन पर अपना अधि[कार] जमाये रहा है, अर्थात आंतरिक स[त्य] किसी प्रकार की अभिव्यक्ति को [...] प्रकृति के आदर्श अनुकरण के साथ स[...] करने का संकल्प। जो रचना निष्पन्न [हुई] गयी उसकी उज्ज्वलता, सुन्दरता एवं [श्रे]ष्ठता एक अत्यन्त महत् और पूर्ण वस्तु [है] परन्तु यह मानना निरर्थक है कि वही [...]त्मक सृजन की एकमात्र संभव पद्धति [...] उसका एकमात्र स्थायी और स्वाभाविक [...] है। उसकी उच्चतम महत्ता केवल [...] तक जीवित रही और असल में वह [...] दीर्घकाल तक नहीं जीवित रही—जब [...] कि एक अत्यन्त सूक्ष्म समृद्ध या ग[...] तो नहीं पर सुन्दर आध्यात्मिक संकेत, श्रेष्ठता तथा सुषमा के बाह्य भौतिक स[...] जस्य के बीच एक विशेष प्रकार का संत[...] कारक संतुलन साधित करके उन्हें निर[न्तर] सुरक्षित रखा गया। बाद की रचना इन्द्रियों के सांचे में सौंदर्य की आ[...] को प्रकट करने की एक विशेष शक्ति [के] साथ प्राणिक संकेत और ऐंद्रिय भौ[तिक] सौंदर्य का एक क्षणिक चमत्कार सा[धित] किया, किंतु एक बार ऐसा कर लेने [...] देखने या सृजन करने के लिये और [...] भी नहीं रहा। कारण, वह विचित्र प्र[...] जो आज आधुनिक मन को इस बात के [लिये] प्रेरित करती है कि वह अतिरंजित यथ[ार्]थवाद की, जो वस्तुतः जीवन और जड़त[त्व] में विद्यमान आत्मा के रहस्य को प्रकाशि[त]

के लिये वस्तुओं के आकार पर डाला
वाले दबाव ही है, मिथ्या कल्पना के
आध्यात्मिक दृष्टि की ओर लौटे,
न स्वभाव और बुद्धि के लिये सुलभ
थी और निश्चय ही हमारे लिये अब
देखने का समय आ गया है, जैसा कि
बहुतेरे लोग स्वीकार करते हैं कि
कला की महत्ता को उसके अपने क्षेत्र
मान्यता देना उस क्षेत्र की अपेक्षाकृत
र्ण और संकुचित सीमाओं को स्पष्ट
से अनुभव करने में बाधक नहीं होना
हये। जो कुछ ग्रीक मूर्तिकला ने व्यक्त
ा वह सुन्दर श्रेष्ठ और महान् था,
, जो कुछ उसने व्यक्त नहीं किया
जिसके लिये वह, अपने नियम विधान
सीमाओं के कारण, प्रयत्न करने की
शा भी नहीं कर सकती थी वह बहुत
था, संभावना की दृष्टि से अति महान
एक ऐसा आध्यात्मिक गांभीर्य एवं
तार था जिसकी मानव मन को अपने
तीर्णतर और गभीरतर आत्मानुभव के
थे आवश्यकता होती है। और ठीक यही
रतीय मूर्तिशिल्प की महानता है कि
पथर और काँसे पर उस चीज को
क्त करता है जिसकी ग्रीक सौंदर्यात्मक
कल्पना ही नहीं कर सका या जिसे प्रकट
न कर सका, और उसे वह उसकी
उचित अवस्थाओं और, स्वाभाविक पूर्णता
गहरी समझ के साथ मूर्त रूप प्रदान
करता है।

भारत का प्राचीनतर मूर्तिशिल्प उस
चीज को दृश्यमान रूप में मूर्तिमान
है जिसे उपनिषदों ने अन्तः प्रेरित
के रूप में व्यक्त किया था और महाभा
तथा रामायण ने जीवन के अंदर शब्द
के द्वारा अंकित किया था। भारत
गृह-शिल्प के समान यह मूर्तिशिल्प
आध्यात्मिक अनुभूति से उद्भूत होता
और अपने महत्तम रूप में यह जिस
का सृजन एवं अभिव्यंजन करता है
है—रूप के अन्दर विराजमान आत्मा
में स्थित अन्तरात्मा, दिव्य या मानव
में विद्यमान कोई न कोई जीवन्त
शक्ति, वैश्व एवं विराट सत्ता जो
में वैयक्तिक रूप तो धारण कर लेती
पर उस व्यक्तिभाव में खो नहीं जा
निर्व्यैक्तिक सत्ता जो व्यक्तित्व की अ
आग्रहपूर्ण क्रीड़ा को धारण नहीं करती,
के स्थायी क्षण, अपने कार्यों और रचना
में आत्मा की उपस्थिति, भावना, शक्ति
उसका शांत या शक्तिशाली आनन्द।
जहां मूर्तिकार के मन पर इसका
नहीं है वहां भी इसका संकेत मिलता
और इसीलिए भारत की वस्तुकला
भांति उसकी मूर्तिकला की कृति की
भी हमें भिन्न प्रकार का मन, दृष्टि
प्रतिक्रिया की एक भिन्न प्रकार की
लेकर आना होगा...इसमें हमें देख

लिये अपने भीतर अधिक गहरे जाना होगा फिडियस (Phidias) के ओलिम्पस पर्वत वासी ग्रीक देवता विशालीकृत और उन्नत मानव सत्ताएं ही हैं जिन्हें निर्व्यक्तिकता की एक प्रकार की दिव्य शांति या विश्व भावापन्न गुण, दिव्य लक्षण के द्वारा अत्यन्त मानवीय सीमा से रक्षित किया गया है; अन्य कृतियों में हम मानव आकृति की आदर्शीकृत सुन्दरता के रूप में वीरों, मल्ल योद्धाओं, सौंदर्य के नारी रूप अवतारों विचार, कार्य या भावावेग की शांत एवं संयत मूर्तियों को देखते हैं। भारतीय वास्तुकला के देवता वैश्व सत्ताएं हैं, किसी महान् आध्यात्मिक शक्ति, आध्यात्मिक विचार और क्रिया एवं अंतरतम चैत्य अर्थ का वाहन, इसकी आत्म-अभिव्यक्ति का बाह्य साधन है; आकृति में की प्रत्येक वस्तु को, उसके द्वारा दिये हुए प्रत्येक सुयोग को मुख, हाथ अंगों की मुद्रा, देह की संतोलता और विविध भंगिमा को तथा प्रत्येक सहायक वस्तु को आंतरिक अर्थ से अनुप्राणित करना होगा, इसे प्रकट करने में सहायक बनना होगा, संपूर्ण संकेत लयताल का निर्वाह करना होगा और दूसरी ओर ऐसी हर एक चीज को दबा देना होगा जो इस उद्देश्य को विफल करे, विशेषकर उन सब चीजों को दबा देना होगा जिनका अभिप्राय मानवीय आकृति के महज प्राणिक या भौतिक बाह्य या प्रत्यक्ष संकेतों पर ही आग्रह करना हो। इस प्रकार की रचना का उद्देश्य आदर्श भौतिक या भाव सम्बन्धी सौंदर्य नहीं बल्कि वह निरतिशय

आध्यात्मिक सौंदर्य या रहस्यार्थ है जि[illegible] मानव आकृति व्यक्त करने में समर्थ है[illegible] इसका विषय है हमारे अन्दर की दिव्य सत्[illegible] इसका विचार और रहस्य है एक ऐसा शर[illegible] जिसे अन्तरात्मा का बाह्य रूप बना दि[illegible] गया हो और इसलिये इस कला के सम्मु[illegible] उपस्थित होने पर इतना ही काफी नहीं कि हम इसपर नजर डाले और सौंदर्यात्[illegible] दृष्टि और कल्पना-शक्ति के द्वारा इस[illegible] प्रत्युत्तर दें, बल्कि हमें आकृति के अन[illegible] उस चीज की भी खोज करनी होगी [illegible] वह अपने में धारण किये हुई है और उस[illegible] द्वारा तथा उसके पीछे उस गंभीर संकेत [illegible] भी अनुसरण करना होगा जो वह अ[illegible] असीम स्वरूप के अन्दर प्रदान करती है[illegible] भारतीय मूर्ति शिल्प का धार्मिक या प्राच[illegible] परंपरागत पक्ष भारतीय ध्यान और उपास[illegible] के आध्यात्मिक अनुभवों के साथ घनिष्ठ [illegible] में संबद्ध है,—आत्मा की अनुभूति ही इस[illegible] सृजन की विधि है और आत्मा की अनुभ[illegible] ही प्रतिक्रिया करने और समझने का हम[illegible] तरीका भी अवश्य होनी चाहिये। [illegible] मानव सत्ताओं या समुदायों की आकृति[illegible] में भी इसी प्रकार की आंतरिक लक्ष्य [illegible] अंतर्दृष्टि ही मूर्तिकार के श्रम का परि[illegible]लन करती है। किसी राजा या साधु[illegible] प्रतिमा हमें किसी राजा या साधु के [illegible] की परिकल्पना प्रदान करने या किसी न[illegible]कीय कार्य का चित्रण करने या पत्थर [illegible] खुदी हुई किसी विशेष चरित्र की एक म[illegible] बनने के लिये ही अभिप्रेत नहीं है[illegible] वरंच वह किसी आत्मिक अव[illegible]

नुभूति अथवा किसी अधिक गहरे मक गुण को, उदाहरणार्थ, आराध्य के सामने संत या भक्त में होने वाले भावावेश को नहीं वरन् भक्ति और -दर्शन के भाव गदगद परानन्द के ीय आत्मिक पक्ष को साकार रूप देने लये भी अभिप्रेत होती है। भारतीय कार ने अपने पुरुषार्थ के सामने जो रखा उसका स्वरूप यही है और इसमें ने वाली उसकी सफलता के द्वारा ही, क किसी अन्य वस्तु अर्थात उसके मन लये विजातीय तथा उसकी योजना के कूल किसी गुण या किसी उद्देश्य के व के द्वारा, हमें उसके कृतित्व और र्थ के बारे में अपना मत स्थिर करना इये।

एक बार जब हम इस मानव को ार कर लेते हैं तब इसकी अवस्थाओं उस गहरी समझ के बारे में जो भारतीय र कला में विकसित का गयी तथा कौशल के संबंध में जिसके साथ इसके का सम्पादन किया गया या इसकी कृष्ट रचनाओं की पूर्ण गरिमा और षमा के विषय में जितना भी कहा जाय ी ही थोड़ा है। महान् बुद्धों को ही गांधारशैली की बुद्ध मूर्तियों को नहीं क महान् गुहा मन्दिर या देवालय की मूर्तियों या मूर्तिसमूहों को, दक्षिण बाद के काल की सर्वोत्तम काव्य मूर्तियों जिन चित्रों का मि० गांगुली की इस य की पुस्तक में एक अदभुत संग्रह काल संहार' शिव की मूर्ति एव नटराज की मूर्तियों को लो। परिकल्पना कार्यान्विति की दृष्टि से इनसे अ महान् या अधिक सुन्दर कोई भी मानवीय हाथों ने कभी नहीं बनायी एक आध्यात्मिक सौंदर्य दृष्टि का अनुस करने से इसकी महत्ता में चार चांद गये हैं। बुद्ध की प्रतिमूर्ति एक सांत प्रति में अनन्त को सफलता के साथ अ व्यक्त करती हैं, और निश्चय ही मान आकार एवं मुखमण्डल में निर्वाण असीम शांति को मूर्तिमन्त करना निकृष्ट या बर्बर प्राप्ति नहीं है। संहार शिव केवल अपने उस महातेज, श शांतिमय और सामर्थ्यशाली नियंत्रण सत्ता की उस गौरव गरिमा और राज म के कारण ही सर्वोच्च नहीं है जिसे आ की संपूर्ण भाव-भंगिमा प्रत्यक्ष रूप में मू मन्त करती है,—यह तो इसकी सफ का केवल आधा या आधे से भी कम हि हैं,—बल्कि इससे कहीं अधिक वे काल सत्ता पर आध्यात्मिक विजय के उस दिव्य आवेग के कारण परमोच्च है कलाकार आंख भृकुटि और मुख तथा प्र अंग में भर देने में सफल हुआ है जिसे उसने देवन के विग्रह के प्रत्येक के अंतर्निहित माविक नहीं वरन् आध्या संकेत के तथा अपने आशय की उस के द्वारा सूक्ष्म रूप से संपुट किया है उसने इस कृति की समग्र एकता द्वारा उडेल दी है। अथवा शिव के की वैश्व गतिविधि एवं विराट आनन्द

शेषांश १६ पर देखें

लघुकथाएं

दीपनारायण तिवारी

रूपान्तर:—संसार की प्रताड़नाओं से तप्त मानव की कोलाहल भरी दुःखित कबास से क्रुद्ध होकर और कुछ भिन्नाकर कृतिक विज्ञान ने कहा—"मेरी ओर जरा खो। मैंने कई जिज्ञासुओं के हाथों में क ऐसी कला का प्रस्फुटन कराया है जिसके पर वे शब्द-शक्ति को रूपान्तरित द्युत-शक्ति को और फिर विद्युत शक्ति रूपान्तरित शक्ति, उष्णता और शब्द गों को, परिणत करने का भेद जान के हैं।"

मानव ने आश्चर्य चकित गम्भीरता से सकी बातें सुनीं, और उसकी ओर देखा। वह भावावेश में बोल उठा—"तभी वाचा-शक्ति को रोक कर, उसे विकसित र, रूपान्तरित कर साधक अन्य शक्तियों साथ साथ अपने अन्दर ओजस्विता का फुटन करा सकता है।"

विज्ञान ने हँसते हुए उत्तर दिया—"मैं र्य में विश्वास रखता हूँ, परीक्षणों में स्था रखता हूँ, तुम भी रोना-धोना छोड़ परीक्षण कर इस कला को क्यों नहीं जमा लेते?"

मानव ने विज्ञान की इस अपूर्व मनोहर ला को अपनाने की ठान ली, प्रयत्न की शा में उसके बढ़ते कदम देखे गये, जहां ान आध्यात्म का आलिंगन करता है।

दोनों एक दूसरे के भुजपाश में आब रहा करते हैं, और हम किनारे बैठे-बै उसे साधक कह कर पुकारते हैं।

औषधि और उपदेश:—उस रु व्यक्ति को जब अचूक औषधि दी गई उसने अपना तेवर बदल लिया। भला अपने को रुग्ण क्यों और कब मानने लगा आपे से बाहर होकर उसने विशेषज्ञ निःसंकोच कह ही डाला—"क्या आप मु मरीज समझते हैं? क्या मैं रोगग्र हूँ? बीमार हूँ? आप ने इतनी तकली क्यों की? मुझे आपका आभार लेना ही न है। मैं स्वस्थ हूँ। अन्तर इतना ही कि मैं शीघ्र ही क्रोधित हो उठता हूँ।"

विशेषज्ञ से हँसी न रुकी और वह बो भी उठा—"काश! तुम्हें स्वस्थ शरीर रसास्वादन एक क्षण के लिये भी होता रुग्णावस्था से ऊपर उठ कर कभी भी तुम यह अनुभव किया होता कि स्वास्थ्य क चीज है?"

मानव, अचूक औषधि अथवा बहुमू उपदेशावलियों से ऊपर नहीं उठ सकत प्रत्युत, पूर्व में वह स्वयं इतना तो अवश्य अनु भव कर ले कि उसे आवश्यकता औषधियों की या उपदेशों की है या नहीं? उनक जिज्ञासा का मूल स्रोत कहां है?

प्रेम—फिल्मी मस्ती में झूमते हुए दिलों के अन्तराल से एक कसक उठी टीस पैदा हुई और वहां से सत्य बोल कि—"प्रेम, आत्मा के मिलन की पवित्र गुनाहट है जो अव्यक्त नैसर्गिक आनन्द ओतप्रोत रहा करता है।"

दोनों प्रेमियों ने अपना दिल थाम ा। दोनों ने एक दूसरे को सहमी सहमी दृष्टि से देखा। उनमें एक अजीब मस्ती आभास हुआ जो फिल्मी मस्ती से सर्वथा और अपूर्व था। यह व्यापार ही कुछ था, अपने में सर्वथा अभिनव। इसमें चाक्चिक्य न थी, और न इसमें कोरी कल्पना की उड़ान ही थी। दोनों नतमस्तक दृश्य कुछ अजीब सा था।

शेष पृष्ठ १४ का

व्यक्त करने में जो अद्भुत प्रतिभा और णता देखने में आती है उसके रहस्यार्थ ताल को व्यक्त करने के लिये जिस सफ- ा के साथ प्रत्येक अंग की मुद्रा प्रदर्शित गई है उसके, स्वयं गति की उल्लास- तीव्रता और स्वच्छन्दता और फिर भी ी तीव्रता की समुचित संयतता के इन सिद्धहस्त मूर्तिकारों की हृदयग्राही कल्पना में एक ही विषय के प्रत्येक अंग सूक्ष्म भेद-प्रभेद के बारे में क्या कहा गा? महान् मन्दिरों में सुरक्षित या ी के विनाश से बची हुई एक एक मूर्ति महान् परंपरागत कला को और उस परा तथा उसकी अनेक शैलियों में करने वाली प्रतिभा को, गंभीर और रीत आध्यात्मिक विचार को और प्रत्येक , रेखा एवं संघात में, हाथ और अंग में, सांकेतिक भाव-भंगी और व्यंजक ाल में उस विचार की सतत अभिव्यक्ति द्योतित करती है,—यह एक ऐसी कला जिसे इसकी अपनी भावना में समझ- ने पर, अन्य किसी कला के साथ किसी प्रकार की तुलना से डरने की जरूरत भले ही वह कला प्राचीन हो या आधु यूनानी हो या मिश्री, निकट या सुदूर का हो या पश्चिम के किसी भी सर्जन युग की। यह मूर्तिकला अनेक परिवर्त में से गुजरी; सर्वप्रथम, असाधारण ग और अति महत् शक्ति से सम्पन्न प्र नतर कला जो उसी भावना से उन्न जिसका प्रभुत्व वैदिक और वैदा ऋषियों तथा महाकवियों पर था, बाद श्रीसुषमा और आनन्दोल्लास की पुराण-कालीन प्रवृत्ति, तथा भावप्रधान दना और गति विधि का आविर्भाव, अंत में एक द्रुत और शून्यतामय परन्तु इनमें से दूसरी अवस्था में भी से अंत तक मूर्तिकला के उद्देश्य की गंभी और महानता कृति को सहारा देती संजीवित करती है और स्वयं ह्रासो प्रवृत्ति में भी इसका कुछ अंश पूर्ण गति, रिक्तता या सारहीनता से उद्धार के लिये प्रायः ही बचा रहता है।

डाक्टर, ओ डाक्टर !

प्रो० रामचरण महेन्द्र पी० एच० डी०
नयापुरा, कोटा (राजस्थान)

प्रथम दृश्य

स्थानः डाक्टर का घर। सायंकाल पांच बजे का समय। डाक्टर साहब खेलने की तैयारी कर रहे हैं। सफेद जीन की पतलून, सफेद जूता पहिन रखा है, रैकिट हाथ में है। जैसे ही वे जाने की तैयारी पूर्ण कर चुकते हैं कि द्वार से किसी की घन्टी बजती है डाक्टर साहब मरीजों के बारबार आने से बुरी तरह परेशान और थके हुए हैं। वे नहीं चाहते की कोई उनके इस मनोरंजन के समय बाधा पहुँचाए।

डाक्टर—कौन हैं? अन्दर आ जाइये।

बाहर से एक आवाज— (करुण स्वर) जी मैं हूँ एक मुसीबत का मारा। गांव से आया हूँ।

डाक्टर—आइये।

(डाक्टर साहब देखते हैं कि एक ग्रामीण फटे हाल बदहवास उनके सामने खड़ा है। दुःख से उसके नेत्रों में आंसू झलक रहे हैं। वह बात नहीं कह पा रहा है। थोड़ी देर बाद आगन्तुक कहता है—)

आगान्तुक—डाक्टर साहब, मुझे आप से बड़ा जरूरी काम है। आप शहर के सबसे मशहूर डाक्टर हैं। आपके हाथ की सब तारीफ करते हैं। जिस मरीज को आपने हाथ में लिया है, वह हमेशा पूरी तर[ह] चंगा हुआ है।

डाक्टर—आप देखते हैं, मरीजों से[...] का मेरा वक्त सुबह का है यह वक्[त] खेलने और मनोरंजन का है। मैं बा[हर टह]लने जा रहा हूं।

आगन्तुक—जी, वह तो मैं आपकी [...] और बल्ले से ही मालूम कर रहा हूँ [...] चीजें ऐसी होती हैं, जो मनुष्य के म[...] या खेलकूद से अधिक मूल्यवान हैं। [...]

डाक्टर—तुम्हें जो कहना हो ज[ल्दी कह] डालो। नुस्खा लिख दूँगा। मेरे [...] टेनिस कोर्ट पर मेरी प्रतीक्षा कर रहे [...]

आगन्तुक—मुझे नुस्खा नहीं [...] है, आपको अपने साथ ले चलना है। [...] की हालत इतनी नाजुक हैं कि बिना [...] जाये, उसका बचना संभव नहीं है। [...] राय है कि आप को ही दिखलाना च[ाहिए।]

डाक्टर—अनमने भाव से। मरी[ज कौन] है? कहां है?

आगन्तुक—मरीज मेरा एक मा[...] वर्ष का पुत्र है। ईश्वर ने इस प्रौ[ढ़ावस्था] में यही बालक मुझे दिया है, प्राणों से [प्यारा] मेरे हृदय का टुकड़ा! आकाश का [...] मेरी जिन्दगी का एक मात्र सहा[रा]

को देख देख कर हम पति पत्नी
गी बिता रहे हैं। डाक्टर साहब, तीन
से वह सख्त बीमार है। न्यूमोनिया हो
है। गांव के वैद्य, जादू टोना उतारने
जड़ी बूटी सभी कुछ कर लिया, पर
भी दवा काम न आई। भागा भागा
से आपकी शरण में आया हूँ।

डाक्टर—तो क्या गांव जाना होगा?

आगन्तुक—जी, बच्चे की हालत इतनी
क थी कि उसे लाया नहीं जा सकता
वह बेहद कमजोर हो गया है। चेहरा
पड़ गया है। उसकी मां एक क्षण भी
अलग नहीं करना चाहती। छाती से
पड़ी है। डाक्टर साहब, उसकी मां
बच्चे को जी जान से अधिक प्रेम करती
वह उसके जीवन का एक मात्र सहारा
गिरते जीवन की लकड़ी है। आत्मा
स्वर है…डाक्टर साहब, हम दोनों पर
कीजिए, बच्चे को बचा लीजिए…
ष बाहर से कठोर हुआ करते हैं, पर
र से वे कोमल होते हैं आप मेरे साथ
चलिये—बच्चे की चिकित्सा कीजिए।
की प्रतिभा के यश से वह अवश्य पूर्ण
होगा और जीवन की रोशनी देखेगा…
ने क्यों तय किया?

डाक्टर—जानते हो तुम कितने बड़े डाक्ट-
बातें कर रहे हो? मेरी बाहर जाने
फीस ही इतनी अधिक है कि तुम नहीं
सकोगे…मामूली हैसियत का आदमी मुझे
घर ले जा कर मरीज को दिखाने की
त ही नहीं कर सकता। तुम क्या सोच
इतने बड़े डाक्टर के पास चले आये?

आगन्तुक—डाक्टर साहब, इन्सानि
जिन्दाबाद! आदमी चाहे कितना ही
और ऊँचा क्यों न उठ जाय, उसमें
नियत जरूर जोर मारती है। मानता हूँ
बहुत ऊँचे डाक्टर हैं, आपको हर
मरीज पर बड़ी फीस मिलती है, बड़ी
डिगरियां आपके नाम की शोभा बढ़ा
हैं, मामूली आदमी की औकात नहीं
आपके दरवाजे तक आ सके, लेकिन इ
नियत भी बड़ी चीज है। दुःखी
पीड़ित, लांछित गरीब गांव की जन
पास आपकी इन्सानियत के द्वार को
टाने के अलावा और क्या रास्ता है! ड
साहब, जो ग्रामीण जनता दाने दाने
मुहताज है, जिसका कण कण युगों
गरीबी में पिस चुका है, जिन मानवों
पसीने की कमाई अमीरों के विलास
समुद्र में डूब गई है, जिनके शरीर में
के अलावा मांस का नाम तक नहीं है
जिन्हें दो वक्त पूरा सा भोजन भी
मिलता, वे दीन और दलित ग्रामीण आ
स्नेहमयी इन्सानियत का ही तकाजा
सकते हैं। उसी को मैं अपनी कारुणिक
अर्पित कर रहा हूँ!

डाक्टर—मेरी फीस सौ रुपये
बोलो. है तुम्हारे पास!

आगन्तुक—(अर्द्ध विक्षिप्त अवस्था
सौ रुपये, डाक्टर साहब, बच्चे की चि
में सब कुछ लगा चुका हूँ। घरवा
गहने तक बिक चुके हैं… बरतनों में
बिकने वाले थे, साहूकार के यहां
रख चुका हूँ…लेकिन डाक्टर बाबू
पुत्र को अच्छा हो जाने दो, लाख
सहना पड़े, कितनी ही कड़ी मेहनत

न करनी पड़े···आपका यह कर्ज मजदूरी कर के जरूर उतारूँगा···आपका सदा ऋणी बना रहूँगा···आपकी सदा सेवा करूंगा... उम्र भर भी मेहनत करनी पड़े तो भी बच्चे की जान बचाने के लिये मंजूर है। आप चलिये तो। बच्चा मर रहा है। देर होगी, तो वह बिना दवाई के मर जायगा। डाक्टर ··डाक्टर क्या सोच रहे हो? अब सोचने का समय नहीं है। जल्दी करो... जल्दी करो।

डाक्टर—(हतप्रभ है। कुछ भी निर्णय नहीं कर पाता) जानते हो, मेरे भी पेट है, परिवार है, बाल बच्चे हैं, पत्नी है। यदि जीविका उपार्जन न करूं, तो यह घर कैसे चले? तुम्हें मेरी फीस का प्रबन्ध पहले करना होगा। तभी गांव में चल सकता हूं।

आगन्तुक—भगवान भी भक्त की कारुणिक पुकार पर दौड़ पड़ते हैं। मेरे लिये आप भगवान् की तरह हैं। आप चलिए तो किसी तरह गांव में पहुँचने पर फीस का प्रबन्ध भी करूंगा···डाक्टर क्या विकल मानवता की घोर चीत्कार तुम्हारे पाषाण हृदय को नहीं पिघलाती! क्या मेरी दारुण हाहाकार तुम्हें नहीं झकझोर रही है। डाक्टर हम गरीबों का सिसक और रोदन से बड़े बड़े सम्राटों के सिंहासन उलट जाते हैं, पूँजीवादी तन्त्र छिन्न भिन्न हो जाते हैं, दलितों की इस दुनिया से महा संहार कारिणी कालकूट की धाराएँ निकलती हैं... दीनों दुखियों और पूंजीवादी तन्त्र से पिसे हुए मनुष्यों के हाहाकार को शान्त करने के लिए महाकाली की अवतारणा है···विकल मानवता की करुण चीत्कार पत्थर-हृदय पूंजीवाद को नहीं पिघला सक[ती] तो इन हड्डो के ढांचों से महाक्रान्ति [के] स्वर फूकते हैं। डाक्टर साहब, नि[रीह] बच्चे की जीवन ज्योति आप के हाथ [में] है···जल्दी कीजिए। मेरे साथ चलिये

डाक्टर -- नहीं, बिना फीस के मैं न [जा] सकूंगा। आप जाइये।

आगन्तुक—(निराश हो कर] चांद[ी के] टुकड़ों से टकरा कर बच्चे का जीवन स[माप्]त हो गया। जीवन की डोर चांदी [की] कैंची ने काट डाली···विकल मानव का चीत्कार पाषाण हृदय को न पिघला सक[ा] मानवता हार गई .. उफ् डाक्टर, ओ डा[क्टर] मेरी आशा की किरणें बुझ गई···जी[वन] की आखरी डोर भी टूट गई...जब म[नुष्य] की इन्सानियत समाप्त हो जाती है, मा[न]वीय सहानुभूति, करुणा, दया, सेवा, [त्]याग और परोपकार की सड़कें टूट जा[ती] हैं, मानवीय रिश्ते विकल हो जाते [हैं] दानवता का पूंजीवादी व्यवहार बढ़ जा[ता] है, तो दुनिया की सुख शान्ति और उन्न[ति] सभी खतरे में पड़ जाते हैं . हाय, [मैं] क्या करूं...[गिर कर बेहोश [हो] जाता है।]

दूसरा दृश्य

काल: प्रथम दृश्य से छै महीने बा[द]

स्थानः एक गांव के पास नदी के कि[नारे] पिकनिक पार्टी का दृश्य

डाक्टर साहब, अपने बच्चे और प[त्नी] तथा इष्ट मित्रों सहित पिकनिक प[र]

का आनन्द ले रहे हैं। आनन्द की फुहारें बिखर रही हैं। मित्र हँसी ठठा कर रहे हैं कि इतने में एक ओर भगदड़ मच जाती है। आवाजें—"सांप ने काट लिया! डाक्टर साहब के बच्चे को सांप ने काट लिया।" आती हैं।

डाक्टर—साँप ने काट लिया? दौड़ो दौड़ो, कैसा सांप था?

[सब दौड़ते हैं। मंच पर बेहोश बच्चा लाया जाता है। उसके पांव में सांप ने काट लिया है रक्त बह रहा है। सब घबड़ाये हुए हैं। डाक्टर और उनकी पत्नी के तो होश हवाश गुम हैं। [

डाक्टर—हे राम, शहर से दूर! कहां के कहां हम आ गए। पिकनिक में किसे मालूम था कि सांप काट लेगा।

पत्नी—हाय, मेरा बालक! कैसा तेज दांत लगा है। खून बह रहा है। बच्चा बेहोश हो गया। उसके मुख से झाग निकल रहे हैं।

एक मित्र—दबा कर जहर निकाल दीजिए

दूसरा मित्र—डाक्टर साहब तो परेशान हैं। लाओ मैं दबा कर खून निकालता हूँ। (बच्चे के पास आता है और उपचार करता है। पास खड़ा एक ग्रामीण सांप काटे बच्चे को देख कर)

ग्रामीण—हजूर, एक बात अर्ज करूं?

डाक्टर—कहो, क्या कहते हो?

ग्रामीण—हजूर, हमारे गांव में एक सपेरा है। वह वर्षों से सांप का जहर उतारने का काम करता है। बहुत से सांप काटे आदमियों को उसने स्वस्थ किया है का विशेषज्ञ है। हजूर, आज्ञा दें बुलाया जाय।

सब लोग—हां, हां, जल्दी करो, के पास अनेक जड़ी बूटियां होंगी अवश्य बच्चे के प्राणों की रक्षा कर हैं।

डाक्टर—अच्छा, फौरन सपेरे से बुलाओ! (नौकर से) तुम चले जाओ लौटते हाथ सपेरा को लाओ।

(नौकर जाता है)

पत्नी—उफ्! बच्चे की अवस्था खतरनाक होती जा रही है।

डाक्टर—इस जंगल में दवाइयां कशन कुछ भी तो नहीं है क्या कैसी बेवसी है। हाय, मेरे ब क्या होगा। चारों ओर अंधेरा है दीखता है। नाशकारी ज्वालाएं आ रही हैं। हाय, मनुष्य की भी कितनी घातक होती है। (इतने में हो ग्रामीण के साथ एक आता है। उसे देखकर) यह लो आ गया।

पत्नी—अब तो इस गांव में मात्र सहारा है। ईश्वर करे इसी के हमारे पुत्र की प्राण रक्षा हो जाय।

(यह संपेरा वही है जिसको पूर्व एक दिन डाक्टर ने अपने तिरस्कृत किया था। सपेरा भी डा देखकर पहचान लेता है।)

डाक्टर—आप ही सांप का जहर उतारने का कार्य करते हैं ?

संपेरा—(बच्चे को देखता है। फिर डाक्टर को देख कर उसे पूर्व घटना की स्मृति हो आती है।) एक दिन ऐसी ही मेरी भी हालत थी। मेरा भी बच्चा मृत्यु शय्या पर मरणासन्न पड़ा हुआ था। उसमें कुछ ही जीवन की सांसें रह गई थीं। मैं चिकित्सा के लिये भागा भागा शहर के एक प्रसिद्ध डाक्टर के यहां गया। मैंने उससे हजारों मिन्नतें खुशामदें कीं · लेकिन ·· हाय री मेरी गरीबी ! मैं उसकी ऊंची फीस न दे सका . नतीजा वही हुआ जो इस गरीब देश के गांवों में रोजाना होता है। चिकित्सा के बिना मेरा फूल सा नन्हा बचा मरघट की जलती आग पर सो गया लाल लपेटें उसे निगल गईं ! कैसा भयानक था वह दिन ! (उन्मत्त सा हो आकाश की ओर देख कर)

ठहर बेटा, स्वर्ग में तुझे एक साथी का अभाव खलता होगा। तू अकेला होगा तुझे खेलने के लिए एक साथी चाहिए एक अमीर आदमी का बच्चा चाहिए मैं तेरे पास भेजता हूँ। वह अभी तुझ तक पहुँचता है। अब तुझे खेलने वाले साथी की कमी न रहेगी। डाक्टर का पुत्र अभी तुझ तक पहुँचता है·:·

डाक्टर - कृपा कर बच्चे को देखिये। कमजोर होता जा रहा है। नब्ज कम-जोर हो चली है।

पत्नी—हां भाई संपेरे, जरा जल्दी करो। सांप का विष उतारने की जड़ी लगाओ। बच्चे को नया जीवन दो। विष दूर करो। बड़ी कृपा होगी।

संपेरा—(पूर्व स्मृति में खोया हु मेरे पास चांदी के वे टुकड़े नहीं थे, पर आज मानवता बिकती है। मैं डा की फीस नहीं दे सकता था। मैंने को बचाने के लिए उम्र भर डाक्टर सेवा चाकरी करने का वचन दिया, वह पाषाण हृदय न माना, उसकी अ न जागी। मेरी उमीदें सो गईं·· मेरा मर गया – मेरा संसार सूना हो गया हाय !

डाक्टर—आप यह कैसी बहकी बा बातें कर रहे हैं।

पत्नी—आप सांप का जहर उतारने लिए मशहूर हैं। कृपा कर मेरे लाल जहर उतार कर नये प्राण दीजिए। अ बातें न कीजिए।

संपेरा—यदि एक दूसरे के साथ अन्य करता है, तो यह क्या जरूरी है कि दू भी उसके साथ वैसा ही दुर्व्यवहार क बाप की कठोरता का प्रतिशोध मैं बच्चे क्यों लूं ! यह इस अबोध बच्चे के प्र महा-अन्याय होगा ! मैं इस बालक को न जीवन दे सकता हूँ··· मेरे साथ कैसा बर्ताव रहा हो, मैं अपनी इन्सानियत तकाजे को पूरा करूंगा। इस बच्चे प्राण रक्षा करूँगा —अपने मुंह से सांप विष चूस लूँगा, फिर चाहे मैं बचूं या

पृष्ठ २७ पर देखें

शिक्षा का लक्ष्य

माधव जाउलकर,
दक्षिण तात्याटोपे नगर, भोपाल

नैतिक उद्देश्य

शिक्षा शास्त्री हर्बर्ट ने शिक्षा के उद्देश्य का प्रतिपादन किया है। का यह उद्देश्य है कि वह हमारे को उन्नत बनावे। अरस्तू के मता- मनुष्य मात्र में दो प्रकार की प्रवृ- पाई जाती है:—एक तामसिक व वृत्त तथा दूसरी बौद्धिक व सात्विक। का उद्देश्य सात्विक प्रवृत्तियों को सिक प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त कराना उल्लेखनीय है कि नैतिकता समाजि- के साथ जुड़ी होती है। नैतिकता म ही सामाजिक व्यवहारों से होता प्रसिद्ध शिक्षा विशारद श्री हार्न के र किसी भी नैतिक कार्य का प्राण सामाजिक विकास है। इसी लिए जाता है कि शिक्षा के सामाजिक में नैतिक उद्देश्य भी सन्निहित है। इस प्रकार नैतिकता या नैतिक शिक्षा का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है। और यों नैतिकता की परिभाषा उस र से दी जा सकती है कि वह मान- चरित्र को, जैसा कि वह स्वयं को अथवा दोषयुक्त रूप में व्यक्त करता है, विज्ञान है। (१) नैतिकता का उद्दे मनुष्य में वह शक्ति जागृत कर देना जिससे उसकी सद्विवेक बुद्धि कुशलता प्रावीण्य प्राप्त कर सके। नैतिकता मनु मात्र में पाप और पुण्य, सत्य और अस तथा अच्छे व बुरे में विभेद कर सकने क्षमता जगाती है। नैतिकता का उद्दे मनुष्य की विवेक शक्ति को जागृत कर है, जो कि मनुष्य को पाप कर्म से परा करती है। नैतिकता शिक्षा का महत्व है। शिक्षा शास्त्री जान डिवी ने कहा है कि यदि नैतिकता का स्तर नी है तो यह इसलिए है कि व्यक्ति को स जिक परिस्थितियों व परिवार्श्व में दी शिक्षा दोषपूर्ण है।

नैतिकता के सामान्य अर्थों में सं विवेक, इन्द्रिय निग्रह, सच्चाई, अहिं अक्रोध इत्यादि सदगुणों का समावेश होर है। श्री मद्‌भगवतगीता में निम्न सदगुणों का उल्लेख किया गया है

अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोग व्यवस्थि
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्याय
आर्जवम् ॥१॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शांतिरपैशु

दयाभूतेषुलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचाप-
लम् ॥२॥
तेजः क्षमा धृतिर्शौचमिद्रोहो जानि-
मानिता ।
भवन्ति • सम्पदं देवीमभिजातस्य भार
॥३॥

नैतिकता का उद्देश्य इन्हीं गुणों को
विकसित करना है ताकि विद्यार्थी अच्छाई
बुराई में विभेद कर सकें। अरस्तू ने
है कि शिक्षा का उद्देश्य यह है कि
हम में, जिन वस्तुओं को वस्तुतः
स प्रकार से पसन्द या नापसन्द करना
हिए, उसे हम उसी प्रकार पसन्द या
पसन्द करेंगे इसकी योग्यता निर्माण करें।
शिक्षा के महत्वपूर्ण लक्ष्य व्यक्तित्व
निर्माण और चरित्र गठन की विवेचना
रने के पूर्व यह आवश्यक है, कि हम
व्यक्तित्व और चरित्र इन दोनों शब्दों
वास्तविक अर्थ समझ सकें, इनका परि-
भाषिक अर्थ जान लें। वस्तुतः व्यक्तित्व
अधिक विस्तृत पारिभाषिक शब्द है और
चरित्र उसके अन्तर्गत ही समाविष्ट हो
जाता है। साथ ही व्यक्तित्व को शिक्षा
सम्बन्ध में तो कम चर्चा की जाती है
और चरित्र की शिक्षा से सम्बन्ध में अपे
क्षया अधिक। योगडन के शब्दों में
व्यक्तित्व मनुष्य के आन्तरिक जीवन की
अभिव्यक्ति है, जबकि चरित्र केवल उसकी
क्रियाओं या सफलताओं की अभिव्यक्ति

मैकडूगल के अनुसार व्यक्तित्व घनि-
पारस्परिक क्रीड़ा में विद्यमान सब प्रमुख
लक्षणों और क्रियाओं की समन्वय पूर्ण
एकता है और चरित्र हमारे अन्दर विद्यमान
एक ऐसा संगठन है, जो अपने आपको
संकल्पों (वोलिशन) में, उच्च कोटि की
क्रियाओं [एक्शन] में और क्रियाओं के
संयम में अभिव्यक्त करता है।

शिक्षा का लक्ष्य, जैसा कि हम पहले
कह आए हैं, व्यक्तित्व तथा चरित्र दोनों
का विकास करना है। महात्मा गांधी ने
एक बार कहा था कि पाठशालाएं तथा
महाविद्यालय चरित्र निर्माण के कारखाने
हैं। माता-पिता अपने बच्चों तथा
बच्चियों को उनमें इसलिये भेजते हैं
ताकि वे अच्छे पुरुष एवं स्त्रियां बन सकें।
माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अपने प्रतिवे-
दन में स्पष्ट उल्लेख किया है कि शैक्ष-
णिक प्रक्रिया का सर्वोच्च अन्तिम लक्ष्य
विद्यार्थियों के चरित्र तथा उनके व्यक्ति-
त्व के निर्माण का होना चाहिए और
भी इस प्रकार से होना चाहिए कि
अपनी शक्तियों को पूर्णतः जान सके त
समुदाय के कल्याण में योगदान दे सकें।
शिक्षा का कार्य व्यक्ति की सृजनात्म
शक्तियों को जागृत करना है, उस
कल्पनाशक्ति को समृद्ध करना है, संवेद
को जगाना है तथा सौंदर्य-बोध और
भावानुभूति को प्रगाढ़ता प्रदान करना
ताकि व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व
विकास हो सके। साथ ही शिक्षा
उद्देश्य व्यक्ति का चारित्रिक विकास
करना है, ताकि वह समुदाय और सम
के प्रति अपना उत्तरदायित्व समझे अ

सदाचारपूर्ण एवं शील समन्वित जीवन यापन कर समाज के गौरव और प्रतिष्ठा को रक्षा कर सके। विद्यार्थी के मानसिक, चारित्रिक और आध्यात्मिक गठन का महत्व और मूल्य केवल उसके लिए ही नहीं वरन् समस्त समाज एवं देश के लिए उपयोगी होता है।

व्यापक धार्मिकता—जब हम कहते हैं कि शिक्षा का एक प्रमुख लक्ष्य व्यक्ति में व्यापक धार्मिकता के बीज बोना भी है, तो बहुत संभव है कि अनेक विचारक एवं शिक्षा-शास्त्री संभवतः इस मत से सहमत न हो सकें। किन्तु धार्मिकता से हमारा तात्पर्य किसी पोंगे पंथ, कट्टरता अथवा विवादी धार्मिक अन्धविश्वासों से न होकर एक व्यापक धर्मप्राणता की सहज अनुभूति समस्त धर्मों के सार के एक व्यापक रूप से है। धर्म आत्मा को ऊंचा उठाता उदात्तता प्रदान करता है, प्राणों का बल बनता है और व्यक्ति को उस परम आत्मा के अलौकिक सौंदर्य का रसास्वादन कराता है। साथ ही धर्म सत् पथ पर निरन्तर अग्रसर करता है। श्री हुमायूं कबीर के मतानुसार विद्यार्थियों को धर्म के मुक्ति दायी प्रभाव से अलग न रखा जावे। यदि धर्म को रूढ़ियों और कर्मकाण्डों से मुक्त कर दिया जावे तो वह मानवता के उन महान आदर्शों को व्यक्त करता है, जो संसार के मनुष्यों के लिए एक संहिता के समान है। जब तक विद्यार्थियों का मानवता के महान आदर्शों से सम्पर्क नहीं होता उनका जीवन दरिद्र और अनर्थक रहेगा"

बात यह है कि धर्म और नैतिकता का निकट का सम्बन्ध है। इन्स, आकम, डैसकर्टेस, लाक तथा पालेय विद्वानों का मत है कि धर्म नैतिकता का जन्म स्थान है। कुछ लोगों का विश्वास है कि चूंकि भारत धर्म निरपेक्ष है अतः भारत में शिक्षा का लक्ष्य धार्मिकता के प्रसार का नहीं हो सकता किन्तु यह विचार भ्रामक है। यद्यपि संविधान के अनुच्छेद २५, २७ और धार्मिक शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्त दिए हैं, किन्तु संविधान पारित होते संविधान सभा की कार्रवाई एवं उस बहस से यह निष्कर्ष सहज ही निकाला जा सकता है, कि राज्य द्वारा चलाए जाने वाले विद्यालयों में भी धार्मिक शिक्षा दी जा सकती है, बशर्ते कि सामान्य संदर्भ के अन्तर्गत उसका अध्ययन-अध्यापन कराया जावे। उल्लेखनीय है कि अपने एवं व्यापक स्वरूप में धार्मिक शिक्षा की महत्ता का आकलन करते हुए विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने अपने प्रतिवेदन में किया है कि धार्मिक समस्या हमारे विद्यालयों के लिए चुनौती है। यह कर्तव्य है कि वे उन तत्वों जो कि गौरव को स्खलित करते हैं—में करें। यह उनका कर्तव्य है कि वे संकुचित तथा असहनशील साम्प्रदायिकता में आलोचना के राष्ट्रीय तरीकों का उपयोग तथा इस प्रकार धर्मोन्मत्त लोगों को विनों में परिणत करें।

नेतृत्व का विकास –We need men who can turn a group of specialists into a working team and who can combine imagination and practicability into a sound public programme. Men trained for this kind of administrative and political leadership are rare indeed"

—President Truman

नेतृत्व का विकास शिक्षा का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है। यह आवश्यक है कि शिक्षा इस प्रकार के पुरुष एवं स्त्रियों का निर्माण कर सकने में सक्षम हो, जिनमें नेतृत्व करने की क्षमता हो-नेतृत्व के गुणों का पूर्ण विकास हुआ हो, क्योंकि समाज के महान कार्यों को, प्रजातन्त्र के आदर्शों को वह राष्ट्र के विकास को नेतृत्व-गुणों से युक्त मनुष्य ही परिपूर्ण कर सकते हैं। कालान्तर में ऐसे ही व्यक्ति राष्ट्र के कर्णधार होते हैं तथा देश की नैया को दक्षता के साथ आपद् कठिनाइयों के थपेड़ों से बचाते हुए साहस के साथ अपने उद्दिष्ट तक ले जाने में सफल होते हैं। प्रजातांत्रिक ढंग से विकेन्द्रीकरण की ओर अग्रसर होनेवाली समाजवादी प्रणाली में समाज के समस्त महत् कार्य जनता द्वारा ही पूर्ण किए जाते हैं—जिसमें संगठन और एकता की आवश्यकता रहती है तथा नेतृत्व गुण से युक्त व्यक्ति इसका कुशल सम्पादन कर सकते हैं। माध्यमिक एवं विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग दोनों ने नेतृत्व विकास शिक्षा का एक महत्वपूर्ण ... एवं लक्ष्य माना है। विश्वविद्यालय शि... आयोग ने तो नेतृत्व विकास को वि... विद्यालयीन शिक्षा के केन्द्रीय लक्ष्यों ... एक माना है। यथा :—Traini... for leadership in professi... and in public life is ... of the central aims of u... versity education; wh... it is dififieult to realise.

अनुशासन—आजकल लोग ... विद्यार्थियों में अनुशासन हीनता के ... पर टीका टिप्पणियां करते देखे जाते ... अनुशासन शिक्षा का एक महत्वपूर्ण ... है किन्तु अनुशासन कोई ऐसा पाठ ... है जिसे किसी घंटे में कक्षा में पढ़... जावे वरन् यह शालेय जी... पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य गतिविधि... गुरु-शिष्य संबन्ध, मानसिक विकास आ... बातों के सम्मिलित सामूहिक परिण... द्वारा उद्भूत एक विशिष्ट व्यवहार ... उत्तरदायित्व के भार से अनुशासन में ... होती है। अनुशासन स्वतंत्र चुनाव को स्वे... पूर्ण विषय रहना चाहिए और स्वतंत्रता ... महत्व इस संभावना से और बढ़ जाना चाहि... कि वह अनुशासन पूर्ण है। स्वतंत्रता ... अनुशासन के दो सिद्धान्त एक दूसरे ... विरोधी नहीं है, किन्तु बच्चे के जी... के साथ उनका मेल इस तरह बिठाया जा... चाहिए कि वे विकसित होते हुए व्यक्ति... की दो स्वाभाविक गतियां ही जान प...

अनुशासन निर्माण शिक्षा का एक
त्वपूर्ण ल.्य है एवं इसके लिये यह
वश्यक है कि विद्यार्थियों में पहले करने
प्रेरणा जगाई जावे, उन्हें उत्तरदायित्व
कार्य सौंपे जावें एवं उनसे पूर्ण कराए
तथा उनकी अभिव्यक्ति एवं सृजना-
वृत्तियों को उन्मुक्त किया जावे।
यमिक शिक्षा आयोग ने प्रतिवेदन में
खा है कि "The discipline
nnot ' however be devel
ed in a vaccum; it is the
uit the valuable by-pro-
uct of co-operative work,
llingly undertaken and
ficiently completed"

राष्ट्रीय दृष्टिकोण—शिक्षा का एक
त्वपूर्ण लक्ष्य है विद्यार्थियों में राष्ट्रीय
कोण का निर्माण कराना, राष्ट्रीयता को
वना से उन्हें ओतप्रोत करना, सामाजिक
व्यों के प्रति उनमें जागरूकता निर्माण
ना तथा देश के प्रति निस्सीम प्रेम
भावना उनमें प्रज्जवलित करना। शिक्षा
यह भी लक्ष्य है कि वह विद्यार्थियों
इस योग्य बना ले कि वे देश के आर्थिक
तों व प्राकृतिक संसाधनों का समुचित
पयोजन कर सकें, जनशक्ति की सहायता
उनका सुम्यक, विदोहन कर सकें एवं
को त्वरित शीघ्रता से नवनिर्माण के
पर अग्रसर करें, देश का अभ्युदय एवं
युत्थान करें। देश की शिक्षा का लक्ष्य
की सामाजिक व्यवस्था के अनुकूल
ा चाहिए ताकि विद्यार्थी उस समाजिक
व्यवस्था को दृढ़तर बनाने में प्रयत्न
रहें। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने
प्रतिवेदन में लिखा है कि "O
educational system must f
its guiding principle in
aims of the social order
which it prepares, in
nature of the civilisation
hopes to build."

सभ्यता और संस्कृति —"T
role of education is to fos
civilisation and culture
sed on a spiritual concept
of life by making the in
vidual the inheritor of
wisdom and experience
all ages and all peoples

—HUMAYU KABIR

सभ्यता और संस्कृति से परिचय
कराना, उनको धरोहर रूप में आत्म
करना तथा उनका विकास करने हेतु वि
र्थियों को सक्षम बनाना भी शिक्षा
एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है।

इस लक्ष्य के माध्यम से शिक्षा
कृतिक एकता के लिए कारणीभूत
है। राष्ट्र मुख्यतः व्यापारियों और
नीतिज्ञों द्वारा ही नहीं बनाए जाते
उसका निर्माण होता है कलाकारों
विचारकों तथा साधुओं और दार्श
द्वारा और शिक्षा का लक्ष्य है इस
से बने राष्ट्रों की सभ्यता और सांस
एकता सुरक्षित रखना।

समन्वय-सम्पूर्ण विकास— लगभग सभी शिक्षा-शास्त्रियों एवं विचारकों-भले ही वे पूर्व के हों या पश्चिम के—को यह मत मान्य है कि शिक्षा का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है समन्वय। ज्ञान-विज्ञान की विविध शाखा प्रशाखाओं का, और व्यक्तित्व का पूर्ण विकास, समूचे व्यक्तित्व का निर्माण जो पूरा हो, परिपूर्ण हो, सम्पूर्ण हो, जिसके खण्ड न हों, टुकड़े न हों। शिक्षा का लक्ष्य जीवन का एक समन्वित रूप प्रस्तुत करना है, एक परिपूर्णता का बोध कराना है। जीवन को जीने योग्य बनाने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को शक्ति प्रदान करे तथा उसे प्रकृति, समाज और आदर्श मूल्यों के समन्वित विचारों से सुसज्जित करें। शिक्षा का लक्ष्य सम्पूर्ण मानव के निर्माण का होता है। कार्ल मार्क्स यह कथन द्रष्टव्य है कि The education of the future will in the case of ev child over a certain age, nfine productive labour w education (unterricht) a atheletics (gymnastik) not n rety as one of the metho of raising social producti but as the only method producing fully develop human beings"

"Education is a dev for helping a man to gr to his full stature. It enab him to realize his native bo mentally and spiritua and is that realiation become all that he has it him to be."

—C E.M. JOAD.

पृष्ठ २१ का शेषांश

च्। (डाक्टर से) डाक्टर, ओ डाक्टर मैं अपनी इन्सानियत की आवाज को नहीं दबा सकता—मैं इस फूल से बच्चे को जीवन दान दूंगा

[बच्चे के समीप बैठ कर विष चूसता है। सर्प का विष बड़ा उग्र है। इसका प्रभाव सपेरे पर पड़ता है। वह मूर्छित हो कर गिर पड़ता है। बच्चा स्वस्थ हो जाता है।)

डाक्टर—इन्सानियत अब भी जीवित है। जीवन के इस उपवन में विनाश, संघर्ष और निराश के तत्व बिखरे हुए हैं, आज मुझे यह मालूम हुआ कि वह इन्सानियत की आशाओं की सौरभ से रिक्त है। सुख-दुःख की भावानुभूति अमीर ग सभी में होती है, फिर भी न जाने वह अपने संकुचित स्वार्थ में दूसरों के दुः की उपेक्षा कर देता है। हाय मैंने गरीब संपेरे के साथ कैसा दुर्व्यवहार किय ईश्वर न जाने मेरे स्वार्थ की क्या देगा। उफ्!

(पर्दा गिरता है)

जिन्दगी के बाजार में

ईश्वर सिंह 'सलिल'
रविशंकर शुक्ल मार्ग, गुना (म० प्र०)

जिन्दगी के इस खुले बाजार में
साख अब उठने लगी इन्सान की,

आजकल व्यापार ऐसा चल रहा, बाल की कीमत कहीं मिलती नहीं,
सूद का ईमान पूजा जा रहा, मूल पूँजी तो कहीं दिखती नहीं,
बेजुबां सोना कहीं बन्दी हुआ, औ भुजाओं में कसी चांदी कहीं,
आज नकली निकल की आवाज है। औ सचाई की शिखा जलती नहीं,

रूप के इस अधजले संचार में
बोलियां चढ़ने लगी शैतान की।

लेखनी जो साधना की ज्योति थी, रक्त देकर तिमिर में चलती रही,
बिजलियां तूफान तम के भाल पर बन प्रतीची सी सदा जलती रही;
आज उसने चार पैसों की भरे रोशनाई में डूबो मन को दिया
औ, खड़ी वेश्या बनी बाजार में जो तपस्विनि सी सदा जलती रही।

बेसहारा आदमी की चाह को
कल्पना छलने लगी वरदान को।

रेशमी रंगीन नव परिधान में, रूपसा निज रूप को सजने लगीं,
हर नजर की बेवफाई आंख पर बिन विचारे हो विवश चढ़ने लगीं,
छातियों में दूध मां के है नहीं, और बहिनें हैं मगर राखो नहीं
नव दुल्हन को प्यार अब छलने लगा और सांसें चाक सी चलने लगीं।

नव किशोरों के भरे खलिहान में
होलियां जलने लगीं अरमान की।

गगन

प्रो० श्री गौरीशंकर मिश्र 'द्विजेन्द्र', एम० ए०

दिव्य, सर्वोन्नत, विशादाकार !
उतर आओ, ओ गगन उदार !!
अये नभ सीमाहीन, महान !
सूर्य, शशि, ग्रह के वासस्थान !
सृष्टि-नायक के श्रेष्ठ प्रदान !
इन्द्र धनु के हे जनक उदार !
सकल संसृति-सौन्दर्यागार !
सृष्टि-रचना- चातुर्य विशेष !
सतत धर कर नव नव निज वेश
कहां जाते तुम कौन प्रदेश ?
गगन ! किसके सँग यह अभिसार ?
सघन छाया-पथ को कर पार !
श्याम, लोहित, धूमिल, सित, पीत
पहन कर छविमय वस्त्र पुनीत
निरखते हो निशि-बासर मीत !
कौन-सी अज्ञाता की राह
लिये अन्तर में नीरव चाह ?
चलेगा कब तक यह अभिसार ?
उतर आओ, ओ गगन उदार !
जगत में पाकर उच्च-स्थान
गगन ! मन में इतनो अभिमान ?
कभी आता क्या मेरा ध्यान ?
कि रहता कितना व्यग्र, उदास
तुम्हें छूने के हित आकाश !
गगन ! जब मैं था भोला बाल,
निकट थे तुम, मैं सोच निहाल—

कभी छूऊँगा तुम्हें, विशाल—
किसी पादप पर हो आरूढ़ !
बना पर मैं अब क्या न विमूढ़ ?
अचानक क्यों तुम मुझको छोड़
प्रणय का दृढ़तर नाता तोड़
अपरिचित से भागे मुंह मोड़
किसी रहस्य-मण्डल को दूर
गगन ! मेरे हिय को कर चूर !
सहूँ कब तक यंत्रणा अपार ?
उतर आओ ओ गगन उदार !
सती-विरहाकुल शंभु-समान
किसी दुस्सह दुख में हो म्लान
लगा समाधि क्या करते ध्यान
जगत के कोलाहल से दूर
भक्ति में हृदय दिये भरपूर ?
किंतु, देखो, अब पलक उघार
जगत में होता क्या व्यापार !
मचा है भीषण हाहाकार
जगत के जीवों में इस काल !
भ्रमित, मोहित, शोकित, बेहाल !
लिये अपना सब तेज अखण्ड
करों से पावक-ज्वाल प्रचण्ड
छींटता वसुधा पर मार्तण्ड
प्रणय की स्वाप्नमयी सुख-रात
मिटा देता क्षण में ला प्रात !
सहे जग कब तक अत्याचार ?
उतर आओ, ओ गगन उदार !
निशाकर का धारण कर नाम
कहां करता विधु अपना काम ?
बिता कर आता है बहु याम,
कभी चल देता रह कुछ काल,

भटकता तम में विश्व विशाल !

सुधाकर यह विधु ! किंतु अशेष
वियोगी पाते इस से क्लेश;
देख उनके दुख विखरे केश
खिलखिलाते तारे मतिमन्द
रहेंगे क्या ये यों स्वच्छन्द ?

कभी ये घन—पर्जन्य उदार—
गिरा कर सलिल मूसलाधार
बहाते कितने पुर, गृह द्वार,
कभी तरसाते चातक-प्राण
एक जल-कण-हित कृपण-समान !

करोगे इसका क्या न विचार ?
उतर आओ, ओ गगन उदार !

गरल पी नीलकंठ भगवान,
नीलतन तुम क्या कर दुख पान ?
जगत को तज फिर क्यों यह ध्यान ?
कौन सा जीवन प्रश्न अपार ?
कर रहे जिस पर गूढ़ विचार !

शैल उठ कर जग ताप अपार,
विहग भर स्वर में अत्याचार,
वात 'हू-हू' में हाहाकार,
सुनाने तुमको जाते पास,
किंतु, होते सब विफल प्रयास !

पहुँच पायें क्यों ये सब पास ?
किया जब दूर—दूर अधिवास !
कौन कन्दर्प आज आकाश !
करेगा भंग तपस्या घोर,
कहीं जिसका है ओर न छोर !

छिपा क्यों इसमें जगदुपकार ?
उतर आओ, ओ गगन उदार !

अरे, क्यों सजती भू शृंगार ?
उमड़ता क्यों उर-पारावार ?

बिखरते हृत्तंत्री के तार ?
कहो, यह किस मायिक का खेल
रहा क्षण-क्षण अब प्रेम उड़ेल ?
लिये बादल का सैन्य महान
कौन करता है शर संधान ?
तडित-बाला की मृदु मुस्कान
मोहती मन क्यों क्षण-क्षण आज
मदन क्या चढ़ आया दल साज ?
तपी, अब तोड़ो ध्यान अखण्ड
मदन. अब रोको बाण प्रचण्ड
दहन का मचे न भीषण काण्ड,
अनन सा मारुत हो न विनष्ट,
न वर्षा-रति की शोभा भ्रष्ट !
फले भू- गिरिजा- तप- संभार !
क्षितिज पर हो शुभ मिलन उदार !

आधुनिक हिन्दी काव्य और नारी सौन्दर्य

लक्ष्मी नारायण दुबे
सागर विश्वविद्यालय—सागर

नर-नारी जीवन-जगत के दो महत्व- एवं अपरिहार्य अंग हैं। दोनों के चित विकास, व्यवहार व उन्नति में ही ाज की पुरोगामिता का सार निहित । प्रकृति ने भी पुरुष व नारी के गात उनके गुणों व विशिष्टताओं के अनुकूल मित किया है। पौरुष दर्प, वीरत्व, क्रम, परिश्रम, निर्ममता जहां नर की ीरिक व प्राकृतिक विशेषता है, वहां कुणाय, मृदुलता, स्नेह, प्रेम, ममत्व, रुणा उदारता तथा सौन्दर्य नारी जीवन विशेषता व कहानी है। इस प्राकृतिक भेद ने ही पुरुष व नारी के कार्य क्षेत्र अन्तर उपस्थित कर दिया है। हमारे कवियों ने जहां पुरुष को उसकी ढ़ व संगठित मांसपेशियों व उदात्त क्तित्व रूप में प्रस्तुत किया है, वहां नारी उसके सौन्दर्य, यौवन, गरिमा व महानता रूप में रखा है।

सौन्दर्य का जीवित व साकार रूप ी का जीवन व शरीर है। सौन्दर्य त्व में वस्तुपरक न होकर व्यक्ति क अधिक होता है। प्रकृति के सौन्दर्य एक अलग मधुरिमा है व नारी के न्दर्य में एक अनूठा रूप है। सौन्दय ही कला व साहित्य की मूल भित्ति है साहित्य सुन्दर को सत्य व शिव के सा समन्वित करके रखता है। साहित्य वही सौन्दर्य उचित है जो कि हितकारी कल्याणप्रद, मनोमुग्धकारी और तुष्टि व साधन बन सके अन्यथा हमें भी एक आंग लेखक के स्वर में स्वर मिलाकर कहन पड़ेगा कि सौन्दर्य की अतिशयता उपा देयविहीन हुआ करती है:—

Remember that the mos beautiful things in the world are the most useless-Peaco cks and lilies, for example"

महाकवि प्रसाद ने सौन्दर्य को चेतन का उज्जवल वरदान कहा है और कविव पन्त ने कल्याणी सुन्दरता को सकल ऐश्वर्यों का सन्धान माना है। सौन्दर्य की व्याप्ति में मन का रमण है। हृदय क प्रश्रय स्थली का वह सम्यक् रूप है प्राकृतिक व नारी सौन्दर्य में अन्तर है जहां प्रकृति के सौन्दर्य में मुग्धता लल्लीनता की स्थिति उत्पन्न होती वहां नारी के सौन्दर्य में मन की महक नयनों की चहक और चेतना का घनीभूत रूप प्राप्त होता है। हमारे कवियों ने

उपादानों में भी चेतना का आरो-
उनका मानवीकरण किया है।
ीकरण की प्रक्रिया में पुरुषत्व की
ारीत्व का प्रयोग अधिक दृष्टि-
ोता है। नारीत्व की क्रियान्विति
ता व चेतना का समन्वय हो जाता
कवि मिल्टन ने सौन्दर्य को भी
ा सिक्का माना है: —
:auty is Nature's aim,
not be hoarded, But
be current, and the
thereof Consist; in
al and Partaken bliss"
दर्य की प्राप्ति स्त्रीलिंग व पुलिंग
ही होती है। मनुष्य के शरीर
त अवयवों व नारी के अंग-प्रत्यं-
यह सौन्दर्य बिखरा पड़ा रहता
ावन व तारुण्य का साथ सौन्दर्य के
निवार्य है। यह एक अवस्था विशेष
र संकेत करता है। तरुणावस्था
का पूर्ण उन्मेष संभव है। स्वास्थ्य
म होने व प्राकृतिक रूप छटा प्राप्त
र सहज ही सौन्दर्य की प्राप्ति
ती है। सौन्दर्य या सुन्दरता गुण
शेषता का नाप है। यह भावा-
रूप है। इसको नारी अथवा व्यष्टि
लकर, हम उसे निर्गुण से सगुण
सकते हैं। वस्तुओं को साकार रूप
ा अधिक हृदयग्राही, गम्य, सुबोध
वपूर्ण रहता है। हमारे भक्त कवियों
गुणोपासक होने का रहस्य यही ही
निगम्य होने के लिए सगुण व साकार

होना, मनोविज्ञान व सामान्य अनुभवों के आधार पर अत्यावश्यक है। महाकवि प्रसाद ने यौवन का एक सूक्ष्म व निर्गुण रूप, सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है :—

"तुम कनक किरण के अंतराल में,
लुक छिपकर चलते हो क्यों ?
नत पालक गर्ववहन करते,
यौवन के घन रसकन ढरते।
हे लाज भरे सौन्दर्य बता दो,
मौन बने रहते हो क्यों ?
अधरों के मधुर कगारों में,
कल-कल ध्वनि की गुंजारों में।
मधु-सरिता सी वह हँसी तरल,
अपनी पीते रहते हो क्यों ?

सौन्दर्य का इस प्रकार भावात्मक व विशुद्ध निरावलम्बी रूप चित्रण करना कठिन होता है परन्तु स्वर्गीय प्रसाद जी के काव्य में ऐसे स्थल अपनी महीन कला-त्मक सज्जा व भावमयता के साथ प्राप्त होते हैं। लज्जा, रति, चिंता आदि सदृश मनोभावों की मूर्त प्रक्रियाएं कवि ने उत्कृ-ष्टता के साथ प्रस्तुत की हैं।

मानवीय सौन्दर्य के अन्तर्गत पुरुष व नारी-सौन्दर्य की विशेषताएं अप्रतिम हैं। नारी सौन्दर्य के भी स्थूल व सूक्ष्म विभा-जन किये गये हैं। स्त्री के स्थूल सौन्दर्य के अन्तर्गत काव्य में उसके अंगों, वेश-भूषाओं, आभूषणों व अनुलेपनों व चेष्टाओं का वर्णन मिलता है। सूक्ष्म सौन्दर्य के अन्तर्गत स्त्रियों के शील आदि का सुन्दर निरूपण है। भवभूति, कालिदास, रवीन्द्र, प्रसाद, हरिऔध, गुप्तजी आदि भारती कवियों ने शील को ही सर्वाधिक मह

है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी
है कि अंगों के वर्णन में उनका
ायता, सुढरता, सुडौलता, सुकु-
मृदुलता, पुष्टता और अवस्था,
ध्य आदि का वर्णन प्राप्त होता
सौन्दर्य गर्णन में प्रकृति से उपमान
ये जाते हैं जिनका प्रयोग रूढ़ हो

प्रकार प्रकृति व नारी-सौन्दर्य के
साधनों के दृष्टिकोण से, अन्यो-
हो गये हैं। प्राकृतिक उपादनों
श्यकता जहां नारी-रूप वैभव के
के लिए आवश्यक हैं वहां वर्तमान
प्रकृति का मानवीकरण भी हम
को चेतन बनाने की दिशा में सफल
है। नायिकाओं के शरीर व गुणों
वन्न अलंकारों का विवेचन भी हमारे
ने वैज्ञानिक रूप में प्रस्तुत किया
तिकाल का पूराकाव्य नायिकाभेद व
ख वर्णन से ओतप्रोत है। दीप्ति,
ता, औदार्य धैर्य, क्रांति आदि को
विश्वनाथ ने नायिकाओं के नैसर्गिक
ाना है।

ारी सौन्दर्य को आधुनिक काल में
ष्टियों से देखा गया है। उनके
, तेज, दीप्ति आदि के साथ उनके
की विशेषताओं व गौरव का भी
ढंग से निरूपण हुआ है। नारी का
यहां प्रारंभ से ही मान है। ऋग्वेद
नारी को सम्मानित रूप में ग्रहण
है। द्विजेन्द्रलाल राय ने नारी के
को स्नेह का आगार व नीड़ माना है।

प्रसाद के नाटकों में नारी के उदात्त व प्रेममय रूप के दर्शन होते हैं। मल्लिका व देवसेना जहां नए जीवन की अमर व उज्ज्वल प्रतिनिधि हैं, वहां अलका राष्ट्रभक्ति की जीवन-रागिनी है और विजया श्यामा आदि नारी जीवन के पतनोन्मुख व घृणित रूप को परिचायिका हैं। नारी के विभिन्न स्वरूप प्राप्त होते हैं। उसमें नानाविध गुणों व विशिष्टताओं का मिश्रण होता है। एक फारसी कवि ने ठीक ही लिखा है कि नारी का निर्माण बहुत सी वस्तुओं के समन्वय से होता है:—

In the beginning, said persian poet, Allah took a rose, a lily, a dove, a serpant, a little honey, a Dead, Sea apple, and a handful of Clay. when he looked at the ama-lgam it was a woman

नारी-सौन्दर्य का वर्णन, युग, काव्य-सिद्धान्त, परिस्थितियों व सामान्य विचारणा की भूमियों के कारण प्रत्येक काल में परिवर्तित दिखलाई देता है। भारतेन्दुकाल (सन १८६८-१८६३) में उसका रूढ़ व प्राचीन धर्मानुकूल वर्णन प्राप्त होता है। द्विवेदीकाल (सन् १८६३-१६१८) में हम परम्परागत व नूतन चित्रण की मिलन भूमि पाते हैं। छायावादी युग (सन् १६१८-१६३ में नारी वर्णन का उत्कृष्ट व चरमोत्कर्ष प्राप्त चित्रण मिलता है। नारी को विविध दृष्टि कोणों से निरखा व परखा गया। प्रगतिवाद प्रयोगवादी व नई हिन्दी कविता में भी ना सौन्दर्य के प्रति कवियों की विभिन्न दृष्टि

होती हैं।

भारतेन्दु युग की विशिष्ट प्रवृत्ति पर-गत ढांचे की है। इस युग पर श्रृंगार तिकाल की मान्यताओं का स्पष्ट प्रभाव इस युग के प्रवर्तक श्री भारतेन्दु हरिचन्द्र जी का सौन्दर्य वर्णन करते हैं स्पष्टतया बिहारी की नायिका का व प्रभाव परिलक्षित होता है:—

"राधिका पौढ़ी ऊँची अटारी।
पूरन चन्द उग्यो नभमंडल फैली बदन उजारी।।
दोऊ जोति मिलि एक भई है भूमि गगन लौं भारी।
सो छवि देखि सखा तुन तोरत हरिचंद बलिहारी।।"

यहां पर प्रेमी व भक्त कवि का साम- दृष्टिगोचर होता है। बिहारी की का के घर के पास भी रात दिन मुख त प्रकाश से आभा बनी रहती है व ग से ही तिथि मालूम की जा सकती नायिका के 'करवां चौथ' व्रत करने समय, चन्द्रमा के देखने की स्थिति भी प्रकार की है।

कविवर प्रेमघन व रत्नाकर आदि ने भी प्रकार का ही वर्णन किया है।

द्विवेदी युग को हम हिन्दी के काव्य संक्रमण काल मान सकते हैं। इस युग विविध धाराओं का विकास व प्रसार दिखाई देता है। इस युग में प्राचीन लेना है और नवीन का समारम्भ व क्रांति के साथ होता है। प्राचीन ओं का रूप महावीरप्रसाद द्विवेदी, हरिऔध, मैथलीशरण गुप्त, कामताप्र गुरू, श्रीधरपाठक, नाथूराम शंकर रायदेवीप्रसाद पूर्ण आदि की रचनाओं मिलता है। नख-शिख वर्णन प्रणाली की भी कहीं कहीं दिखलाई दे जाती है। कारों की भरमार व प्राकृतिक उपमाओं प्राचुर्य मिलता है। श्री शंकर की का एक अंश इस श्रेणी के वर्णन का स्पष्टीकरण देता है:—

"सब जड़ाऊ भूषणों के सोहने श्रृंगार कंठ में केवल मनोहर मोतियों के हार पीनकुश उकसे कसे, कोमल कड़े छोटे गुप्त सारे अंग सोड़ी की सजावट में प"

द्विवेदी व छायावादी युग में अ सुन्दर महाकाव्यों का निर्माण हुआ इन महाकाव्यों की नायिकाओं का सौ वर्णन हमारे कवियों ने बड़ी सुगढ़ सरसता से किया है। महाकवि श्री अयो सिंह उपाध्याय हरिऔध' की नायिका का रूप वर्णन परम्परा की लीक का निर्वाह करता है। महाकाव्यों का भी वि जन कालक्रमानुसार किया गया है। प्रिय रामचरित चिन्तामणि व साकेत जहां द्वि काल के महाकाव्य माने गये हैं, वहां का यनी, नूरजहां, सिद्धार्थ, वैदेही वनवास दैत्यवंश प्रसुमनकाल (सन् १९२१ १९४० के और कृष्णायन, साकेत सन्त व विक्रमादि को वर्तमानकाल (सन १९५१ के पश्चा के महाकाव्य की संज्ञा प्रदान की गई है

'हरिऔध' की राधा के वर्णन संस्कृतमयी भाषा का गाम्भीर्य व मा अन्तर्निहित है:—

रूपोत्थान- प्रफुल्ल प्राय कलिका राकेन्दु
बिम्बानना
तन्वंगी कल हासिनी सुरसिरा क्रीड़ा
पुत्तली
शोभा वारिधिकी अमूल्य मणि सी
लावण्य लीलामयी
श्री राधा-मृदुभाषिणी मृग-दृशी-माधुर्य
की मूर्ति थी ।।"

इसके विपरीत श्री मैथिलीशरण गुप्त के महाकाव्य 'साकेत' के नारी-सौन्दर्य में आधुनिक परिपाटी का वहन मिलता है। काव्य की नायिका 'उर्मिला' का सौन्दर्य निरूपण बहुत ही उत्कृष्ट कोटि का है। उसकी आभा से राजप्रासाद अभिभूत होता दिखाई दे रहा है:—

'अरुण-पट पहले आल्हाद में,
कौन यह बाला खड़ी प्रासाद में?
प्रकट मूर्तिमयी उषा ही तो नहीं?
कांति की किरणें उजेला कर रहीं।
यह सजीव सुवर्ण की प्रतिमा नई,
आप विधि के हाथ से ढाली गई
कनक-लतिका भी कनक-सी कोमला.
धन्य है उस कला शिल्पी की कला ॥"

महाकवि गुप्त जी ने भगवती सीता का भी रूप-वर्णन अपनी रससिद्ध लेखनी से किया है। ऐसा सरस व महीन वर्णन बहुत कम कवियों ने किया है:—

"अंचल पट कटि में खोंस, कछोटा मारे,
सीता माता थीं आज नई ध्वज धारे।
अंकुर हितकर थे कलश पयोधर पावन,
जनमातृ-गर्वमय कुसल वदन भव-भावन।
पहने थी दिव्य दुकूल अहा, वे ऐसे,
उत्पन्न हुआ हो देह संग ही जैसे।"

इस रूप चित्रण में एक चल-चित्र की प्[रतीति]
हमें होती है जिसमें गुप्तजी का का[व्य]
सौष्ठव व तुलसीदास की भक्ति का मि[श्रण]
मिलता है।

स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद ने साहि[त्य के]
अन्य अंगों के युग-प्रवर्तन के समान सौ[न्दर्य]
निरूपण में भी नये युग का सूत्रपात [किया]
है। वास्तव में प्रसाद-निराला पन्त [के]
काव्य में, जिन्हें हिन्दी के लब्धप्रति[ष्ठ]
समीक्षक आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी [ने]
उपयुक्त रूप में 'वृहद्त्रयी' कहकर गाग[र में]
सागर भर दिया है, इस प्रणाली के उप[...]
की पूर्ण उन्मेष व निखार प्राप्त होता [है।]
प्रसाद जी की अन्तिम काव्य कृति 'कामाय[नी']
की नायिका का रूप व सौन्दर्य वर्णन हि[न्दी]
कविता में अद्वितीय है। कवि ने उ[...]
अपनी कल्पना शक्ति, भाव-प्रवणता व व[...]
वैभव के द्वारा अपूर्व रूप सृष्टि की [है।]
नवोन्मेषकारिणी उपमाएं व अनूठे रूप[कों]
के द्वारा श्रद्धा का रूप अपने पूर्ण म[...]
के साथ हमारे समक्ष आता है। प्रसा[द]
प्रेम, यौवन, श्रृंगार व करुणा के [...]
गायक हैं। उनकी यह सिद्धहस्तता [...]
पदांशों में फूट पड़ी है:—

"आह, वह मुख, पश्चिम के व्योम [...]
जब घिरते हो घनश्याम,
अरुण रवि मंडल उनको भेद वि[...]
देता हो छविधाम।
या कि, नव इन्द्रनील लघु भृंग फो[...]
धधक रहा हो कांत,
एक लघु ज्वालामुखी अचेत, मा[...]
रजनी में अश्रान्त ॥"

पु' की नायिका का भी वर्णन अप्रतिम कवि ने उसके मुख व आंखों का र वर्णन किया है :—

"बांधा था विधु को किसने इन काली जंजीरों से,
मणिवाले फणियों का मुख क्यों भरा हुआ हीरों से।
काली आंखों में कितनी यौवन के मद की लाली,
मानिक मदिरा से भर दी किसने नीलम की प्याली।"

द जी ने नारी-सौन्दर्य के सूक्ष्म अथवा गत पक्ष का भी सम्यक् उद्घाटन किया उनकी नायिका 'श्रद्धा' मनु को अपना ण करते समय नारी की समस्त अन्तः दय वती उज्ज्वलता की आभा का भी र्ण करती है:—

"समर्पण लो सेवा का सार सजल संसृति का यह पतवार,
आज से यह जीवन उत्सर्ग इसी पदतल में विगत-विकार।
दया, मय ममता, लो आज मधुरिमा लो अगाध विश्वास,
हमारा हृदय रत्ननिधि स्वच्छ, तुम्हारे लिए खुला है पास।"

कवि 'निराला' की नायिका में शारीरिक ओं की उठान अधिक दृष्टिगोचर है:—

'चौंक पड़ी युवती, चकित चितवन निज चारों ओर फेर
हेर प्यारे को सेज पास, नम्र मुखी हँसी खिली, खेल रंग, प्यारे संग

पन्त काव्य में नारी को देवी, मां, स प्राण आदि के रूप में ग्रहण किया है। उनकी रचनाओं में, नारी का यौवन वर्णन, अपनी मधुरिमा के साथ होता है। नारी के दिग्भ्रान्त रूप के कवि की यह वाणी उनकी आत्मा आवाज है :—

"तुम सब कुछ हो, फूल, लहर, ति विहगी, मार्जारी'
आधुनिके, तुम नहीं अगर कुछ, सिर्फ तुम नारी।"

श्री गुरुभक्तसिंह 'भक्त' ने अपने काव्य 'नूरजहां' में रस, रूप-सौन्दर्य-मदि विलास का भव्य वर्णन किया है। भक्त की नायिका अपूर्व रूप सृष्टि की अनुकृति

यह किरण जाल सी उज्ज्वल है म की विमल मराली है।
अंग अंग में चपला खेल रही है भी भोली-भाली है।
स्वच्छन्द किरण पर जलद पटल ने जाल फैलाया है।
धनु रच पावस में नहीं मार ने पर तीर चलाया है।'

कविवर अनूपशर्मा के महाकाव्य 'सिद्ध की नायिका यशोधरा का रूप-वर्णन सं शैली का दृष्टान्त है:—

'कमल थे, मृग थे सुनेत्र थे, विह शिव थे कि उरोज थे।
मुकुर था विधु था कि मुखाब्ज था तड़ित थी रति थी कि यशोधरा

श्री हरदयालुसिंह ने भी पुरानी परिपाटी अनुकूल नारी सौन्दर्य का वर्णन किया है

"कंचन बेलि सी या नवला दबी जात
मनौ कुच कुम्भ के भारन
त्यौं सुखमा, पट, भूषन दीठिकौ
बोझ अपार बहै केहि कारन।"

डा० शुक्ल ने लिखा है कि स्त्री आधु- कवियों के समक्ष वासना तृप्ति का धन मात्र नहीं है। कवि इसका वर्णन त्त भावनाओं की प्रेरिका के रूप में ते हैं। इसके भी आत्मा है और इसकी ता पर कवियों को विश्वास है। दिनकर काव्य में, नारी के सौन्दर्य वर्णन में रीत्व का पक्ष, अधिक उभर कर आता खलाई देता है। कवि ने कहा है:—

"अंगों में अवशेष नहीं पहले
की सरल चपलता।
सबके सब दायित्व ज्ञान से कुछ कुछ
दबे हुए हैं।
वा ी संयमशील, धीरता है भर गई
पदों में,
आंखों के संकोच, शील में गौरव
भर आया है"

वर श्री भगवतीचरण वर्मा के द्वारा वर्णित सी भी अधोलिखित भावना, नवचेतना, न व आनंद प्रदान करनेवाली है:—

"शत शत मधु के शत शत सपनों की
कित परछाईं सी।
मलय विचुम्बित तुम ऊषा की अनुरंजित
अरुणाई सी।"

बच्चन की साकी बाला का वर्णन माद- ता व विलास से परिपूर्ण है। यहां ाला का मदान्ध ठाट देखते ही बनता है

"मेंहदी रंजित मृदुल हथेली में माणि
मदका प्याला,
अंगुरी अवगुंठन डाले स्वर्ण व
साकी बाला,
पाग बैंजनी, जामा नीला, डाट ड
पीने वाले,
इन्द्र धनुष से होड़ रही ले आ
रंगीली मधुशाला।।"

कविवर अंचल ने भी एक उदासीन ना का सुन्दर चित्र प्रदान किया है जो ि अपने प्रियतम की मधुर स्मृति के रत है:—

पहिन लहरिया आज खड़ी होगी
क्या उसी अटारी पर फिर
तुम मेंहदी रंजित हथेलियों पर र
अपना चिन्ताकुल सिर
जीवन का समस्त उजड़ापन होग
हृदय पर छाया
मटियारी पावस-सन्ध्या का धुंधलाप
ज्यों सिमट समया।।

वर्तमान काल के महाकाव्य 'कृष्णायन' मे डा० द्वारकाप्रसाद मिश्र ने अलंकारों के माध्यम से रूप वर्णन प्रस्तुत किया है। य रूप वर्णन प्रभावपूर्ण है:—

अंग पंकज-किंजल्क सुवासा मलय
समीर मनहुँ निःश्वासा।
देहकान्ति इन्दविर श्यामा दशनोज्ज्वल
मुखेन्दु अभिरामा अतिन
नयन असीर-मधुर आलोकिन
स्निग्ध अकल अति कुंजित।
अधर बिम्ब विद्रुम धुति भासामंजु
कपोल, कण्ठ श्रुति नासा।

द्धार्थ, दैत्यवंश, साकेत संत और कृष्णा-
र में अलंकार योजना के द्वारा रूप वर्णन
रने की चेष्टा की गई है। श्री उपाध्याय
ो रूप की अपेक्षा रूप के प्रभाव वर्णन
ही अधिक प्रवृत्त रहे हैं। नूरजहां में
मायनी की शैली का अनुकरण मिलता है।

प्रगतिवादी, प्रयोगवादी व नई कविता
। धारा में नारी के रूप वर्णन में शक्ति
ज, जागरण, यौवन, तारुण्य प्रगल्भता,
रणा उद्बोधन आदि के उपादान मिलते
। नारी के अधिकार व त्याग की महिमा
ा गायन इसी युग में किया गया है। नारी
ो शोषण का केन्द्र न बनाने की उत्कट
ावना भी हमें इसी युग के साहित्य में
पलब्ध होती है। श्री गिरिजाकुमार माथुर
पनी प्रेयसी से शक्ति की याचना करते
ए दृष्टिगोचर होते हैं:—

"शक्ति दो मुझको, सलोनी। प्यार से
लड़ सकूं मैं जुल्म के संसार से
बांह गोरी मनुजता की ध्वज बने
छाप तेरे अधर की सूरज बने
फिर नयी इन्सानियत की ढाल दो
फिर नयन मेरे नयन में डाल दो..."

दूसरी ओर कवि नारी का विलासपूर्ण
चित्रण करता है। उसका मादक प्रभाव
बिखर पड़ा है। अपनी प्रेमिका के साथ
रोमांस के पलों की स्मृति उसके हृदय में
विचित्र सिहरन जगा जाती है। कहीं कहीं
विलास के पलों के ये संकेत ऐसे अवर्णनीय
सुख का संदेश देते हैं कि पाठक भी उत्ते-
जना का अनुभव करने लगता है:—

"अजाने ही मेंहदी के हाथ,
मला होगा केसर अंगराग
तभी पुलकित चम्पक सा गात,
आज तेरा भोलापन चूम।
हुई चूनर भी अल्हड़ प्राण,
हुए अनजान अचानक ही,
कुसुम से मसले बिखरे साज,
बड़ा काजल आंजा है आज॥"

डा० धर्मवीर भारती के काव्य में
का वेदना व दुख से परिपूर्ण हृदय
हो गया है। कवि ने चिन्तन की
डूबकर गहरी पवित्रता के साथ
रूप वर्णन किया है:—

प्रात सद्यः स्नात
कंधों पर बिखरे केश
आंसुओं से ज्यों
धुला वैराग्य का संदेश
चूमती रह रह
बदन को अर्चना की धूप
यह सजल निष्काम
पूजा सा तुम्हारा रूप।"

सन् १९३५ के बाद की कवि
नई कविता कहा जाता है। श्री
'प्रथम सप्तक' के प्रकाशन से प्रयोग
विचारधारा का सूत्रपात होता है।
व पन्त के कुकुरमुत्ता, नये पत्ते,
युगवाणी आदि काव्य से नई कवि
विकास है। इस नवीन काव्य
तीन साहित्यकार वर्ग हमें दृष्टिगो
हैं। प्रथम तो प्रगतिवादी हैं जिनमें
केदारनाथ अग्रवाल, रामविलास

शेष पृष्ठ ४३ पर देखें

सत्यं शिवं सुन्दरम्

लेखक—डा० सुरेशचन्द्र गुप्त,
अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, सनातन धर्म कालेज, आनन्द पर्वत, नई दिल्ली—५

साहित्य की सफलता उसकी मार्मिकता र्थात पाठक पर पड़ने वाले प्रभाव में निहित ोती है। इसी मार्मिकता की योजना के लि लेखक साहित्य की अनेक रूपों में चना करता है और उसमें अनेक प्रकार सिद्धान्तों का समावेश करता है। उसमें त्य, शिवं और सुन्दर की योजना भी उसके सी प्रयास का परिणाम है। दूसरे शब्दों , इन्हें क्रमशः अनुभव, चिन्तन और ल्पना की संज्ञा दी जा सकती है। रचना में प्रभाव और सौन्दर्य लाने के लिये लेखकों द्वारा इनको समन्वित रूप में योजना की ाती है। आगे हम इनके स्वरूप पर क्रमशः विचार करेंगे।

सत्य—साहित्य में सत्य के समावेश हमारा तात्पर्य लेखन के अनुभवों को ाणी प्रदान करने से है। जीवन के सामान्य त्य और काव्य के सत्य में मौलिक अन्तर ोता है। जीवन का सत्य कोरा यथार्थवाद ोता है; किन्तु साहित्य में उसे ज्यों का ों उपस्थित नहीं किया जा सकता। हां उसे जीवन-विकास के लिए अधिक-से धिक उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया ाता है। साहित्य का लक्ष्य अपूर्ण को र्ण करना है। अतः वहां सत्य का समावेश जीवन में इसी पूर्णता को लाने के लि किया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट कि साहित्य में सत्य-कथन से हमारा तात्प यथार्थ का आदर्शात्मक चित्रण करने है। यह कथन विभिन्न रूपों में किया सकता है और साहित्य के प्रत्येक रूप इसकी अभिव्यक्ति की प्रणाली में कुछ कुछ अन्तर आ जाता है। उदाहरण जहां गीत-काव्य में लेखक इस सत्य अपनी ओर से प्रकट करता है वहां प्रब काव्य में वह ऐसा किसी पात्र से करा सकता है।

काव्य में सत्य की योजना के लिए केव अपने दृष्टिकोण का विस्तार करना हो है। इसीलिये वह जड़ तत्वों में चेतना प्रतिष्ठा को भी सत्य मानता है। यह दृ साधारण व्यक्तियों के पास नहीं होती सत्य का प्रतिपादन दार्शनिकों तथा वैज्ञ निकों द्वारा भी किया जाता है, कि उसका सम्बन्ध क्रमशः बौद्धिक तथा भौति जगत् से होता है। इसके विपरीत का के सत्य में भावना तथा कल्पना के यो के कारण हृदय को प्रभावित करने शक्ति होती है। वह हमारी चेतना परिष्कार कर हमें विशेष आनन्द प्रदान कर

अभाव में भाव की कल्पना करने की केवल उसी के पास होती है। यही है कि जो सत्य दर्शनशास्त्र और में शुष्क रूप में स्थित रहता है काव्य में आने पर सरस हो उठता है।

शिव—साहित्य में शिव-तत्व के समा- हमारा तात्पर्य उसमें कल्याणकारी ओं के संचय से है। वहां शिवलोक- का पर्याय है। अतः यह स्पष्ट है कि आदर्श-कथन की प्रणाली को अपनाया है। यह तत्व साहित्य को अमरता करने वाला है और इसके कारण ही य का अध्ययन करने वाले व्यक्ति मानसिक शांति की प्राप्ति हो जाती श्रेय तत्व से युक्त होने के कारण यह -मन को उन्नयन की ओर ले जाता है। योजना के लिये कविगण प्रायः अनुभव चिन्तन का आश्रय लेते हैं। इन दोनों यना से वर्ण्य विषय को एक निश्चित ने के उपरान्त वे आवश्यकता के अनु- उसे कल्पना के माध्यम से विशेष भी प्रदान करते हैं। जो साहित्य तत्व से शून्य होता है उसका समाज- की दृष्टि से कोई महत्व नहीं

भारतीय साहित्य में शिव तत्व आदि न्त तक व्याप्त रहा है। भारतीय विद्वानों हित्य को जीवन से अनिवार्यतः सम्ब- मानकर उसमें लोक-हित की योजना निरन्तर ध्यान रखा है। इसके विपरीत त्य साहित्य में 'कला कला के लिए' न्त के प्रचलन के कारण कहीं-कहीं साहित्य में शिव-तत्व का अभाव हो है। इस तत्व को उपयोगिता में कोई नहीं है, किन्तु इतना आवश्यक है कि योजना करते समय सत्य की उपेक्षा न जाए। शिव-तत्व के अन्तर्गत काल्पनिक आदर्शवाद की सृष्टि कभी भी प्रशंसनीय नहीं होगी।

सुन्दर—साहित्य में सौन्दर्य की उप- गिता के विषय में कोई भी व्यक्ति विपरीत मत नहीं रख सकता। लेखकों की सदैव इस बात पर रहती है कि अपनी रचनाओं को अधिकाधिक सुन्दर रूप उपस्थित करें। विभिन्न साहित्य सिद्धान्त उनकी इसी प्रवृत्ति की सूचना देते हैं इस सौन्दर्य की योजना के लिए काव्य दो प्रणालियों का आश्रय लिया जाता है

(१) भावात्मक सौन्दर्य—साहित्य भावों का महत्व वही है जो मानव-शरीर में आत्मा का होता है। अतः लेखक भावों को सुन्दर और प्रभावशाली रूप उपस्थित करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं। इसके लिए वे अनुभव के अति- रिक्त कल्पना का भी आधार लेते हैं साधारण रूप से काव्य के विषय, प्रकृति मानव जगत और भक्ति से सम्बन्धित रहते हैं। अतः कवि 'इन विषयों' को सुन्दर- तम अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए कल्पना का यथास्थान प्रयोग करते हैं। काव्य भावात्मक सौन्दर्य का अभाव होने उसका प्रभाव लगभग समाप्त हो जाता है

(२) कलात्मक सौन्दर्य—भावों भांति काव्य में उन्हें उपस्थित करने

को भी आकर्षक रूप प्रदान करने की यकता होती है। अतः कवि भाषा, अलंकार, छन्द आदि विविध उपों की सहायता से अपने काव्य को कला र्य प्रदान करते हैं। यद्यपि कला-पक्ष भाव-पक्ष से कम महत्व दिया जाता तथापि इस विषय में अधिक पूर्वाग्रह रखना चाहिये।

भावना और कला के योग से साहित्य स सौन्दर्य की सृष्टि होती है वह म होता है। यह सौन्दर्य मन को व आनन्द प्रदान करने वाला होता ौर पाठक की थकी हुई चेतना को विश्राम प्रदान करता है। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि प्रत्येक व्यक्ति जीवन में सौन्दर्य की खोज करने में लीन रहता है। अतः काव्य में सौन्दर्य का समावेश होने पर पाठक को सन्तोष प्राप्त होता है।

तुलनात्मक अध्ययन— साहित्य में सत्य, शिव और सुन्दर को एक दूसरे से पृथक रखकर नहीं देखा जा सकता। वे तीनों परम्परा अन्तर्ग्रथित है और एक दूसरे के लिए पूरक का कार्य करते हैं। जब साहित्य में इन तीनों को सम्मिश्रित

शेष पृष्ठ ४० का

न्द्र जैन आदि आते हैं। द्वितीय वादी विचारधारा के अनुयायियों में अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर, शमशेर-दुरसिंह आदि को पाते हैं। नूतन तकारों में विद्यावती कोकिल, सुमित्रा री सिन्हा, शांतिमेहरोत्रा, हंस कुमार री, गिरधर गोपाल, रमानाथ अवस्थी, रा गुप्त, शिवचंद्र नागर, चन्द्रमुखी , सुधा आदि के नाम विशिष्ट रूपेण नीय हैं। आज के लोकप्रिय कवि रज के काव्य में सौन्दर्य, प्रेम, मृत्यु यस्पर्शिता के उपादान प्रमुखतया मिलते उन्होंने नारी को प्रेयसी के रूप में किया है और कहीं कहीं उसको आध्या-क भी बना दिया है।

वर्तमान हिन्दी कविता में नारी के र्य चित्रण में वासना व विलास की ी मिलती है। कवियों का वर्णन वादी होता है, अतएव, उन्होंने उरोजों आदि का स्पष्ट रूप से किया है। साथ ही नारी के आध्यात्मिक व प्रतीक रूप का चित्रण भी हमें मिलता है। नारी सौन्दर्य में रूढ़ उपमानों की जगह, भौतिक वस्तुओं ने ग्रहण कर ली हैं। आज का कवि क्रांतिवादी व नूतन कल्पनाओं का पोषक है। नित्यप्रति के भौतिक संसार के क्रियाकलापों में से ही सादृश्य के भाव ढूंढ़ना वह युगानुकूल व समीचीन समझता है।

नारी के इस सौन्दर्य वर्णन में उसकी उदात्तता व गौरव का रूप भी निहित है। बीसवीं शताब्दी की नारी की प्रगति का प्रभाव भी इस वर्णन पर स्पष्ट तथा परिलक्षित है। इससे, नारी की शक्ति व प्रभाव से परिपूर्ण रूप भी, यथेष्ट मात्रा में मुखर हुआ है। इस प्रकार नारी सौन्दर्य के विविध रूप वर्णन ने हमारे कवियों के काव्य व चिन्तन शक्तियों को नूतन पक्ष व आधार प्रदान किये हैं। नारी की वास्तविक महत्ता का अंकन ही हमारे साहित्य की प्रगति के लिए युगानुकूल दृष्टिकोण माना जा सकता है

र में उपस्थित किया जाता है तभी में वास्तविक प्रभाव का संचार हो पाता इसी कारण इन्हें न्यूनाधिक रूप में व की सभी भाषाओं में ग्रहण किया ता है। इन तीनों के मूल में आदर्शवाद स्थिति रहती है अर्थात् साहित्यकार नी रचनाओं में इन्हें उपस्थित करते य इन्हें अधिक-से-अधिक आदर्श रूप ान करने की चेष्टा करते हैं।

काव्य का मूल आधार सत्य अथवा क-दर्शन है। जब कवि को संसार के सत्य ज्ञान हो जाता है तभी वह काव्य की ना कर पाता है। सत्य को अधिक ावशाली बनाने और उसके महत्व को रस्थायी रखने के लिए साहित्यकार उसमें व-तत्व और सौन्दर्य का मिश्रण करता । इन दोनों से रहित होने पर सत्य रूप शुष्कता से युक्त रहता है। पि सत्य का रूप व्यापक है, किन्तु शिव-व से युक्त होने पर उसका गौरव बढ़ ता है। उस अवस्था में सत्य कटु प्रतीत ीं होता और वह एक प्रकार से मानव-वाद का रूप ले लेता है।

शिव-तत्व का सम्बन्ध मानव के अन्तःकार अथवा आदर्शवाद से है। सत्य से ुक्त होने पर वह उसके स्थूल रूप कल्याणकारी रूप में परिवर्तित कर देता । जो बात लोक हित से सम्बन्धित ती है उसे सत्य से दूर नहीं रखा जा कता। इसी प्रकार ऐसी बात में सौन्दर्य अभाव भी नहीं हो सकता। वास्तव में ा जाय तो शिवत्व को सौन्दर्य का माप-दण्ड ही कहना चाहिए। ऐसी अव सत्य और सुन्दर का आश्रय लेते हु साहित्य में शिव तत्व का त्याग किया ज तो उससे साहित्य का गौरव कम हो जो रचना जन हित के प्रश्न को प्रमु मानती, उसका जनता द्वारा उचित कदापि नहीं किया जा सकता।

काव्य में सौन्दर्य योजना के लि शेष दोनों तत्वों की उपेक्षा न सकता। सत्य और सौन्दर्य के सम्ब विचार करने पर हम देखते हैं कि सत्य किसी ठोस धरातल पर खड़ा है वहां सौन्दर्य की आधार-भूमि होती है। सत्य और कल्पना ए से सर्वथा विपरीत है। अतः साहि को अपनी कृति में कल्पना को अधि क्त नहीं होने देना चाहिए। केवल विलास साहित्य का लक्ष्य नहीं है। त्य में कल्पना का प्रयोग तभी तक चाहिए जब तक वह पाठक को स्वा प्रतीत हो। वस्तुतः जो भाव कल्या होता है। वह सौन्दर्य की सृष्टि भी असमर्थ रहता है।

उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट साहित्य में इन तीनों तत्वों को मि उपस्थित किया जाना चाहिए। इ उचित ध्यान न देने से साहित्य में कृत्रि अश्लीलता, कुरुचि, शुष्कता आदि का किसी न किसी रूप में समावेश लगता है। जो लेखक इनमें जितनी अधिक कुशलता से सामंजस्य स्थापित

पृष्ठ ५० पर देखें

ऐसे ही आंसू पोंछे जाते

आशमा

"अब क्या होगा ?"

"घबड़ाओ मत। मुझे आइडिया है"

"क्या ?"

"मैंने एक डाक्टर से बात की है। उनके ...स एक दिन के लिये उन्हें समय देना ... अढ़ाई सौ रुपये उन्हें देना पड़ेगा। ...सका प्रबन्ध भी मैंने कर दिया है।"

"क्या मतलब है तुम्हारा ?"

"मालिनी, अकल से काम लेना है। ...म्हारे कैरियर का भी सवाल है और ...साथ साथ मेरा भी। तुम्हें इस बार परीक्षा ...देनी भी तो है। एम० ए० डिग्री एक लाख ...रुपये के बराबर है। और जवाहरलाल जैसे ...पति से भी एक एम० ए० डिग्री लड़कियों ...के लिये कीमती है।"

"साफ साफ बोलो क्या कहना चाह ...रहे हो ?"

"बिगड़ो मत। गलती तो मुझसे हुई। ...पर तुम्हारी भी कम नहीं। अब सारी ...जिम्मेवारी मेरे ही माथे पर मत डालो। ...जिनको बुद्धि है वे लाख खून करते हुए भी ...साधु ही अपने को साबित कर सकते हैं।"

"रमेश, सुन, तुम मुझसे विवाह कर लो। ...दूसरा मैं कुछ भी सात्विक रास्ता नहीं ...देखती। और मैं यह भी नहीं समझती ...कि मैंने गलती की। तुम्हीं ने तो कहा था

यह गन्धर्व विवाह है और तुम दुष्यन्त ... मैं शकुन्तला ! अब डाक्टर की बात क... सोचने लगे ? मैं अपने बच्चे की कदा... हत्या नहीं कर सकती। मुझे एम० ... डिग्री नहीं मिले तो न सही।"

"फिर वही बुद्धिहीनता की बात... विवाहित तो हैं ही। गान्धर्व विवाह ... किया सही। पर सर्वजन समक्ष तुम्हें सिन्... देने अभी तैयार नहीं। आवश्यकता भी न... समझता। मेरी मां बाप सुने तो मुझे कच्... चबा लेंगे। अरे मेरी मां, और, वह ... काल से कम नहीं। प्रतिष्ठा की बात है..."

"क्यों, तब तो प्रतिष्ठा मुझसे अधि... प्यारी लगने लगी ? हे भगवान ! मेरा ... क्या होगा ?"

"मेरी बात मान लो मालिनी ! दू... कुछ भी उपाय नहीं है।"

"नीच, पापी ! जबान संभाल !"

"गाली बकने से क्या होगा ? इ... तुम्हारी प्रतिष्ठा बचती नहीं।"

"रमेश, तुम कितना जबरदस्त धो... दे रहे हो ? जानते हो ! इसकी सजा ... मेरवर अवश्य देगा। मुझे तो आत्मह... के अलावा कुछ भी उपाय नहीं है।"

"मूर्ख की ऐसी ही मौत होती है"

"तुम तो होशियार हो न ! उस ...

मने कितना रोया, मेरे पैरों पर पड़े गिड़ ड़ाये, कितने ही प्रेम-कहानियां सुनायीं, ितनो हो वादे किये। मैंने यों नहो मंजूर कया था।

"ठीक है, पर इस परिस्थिति में विवाह हीं कर सकता"

"मैं चाहती भी नहीं। तुम अपनी तिष्ठा लेकर बैठो। मेरे लिए गंगा मैया ही। पर सुन, तुम मर्दों के इस अत्याार और पाप के चलते ही देश का यह ाल है। इस लाख लाख निरपराध और सहाय लड़कियों के श्राप भारतीय आसान में आज गरज रहे हैं। तुम्हीं क्या, म्हारा देश भी अगले हजार बरस तक ठ नहीं सकता। तुम हिन्दुओं का कभी द्धार नहीं हो सकता।"

"मालूम होता है सभी पाप मेरा हैं।"

"हां जी, तुम पाक है। सभी पाप मेरा ।"

"तुम कुछ भी कहो मालिनी, मैं बदला हीं हूँ। धोखा भी नहीं दे रहा हूं। मैं म्हें अपनी पत्नी समझता हूँ पर अभी ववाह ठीक नहीं"

"हां जो, समझ गया। जाओ अपनी म० ए० परीक्षा के लिये तैयार हो जा। ाद प्रोफेसर या कलक्टर हो जाना बाद कसो अच्छो खूबसूरत लड़की से विवाह ी कर लेना। तिलक में तुम्हारे मां बाप ो हजारों रुपये मिल भी जायंगे।"

रमेश चुप रहा। मालिनो भी चुप रही हसा वह उठी और तीर जैसे अज्ञात दिशा ी ओर चल दी। रमेश उसको रोका नहीं। बहुत देर तक वहां वह, से उठ वह अपने आप कहने लगा। ... मरेगी। मरे। पर मैं विवाह ... सकता। मेरी जिन्दगी और कैरियर ... है।

मालिनी गंगा जी की ओर नहीं ... उसने तय किया, उसे मरना ... वह दिल में विचारने लगी। मैं अब ... गरीब मां के पास कैसे जाऊँ। मुझे ... को बचाना है और अपने बच्चे ... बचाना है। इतना ही नहीं, मुझे ... संसार की एक अद्भुत विभूति बनाना ... और मेरा बच्चा संसार का एक ... अवश्य बनेगा। यह दोनों काम मुझे ... दिखाना है इस नीच को। तभी ... बदला पूरा होगा। उस बूढ़े ... पादरी के पास चली जाऊँगी। वे ... बचा सकेंगे और मेरे आंसू पोंछ ... ये विदेशी पादरी लोग भारत में ... धर्म प्रचार के लिये नहीं, मेरी जैसी ... लाख लड़कियों की जान और मान ... के लिये ही इस देश में कार्य कर ... पर उसके पास जाने के पहले मुझे ... की मां के पास जाकर सारी बातें ... है।

मालिनी जब रमेश के घर पहुँची ... रमेश की मां और पिता बाहर ही ... थे। वे बहुत ही सम्भ्रान्त और सम्पन्न ... के थे। मालिनी उनसे पहले ही ... थी। एक दो बार रमेश के ... उधर गयी भी थी। मालिनी को ... ही रमेश की मां ने मुस्कुराते हुए ...

आओ बेटी"

मालिनी जाकर उसके चरणों में अपना सर रख दिया। इस तरह समर्पण की भावना से मालिनी उसके चरण पकड़ लिये बेचारी प्रौढ़ा का दिल भर आया। उसने उसे उठाते हुए कहा—सौभाग्यवती बनो बेटी, फूलो फलो"

मालिनी बोली—"मां, एक बात कहने आयी "

"बोलो, बोलो"।

मालिनी क्षण भर रुक कर सारी दास्तान ज्यों का त्यों उन्हें सुना दिया। रमेश के पिता भी सुन रहे थे और अन्त में मालिनी बोली - मां, तुम तो मुझे स्वीकार नहीं ही क्यों कि तुम्हें अपने परिवार की प्रतिष्टा की बात है और मुझे मरना भी नहीं है। मुझे अपने बच्चे को जवाहरलाल से कम नहीं बनाना है। इस लिये मैं उस बूढ़े अमेरिकन पादरी के पास जा रही हूँ।

मालिनी बहुत देर तक चुप रही। समूचा वातावरण में एक अजीब सन्नाटा छाया रहा। बारबार वे तीनों प्राणी के मुंह से लम्बी लम्बी सांसें निकल रही थीं तब वे देखते हैं; रमेश चला आ रहा है। वह मालिनी को उधर देख सन्न रह गया। वह समझ गया सब रहस्य का भण्डाफोड़ हो गया। अब वह लौट भी नहीं सकता था। चुप चाप अपनी कोठरी की ओर जाने लगा तो रमेश की मां ने पुकारा—रमेश। वह आकर उनके सामने खड़ा हो गया। उसकी मां बोली—"कल तुम्हारा विवाह है। मालिनी के साथ तुम शादी कर लो।"

रमेश को एकाएक शरीर में मानो आग सी लग गयी। उसने पगला के चिल्लाया—"मैं कदापि भी इस रंडी से विवाह नहीं कर सकता।"

"उसकी मां खड़ी हो गई और बोली क्या कहा ?"

रमेश गरजा "मां, यह रंडी है।"

उसकी मां भी गरजी "और तुम क्या हो देवता ?"

रमेश बोला—"मैंने कुछ नहीं किया ?"

रमेश की मां क्रोध और ग्लानि से थर थर कांपने लगी ! वह अपने पति को देख बोली—सुना बेटे की बात ! ऐसा नीच बेईमान और पापी के बाप होने से बढ़ कर गंगाजी में डूब मरना बेहतर है।

रमेश बोला—मां, तुम व्यर्थ मुझ पर बिगड़ रही हो।"

मालिनी उठकर खड़ी होते हुए बोली "मां, मुझे जाने दो, तुम क्यों व्यर्थ अपने घर को नष्ट कर रही हो।"

रमेश की मां ने झपटकर मालिनी को पकड़ लिया और उसे बिठाते हुए कहा—बिन बुलाये घर आयी इस लक्ष्मी को मैं कदापि जाने नहीं दूंगी। बेटी तुम्हारे गर्भ में जवाहरलाल पड़ा है। मैं तुम्हें कदापि जाने नहीं दूंगी। वह दौड़कर घर के भीतर से कुछ सिन्दूर ले आयी और बेटे से कहा लगाओ इसके माथे पर सिन्दूर।

रमेश अब पागल सा हुआ। गरजने लगा—मैं यह कदापि नहीं कर सकता

हे मुझे यह घर त्यागना भी क्यों न
है।

रमेश की मां ने भी भयंकर रूप धारण
लिया वह एक झाड़ू खींच कर रमेश
माथे पर दो प्रहार देते हुए गरजी—
ागे तुम्हारे जैसे नीच की मां होने के
ये मैं भी तैयार नहीं। निकल मेरे घर
अभी इसी क्षण! मैं एक मिनिट भी
हारा चेहरा देखना नहीं चाहती। और
ा यह श्राप सुनते जा। तुम्हारा कभी
्याण नहीं होगा, तुम्हें कभी किसी लड़की
पवित्र प्यार मिल नहीं सकता। किसी
लांगी मनस्वनी पवित्र कन्या के प्यार पाने
लिये तुम्हें अब कई जन्म तक तपस्या करनी
गी। सैकड़ों लड़कियों की सेवा करके
ा तक उन्हें प्रसन्न न कर लोगे तब तक
हारे ऊपर कई जन्म तक मेरा यह श्राप
जता रहेगा। जा सामने से!

रमेश इस अप्रत्याशित श्राप से घबरा
ा। वह कहा—मां

"निकल यहां से। मेरा निर्णय अटल है।"

रमेश पिता जी की ओर देखने लगा—
ा जी ने आंसू पोंछते हुए कहा—जा
, तुम अब हम दोनों के लायक नहीं
इस खानदान के भी लायक नहीं रहे।
ालायक संतान से निःसंतान रहना ही
बेहतर समझते हैं।

रमेश जाने लगा तो मालिनी बोली—

मां उसे क्षमा कर दो।

रमेश की मां गरजी, चुप र
क्षमा उसे सुधार नहीं सकती। न
दिल में उसके लिये प्यार ही संभ
उसे जाने ही दो! यह रो रो कर
मेरा श्राप इस पर बीतेगा ही। इ
स्त्री का प्यार मिल नहीं सकता।
कम पांच जन्म तक! श्राप-मोक्ष
इसे निरन्तर स्त्री सेवा करनी पड़ेगी
आशीर्वाद पाना पड़ेगा!

रमेश स्थिति की गंभीरता और
नकता देख मालिनी की ओर देखने

पर उसकी मां बज्र सहश कठोर नि
उसने उठकर बेटे का गला पकड़ क
घर के बाहर हमेशा के लिये निष्कासि
दिया और वापस आकर मालिनी को
गोदी में बिठाकर उसके माथे पर
उपेक्षित पड़ी उस सिन्दूर को लगा
कहा—बेटी, मेरी लक्ष्मी, अपने ना
बेटे की ओर से मैं ही तुम्हारे माथे
सौभाग्य सिन्दूर को लगाती हूँ! मेरा
र्वाद लो! तुम्हारा बेटा अवश्य ज
बनेगा और तुम भी मीराबाई से
होगी। उठकर अपने पूज्य श्वसूर से
र्वाद मांग ले।

मालिनी अपने श्वसूर के चरणों
गिर पड़ी।

चल रहा हूं

राम निरंजन परिमलेन्दु,
खिजरसराय—गया

नींद के नगर के फुटपाथ पर
चल रहा हूँ।
रात्रि की मुक्तकुंतला नीरवता
उतरी, लेकर
तारा-नभ नीरवता का
अनुगूँज के पौधे सूख गए
अनुविम्ब की कलियां बीमार
ठहरा हुआ तालाब चांदनी का
धंधलका के ठंढ़े पहाड़ का साया
गिर रहा चांदनी के तलाब पर
ठहरे हुए तालाब पर,
राख का एकान्त मेरे करीब
हर क्षण आ रहा है
एकान्त की सिगरेट मेरी जल रही
धुआं बीत गए क्षण का
धुआं बीत रहे क्षण का
....
.. ..
आषाढ़ धुम्र का .....
नगर के फुटपाथ पर
चल रहा हूँ।
हवाई चप्पल मेरे पाँवों में
(हवाई स्ट्रैप नीला)
ठंढक चढ़ती मेरे पांवों पर
बर्फ का अंधेरा झर रहा

गोया मेरे पांवों पर
जाने-पहचाने रास्ते हैं
अनुगूँज नहीं जाने-पहचाने
शशि-लिप्सा की वर्षगांठ के फूल
मेरे में बिखरे,
फूल शायद मुर्झा रहे
शशि-लिप्सा के अस्तित्त्व-सत्य के,
नवादा-प्रवास की शशि-लिप्सा के मधुच
किन्तु फूल मुर्झा सकेंगे—
यह मेरा अस्तित्व-बोध नहीं बोलेगा
अस्तित्त्व की मेज पर
चाय की प्याली रखी हुई थी
चाय मैं पी रहा था
सिगरेट की राख झाड़ रहा था मेज
अस्तित्त्व की मेज पर—
राख मेरी, मेरी धरती, मेरे नभ की
तब मैं सोच रहा, सोचता था—
रात्रि के तारक-श्रावण
रात्रि-श्रावण ....
हिमालय शशि-बोध का......
मेरी जिन्दगी की ठन्ढ़ी सड़क पर
फेंकी हुई जलती सिगरेट की टुकड़ी
अग्नि का लघुकाय उत्ताप
प्रज्वलन शक्ति, लाली की मोहकता
धुएँ का 'हवाई स्ट्रैप' . ...

अस्तित्व-विसर्जन का ज्योति-सत्य
विदुओं में, अणुचक्र में……
(अस्तित्व- विसर्जन का अणुचक्र संचालित
रहता अस्तित्व-आकृति के जीवों में।)
…मेरे अस्तित्व की मेज पर
सिगरेट की राख गिरी
या, गिरी राख तारों की
छाया-नभ के मौन प्रहर की
रजतोल्लास की
नवादा-आवास की
या……
शशि के कान्त क्षणों की
मेरे शशि कांत वृत की
मेरे शशि कान्त- अस्तित्व की
मेरे अस्तित्व के शशि कान्त की
नवादा उत्तर- आवास के
मोहकता —सत्य की……
या,

क्या कहूँ ?
रिक्तता के उरग रेंगते
मेरे पथ पर
अनुगूंज के प्याले टूट गए
किरण पीली इकन्नी, दुअन्नी
जिसकी चलन बन्द—
अस्तित्व की ठंढी चाय
पी रहा हूँ
प्यास की बरसात में
और,
मटमैले ठहराव की विसूचिका
फैल गई है
मेरी जिन्दगी के शहर में
और,
चल रहा हूँ
नींद के नगर के फुटपाथ पर
कि…… ……!!!

---

४४ पृष्ठ शेषांश

उसकी रचना उतनी ही अधिक मार्मिक [हो] जाती है। इस दृष्टि से हिन्दी-साहित्य [क]ा अध्ययन करने पर हम उसके वीरगाथा [क]ाल में इस सामंजस्य का अभाव पाते हैं. [भ]क्तिकाल में यह सामंजस्य अपने पूर्ण [वि]कसित रूप में उपलब्ध होता है । रीति काल में कविगण सामंजस्य स्थापना उचित रूप में जागरूक नहीं रहे। [आधु]निक काल में इस सामंजस्य का यथासम्भव ध्यान रखा जाता [है] किन्तु प्रगतिवादी और प्रयोगवादी में इसका स्पष्ट अभाव है ।

वैदिक अणुशक्ति

जो दूसरों की शक्ति का सही सही अनुमान लगा सकते वे ही वास्तविक शक्ति सम्पन्न हैं।

जो परगुणानुमोदन करना जानते हैं वे ही सच्चे गुणी हैं मानव के सारे ही प्रयत्न एक मात्र उद्देश्य ज्ञान हासिल करना होना चाहिये यानी इस ब्रह्माण्ड व्यवस्था प्रत्येक वैशिष्ट्य और रहस्य को समझने के निमित्त होना चाहिये।

परमेश्वर को जानना मानना और साक्षात्कार करने से तात्पर्य है इस ब्रह्मण्ड व्यवस्थापक के नाना मुखी प्रतिभाओं और विभूतियों को अपने भीतर अनुभव कर अनुशीलन कर सिद्ध करना है। वे नाना मुखी खुबियां एक दूसरे से सम्बन्धित रहती एक दूसरे का पूरक रहती है? एक गुण पर अधिकार प्राप्त होते ही सभी गुण धीरे क्रमवद्ध होकर अपने भीतर विकसित होने लगते है।

प्रत्येक जड़ चेतन चीज में दो शक्तियां सदा सक्रिय रहती हैं—क्रिया और प्रतिक्रिया इन दोनों प्रकार की शक्तियों में एक ही केन्द्रीय शक्ति जाग्रत रहती है

आवाहन करना साक्षात्कार करने का प्रारंभ पाठ है। जो साक्षात्कार किये रहते उन्हीं को अध्यापन करने का अधिकार है। भगवान विभूतियों को जीवन में उतारने साधना को प्रार्थना कहते हैं

ज्ञानवान को आदर करना स्वयं ज्ञानी बनने की साधना है। स्वयं ज्ञानानुशील अनवरत प्रयत्न करना ही ज्ञानियों को आदर करने के तरीके हैं।

प्रचुर मात्रा में चुपचाप देना ही प्रचुर मात्रा में चुपचाप पाने का उपाय है। महान मनीषि का परिचय यह है कि वे निःशब्द रूप से सदा अपना सभी कुछ अधिकारियों को मात्रा में देते रहेंगे। दीन दुखियों के कष्ट निवारणार्थ सदा श्रम करते जायंगे और पवित्र प्रेम देकर समूह की सुरक्षा का भार स्वयं अपने ऊपर अनुभव कर सदा सब अभिभावक के रूप में कार्य करते नजर आयेंगे। इस प्रकार के महापुरुष ही मित्र लायक है।

ज्ञान की अपनी निजी रश्मियां है जो सदा सर्वत्र व्याप्त कर प्रवेश कर सबको ते बनाये रखने में सहायता पहुँचाती हैं।

ज्ञानी सब जीव जन्तुओं और पदार्थों को अपने प्रभाव में रख सकते हैं पर भी चीज ज्ञानी को अपने प्रभाव में रख नहीं सकती।

जिज्ञासा और अभिलाषा ही ज्ञानानुशीलन में व्यक्तियों को अधिकार देती जिज्ञासु ही ज्ञानी बन सकते हैं। प्रत्येक अभिलाषा अभिलषित वस्तुओं अस्तित्व का परिचय देने के लिये ही हृदय समुद्र में उदय होती है। ज्ञानी और समूह के दर्द भरे अरमानों और आवश्यकताओं को समझ सकता है। उन्हें सुलझाने के लिये उपयुक्त अधिकारी भी हैं।

ज्ञान-साधना से उत्पन्न संघर्ष से ही सुख प्राप्त किया जा सकता है। ज्ञा नव जीवन है।

ज्ञानियों का प्रत्येक शब्द, विचार और कार्य अज्ञानियों और दुखियों शक्ति और ज्ञान का रास्ता प्रशस्त करने के हेतु ही होता है।

ज्ञानियों की महिमा और महानता वर्णनातीत है। वे समुद्र के समान गहरे, के समान विशाल और सूर्य देवता के जैसे पूर्ण तेजस्वी और सर्व व्याप्त हैं महिमा वर्णन ही वेद मंत्रों में किया गया है। ज्ञान साक्षात्कार के लिये ही जी कार्य करना चाहिये।

ज्ञानियों की मैत्री पाना सब दुखों और चिन्ताओं से मुक्ति पाने का उपा ज्ञानी से बढ़कर सर्वशक्ति सम्पन्न और अजेय संसार में दूसरा कोई भी नहीं।

दान व्यर्थ नहीं जा सकता। संघर्ष और साधना से प्राप्त ज्ञान भी कभी नष्ट सकता। जो मदद दूसरों के लिये की जाती उसका कभी नुकसान नहीं होता

ज्ञान प्राप्ति के लिये जिन्हें प्यास है उन्हें शरीर सम्बन्धी आवश्यकताओं रना चाहिये। युवक वे हैं जो वस्तुओं को इच्छानुसार एकत्र कर सकते हैं अ लग भी कर सकते हैं। कवि वे हैं जो अच्छादित तथ्य के भीतरी रहस्य को साफ स कते हैं और उनका सही सही प्रतिपादन भी कर सकते हैं। तेजस्वी वे हैं जो ज्ञाना म्बन्धी साधना और तपस्या में अथक हैं। ज्ञानी वे हैं जो अज्ञानान्धकार को द नत् प्रयत्नशील और सफल है और नेता बनने के लिये भी वे ही योग्य हैं जो परमेश्वर के प्रतिरूप प्रतिनिधि हैं।

ज्ञान ही के द्वार पर विघ्न बाधाओं और शत्रुओं का संहार हुआ करता है। ज्ञा न प्राप्ति ही सब प्रकार के कल्याण मार्ग के हेतु बनता है। ज्ञान प्राप्ति का प्रथम प ब प्रकार से संचयरहित हो जाना है। दूसरा परिचय सब प्रकार की शक्ति हासिल और तीसरा परिचय सर्वजन हित और संरक्षण हेतु सबका अभिभावक म करना है और चौथा परिचय सारे ही मानव आश्रय, सुख और शक्ति के हेतु रण में पहुँच जाना है, उनका अनुगत बन कर जीवन व्यतीत करना है।

—लागल झुलनियां के धक्का

ले०—रामनारायण सिंह 'मधुर'
प्रकाशक—जगदीश नारायण, अमरावती
डा०—मन्दार विद्यापीठ, जि० भागलपुर (बिहार)
मूल्य — १ रुपया २५ न० पै०

'लागल झुलनियां के धक्का' सर्वतोमुखी प्रतिभा-सम्पन्न कलाकार श्री मधुर जी की वह पहली पर अनोखी रचना है जिसे पढ़ कर आप अपने को निश्चय ही कुछ देर के लिये भूल बैठेंगे जैसे संपेरे की जादूभरी बीन पर विकराल व्याल। सचमुच इसे पढ़ते ही आपकी आंखों में सावन भादो की झड़ी और होठों पर मधुर मुस्कान ठीक उसी प्रकार देखने को मिलेगी जैसे पावस अमा की सुनसान रजनी में चमकती चंचल चपला। आखिर क्यों नहीं ? सफल कहानी तो वही है जो तात्विक कसौटी पर अग्नि परीक्षा देने के बावजूद भी पाठक के दिल को झकझोर सके और सोचने को मजबूर करे। इस कथन को सत्य माना जाय तो मेरा दावा है कि अगर कहानी संसार को 'उसने कहा था', 'आकाश-दीप' 'कफन', 'हार की जीत,' 'एथेंस का 'सत्यार्थी', और सुहाग का शव' पर गौरव है तो उसे श्री मधुर लिखित, 'व वह पगली थी', 'जल रे दियना जल आक 'जोरू का गुलाम', 'मास्टर साहब' 'बूढ़ा 'अभागे की दुनियां', 'शोषण' और 'कहानी मूल्य', पर भी कम गौरव नहीं होना चाहि ऐसा इसलिये कि सरल एवं सरस भाष छोटी पर ऐसी महत्वपूर्ण कहानी आज दे को कम ही मिलती है। इसके सम्बन्ध

सतसैया के दोहरे अरु नावक के तीर
देखन में छोटे लगे, घाव करे गंभीर

अवश्य सत्य है। सभी कहानियों के पर करने के बाद हठात इस निष्कर्ष पर पड़ता है कि श्री मधुर, राहुलजी, प्रेम रांगेय राघव और यशपाल तथा अमृत की परम्परा के निर्भीक प्रहरी हैं।

यह संग्रह पठनीय ही नहीं संग्रह भी है। मैं तो सरकार से अनुरोध क

कौन विश्वास करेगा—

ले०—सियाराम शरण प्रसाद
प्रका०—कलाभारती, मुजफ्फरपुर
मू०—१ रु० ५० न० पै०

अन्याय की कब्र पर न्याय का भव्य भवन खड़ा करना ही किसी भी सच्चे कलाकार का परमधर्म होना चाहिए। अगर यह कथन सत्य है तो मैं कहूँगा कि 'कौन विश्वास करेगा' यशस्वी एकांकीकार सियाराम शरण प्रसाद की वह प्रसिद्ध कृति है जिसे पढ़कर कोई भी पाषाण-दिल-मानव भी आत्म विस्मृत होकर कह उठेगा – तिष्यरक्षिता निर्दोष है, निर्दोष है निर्दोष है। इसलिये कि कोई भी मां अपने पुत्र (सौतेला ही क्यों न हो) की आंखें, निकलवाने का दुस्साहस नहीं करती। उसमें भी सम्राट अशोक का प्रियप्रिय पुत्र कुणाल की आंखें। और वह भी कला की अनन्य उपासिका तिष्यरक्षिता द्वारा। असंभव सा जान पड़ता है। लेखक ने तिष्यरक्षिता को कलंकहीन बताने का सफल प्रयास किया है। कुणाल की आंखें निकालने का सारा दोष लेखक ने तिष्य के ममेरे भाई 'अग्रज' पर मढ़ा है—यही नहीं, परम सत्य सा लगता है कि, ऐसा तो प्रायः देखने को मिलता है कि दिन-दोपहर हत्या करनेवाले निर्दोष और निर्दोष व्यक्ति अपराधी करार दिये जाते हैं आज के न्यायाधीश के द्वारा न्यायालय में। लेखक ने अपना नवीन दृष्टिकोण रखकर सत्य का उद्घाटन किया है।

'कौन विश्वास करेगा' एकांकी साहित्य की एक अनुपम कृति है। छपाई, सुन्दर और बहिरावरण नयनाभिराम है लेकिन प्रूफ की अशुद्धियां कहीं-कहीं ही खटकती हैं। मूल्य उचित ही है।

महेंद्र 'मस्ताना'

पृष्ठ ५२ का शेषांश

इसको हजारों प्रतियां खरीद कर पुस्तकालयों, पुस्तकालयों तथा अन्य शिक्षा संस्थाओं को प्रदान करें जिससे वे इनकी भारतीय कला की कठोर करामात से लाभान्वित हो सकें।

और इस पुस्तक की उपयोगिता को देखते हुए इसका मूल्य नहीं के बराबर है। छपाई, सफाई सुन्दर तथा गेट-अप नयनाभिराम है। मैं यशस्वी कहानीकार श्री म... निकट भविष्य में ऐसी ही अनूठी ... की प्रतीक्षा में पलक पांवड़े बिछाये हूँ।

—महेंद्र 'मस्ताना'

पुस्तक

१ **उपनिषत्पीयूष**— पृष्ठ सं० १६१ प्रथम संस्करण १०००, मूल्य— २)

२ **गीतामृत त्रिवेणी**—पृष्ठ सं० २४१—द्वितीय संस्करण—मूल्य — १॥)

अनुवादक—श्री राजेन्द्र प्रसाद, एम० ए० बी० एल० साहित्यालंकार।

प्रकाशक—सर्वजीत प्रसाद श्रीवास्तव
सन्त साहित्य सदन
कटेयां (शाहाबाद)

मुद्रक—विमला शरण उपाध्याय
संसार प्रेस, आरा।

प्राप्ति स्थान :—
श्री राजेन्द्र प्रसाद एम० ए० बी० एल०
मनसा पाण्डेय का बाग,
आरा।

उपर्युक्त दोनो पुस्तकें मूल ग्रन्थ उपनि- और गीता का संस्कृत पद्य से हिंदी अनुवाद हैं। दोनों अनुवाद इतना सरल, सात्विक एवं सरस हैं कि एक बार पुस्तक हाथ में लेने पर छोड़ने की इच्छा नहीं होती। जब हमारी दृष्टि मूल ग्रन्थ की संस्कृत भाषा पद्यबद्ध कठिन एवं गहरे विषय पर जाती है तो लगता है हम दूर के तारे। सौन्दर्य तो देख रहे हैं पर उनके रहस्य को ठीक नहीं समझ पा रहे हैं। लेकिन ज्यों ही दृष्टि उस संस्कृत पद्य के बगल हिन्दी पद्यानुवाद पर जाती है तो लगता जैसा हम धरती के सुन्दर प्रसून की छटा अवलोकन ही नहीं, उसकी सुगन्धि भी प्राप्त कर रहे हैं। तब हमारा हृदय प्रसन्नता से नाच उठता है। पुस्तक से यह ज्ञात होता कि आंग्ल भाषा में भी अधिकार पूर्वक पद्यबद्ध अनुवाद अलग से प्रकाशित हुआ है। ऐसे अमूल्य अनुवाद के लिए विद्वान् अनुवादक श्रद्धा के पात्र हैं।

यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि ऐसे स्वस्थ साहित्य के पारखी इनेगिने ही हैं। आज के बाजार तो, क्या शारीरिक क्या मानसिक—सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों घटिया माल से भर गये हैं। ऊपर सजावट चाहिए भीतर चाहे कितना मैल रहे। सरकार का ध्यान भी स्व वस्तुओं के प्रचार प्रसार की ओर नहीं पाता। प्रस्तुत दोनों पुस्तकें संग्रहणीय नित्य पठनीय हैं। प्रकाशन भी सुन्दर से हुआ है।

आशा है हिन्दी के विद्वानों एवं भारतीय संस्कृतिप्रेमियों का ध्यान इन पुस्तकों की ओर जायगा।

यमुना प्रसाद

कर्नाटकी (नाटिका)

रचनाकार—रामेश्वर सिंह 'नटवर', प्रकाशक—जयन्त प्रकाशन चिरैली (गया

'कर्नाटकी पूरा पढ़ गया। लेखक ने अत्यन्त कुशलता पूर्वक कर्नाटकी का चरित्र-चित्र फलक पर खींचने का प्रयास किया है। कर्नाटकी का त्याग अप्रतिम एवं अतुलनीय है। कर्नाटकीकी कला पूजा में देश के प्रति अनुराग की भावना है, निष्ठा की अर्चना है और है देश के लिए बलिदान हो जाने की उत्कट अभिलाषा। इस रूप में कर्नाटकी इस साधारण जगत से ऊपर उठ कर भारतीयों के लिए श्रद्धा की जाती है। लेखक ने युगानुरूप राष्ट्रीय जगाने का स्तुत्य प्रयास किया है। पु समाप्ति के बाद रंगमंच, रूप सज्जा के बारे में जो निर्देश दिये गये पुस्तक की उपयोगिता और बढ़ ग

—रामनारायण सिंह "मधुर"

कवियों से—

चीन की बर्बरता तथा सीमा-विस्तार की नीति के प्रतिक्रिया स्वरूप भारत के जन-जन में राष्ट्रीय जागरण लाने के निमित्त 'हिन्दी-साहित्य-परिषद् की ओर से "आह्वान" (गीत संग्रह) अदभुत सज-धज के साथ प्रकाशित करने का निर्णय किया गया है। अतः सभी कवियों से अनुरोध है कि वे अपनी दो-दो कवितायें, जो राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत हों, पांच पांच रुपये के साथ अविलम्ब भेजने की कृपा करें। प्रकाशन के बाद प्रत्येक कवि को पांच रुपये की प्रतियां भेज दी जायँगी और जो अतिरिक्त आय हो सुरक्षा कोष में भेज दी जायगी। प्रकाशन सर्वथा सहयोग पर ही आधारित रचनाएँ तथा राशि निम्न पते पर चाहिए।

सम्पादक
"आह्वान"
हिन्दी साहित्य परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर (बि

मन्दार विद्यापीठ प्रेस में आनन्द शंकर माधवन द्वारा मुद्रित एवं हिन्दी निर्माण परिषद् द्वारा प्रकाशित

जून, १९६३

अंगरेजी राज्य के समय हमारे देश में कहीं गहरी खाई खोदी गई कहीं ऊँची दीवार खड़ी की गई। धनी गरीब के बीच खाई पड़ती गई शिक्षित अशिक्षित के बीच दीवार खड़ी की गई। गरीबी बढ़ी। ग्रामीण भावना का लोप हुआ। उद्योग धंधों का नाश हुआ। जमीन पर बोझ बढ़ा। तो उसकी टुकड़ियां होने लगीं और खरीद बिक्री का क्रम भी चल निकला। हमें आशा थी कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद उक्त खाई पाटी जायगी। और दीवार ढाह दी जायगी। संविधान के शब्दों से समता, न्याय, एवं स्वतन्त्रता का हमें कुछ आश्वासन तो मिला लेकिन व्यवहार में उल्टी गंगा बहने लगी। जनता ने देखा—वही शोषण, वही अन्याय एवं भ्रष्टाचार जो अंगरेजी राज्य में चल रहे थे, दिन दूने रात चौगुने बढ़ रहे हैं। करों का बोझ गरीब जनता पर इतना अधिक है कि उसकी रीढ़ ही टूट रही है। कुछ पढ़े लिखे सफेद पोशों का दिमाग आसमान में चढ़ गया है। स्वार्थान्ध होकर आज जातीयता एवं साम्प्रदायिकता के नये नये रंग घोलकर स्वच्छ एवं निर्दोष जनता पर पिचकारी चलाने में इन्हें लज्जा नहीं आती। किन्तु अब जनता भी जग रही है। आखिर जुल्म का अन्त तो होता ही है।

हिन्दी निर्माण परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर
बिहार

कवियों से—

चीन की बर्बरता तथा सीमा-विस्तार की नीति के प्रतिक्रिया भारत के जन-जन में राष्ट्रीय जागरण लाने के निमित्त 'हिन्दी-साहित्य की ओर से "आह्वान" (गीत संग्रह) अद्भुत सज-धज के साथ प्र करने का निर्णय किया गया है। अतः सभी कवियों से अनुरोध है अपनी दो-दो कवितायें, जो राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत हों, पांच रुपये के साथ अविलम्ब भेजने की कृपा करें। प्रकाशन के बाद प्रत्येक को पांच रुपये की प्रतियां भेज दी जाएँगी और जो अतिरिक्त आय वह सुरक्षा कोष में भेज दी जायगी। यह प्रकाशन सर्वथा सहयोग पर आधारित है। रचनाएँ तथा राशि निम्न पते पर आनी चाहिए।

"आह्वान"
हिन्दी साहित्य परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार)

हरिवल्लभ नारायण पारितोषिक

का चौथा आयोजन

प्रथम जनवरी से प्रारम्भ हुई वर्ष की पहली तिमाही के लिये इस पद्ने निबंध प्रतियोगिता का विषय रहेगा—'भारत-चीन सीमा-का समाधान'। निबंधकार अपनी रचना को ३००० शब्दों में सीमित इस प्रतियोगिता में भाग लेने वाले व्यक्तियों को योग्यता क्रम के अनुसार ४१, ३१, २१, ११ रुपये के पांच पुरस्कार प्रदान करने की व्यवस्था है। मौलिक, अप्रकाशित तथा अप्रसारित होना चाहिए। अनूदित नहीं ली जायगी। पुरस्कृत रचनाएँ प्राच्य भारती मासिक पत्रिका में सुविधानुसार प्रकाशित की जायंगी। ३० जुलाई तक निम्न पते पर निबंध जाना चाहिए। पुरस्कार की राशि पुरस्कृत रचनाकार को तुरन्त दी जायगी।

मंत्री,
हिन्दी निर्माण परिषद

पो०—मंदार विद्यापीठ,
जि०—भागलपुर, बिहार

प्राच्य भारती

(हिन्दी निर्माण परिषद् की मासिक मुख पत्रिका)
बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत
सम्पादक
वार्षिक चन्दा ५) • आनन्द शंकर माधवन • प्रति अंक ५० न० पै०

वर्ष ४] जून—१९६३ [अंक-४१

विषय-सूची

जनता की अँगड़ाई

शायद किसी ने यह सोचा भी नहीं थी कि अमरोहा फर्रुखाबाद तथा रा
उपनिर्वाचन में कांग्रेस उम्मीदवारों को बुरी तरह से पराजित होना पड़ेगा
सी दल में नहीं थे उनका यह विश्वास था कि बहुत थोड़े मत से हार या जीत
किन उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों में ५०-५७ हजार तथा राजकोट में १४ हजार मत
ग्रेस उम्मीदवार की हार होगी इसकी कल्पना तक नहीं थी। इस हार पर कांग्रे
र्वस्थ नेताओं द्वारा जांच की जायगी। फिर भी उसके सम्बन्ध में जो विचार
ट किये गये है उनसे पता चलता है कि कांग्रेस की गलत नीति के चलते
र हुई है। अब वह गलत नीति क्या है इसपर मतभेद हो सकते हैं। कुछ लोगों
ाल में सुरक्षा नीति की गलती नजर आती है तो दूसरे लोगों को कर नीति
ा श्रम नीति की त्रुटियां दृष्टिगोचर होती हैं।

एक तरफ जहां लोकसभा के चार चुनाव क्षेत्रों में उपर्युक्त तीन में कांग्रेस
है वहां दूसरी ओर जौनपुर निर्वाचन क्षेत्र में उसे जनसंघ के महामंत्री श्री दीन
ध्याय को भारी बहुमत से हराकर स्थानीय तपेतपाये अपने कार्यकर्ता श्री
को जिताने का गौरव प्राप्त हुआ है तथा उत्तर प्रदेशीय विधान सभा के दो नि
ों में एवं गुजरात के एक विधान सभा क्षेत्र में सफलता भी मिली है
ग्रेसजनों को कुछ संतोष तो अवश्य मिला है लेकिन उनके दिलों में धड़कन है।
रण यह है कि अमरोहा का चुनाव कांग्रेस के लिए प्रतिष्ठा का चुनाव था।
विचार धारा को समझने, उसकी व्याख्या करने और उसके अनुसार
ता आचार्य कृपालानी में है उतनी सन्त विनोबा और जयप्रकाश जी को छोड़कर
किसी में है। एक प्रकार से देखा जाय तो गांधी जी में असत्य एवं अन्याय के

में लड़ने की जो शक्ति थी उसे हम कृपलानी जी में पाते हैं। जनता आध्यात्मिकता
सुन्दर उपदेशों से भी अब ऊब चुकी है। वह आज जीवन के कठोर सत्य का दर्शन
रही है। जो नेता उसके दैनिक समस्याओं के हल का रास्ता दिखाता है वह उसी
पीछे चलने को तैयार है। वह आज परखने लगी है कि कौन क्या बोलता है और
करता है स्वतन्त्रता प्राप्ति के अठारह वर्षों के बाद उसने संसदीय उप निर्वाचनों में अ
मतों के द्वारा दुनिया को दिखा दिया है कि संकटकालीन अवस्था में भी लोकतान्त्रि
पद्धति पर इसकी आस्था है और अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्य का उसे ज्ञान है।

फर्रुखाबाद का चुनाव भी महत्वपूर्ण था। डा० राममनोहर लोहिया जी नेहरू जी
पुराने साथी हैं। उन्हें भूतपूर्व केन्द्रीय सूचना मंत्री डाक्टर केसकर से भिड़ना पड़ा। उन
विद्वता एवं निर्भीकता से प्रभावित होकर ही आज से पच्चीस वर्ष पहले जब नेहरू जी कांग्रे
के अध्यक्ष थे तो उन्होंने कांग्रेस के वैदेशिक मंत्री पद पर उन्हें नियुक्त किया
वैचारिक मतभेद के कारण ही गत आम चुनाव के समय दोनों पुराने साथियों के
संघर्ष हुआ। जनता की आवाज बुलन्द करने में लोहिया जी कृपलानी जी से पीछे
रहे। यही कारण है कि ये दोनों जन नेता शासक दल की सारी शक्तियों का मुकाबि
करते हुए भी भारी बहुमत से विजयी हुए।

कहा जाता है कि अमरोहा निर्वाचन क्षेत्र से मुरादाबाद के गांधी प्रोफेसर रामशरण
को कांग्रेसी उम्मीदवार बनाया गया था लेकिन जिस रोज निर्वाचन आवेदन पत्र दाखि
करना था उसी रोज कृष्ण मेनन साहब केन्द्रीय सिंचाई मंत्री हाफिज मुहम्मद इब्राह
साहब को यह कहकर लाये कि प्रो० रामशरण जी कृपलानी का मुकाबिला नहीं कर पा
अमरोहा में मुसलमान मतदाताओं का बहुमत है, इस लिए हाफिज मुहम्मद जैसा
उम्मीदवार ही उनसे टक्कर ले सकता है। उन्हें वे दिन याद थे जब १९४६ के चुनाव
जहां रफी अहमद किदवाई साहब हार गये थे, हाफिज साहब जिन्ना साहब के तूफानी
के बावजूद भी बेदाग जीत गये थे। हमारे दिल्ली के देवताओं को भी यह बात
गई। उन्हें क्या पता था कि भारत चीन युद्ध के बाद स्थिति बदल गई है। जिस प्र
गत तीन आम चुनावों में वे जनता के बीच काम करते थे उसी प्रकार इस बार भी उन्
अपनी सारी शक्ति लगाई पर इस बार उनके पांव की धरती खिसक गई।

गुजरात के राजकोट संसदीय उपनिर्वाचन पर भी देश की दृष्टि थी। इसमें स्व
पार्टी के महा सचिव श्री एम० आर० मसानी की जीत हुई है। कृपलानी जी ने
चुनाव के बाद ही मसानी साहब की मदद की। मसानी पुराने समाजवादी होने के
पहले से ही जनप्रिय थे। उनके सामने श्री जेठालाल जोशी १४ हजार से अधिक म
द्वारा पराजित हुए। उपनिर्वाचनों में जहां सर्वत्र कम्युनिस्ट पार्टी का समर्थन कांग्रेस

था वहां फर्रुखाबाद में जनसंघ एवं सोशलिस्ट पार्टी का गठबन्धन था, अमरो
ानी जी की ओर से प्रजा सोशलिस्ट जन संघ एवं स्वतन्त्र पार्टी भी काम क
और जौनपुर में जन संघ एवं सोशलिस्ट पार्टी का सहयोग था। जौनपुर में श्री
स्वा० श्री राजदेव सिंह की जीत का कारण यह है कि वे स्थानीय जनप्रिय
थे। यहाँ की जनता मत देने में किसी दल की नीति रीति पर उतना ध्यान
। वह योग्य एवं ईमानदार व्यक्ति की ओर ही अधिक आकृष्ट होती है। हमारे
बा ने भी योग्य उमीदवारों को मत देने का विचार व्यक्त किया था। इसक
ों पर कुछ असर है। अभी उनमें इतनी चेतना नहीं है कि किसी दल के सिद्ध
एवं कार्यक्रम को देखकर वे मतदान करें।

चुनावों में प्रायः जातीयता, साम्प्रदायिकता, और पैसे के प्रलोभन का सहारा
है। कांग्रेस सबसे बड़ी राजनीतिक संस्था है इस लिए सभी विचारशील
स करते हैं कि वही पहले अपने राजनीतिक आचरण को शुद्ध करने का विशेष उत्त
संभाले। हमें विश्वास है कि यदि कांग्रेसजनों की ओर से गलत साधनों का प्र
किया जायगा तो अन्य राजनीतिक दलवालों को भी अनुचित मार्ग का अवल
का साहस नहीं होगा किन्तु जहाँ येन केन प्रकारेण पद पर जाने की तृष्णा है
विवेक साथ नहीं देता।

ऐसी स्थिति में प्रश्न है, कौन मार्ग दर्शन करेगा। आज भारतीय राजनीति आ
राच्छन्न है। इसमें सन्देह नहीं कि विनोबा जी और जय प्रकाश जी जनता
रह कर जनता को आध्यात्मिक एवं नैतिक प्रकाश दिखा रहे हैं किन्तु देश में आ
ार्थिक एवं वैदेशिक समस्याओं की जो प्रचण्ड आंधी बह रही है उसमें उनका दी
ा सा, दिखाई पड़ता है।

भारत-चीन-युद्ध में भारतीय जनता ने जिस प्रकार की अँगड़ाई ली उसने दुनिया
त कर दिया। हमारे कृपलानी जी योग्य नेता की तलाश में थे। हमारे जय प्र
ो पहले तो आर्थिक विषमता को मिटाने के लिए विरोधीदल को मजबूत बना
री नीति को बदलना चाहते थे, बाद में जवाहर लाल नेहरू जी से ही यह आ
लगे कि सरकारी गद्दी छोड़ जनता के बीच रहकर वे जनता का नेतृत्व करें। अ
जी सोचते और कहते भी थे कि सरकार से मेरे हटने पर सरकारी काम ठीक से
ा, जो प्रथम श्रेणी के नेता हों वे ही आगे बढ़ें। इस युद्ध में जनता ने
ई दिखाया है वह इस बात का शुभ संदेशवाहक है कि हमारा देश योग्य नेतृ
भाव में पीछे नहीं रहेगा। पर इस उत्साह से जितना लाभ उठाना चाहिए वह अ
नहीं उठाया गया। युद्ध के समय जिस प्रकार का सहयोग एवं ऐक्य होना चाहि

अभीतक नहीं हुआ। जिनके हाथ में धनशक्ति है वे संकुचित हृदय से काम ले र धनशक्ति एवं जनशक्ति में अभीतक मेल नहीं बैठा। इस काम को करने के लि जो आगे बढ़ेगा वही जनप्रिय होगा। काश, उत्तर प्रदेश और गुजरात के उप निर्वाचन हमारे नेताओं एवं कार्यकर्त्ताओं की आंखें खोल देते, तो भारत में वह आध्या त्मिक एवं मौतिक शक्ति का सूर्योदय होता जिसके सामने अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय; साम्प्र दायिक, एवं जातीय भेदभाव का अंधकार सदा के लिए फट जाता और भारत में ह ही, विश्व में शांति एवं सुख का स्वच्छ वातावरण बनता।

हमारी हिन्दी—

अंग्रेजों की गुलामी से हम निकले। पर अभी अंग्रेजियत गयी नहीं जब हम गुलाम थे तो हिंदी हमारी राष्ट्रीयता का प्रतीक थी। राजगोपालाचारी जै नेता उसके प्रचारक थे। हिंदी प्रचार सभा नामक संस्था के द्वारा दक्षिण भारत में हिंद का प्रचार हुआ। हमें आशा थी कि देश के स्वतन्त्र होते ही हिंदी को हम राष्ट्रभा के पद पर प्रतिष्ठित करेंगे। पर हमारे अन्दर आज भी कुछ ऐसे लोग हैं जो अंग्रे अनिश्चित कालतक हिंदी के साथ राजभाषा के रूप में रखना चाहते हैं। खे है कि राजा जी आज अंग्रेजी के पूर्ण रूप से हिमायती हो गये हैं। अहिंदी क्षेत्रों नौकरी की भावना जगाकर और संकुचित राजनीतिक हित को सामने रखकर बातें इ प्रकार की जाती हैं कि कुछ अंग्रेजीदां लोगों के दिल दिमाग में अंग्रेजी की आवश्यकत बनी रहती है। इसका फल यह है कि जिस प्रकार हिंदी का प्रचार प्रसार होना चाहि और उसके लेखकों को उचित प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए उसका दर्शन नहीं हो पाता स्थिति यहां तक पहुंच गई है कि संसद में भाषा विधेयक द्वारा हिंदी के साथ सखी रूप में अंग्रेजी को '६५ के बाद भी रखने की गुंजाइश की गई है। इसमें सेठ गोविन्दद विधेयक का विरोध कर हिंदी के प्रति अपने कर्त्तव्य का जो पालन किया है उस लिए उनका हिंदी प्रेमियों द्वारा उचित सम्मान किया गया है, इस पर हमें हर्ष है मन्दार विद्यापीठ (भागलपुर) के हिंदी निर्माण परिषद के अधिवेशन में गत दिनांक १४-५-६ को डा० लक्ष्मीनारायण सुधांशु की अध्यक्षता में जो प्रस्ताव हिंदी प्रचार एवं विधेयक विरो पारित हुए हैं वे इसी अंक में प्रकाशित किये जा रहे हैं। हमारा विश्वास है कि हिं आन्दोलन के द्वारा ऐसा उद्योग किया जायगा कि '६५ के बाद राजभाषा के स्थान हिंदी के साथ अंग्रेजी की जरूरत ही नहीं रह जाय। इसमें सभी हिंदी प्रेमियों का सहयो आवश्यक है। साथ ही सरकार से भी हमारा अनुरोध है कि हिंदी सेवियों को पय सुविधा प्रदान कर हिंदी सेवा का वह अवसर प्रदान करे; क्योंकि यह प्रायः देखा जा है कि हिंदी के सच्चे सेवक धनाभाव में हिंदी के द्वारा जनचेतना बढ़ाने में असफल जाते हैं जो लोक तान्त्रिक सरकार के लिए एक कलंक की बात है।

दिल्ली पेकिंग मैत्री यात्रा दल—

स्वतन्त्रता संग्राम के महान सेनानी श्री शंकर राव देव के नेतृत्व में यात्रियों का मैत्री यात्रा दल दिल्ली, उत्तर प्रदेश से होते हुए अब बुद्ध की ...र में पद-यात्रा कर रहा है। इसमें भारत के ही नहीं आस्ट्रिया, जापान के ...ो तथा अमेरिका के दो पद यात्री भी शामिल हैं। इनमें दो महिलाएं भी हैं। इस... उद्देश्य अहिंसात्मक ढंग से सभी प्रकार के संघर्षों का अन्त करना है। इ...ार है कि शांति पूर्ण तरीके से ही किसी प्रश्न को सुलझाया जा सकता ...त चीन संघर्ष को भी यह बातचीत के द्वारा मिटाना चाहता हैं। यह ...र्दन के बीच इसलिए पैदल घूम रहा है कि वह महात्मा गांधी के आदर्शों पर ... कोशिश करें। भारत चीन की पुरानी मित्रता के आधार पर यह तनाव एवं ... दूर करना चाहता है।

अब देखना यह है कि इस दल को कहांतक सफलता मिलती है। यह कोलम्बो प्र... शांति पूर्वक वार्त्ता का एक अंग मानता है। इसके सम्बन्ध में कहीं कहीं गलत फ... पैदा हो गयी। इलाहाबाद में काले झंडे दिखाये गये। यह अशोभनीय है। जो ...े रास्ते पर चलने में असमर्थ हैं उन्हें विचार मतभेद रहते हुए भी इस के कार्य...ा नहीं देनी चाहिए।

जहां तक अन्याय का विरोध करने का प्रश्न है उसे तो हर हालत में करना ही चाहि... ...ता के मनोभाव को देखते हुए ही स्व० डा० राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था कि ची... ...े के विरोध में हिंसा-अहिंसा का प्रश्न नहीं लाना चाहिए। जो अहिंसा से मुकाब... ...ा में समर्थ हों वे अहिंसात्मक ढंग से विरोध करें पर जो उतनी दूर तक अहिंसा... ...ा में नहीं चल सकते उन्हें हिंसात्मक रास्ते से भी विरोध करना आवश्यक है। ...ाय के सामने चुपचाप बैठना कायरता है जो हिंसात्मक प्रतिरोध से भी निकृष्ट है। ... गांधी जी के मार्ग पर चलने वाले और उनकी खूबियों को बताने वाले वि...क्त या दल का हमें हृदय खोलकर स्वागत करना चाहिए। साथ ही देश... ...कयता, भ्रष्टाचार, तथा विषमता के सामने सिर झुका देना चीनी हमले को आमंत्र...ा है, यह बात हम सभी को अच्छी तरह से हृदयंगम कर लेना चाहिए।

आज देश में, जिस प्रकार की धांधली चल रही है, सच्चे और ईमानदार व्यक्ति... ...ए सम्मान पूर्वक जीवन व्यतीत करना कठिन हो गया है, स्वार्थ का नंगा ना... ...हा है तथा भारतीय संस्कृति की सारी विशेषताओं पर पानी फिर रहा है ... सभी बातों पर हमें ठंढे दिमाग से विचार करना है। जब तक हम समाज की ... घुसी हुई बीमारियों का इलाज नहीं ढूँढेंगे तबतक हमारी बाहर में न तो प्रति...ी और न देश की आन्तरिक समस्याएँ ही हल होंगी।

हम सभी शांति के इच्छुक व्यक्तियों से यह आग्रह करना चाहते हैं कि वे जहां भी करते हों, अपने क्षेत्र में उत्कृष्ट आचरण के द्वारा लोगों का ध्यान आकृष्ट करें, मत तैयार करें तथा अपने अभीष्ट लक्ष्य—शांति के स्थापनार्थ जन संघटन सुदृढ़ वें। दिल्ली-पेकिंग शांति पद-यात्री दल के प्रयत्नों की हम प्रशंसा करते हैं तथा की सफलता की कामना।

हिंदी के नर-रत्नों का निधन

गत दो-तीन माह के भीतर देखते ही देखते हमारे बीच से हिंदी के कई नर-रत्न बिदा हो गये। इससे न केवल हिंदी प्रेमियों को शोक है बल्कि भारत माता के सभी नर-नारी दुःखी हैं। बिहार के यशस्वी सरस्वती-पुत्र आचार्य शिवपूजन सहाय के बाद राजनेता एवं महान साहित्यिक डा० राजेन्द्र प्रसाद भी हमें मँझधार में छोड़कर चले गये। फिर डेढ़ माह के भीतर ही माहापंडित राहुल सांकृत्यायन जैसे प्रकांड विद्वान और श्री गुलाबराय जैसे उत्कृष्ट कलाकार हिंदी की गोदी से छिन लिये गये। सारा हिंदी जगत शोकाकुल हो उठा। उसके बाद भागलपुर स्टेशन पर लब्ध प्रतिष्ठ गीतकार गोपाल सिंह नेपाली हृद्रोग से चल बसे। गांधीवादी विचार धारा के स्तम्भ कविवर श्री सियाराम शरण गुप्त की मृत्यु वज्रपात सी लगी। विपत्तियां अकेले नहीं आतीं। हिंदी को नव परिधान से सुसज्जित करने वाले विख्यात शब्द शास्त्री डा० रघुवीर फर्रुखाबाद उपनिर्वाचन में जाते समय कानपुर के निकट दुर्भाग्यवश मोटर दुर्घटना के शिकार हुए।

हिंदी के इन सभी नर-रत्नों के स्थान की पूर्ति निकट भविष्य में होने की आशा नहीं है। अब हिंदी सेवियों पर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व का भार आ पड़ा है।

हम प्राच्य भारती परिवार की ओर से इन सभी दिवंगत महान आत्माओं के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं तथा उनके शोक सन्तप्त परिवार के प्रति अपनी हार्दिक समवेदना के द्वारा जनता तथा सरकार से उसके कुशल क्षेम पर ध्यान देने का निवेदन भी करते हैं।

ओ प्रहरी हिमवान

शिवगोपाल मिश्र
२५, अशोक नगर, इलाहाबाद—१

भारत के हिमवान !
बने तुम प्रहरी कब से !!
स्वयं जागकर,
अपलक रहकर
सुला रहे थे—
गंगा-यमुना की डोरी से
खींच खींच कर सुख-पलने को
अपने प्रिय भारत सुदेश को ।
फिर तो क्या था—
गाये किन्नर गान,
धरा ऋषियों ने ध्यान
रचे थे छन्द कवीशों ने
बतलाकर, तुझे महान—
ओ भारत के हिमवान !
जलधि ने कर अपना जलदान
बनाया था तुमको हिमवान
वज्र सा पुष्ट, न हो म्रियमाण ।
यही क्रम चला युगों तक, हन्त,
किन्तु सुन पड़ी शत्रु की हांक
शीश पर तेरे चढ़कर जो
रहा है हमको रह रह झांक ।
क्या हुआ, क्यों बन गये विनम्र ?
याद क्या भूली भारत की ?
सुलाते रहे जिसे तुम सदा
जागकर; स्वयं सो रहे आज !!
चाहते हो क्या शिशु असहाय
करे रक्षा खुद, तुम निरुपाय ।

—

जीवन और योग

श्री अरविन्द

प्रकृति की क्रियाओं की दो आवश्यकताएं हैं जो, ऐसा प्रतीत होता है, सदा ही मानव क्रिया के महत्तर रूपों में हस्तक्षेप करती रहती हैं। ये रूप या तो हमारे साधारण कार्य क्षेत्रों से संबंधित हो सकते हैं या उन असाधारण क्षेत्रों और उपलब्धियों की खोज कर रहे होते हैं जो हमें उच्च और दिव्य प्रतीत होती हैं। ऐसा प्रत्येक रूप एक ऐसी समन्वित जटिलता या समग्रता की ओर उन्मुख होता है जो पुनः विशेष प्रयत्न और प्रवृत्ति की विविध धाराओं में विभक्त तो हो जाती है, पर फिर एक अधिक विशाल और अधिक शक्तिशाली समन्वय में जुड़ भी जाती है। दूसरी बात यह है कि किसी चीज का रूपों में विकास एक प्रभावशाली अभिव्यक्ति का अनिवार्य नियम है; पर फिर भी वह समस्त सत्य और व्यवहार अत्यधिक कठोर ढंग से निर्मित होता है, पुराना पड़ जाता है और यदि अपना पूरा गुण नहीं तो कम से कम उसका एक बड़ा भाग तो खो ही देता है। इसे लगातार आत्मा की नूतन धाराओं से जीवन-शक्ति मिलती रहनी चाहिये जो मृत या मृतप्राय साधन में जीवन का संचार करती रहे तथा उसमें परिवर्त्तन लाती रहे; केवल तभी उसे नव-जीवन प्राप्त हो सकता है। सदा ही पुनर्जन्म लेते रहना भौतिक अमरत्व शर्त्त है। हम एक ऐसे युग में निवास रहे हैं जो भावी सृष्टि की प्रसव वे से व्याकुल है, जब विचार और कर्म सं वे समस्त रूप जिसके अन्दर उपयोि की या स्थिरता के किसी गुप्त गुण सबल शक्ति मौजूद है एक सर्वोच्च पर में से गुजर रहे हैं तथा उन्हें पुनः जन्म का अवसर प्रदान किया जा रहा है। व मान् जगत 'मीडिया' के विशालकाय क का दृश्य उपस्थित कर रहा है जिसमें कुछ डाल कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर गये हैं, उन टुकड़ों पर प्रयोग किये रहे हैं तथा उन्हें एकत्रित और पुनः त्रित किया जा रहा है जिससे या तो नष्ट होकर नये रूपों के लिये बिखरे उपादान जुटायें या फिर नव-जीवन करके पुनः प्रकट हो जायें अथवा वे अभी और जीवित रहना चाहते हैं रूपान्तरित हो जायें। भारतीय योग सार-तत्व में 'प्रकृति' की कुछ महान् शि की एक विशेष क्रिया या रचना है; स्वयं विशिष्ट एवं विभाजित है और वि प्रकार से निर्मित हुआ है। अतएव यह बीज रूप में मनुष्य जाति के भावी जीवन सक्रिय तत्वों में से एक है। यह अ

ों का शिशु है तथा हमारे इस आधु-
क समय में अपनी जीवन-शक्ति और
ा के बल पर जीवित बचा हुआ है। अब
उन गुप्त संस्थाओं और सन्यासियों की
ाओं में से बाहर निकल रहा है जिनमें
ा आश्रय लिया था, यह आजकल की
ेत मानवीय शक्तियों और उपयोगि-
ाों के भावी सघात में अपना स्थान
ा रहा है। किन्तु इसे पहले अपने
को पाना है, प्रकृति के जिस सामान्य
सतत उद्देश्य का यह प्रतिनिधित्व करता
उसमें इसे अपने अस्तित्व के गहनतम
ग को ऊपरितल पर लाना है तथा इस
आत्मज्ञान और आत्म परिचय के द्वारा
ा पुनः प्राप्त और अधिक विशाल सम-
ा को ढूँढना है। अपनी पुनर्व्यवस्था
कर लेने के बाद ही यह जाति के
व्यवस्थित जीवन में अधिक सरलता से
अधिक शक्तिशाली रूप में प्रवेश
केगा। इसकी क्रियाएँ यह दावा करती
ि वे जाति के इस जीवन को अन्तरतम
कक्ष तक अपने अस्तित्व और व्यक्ति-
की उच्चतम चोटी तक ले जायेंगी।
अगर हम जीवन और योग दोनों को
ा दृष्टिकोण से देखें तो सम्पूर्ण जीवन
तन या अवचेतन रूप में योग है।
ा इस शब्द से हमारा मतलब सत्ता में
क्षमताओं और अभिव्यक्ति के द्वारा
-परिपूर्णता के लिये किया गया विधि-
यत्न और मानव व्यक्ति का उस विश्व
ा और परात्पर सत्ता के साथ मिलन
से हम मनुष्य और विश्व में अंशतः

अभिव्यक्त होता हुआ देखते हैं। कि
इस जीवन को उसके बाह्य रूपों
जाकर देखते हैं तो वह प्रकृति का एक
योग दिखाई देता है, — उस प्रकृति
अपनी शक्यताओं की सदा-वृ
अभिव्यक्ति में अपनी पूर्णता प्राप्त क
तथा अपनी दिव्य वास्तविक सत्ता के
एक होने की चेष्टा कर रही है।
उसका एक विचारशील प्राणी है,
उसमें वह पहली बार क्रिया के उन
साधनों और इच्छाशक्ति से युक्त प्राणि
से रचना करती है जिनकी सहायता
यह महान् उद्देश्य अधिक द्रुत और श
शाली वेग से पूरा हो सकेगा।

जैसा कि स्वामी विवेकानन्द ने कहा
योग एक ऐसा साधन माना जा सकता
जो व्यक्ति के विकास को शारीरिक
के अस्तित्व के एक ही जीवन-काल में
कुछ वर्षों में, यहाँ तक कि कुछ महीनों
ही साधित कर दे। अतएव योग की
मान पद्धति उन सामान्य विधियों के
अधिक संकुचित पर अधिक सबल और
रूपों में संग्रह या संक्षेप से अधिक
और नहीं हो सकती जिन्हें महती
अपने विशाल उर्ध्वमुख प्रयास में शिथिल
पूर्वक पर विस्तृत रूप में तथा मन्द
से पहले से प्रयुक्त कर रही हैं। इनका प्र
करने समय बाह्य रूप से ऐसा अवश्य प्र
होता है कि सामग्री और शक्ति का अ
धिक क्षय हो रहा है, किन्तु इससे
अधिक पूर्ण हो जाता है। योग विष
यह विचार यौगिक प्रणालियों के यथा

और युक्तियुक्त समन्वय का आधार बन सकता है। क्योंकि तब योग एक ऐसी गुह्य और असामान्य वस्तु नहीं रह जाता जिसका 'विश्व-शक्ति' की सामान्य प्रक्रियाओं के साथ तथा उस उद्देश्य के साथ कोई संबन्ध नहीं होता जिसे वह अपनी बाह्य और आंतरिक परिपूर्णता की दो महान् गतियों में अपने सामने रखती है। बल्कि वह अपने आपको उन शक्तियों के एक तीव्र और असाधारण प्रयोग के रूप में व्यक्त करता है जिन्हें वह पहले ही अभिव्यक्त कर चुकी है या जिन्हें वह अपने अन्दर अपनी कम उन्नत और अधिक सामान्य 'क्रियाओं' में अधिकाधिक संगठित कर रही है।

यौगिक पद्धतियों का मनुष्य की प्रचलित मनोवैज्ञानिक क्रियाओं के साथ वही सम्बन्ध है जो विद्युत और वाष्प की स्वाभाविक शक्ति के वैज्ञानिक प्रयोग का वाष्प और विद्युत की सामान्य क्रियाओं के साथ है। और उनका निर्माण भी एक ऐसे ज्ञान पर आधारित है जो नियमित प्रयोगों, क्रियात्मक विश्लेषणों तथा सतत परिणामों के द्वारा विकसित एवं स्थापित हुआ है तथा जिसे इनसे समर्थन भी प्राप्त हुआ हैं। उदाहरणार्थ, समस्त 'राजयोग' इस ज्ञान एवं अनुभव पर आधारित है कि हमारे आंतरिक तत्व, संयोग और कार्य तथा हमारी शक्तियां अलग अलग की जा सकती हैं, उनमें विघटन हो सकता है, उन्हें नये सिरे से मिलाया जा सकता है तथा उनसे नये और पहले असम्भव माने गये कार्य कराये जा सकते हैं, या फिर ये सब स्थायी आंतरिक प्रक्रियाओं के द्वारा एक नये सामान्य समन्वय में रूपान्त[illegible] किये जा सकते हैं। इसी प्रकार 'हठयो[illegible]' भी इस बोध एवं अनुभव पर निर्भर कर[illegible] है कि जिन प्राणिक शक्तियों और क्रिया[illegible] की अधीनता हमारा जीवन स्वीकार कर ले[illegible] है तथा जिनके साधारण कार्य रूढ़ अ[illegible] अनिवार्य ढंग के प्रतीत होते हैं वे वश[illegible] की जा सकती हैं, उन्हें बदला जा स[illegible] है अथवा उन्हें रोका जा सकता है। सबके ऐसे परिणाम निकल सकते हैं जो अ[illegible] था संभव न होते, साथ ही वे परिणाम [illegible] लोगों को जो उनकी प्रक्रियाओं की युक्ति[illegible] युक्तता को नहीं पकड़ सकते, चमत्कार[illegible] भी प्रतीत होते हैं। यदि योग के कि[illegible] अन्य रूप में उसका यह गुण उतना प्र[illegible] न हो—कारण, ये रूप यांत्रिक कम अ[illegible] सहजज्ञानयुक्त अधिक होते हैं तथा 'भक्ति[illegible] योग' के समान एक दिव्य आनन्द के [illegible] 'ज्ञानयोग' के समान चेतना और सत्ता [illegible] एक दिव्य असीमता के अधिक निकट [illegible] हैं—तो भी ये हमारे अन्दर किसी प्र[illegible] क्षमता के प्रयोग से आरम्भ होते हैं; इ[illegible] ढंग तथा उद्देश्य ऐसे होते हैं जो उन[illegible] दैनिक सहज क्रियाओं में विचार में [illegible] आते। जो प्रणालियां योग के सामान्य [illegible] के अन्तर्गत आती हैं वे सब विशेष म[illegible] वैज्ञानिक प्रक्रियाएँ हैं जो 'प्रकृति'-सम्ब[illegible] एक स्थिर सत्य पर आधारित होती हैं। सामान्य क्रियाओं से ऐसी शक्तियां अ[illegible] परिणाम विकसित करती हैं जो सदा प्र[illegible] अवस्था में तो विद्यमान थे पर जिन्हें उस[illegible] साधारण क्रियाएँ आसानी से अभिव्यक्त [illegible]

...तीं, यदि करती हैं तो बहुत कम।
किन्तु, जैसा कि भौतिक ज्ञान में होता ... वैज्ञानिक प्रक्रियाओं की बहुलता की ...नी हानियां होती हैं,—उदाहरणार्थ, ...से एक ऐसी विजयशील कृत्रिमता उत्पन्न ...जाती है जो हमारे सामान्य मानव जीवन ... यंत्र के भारी बोझ के नीचे दबा ...ी है तथा एक प्रबल दासता के मूल्य ... स्वतंत्रता और स्वामित्व के कुछ रूपों ... क्रय करती है। इसी प्रकार यौगिक ...क्रियाओं के कार्य की और उसके असा-...रण परिणामों की भी अपनी हानियां ... बुराइयां होती हैं। योगी सामान्य ...न से अलग हटना चाहता है और उस ... अपना अधिकार खो देता है। वह अपनी ...वीय क्रियाओं को दरिद्र बना कर आत्मा ...धन खरीदना चाहता है तथा बाह्य ...ु के मूल्य पर आंतरिक स्वतन्त्रता को ...क्रय करता है। यदि वह भगवान को पा ...ा है तो जीवन को खो बैठता है, अथवा ... जीवन पर विजय प्राप्त करने के लिये ...े प्रयत्नों को बाहर की ओर मोड़ता ...ो उसे भगवान को खो देने का डर ...ा है। इसीलिये हम भारतवर्ष में ...ारिक जीवन और आध्यात्मिक उन्नति ... विकास में एक तीव्र प्रकार की असंगति ... हुई देखते हैं। यद्यपि आन्तरिक आक-... और बाह्य मांग में एक विजयपूर्ण ...वय की परम्परा और आदर्श को स्थिर ... गया है तो भी इसके अधिक उदाहरण ...े में नहीं आते। वस्तुत मनुष्य जब ...ी दृष्टि और शक्ति अंतर की ओर मोड़ता है तथा योग-मार्ग में प्रवेश... है तो ऐसा माना जाता है कि ... सामूहिक जीवन के महान प्रवाह और ... जाति के लौकिक प्रयत्न के लिये ... रूप से निकम्मा होगया है। यह ... इतने प्रबल रूप से फैल गया है और ... पर प्रचलित दर्शनों और धर्मों ने ... बल दिया है कि जीवन से भागना ... केवल योग की आवश्यक शर्त ही नहीं ... उसका सामान्य उद्देश्य भी माना जाता ... योग का ऐसा कोई भी समन्वय ... नहीं हो सकता जो अपने लक्ष्य में ... और प्रकृति को एक मुक्त और पूर्ण ... जीवन में पुनः संयुक्त नहीं कर देता ... जो अपनी पद्धति में हमारे आंतरिक ... बाह्य कर्मों और अनुभवों में समन्वय ... पित करने को अनुमति ही नहीं देता ... उसका समर्थन भी नहीं करता, इस ... दोनों अपनी चरम दिव्यता को प्राप्त ... लेते हैं। कारण, मनुष्य एक उच्चतर ... का उपयुक्त स्तर एवं प्रतीक है, ... ऐसे स्थूल जगत् में अवतरित हुआ है ... निम्न तत्त्व का रूपान्तरित होना, ... तत्त्व के स्वभाव को ग्रहण करना ... उच्चतर तत्त्व का निम्न तत्त्व में अपने ... अभिव्यक्त करना संभव है। एक ऐसे ... से बचना जो उसे इसी संभावना ... चरितार्थ करने के लिये दिया गया है ... भी उसके सर्वोच्च प्रयत्न की अनिवार्य ... या उसका समस्त और अन्तिम उद्देश्य ... हो सकता, न ही यह उसकी आत्मउप...

शेष पृष्ठ १५ पर देखें

आपमें अद्‌भुत गुप्त शक्तियों का भंडार छिपा है।

रामचरण महेन्द्र
नयापुरा—कोटा, राजस्थान

एक व्यक्ति था, जो अपनी पत्नी द्वारा "महामूर्ख" कहा गया, बुरी तरह तिरस्कृत और लांछित हुआ। बात उसके मन में लग गई। उसे बड़ा बुरा लगा। उसने पत्नी को छोड़ा और बड़ी आयु में विद्या-अध्ययन के लिए लग गया। दीर्घ काल के अभ्यास और अटल संकल्प के बल वह संस्कृत का महाकवि कालीदास बना। समग्र भारत उसकी प्रतिभा और विद्या से चमत्कृत हो उठा। उसके गुप्त मन में काव्यशक्ति का वृहत् भंडार छिपा हुआ था।

एक डाकू था, जिसकी जीविका का उपार्जन मुसाफिरों को लूटने और हत्याएं करने से चलता था। एक दिन एक मुनि उसकी पकड़ में आ गए। उसने उन्हें भी मारना चाहा पर उन्होंने विनीत भाव से उससे कहा, "जिन व्यक्तियों के पालन के लिए तुम इतने व्यक्तियों का पाप अपने ऊपर ले रहे हो, क्या वे भी तुम्हारे इस पाप में हिस्सेदार बनेंगे? जाओ, और अपने परिवारवालों से पूछो।" डाकू चला गया। उसने वह बात पूछी लेकिन उनका उत्तर सुनते ही उसका चेहरा उतर गया। उनका उत्तर था, "हम तुम्हारे आश्रित हैं। तुम्हारा कार्य हमारे लिये भोजन की व्यवस्था करता है। वह पाप से होती है या पुण्य से इससे हमें क्या प्रयोजन? पाप तो तुम्हारे ऊपर रहेगा।" यही बात उसके मन में बैठ गई। उसे ज्ञान हुआ। वह बदल कर महर्षि बाल्मीकि बन गया। उनकी गुप्त शक्तियां यकायक खुल गईं। उन्होंने संसार को अपनी बुद्धि से चमत्कृत कर दिया।

इसी प्रकार न जाने कितने महा पुरुष हुए हैं, जिन्हें किसी मानसिक आघात या आकस्मिक झटके से अपने गुप्त मन में सोई पड़ी गुप्त शक्तियों का ज्ञान हुआ, उनके जीवन का पृष्ठ बदला और वे अपने गुणों से संसार को चमत्कृत, विस्मित कर गये।

आप में भी असाधारण गुप्त शक्तियां मन, शरीर आत्मा की असंख्य शक्तियों का भंडार छिपा हुआ है। खेद है कि आप अपने को साधारण प्राणी मानते हैं। आप कभी भी ऐसा विचार नहीं करते कि इन दिव्य और आश्चर्यमयी शक्तियां छि

होंगी। सच मानिये, आप शक्तियों
वृहत् भंडार हैं।

घोड़ों को यदि अपनी शारीरिक शक्ति
ज्ञान हो जाय, तो वे हमारे वाहन न
हाथी अपनी शारीरिक ताकतों से
को अपने वश में ही कर लें, शेर
, रीछ, भैंसें बैल, खच्चर इत्यादि
ों को आपसी शक्तियों का ज्ञान हो
, तो वे हम पर राज्य ही करने लगें।
ये पशु हमारे लिये इतनी तेजी से
बड़े बोझ ढोते हैं, भारी काम करते
जो मनुष्य नहीं कर सकता। यदि वे
अपनी शक्तियों को मनुष्य के विरुद्ध
यें तो कदाचित वे हमें अपना वाहन
सकते हैं। हमारे ऊपर सवारी कर
ते हैं।

जिस प्रकार ऐसे उपयोगी प्राणियों
अपनी शक्ति का ज्ञान नहीं है, ऐसे
आपको भी अपनी शक्तियों का पता
है। हम अशक्त हो अंधेरे में भटक
हैं। हम रास्ता ढूंढ़ रहे हैं और पंगु
हुए हैं।

हमें अपनी शक्तियों का ज्ञान हो
तो हमें दुख, भय, चिंता, आपत्ति
द्वेष आदि का बिलकुल भी भान न
ये दुष्ट मनोविकार हमारा कभी भी
बिगाड़ सकें। हमारे स्वास्थ्य, मन
जीवन पर इनका कोई भी बुरा प्रभाव
। खेद है कि हम इन दुष्टों के
नी से वश में आ जाते हैं और अपना
श कर लेते हैं। हम अपना भाग्य
समझ लेते हैं, संसार हमें फीका फीका

मालूम होने लगता है। जीवन भार
प्रतीत होता है।

खेद है कि कभी तो हम ईश्वर
भरोसा करते हैं, कभी प्रारब्ध को
लगते हैं, फिर कभी "पुरुषार्थ, पुरु
कह कर गला फाड़ने लगते हैं। हम
स्थिर नहीं रहते। हमारा मन सदैव
प्रकार डांवाडोल रहता है। हम पूजा पा
करते हैं, पर जब अल्पकालिक और अ
मन से करने के कारण धन दौलत या
प्राप्त नहीं होती, तो हमारा विश्वास
पर से उठ जाता है। हम इन्हें
मानने लगते हैं

वास्तविक कमजोरी यह है कि
हमें स्वयं अपने ऊपर विश्वास नहीं
हम दूसरों को धनवान और ज्ञानवा
से रहते देख उन्हें सुखी समझते हैं
यदि हम उन्हें अन्दर से देखें तो ह
विचार बदल जायँ।

आप पूछेंगे कि लोगों के पास
साधन हैं, सुःख है, इतना वैभव, बड़
और अधिकार है, फिर दुःखी कैसे!
पर ईश्वर की बड़ी कृपा है, पर हम
प्रकोप या ईश्वर को अकृपा कैसे है! ह
पास ऐश्वर्य के साधन नहीं हैं और उ
बिना हम दुःखी हैं। और उनके पास
साधन हैं। इसलिए वे सुखी हैं।

परन्तु यह आपका केवल भ्रम है
ईश्वर का इसमें कोई पक्षपात नहीं है
ईश्वरीय शक्तियों, विपुल ताकतों, मान
शारीरिक आत्मिक सम्पदाओं का जो अ

है, वही वास्तव में आप में भी मौजूद यह याद रखिए कि सतत परिश्रम एक लक्ष्य सिद्धि से ही भाग्य बनता जनता की सतत इच्छा साधना से देश ता है। इच्छा एक प्रबल शक्ति है, जो ना मार्ग खोज ही निकालती है। मूर्खों प्रारब्ध एक बहाना मात्र है। वास्तव में ब्ध या तकदीर कोई वस्तु नहीं है।

जहां कार्य कारण का अटूट सम्बन्ध है, वहां प्रारब्ध और तकदीर मानना मूर्खता के अतिरिक्त क्या है ? जिसे विचार करने का मार्ग मालूम नहीं है, जो प्रत्येक कार्य के पीछे काम करने वाले कारण को नहीं जानता है, वही मूर्ख प्रारब्ध पर विश्वास करता है और जीवन के तूफानों से सदा डवांडोल रहता है। वही अपने कल्पित भूतप्रेतों, और बुरे ग्रहों का दास बना रहता है।

पृष्ठ १२ का शेषांश

अत्यधिक सबल साधन की शर्त्त या लक्ष्य सकता है। यह किन्हीं विशेष अवस्थाओं एक अस्थायी आवश्यकता तो हो सकता या यह एक ऐसा विशिष्ट अन्तिम प्रयत्न हो सकता है जो व्यक्ति पर इसलिये दा जाता है कि वह पूरी जाति के लिये क महत्तर सामान्य संभावना को तैयार कर के। योग का सच्चा और पूर्व उपयोग र उद्देश्य तभी साधित हो सकते हैं जब कि मनुष्य के अन्दर सचेतन योग, जैसे कि प्रकृति में अवचेतन योग होता है, वाह्यतः जीवन के साथ समान रूप से व्यापक हो जाय। और तभी हम मार्ग और उपलब्धि दोनों को देखते हुए एक बार फिर एक अधिक पूर्ण और आलोकित अर्थ में कह सकते हैं "समस्त जीवन ही योग है।"

स्वामी विवेकानन्द के जीवन की घटना पर आधारित

लाज लगती है

गोपाल कृष्ण मल्लिक
साधना केंद्र, राजघाट, वाराणसी (उ० प्र०)

"एक बार अपनी दयामयी मां से कहिए गुरुदेव !" वेदना भरे स्वर में कह कर न्द्र चुपचाप बैठ रहा।

परमहंस जी सोच में पड़ गए, क्या व दूं ! सच में बड़े संकट में पड़ा है यह परमशिष्य। अति कठोर दुरभिसंधि गुज़र रहा है इसका जीवन। पिता के ल मृत्यु ने युवावस्था में ही इस पर वार का कठिन भार डाल दिया है। नौकरी का भरसक प्रयत्न करता, पर मिलती । चारों ओर निराशा ही निराशा है। न्त ही शोचनीय परिवारिक स्थिति, न-वस्त्र तक का संकट। शोक संतप्त और भाई बहनों को अभावग्रस्त और पेट खाये देख इसे रहा नहीं जाता, असह्य वेदना से भर जाता है। किंतु करूँ ? एटर्नी के दफ्तर में कुछ दिन थोड़ा काम मिला। कुछ पुस्तकों का वाद भी किया इसने। ऐसे योग्य युवक काम न मिले तो क्या जवाब दे, विकलता में पड़े परमहंस जी सोचते रहे।

हजार प्रयत्न करने के बावजूद भी परिवारिक आवश्यकता और अभावों पूर्ति नहीं कर सका। मां और भाई ग का दारुणदुःख उससे देखा नहीं गया। सभी ओर से निराश और निपट-नि हो उसने आत्म हत्या करने का संकल्प लिया। किन्तु ईश्वरीय गति अपरम्पार नरेन्द्र के अन्तर्मन में एक प्रेरणा उठी आत्म हत्या करने के बजाय कोई शक्ति परमहंस जी के पास खींच लाई। अकुलाये मन से निःसंकोच कुछ भी संभव नहीं रहा।

नरेन्द्र के कातर कंठ से निकले स्व परमहंस जी के हृदय को छेद डाला था वे अवाक् होकर उसका मुंह ताक रहे उस स्निग्ध दृष्टि में परम स्नेह की व्याप्त थी। नरेन्द्र सिर नीचा किये बैठा अनायास परमहंस जी के मुँह से करु भीगे स्वर निकल पड़े।

'क्या कहूँ, यह दयामयी महामाया ...हारी भी तो मां है नरेन्द्र। तुम्हीं एकबार ...कर देख, सुनती है या नहीं।"

नरेन्द्र से कुछ भी उत्तर देते न बना। ...र्फ सिर नीचा किये बैठा रहा कुछ देर ...द धीरे से कहा—"किन्तु आपकी बात वह ...ल नहीं सकेगी।"

"पर ऐसी बात सोचने से कुछ लाभ ...हीं होगा।"

'नहीं, आज आपको कहना ही होगा, ...हीं तो... ।"

अगाध करुणा के सरोवर परमहंस जी ...के नेत्र सजल हो आये। उन्होंने रुद्ध कंठ ...से कहा, 'तू क्या जान सकता नरेन्द्र कि ...तेरी इस स्थिति के निवारण के लिये मैंने ...मां से कितनी प्रार्थना की है। लेकिन मां ...मुझ से यह नहीं सुनती। लगता है, वह ...चाहती है कि, तू स्वयं उससे कहो तुझ पर ...उनका वात्सल्य कम नहीं है नरेन्द्र। और ...उसका कंठ रुद्ध हो गया। फिर आंसू पोंछते ...हुए अगाध स्नेह भरे नेत्र से नरेन्द्र की ...ओर देखकर बोले आज मंगलवार है। रात ...को काली मदिर में जाकर मां को अपने ...संपूर्ण हृदय और निष्ठा से प्रणामकर और ...उससे जो कुछ मांगना हो, मांग ले। आज ...तुम्हें सब कुछ मिल जायगा। आज जितना ...भी लूटना हो लूट ले। मां का अक्षय भंडार ...क्षीण नहीं होगा।"

"सच ?"

"मांगकर तू देख भी तो सही।"

अत्यन्त आतुर मन से रात्रि के आगमन की प्रतीक्षा करता नरेन्द्र दक्षिणेश्वर के प्रांगन में बैठ गया। और सोचता र... समाधान यदि इतना सहज है, तो ... क्या बात है।

वह मंगलमयी मंगल-रात्रि धीरे-धी... आ पहुँची, जिसके आगमन की प्रती... करता विकलता में नरेन्द्र बैठा था। पर... हंसजी उसके पास आये और धीरे से ... "अब तू मां काली के मन्दिर में जा ... प्राणभर कर उसे प्रणाम कर। फिर जी... कर मांग ले।"

नरेन्द्र नतमस्तक हो मां काली के मं... की ओर चल पड़ा।

मन्दिर शून्य पड़ा था। भक्तगण अ... दान पाकर अपने-अपने निवास को चले ... थे। मन्दिर में प्रवेश करते ही नरेन्... देखा, निखिलधात्री आह्लाद और वात... की नित्य निर्झरिणी अपनी भुवन-मो... मुस्कान में विराजमान है। सौम्यागि... सुन्दरी, आर्त्तहारिणी, सहस्रनयनोज्ज... महामाया मां अभय मुद्रा में समारूढ़ ... उनके दरवार में न शोक, न दुःख, न ... व है।

निखिल क्षेममयी की मूर्ति के स... जाकर नरेन्द्र खड़ा हो गया और मां... मुख को तन-मन की इकाई में वह इस ... देखने लगा मानो मां के समर्पण में ... निःशेष हो गया हो। उसे लगा, जैसे ... रंध्र में मां की मुस्कान बैठ गई है—... उसके देह का प्रत्येक कण मां के वात्सल... डूब गया हो। ऐसी स्थिति में मुख... क्या कहे ? क्या मांगे ? क्या प्रा... करे ?

उसने सम्पूर्ण मन से मां को प्रणाम या और भक्ति विह्वल हृदय से कहने ा "मां! मुझे ज्ञान दो, भक्ति दो, ाग्य दो और दो—मानव के दुःख दर्द टाने की क्षमता। और दो मानवता के ए मर मिटने की शक्ति। देश और समाज लिए त्याग और बलिदान करने की ाा और शक्ति दो।" और उसी तन्म- ा में झूमता हुआ वह परमपुलक मुख- ल लिए वापस लौट आया।

देखते ही परमहंसजी ने पूछा "मां से ा लिए मनवांछित फल?"

नरेन्द्र निःशब्द आत्म विमूढ़ से परम- जी की ओर ताक रहा था।

तभी परमहंसजी ने कहा: "तुम शायद नहीं सके या भूल गए। जा, फिर जा र मां से मन की बात मांग ले। आज ा नहीं सका तो फिर कभी नहीं मांग गा।"

नरेन्द्र को जैसे कुछ स्मरण हो आया। सुच वह भूल भी गया मन की बात ाने को मां से। अपने परिवार के दुख ारण के विषय में कहने को तो वह भूल गया और अफसोस करने लगा।

वह फिर मन्दिर में गया। कनकोत्तम तकांता, दयाद्रविता, अखिलेश्वरी! जिसमें स्त ब्रह्माण्ड को अपनी कोख में धारण रखा है, उसके पास पहुंचते पहुँचते वह कुछ भूल गया, अपना सुध-बुध तक खो। और उसके मुंह से निकल पड़ा: "मां ज्ञान दो, भक्ति दो, वैराग्य दो, मानव ख-दर्द मिटाने की क्षमता दो, मानवता के लिए मर मिटने की शक्ति दो, दे समाज के लिए त्याग और बलिदा की प्रेरणा और शक्ति दो" और लौट

लौटते ही परमहंसजी ने तुरत "इस बार भी तो नहीं भूल गया?"

नरेन्द्र अवाक् था। क्षण भर बा से बोला "मां के पास जाते ही मैं स भूल जाता हूँ गुरुदेव! उस महिमामयी माया को देखते ही, उनमें खोकर कैसे सब कुछ भूल जाता हूँ।"

परमहंसजी थोड़ा कठोर हो गए स्वर्ण सुयोग गंवाकर जन्म भर पछ नरेन्द्र! एक बार फिर जा। अपने अच्छी तरह संभाल ले और स्थिर मनवांछित मांग उसके सामने रख।"

गुरुदेव का आदेश सिरोधार्य कर पुनः मंदिर की ओर मुड़ा। लेकिन परमाया मोक्षरूपिणी होकर बैठी सुदूरवर्ती आकाश से सन्निहित मृत्तिका उसका आसन विस्तीर्ण है। देह-बुद्धि में भी वही विराजमान है। मानो भी वही है, सुख-दुःख भोक्ता प्रा भी वही है और विश्व चैतन्य रूप वही है वह सर्वस्वरूप सर्वेश्वरी है। अनंत जलनिधि की भांति अपनी करुणा सर्वव्यापिनी मां की सृष्टि में — मां का ल्य कहां नहीं है! कहां उनका भरण है। यहां वहां —सर्वत्र मां के स्तन्य की धाराएं हैं। भला मां अपने पोष्य कभी उपेक्षित कर सकती है! यह दया हो गया! मां के वात्सल्य से

शेष पृष्ठ २१ परदेखें

हिन्दी उपन्यास में नारी

डा० सरला दुआ

[आधुनिक हिन्दी साहित्य में, उसका उपन्यास अंग, बड़ी गति से विकसित हो रहा है। नारी मानव जीवन की कोमलतम अनुभुतियों का सदैव केन्द्र रही है। साहित्य के सभी अंग नारी के अस्तित्व से ही अपने में रस और रोचकता का संचार कर पाते हैं।

आधुनिक हिंदी में नारी का चित्रण किस प्रकार और किन रूपों में हो रहा है, इस लेख में पढ़िए।]

भारतीय परम्परागत आदर्श के अनुसार विवाह नर-नारी संयोग की पुनीत वेदिका है, धार्मिक बन्धन है। विवाह के पश्चात नारी जीवन का केन्द्र उसका पति ही होता है, विवाह से पूर्व अथवा उसके पश्चात उसका पति ही प्रेमी होना चाहिए। नारी की प्रेयसी अथवा पत्नी रूप पृथक होने पर वह व्यभिचारिणी कहलाती है। स्वप्न में भी अन्य पुरुष की कल्पना मानसिक पाप होता है। इस प्रकार के मानसिक पाप से लोक-परलोक दोनों ही नष्ट हो जाते हैं। 'बिकसी के मजार' उपन्यास में इसी प्रकार की भावना अभिव्यक्त है—

"हिंदी नारी का केवल अपने पति से प्रेम करने का अधिकार है और पति की प्राप्ति विवाह के पश्चात् होती है। पति के अतिरिक्त अथवा पति प्राप्त होने के पूर्व किसी से प्रेम करना महान् पाप है इतना बड़ा जिससे लोक परलोक दोनों नष्ट हो जाते हैं।"

विवाह पश्चात् किसी अन्य पुरुष के प्रति प्रेम रखना भारतीय मर्यादा के अनुकू[ल] नहीं है, यह अवैधानिक तथा अमर्यादि[त] समझा जाता है।

परन्तु विचारों की क्रांति युग वि[शेष] का प्रतिनिधित्व करती है। विवाह के रू[प] गत विचार आज वही नहीं जो पहले और कदाचित आज के विचार भी [कल] दूसरा रूप ले लेंगे। आदर्श मानव-नि[र्मित] होते हैं, किसी दैवी विधान द्वारा या स्व[यं]मेव नहीं अवतीर्ण होते। आदर्श भी यु[गा]नुरूप परिवर्तित हुआ करते हैं हृदय [का] सहज—स्वाभाविक धर्म है किसी पर आ[सक्त] होना, उस पर नियन्त्रण कैसा? आस[क्ति] विवाह के पश्चात् भी हो सकती है [और] प्रेम का पात्र कोई भी हो सकता है अ[पने] पति के अतिरिक्त भी। प्रथम व्यापा[र] उचित अनुचित अथवा सामाजिक ब[न्धन] सब वृथा है, समाज के नियंत्रण उपचे[तन] मन पर सम्भव नहीं है। परिस्थिवश [यदि] प्रत्यक्ष हो जाय तो वह अपराध नही[ं] वरन हृदय की विवशता मात्र है। प्र

वन की ऐसी भावनाएं साहित्य में भी अभिव्यक्त हुई है। विवाह समाज का बन्धन और प्रेम हृदय का। विवाहित नारी और विवाहित पुरुष में प्रेम ही होना चाहिए, आवश्यक नहीं है। पति-पत्नी का विवश होना होता है। केवल इसीलिए कि वे समाज के समक्ष पति-पत्नी हैं, सात्विक प्रेम तो प्रेमिका ही दे सकती है—

"हर विवाहित नारी विवश प्यार देती
हर विवाहित पुरुष विवश प्यार पाता
निर्मल प्यार केवल वह नारी दे सकती
जो प्रेयसी होती है।"

नारी की अतृप्त काम-क्षुधा विवाह के बन्ध से मुक्त रहती है। विवाह समाज के लिए प्रदर्शन मात्र ही है। गुरुदत्त के 'सुबाहु' उपन्यास में मालती निष्फल काम प्रेरित नारी है। विनोद के प्रति उसकी आसक्ति थी, परन्तु विनोद उसे बहिन के रूप में विवाह न कर सका। प्रथम वंचिता होती विदेश जाकर दो विवाह करती है, परन्तु तब भी अतृप्त ही रही। विदेश से लौटकर पुनः अपने पोषित भावों को विनोद के सन्मुख रखती है। अज्ञेय के 'शेखर एक जीवनी' उपन्यास में भी शशि विवाहित है परन्तु हृदय का सच्चा अनुरागी नहीं है। प्रेमी से बहिन का सम्बन्ध हृदय की वृत्ति को न रोक सका। प्रेमी से प्रेरणा चाहता है और दबे रूप में तृप्ति भी।

जीवन में दृढ़ता कहां रह पाती है? परिस्थिति जीवन को मोड़ देती है। 'नदी के द्वीप' उपन्यास की पात्री रेखा स्वयं स्वीकार करती है..."बरसों मैं हेमचन्द्र कहलायी, उसका क्या अब अगले महीने से श्रीमती कहलाऊंगी...लेकिन मैं केवल तुम्हारी ही हूँ, और किसी की भी कभी हो सकूंगी..." प्रत्यक्ष रूप से दो व्यक्तियों की पत्नी हो चुकी है, हृदय से वह अपने प्रेमी की है। चन्द और रमेश परिस्थितियों के उसके जीवन में आये। प्रथम बार विच्छेद हुआ। वह भुवन के सम्पर्क उसे हृदय से वरण किया परन्तु विवाहिता बनी। विवाह की सारी उसके लिए क्या है, यह निश्चित नहीं परिस्थितियों के प्रवाह को रोकना लिए कठिन है, क्योंकि वह प्रवाह है।

प्रणय यदि विवाह में प्रतिफलित हो है तो नारी तृप्त रहती है अन्यथा होने पर वह पतन के गर्त में गिर है। अन्यथा अतीत के निष्फल प्रतिक्रिया स्वरूप काम तृप्ति के लिए विवाह करती है, फिर भी अतृप्त रहती ऐसी पतिताओं को जैनेन्द्र उदार दृष्टि देखते हैं, उसके पतन का कारण को समझते हैं। 'त्यागपत्र' की पात्री ने पतिव्रता के आदर्श को सन्मुख अपने पूर्णचरण की गाथा अपने पति कह दी क्योंकि वह अपने पति से दुराव नहीं रखना चाहती—"ब्याहता पतिव्रता होना चाहिए, उसे पति के सच्ची होना चाहिए, सच्ची बनकर

...पित हुआ जा सकता है परन्तु ऐसा न ...सका। उसी दिन से मुझसे किनारा ...ते चले गये, मुझे तो अब नाराज होने ...भी अधिकार न था! उन्होंने मेरी ...वाह करनी छोड़ दी।"

मृणाल एक दिन नगर की सड़ांद में ...च गयी। इसका उत्तरदायित्व समाज की ...दूरदर्शिता ही है। लेखक की रचनाओं से ...भास मिलता है कि नारी पति को पत्नी-... देकर और प्रेमी को नारीत्व अथवा स्नेह ...कर निर्दोष रूप से दूसरे की प्रेमिका बन सकती है।

समाज इस प्रकार के दृष्टिकोण से अभ... पूर्णतया सहमत नहीं है, भविष्य में विवा... हिता के प्रति उसके क्या विचार होंगे य... भविष्य का साहित्य ही बतायेगा, परन्... 'उखड़े हुए लोग' उपन्यास में लेखक की य... चुनौती अविस्मरणीय है, "सामाजिक विचा... में यदि आज के युग के साथ चलने ... सामर्थ्य न हो तो विवाह को व्यक्तिगत ... से ही देखा और निभाया जा सकता है... आज विवाह एक समझौता है।"

पृष्ठ १८ का शेषांश

...यों लुप्त हो गयी! कितना अज्ञानी हूँ ...। कितना बड़ा अज्ञान है मेरा! और फिर ...द्गद कंठ से वह माँ से अतिअंतर याचना ...करने लगा। "माँ! मुझे कुछ भी नहीं ...चाहिए। यदि दे सको तो वही दो जो अब ...तक माँग चुका हूं।"

बाहर खड़े परमहंसजी बड़ी उत्सुकता ... नरेन्द्र के निकलने की राह देख रहे थे। मन्दिर से निकलते ही उन्होंने उससे पूछा, "क्यों मांग लिया न सब कुछ इस बार!"

नरेन्द्र ने इस बार निर्भीकता से क... "मां से क्या कभी कुछ मांगा जा सक... है? मुझे तो यह सब कहने में ल... लगती है।"

"लाज लगती है!" और परमहंस ... के नेत्रों से आनंदवारि का निर्झर फूट प...

संस्कार और संस्कृति

श्री अगरचन्द नाहटा—बिकानेर

आजकल संस्कृति शब्द का प्रचार बहुत हो रहा हैं एवं दिनों दिन बढ़ता रहा है संस्कृति किसे कहते हैं इस में भी अनेक विद्वानों ने अपने विचार किये हैं। संस्कृत साहित्य में संस्कृति का प्रयोग नहीं मिलता, इसलिये यह प्राचीन नहीं है। अंग्रेजी 'कल्चर' के समानार्थक शब्द के रूप में संस्कृति का व्यवहार होने लगा है। संस्कृति के को व्यक्त करने वाला भारतीय ग्रन्थों न-सा शब्द प्रयुक्त है? इसके सम्ब- में भी कई विद्वानों ने अपने विचार किये हैं। कुछ विद्वानों की राय में ति शब्द जितना व्यापक है उतना व्या- शब्द प्राचीन काल में केवल "धर्म" ही भावों की दृष्टि से चाहे यह बात ठीक र संस्कृति शब्द पर हम गहराई से र करते हैं तो संस्कृत साहित्य में उनके वर्ती शब्द संस्कार और संस्कृत को ही हैं। संस्कारों का भारतीय जीवन में महत्व है। इसलिये मेरी राय में संस्कृत से सबसे निकटवर्ती सम्बन्ध संस्कार ही माना जाना चाहिये। संस्कृत और के कोश ग्रन्थों में संस्कार शब्द के अर्थ दिये हैं—शुद्धि, परिष्कार, सुधार रुचि, आचार-विचार को परिष्कृत तथा उन्नत करने के कार्य, मनोवृत्ति या स्वभाव का शोधन, पूर्व-जन्म की वासना या पूर्व-जन्म, कुल-मर्यादा, शिक्षा-सभ्यता आदि का मन पर पड़ने वाला प्रभाव।" वैसे संस्कृत शब्द का अर्थ भी संस्कार से मिलता-जुलता है। कोष ग्रन्थों में इसका अर्थ-शुद्ध किया हुआ परिमार्जित, परिष्कृत, सुधारा हुआ, ठीक किया हुआ, संवारा हुआ आदि किया गया है। इन अर्थों पर विचार करने से ऐसा लगता है कि मनुष्य में जो दोष हैं उनका शोधन करने के लिये और उसे सुसंस्कृत करने के लिये ही संस्कारों का विधान किया गया है। इसलिये सुसंस्कार मानव जीवन के उत्थान के लिये बहुत ही आवश्यक और महत्वपूर्ण है।

संस्कार की प्रारम्भिक भूमिका पर विचार करने से मालूम होता है कि उसका प्रारम्भ अभ्यास से होता है। बहुत बार के अभ्यास के बाद हम किसी भी कार्य करने के आदी हो जाते हैं तब उसे अभ्यास से आदत कहा जाता है। आदत के बाद जब वह प्रवृत्ति हमारे जीवन के साथ ओत-प्रोत हो जाती है तब उसे 'संस्कार' की संज्ञा मिलती है और संस्कार के बाद जब वह कार्य सहज प्रवृति में परिणित हो जाता है तब उसे स्वभाव कहते हैं।

संस्कार डालना पड़ता है क्योंकि दोषों

ोजन प्रयत्न पूर्वक ही होता है; पर
त व्यक्ति की सहज क्रिया है और
छूटना बहुत ही कठिन होता है। इसी
ग कहते हैं—कि क्या करें? हमारा
भाव ही ऐसा पड़ गया है, कि इसे
नहीं सकते। आदत भी डाली जाती
र उसका छूटना भी कठिन होता है,
स्वभाव जितना नहीं। आदत बुरी और
दोनों प्रकार की होती है। यद्यपि आगे
संस्कार को भी अच्छा और बुरा
ने हुए कुसंस्कार और सुसंस्कार शब्द प्रच-
हो गये। पर जब हम संस्कार शब्द
प्रकृति पर विचार करते हैं तो लगता
उसके साथ 'कु' और 'सु' लगाने
आवश्यकता नहीं क्योंकि उसका अर्थ
द्धि और दोषों का परिष्कार है। इस
कुसंस्कार कहने की उपेक्षा बुरा अभ्यास
ज्यादा उचित है और संस्कार शब्द
व्यवहार अच्छाई के लिये ही होना
ये।

जीवन के साथ संस्कारों का घनिष्ट सम्ब-
। वर्तमान जीवन से पहले भी इस जीव
संस्कार थे, जिन्हें हम पूर्व संस्कार या
जन्म के संस्कार कहते हैं। और इस
के समाप्त होने के बाद भी संस्कारों
परम्परा अगले जन्म-जन्मान्तरों तक
है। एक व्यक्ति का संस्कार केवल उसी
जीवन से ही सम्बन्धित नहीं है पर उसके
वंश या कुल पर भी उन संस्कारों का
व पड़ता है, जिसे हम कुलपरम्परा या
कुल-संस्कार कहते हैं। इस तरह हम देखते
कि संस्कार की परम्परा व उसका प्रभाव
बहुत ही व्यापक है और गहरा भी।

प्राणियों का जीवन दोषों और गुणों
से मिला-जुला चेतन प्रवाह है इसलिये दोषों
का परिहार और गुणों का विकास करना
अत्यावश्यक है। यद्यपि सम्पूर्ण दोषों से
रहित होना तो बहुत ही कठिन है और
प्रयत्न करने पर बहुत से दोष दूर किये जा
सकते हैं। इसी प्रकार सम्पूर्ण गुणों से
सम्पन्न होना, यह भी अत्यन्त कठिन है
पर प्रयत्न करके से गुणों का अधिकाधिक
विकास किया जा सकता है और संस्कारों
का उद्देश्य एवं कार्य भी यही है। जहां
दोषों की अधिकता रहेगी वहां गुणों का
विकास बहुत ही कम और कठिनाई से होगा
और गुणों के समुचित विकास के बाद
बहुत से दोष तो अपने आप मिट जायेंगे
जो थोड़े से रह जायेंगे उनका प्रभाव भी
मन्द पड़ जायगा अर्थात दबे हुए से रहेंगे।

प्रयत्नपूर्वक दोषों का परिष्कार या
परिहार करने की सम्भावना सबसे अधिक
मनुष्य जीवन में ही है। क्योंकि दोष और
गुणों का विवेचन जितना गहराई के साथ
मनुष्य कर सकते हैं, पशु-पक्षी आदि अन्य
प्राणी नहीं कर सकते। हम विचारों से
बनते हैं और बिगड़ते हैं इसलिये विचारों
की शुद्धि या चित्त शुद्धि की बहुत ही आव-
श्यकता है और सारे धार्मिक अनुष्ठान चित्त
शुद्धि के लिये ही किये जाते हैं। व्रत
का पालन भी एक संस्कार है। उसके द्वारा
हम पापों से बचते हैं और सत्कर्म करने
में दृढ़ संकल्पी बनते हैं, इसलिये जैन-धर्म
में वैदिक १६ संस्कारों को उतना मह

ं दिया गया जितना कि व्रत ग्रहण को
ग गया है। जैन-धर्म की नित्य क्रिया
प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान का महत्वपूर्ण
ान है। जो कुछ भी गलती हमने की है
ति दोष या पाप हम से हो गया है उसे
ः और संध्याकाल स्मरण करके उसके
मन में खेद या पश्चाताप करना और
ष्य में वे पाप मेरे से न हों इसलिये
के प्रति पूर्ण जागरूक रहना ही प्रतिक्रमण
। प्रत्याख्यान एक तरह से प्रतिज्ञा है कि
क बुरे काम में नहीं करूँगा या अमुक
छे काम को मैं नित्य प्रति और नियमित
से करूँगा। इन दोनों आवश्यकों में
कार शब्द का मूल भाव समाया हुआ है।
तरह आसपास के वातावरण को ठीक
ने के लिये या शुद्ध करने के लिये और मन
शुद्ध एवं पवित्र बनाने के सामायिक,
ुविंशति स्तव, गुरु-वन्दन, और कायो-
इन ४ आवश्यकों को महत्व दिया गया
सामायिक के द्वारा सावद्य अर्थात् पाप
ं का त्याग करके समभाव या वीतराग
स्था का अभ्यास किया जाता है।
तुर्विंशति स्तव' द्वारा २४ तीर्थकरों—
ापुरुषों का स्मरण करके उनके जैसा बनने
लिये भावना की जाती है और अपने में
कमजोरी है उसे दूर करने में महापुरुषों
आदर्श जीवन बहुत ही सहायक हो सकता
गुरु-वन्दना के द्वारा गुणीजनों के प्रति
दर भाव व्यक्त करते हुये उनके सत्संग
र सेवा की भावना पुष्ट की जाती है।
ोत्सर्ग के द्वारा शरीर से आत्मा भिन्न
मैं शरीर नहीं हूँ, शुद्ध चैतन्य-स्वरूप
आत्मा हूँ, इस भाव को दृढ़ किया जाता है।
इस तरह षडावश्यक व्रत ग्रहण ही वास्तवि
संस्कार है जिनके द्वारा आत्मा दोषों
मुक्त होती है और विशुद्ध बनकर प
मात्म-स्वरूप को प्राप्त करती है। अर्था
संस्कारों के द्वारा आत्मा को परमात्मा ब
का पथ सुगम और प्रशस्त होता है औ
यही जैन-संस्कृति का सार है।

संस्कारों का सबसे अधिक महत्व है
चित्तशुद्धि में। मन की मलीनता ही सब
अधिक दुःखदायी है। काया की मलीनता
तो पानी एवं साबून से दूर की जा सक
है पर मन तो न जाने कहां-कहां भटक
रहता है और प्रतिपल आराम चिन्तन द्वा
दूषित होता रहता है। इन्द्रियों का प्रे
भी वही है इसलिए उसी की शुद्धि का नि
न्तर ध्यान व प्रयत्न रहना चाहिए। यो
सूत्र में चित्तवृत्ति निरोध को योग कहा ग
है पर निरोध करना सहज कार्य नहीं है
इसलिए पहले चित्त को अशुभ से हटाकर शु
प्रवृतियों में लगाना उचित है क्योंकि चि
को कुछ न कुछ अवलम्बन तो चाहिए ही
यदि उच्च आदर्श एवं ध्येय में हम निरन्
लगे रहेंगे तो बुरी बातों की ओर हमा
ध्यान ही नहीं जायगा और यदि कभी ग
भी तो बुरा करने का समय ही नहीं मिलेगा
गीता में कहा है कि जहांतक जीवन है कु
न कुछ प्रवृति तो करनी ही पड़ेगी पर आ
क्ति का त्याग कर दें तो विष निकल जा
के साथ हमें नुकसान नहीं पहुँ
सकता। आत्म निरीक्षण प्रतिपल, नहीं त
प्रतिदिन ही करते रहना जरूरी है। उस
द्वारा जो दोष हमारे हों उनका निवार
एवं जो गुणों की कमी है उसकी पूर्ति कर
जायं यही संस्कृति है।

गीत

विद्या भूषण मिश्र,
श्री जे० एन० एम० अध्ययनशाला, दौलत गंज, छपरा

कारवां चल रहा, है जमीं चल रही
मौत की छाँव में जिन्दगी पल रही—
ना मंजिल मिली, ना किनारा मिला
डूबते को न कोई सहारा मिला
- कि वक्त ने ऐसा है जादू किया
ना हम मिल रहे, ना डगर मिल रही।
प्यार मांगा अगर दर्द पूरा मिला
चाही थोड़ी ख़ुशी गम का सागर मिला
—कि अश्कों की ऐसी झड़ी लग गई
हम बह गये दास्तां बह रही।
ना दर्द कम हुआ, ना दवा ही मिली
धड़कनों बीच तमन्ना जवां हो चली
—कि अरमानों के घने बादलों में
सितारे डूबे, चांदनी डूब रही।
सपनों की दुनियां सज ना सकी
डोली दुलहिन की द्वारे उतर ना सकी
—क्वांरी रहे कब तलक जिन्दगी ?
सूनी सेजर से उमर कह रही।

आज सरस बरसात सखी री !

रामनारायण सिंह "मधुर"

रिमझिम रिमझिम बूंदों वाली, आज सरस बरसात सखी री!
पुलक उठी धरती की छाती,
मिली पिया की जैसे पाती।
हरी भरी तरुवर की डाली, धुले-धुले सब पात सखी री!
आज सरस बरसात सखी री!

प्रियतम के पथ पलक बिछाती,
चली कहां सरिता मदमाती?
लहराता भावों का सागर, मन में मन की बात सखी री!
आज सरस बरसात सखी री!

हुई पूर्ण सब की अभिलाषा,
पर मेरा चातक मन प्यासा।
चमक रही है चपल चंचला, सिहर रहा तन गात सखी री!
आज सरस बरसात सखी री!

दूर हटो ओ लाल चीन

रामेश्वर सिंह 'नटवर'
कला कुञ्ज, चिरैली, गया

दूर हटो ओ लाल चीन ! यह वीर पुरुष का देश है ।
चल न सकेगी हिंसा गौतम का पावन उपदेश है ।।
समझो नहीं कि खड़्ग गला हम केवल तकली गढ़ते हैं ,
संकट में हम राष्ट्र धर्म की रणवेदी पर चढ़ते हैं ,
प्रेम रज्जु के लिए हमारी तकली निशिदिन चलती है
जहां अनय की बात म्यान से तलवारें भी कढ़ती हैं ,
सर्वनाश के ग्रास ! दूर हो , यह अर्जुन का देश है ।
दूर हटो ओ लाल चीन यह वीर पुरुष का देश है ।।
यहां न्याय के लिए स्वत्व हंसकर बलिदान किया जाता है ,
अत्याचार मिटाने वालों को सम्मान दिया जाता है ,
सत्य अहिंसा के रक्षक गांधी ने हमें पुकारा है ,
देश तुम्हें क्या नहीं प्राण से भारतवासी प्यारा है ,
वृद्ध हिमालय है शंकर का प्रलयंकर वेश है ।
अरे कायरो पता नहीं क्या नेता जी का देश है ??
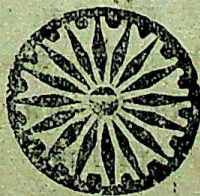
गीत

प्रेम कुमारी ठाकुर

चालीस कोटि कंठों को मां अब जय जय कार ले।
बसुन्धरे निज सन्तति के इस जीवन का उपहार ले ॥
चांद सूर्य है आते जाते निशदिन तुमको शीष झुकाते।
चमक सितारे निशा गगन में चूँदर मणियों जड़ी उढ़ाते ॥
नित नूतन ऋतु देती मोहक परिधानों का है उपहार ।
पवन पुष्प पल्लव भर अंजुल तुम पर नित्य चढ़ाते।
इन्द्रधनुष के सम सुहाग को अपने आज सँवार ले।
चालीस कोटि कंठों का मां अब यह जय जय कार ले॥
गिरवर तेरे शीष मुकुट सा हरियाली परिधान है ।
मां तेरे प्रति निश्वासों में मलियानिल मुस्कान है ॥
आज जलधि की लहर लहर चरण चूमती प्रतिपल तेरे।
दिशा दिशा खग बन्दीगण सा गाता गौरव गान है ॥
मानसरोवर के दर्पण में मुख छवि जरा निहार ले।
चालीस कोटि कंठों का मां अब यह जय जय कार ले।
नयनों की तेरी दिव्य दृष्टि में अर्जुन का है शरसंधान।
भृकुटी की तीखी मरोड़ में है तीक्ष्ण तीर कमान ॥
आंचल में शान्ति नींद सोये जो शूरवीर बलवान।
जन जन में जाग उठेगा मां यदि तेरा होगा अपमान ॥
मिटने को जो प्रतिपल तत्पर उनका माता प्यार ले।
चालीस कोटि कंठों का मां अब यह जय जय कार ले।
वीर नारियां इस धरती की सिंह केशरी जननी हैं।
बचपन में ही पुत्रों के मन प्रेम देश का भरती हैं ॥
वीरगति पाने पर पति के साथ चिता में जलती हैं ।
शत्रु के हित वही नारियां रणचण्डी भी बनती हैं ॥
हम सबके अन्तर का माता यह प्रणाम स्वीकार ले।
चालीस कोटि कंठों का मां अब यह जय जय कार ले ॥

——

मां कौन और बेटा किसका

रक्षपाल 'राकेश'

दिलीप सिंह को धानसुख के मिडिल स्कूल में हेडमास्टर के पद पर नई बहाली हुई थी। धानसुख हरियाणा क्षेत्र में एक साधारण सा गांव है। गांव में अधिकतर बिश्नोई जाति के लोग रहते हैं। बिश्नोई जाति में नगण्य से हैं। इनकी वेशभूषा हरियाणा के जाटों और राजस्थान के राजपूतों से मिलती जुलती है।

दिलीप सिंह लायलपुर जिले का रहने वाला था। भारत विभाजन के समय उसे अपनी जन्म भूमि छोड़ कर दिल्ली आना पड़ा था। रेखा भी इसी सिलसिले में अपना सारा परिवार खपा कर अपने बड़े भाई ... के साथ किसी प्रकार दिल्ली पहुँच सकी थी। बहुत दिनों के बाद दिलीप सिंह को यहां नौकरी मिली थी। गांव छोटा सा ... है। रहने की बड़ी दिक्कत थी। गोपाल बिश्नोई ने दिलीप सिंह को अपने घर के पास वाले नोहरे में जगह दे दी थी। शायद उसने यह समझ कर जगह दी थी कि मास्टर जी मेरे बेटे सूरज को अधिक पढ़ाएंगे। नोहरे का आंगन बहुत बड़ा था किन्तु उसमें घर एक ही बना हुआ था साथ में एक छोटा सा रसोई घर था। आंगन में गोपाल की सांढ़नी और भैंसे बँधती थीं। दिलीप सिंह रेखा के साथ किसी तरह इसी में रहने लगा था।

दिलीप सिंह आरम्भ से ही शहर की चहल-पहल में रहता आया था। ग्राम जीवन उसे अजीब सा लग रहा था। वह न तो गांव के किसी आदमी से अधिक बोलता और न किसी के यहां आता जाता ... शायद वह गांव के लोगों को अपने समान सभ्य न समझता था। स्कूल-टाइम के बाद वह रेखा के पास बैठ कर पंजाब-विभाजन के समय की दुःखद घटनाओं को दुहराता या गोपाल के लड़के को साथ लेकर ... खेतों में घूमने निकल जाता। गांव से ... उसे बहुत सी चीजें आकर्षक प्रतीत ... वैसे तो वह इलाका मरुस्थल के समान है। वहां बबूल और जांटी के पेड़ों के अतिरिक्त दूसरे पेड़ नहीं है। गांव के आस ... तालाब के किनारों पर पीपल या नीम ... एक आध पेड़ हैं। वर्षा के दिनों में मरुभूमि का दृश्य भी बहुत सुहावना हो ... है। दूबों की हरीतिमा में खिलते हुए ... के छोटे छोटे उजले फूल ऐसे लगते ... वसुधा ने अपनी हरी चूनरी में रुपहले ... जड़े हों। बूंदों से आर्द्र ठण्डी ठण्डी ... पर खेलती हुई मखमल सी मुलायम बहुटियां कंचन वर्णा कामिनी के अ... उरोजों पर बिखरी हुई मूंगों की ल...

गोपाल की स्त्री को कोई सन्तान नहीं उसने सन्तान के लिए बहुत डोरे बनवाए। साधु महात्माओं से अनुनय की। जड़ी बूटियों में पैसे लुटाए। से कुछ नहीं हुआ। एक दिन किसी पर वह गोपाल को साथ लेकर कुल-देव जांमा जी के तीर्थ स्थान पर जाने गई। वहां श्रद्धा से जांमाजी बड़ा नारियल चढ़ाया और पुत्र के वरदान माँगा।

लौटती बार वे लाल किला और कुतुब देखने दिल्ली रुक गए। प्रातः ब्राह्म- में वे यमुना स्नान कर लौट रहे थे, में एक बच्चे के रोने की आवाज दी। गोपाल ने सड़क से थोड़ा सा हट देखा एक पेड़ के नीचे किसी देव-मढी चबूतरे पर पीले रेशमी दुपट्टे में लिपटा जात शिशु अकेला पड़ा रो रहा है। ने वहां जाकर उसे उठा लिया। की स्त्री उसे जांमाजी का बरदान कर घर ले आई। अँधेरे घर में होगया। नाम भी सूरज रखा। सूरज आठ वर्ष का हो गया था। माता दोनों की आंखों का तारा था वह। उस पर प्राण देते थे। जब वह गोपाल की को "माऊ" और गोपाल को बावा कर पुकारता तो संसार का सारा सुख कर दोनों के हृदय में अजस्त्र रूप प्रवाहित होने लगता।

छुट्टी का दिन था रेखा ने चाय पराठे तैयार कर लिए थे। दिलीप सिंह और सूरज खाट पर बैठे चाय पी रहे थे और पराठे खा रहे थे। गोपाल भी वहां आ गया।

"रेखा गोपाल जी को भी चाय दो" गरम गरम चाय की चुस्की लेते हुए दिलीप सिंह ने कहा।

भले मास्टर जी हूँ यो तातो पाणी के पी उ नी....." गोपाल ने रेखा की ओ देखते हुए कहा।

"इनके घर में दो दो भैंसे दूध देत हैं। ये तो दूध पीते है चाय से क्यों कलेज जलाने लगे।" रेखा की वाणी में व्य था।

'हूँ तो इ बो छाराबड़ी की प्याली भर पीर आयो हूं काल जो ठण्डो हो रयो है गोपाल ने मुस्करा कर कहा।

'अच्छा दो पराठे ही खा लो" दिली ने आग्रह पूर्वक कहा।

"मास्टर जी" सूरज मुँह बना व बोला—"भले मास्टरजी इतनो बावो चा पर वठा खाग मै निखरा करै है वित भा सुखी बाजर की रोटी जिन्दहा ही खाज हैं।....."

भले मास्टरजी यो होरलो मोत बदमा होग्यो है।..

गोपाल ने मुस्करा कर कहा।

... ...

"आपका भण्डाफोड़ जो कर दिय रेखा ने हँसते हुए कहा। 'गोपाल जी तो यह बच्चा बहुत ही प्यारा लगता है ज कभी यह नहीं आता तो घर और मन दोन सूने लगते हैं।'

"इसकी बोली इतनी मीठी है कि सु सुनते मन नहीं भरता दिन भर हम दोन

ो हँसाता रहता है" दिलीप सिंह ने
नेह भरे स्वर में कहा।

"भले मास्टरजी म्हार टाबरया तो होया
ानी पर यो होरलो जाम्मा—जी म्हान
दयो .."

गोपाल के स्वर में प्रसन्नता थी।

"मैं समझी नहीं" रेखा ने विस्मय से
छा।

"आजकल भोली भाली लड़कियां जवानी
नशे में अवारा लड़कों के चक्कर में आकर
ुत बड़ी भूल कर बैठती हैं। उस भूल का
रिणाम यह सूरज है" दिलीप सिंह की वाणी
ं गम्भीरता थी।

जैसे रेखा को किसी ने जोर से धक्का
दिया हो।

"क्या सूरज गोपाल जी का बेटा नहीं"
हमे हुए स्वर में रेखा ने फिर पूछा"

"नहीं ? यह गोपाल जी को यमुना के
ास-पास शरत पूर्णिमा के दिन कहीं पड़ा
मला था।" दिलीप सिंह ने धीरे से कहा।

— ...

रेखा को मस्तिष्क में जोर से चक्कर
ाने लगा। "कब ? कैसे ?" सूरज की ओर
ात्सल्य पूर्ण दृष्टि डालते हुए रेखा ने फिर
छा।

"शायद कोई भीरु कुमारी इसे पैदा
ोते ही किसी देव मढी के चबूतरे पर रख
कर चली गई थी।" दिलीप सिंह ने उदासीन
ाव से कहा।

"जांमाजी म्हार खातर यो होरलो मेज्यो
ो ...मास्टरजी", गोपाल के स्वर में उत्साह
नेह और अपार प्रसन्नता थी।

"कितनी अच्छी होगी इसकी
जिसने इतने सुन्दर पुत्र को
दिया ! किन्तु कितनी अभागिनी
वह जो ऐसे प्यारे पुत्र को पाकर भी
प्यार न कर सकी" दिलीप सिंह के द
भाव से कहा।

रेखा की चेतना लुप्त सी होने लगी
उसने पास में बैठे सूरज को कसकर
से लगा लिया। आंखों से अविरल अश्रु
बहने लगी।

"तुम रो रही हो" सूरज ने अपनी
अँगुलियों से रेखा के आँसू पोंछते
पूछा।

रेखा अपने को संभाल न सकी। उ
गला रूंध गया होठ कांपने लगे।

"रेखा खालसा कालेज लायलपुर
पढ़ती थी। सुरजीत सिंह उसके सम्पर्क
आ गया। वह जवानी के नशे में बहुत
भूल कर बैठी। पाकिस्तान बनने पर
दिल्ली आना पड़ा। कुछ दिनों के
उसने एक बच्चे को जन्म दिया। समाज
भय से उस बच्चे को यमुना के पास
पेड़ के नीचे देव-मढ़ी के चबूतरे पर रख
चली आयी। यह बात वह किसी को
न सकी। समय बीतता गया धीरे धीरे
की पुरानी स्मृतियों के अंगारों पर
की परत जम गई, और उसने अपने माँ
विशेष आग्रह से दिलीप सिंह के साथ वि
कर लिया था।"

ये सब बातें रेखा के दिमाग में
बार चक्कर काटने लगी थी। रेखा अ

शेष पृष्ठ ४० पर देखें

आज का युद्ध और अन्तिम विजय

मदनमोहन सिंह
राज्य आयोजक, ग्राम रक्षादल, बिहार, पटना

चीन के अचानक और बर्बर आक्रमण ...ा और लद्दाख क्षेत्रों में भारतीय ...ओं जो मुंह की खानी पड़ी, वह शोक, ... और अपमान की बात होते हुए भी ... लिए हतोत्साह की बात नहीं है। ...सी भी आक्रमण के लिये जो पूर्ण तैयारी ...थ अपनी सुविधानुसार अचानक धावा ...ता है, प्रारम्भिक लड़ाइयों में सफलता ...कर लेना स्वाभाविक ही है, किन्तु ...से उक्त लड़ाई के अन्तिम परिणामों ... भविष्यवाणी करना युक्तियुक्त नहीं ...। इतिहास इस बात का साक्षी है कि ... द्वितीय विश्व-महायुद्ध की प्रारम्भिक ...इयों में हिटलर मैदान पर मैदान मारता ...आ आगे बढ़ता गया, किन्तु उसकी वह ...य क्षणिक रही और अन्ततोगत्वा उसे ...य ही मिली। स्थायी और अंतिम विजय ...सत्य-पथगामी उस आत्मविश्वासी शूर ... को मिलती है जो साहस और धैर्य ...थ हर स्थिति का सामना करने में ...नी तन्मयता दिखाते हुए हर तरह की ...नी करने के लिये सदा तत्पर रहता है।

चीन के एक पक्षीय युद्ध-स्थगन से ...मा क्षेत्रों में अभी शान्ति का वातावरण ...द्यमान है, किन्तु कहा नहीं जा सकता कि सुषुप्त ज्वालामुखी की तरह विस्फोट बन कर किस क्षण यह सम्पूर्ण वातावरण को अशान्तमय बना दे। चीन अमानवीय कार्य में रत एक ऐसा देश है जिसे अन्तराष्ट्रि... मान्यताओं तथा शान्तिमय सह-अस्तित्... के सिद्धान्तों से व्यवहारतः कोई वास्ता नह... है। "हिन्दी चीनी भाई-भाई" के दाम... में उसने वृहद् सैनिक तैयारियां की औ... अचानक धोखे से भारत पर आक्रमण क... मुँह में राम और बगल में छूरी वाली कहाव... को अक्षरशः चरितार्थ किया। अब, स्थि... ऐसी है कि अपनी अखण्डता और स्वतंत्र... को अक्षुण्ण बनाये रखने का संकल्प ले... वाले किसी भी स्वाभिमानी देश के लि... चीन की मीठी बातों के भुलावे में आ... अपने आप को धोखा देना है। अपनी सुवि... धाओं और लाभों को देखते हुए अ... वक्तव्यों में गिरगिट की तरह रंग बदल... उसका सहज स्वभाव बन गया है। भार... चीन-सीमा सम्बन्धी उसके वक्तव्यों को लीजिए, कभी उसमें स्थिरता नहीं रही। इन सारी बातों को मद्देनजर रखते हु... नेफा क्षेत्र से चीनी सेना की वापसी हमें कदापि ऐसा भ्रम नहीं होना चाहिये चीन को अपनी भूल का भान हो गया है

उनका प्रायश्चित सेना की वापसी के में वह कर रहा है। वर्त्तमान आक्रमण चीन द्वारा अपनायी गयी नीतियों का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होगा कि बढ़-बढ़कर पीछे हटना और पीछे हट-कर पुनः आगे बढ़ना उसका निजी रण रहा है। ज्ञातव्य है कि २० अक्टु-१९६२ को नेफा के ढोला चौकी पर आक्रमण करने के पूर्व भी दो बार आगे बढ़े थे। सबसे पहली बार रात थागला दर्रे से वे ढोला चौकी के आए किन्तु बिना किसी प्रकार का पहुंचाये वे स्वतः वापस हो गये। पुनः बार वे पहले से अधिक संख्या में और इस बार भी कोई छेड़खानी नहीं वे स्वयं तीतर-बितर हो गये। इस यह कहा जा सकता है कि नेफा सेना की वर्त्तमान वापसी भी उनकी सामरिक चाल हो हो। संभव है कि ऋतु में हिमालय की पहाड़ियों के इस आकर लड़ना आवागमन या अन्यान्य बाधाओं को देखते हुये उन्हें उपयुक्त नहीं हो और इसीलिये अपनी सेना को बुला रहे हों। क्योंकि, यदि इस कार्य उनकी नेकनीयती रहती तो निश्चय ही क्षेत्र से भी वे अपनी सेना को पीछे। अतः यह आवश्यक है कि चीन की तरह की चालबाजियों का सामना के लिये की जानेवाली तैयारियों में क्षणिक युद्ध-स्थगन से किसी भी तरह की शिथिलता नहीं आने दी जाय। किन्तु सही तैयारियों के लिये यह जरूरी है कि चीन की रण-नीतियों का यथोचित ज्ञान प्राप्त किया जाए। माओत्से-तुंग की रण-नीति है:—

"घेरो, किन्तु हमला नहीं करो, हमला करो किन्तु घेरो नहीं।" वस्तुतः, किसी सेना को घेर लेने पर उस पर हमला करने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती है; घिरी हुई सेना थोड़े समय के बाद स्वयं समर्पण करने को वाध्य हो जाती है। इसी तरह आक्रमण के साथ-साथ किसी सेना को घेरना भी लाभदायक नहीं होता. इसमें आक्रमक को ही विशेष हानि उठाने की सम्भावना रहती है। अब यह सैनिक अधिकारी के प्रत्युत्पन्न मतित्व और सामान्य बुद्धि पर निर्भर करता है कि स्थानीय परिस्थितियों को देखते हुये खास स्थानों में किस तर-कीब से काम ले। नेफा क्षेत्र में चीनियों ने इन दोनों ही तरकीबों का पूरा-पूरा उपयोग किया। विदित है कि सेला और बमडिला पर आधिपत्य करने के बाद चीनियों ने आगे बढ़कर उस सड़क को ही काट डाला जो आगे की चौकियों से सम्बन्ध स्थापित करने का मुख्य स्थल मार्ग थी और उसके फलस्वरूप हमारी सेना का मुख्य भाग चीनि-यों द्वारा घिर गया। रसद पानी के अभाव में घिरी हुई सेना के सामने दो ही विकल्प रह गये या तो लुक-छिपकर वापस भागें अन्यथा चीनियों के सामने आत्म समर्पण करें।

नेफा और लद्दाख की लड़ाई अब तक सीमित क्षेत्र की लड़ाई रही है किन्तु भार-तीय उत्तरी सीमा पर चीन द्वारा जो सा

...तैयारियां अभी हो रही है और चीनी ...ओं में जैसी हठधर्मिता और युद्धोन्माद ...आ रहा है उससे निकट भविष्य में ...से भयंकर युद्ध की संभावनायें स्पष्ट ...ती हैं। उस स्थिति में नेफा और लद्दाख ...कहें संपूर्ण भारत या यों कहें संपूर्ण ...की समर भूमि में परिणत हो जा सकता ...इसमें आणविक युद्धों को चपेट में संपूर्ण ...का ही सर्वनाश की कगार पर पहुँच ...। बड़े युद्धों में हमले और घेरे की ...में व्यापक रूप में प्रयोग में लायी ...ती है। सैनिकों को आगे के मोर्चों पर ...ये रखने के साथ-साथ उन तमाम सा- ...से उनका सम्बन्ध-विच्छेद करने की ...की जाती है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष ...में उन्हें शक्ति प्रदान करते हैं। अत: ...उन प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष साधनों ...सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर लेना ...श्यक है।

सैनिकों की शक्ति प्रत्यक्षतः उनके मो- ...और हथियार में निहित होती है। ...ऐसे सैनिकों को उनसे लड़कर हराने ...अपेक्षा उनके भोजन और हथियारों को ...कर हराना आसान होता है। इस कार्य ...लिये कई तरह के हाथकण्डे अपनाये जाते ...—

क—फौजी छावनियों को ध्वस्त करना;

ख—आपूर्त्ति केन्द्रों को बर्बाद करना;

ग—आवागमन के साधनों जैसे रेल, ...तार, सड़क, पुल, हवाई अड्डे, आदि को ...तहस-नहस करना,

घ—हथियार या अन्यान्य युद्धोपयोगी वस्तुओं का उत्पादन करने वाले कारखानों को विध्वन्स करना; तथा

ङ—अन्न की मण्डियों तथा खेतों की फसलों को बर्बाद करना।

सैनिकों की शक्ति अप्रत्यक्षत: देश के नागरिकों की हार्दिक सहानुभूति तथा सक्रिय योगदान पर निर्भर करती है। अच्छी से अच्छी सेना भी नागरिकों के सहयोग के अभाव में अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने में असमर्थ हो जाती है। अत: नागरिकों को भी अनेक विधियों से गुमराह करके उस देश की आन्तरिक शान्ति सुव्यवस्था को अस्त-व्यस्त करने की भरपूर चेष्टा की जाती है। ऐसी कुछ चेष्टाओं के रूप इस प्रकार हैं:—

क—दलालों तथा पचमांगियों के द्वारा नागरिकों को फोड़ने और राष्ट्र विरोधी कार्य करने हेतु उन्हें उभाड़ने का प्रयत्न करना;

ख—झूठी अफवाहों को फैला कर लोगों को गुमराह करना,

ग—जहां-तहां हवाई जहाज से बम गिराकर, और जोर जुल्म करके लोगों को आतंकित करना; तथा

घ—भोजन, वस्त्र, पानी आदि के साधनों को अणु गैस, जहर आदि द्वारा नष्ट कर दैनिक आवश्यकताओं से लोगों को वंचित करना, ताकि उनका सामान्य जीवन अस्त-व्यस्त हो जाये और वे दुश्मन के पंजे में जाने के लिये एकदम लाचार हो जायें।

अब सैनिक शक्ति को बर्बाद करने हेतु अपनाये जाने वाले हथकंडों को जानने के बाद उनसे बचने के उपायों को अमल में लाना एक महत्वपूर्ण कदम है। यह क...

हीं जा सकता कि धोखेबाज चीन की अप-नीयत क्या है ? वह जलनवश भारत की ती हुई प्रतिष्ठा पर आंच लगाना तथा की आर्थिक प्रगति को अवरुद्ध करना हता है अथवा सम्पूर्ण देश पर अपनी विजय ाका लहराना चाहता है। तार्किक दृष्टि विचारने पर यह विश्वास नहीं होता चीन ने बिना किसी महत्वाकांक्षा के ज भारत की बुराई करने की नीयत ही आक्रमण किया है। चीन की मौजूदा जनीतिक गतिविधियां भी इसी बात की ष्टि करती हैं।

किन्तु, इस संदर्भ में हमें यह भ्रम नहीं ना चाहिये कि चीन का यह सैनिक अभि-न केवल राजनीतिक सिद्धान्तों तक ही मित है। विदित है कि तिब्बत की सत्ता ही आधिपत्य करके चीन ने संतोष की स नहीं ली, अब वहां की संस्कृति ही समाप्त कर देने के अमानुषिक कार्य वह प्रवृत्त है। इस प्रकार, भारत पर एक ीर संकट उपस्थित हुआ है और देश की जात स्वतंत्रता तथा सदियों की प्राचीन कृति की सुरक्षा का महान् उत्तरदायित्व रतीयों के कन्धों पर है। हमें यह नहीं चना है कि सुरक्षा का कार्य स्थायी सेना काम करने वाले देश के केवल कुछ लाख क्तियों पर ही है। स्वतंत्र देश का हर गरिक उसका सैनिक होता है। हां, अन्तर ही है कि फौजी टुकड़ियों में लड़ने वाले म पंक्ति के सैनिक हैं तो कल-कारखानों त खलिहानों और दफ्तरों में काम करने ले द्वितीय पंक्ति के। जहां तक प्रथम पंक्ति का प्रश्न है उसके सैनिक तो मोर्चे को सम्भालते हुए अपने शीशों आहुति दे ही रहे हैं, अब द्वितीय पंक्ति सैनिकों को कमर कसकर तैयार होना और एक जबरदस्त स्वयंसेवक सेना का संग करना है। सरकार द्वारा नागरिक सुरक्षा सम्बन्धित कई तरह के प्रशिक्षण कार्य सम्पन्न हो रहे हैं। अतः देश के हर स नागरिक को उन कार्यक्रमों में भाग ले अपने आपको इस योग्य बना लेना है हर मुसीबत का मुकाबला तथा आवश्यकता नुसार दुश्मनों से लोहा लेने का कार्य वे दक्षतापूर्वक कर सकें। यह जरूरी कि चीनियों से लड़ने के लिये सबों सीमावर्ती फौजी चौकियों पर ही जा पड़े। लड़ाई का विस्तार होने पर देश हर ग्राम और हर नगर युद्ध-मोर्चा बन सकता है। दुश्मन हमें पराजित करने लिये हवाई हमले करेगा और तरह-तरह गोले बरसायेगा। कुछ गोलों से आग लगे और कुछ से भूकम्पन होगा। इतना ही न कुछ गोलों से गैस उत्पन्न होंगे। हवा जहाजों से वे गैस की फुहार यानी नन्हीं बूँदों की वर्षा करेंगे। इन गैसों प्रभाव लोगों पर कई रूपों में पड़ेगा, कुछ से आंसू आयेंगे, कुछ से अन्धेरा हो जाय और कुछ से दम घुटने लगेगा, अतः हवाई हमलों से अपनी हिफाजत करने तरीकों का पूरा-पूरा अभ्यास कर लेना और हमला होने पर दृढ़ता के साथ उन मुकाबला करना है। किन्तु, हवाई हमले अपनी हिफाजत कर लेने तक ही हम

दायित्व सीमित नहीं है बल्कि, उसके दुश्मन की अगली कार्रवाइयों का जम- प्रतिरोध करना है। हवाई हमले से तो ही और आतंक का ही काम हो सकता विजय पताका लहराने के लिये तो की स्थलीय सेना ही कूच करेगी। दुर्भाग्य से जब कभी ऐसी नौबत आए हर जगह उनका सामना करना होगा। ला करने का दो ढंग हो सकता है एक हिंसात्मक और दूसरा हिंसात्मक। अहिं-सात्मक पथानुगामी असहयोग करेंगे। किंतु नी जैसे बर्बर लोगों पर अहिंसा के क दबाव का कोई असर नहीं होगा। हमारे सामने एक ही विकल्प होगा— त्मक तरीकों से उनका सामना करना। ों के हर चौराहे पर, गलियों की हर पर और खेतों की हर मेड़ पर जबर- मोर्चेबन्दी करनी होगी और देश का नागरिक स्वैच्छिक सैनिक के रूप में नियों से जूझ पड़ेगा। पग-पग पर होने इन जबरदस्त प्रतिरोधों से बलवती चीनी सेना का भी जनाजा निकल गा और उल्टे पांव वापस भागने के लिये विवश होना पड़ेगा। इतिहास के छात्र बात से अवगत हैं कि विगत विश्व-युद्ध में स्वतंत्रता प्रेमी रूसी नागरि-कों ने इसी तरह नाजी सेना का मुकाबला र उन्हें वापस भागने के लिये मजबूर किया था।

अतः प्रारम्भिक लड़ाइयों में चन्द चौकियों की हार से हमें हतोत्साहित नहीं कर अन्तिम विजय की तैयारी के पुनीत कार्य में लग जाना है। चीनी हमा देश के एक खास भू-भाग पर जबरदस्त बैठ चुके हैं। हमें उन भागों को स्वतं कराने के कार्यों में अनवरत ढंग से ल रहना है। किन्तु, यह साधना तभी पू होगी जबकि हर नागरिक दुश्मनों का मुका-बला करने में आवश्यकतानुसार अपने आप उत्सर्ग कर देने का संकल्प करे और अप छोटे-मोटे विभेदों को भुलकर एकता सूत्र में आवद्ध हो जाए। संभव है कि जा धर्म, भाषा, तथा प्रान्त आदि के नाम देश के अन्दर जो फूट के बीज अंकुरित थे, उनसे ही चीनियों को भारत-भूमि आक्रमण करने का प्रोत्साहन मिला है अतः चीनी आक्रमण से राष्ट्रीय एकता जो लहर बिजली की तरह जन मानस अभी प्रवाहित हुई है उसे हमें हर तरह कायम रखना है। एकता की शक्ति अपरि है, इसीलिये तो अथर्ववेद में कहा गया है:-

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो या वि योष्ट संराधय
साधुराश्चरन्तः।
अन्योन्यस्मै वल्गु वदन्तो यात समग्रास्थ
सध्रीचीनान ॥

अर्थात श्रेष्ठता प्राप्त करते हुये सब ल हृदय से एक साथ मिलकर रहें, कभी वि न हों। एक दूसरे को प्रसन्न रखते एक साथ मिलकर भारी बोझ को खींच चलें। वस्तुतः यदि दैवी अनुकम्पा से एक होकर चीनियों को अपनी भूमि मार भगाने के संकल्प को पूरा करने में वरत प्रयत्न करते रहें तो आज के यु अन्तिम विजय निश्चय ही हमारी होगी

महान साहित्यकार राल्फ वाल्डो एमर्सनः एक झांकी (१८०३-८२)

गिरिजा शंकर
बांका (भागलपुर)

महान साहित्यकार राल्फ वाल्डो एमर्सन वीं शताब्दि का एक आकर्षक व्यक्तित्व विश्व-संस्कृति को इनकी साहित्यिक देन मर्मस्पर्शक और नवजीवन उत्पादक है। के साहित्यिक संदेश स्फूर्तिदायक, सही नि-क, आत्मविश्वासवर्द्धक और सच्चे साहित्यिक के हृदय की भाषा है। बहुत ने ही इस भाषा को इतनी खूबी से प्रकाश ला. दूसरों को अनुप्राणित करने की चेष्टा है। साहित्यिक पाठक अभी-अभी मंजूर गे कि उनके अन्तस्तल ने भी इसे कहा, लेकिन वे इसे थोथी समझ बैठे थे। न्तु यह एक ऐसा सबल आकर्षक ग्रह-ड है, जिससे आकर्षित हो अनेक साहि-क उपग्रह इनके चारों ओर चक्कर लगा हैं।

तो लीजिये इनके कुछ साहित्यिक संदेश दो शब्दों में अब आपके सामने हैं—

हित्य सेवियों की अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व उपासना फलती है। अपने जीवन के ने रास्ते महानता के द्योतक और आकर्षण केन्द्र विन्दु है। इनका सन्देश है—"जो तुम्हें, केवल तुम्हें ही ज्ञात हो वही लिखो ने अनुभव बतलाओ, अपने व्यक्तित्व को प्रगट करो, अन्य किसी की प्रतिध्वनि न बनो।"

अपने प्रकाश से ही अपने को आलोकित करने की इनकी उक्ति सुनिये—"अपने ही प्रकाश से अपने को संतुष्ट रखो, कि वह तुम्हारा अपना हो और निरन्तर उसकी खोज में रहो। चाहे कोई तुम पर कटाक्ष करे, तुम्हारी खुशामद करे, परन्तु अपनी निरन्तर खोज करने की प्रवृत्ति से न बहको।" पुनः ये कहते हैं—"यदि कोई मस्तिष्क अपने मार्ग का द्रष्टा आप न बने किसी दूसरी जगह से अपने सत्य को ग्रहण करता है—चाहे इस सत्य का प्रकाश धारा प्रवाह रूप से क्यों न आये तो बिना एकान्त वास, आत्म निरीक्षण और बिना आरोप प्राप्ति के यह दूसरी जगह से प्रकाश का आना उसके लिये घातक सिद्ध होता है। प्रतिमा अत्यधिक प्रभाव में पड़ने के कारण उसकी शत्रु बन जाती है। प्रत्येक राष्ट्र का साहित्य मेरे इस कथन का गवाह है। उदाहरणार्थ, अंग्रेजी के नाटककार कवि, दो सौ बर्षों से शेक्सपियर की नकल कर रहे हैं।"

स्वतन्त्र व्यक्तित्व की रक्षा और अप

...को स्वयं निर्मित रास्ते के पक्ष में इनकी ...देखिये कितनी उक्ति संगत है— ...दुनिया में सबसे बड़ी शर्म की बात ...है कि आदमी एक इकाई न हो ...उसका व्यक्तित्व अलग न हो, उसकी ...एक पृथक व्यक्तित्व के तौर पर न ...। प्रत्येक मनुष्य की रचना का उद्देश्य ...है कि वह वृक्षों की तरह अपना अलग ...दे। क्या यह शर्म की बात नहीं ...कोई मनुष्य अपने व्यक्तित्व को विचित्र ...सफल न बनावे। हमारे लिये क्या ...लज्जा का विषय नहीं है कि हम किसी ...के सैकड़ों—हजारों अनुयायियों में ...जांय और हमारी सम्मति को कोई पहले ...प्रकार बतला दे, जिस प्रकार भूगोल ...उत्तर-दक्षिण बतला दिये जाते हैं। भाइ- ...और मित्रो! ईश्वर कृपा से हमलोग ...प्रकार के नहीं बनेंगे। हमलोग अपने ...खड़े होंगे, अपने हाथों से काम करेंगे ...अपने ही विचारों को प्रकट करेंगे।"

...इनके आत्मविश्वास की विशाल दृढ़ ...ता के इस वाक्य पर गौर कीजिये— ...दि अकेला एक आदमी भी दृढ़ता पूर्वक ...बैठ जाय और अपनी अन्तरात्मा की ...के अनुसार काम करने लगे तो यह ...विशाल संसार उसके निकट आ जायगा।"

...इनका एक विचार तो मुझे बड़ा पसन्द ...और मुझमें एक खलबली पैदा कर ...। सचमुच में यह कटु सत्य व्यावहा- ...ता की हद और महानता का सूचक है। ...का कथन है—"जो विचार आज तुम्हारी ...समझ में आता है, उसे आज लिख दो और जो कल समझ में आवे उसे कल लिख दो ...और यदि आज तथा कल के विचारों ...परस्पर विरोध ही तो कोई हर्ज नहीं। इस... गलतफहमियां उत्पन्न होंगी, लोक तुम्हें कु... का कुछ समझेंगे, पर इससे क्या हुआ... क्या कुछ का कुछ समझा जाना कोई ब... खराब बात है! पिथेगोरस को लोगों... कुछ का कुछ समझा, सुकरात को कुछ का कु... समझा और ईशामसीह को, लूथर को, कोप... नीकस, गैलिलियो और न्यूटन को लोग... ने गलत समझा। यही क्यों प्रत्येक पवि... तथा बुद्धिमान शरीरधारी को लोगों ने ... का कुछ समझा है। महान होने का अ... ही है गलतफहमियों का शिकार होना।"

प्रायः लोग इस विचार से पीड़ित र... हैं कि पहले जो बात कह दी है अब उस... विरुद्ध बात कैसे कहूँ। लेकिन आत्मव... एमर्सन को इसकी कोई परवाह नहीं। ... कहते हैं—"पहले जैसा हम कह चुके ... हमें तदनुसार ही कहना चाहिये, कि... प्रकार उसका खण्डन न करना चाहिये, ... मूर्खतापूर्ण भूत तो क्षुद्र मस्तिष्क वालों के ... सिर पर सवार होता है और निम्न को... के राजनीतिक दार्शनिक तथा धार्मिक ... इस भूत की पूजा करते हैं। पर किसी म... आत्मा को इस भूत से कोई सरोकार न... किसी महान आत्मा के लिये यह विच... उतना ही महत्व रखता है, जितना दी... पर उसकी छाया।"

इस मानवतावादी महान साहित्य... एमर्सन ने १८३७ में अमेरिका में 'अमेरि... विद्वान' नामक भाषण जो दिया था

रिकन वाङ्मय के इतिहास में अद्वितीय। डा० जे० ई० सण्डरलैण्ड ने इस भाषण सम्बन्ध में लिखा है—"जब यह भाषण गया था, इसका बहुत प्रभाव पड़ा था। रिकन साहित्यिक इतिहास में इनके सम- दूसरे भाषण का जिसका इतना प्रभाव हो और जिसने इतनी जागृति लाई नाम बतलाना मुश्किल है। यदि किसी एमर्सन का ग्रन्थ न पढ़ा हो और वह अब ना चाहता हो तो मैं उससे कहूँगा कि इस भाषण से प्रारम्भ करे।"

पुनः डा० सण्डरलैण्ड के शब्दों में सुनिये- दि तुम पश्चिम के केवल एक ही लेखक रचना पढ़ना चाहते हो, तो मैं कहता हूँ एमर्सन को पढ़ो।"

अब हममें से अनेक सुसंस्कृतों में जिज्ञासा जाग्रत हो गई होगी कि ये थे? तो सुनिये, इस महान आत्मा का २५ मई सन् १८०३ में 'बोस्टन' नगर में को बेंजामिन फ्रेंकलिन का भी जन्म होने का गौरव प्राप्त है, हुआ था। ये ८ साल के ही थे इनके धर्म प्रचारक, देशभक्त, उदार चरित्र और क्षमाशील पि की मृत्यु हो गई। फलस्वरूप इनके घर स्थिति अति दयनीय हो गई। इनके भाइयों के बीच केवल एक ही कोट था। एमर्सन जब कोट पहनकर स्कूल जाते इनके स्कूल के साथी कहते—"आज

शेष पृष्ठ ३२ का शेषांश

स्क की तरह खोयी खोयी बैठी थी। पाल उठकर अपने खेत में चला गया था। लीप सिंह भी किसी पत्रिका के दो तीन बन्ध समाप्त कर चुका था। रेखा का तृत्व जाग उठा था। उसकी चिरकाल से यी हुई अमूल्य निधि आंखों के सामने किन्तु उसे पाने के लिए उसके पास कोई त न था। बहुत बार रेखा के मन में या कि ये सारी बातें दिलीप सिंह को दे और कह दे कि सूरज मेरा बेटा है, न्तु वह ऐसा कर न सकी। सूरज अधिक- रेखा के पास ही रहता। सन्ध्या होते गोपाल की स्त्री उसे पुकारती—

"आर सुरजिया खिचड़ी ठण्डी हो री आर जीमो कर ले।" और वह जोर से चिल्लाकर जबाव देता —"मन भूख कोनी माऊँ कोनी को खाउनी"

फिर गोपाल को सूरज को बुलाने खुद आना और वह दौड़कर रेखा से लिपट जाता।

"अ लाड़ो भले दिन छप्यो छारां चाढी तेरो बाओ आई। भैंस दूही जिन्दा हूँ दूध प्याहूँ" इस प्रकार गोपाल की स्त्री निहोरे करती हुई हाथ पकड़ कर उसे घर ले जाती। रेखा भरी भरी आंखों सूरज की पीठ देखती रहती। सूरज मुड़ मुड़ कर रेखा को देखता जाता। वह आंखों से ओझल हो जाता तो रेखा के कांपते हुए अधरों से अस्फुट ध्वनि निकल पड़ती—

"माँ कौन और बेटा किसका"

कोट को पहन कर आया है, कल इनके भाई एडवर्ड की बारी है।" इनकी परायण, धैर्यशालिनी, समझदार और माता ने अपने कुटुम्ब के पालन-पोषण लिये एक छात्रालय और एक भोजनालय था और इसके आलावा एक गाय भी छोड़ी थी। एमर्सन और इसके बड़े इस गाय को चराया करते थे।

आठ वर्ष की उम्र से इन्हो ने शिक्षारम्भ । कविता करने की प्रवृति इनकी जन्म-थी। पढ़ने में ये साधारण विद्यार्थियों थे। क्षुद्र बातों से बड़ी दूर रहा करते इन्हें बात करने का शौक नहीं था। सहपाठियों से मिलने में भी इनमें शिष्टापूर्ण झिझक दीख पड़ती थी। आत्मबल का आधिक्य था। ये जो भी उसे अच्छी तरह सोच समझकर और तौल कर। इनकी बाणी मधुर, आकर्षक बोलने की शैली कुछ अद्भुत थी, जिस इनकी बातें ज्यादा दिन तक याद थीं।

ग्रेजुएट होने के बाद सन १८२५ में ये नगर के एक स्कूल में पढ़ाया करते विद्यार्थियों को इनके प्रति अटूट श्रद्धा ये न कभी किसी से कठोर वचन थे और न कोई शारीरिक दण्ड ही ये बड़े शान्त, गंभीर और आकर्षक के थे। इनकी खोई-खोई आंखों मालूम होता था कि किसी रहस्य की खोज अज्ञात लोक में टँगी हो। यदि लड़के से कुछ अपराध हो जाता तो ये गम्भीरतापूर्वक कह देते—भाइ! दुख

की बात है, और इसका प्रभाव लड़कों काफी पड़ता। इनकी सदा कोशिश र थी, विद्यार्थियों की स्मरण शक्ति कैसे ब

इन महान आत्मा ने कई वर्षों तक प रीगिरि का काम सीखा और ११ म सन् १८२६ में पादरी बना दिये ग परन्तु इन्हें बाह्य आडम्बर और धार्मिक क्रि काण्ड में आस्था न थी। अपनी पूर्ण स्वाधी के ये समर्थक थे और अपनी अन्तरात्मा आवाज के अनुकुल रास्ता तैयार करते इन कारण १८३२ में पादरी पद से इन्हें अपना इस्तीफा दाखिल कर दिया।

यह महान दार्शनिक अपनी भावना में भारतीयता का गीत गाते थे और पाश्च देशों के लेखकों में प्रथम थे जिन्होंने हि शास्त्र का अध्ययन कर इसकी अन्तर्ज्ञानवा रहस्यवादी और आदर्शवादी दार्शनिक वि धारा का स्वागत और आत्मसात किय इन्होंने अपने लेख में अनेक जगह गी वेद, हितोपदेश और विष्णु पुराण से उद्ध दिया है। 'दी ओवर सोल' (परमात्मा) इल्युजन्स (माया) में भारतीय विचारधारा गहरी छाप है। 'ब्रेल' शीर्षक कविता कठोपनिषद और गीता के विचारों का सु सामञ्जस्य है।

१८३३ में मृदुभाषी शान्त, गंभीर अ आकर्षक एमर्सन ने यूरोप की या की और वहां के भिन्न-भिन्न नगरों अद्वितीय भाषण दिये। इनके भाषण ने श्रोत ओं को इस कदर मुग्ध किया जो वर्णन परे है। इनके विचारों में अजीब मौलिक थी, भाषण का ढंग सीधा-सादा था, कि

म हाव-भाव न था और इनके स्वर की ता का आधार सीधा हृदय पर होता था। अपनी द्वितीय इंगलैण्ड यात्रा में एक ग में इन्होंने कहा था—अगर संसार में ३ क्रांति हो सकती है तो प्रेम और न्याय सिद्धान्त से ही, जिनको इनके अनन्य महात्मा गांधी ने सार्थक किया। यूरोप टने के पश्चात प्रकृति प्रेमी एमर्सन त्यकारों की भूमि कोंकर्ड में आ बसे। ने यह स्थान इसलिये चुना था कि यहां एकान्त खूब मिल सकता था। और न नगर नजदीक होने के कारण इच्छा पर लोगों से मिल-जुल सकते थे। यहां ोंने प्रकृति का साक्षात्कार किया, जीवन प्रकृति का गहन अध्ययन किया और में सामञ्जस्य पाया। एमर्सन ने लिखा -"वन उपवन में इसलिये जाता हूँ कि पर प्रकृति का संदेश सुनूँ। इन विचारों जन्म दाता मैं नहीं हूँ, वे मेरे पास आते और मैं तो केवल उसका रिपोर्टर हूं। मेरी की हुई चीजों में कोई श्रृंखला नहीं , उनसे किसी विशाल भवन का निर्माण होता, वे इंटों का समूह मात्र है।

यदि किन्हीं को आध्यात्मिक नशाखोरी की आदत हो तो वे महान आध्यात्मवादी एमर्सन की रचनाओं का अद्भुत नशापान करें। इस नशापान में आपके कदम डगमगायेंगे नहीं बल्कि प्रत्येक कदम सही और दृढ़ता से आगे बढ़ेंगे। आप नवस्फूर्ति से उद्वेलित होंगे। यह जीवन दाता, अथक उत्साह प्रदायक होगा। सचमुच में इतनी विलक्षणता से आध्यात्मिक बातों को पिरोनेवाला शायद ही दूसरा लेखक होगा।

तो अब मुझे छोड़िये मैं विदा चाहता हूँ और अन्त में इस महान दार्शनिक का एक विचार सुनाता जाता हूँ -"प्रत्येक मनुष्य की शिक्षा में एक ऐसा समय आता है जब वह इस दृढ़ विश्वास पर पहुँच जाता है कि किसी से ईर्ष्या करना अज्ञानता का सूचक है और किसी की नकल करना मानो आत्मघात करना है। तब उसे यकीन हो जाता है चाहे बुरे हों या भले हमारे भाग्य में यही बदे थे और भले ही दुनिया में अच्छी-अच्छी चीजों का अखण्ड भाण्डार हो, पर पृथ्वी का एक अन्न का एक भी दाना तब तक हमें नहीं मिल सकता जब तक हम उस भूमि खण्ड को, जो हमें मिला है, अपने परिश्रम से जोते-बोये नहीं।"
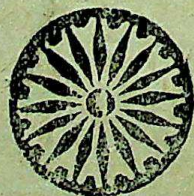
फीजी में हिन्दी प्रचार

राम नारायण गोविन्द
पोस्ट - बाक्स ५४, मिगाटोका
फिजी द्वीप समूह।

सन १८७६ ई० में प्रथम बार जब भार- मजदूर फाजो में आये तब ही यहां दी माषा का पदार्पण हुआ। उन दिनों चाल के सिवाय यहां हिन्दी का कुछ भी र नहीं था।

कुछ काल उपरान्त भारतीय मजदूरों इस कमी का भान होने लगा। लोगों ान हिन्दी के सुव्यवस्थित प्रचार की र आकृष्ट हुआ। प्रचार कार्य को करने ये उनके पास साधन का अभाव था। पाठशालाएं थीं न तो कोई यथेष्ट ान ही।

उस जमाने में भारतीय मजदूर प्लान्टरों (Planters) की कोठियों में रहते थे। सत्संग के लिये भारतीय जाति सुप्रसिद्ध। गन्ने के खेतों में दिन भर के कठिन रिश्रम के बाद ब्यालू के उपरान्त इनके जमघट होते थे। भजन गाये जाते धर्म चर्चा ती तथा कुछ आप बीती और कुछ जग- ती की बातें होतीं थीं। पढ़ने पढ़ाने का आरम्भ भी ऐसी बैठकों से हुआ। जो ढ़ना चाहते थे पढ़ लेते थे और जो पढ़ा सकते थे पढ़ा देते थे। बहुत दिनों तक ऐसा ही चलता रहा।

बीच बीच में भारतीय नेतागण प्रव भारतीय भाइयों की खोजखबर लेने फ आ जाया करते थे। यहां हिन्दी प्रचार अभाव उन्हें खटकता था। वे कहीं छोटी-मोटी पाठशालाएं स्थापित करवा ज करते थे।

सन १९२० ई० तक ऐसे ही काम च रहा। इसी वर्ष शर्तबद्ध प्रवासी भार मजदूरों के जीवन में एक महत्वपूर्ण घ घटी। शर्तबद्ध मजदूर-प्रथा का अन्त और भारतीय मजदूर मुक्त हुए।

इस घटना के पश्चात हिन्दी प्रचार पकड़ने लगा। सुशिक्षित लोग धर्म भाषा प्रचार के लिये भारत से फीजी लगे। पाठशालाओं की संख्या बढ़ने लग

सन १९२९ ई० में फीजी की सर ने एक शिक्षा मण्डल की स्थापना मण्डल ने जो पाठ्य क्रम तैयार किया उ हिन्दी को भी स्थान दिया गया। इ फलस्वरूप फीजी की पाठशालाओं हिन्दी शिक्षण का कार्य विधिवत आ हुआ। हिन्दी प्रचार की वृद्धि तो हुई प उस पर अंगरेजियत का जामा चढ़ने लग अंगरेजी ढंग की हिन्दी पनपने लग

शालाओं में लगभग अभी भी इसी प्रकार हिन्दी चल रही है।

फीजी की प्रत्येक भारतीय पाठशाला हिन्दी शिक्षण का प्रबन्ध है। सरकारी शालाओं में भी इसकी व्यवस्था है। ई संस्थाओं द्वारा संचालित अधिकांश ालयों में हिन्दी शिक्षण का प्रबन्ध नहीं फीजी में अध्यापकीय प्रशिक्षण की ात्र विद्यापीठ नसीनू ट्रेनिंग कालेज asinu training college) में हिन्दी ाण विधि की ट्रेनिंग तो दी जाती है ुु अंगरेजी के माध्यम से।

विगत विश्वयुद्ध के पश्चात भारतवर्ष त्र-पत्रिकाएं तथा पुस्तक आदि मंगवाई लगी हैं। इस से विशुद्ध हिन्दी प्रचार प्रोत्साहन मिल रहा है। फीजी में त सरकार के सांस्कृतिक मिशन की स्था- से भी हिन्दी प्रचार को पर्याप्त बढ़ावा रहा है।

उपर्युक्त साधनों के अलावे फीजी में ी प्रचार का कोई सुदृढ़ संघठन नहीं है। दिन हुए इस क्षेत्र में काम करने के नत्त दो संस्थाएं कायम हुई थीं — फीजी र साहित्य परिषद और फीजी हिन्दी हत्य प्रचारिणी सभा। एक कवि सम्मे- करवा कर सभा शिथिल पड़ गई।

फीजी कुमार साहित्य परिषद ही अब संस्था रह गई है जो इस कार्य में ान है। अब इस संगठन का नाम बदल फीजी हिन्दी साहित्य परिषद रख दिया गया है। सीमित पैमाने पर किन्तु उत्साह पूर्वक यह संस्था फीजी में हिन्दी प्रचार का काम कर रही है। परिषद का हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) तथा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति (वर्धा) से सम्पर्क है। उन संस्थाओं द्वारा संचालित परीक्षाओं का केन्द्र परिषद ने फीजी में खुलवा लिया है।

फीजी हिन्दी साहित्य परिषद का कार्यालय सिंगातोका नामक शहर में अवस्थित है। कार्यालय में हिन्दी की पढ़ाई होती है और परीक्षाओं के लिये विद्यार्थियों को तैयार किया जाता है।

इसी वर्ष (१९६३) फरवरी मास में बारह परीक्षार्थीगण राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की प्राथमिक परीक्षा में बैठे थे। दूसरी परीक्षाओं में बैठने की तैयारी हो रही है।

फीजीवासी भारतीयों को इस कार्य में भारतीय जनसाधारण, हिन्दी प्रचार संस्थाओं, पुस्तक प्रकाशन तथा विक्रेताओं और सांस्कृतिक संस्थाओं से सहायता एवं सहयोग की अपेक्षा है। हिन्दी प्रचार के लिये पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाओं तथा अन्य साहित्य की विशेष आवश्यकता है। उदार बन्धुगण फीजी हिन्दी साहित्य परिषद, सिंगातोका, (फीजी) Fiji Hindi Sahitya Parishad Sigatoka (Fiji) के नाम पर ऐसी सामग्री प्रेषित कर सकते हैं। इस असीम कृपा तथा सहयोग के लिये परिषद बन्धुओं का हार्दिक आभार मानती रहेगी।

जय हिंदी! जय नागरी!

दी के महान साहित्यकार—

'आचार्य शिवपूजन सहाय'

लालमोहर उपाध्याय
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़

यह सब को ज्ञात है कि बिहार का बाद जिला कलम और तलवार दोनों नी है। इस जिले में बरद् पुत्रों की नहीं रही है। मुझे यह कहने में बड़ा अनुभव होता है कि जिस आचार्य शिव- सहाय का स्वर्गवास २१ जनवरी १९६३ को हुआ है, उनका जन्म इसी शाहाबाद के बक्सर सबडिविजन में इटाढ़ी के उनवांस गांव में १८९३ ई० में हुआ गत वर्ष ५ जून को मैं पटना उनसे के लिए गया था। संयोगवश जाते हो गई। उनके पूछने पर मैंने बताया आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के साथ एम० ए० कर रहा हूँ। साहित्य में थोड़ी अभिरुचि देखकर उन्हें बड़ी न्नता हुई। उन्होंने कहा, 'द्विवेदी जी ता अवश्य चरण स्पर्श कर देंगे।' दूसरी कि "हिन्दी साहित्य और बिहार" पुस्तक लिखी जा रही है उसमें मुझे भी लिखने के लिए उन्होंने कहा। इसी चीत के सिलसिले में सहाय जी ने कहा अच्छा भाई गर्मी का दिन है, लस्सी वा रहा हूं, ठहर जाइये। लस्सी बन कर यी। पीने के बाद गिलास साफ करने के लिए मैं उठ खड़ा हुआ कि वे मेरा हाथ पक लिये और धीरे धीरे नल पर जाकर अप हाथों से साफ कर और स्वयं उनमें लस्सी लेकर पीने लगे। मैंने उनसे कहा कि आचार्य जी मैं १८ जून को अवश्य आपके यहां आऊँगा और मुझे आपके द्वारा साहित्यिक कार्य मिलने पर प्रसन्नता होगी।

पर आज जब वे संसार में नहीं र वे बातें स्मरण आने पर कि मैं कार्य व्यस्तता के कारण फिर उनसे नहीं मिल सका, तो कले मुँह को आ जाता है। सचमुच मैंने गल की है और उसका फल मुझे भोगना पड़ेगा।

आचार्य सहाय जी की शिक्षा १९० तक थामस जुबिली एकेडमी हाई स्कूल कलक विश्वविद्यालय में हुई थी। फिर भी उच्च शिक्षा नहीं पा सके थे। १९१३ बनारस दीवानी अदालत में वे नकल नबी का काम करते थे। बाद में अध्यापक जीवन भी बिताने का उन्हें सौभाग्य मिला। सर्वप्रथम १९१५ में कामस्थ जुबिली एकेडमी में शिक्षक नियुक्त हुए। १९१७ में इ आरा (बिहार) जार्ज टाउन स्कूल में जा पड़ा और बाद में राष्ट्रीय विद्यालय में हिन्दी शिक्षक के रूप में इनकी बहाली हुई।

से विभूषित किया गया था ।

जहाँ तक आचार्य शिवपूजन सहाय (व्य)क्तित्व का प्रश्न है वह किसी से छिपा है। साहित्य वाचस्पति पं० रामदहिन के ये वाक्य सहाय जी के बारे में रूप से उल्लेखनीय हैं:—हिन्दी भूषण शिवपूजन सहाय की लेखन शैली ही मुकर, सरस और अलंकृत है। की यह शैली स्वाभाविक है, कृत्रिम । पुस्तक के लेखक अपने लेखों द्वारा साहित्य संसार में बहुत दिनों से त हैं—इससे उनका परिचय कराना श्यक है। (बिहार का बिहार—वक्तव्य से)

आचार्य शिवपूजन सहाय साहित्य-के रूप में तो प्रसिद्ध थे ही, इसके कुछ और हैं। वे एक पूर्ण मानव में विद्यमान थे जिनमें सौम्यता तथा ता कूट-कूट कर भरी थी। आचार्य प्रसाद द्विवेदी जी के शब्दों में नीति के क्षेत्र में जो स्थान राजेन्द्र को प्राप्त है—हिन्दी साहित्य के क्षेत्र स्थान आचार्य सहाय को। (यहां ना की ओर द्विवेदी जी का संकेत है।)

एक बार आचार्य सहाय जी ने प्रो० विलोचन शर्मा की ओर संकेत करते कहा था "मैं लगातार ११ वर्षों तक साथ "साहित्य" पत्रिका का सम्पादक । वे मुझ से पचीस वर्ष छोटे थे, भी मैंने उनसे बहुत कुछ सीखा।"

नलिन जी की मृत्यु के बाद एक में इन्होंने संकेत किया था कि "मैं साहित्य पत्रिका के सम्पादक पद से मु(क्ति) लेना चाहता हूँ और मेरा नाम पत्रिका न छापा जाय" लिख कर नलिन जी दिया। नलिन जी ने हँसते हुए कहा "आप तो अभी सम्पादकीय टिप्पणि(यां) लिख ही देते हैं, जब एक अक्षर भी लिख सकेंगे तब भी नाम छपता रहेगा" आचार्य सहाय जी के व्यक्तित्व का प्रतीक है।

"देहाती दुनियां" के चतुर्थ संस्क(रण) के वक्तव्य में आचार्य सहाय जी ने लि(खा है) :—

"मैं तो ग्रन्थमाला कार्यालय (पटना) के अध्यक्ष श्री पंडित देवकुमार मिश्र जी (का) बहुत कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस प्रगतिशील (युग) में भी मुझ जैसे अप्रगतिशील लेखक (का) एक ऐसा उपन्यास प्रकाशित करने की कृ(पा) की है, जो आधुनिक काल की कसौटी (पर) खरा नहीं उतरता। फिर भी आशा (है) कि कला की दुनिया से दूर रहने वा(ले) ग्रामीण हिन्दी पाठकों के लिए पहले (की) ही भांति यह नित नूतन बना रहेगा।" इन पंक्तियों में आचार्य सहाय जी (की) सहजता झलकती है। सही बात तो य(ह) है कि हम जितना ही इनके नजदीक जा(ने) की कोशिश करते हैं उतनी ही अधि(क) मात्रा में सहजता दिखाई पड़ती है।

नेत्र शक्ति की क्षीणता एवं अस्वस्थता के होते हुए भी आचार्य शिवपूजन सहा(य) जी इन पंक्तियों के लेखक के नाम से (जो) पत्र गत वर्ष लिखे थे उसे पढ़कर पाठ(क) उनकी सहजता के बारे में अंदाज लग(ा सकते हैं।)

सकते हैं।

सच्ची प्रतिलिपि

बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्
शरीफ मंजिल पटना ६,
दिनांक १७-३-६२

पत्रांक—८२५

प्रिय महोदय,

कृपा पत्र के लिए धन्यवाद। 'शाहाबाद के साहित्यकार' नामक पुस्तक आप तैयार कर रहे हैं, यह जानकर संतोष हुआ। आरा के जैन कालेज के हिन्दी प्राध्यापक पं० रामेश्वर नाथ तिवारी भी तैयार कर रहे हैं। उनसे आप पत्र व्यवहार कर सकते हैं। यहां बिहार के साहित्यिक इतिहास का प्रथम खण्ड १९६० में ही प्रकाशित हो जिसे आप पूज्य द्विवेदी जी के पास चुके होंगे। दूसरा खण्ड छप रहा है तीसरा तैयार हो रहा है। शेष अगले अगामी वर्ष तैयार होंगे।

आप बहुत दूर रहते हैं, इधर तो कुछ सहायता देने को मिलती। आ प्रयत्न सफल हो, यही कामना है। पर एक प्रति भेजने की कृपा करें।

सधन्यवाद,

शिवपूजन सहाय

पुनश्च:—पूज्य आचार्य हजारी प्रसाद द्वि जी से मेरा सादर सविनय प्रणाम निवे कर देने की कृपा करें। शिव।

कालेज के लड़कों की सरकारी नौकरी प्राप्त करने की—अभिलाषा और महत्वाकाँक्षा देख कर भी आश्चर्य करना पड़ता है। इन लोगों में यह महत्वाकांक्षा क्यों नहीं आती कि कवि, या कलाकार, या गायक बनें। एक व्यापारी, अध्यापक, या उद्योगपति बनें। स्वतन्त्र होकर कुछ भी करने की प्रेरणा इनमें क्यों नहीं उठती? कारखाना खोलने, पाठशाला खोलने या किसान बनने की अभिलाषा इनमें क्यों नहीं आती? इसमें लड़कों का कुछ भी दोष नहीं। सारी गड़बड़ी राष्ट्र के विभिन्न कार्यों के व्यवस्था-दोष से उत्पन्न है। लड़कों के मस्तिष्क की सारी खूबसूरती, हृदय के सारे सौंदर्य, चारित्र्य की सारी उदारता, महानता एवं पवित्रता सरकारी नौकरी प्राप्त करने के बाद ही खतम हो जाती है। न जाने कहां से इनमें घमंड और खोखले बड़प्पन का भाव आ जाता है। लड़के ऐसे भ्रष्ट हो जाते हैं, नष्ट हो हैं, कि देखकर अफसोस करके रह जाना पड़ता है।

—आनन्द शंकर माधवन के 'हिन्दी आन्दोलन से

गीत

वीणा बजा रहा हूँ!

दिन भी बड़ा सुहाना
यह रात है सुहानी
मैं प्यार का मुसाफिर
मेरी यही कहानी।

मैं प्यार के चमन में उर को सजा रहा हूँ;
वीणा बजा रहा हूँ।

सुनसान है डगर भी
अनजान मैं पथिक हूँ
ओ दूर के सितारे
मैं तो बहुत व्यथित हूँ।

तुम पास आ रहे हो मैं दूर जा रहा हूं;
वीणा बाजा रहा हूँ।

बढ़ तो सदा रहा हूँ
पर दूर है किनारा
मैं प्यार का मुसाफिर
मेरा नहीं सहारा।

तकदीर के सितम पर मैं गीत गा रहा हूँ;
वीणा बजा रहा हूँ।

बीमार हूं

राम निरंजन 'परिमलेन्दु,'
अबुसालेह रोड (मुरारपुर) गया

बीमार
थिलता की चादर ओढ़ कर लेटा हूँ,
ड़ा से भरा
रा मुखर एकान्त मेरे साथ है
टा हुआ व्यक्तित्व मेरे कमरे का
खरा है मेरे कमरे में
रही जिन्दगी की ठहरी हुई
रद—रेखाएँ जैसा
ढ़ियों पर चढ़ने-उतरने की आहट
य:सन्धि की वैवस्वत-वल्लरियां
र की धूप में कम्पित मुखर
ास रंगबिरंगी आवाजों की भीड़ का,
ास के बादल घिरे—
बिम्ब के वातायन बन्द कर
लेटा हूँ ओढ़ कर चादर शिथिलता की
जिन्दगी का हरा पर्दा मेरे दरवाजे पर
हौले-हौले कांपता है
जैसे कांपता सौभाग्य-तरू निद्रा का
प्यास की झंकार के पवन में,
मेरे व्यक्ति की शशि-लिप्सा के मुर्झाए फूल
मेरी जिन्दगी की बेडसाइड मेज पर
पड़े हैं, मेरे अर्द्ध लिखित पत्र पर
जीवन के मेरे अर्द्ध लिखित पत्र पर
आकस्मिक अस्वस्थता का आवेदन पत्र
प्रेषित कर
शिथिलता की चादर ओढ़कर लेटा हूँ
जिन्दगी के टूटे हुए कमरे में
बीमार हूँ।

वैदिक अणुशक्ति

वाणी का आविर्भाव ज्ञान की महिमा—गायन हेतु ही हुआ है। ज्ञान में ही वास्त
आनन्द है। ज्ञानी से बढ़कर कोई दानी या प्रेमी संभव नही।
बुद्धि वाले ज्ञान कभी हासिल नहीं कर सकते। इस रहस्य को ज्ञानी ही भल
जानते हैं। राज कार्य भी सिर्फ ज्ञानी ही सफलता पूर्वक चला सकते हैं। ज्ञान
बढ़कर कोई पराक्रमी या प्रभावकारी संभव नहीं है।

यह पूरा संसार एक यज्ञशाला है। इसका सरदार पुरोहित स्वयं परमेश्वर है
अग्नि को भक्षण देने से उसकी शक्ति बढ़ती है। उसकी शोभा भी बढ़ती है वैसे ह
ज्ञानी को काम देने से और उनपर जिम्मेदारियां सौंपने से उनकी शक्ति और शोभ
बढ़ती है।

सूर्य को जैसे रश्मियां होती हैं वैसे ही ज्ञानो को अपने कार्यकर्ता है। रश्मियो
सूरज का ही प्रताप और प्रभुत्व है वैसे ही कार्य कर्ताओं में भी।
विपरीत शक्तियों को नष्ट करने की ज्ञानी की प्रतिभा उनके कार्यकर्ताओं
प्रति फलित होनी चाहिये।

विपरीत शक्तियों को परान्मुख करने के उनके जो अनुष्ठान हैं उस प्रकार के अनुष्ठा
ी ज्ञानी और उनके कार्यकर्ता पूर्ण रूप से अपनी विभूतियां दर्शा पाते हैं।
आग एक जगह से दूसरी जगह ली जा सकती है। इसी तरह वह फैलत
है। ठीक इसी तरह ज्ञानी भी अपने अनुष्ठान और विभूति को सर्वत्र फैला सकते
और समूचे संसार को अपने अतुलनीय प्रकाश से चकाचौंध कर सकते हैं।
ज्ञान प्रतिपादन करने वाला धर्माचारी क्रान्तदर्शी ही कवि बन सकता है। उनकी
और प्रज्ञा देश काल परिस्थिति और कार्य कारण बन्ध को भेद कर भीतर प्रवे
सत्य के साथ एकाकार हो जाती है। यह अनुष्ठान ही कवित्व साधना है। ऐसे क
ही संसार की सारी आशायें केन्द्रित है।

ज्ञान-दान से बढ़कर कोई दान नहीं। विपरीत शक्तियों को परास्त करने में सहायत
करने से बढ़कर कोई सहायता भी नहीं।
दो चीजें प्राप्त करने लायक है—उत्तम भोजन और उत्तम गुण। ये दोनों ही ज्ञान के
द्वारा प्राप्य हैं। अपने व्यक्तित्व को अग्नि जैसे बनाओ कि जिसमें समस्त
और विपरीत शक्तियां भस्म हो जाय। उन चीजों को संग्रह करो जो लेने-दे
य हैं। लेने-देने योग्य चीज ज्ञान है, गुण है। इसके लेने-देने से इसकी वृद्धि ही होती
जैसे अग्नि की। क्योंकि इसकी इस प्रकार की लेन-देन किया में ही संसार भर के
भस्म हो जा सकते है।

विश्व धर्म-दर्शन

लेखक—श्री सांवलिया बिहारी लाल वर्मा
प्रकाशक—बिहार राष्ट्र भाषा परिषद, पटना
मूल्य—१३ रुपये ५० न० पै०

सांसारिक और पारमार्थिक दोनों ही ...ों का उत्तम रूप बतलाना, और दोनों साधन का उत्तम उपाय दिखाना ही ...का उद्देश्य है। धर्म के तीन अंग होते ... ज्ञान कांड, उपासना कांड और कर्म कांड ...-काल और परिस्थिति के अनुसार कर्म ... में विभिन्नता होती रही है। उपासना ...ी प्रवृत्ति और शक्ति के कारण अन्तर ...लायी पड़ता है। पर अविच्छिन्न रूप ... ज्ञान कांड में कहीं व्यवधान नहीं पड़ा है। ... तरह तात्विक दृष्टि से सभी धर्म एक हैं। ...ा की भिन्नता, भाषा ग्रहण करने की ...सता के कारण धर्म को लेकर संसार में ... युद्ध हुआ। मानवता उससे कराह उठी। ऐसे संकट काल में एक ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता थी जो सब धर्मों को एक दिशा में बैठा सकें। अपना-अपना राग ...पने से मानव जाति का कल्याण संभव ...। हम दूसरे की बात सुनना भी पसंद नहीं करते हैं। दूसरे के धर्मों को उदारता पूर्ण दृष्टि से विहगावलोकन भी नहीं करते भला मानवता कहां रहेगी! श्री सांवलिया बिहारी लाल वर्मा जी ने बहुत साधना के बाद हिंदी जगत को इस तरह के ग्रन्थ देने का दुस्साहस किया। इसके लिए लेखक को जितनी भी बधाई दी जाय सब कम है। आत्मसुख के लिए ही उन्होंने इस ग्रन्थ के उन्नयन के लिए परिश्रम किया है।

इस ग्रन्थ में सिर्फ धार्मिक और दार्शनिक पहलुओं पर ही विचार नहीं हुआ है वरन् सभ्यता और संस्कृति, शिक्षा और दीक्षा, व्यापार और कृषि आदि की रूप रेखा खींच कर जीवन दर्शन की झलक भी सम्यक रूप से दी गई है। अध्ययन के सिलसिले में तुलनात्मक विवेचन कर पाठकों की बहुत सी समस्याओं को हल करने में लेखक सफल हुए हैं। इनकी तुलना की प्रवृति ऊँचाई छुआई से नहीं वरन् एकीकरण से है।

वैदिक-धर्म, पारसी धर्म, यहूदी धर्म
[जैन]-बौद्ध धर्म, नास्तिकवाद कनफ्युसियस
[ध]र्म, ताओ-धर्म शैव वैष्णव और शाक्त मत
[ईसा]ई धर्म, इस्लाम धर्म भक्ति, कर्म और
[ज्ञा]न मार्ग का सूक्ष्मातिसूक्ष्म साधना, सिक्ख
[आ]दि धर्मों का संक्षिप्त ऐतिहासिक विवरण
[दि]या है। आधुनिक घटनाओं से समवेत विश्व
[स]मस्याओं का दिग्दर्शन, राजनीतिक-हल
[...]ों में शाँति का प्रयास आदि का भी दर्शन
[इस] ग्रन्थ में हुआ है।

सभी धर्मों के उस मूल तत्वों पर बहुत
[बल] दिया गया है जिस आधार पर सभी
धर्मों का समन्वय हो सके।

ग्रन्थ का बाह्य आवरण नयनाभिराम
है। छपाई सुन्दर है। मंहगी को देख[ते]
हुए ग्रन्थ का मूल्य अधिक नहीं है। स[भी]
समाज सुधारकों, धार्मिक पुरोहितों के [लिए]
यह ग्रन्थ नित्य पठनीय है।

मेरा विश्वास है कि इस ग्रन्थ का सम[...]
दर कर हिंदी जगत् अपने ऋण से उऋ[ण]
होगा।

राम प्रसाद मंडल

संक्षिप्त-ब्रह्मवैवर्त्त पुराणाङ्क

गोरखपुर के 'गीता प्रेस' से श्री हनु-
[मान] प्रसाद पोद्दार के सम्पादकत्त्व में,
['कल्]याण' नाम का एक सचित्र मासिक पत्र,
[ग]त ३७ वर्षों से निकल रहा है। घोर
[भौ]तिकवाद के इस भयंकर युग में एक
[ऐसे] सुसम्पादित ईश्वर भक्ति-प्रचार पत्र
[की] अत्यन्त आवश्यकता थी। इस पत्र का
['कल्]याण' नाम अक्षरशः सार्थक है।

उस अंक को पांच खंडों में विभाजित
[कि]या गया है। प्रथम खण्ड में देश के उद्
[भट] विद्वानों की रचनाएं हैं। पुराण की
[महत्]ता, जीवन में उसकी उपादेयता, व्यक्तित्व
[नि]र्माण के लिए शोध आदि विषयों पर गहन
[वि]वेचनात्मक कार्य हुआ है जिसे देखकर
[त]त्काल अभिनन्दन करने की लालसा जागरित
[हो]ने लगती है।

इसी तरह दूसरे खण्ड में ब्रह्मखण्ड,
तीसरे में गणपति खण्ड, चौथे में श्री कृ[ष्ण]
जन्म खण्ड, हैं। कृष्ण जन्म खण्ड पूर्वा[र्द्ध]
और उत्तरार्द्ध दो भागों में विभाजित है[।]
पांचवे खण्ड में स्तोत्र अध्याय हैं। स[भी]
खण्डों में विश्लेषणात्मक वर्णन हुआ है।

अपने रंग-ढंग में सर्वतोभावेन अद्विती[य]
होने के कारण हिंदी का यह गौरव है।

इसकी छपाई, सफाई, सजावट, शुद्ध[ता]
चित्रावली और संपादन शैली—सब [कुछ]
सराहनीय और अनूठी है

सब दृष्टियों से यह विशेषांक अपूर्व [और]
संग्रहणीय है। ईश्वर भक्तों के लिए
आनंद का भण्डार है।

राम प्रसाद मंडल

राज कुमार

(अनुवेन पुराणी)

श्री अरविन्द सोसाइटी पांडेचेरी—२

यह एक प्रतीकात्मक नाटक है। नाटक
भाव समाज में बहुत पड़ता है। इस
ी सी नाटिका में अनुबेन पुराणी ने
विषयक बहुत सी बातों का विवेचना-
वर्णन किया है। पुस्तक बहुत काम
है। योगबल से मनुष्य संयमी और दीर्घ-
ी होकर जीवन का सुख प्राप्त कर
ता है।

जीवन में दैविक शक्ति, आसुरी शक्ति
र मानवीय शक्ति का संघर्ष चलता ही
ा है। मानव कभी श्रेय (दैविक) तो
ी प्रेय (आसुरी) की ओर देखता है।
नों का संतुलन जीवन की मानवी शक्ति
ध्येय है। पर यही पर्याप्त नहीं। वह
श-कालावच्छिन्न से ऊपर एक आलोकमय
वन-दर्शन को स्थान देता है। नाटक का
पात्र देश की परिभाषा में कहता है—
हमारे लिए देश नदी-पहाड़ों से घिरी हुई
मि नहीं है। इस देश में रहने वाले नाग-
रिक भी देश नहीं है। हमारा देश एक
जीवित जागृत आत्मा है, शक्ति है, हमारी
मां है।

सुख वीर का मानसिक संघर्ष, आन्त-
द्वन्द्व, प्रेम-श्रेय की आंख मिचौनी नाटिका
को प्राणतत्त्व से प्लावित कर देता है।

जो सज्जन रसज्ञ हैं, जो अनुभूति पूर्ण
साहित्यिक हृदय रखते हैं, वे ही इस नाटक
के अभिनय-दर्शन के भित्ति चित्र बन सकते
हैं। पर जो हृदयहीन हैं, भारतीय संस्कृति
की विभूति से वंचित हैं, छमाछम नाच
और लचकदार गानों के शौकीन हैं
तो इसका अभिनय देखकर भकुआ
जायेंगे। पुस्तक की बाहरी छटा मन मोहक
छपाई की सुन्दरता सराहनीय है, मूल्य मात्र
६२ न० पैसे है।

रामप्रसाद मंडल

...ी निर्माण परिषद् मंदार विद्यापीठ, भागलपुर

वार्षिक अधिवेशन

लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान डा० सुधांशु जी का अध्यक्षीय भाषण
मंदार विद्यापीठ दिनांक—१४-५-६३

...हिंदी निर्माण परिषद् , के अधिवेशन में ...ता करते हुए बिहार विधान सभा के ...क्ष डा० लक्ष्मी नारायण सुधांशु ने कहा ...देश की भाषाओं में हिन्दी को ही ...गौरव मिला है कि राष्ट्रीय भाषा का ...ग्रहण करे। यह सत्य है कि हिन्दी ...जितना विकास होना चाहिए वह नहीं ...है और राजनीतिक तथा सेवा की ...त्रों को लक्ष्य में रखकर दक्षिण और ...भारत (बंगाल) से इसका कुछ विरोध हो ...है। लेकिन इन विरोधों के बावजूद ...दी फल-फूल रही है और आंगल भाषी ...के अलावा अन्य सभी देश स्वतन्त्र भारत ...ट्र भाषा में सम्बन्ध रखने के लिये उत्सुक ...। यह देश का दुर्भाग्य है कि हमारे ...दूत विदेशों में अंग्रेजी का ही व्यवहार ...धिकतर करते हैं। हमारे देश के अन्दर ...अहिन्दी क्षेत्र की बात तो अलग रहे ...ी क्षेत्र में भी हिन्दी के प्रति सरकारी ...ियों ने उपेक्षा भाव ... इसीलिए ...न १९६५ तक हिन्दी के साथ साथ अंग्रेजी ...को भी राजभाषा के रूप में चलने देने का ...व्यवस्था संविधान में की गई थी। इधर ...जिस गति से हिन्दी का प्रचलन होना चाहिए ...था वह नहीं हुआ। इस अभाव को दृष्टि में रखकर ही संसद में एक ऐसा भाषा वि... यक पारित किया गया है, जिसके अनुसा... अभी, ६५ के बाद भी हिन्दी के साथ अंग्रेज... रह सकती है। अंग्रेजी के हिमायती लोगों ने 'अंग्रेजी रह सकती है' के स्थान ... 'अंग्रेजी रहेगी' सम्बन्धी संशोधन लाया ... गिर गया। अतः अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी ... प्रतिष्ठित करने के लिए हिंदी भाषा में बोल... तथा लिखना आवश्यक है तथा ऐसा प्रयत्न करना है कि १९६५ तक राजभाषा के रू... में हो सभी कार्यालय में हिंदी प्रचलित ... जाय। फिर, ६५ के बाद अंग्रेजी की जरूर... ही नहीं समझी जाय। विद्वान वक्ता ने हिं... के स्वरूप के सम्बन्ध में कहा कि हिंदी ... उच्चारण अहिंदी क्षेत्र के लोग ठीक-ठ... नहीं कर पाते। इसलिए उनकी अशुद्धि... पर उतना ध्यान नहीं देना चाहि... साथ ही हमें यह भी ख्याल रखना चाहि... कि एक समय सारे भारत में संस्कृत भा... प्रचलित थी। वही राष्ट्रभाषा थी। संस्कृ... के उच्चारण में सारे भारत में एकरूप... है। अतः उस समृद्धशालिनी भाषा ... हिंदी में वह क्षमता पैदा की जा सकती है ... वह सारे भारत में जन प्रिय बन सके। इस... सन्देह नहीं कि हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है

अधिवेशन ४ बजे शाम से ८ बजे रात चला। प्रारम्भ में परिषद् के अध्यक्ष सुधांशुजी का स्वागत करते हुए परिषद् अध्यक्ष श्री आनन्द शंकर माधवन ने हिंदी समस्याओं पर प्रकाश डाला।

श्री यमुना प्रसाद संयुक्त मंत्री, हिन्दी निर्माण परिषद् ने—परिषद् के मंत्री श्री गोविंद प्रसाद द्वारा तैयार किया हुआ निम्न प्रतिवेदन पढ़ा।

हिन्दी निर्माण-परिषद्, प्रतिवेदन—

...की राष्ट्र भाषा पर जब हम विचार ... हैं और उस पद पर हिंदी को प्रतिष्ठित तदनुकूल श्री सम्पन्न बनाने की बात ...के समक्ष प्रस्तुत होती है तो पूरी भारतीय ...ा के सर्वाङ्गीण जीवन के सम्बन्ध में ... भूत, वर्तमान और भविष्य का सम्यक ...न मनन अपेक्षित हो जाता है। भाषा ...जीवन की सारी समस्याएँ निहित हैं। ...ो भी देश में भाषा का महत्वपूर्ण स्थान ...लिए है कि भाषा से ही वहां के राष्ट्रीय ...न की गरिमा या लघुत्व का बोध होता ... जीवन का प्रचार प्रसार ही भाषा का ... और प्रसार है। अंग्रेजी भाषा के ... अंग्रेजी सभ्यता, संस्कृति, रहन-सहन ...त्य, कार्य करने का तरीका, पोशाक, ...व्यवस्था, शिक्षा पद्धति आदि के प्रभाव ...हमारा जीवन किस रूप में अक्रान्त है, इसे बताने की आवश्यकता नहीं है। भारत ...जनशक्ति सुप्तावस्था में है। इसलिए नेता अफसर आज ... सम्पन्न हैं। कारण है कि अंग्रेजी ... और अंग्रेजी ...ा की इतनी इज्जत है। जनशक्ति ...रण के बिना हिंदी की प्रतिष्ठा बढ़ नहीं सकती। हिंन्दी भारत के राष्ट्रीय जागरण को, भारतीय स्वतन्त्रता की आकुली दीप्ति है। राष्ट्रीय जागरण, स्वतन्त्रता को अनुभूत किये बिना हिंदी की गरिमा का अनुभव नहीं हो सकता। हिंदी का निर्माण भारत का निर्माण है, भारतीय स्वतन्त्रता को सुदृढ़ करना है, उसकी राष्ट्रीयता की नींव पक्की करनी है। इस महान उद्देश्य की पूर्ति का एक माध्यम हिंदी भाषा है।

मंदार विद्यापीठ से प्रकाशित 'हिंदी आन्दोलन' नामक पुस्तक के उपर्युक्त संदर्भ में हिंदी के निर्माण के हेतु जिन योजनाओं का निर्धारण हुआ है उसके आधार पर योजनाबद्ध रूप में कार्य सम्पादन के उद्देश्य से मंदार विद्यापीठ के तत्वावधान में हिंदी निर्माण परिषद् की स्थापना १९... ई० के दिसम्बर में हुई। इस परिषद् का विज्ञापन पत्र 'हिंदी आन्दोलन' नामक पुस्तक है। परिषद् का प्रथम अधिवेशन सुन्दरवती महिला कालेज की प्राचार्या शारदा देवी वेदालंकार की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ और परिषद् के स्थायी अध्यक्ष आनन्द शंकर माधवन हुए। प्रथम अधिवेशन में ही यह निश्चय हुआ कि परिषद् की ओर से 'प्राच्य भारती' नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित की जाय। खाली हाथ लेकर ऐसे गुरुतर पुनीत कार्य का आरम्भ हुआ। प्रत्येक कार्य की महत्ता अवस्थित है उसके उद्देश्य, उसके दृष्टिकोण पर। उद्देश्य को उदात्त सत्य की ओर अग्रसर करते ही उसका मूल्य बदल जाता है। ऐसे उदात्त सत्यकी ओर स्वयं उठने और अपने देशवासियों को उठाने से बढ़कर कोई बड़ा कार्य नहीं। इस प्रकारके आध्यात्मिक

नहीं। इस प्रकार के अध्यात्मिक ज्योति देश में आज प्रज्वलित आकांक्षा से प्राच्य भारती १९६० फरवरी से अवतरित हुई। प्राच्य निकली पर आर्थिक बोझ अत्यधिक था। देश के कार्यकर्त्ताओं एवं की सम्मतियों ने संपादक को बड़ा है और निरुत्साहित होने से जागरूक रखा है। प्रत्येक वर्ष इसके विशेषांक होते हैं। अब तक चार विशेषांक हो चुके हैं। रवीन्द्र विशेषांक, विशेषांक, युद्ध विशेषांक को देश से ख्याति मिली है। आरम्भ में पत्रिका रूप था। सन् १९६१ की मई रूप बड़ा कर दिया गया है। के हर अंक की १२५० प्रतियां हैं। देश के हर कोने में इसकी है। हमारे ग्रहकों की संख्या अत्यन्त पर देश के साहित्यकों हिन्दी प्रेमी ने प्राच्य भारती की मुक्तकंठ से की है। देश की प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं मर मर्यादा, नीतिकुशलता, निर्भीकता, विचारों का बड़ा भव्य स्वागत किया

प्रतियोगिता की घोषणा—अक्टूबर ई० के साहित्य के विभिन्न अंगो में एक को लेकर सर्वश्रेष्ठ रचना करनेवाले पुरस्कार देने की घोषणा हुई। यह प्रतियोगिता प्रत्येक तिमाही में होती है।

कहानी—अक्टूबर, नवम्बर, दिसम्बर की तिमाही में सर्वश्रेष्ठ कहानी के नरेन्द्रदेव मृदुल उज्जैन को ५१) का पारितोषिक प्रदान किया गया।

निबन्ध—जनवरी फरवरी मार्च १९६१ की तिमाही में 'वह रोग जिसने हिन्दुस्थान को तंग बना रखा है' विषय पर सर्वश्रेष्ठ निबंध लिखने पर कृष्ण प्रसाद सिंह एम० ए० छात्र पटना विश्वविद्यालय को ५१) का पुरस्कार मिला।

एकांकी—अप्रैल मई जून '६१ की तिमाही के लिए किसी आधुनिक समस्या पर आधारित कोई मौलिक एकांकी जो रंमंच पर अधिक से अधिक एक घंटे में अभिनय योग्य हो मानी गई थी पर नियम के अन्तर्गत रचनाएँ उपलब्ध नहीं हुई। जुलाई, अगस्त, सितम्बर '६१ के लिए पुनः यही विषय रखा गया। इस बार रचनाएँ आई और प्रतियोगिता में प्रथम आने के कारण श्री नरेश चन्द्र मिश्र, ३४४ दारागंज इलाहाबाद को ५१) का पुरस्कार दिया गया।

कहानी—अक्टूबर, नवम्बर, दिसम्बर ६१ की तिमाही में कहानी प्रतियोगिता में ओम तिवारी, अरुण, भण्डारी निवास नौती-नगर, लखनऊ को सर्वश्रेष्ठ कहानी के लिए ५१) का पुरस्कार दिया गया।

जनवरी १९६२ से इस प्रतियोगिता का नाम सबलपुर के श्री हरिवल्लभ नारायण सिंह जी के नाम पर उनकी महत उदारता के लिए हरिवल्लभ नारायण प्रतियोगिता है। इस प्रतियोगिता में जो व्यय होता है उसका सारा श्रेय हरिवल्लभ बाबू को ही है। इस तरह के पुनीत कार्य के लिए उनका वरद हस्त सतत खुला रहता है। पुरस्कार की राशि जो दिसम्बर '६१ तक ५१) रु० की

और एक ही व्यक्ति को पुरस्कार प्रदान किया जाता था : हरिवल्लभ नारायण प्रतियोगिता के बाद उक्त राशि १०१) हरिवल्लभ बाबू के परामर्श से कर दी गई और प्रत्येक तिमाही में ५१), २५), १५), १० के चार पुरस्कार दिये जाने लगे। जनवरी, फरवरी, मार्च '६२ की तिमाही में 'वह क्षेत्र जिसका योगदान राष्ट्र निर्माण में सर्वाधिक है' विषय रखा गया। दुःख के साथ निवेदन करना पड़ता है कि इस तिमाही में नियम के अन्तर्गत रचनाएँ उपलब्ध नहीं हो सकीं और मई जून, जुलाई की तिमाही के लिए पुनः वही विषय रखा गया। इस तिमाही में बहुत रचनाएँ आईं और रघुवीर सिंहा २३, परगनीस पागा, इन्दौर को ५१), शकुन्तला प्रसाद, पटना को २५) रु०, राजेश्वर दयाल, सक्सेना, सागर विश्वविद्यालय को १५) रु० तथा एम० पी० तिवारी अनन्त लखनऊ विश्वविद्यालय को १०) रु० का पुरस्कार प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय, तृतीय, एवं चतुर्थ होने के उपलक्ष में प्रदान किया गया।

जुलाई, अगस्त, सितम्बर ६२ की तिमाही में कहानी की प्रतियोगिता थी। बीणा सिंहा, इन्दौर को ५१), ओम तिवारी 'अरुण' लखनऊ को २५), शकुन्तला प्रसाद, पटना को १५) तथा रामनिहोरा सिंह, डालमियानगर को १०) प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ होने के उपलक्ष में पुरस्कार दिये गये।

अक्टूबर, नवम्बर, दिसम्बर १९६२ की तिमाही प्रतियोगिता के रुपये की राशि १०१) से बढ़ाकर १५५) रु० और चार के बदले पांच को पुरस्कार देने की घोषणा हुई। यह पुनीत कार्य हरिवल्लभ बाबू की उदारता के फलस्वरूप ही हुआ। इस तिमाही में प्रतियोगिता का विषय एकांकी था। श्री अधीर पारसनाथ सिंह, छपरा, डा० ... चरण महेन्द्र, नया पूरा कोटा, राज०, श्री सूर्य कांत विमल जे० आर० ... कालेज जमालपुर, श्री बी० एम० राठौर, पोद्दार कालेज, राजस्थान एवं शिवराज ... गढ़ (यू० पी०) को क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम पुरस्कार प्रदान किया गया।

जनवरी, फरवरी, मार्च १९६३ की तिमाही में निबंध प्रतियोगिता 'सीमा संघर्ष समस्या समाधान' विषय था। निबंध नियम के अन्तर्गत नहीं आ सके और अप्रैल, मई, ६३ की तिमाही के लिए पुनः यही विषय रखा गया है।

जन शिक्षण, जननियंत्रण और संचालन में पत्र पत्रिकाओं से बढ़कर माध्यम नहीं। ऐसे कार्य में नफा का ... नहीं रखा जा सकता। पर आर्थिक सु... अपेक्षित है। हमारे पास एक मात्र ... का बल है और प्रेस की सुविधा! ... जो के सुहृद बैजूभाई का ऐसे पुनीत ... में सहयोग विशेष उल्लेखनीय ... अन्दर कार्य करने की ... पर श्रम और अर्थ की सीमा ... लाँछित करनी है! सुन्दर सुपाठ्य ... त्तेजक विषय के जुटाने में हम समर्थ हैं ... हैं, पर जहाँ पैसे का प्रश्न सामने आ... हमारा सारा उत्साह फीका पड़ जाता है। हम अभी तक ऐसे पत्र के लिए इसके ...

सुन्दर कागज की व्यवस्था कर पाते
मुद्रण छपाई में विकास का आयोजन।
ता तड़क भड़क से बहुधा दूर है।
र डा० सुधांशु के बार बार के निर्देश
हम टाइप बड़ा नहीं कर सके!
सामर्थ्य यहीं दीन पड़ जाता है।
भाव-अभियोगों के रहते भी हमें
निष्ठा, लगन, श्रम का भरोसा है और
आपके स्नेह, सौजन्य, सहानुभूति
तेज बढ़ाने वाले उत्साह का।
मैं एक बात आपके सामने स्पष्ट कर
चाहता हूँ। अगर ऐसा नहीं करूँ तो
न्तर इसी घुटन में घुलता रहेगा।
निर्माण परिषद्, प्राच्य भारती का आज
कार्य है इसका सारा श्रेय माधवन
है। हम तो केवल प्रत्यक्ष दर्शी हैं।
जी का जीवन ही ऐसे कार्यों के लिए
है। शिक्षा के अभिनव अभियान
साधन के रूप में इन्होंने इसे रखा
जीवन का मिशन शिक्षा क्षेत्र में जो
क्रांति, नई दिशा देनी है उसी की पूर्ति
सहायक हो, यही इनके संतोष का
हो सकता है! मानव उदात्त सत्य की
अग्रसर हो, जीवन का सही मूल्य जाने,
लिए परिषद पत्रिका को कहां तक
बनाती है यही देखना है।
हिन्दी निर्माण परिषद् की दिशा में अब
जो कार्य हुए हैं उनका संक्षेप में मैंने
दर्शन करा दिया है। हमें यह कहने में
नहीं है कि हमारी सीमित शक्ति के
कारण इसे जो फैलाव मिलना चाहिए वह
अबाध्य नहीं हो सका। इस तरह का
कार्य सूक्ष्म होता है। उसका प्रत्यक्ष रू
नहीं होता। अन्तर्दर्शन से इसे देखा ज
सकता है।

इस अन्त में हमारे कार्यों में जिन लोगो
ने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष जो भी सहायता दी है
हमारे प्रति जिन्होंने संवेदना रखी, उसके
लिए कृतज्ञता ज्ञापन करते हैं। हम यह निवे
दन करना चाहते हैं कि अपने श्रम लगन के
सिवा हमारे पास कुछ नहीं है। इस लि
देश के इस सेवा-कार्य में जो हम करन
चाहते थे नहीं कर सके, इसका हमें पर्याप
दुःख है।"

अधिवेशन में अध्यक्षीय भाषणोपरान्
श्री यमुना प्रसाद ने सर्वप्रथम हिन्दी प्रचा
के सम्बन्ध में निम्न प्रस्ताव प्रस्तुत किया—
प्रस्ताव—१ हिन्दी सभा की ओर से गांध
जी की प्रेरणा से दक्षिण भारत में हिन्द
प्रचार के लिए उत्तर भारत के हिन्दी भा
उस समय भेजे गये थे जब हमारे देश
अंग्रेजी का अखण्ड राज्य था। स्वातन्त्र्य
प्राप्ति के बाद हमें यह आशा थी कि राष्ट्र
भाषा हिन्दी-प्रसार के मार्ग में जो रोड़े
वे शीघ्र हट जायंगे, लेकिन अंग्रेजी के व्य
मोह में फँसे लोगों ने हिन्दी की उपेक्ष
की। संसद, सरकारी कार्यालयों तथा वि
विद्यालयों में हिन्दी को जो सम्मान मिलन
चाहिए था वह नहीं मिला। भारत सरक
ने संविधान के कागज में ही हिन्दी को रा
भाषा का स्थान दिया, उसके प्रचार-प्रस
के लिए कोई महत्वपूर्ण कदम नहीं उठाया।
संविधान द्वारा अंग्रेजी को हिंदी की सह
के रूप में सरकारी काम काज चलाने के लि

द्रह वर्ष की अवधि मानी गई थी अहिंदी षी सरदार पणिक्कर जैसे विद्वानों के रोध करने के बाद भी वह अवधि अब नये षा-विधेयक के द्वारा अनिश्चित काल के हा दी गई है। इससे अहिंदी भाषी क्षेत्र हिंदी के प्रति जो आकर्षण की तप थी मेघाच्छन्न है। अतः हिंदी निर्माण परिषद् दृष्टि में हिंदी प्रसार के लिए आज निम्न र्य-क्रम अपनाने की आवश्यकता है:—

१—हिंदी भाषी क्षेत्र स्थित सभी कार्या-यों के कर्मचारी हिंदी में काम काज करने दृढ़ संकल्प करें।

२—विश्व विद्यालयों में हिंदी की प्रतिष्ठा ाने के लिए उपाधियों के नाम भी हिंदी रखे जायं। उदहरणार्थ एम० ए०, बी० ए०, इ० ए०, आदि के नाम क्रमशः आचार्य स्त्री, अन्तरिम रखे जायं।

३—हिंदी भाषी क्षेत्र से अहिंदी भाषी क्षेत्र छात्रों, शिक्षकों, प्राध्यापकों, पदाधिका-यों एवं अन्य कार्यकर्त्ताओं का स्थाना-रण किया जाय।

४—हिंदी में शोध कार्य करने एवं विविध षयों पर अध्ययन, पुस्तक लिखने के ए योग्य व्यक्तियों को उचित पारि निक र नियुक्त किया जाय। इसमें जनता र सरकार से सहायता लेने की योजना नाई जाय।

५—हिंदी में उपयोगी चित्र-पट तैयार ये जांय और उन्हें अहिंदी भाषी क्षेत्रों प्रचुर मात्रा में प्रदर्शित किया जाय।

६—हिंदी भाषी क्षेत्र के छात्र, अध्यापक ापारी, धार्मिक प्रचार, राजनीतिक एवं सामाजिक कार्यकर्त्ता विभिन्न क्षेत्रों भाषाओं को सीखने और उनमें लिखने लिए प्रोत्साहित किये जायं।

७—राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ करने एवं राष्ट्री यता की भावना जाग्रत करने के लि हिंदी भाषी क्षेत्र के युवकों को अहिन्दी भाषी क्षेत्र में वैवाहिक सम्बन्ध स्थाप का अवसर दिया जाय।

८—देश की भाषाओं की लिपि देवनागरी कर दी जाय।

यह परिषद् इस कार्य क्रम को कार्यान्वित करने के लिए सभी हिन्दी प्रेमियों से निवेदन करती है तथा देश को इस संकट पूर्ण घड़ी में सुसंघटित होकर हिन्दी आन्दोलन के पुनीत यज्ञ में भाग लेने के लिए आह्वान करती है।

परिषद् को आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यदि भारत के सभी हितचिन्तक हिन्दी प्रेमी हृदय से हिन्दी के प्रचार-प्रसार कार्य में जुट जायेंगे तो दुनिया की कोई भी शक्ति उनके इस पुण्य कार्य में बाधा डालने का दुस्साहस नहीं करेगी क्योंकि हिन्दी हिन्दी भाषी क्षेत्र की ही नहीं है, वह सारे राष्ट्र के जीवन में स्वाभाविक रूप से ओतप्रोत है और उसके पीछे महात्मा गांधी, देशरत्न राजेन्द्र प्रसाद, स्वामी दयानन्द जैसी दिव्य महान आत्माओं की वह शक्ति काम कर रही है जो हिन्दी-पौधे की जड़ में सिंचित उनके पवित्र रक्त से प्रवाहित हो रहा है; यही नहीं, उसके पीछे भारतीय जन-इतिहास संस्कृति की सुदृढ़ प्राचीर है।"

इसका समर्थन श्री रामनारायण 'मधुर' ने किया।

१६६२

री रामनारायण सिंह 'मधुर' ने भाषा सम्बन्धी निम्न प्रस्ताव प्रस्तुत किया सन् १६६५ के बाद भी अंगरेजी भाषा के साथ-साथ सखी भाषा के रूप में होगी, ऐसा विधेयक संसद में पारित हुआ है। यह विधेयक उलझन पूर्ण, भ्रामक राष्ट्रीय एकता को चोट पहुंचाने वाला संविधान में जब यह पहले से ही व्य- वस्था कर दी गई थी कि सन्, ६५ के बाद राष्ट्र भाषा पद पर आरूढ़ हो जायगी इस प्रकार के प्रस्ताव की क्या आवश्यकता इस विधेयक से देश की जनता को तो क्षोभ हुआ ही है, दुर्भाग्य से उन को भी संतोष नहीं हुआ है जो अभी अनन्त काल तक हिन्दी राजभाषा के अंगरेजी को सहभाषा बनाये रखना हैं। इससे बढ़कर दुःख और दुर्भाग्य और क्या हो सकती है कि जिन को संतोष देने के लिए यह सब कुछ गया है, वे विधेयक के वर्त्तमान रूप केवल असंतुष्ट हैं अपितु उसमें अनेक भी चाहते हैं। इस विवादास्पद को लाकर स्वयं भारत सरकार ने दक्षिण का अस्वाभाविक अनपेक्षित सामने खड़ा कर दिया है। दक्षिण के लोगों की यह मांग है कि विधेयक जहां सन '६५ के बाद' अंगरेजी चालू जा सकती है, लिखा है, उसके स्थान पर 'चालू की जायगी' होना चाहिए। इस से स्पष्ट है कि दक्षिण के कुछ राजनीतिक भावनाओं वाले क्या चाहते हैं। उन महानु भावों को यह ध्यान नहीं है कि अंगरेजी भारत की भाषा नहीं अपितु विदेशी भाषा है। राजभाषा संविधान लागू होने के पन्द्रह वर्ष के बाद राजभाषा के रूप में इसका बना रहना हमारे लिए लज्जा जनक है। स्वतंत्र देश गौरव के लिए यह आवश्यक है कि हमारी राजभाषा देश की ही कोई भाषा हो। हिन्दी देश में सबसे अधिक समझी तथा बोली जाने वाली भाषा है, इसी कारण इसे राज भाषा का पद मात्र स्थान दिया गया जो आवश्यक एवं उचित है। यह परिषद् सभी हिन्दी प्रेमी-संसद-सदस्यों से अनुरोध करती है कि वे भाषा विधेयक विरोध में प्रबल जनमत को देखते हुए जनता के प्रति अनेक कर्तव्यों का पालन करें तथा जनता से भी अनुरोध करती है। कि वह भाषा विधेयक के विरोध में स्थान-स्थान पर जुलूसों सभाओं एवं प्रदर्शनों के द्वारा भारत सरकार के निश्चय को बदलने के लिए बाध्य करे।"

इसका समर्थन श्री महेन्द्र मस्तान ने किया।

हिंदी निर्माण परिषद को यह व्यक्त ...रने में अपार हर्ष हो रहा है कि अल्प ...ओं के साथ प्राच्य भारती ने गत तीन ...र्षों के अन्दर हिंदी की जो सेवा की है ...ह संतोष जनक ही नहीं, गौरव पूर्ण भी ...। इस पत्रिका को सुसज्जित करने एवं व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए सरकारी ...नुदान की आवश्यकता है।

इसी प्रकार अमरावती प्रकाशन से जो ...हत्व पूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं वे अत्यन्त ...पयोगी एवं उत्तम हैं। इस प्रकाशन कार्य ...ो और भी सक्षम बनाना है।

अतः परिषद इन हिन्दी कार्यों को आगे ...ढ़ाने के लिए निम्न व्यक्तियों का एक ...तिनिधि मंडल बनाती है जो बिहार तथा ...ारत सरकार से अनुदान के लिए यथो...मय प्रयत्न करेगा :—

श्री गोविन्द प्रसाद झा
श्री कृष्ण किंकर सिंह
श्री यमुना प्रसाद

प्रस्तावक—महेन्द्र सिंह '...'
समर्थक—विश्वनाथ प्रसाद ...

सर्वसम्मति से परिषद के अध्यक्ष ... आनन्द शंकर माधवन चुने गये और ... ही यह अधिकार दिया गया कि परिषद ... कार्य समिति बना लें।

श्री विश्वनाथ दास ने ... साथ संगीत का प्रदर्शन किया। ... शास्त्री संगीत मनोहार था। ... विद्यापीठ के छात्रों ने संस्कृत में एक ... रूप प्रस्तुत किया।

अन्त में श्री कृष्ण किंकर सिंह ... अध्यक्ष तथा सभी आगन्तुकों को धन्यवाद दिया गया।

प्राच्य भारती का आय-व्यय विवरण

आय

वर्ष	विवरण	रु०	न० पै०	योग रु०	योग न० पै०
फरवरी	बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् से	१०००	००		
	श्री माधवनजी को बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा प्रदत्त	१०००	००		
१९६०	श्री बद्रीनारायण पचिसिया कलकत्ता से दान	५००	००		
से	श्री अनिरुद्ध तिवारी जी से दान	१००	००		
अप्रैल	श्री त्रिलोकचन्द बादला से दान	१००	००		
१९६३	ग्राहकों से	८००	००		
तक	श्री आनन्द शंकर माधवन से	५४४२	००		
	श्री बिजूभाई बम्बई से प्राप्त	४५००	००	९६३६९	६१
	प्रेस का बाकी	२९२७	६१		

व्यय

वर्ष	विवरण	रु०	न० पै०	योग रु०	योग न० पै०
फरवरी	छपाई	१०२५४	२६		
१९६०	कागज	५३१३	२५		
से	पोस्टेज	८०२	४०		
अप्रैल					
१९६३					
तक				९६३६९	६१

अमरावती प्रकाशन

१ बिखरे हीरे—आनन्द शंकर माधवन मूल्य— १

२ हिन्दी आंदोलन—आनन्द शंकर माधवन मूल्य— ७)

३ अनामन्त्रित मेहमान—आनन्द शंकर माधवन मूल्य— १०)

(बिहार राष्ट्र भाषा परिषद् द्वारा पुरस्कृत उपन्यास)

४ अनल शलाका—आनन्द शंकर माधवन मूल्य— ७)

५ Mandar Speaks—आनन्द शंकर माधवन मूल्य— २)

६ कागल झुलनियां के धक्का—रामनारायण 'सिंह मधुर' मूल्य—१. २५ नये

शीघ्र प्रकाशित होनेवाली कुछ अन्य कृतियाँ

१ दार्शनिक निदान

२ शिक्षा और शिक्षालय

३ सिन्दूर की डिबिया

४ सर्वोदय की रचना

५ पत्र सिन्धु

६ वैदिक मनुशक्ति

प्राप्ति स्थान

अमरावती प्रकाशन

डाकघर : मन्दार विद्यापीठ

जिला : भागलपुर (बिहार)

...दार विद्यापीठ प्रेस में आनन्द शंकर माधवन द्वारा मुद्रित एवं हिन्दी निर्माण परिषद् द्वारा प्रकाशित

प्राच्य भारती

जुलाई, १९६३

विश्व के दो महान राष्ट्र अमेरिका एवं रूस के बीच परमाणविक अस्त्र परीक्षण बंद करने के सम्बन्ध में समझौता हो रहा है। यह घोर अन्धकार में प्रकाश की क्षीण रेखा है। ऐसा लगता है कि अब ज्ञान-विज्ञान में संतुलन स्थापित हो जायगा। इस अवसर पर विश्व के सभी विकसित एवं अविकसित राष्ट्रों का यह पुनीत कर्त्तव्य है कि आपसी द्वेष भुलाकर विश्व शांति के लिए अपनी पूरी शक्ति से प्रयत्न करें। ऐसा प्रायः देखा जाता है कि सरकार सत्य-सूर्य के प्रकाश को देख नहीं पाती। वह प्रभुता से मदान्ध हो अपने कर्त्तव्य से च्युत हो जाती है। तो ऐसे संकट की घड़ी में साहित्यिक, कलाकार एवं राजनीतिज्ञ अपनी शुभवाणी एवं लेखनी के द्वारा जनता में नव जागरण उत्पन्न करने के लिए आगे बढ़ें। यही युग की पुकार है।

हिन्दी निर्माण परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर
बिहार

कवियों से—

चीन की बर्बरता तथा सीमा-विस्तार की नीति के प्रतिक्रिया स्वरूप भारत के जन-जन में राष्ट्रीय जागरण लाने के निमित्त 'हिन्दी-साहित्य-परिषद् की ओर से "आह्वान" (गीत संग्रह) अद्भुत सज-धज के साथ प्रकाशित करने का निर्णय किया गया है। अतः सभी कवियों से अनुरोध है कि वे अपनी दो-दो कवितायें, जो राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत हों, पांच पांच रुपये के साथ अविलम्ब भेजने की कृपा करें। प्रकाशन के वाद प्रत्येक कवि को पांच रुपये की प्रतियां भेज दी जायँगी और जो अतिरिक्त आय होगी वह सुरक्षा कोष में भेज दी जायगी। यह प्रकाशन सर्वथा सहयोग पर ही आधारित है। रचनाएँ तथा राशि निम्न पते पर आनी चाहिए।

"आह्वान"
हिन्दी साहित्य परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार)

हरिवल्लभ नारायण पारितोषिक

का चौथा आयोजन

प्रथम जनवरी से प्रारम्भ हुई अवधि के लिए इस परिषद् ने निबंध प्रतियोगिता रखी है। विषय रहेगा—'भारत-चीन सीमा-समस्या का समाधान'। निबंधकार अपनी रचना को ३००० शब्दों में सीमित रखें। इस प्रतियोगिता में भाग लेने वाले व्यक्तियों को योग्यता क्रम के अनुसार ५१, ४१, ३१, २१, ११ रुपये के पांच पुरस्कार प्रदान करने की व्यवस्था है। निबंध मौलिक, अप्रकाशित तथा अप्रसारित होना चाहिए। अनूदित रचना नहीं ली जायगी। पुरस्कृत रचनाएँ प्राच्य भारती मासिक पत्रिका में सुविधानुसार प्रकाशित की जायंगी। ३० सितम्बर तक निम्न पते पर निबंध पहुंच जाना चाहिए। पुरस्कार की राशि पुरस्कृत रचनाकार को तुरन्त भेज दी जायगी।

मंत्री,
हिन्दी निर्माण परिषद्

पो०—मंदार विद्यापीठ,
जि०—भागलपुर, बिहार

प्राच्य भारती

(हिन्दी निर्माण परिषद् की मासिक मुख पत्रिका)
बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत

सम्पादक
वार्षिक चन्दा-५) • आनन्द शंकर माधवन • प्रति अंक ५० न० पै०

वर्ष ४] जुलाई—१९६२ [अंक-४२

विषय-सूची

विश्व शांति तथा बन्धुत्व का मार्ग

आज विश्व में कौन ऐसा राष्ट्र है जो शांति और बन्धुत्व का समर्थक न हो? शांति चाहते हैं और शांति के नाम पर राष्ट्र-रक्षा के लिए अस्त्र-शस्त्र संग्रह करते हैं। जो राष्ट्र सबल हैं एवं महान समझे जाते हैं वे भी अपने समकक्ष के राष्ट्रों भयभीत रहते हैं। कुछ माह पूर्व क्यूबा में दो महान राष्ट्रों के बीच तनाव इतना कि उसके विस्फोट के भय से दुनिया थर्रा उठी थी। लेकिन ज्ञान का उदय। कुछ शक्ति प्रदर्शन के बाद ही मामला टल गया। फिर भी शीत युद्ध जारी महान राष्ट्रों में इस बात की होड़ लगी है कि कौन आगे बढ़कर विश्व प्रभुत्व करता है। दोनों के अपने अपने प्रभाव क्षेत्र हैं। निर्बल राष्ट्र उनके प्रभाव में आ। इस प्रकार दुनिया दो क्षेत्र में बँटती हुई दिखाई पड़ रही है। इन दोनों क्षेत्रों से अलग भारत जैसे कुछ देश भी हैं जो शाँति-दूत का कार्य करते हैं। और कांगो के युद्ध में भारत ने जिस प्रकार शांति एवं बन्धुत्व के उच्चादर्श से होकर कार्य किया वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इधर चीन एशिया में अपनी सैन्य वं उसके द्वारा नेतृत्व का सिक्का जमाने के लिए व्याकुल है।

विश्व में भारत की बढ़ती हुई प्रतिष्ठा चीन से नहीं देखी गई। उसने एक तरफ ा संदेश भेजा, तो दूसरी ओर छिपे रुस्तम लड़ने की तैयारी भी की। भाई-भाई रा लगा। जहां उसने दोस्ती का हाथ बढ़ाया वहां अस्तीन में छुरा भी रखा और उसे में लाया। हम गत नौ वर्षों से देख रहे हैं कि वे संघटित रूप में हमारी सीमा चले आ रहे हैं लेकिन हमने केवल विरोध पत्र देकर ही संतोष कर लिया। इस संतोष से उसका हौसला बढ़ता गया। पहले तो उसने उस तिब्बत को उदरस्थ जो भारत-चीन के बीच गलियारे का काम करता था। हमारे देश के जनप्रिय में सर्व श्री जयप्रकाश नारायण, आचार्य कृपलानी, लोहिया जी तथा अशोक मेहता री नीति की कटु आलोचना करते हुए कहा कि तिब्बत पर चीनी आधिपत्य की

...ता देना भारत सरकार के लिए उचित नहीं है। राष्ट्र संघ में भी भारत-प्रतिनिधि
...चुप्पी से सभी शान्ति प्रिय राष्ट्रों और व्यक्तियों को आश्चर्य हुआ। भारत सरकार
...शांति की नीति को चीन ने कमजोरी का लक्षण समझा। उसने अवसर देख गत
...म्बर के तृतीय सप्ताह में भारत पर धावा बोल दिया। तब स्व० डा०. राजेन्द्र
...ने पटने में कहा कि तिब्बत पर जब हमला हुआ तो हमने कुछ नहीं किया उसी
...प आज युद्ध के रूप में प्रकट हुआ है और इसे उसका प्रायश्चित करना पड़ रहा
इससे स्पष्ट है कि बर्बर के अन्याय एवं अत्याचार के सामने झुकना उसके अनर्थ
प्रोत्साहित करना है तथा शांति के मार्ग में रोड़ा बनना है।

तब प्रश्न यह उठता है कि शांति का मार्ग क्या है? हमने गांधी जी के नेतृत्व में
...ादी की लड़ाई तो लड़ी लेकिन देश-रक्षा के लिए समुचित तैयारी नहीं की। अस...
...तनी दूर तक अहिंसा के रास्ते पर चलने का हमें साहस नहीं प्राप्त हुआ है। सं...
...ोबा के नेतृत्व में शांति दल का कार्य तो चल रहा है लेकिन वह दाल में नमक के बराबर
केवल उसी के बल पर चीनी आक्रमण का सामना करना अभी असंभव दीखता है
...से अधिक वह लोगों में निर्भीकता, स्वावलम्बन, एवं एकता का भाव भर सकता
जिसकी आज हमें सख्त जरूरत है।

इधर हाल में विनोबा जी ने मार्मिक शब्दों में गांधी जी के पुराने शिष्यों —
...जी, जयप्रकाश जी, राजगोपालाचारी जी तथा कृपलानी से यह अपील की है कि
...सामान्य कार्य क्रम पर एक होकर देश का नेतृत्व करें। देश की जनता भी इसी
...से उनकी ओर देख रही है। जहां तक देश रक्षा का प्रश्न है इसपर सभी नेताओं
सम्मिलित रूप से अपनी सारी शक्ति लगानी चाहिए। इस प्रश्न पर साम्यवादी दल
...पंथियों को छोड़कर देश की सभी राजनीतिक दल एक मत से जनता का नेतृत्व करने
तैयार हैं। इस संकट की घड़ी में हमें सम्मिलित प्रयास के हाल देखने को मिले हैं
सभी दल इसके लिए बेचैन हैं कि कोई उन्हें इस सामान्य कार्य क्रम पर संघटित करे
...अल्प बुद्धि में यही बात आती है कि नेहरू जी को इसमें आगे बढ़कर नेतृ...
...था। लेकिन उन्होंने यह काम नहीं किया। इसका फल यह हुआ कि जनता
...सी नजर आ रही है। अपने पुराने साथियों को भूलाकर वे नये रंग रूटों
...उलझ गये हैं। आज अर्जुन के मोह ने उन्हें जकड़ लिया है। काश वे सं...
...नोबा की नेक सलाह मान पाते!

हां तो अब जनता नेहरू जी से रूठ कर बैठी नहीं है, वह ताल भी ठोकने लग...
...कोई व्यक्ति कितना ही महान क्यों न हो यदि वह समय पर उचित नेतृत्व न...
...ता है तो जनता दूसरा नेता चुन लेती है। समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता
...कलानी जी नये नेतृत्व के लिए प्रयत्नशील हैं लेकिन उन्हें अभी तक सफलता नहीं मिल...

। इस संकट कालीन अवस्था में जनता का उचित नेतृत्व करने के लिए लोहिया जी
पने बिछुड़े हुए पुराने साथी जयप्रकाश जी तथा पटवर्धन सहयोग करना चाह रहे हैं
ांग्रेस के कर्णधार नेहरू जी की मोह निन्द्रा नहीं टूटी तो निश्चत है कि कोई नया नेत
ागे बढ़ेगा।

आज देश-रक्षा के प्रश्न पर जिस प्रकार भारत में उथल पुथल होने की तैयारी
ी है उसी प्रकार ब्रिटेन में भी लोग बेचैन हैं। यह अस्वाभाविक नहीं। यदि देश
ा ही नहीं होगी तो फिर उसकी परम्परा संस्कृति एवं सभ्यता कहां रह जायगी
। वैज्ञानिक युग में भी हम स्पष्ट देख रहे हैं कि एक राष्ट्र दूसरे को हड़प जाना चाहता
। विश्व बन्धुत्व की भावना केवल कहने भर के लिए है। जो राष्ट्र सजग नहीं है उसका
वना कठिन है।

जो हमारी मदद कर रहे हैं निस्सन्देह वे हमारी बधाई के पात्र तो हैं ही वे विश्व
ति एवं बन्धुत्व का मार्ग भी प्रशस्त कर रहे हैं। इनके साथ हम आश्चर्य के साथ यह
देख रहे हैं कि जो राष्ट्र एक तरफ हमारी मदद कर रहे हैं वे ही दूसरी ओर चीन
भी मदद कर देते हैं। यह तो उसकी आक्रमण नीति को बढ़ावा देना हुआ। जहां
वल आर्थिक लाभ की दृष्टि से व्यवहार किया जाता है वहां कर्त्तव्या एवं धर्म का लोप
जाता है। यही नीति अशांति एवं युद्ध का कारण भी बन जाती है जो विश्व को
ट में डाल देती है। ऐसी स्थिति में इस दुर्नीति का पर्दाफाश करना आवश्यक है।
फ्रीका के राष्ट्र भी आज संघटित हो रहे हैं, शोषण एवं रंगभेद की नीति के विरुद्ध।
तरह दुनिया के सभी शोषित दलित एवं अपमानित राष्ट्र शांति बनाये रखने के लिए
नी आन्तरिक एवं विदेशी नीति सुदृढ़ आधार पर निर्धारित करें। इसके साथ ही वे
पस में मधुर सम्बन्ध स्थापित कर तथाकथित महान राष्ट्रों के चंगुल से बाहर निकलने
बुद्धि-पूर्वक प्रयत्न भी करें।

अतः यदि हम अपनी राष्ट्रीयता को जीवित रखकर संयुक्त राष्ट्र संघ में नव जीवन
कना चाहते हैं, उसे विभिन्न राष्ट्रों के प्रभुत्व प्रदर्शन का मंच होने से बचाना चाहते
और उसके द्वारा सभी राष्ट्रों में विश्व-प्रेम स्थापित करना चाहते हैं तो हमें नव
। अपने राष्ट्र को सबल बनाना है—दूसरे पर आक्रमण करने के लिए नहीं, बल्कि
लों की रक्षा करने के लिए। भारत आज आर्थिक, सामाजिक एवं सामरिक दृष्टि से
स्वी रहता तो चीन उसपर अंगुली उठाने की हिम्मत नहीं करता। विश्व शांति के
र हमें अपनी आर्थिक रीढ़ सीधी करनी होगी, राष्ट्र के सभी अंगों को पुष्ट करना
ा. भारत की आत्मा जागरूक करनी होगी। अपने सच्चे साहित्यकारों. संगीतज्ञों.
नीतिज्ञों एवं वैज्ञानिकों के समय एवं शक्ति का समुचित उपयोग करना होगा
हम अपनी रक्षा कर सकते हैं। और साथ ही दुनिया में भी शांति एवं बन्धुत्व का
ा पहुँचा सकते हैं। अन्यथा हम कहीं के न रहेंगे।

सिराजुद्दीन कांड और प्रोफ्यूमो कांड

इधर भारत में सिराजुद्दीन कांड हुआ जिसमें केन्द्र के तेल मन्त्री श्री केशवदेव मालवीय को इस्तीफा देना पड़ा। इस कांड की न्यायिक जांच भी हो चुकी है। अब पूरे प्रमाण के साथ लोकसभा में जांच विवरण रखने की सलाह श्री हरि विष्णु कामथ ने नेहरू जी को दी है। कहा जाता है श्री केशवदेव मालवीय ने सिराजुद्दीन कम्पनी से चन्दे के रूप में नाजायज रकमें ली हैं। उड़ीसा के कुछ मन्त्री भी इस कांड से सम्बन्धित हैं। उनके सम्बन्ध में एक प्रजा समाजवादी विधायक ने नेहरू जी को पत्र लिखा है। देखना है इस लोभ के अग्नि-कांड में कितने लोभियों का पतन होता है।

भारत जैसे गरीब देश में जहां इस प्रकार का लोभ कांड हुआ है वहां बृटेन में प्रोफ्यूमो कीलर कांड में कई प्रमुख देशों के राजनीतिज्ञों की काम-लीला का रहस्योद्घाटन हुआ है। बृटेन के भूतपूर्व युद्ध मन्त्री श्री जान प्रोफ्यूमो के व्यक्तिगत चरित्र तक ही यह बात सीमित रहती तो यह मामला इतना तूल नहीं पकड़ता। किन्तु रूसी दूतावास के नौसेना सलाहकार इवानोव ने कुमारी क्रिस्टाइन मार्गरेट कीलर से सम्बन्ध स्थापित कर युद्ध सम्बन्धी गुप्त बातों का पता लगाना चाहा मजदूर दल के नेताओं को डामर स्टीफेन्स से किसी प्रकार जब यह बात मालूम हुई तो उन्होंने बृटिश पार्लियामेंट में इस का भण्डा फोड़ कर दिया जिससे सारी दुनिया में यह खबर फैल गई। सारा बृटेन कांप उठा। मैकमिलन की सरकार हिलने लगी। कहते हैं कि बृटेन के इतिहास में यह पहला अवसर है जब कि एक अनुभवी ४८ वर्षीय युद्ध मन्त्री को प्रणय चक्र में फँसकर पद और मान को अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए झूठ बोलना पड़ा है और बाद में जब सारी बातें गुप्तचर विभाग के प्रयत्नों से प्रकट हुई तो झूठ को कबूल कर स्तीफा तक देना पड़ा है। यहीं तक मामला का अन्त नहीं होता है बल्कि गत १८ जून को अनुदार दल की सरकार पर अविश्वास का प्रस्ताव तक आ गया है और उस दल के ही कुछ व्यक्ति सरकार के विरोध में मतदान भी करते हैं। केवल ६९ मतों से सरकार बच तो गई लेकिन उसकी प्रतिष्ठा जनता में इतनी गिर गई है कि उपनिर्वाचन में उसके दल की भारी हार होती है। इससे अगले आम निर्वाचन में अनुदार दल का भविष्य ही संकट में पड़ गया है। यह है संयम हीन राजनेता के कर्मों का फल? इस कांड की अभी जांच जारी है। यह प्रजातन्त्र की विशेषता है कि वहां की सभी बातें प्रकाश में आ रही हैं। अब तक कुमारी कीलर के प्रेमियों में वेस्टइन्डिज का हब्शी एनकोम्बे, जमाइका के जानी एजकोम्ब गोर्डन जैसे साधारण व्यक्तियों के अलावा रूस और अमेरिका के भी कुछ राजनीतिज्ञ हैं। पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खां पर भी यह आरोप लगाया जा रहा है कि उनके साथ जलविहार हुआ है। जिस प्रकार बृटेन की जनता, वहां का प्रेस और विरो

ने सरकार पर अंकुश लगाया है उसी प्रकार उन सभी देशों की जनता एवं प्रेस से
शा की जाती है कि इस कांड से सम्बन्धित व्यक्तियों पर उचित कारवाई करें।

इंगलैण्ड में इस कांड से सम्बन्धित जमाइका का हब्शी एजकोम्बे तो १० साल की
। भोग रहा है। उसपर यह अभियोग है उसने अपनी प्रेमिका कीलर पर अन बन के
ण गोली चलाई थी। डा० स्टीफेन वार्ड भी पुलिस की हिरासत में हैं। उन पर मामला
रहा है। इनका इस कांड में विशेष हाथ इस प्रकार रहा है कि ये हड्डी के विशेषज्ञ
इनकी पहुंच बृटेन के राज परिवार तथा उच्च वर्ग के राजनीतिज्ञों में थी। ये डा०
अलावा एक चित्रकार भी हैं। अतः इसी बहाने ये इंगलैण्ड की युवतियों को अपने
न्य वास स्थान पर झील के किनारे बुलाकर वहां के उच्च वर्ग के लोगों के साथ सहवास
ने का अवसर देते थे और काफी कांचन बटोरते थे। इन्होंने ही कीलर को अनेक
व व्यक्तियों के सम्पर्क में लाया था। इंगलैण्ड के सम्मानित पत्र 'गार्जियन' ने
तीय समाचार पत्रों एवं सरकार से प्रोफ्यूमो कांड से शिक्षा ग्रहण कर देश की राजनीति
शुद्धिकरण पर जोर दिया है। हम इसका समर्थन करते हैं। और यह भी निवेदन
रा चाहते हैं कि प्रोफ्यूमो कीलर काँड का सम्बन्ध केवल बृटेन से ही नहीं, रूस अमेरिका
इका, वेस्ट इण्डिज, और पाकिस्तान से भी है इसलिए विश्व न्यायालय के द्वारा इसकी
र हो; और जो व्यक्ति दोषी पाये जायं उन्हें उचित दन्ड दिया जाय।

यह संयोग की बात है कि बृटेन और भारत दोनों में दो प्रकार के कांड एक साथ
हो गये। पहला पाश्चात्य जनता का कलंक है तो दूसरा प्राच्य जगत का। कामिनि
कांचन का गहरा सम्बन्ध है। बृटेन की विलासिता प्रोफ्यूमो कीलर कांड के रूप
हुई है तो भारत की विषमता सिराजुद्दीन कांड के रूप में अवतरित हुई है। आज
में देश की जनता विलासिता और विषमता से त्राण पाना चाहती है। लेकिन यह
सम्भव है जब कि सारी दुनिया की जनता एक स्वर से समता स्वतन्त्रता एवं भ्रातृत्व
भावना जाग्रत करने के लिए उठ खड़ी हो।

सफल अन्तरिक्ष यात्रा

गत जून के तृतीय सप्ताह में रूस के २८ वर्षीय अन्तरिक्ष यात्री श्री वेलेरी बाइ
वस्की ने वोस्तक ५ नामक यान में ४ दिन २३ घंटे ५४ मिनट में पृथ्वी की ८० बार
क्रमा करके (२०मृ६ हजार मी की दूरी तय कर) विश्व को चकित कर दिया है।
प्रकार २६ वर्षीया नीलाक्षी प्रसन्न वदना कुमारी वेलेनताइना तेरेश्कोवा वह रूसी
ला है जिसे वोस्टक-५ नामक अन्तरिक्ष यान में २ दिन २२ घन्टे ५० मिनट के भीतर
ी को ४२ बार परिक्रमा कर विश्व की महिलाओं में सर्वप्रथम गौरवान्वित होने का
वसर मिला है। उसने दुनिया को दिखा दिया है कि महिलाएँ जीवन के किसी भी

...ष के समकक्ष योग्यता प्राप्त कर सकती हैं।

...र्नल वाइकोवस्की का नाम 'बाज' और कुमारी तेरेश्कोवा का 'समुद्र पक्षी' रखा ...। ये दोनों अपनी यात्रा में एक बार एक दूसरे के निकट ५ कीलोमीटर (३ मील) ... पर आ गये थे। जब कि गत अगस्त माह में एन्द्रियन निकोलायेव और पोपोविच ... दूसरे के निकट ६.५ किलोमीटर (लगभग ४ मील) की दूरी पर आ गये थे ... चलता है कि भविष्य में दो यात्री बिलकुल करीब आकर आदान-प्रदान भी क... हैं। ये यात्री अपने अपने यानों पर यथा समय सोते और विशेष प्रकार के भोज... करते थे। खाद्य पदार्थ में विविध फलों के रस मांस की बनी ऐसी चीजें जि... काटने की आवश्यकता नहीं पड़े, रहती थीं। प्रति दिन एक यात्री को २५००-२७०... कैलोरियों की शक्ति भोजन में ठीक समझी जाती है वाह्य अन्तरिक्ष में अल्बुमे... अधिक हो सकता है इसलिए उसकी मात्रा भोजन में कुल कैलोरी का १७ प्रतिश... दी गयी थी।

गत २३ जून को मास्को में लाखों की भीड़ इन अन्तरिक्ष यात्रियों के स्वागत ... उपस्थित हुई। श्री ख्रुश्चेव ने स्वयं कुमारी तेरेश्कोवा को गले लगाया और चुम्बन किय... समय बड़ी हँसी हुई जब उन्होंने ३१ वर्षीय अविवाहित एन्द्रियन निकोला येव ... तेरेश्कोवा के के सामने ढकेल दिया और दोनों अन्तरीक्ष यात्री आपस में प्रेम पूर्व... कर्नल वाइकोवस्की और कुमारी तेरेश्कोवा को 'रूस के वीर' तथा 'आर्डर आव लेनि... उपाधि दी गई।

इस सफल यात्रा से अब दुनिया के लोगों में यह आशा बँध चली है कि नि... में मानव ग्रहों पर जा सकेगा।

हम विश्व के सभी विज्ञान प्रेमियों की तरह अन्तरीक्ष यात्रियों की सफलता ... प्रकट कर रहे हैं तथा यह आशा करते हैं कि विज्ञान की उन्नति के साथ ... एवं प्रेम की ज्योति भी जलाई जायगी। अन्यथा हम आपसी विद्वेष, संकीर्णता ... के घोर अन्धकार में भटक जायेंगे।

मैं मजदूर हूँ, मजदूरी किये बिना मुझे भोजन का अधिकार नहीं।

—प्रेमचन्द

"जमीन का मालिक वही है, जो उसपर मिहनत करता है"

— महात्मा गांधी

कुछ झांकियां

श्री अरविंद

कुछ लोग विशेष ईश्वरीय रक्षा में ...ास करने या अपने आपको एक उपकरण ...तरह ईश्वर के हाथों में छोड़ देने में गौरव अनुभव करते हैं। लेकिन मैं तो परिणाम पर पहुंचता हूँ कि प्रत्येक मनु- ...के अन्दर एक विशेष ईश्वरीय शक्ति है ... मैं तो समझता हूँ कि ईश्वर ही मजदूर ...दाल को चलाता है और वही एक छोटे ... के मुख में तुतलाता है।

ईश्वरीय रक्षा केवल वही नहीं है जो कि ... हुई नैया से जिसमें कि और सब डूब ... हैं, मुझे बचा लेती है, वह भी ईश्वरीय ... ही है जो कि मेरी रक्षा के अन्तिम ... को मुझसे छीन लेती है और मुझे निर्जन सागर में डुबो देती है, जब कि दूसरे बच जाते हैं।

कभी-कभी कष्ट, आपत्ति और संघर्ष के ... आकर्षण की अपेक्षा विजय का सुख होता है। तो भी विजयशील मानवीय ...ा का लक्ष्य विजयमाला ही होना चाहिये ...क सूली।

वे आत्मायें जिनका कोई ऊँचा ध्येय नहीं ..., जिनमें कोई अभीप्सा नहीं होती, ...श्वर की असफलतायें हैं। लेकिन प्रकृति ... खुश होती है और उनकी संख्या को ...ा चाहती है, क्योंकि वे उसके साम्राज्य ...स्थिर रखने और बढ़ाने का निश्चय दिलाते हैं।

गरीब, अज्ञानी, जन्म से अपंग और अभागे लोगों की जन-साधारण में गिनती नहीं है, बल्कि जन साधारण वे हैं जो ... छोटी-छोटी चीजों में और साधारण मनुष्यता में ही सन्तुष्ट हो जाते हैं।

मनुष्यों की सहायता करो, लेकिन उन्हें उनकी शक्ति से ही वंचित मत कर दो। बेशक मनुष्यों का पथ-प्रदर्शन करो और उन्हें शिक्षित करो, लेकिन ध्यान रखो कि उनकी नवीन कार्य करने की शक्ति और मौलिकता अक्षुण्ण बनी रहे। बेशक दूसरों को अपने में मिलाओ, पर बदले में उन्हें उनकी प्रकृति का पूर्ण देवत्व भी प्रदान करो। वही नेता और गुरु है जो कि यह सब कर सकता है।

परमेश्वर ने संसार को एक युद्धक्षेत्र बनाया है जिसमें कि लड़ाकू एक दूसरे को पैरों तले कुचल रहे हैं और जिनमें बड़ी बड़ी लड़ाई और संघर्ष की पुकारें हो रही हैं। क्या तुम ईश्वरीय शांति को उस मूल्य के जो कि उसने इसके लिये निर्धारित किया है बिना चुकाये ही पा सकते हो?

पूर्ण प्रतीत होने वाली किसी भी सफलता पर विश्वास मत करो। सफल हो चुकने के बाद भी तुम देखोगे कि अब भी बहुत कुछ करने को बाकी है। आनन्दित रहो

...आगे बढ़ते चलो; क्योंकि इससे पहले
...वास्तविक पूर्णता को प्राप्त करो तुम्हें
...श्रम का मार्ग तय करना होगा।
...इससे बड़ी घातक भूल और क्या होगी
...बीच की किसी मंजिल को ही
...समझे रहो या अपने असली लक्ष्य को
...बीच के किसी विश्रान्ति स्थान पर
...देर तक टिके रहने की गलती करो।
...जब कभी तुम्हें कोई महान अन्त दिखाई
...विश्वास रखो कि महान् आरम्भ होने
...है। जहां कोई दर्दनाक विनाश तुम्हारे
...को भयभीत करना हो तो अपने मन को
...बता दो कि किसी महान् रचना का होना
...अवश्यम्भावी है। परमेश्वर अन्तरात्मा की
...आवाज में ही नहीं, बल्कि अग्नि और
...में भी है।

...जितना ही बड़ा विनाश होगा उतना ही
...रचना का खुला अवसर होगा। परंतु
...दीर्घकाल तक धीरे-धीरे होता रहता
...दबाने वाला होता है, और रचना
...विलम्ब से आती है और इसकी सफ-
...में बाधायें पड़ती हैं। रात्रि बार-बार
...कर आती है और दिन देरी से आता
...ऐसा प्रतीत होता है मानो थोड़ी देर
...एक मिथ्या उषा काल आकर चला
...है। इसलिये निराश मत हो, बल्कि
...सावधान रहो और अपना काम करते जाओ।
...कि उत्कट आशा रखते हैं वे जल्दी निराश
...होते हैं। न आशा लगाओ और न डरो,
...परन्तु निश्चित रहो कि परमेश्वर का कोई लक्ष्य
...है, तुम्हारी इच्छा अवश्य पूर्ण होगी।

उस दैवी कलाकार का हाथ बहुधा इस
तरह काम करता है मानो वह अपनी प्रतिभा
और अपने उपकरण के विषय में अनिश्चत
हो। ऐसा प्रतीत होता है कि वह किसी चीज
को हाथ लगाता है उसकी परीक्षा करता
है और छोड़ देता है, उठाता है, फेंक देता
है, और फिर उठा लेता है; श्रम करता है
और प्रकृतकार्य हो जाता है, अधूरा काम
करता है और फिर उसे जोड़ देता है।
आश्चर्य और निराशायें उसके काम के नियम
रहते हैं, जब तक कि सब कुछ बन कर
तैयार नहीं हो जाता। जिसको पहले चुना
था, अब उसे निश्चत करके अस्वीकृति के
अथाह गढ़े में डाल देता है और पहले जिसे
अलग कर दिया था वह अब उसके विशाल
महल के कोने का पत्थर बनता है। परन्तु
इस सब के पीछे हमारी तर्कणा शक्ति का
अतिक्रमण कर जाने वाली ज्ञान की एक दिव्य
चक्षु और अनन्त योग्यता की मंद मुस्कान
है।

परमेश्वर के सामने अपरिमित समय है
और उसे हमेशा जल्दी में रहने की आवश्य-
कता नहीं है। वह अपने उद्देश्य और सफलता
के विषय में निश्चन्त है और उसे कुछ चिन्ता
नहीं है, यदि वह अपने काम को पूर्णता के
अधिक समीप जाने के लिये सैकड़ों बार
तोड़ता है। धैर्य हमारे लिये सबसे बड़ा
आवश्यक पाठ है। लेकिन डरपोक, सन्देह-
वादी, श्रान्त, आलसी महत्त्वाकांक्षा रहित
और निर्बल व्यक्ति की प्रगति करते हुए
मानसिक सुस्ती धैर्य नहीं है, धैर्य वह है
शाँति से ओत-प्रोत है, शक्ति का संचय
करता है और उन उत्कृष्ट महान प्रहारों के

क्षा करता है और उनके लिये अपने को तैयार करता रहता है जो चाहे हों, फिर भी भाग्य को पलटने के लिये त हैं।

क्यों परमेश्वर इतनी उग्रता से संसार हथौड़े की चोट कर रहा है, इसे कुचले है, आटे की तरह गूँथ रहा है, रुधिर नदी में स्नान करा रहा है और धधकती भट्ठी की नारकीय आग में तपा रहा इन कारण क्योंकि आम जनता की ध्यता अब भी उस कठोर, खराब, अशुद्ध सी धातु के रूप में है जो कि बिना तपाये लाये किसी सुन्दर आकृति में ढाली जा सकती है। जैसा उसके पास माल है, ी ही उसकी कार्य प्रणाली है। यदि का माल अधिक कोमल और शुद्ध धातु के में बदल जाये तो उसकी प्रणाली भी क कोमल, मधुर श्रेष्ठ औप उपयोग के वे अधिक अच्छी होगी।

उसने ऐसा माल क्यों बनाया या चुना कि उसके सामने चुनने के लिये सभी व अंत्र खुले हुये थे। इस कारण क्योंकि के दिव्य विचार के सामने न केवल न्दर्य, मधुरता और पवित्रता ही थी, बल्कि क, संकल्प, और महत्ता का विचार भी के सामने था। शक्ति को तुच्छ मत सम-, न ही इसके कुछ पहलुओं की कुरूपता कारण इससे घृणा करो; यह भी मत झो कि परमेश्वर केवल प्रेममय ही है। पूर्ण पूर्णता में कुछ अंश वीरता का भी और रता तक का होना चाहिये। बड़ी से बड़ी के से बड़ी से बड़ी कठिनाइयों में से गुजर कर ही प्राप्त होती है।

सब कुछ बदल जाता यदि मनुष्य एक बार अपने आपको आध्यत्मिकता के सांचे में ढालने के लिये तैयार हो जाना। परन्तु उसकी मानसिक और भौतिक प्रकृति इस ऊँचे नियम के प्रति द्रोह करती है। उसे अपनी अपूर्णता ही प्रिय है।

आत्मा हमारे व्यक्तित्व का असली स्वरूप है। मन और शरीर अपनी अपूर्व दशा में इसके आवरण हैं। परन्तु पूर्ण अवस्था में इसके ढांचे हैं। केवल आध्यात्मिक होना ही पर्याप्त नहीं है, बेशक यह कुछ आत्माओं को स्वर्ग के लिये तैयार कर देता है, लेकिन इस लोक को जहां वह था बहुत कुछ वहीं छोड़ देता है। न ही समझौता युक्ति का मार्ग है।

संसार तीन प्रकार की क्रान्तियों से परिचित है। प्राकृतिक क्रांति कई प्रबल परिणामों को पैदा करती है, नैतिक और बौधिक क्रान्ति का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है और इसके फल अत्यन्त श्रेष्ठ हैं, किन्तु आध्यत्मिक क्रांति महान बीजों का बपन-मात्र है।

यदि त्रिविध परिवर्त्तनपूर्ण संगति में मिल सकें तो एक निर्दोष कार्य होगा। परन्तु मनुष्य का मन और शरीर आते हुये आध्यात्मिक प्रवाह को संभाल नहीं सकते। बहुत सारा तो बिखर जाता है, शेष बहुत सा विकृत हो जाता है। हमारी भूमि के बौधिक और शारीरिक क्षेत्र में उन्नति की दिशा में बहुत से परिवर्त्तन की आवश्यकता है, तभी आध्यात्मिक बीजों को बोने का कुछ लाभ होगा।

प्रत्येक धर्म ने मनुष्य-जाति की कुछ न कुछ सहायता की है। प्राचीन बहु देवतावादी मूर्तिपूजक धर्म (पैगनिज्म) ने मनुष्य के अंदर सौन्दर्य के प्रकाश का विकास किया है। उसके जीवन को उच्च और विशाल बनाया और उसके उद्देश्य को चहुँमुखी पूर्णता की ओर अग्रसर किया है। ईसाइयत ने उसे ईश्वरीय प्रेम और दान का कुछ दर्शन कराया है। बौद्ध धर्म ने उसे शुद्ध, बुद्ध और नम्र बनने का एक श्रेष्ठ मार्ग दिखाया है। यहूदी और इस्लाम धर्म ने धार्मिक रूप से क्रिया में सच्चे और ईश्वर के प्रति उत्कट भक्ति युक्त होना सिखाया है। हिन्दूधर्म ने उसके लिये बड़ी से बड़ी और गहरी से गहरी आध्यात्मिक संभावनाओं को खोल दिया है। एक बहुत महान कार्य हो जाता यदि ये सब ...ीय दृष्टियां आपस में मिल जातीं और अपने आपको एक दूसरे में अन्तर्हित कर देतीं। लेकिन बौद्धिक सिद्धान्तवादिता और साम्प्रदायिक अहंकार मार्ग में रुकावट बन कर खड़े हो जाते हैं।

सभी धर्मों ने बहुत सी आत्माओं को बचाया है, पर मनुष्य को आध्यात्मिकता के सांचे में कोई भी नहीं ढाल सका है। क्य... इसमें सम्प्रदाय या मत की आवश्यकता है, बल्कि अपने आत्मिक विकास के लिये स्थिर और सर्वांगीण प्रयत्न की अपेक्षा...

आजकल संसार में हमें दीखने... परिवर्त्तन अपने आदर्शों और उद्देश्य... बौद्धिक, नैतिक और शारीरिक हैं। आ...त्मिक क्रांति अपने अवसर की प्रतीक्षा... और इस बीच में इधर-उधर अपनी... उछाल रही है। जब तक यह नहीं आत... अन्य क्रांतियों का महत्त्व समझ में आ सकता और तब तक वर्त्तमान घटन... की व्याख्यायें और मनुष्य के भविष्य... के प्रयत्न सब व्यर्थ हैं। क्योंकि इसका रूप, शक्ति और घटना ही मनुष्य ज... के अग्रिम चक्र को निश्चित करेंगे।

हमारा हिन्दी आन्दोलन

त्रिशूलधारी प्रसाद सिंह,
अध्यापक उच्च विद्यालय, नारायणपुर (भागलपुर)

आधुनिक भारत की कई जटिल समस्यायें । ये सारी समस्यायें इस देश की प्रगति जुड़ी हुई हैं। इनमें राष्ट्र भाषा की समस्या अपना विशेष महत्व रखती है। इसको कर सम्प्रति सारे देश में व्यापक आन्दोलन का जाल फैला हुआ है।

सोलह वर्ष पूर्व हमारा देश परतंत्र था। सारी रीति-नीति पर विदेशी शासन हावी था। हम स्वतन्त्र रूप से अपने विचारों की अभिव्यक्ति नहीं कर पाते थे। हमारे स्वतंत्र विचारों पर विदेशी शासकों की बन्दिशें लगी हुई थीं। उस समय देश के छोटे बड़े नेता अपने राजनैतिक मंचों से हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रस्ताव पारित किया करते थे। उत्तरी भारत के ही नहीं अपितु दक्षिणी भारत के राष्ट्रिय कर्णधार भी हिन्दी के प्रबल समर्थक थे। हमारी विशुद्ध राजनीति का प्रचार-प्रसार हिन्दी के माध्यम से ही होता था। विश्व-वंद्य गांधी, तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, ऋषि दयानन्द, राजगोपालाचारी, सरदार पटेल, जवाहरलाल नेहरू प्रभृति नेता भारत की सुख समृद्धि के लिए हिंदी की उपादेयता पर जोर देते रहे। बिहारी, बंगाली, मद्रासी, गुजराती—नेता हिंदी के पक्ष में अकाट्य तर्क प्रस्तुत करते रहे। ऐसा प्रतीत होता था कि हिंदी बड़ी बहन थी और तमिल, तेलगू, कनाडी, उर्दू, बंगला, उड़ीसा जैसी भाषायें छोटी बहनें बन कर बड़ी बहन का समादर कर रही थीं। भारत के किसी भी भाग में हिंदी साम्राज्यवाद के विरोध में कोई राष्ट्रघाती आन्दोलन नहीं छिड़ा हुआ था। राजनैतिक एवं धार्मिक संस्थानों की ओर से हिंदी को जनप्रिय बनाने के लिए अनवरत प्रयास होते थे। हिंदी गंगा की निर्मल जल-धारा के समान इस देश के धरातल को पवित्र कर कर रही थी। स्वराज्य-आन्दोलन की अग्रणी संस्था कांग्रेस के प्रस्ताव हिंदी में पारित होकर समस्त देश में प्रसारित होते थे। उस समय देश को विदेशी दासता से मुक्त करना ही मूर्धन्य लक्ष्य था। इस लक्ष्य-दिशा की ओर भारतीयों को अग्रसारित करने में हिंदी प्रेरणा दिया करती थी। अतः हमारे नेता संकल्प लेते थे कि वे स्वराज्य प्राप्त करके हिंदी को राजभाषा राष्ट्र-भाषा घोषित करेंगे। अन्य देशों की प्रगति की प्रतिक्रियायें भी इन नेताओं के मानस पर थीं।

हमारे विदेशी शासकों की अपनी शासन-पद्धति थी। उनका सूत्र संचालन अंग्रेजी के माध्यम से होता था। तदर्थ सीमित संख्या में अंग्रेजीदां भारतीयों की आवश्यकता पड़ती थी एतदर्थ देश के कोने कोने में विद्या

लयों, महाविद्यालयों एवं विद्यालयों
स्थापना की गयी पर सीमित प्रति शत
छात्रों को ही डिग्रियां दी गयीं
अंग्रेजी भी जन-भाषा नहीं बन पायी।
अंग्रेजीदां भारतीय सरकारी कर्मचारी बन कर
जीवन बिताने लगे। ग्रामीणों से
सम्बन्ध टूटा सा रहा। फलतः ये भार-
अंग्रेजियत के रंग में रंजित हो
राष्ट्र-प्रेम को जलाँजलि देते रहे।

अब हम स्वराज्योपरान्त हिन्दी की इस
पर कुछ शब्दों में आलोकपात करना
समझते हैं। जहां स्वराज्य के पहले
शासन से मुक्ति पाना हमारा राज-
उद्देश्य था वहां स्वराज्योपरान्त सत्ता
होड़ में राजनीति का उपयोग नाना प्रकार
से किया जाने लगा। अब तो
दायवाद, जातिवाद, वर्गवाद, दलबाद,
वाद, लालफीतावाद आदि जनतंत्रविरोधी
की कतार में भाषावाद भी आ गया
यह हमारी साम्प्रतिक राजनीति का
हथकंडा बन गया है। इसकी चक्की
आज राष्ट्रभाषा-राजभाषा बनने वाली
भी पिसी जा रही है। अब इस भाषा-
की पीठिका में सन्निविष्ट उद्देश्य को
प्रकाशित करना हम तर्कसंगत समझते हैं।

जिस तरह जातिवाद को सत्ताधीश बनने
साधन बनाया गया है उसी तरह भाषा-
को भी उत्तर-दक्षिण-भारत के बीच
वैमनस्य उत्पन्न करने का माध्यम बना लिया
गया है। इस भाषावादी दृष्टिकोण में भी
भाषावादियों की राजनीति काम कर रही
है। अस्तु, ऐसी राजनीति की दुर्बलता पर
इसमें ध्यान देकर हमें अपने देश को सर्वांगी
विकास की ओर अभिमुख करना है। इ
लिए तो आज हिंदी आन्दोलन की अनिव
र्यता है।

इम हिंदी की प्रशस्ति पर यहां प्रक
डाल रहे हैं।

भारतीय संविधान ने चौदह भाषा
को वैधानिक मान्यता दी है। इन भाषा
के अलावा भी हमारे देश में कई क्षेत्र
भाषायें हैं। पर संविधानुसार ६५ के ब
भी हिंदी राजभाषा के पद पर आसीन ह
नहीं जा रही है। हाल की संसद में हिंद
प्राण सेठ गोविन्ददास एवं अन्य स
स्यों के प्रबल विरोध की उपेक्षा कर, हि
को आकर्षक शब्द-जाल में आवद्ध ब
अंग्रेजी को सखी भाषा घोषित कर हम
राष्ट्रिय सरकार ने राष्ट्रीयता को जो चुनौ
दी है वह हम भारतीयों के लिए कलंक
है। यूँ तो आक्रान्ता चीन की रीति-न
हमारे लिए घातपूर्ण है। पर अन्य
प्रगतिशील देशों की नाईं इस देश ने
जापानी भाषा को अगली पंक्ति से
दिया है। आज चीन के सभी संस्था
कार्यालयों, स्टेशनों, पत्रालयों, भोजना
पुस्तकालयों, जन-पथों आदि सार्वज
स्थानों में चीनी भाषा के पुष्ट शब्द पटो
लिखित हैं जिनका परायण कर एक च
दूसरे चीनी से परिचय प्राप्त कर सकता
इंगलैन्ड, जापान, अमेरिका, रूस, प
जर्मनी आदि देशों में भी भाषाओं
एकता पर ध्यान रख कर सार्वजनिक प्र
में आने वाली भाषाओं को अभिव्यक्त

नागरिक एक दूसरे से नैकट्य स्थापित करने में सक्षम होते हैं। पर भारत ही एक ऐसा देश है जहां सत्ता प्राप्ति की होड़ में हिंदी की मान मर्यादा पर भी धूल फेंकी जा रही है। हमारे राष्ट्रिय कर्णधारों ने सत्यहीन तर्कों को प्रस्तुत कर अंग्रेजी को हिंदी पर दस वर्षों तक हावी रहने दिया है। यह नीति हिंदी को राजभाषा के पद पर पहुँचाने में कहां तक लाभप्रद हो सकती है, इसका निर्णय मनुष्य तो नहीं, भगवान ही कर सकता है। हिंदीभाषियों की संख्या तो देश में अंग्रेजीभाषियों से चालीस गुणी है, फिर दस वर्षों में हिंदी राजभाषा बनने के योग्य होगी, यह हास्यास्पद तर्क है। किसी अस्वस्थ व्यक्ति को स्वस्थ बनाने के लिए शुद्ध हवा, शुद्ध जल एवं पुष्ट भोजन से अलग रखा जाय, यह तर्कपूर्ण नहीं। हिंदी को अंग्रेजी के जेलखाने में रख कर इसकी द्रुततर प्रगति अयथार्थ या असंगत प्रतीत होती है। यह अविवाद सत्य है कि हमारी सरकार ने राजभाषा विधेयक बना कर अंग्रेजी की ही स्थिति को सुदृढ़ किया है। हमें अंगरेजी के प्रति हार्दिक आदर है। इस भाषा ने आज विश्व की राजनीति में अपना स्थान बना लिया है। यह अन्तरराष्ट्रिय सम्बन्ध स्थापन का एक माध्यम है। अतः हमें इसका भी आदर करना ही है। पर अपनी माता को रोग-शय्या पर कहराती छोड़ कर पुत्रवती अन्य माता की सेवा में ही संलग्न रहना भी तो व्यापक दृष्टिकोण नहीं। हमारी अन्य माताएँ भी आदरणीया ही हैं पर हमें प्रसूत करने वाली माता के स्वास्थ्य पर भी सम्यक ध्यान देना है। इसे उपेक्षित रख हम अन्य माताओं की भी सच्ची सेवा कर सकते। कहने का अधारभूत तात्पर्य है कि हिंदी हमारे जीवन के संस्कारों जुड़ी हुई है। यह हमारे मांस, हमारी हमारे हाथ, पैर, सिर सभी अंग-प्रत्यं सम्बद्ध है। इसके साथ हमारी कर्मे का अटूट सम्बन्ध है, यह एक शाश्वत है। इस पर थोड़ा और प्रकाश-पात अभि है। जीवन-धारण में शरीर, मन एवं आ की अपरिहार्यता होती है। शरीर के लि भोज्य साधन, मन के लिए उदात्त विचा एवं आत्मा के लिए आध्यात्मिक चिन्तन आवश्यकता पड़ती है। शरीर, मन एवं आ के बीच अन्योन्याश्रित सम्बन्ध रहने के का इनके पारस्परिक विकास की ओर हमें नि न्तर ध्यान रखना है। इनमें एक का विका दूसरे के विकास से सम्बद्ध है। हम अपने म में स्वस्थ एवं सुसंस्कृत विचार तभी सकते जब हम अपनी प्राकृत भाषाओं माध्यम से इन विचारों का विनिमय क

उपरिलिखित पंक्तियों में हम निवे कर चुके हैं कि प्रगतिशील देशों के नागरि लोक-प्रचारित भाषा में ही आर्थिक, सामा राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक सम्ब स्थापित कर पाते हैं। पर हमारे देश में अंगरेजी का रंग इतना गाढ़ा हो गया कि आज भी राजपथों, दूकानों, सरका कार्यालयों, शिक्षालयों, उपाहारालयों चिकित्सालयों आदि सार्वजनिक स्थान अंग्रेजी शब्दों में ही घोषणा पट गड़े हु हैं। हमारा वाह्य रूप ही स्वतन्त्रता के

...रंग पाया है, अन्तर में अंग्रेजी का
...यथावत है। इन घोषणा पटों पर अंकित
...ओं की अभिज्ञता के अभाव में कितने
...वाले नागरिक अंग्रेजी की बलि-वेदी
...अहर्निश जीवन अर्पित कर रहे हैं हमारे
...इससे अधिक लज्जा की कौन सी बात
...सकती है? एक अन्य उदाहरण द्वारा हम
...विचारों का स्पष्टीकरण करते हैं।
...देश में तृतीय पंचवर्षीय योजना के
...ों की भी आधी अवधि समाप्त हो चुकी
...पर हम अभीप्सित लक्ष्य से दूर हैं
...कई कारणों में भाषा सम्बन्धी भी एक
...है। इन आयोजनाओं को कार्यान्वित
...के लिए जिम्मेदार सरकारी कर्मचारी
...देहातों में जाते हैं जहां विरले ही
...जीदां नागरिक रहते हैं। ऐसे कर्मचारी
...चाल ढाल, बोल चाल, शान-शौकत
...देख सुन कर सीधे-सादे नागरिक निक-
...सम्पर्क में नहीं आ पाते।
...ये कर्मचारी भी भोले-भाले ग्रामीणों
...सरकार के दृष्टिकोण को अच्छी तरह
...व्यक्त करने में सक्षम नहीं हो पाते
...फलतः हमारी आयोजनायें को सफल
...ग्रामीण .. असमर्थ रहते हैं। सरकार
...सम्पर्क विभाग में पानी की तरह
...बहा रही है। पर इस विभाग के कर्म-
...भी जन सम्पर्क से सुदूर हैं। जब तक
...चारियों में अंग्रेजियत की लालफीता-
...रहेगी तब तक हमारे देश की योजना
...बिन्दु पर पूर्णतः नहीं पहुँचायी जा
...इस दृष्टिकोण को सृजित करने वाले
...कारणों में एक कारण भाषा भी है।
यदि हमारी बातें नागरिक समझते हैं तभी
...ग्रहण भी कर सकते हैं सरकारी कर्म-

चारियों द्वारा प्रयुक्त 'टारजेट', 'कोटा'
'डेबलपमेन्ट', 'स्कीम', 'रिलीफ', 'इरिगेशन'
'कम्पोस्ट', 'ट्यूबवेल', 'साइट', आ...
शब्द ग्रहण करने में भारतीय ग्राम...
कितने नागरिक समक्ष हैं जिनमें हजार...
एक अंग्रेजीदां हैं। ये अंग्रेजीदां ग्राम...
युवक भी तो अंग्रेजियत के रंग में...
रहने में ही अपना गौरव समझते हैं।
इस विदेशी दृष्टिकोण को बदलना है।
अपनी योजना में ऐसी भाषा को सम...
करना है जो हमारी अभिव्यक्ति का ...
माध्यम हो सकती है। आज हिंदी ही ...
भाषा है जो राजभाषा नहीं हो सकी,
लोकभाषा अवश्यमेव बनायी जा सकती...
हमें इस दिशा की ओर लगन एवं क्षि...
से अभियान करना है; हम दक्षिण भ...
की भाषाओं का आदर करना प्रारम्भ कर...
दक्षिण भारत भी हिंदी को अपनाने में...
बढ़ता रहेगा। उत्तर-दक्षिण की यह भेदभ...
नीति तो इन सत्तालोलुप राजनीतिज्ञों...
पैदा कर दी है। अस्तु, हिंदी को राज...
की ज्वालामुखी से बचाने के लिए हमें...
आन्दोलन की गति क्षिप्र करनी है...
आन्दोलन द्वारा हमें चीन की चुनौती...
सामना करने वाली सरकार के प्रतिरक्षा...
कार्यों को अक्षय बल पहुँचाना है।...
पूज्य प्रधान मंत्री एवं गृह मंत्री ने भी...
भाषा विधेयक पास करते हुए हिंदी...
प्रशस्ति को स्वीकृत किया है। अस्तु,...
आन्दोलन सरकार के विरुद्ध नहीं होक...
कारी दृष्टिकोण में हिंदी प्रेम भरने...
में करना है। हमें देश के सभी भाग...

दी को इस तरह प्रसारित कर देना है कि
ह स्वतः अंग्रेजी पर हावी होकर हमारी
ष्ट्रभाषा बन जाय। हिंदी के बिना हम
रतीय होकर भी भारतीय राष्ट्रीयता के
ंस्कार से अपने को अलंकृत नहीं कर पाते।
तु, जब तक हम भारतीय अपनी भारती-
ा की पहचान नहीं करते तब तक चीनी
पाकिस्तानी हमें भय प्रदर्शित करते रहेंगे।
ारे वेद, गीता, रामायण, सत्यार्थ प्रकाश
सर्वदेशीय ग्रन्थों में हिंदी के वे प्रभा-
ःपादक शब्द हैं जिन्होंने समस्त विश्व को
प्रत किया है। अतः आक्रान्त चीन को
देड़ने में भी हमें अपनी हिंदी भाषा को
हथियार बनाना है। उत्तरी भारत के
श्वविद्यालयों को दक्षिणी भारत की एक
षा को अनिवार्य बना कर दक्षिणी भारत
विश्वविद्यालयों में भी हिंदी की अनिवा-
ा पर जोर डालना है। अनौपचारिक ढंग
उत्तर-दक्षिण के भाषामूलक वैषम्य को
ा कर इसे विश्वविद्यालयीय विधेयक का
देना है। हमारे लिए यह लज्जा एवं
का विषय है कि अन्य देशों के नाग-
चन्द्रलोक-अभियान, पृथ्वी की प्रदक्षिणा
दि असम्भव कार्यों को भी सम्भव
रहे हैं और हम अपने देश की संस्कृति
जीवन्त रखने वाली हिंदी को राजभाषा
श्रेणी में नहीं ला पाये हैं। क्या हमारे
ए यह एक कलंकपूर्ण चुनौती नहीं है?
हमारे पुरुषार्थ, शौर्य, औदार्य शील
दि सुसंस्कारों को इस अंग्रेजियत से

मिटाया नहीं जा रहा है? क्या हिंदी
द्रोहिता राष्ट्रद्रोहिता नहीं है? क्या
अपनी योजना को मुट्ठीभर अंग्रेजीदां कर्म-
चारियों द्वारा ही सफल कर सकेंगे? क्या
साठ सत्तर प्रतिशत भारतीयों के प्रयोग
आने वाली हिंदी उपेक्षिता भाषा रहेगी
क्या तेलगू, कनाडी, गुजराती, उर्दू, बंगला
उड़िया आदि भाषाओं को हम राजनैतिक
सत्ताधीशों के दांव-पेचों से म्रियमाण हो
देंगे? कश्मीर से कन्याकुमारी के नागरिकों
को उपयुक्त प्रश्नों के उत्तर देने हैं।

विगत दो तीन मासों की अवधि में
हिंदी ने सिया राम शरण गुप्त, गुलाब राय,
शिवपूजन सहाय, राहुल सांकृत्यायन, गोपाल
सिंह नेपाली सरीखे सच्चे सपूतों को खो
दिया है। हिंदी के ये मूर्धन्य समर्थक राज
भाषा विधेयक के प्रबल विरोधी थे।
विधेयक को उनकी दृष्टि से अलग रखने के
लिए ही परमात्मा ने उन्हें अपने पास बुला
लिया। यह वर्ष हिंदी के लिए अपने संर-
क्षकों को खोने का वर्ष है। पर हमें अपने
हिंदी प्रेम को और भी प्रबल करना है।
हमें अपने उन मनीषियों को अमर रखना
है। उनकी कृतियां हमारा मार्ग-दर्शन कर
रही हैं। हमारी हिंदी-सेवा ही मनीषियों
के प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।

आवें, हम हिंदी आन्दोलन की प्रगति
के लिए अटूट संकल्प लें अपने तपः पूत
हिंदी साधकों की अन्तिम इच्छा पूरी करें।

—

मजदूरों का क्लबघर

शिवनारायण श्रीवास्तव

...ह बजे का समय था। ठंडी हवाएँ ...रही थीं। मैं अपनी टोली के साथ डांस ...क्लबघर में गया। यह क्लबघर फ्री ...ट्रेड यूनियन कांग्रेस की ओर से बनाया ...था। करीबन एक हजार लोगों के ...की कुर्सियाँ लगी हुई थीं। स्त्री-पुरुष ...ग, बीयर, वाइन सोडा आदि पी रहे ...और कुछ चाय और काफी पी रहे थे। ...में एक ऊँचा सा मंच बना हुआ था। ...कलाकार बैठे हुए बाजा बजा रहे थे। ...पुरुष जोड़ों में मुख पर मुस्कराहट लिए ...में हाथ लिए, पुरुष स्त्री की कमर में हाथ ...नृत्य कर रहे थे।

...यहां पर फैक्टरियों में काम करने वाले ...रों का बहुमत था। उनके कपड़ों तथा ...नों से मजदूरवर्ग और मध्यमवर्ग की खाई ...हुई दिखाई पड़ रही थी एक नवयुवक ...यूनियन कार्यकर्ता स्टेज पर लाऊडस्पी-...के सामने खड़ा होकर बोला—'दोस्तों, ...बड़ी खुशी की बात यह है कि हमारे ...क्लब में हिन्दुस्तानी ट्रेड यूनियन काँ-...के एक मेहमान शरीक हैं। मैं अपनी ...से तथा आप सब की तरफ से उन्हें ...नाम करता हूँ। "उनके यह कहते ही पूरे ...हाल में तालियों की गड़गड़ाहट हुई। ...उसके बाद वह साथी फिर बोला—"आज कुछ प्रोग्राम होगा, उसे दुभाषिया अनुवा... करके बताता रहेगा।"

मैं अपनी टोपी के साथ पेग मिला-मि... कर वाईन और वोडका पी रहा था। ... पुरुष उत्सुक होकर हमारी ओर देख रहे थे।

अब जोकरों का प्रोग्राम शुरू करने... लिए चार आदमी आये। उनका लिब... सादा ही था, लेकिन दो टोपी पहने हुए और दो नंगे-सिर थे।

उनके जोकरपने की कहानी इस तरह थ...

एक पहाड़ पर दो चरवाहे अपने पशु... को चरा रहे थे। शहर से दो आदमी छु... बिताने के लिए उसी पहाड़ पर गये। सा... चरवाहों को देखकर शहर वालों... पूछा—"क्यों भाई, टाइम क्या हु... होगा?"

एक चरवाहे एक गाय के पास बैठ... उसका थन पकड़ कर बोला—'बारह बजे है...'

दो घन्टे के बाद शहर के आदमी... पूछा—'क्यों भाई, अब कितने बजे हों...'

'दो बजे हैं।' चरवाहा गाय का थन ...ड़ने के बाद बोला। यह सुनकर शहर... दोनों आदमी अचरज में पड़ गये। उ... से एक ने पूछा—क्यों भाई, तुम्हें पता चल गया कि अब दो बजे हैं?"

'चर्च दूर हैं।' चरवाहा बोला—'इस
ए मैं थन पकड़ कर घंटे का पता लगा
ता हूं।'

दूसरा कार्यक्रम शुरू करने के लिए दो
कर स्टेज पर आये। उनमें से एक
ला—'भाई तुम्हें एक खुशखबरी सुनाऊं ?'

दूसरा बोला—'हां सुनाओ।'

पहला बोला—'तुम्हें मालूम होना चा-
ए कि मेरी मंगनी हो गयी है।'

'किससे तेरी मंगनी हो गई है?'

'अबे कैसी बातें करता है। लड़की छोड़
र किससे मेरी मंगनी होगी ?'

'तो सचमुच तेरी मंगनी किसी लड़की
हुई है?'

'हां, कहा तो ?'

'यदि तेरी मंगनी सचमुच किसी लड़की
हो गई है तो मैं गैरकानूनी करता हूँ।'
क्यों ?'

'इसलिए कि तुमने सामूहिक संगठन से
यों नहीं पूछा ? इसलिए तुम ऐसा नहीं
र सकते, क्योंकि सामूहिक संगठन के तुम
ी मेम्बर हो।'

'नहीं पूछा।'

'क्यों।'

'अबे नहीं पूछा।'

'अबे क्यों नहीं पूछा ?'

कुछ दिनों बाद फिर दोनों मिले।
उसकी मंगनी की अंगूठी उतर चुकी थी।
दूसरे ने पूछा—'क्यों भाई, तेरी मंगनी की
अंगूठी को क्या हुआ, उतर गई।'

दूसरे ने कहा—भाई मेरी मंगनी का
हाल उसी तरह रहा।'

'उसी तरह ?'

'हां, हां बिलकुल उसी तरह।'

'किस तरह ?'

'बड़े दिन की खुशी में मेरे पिता जी
ने साईकिल लाकर दी।'

'नई या पुरानी ?'

'अबे पुरानी पर कौन बैठता, नई बिल-
कुल नई।'

'फिर ?'

'फिर भाई, मैं तुमसे क्या बताऊं।
'पहले जोकर ने कहा—'लेकिन पिता जी ने
कहा, बेटा साईकिल तो तेरे लिए लाया
लेकिन चढ़ना मत।'

'तो साईकिल पर तुम सचमुच नहीं
चढ़े ?'

'साईकिल पर चढ़ने को तो नहीं मिला
लेकिन घंटी बजायी है।'

यह सुनते ही पूरे हाल में हंसी
कहकहे छूटे। कुछ लोगों ने तालियां बजा
कर खुशियाली जाहिर की।

गीत

दामोदर शर्मा
भैरों गली, दाना ओली, लश्कर (म० प्र०)

तुम चाहे जितनी दूर रहो,
चाहे जितनी मजबूर रहो,
मेरे अन्तर में एक बात ही पैठी है,
तन की दूरी कब मन की दूरी होती है।
मैं जान न पाया क्या मजबूरी होती है॥

अच्छा है तुम रोकर मन बहला लेती हो,
मैं गीतों से अपना मन बहला लेता हूँ।
या छुपे बादलों की झुरमुट में चन्दा को,
मानस चकोर के आंगन में पा लेता हूँ॥
विश्वास बढ़ रहा है प्रतिपल,
बांहों को डांड़ों का सम्बल,
क्या चिन्ता है जब तरी बढ़ रही है आगे,
रंगीन थपेड़ों में कब आंखें सोती हैं।
मैं जान न पाया क्या मजबूरी होती है॥

मेरे गीतों के पंछी उड़कर पहुँचेंगे,
बोझिल प्राणों का तुम्हें सँदेशा देने को।
गुन गुना उठोगी गीत एक दिन निश्चित है,
व्याकुल हो जाओगी मुझको पा लेने को॥
आंसू से आंचल गीला है,
चन्दा जैसा मुख पीला है,
तुम तो जीवन से हार मान कर बैठ गईं,
मेरी कविता कष्टों का बोझा ढोती है।

निराला; आत्म-दाह

—अनन्त चौरसिया
गवर्नमेन्ट सेंट्रल विभिंग इन्स्टीट्यूट, चौका घाट,
वाराणसी—२

जब तुम्हारी सांसका अन्तिम सुमन मुरझा गया
दर्द का संभार अन्तिम साधना में लीन हो
हम तुम्हारे शोक का एक गीत
गानेको हुए उन्मत्त—
हमदर्दियां, अनुभूति, वार्तालाप या संलाप क्षण के संस्मरण
बैठे पिरोने शब्द के भ्रम-जालमें—कर्त्तव्य जीवन का
गुलगुले गद्दे
मुंहमें दबे हैं पान
अथवा कुर्सियोंमें धंस
हाथमें कप चाय के:
दो शब्द कहकर मौन (केवल आज)
आंख अपनी बंद—ओ महाप्राण! गीतेश्वर!!
कितने ही निराला हैं धरा पर
सतत् अपनी साधनामें लग्न—
उनकी सांस भी जब अन्तिम रुकेगी,
हम यही सिलसिला चालू कर देंगे।

मैं जान न पाया क्या मजबूरी होती है॥
अभिशाप तुम्हारे धुल जाएँगे दो क्षण में,
विश्वास करो चाहे न करो मन पावन है।
इस घनी घनी काली बदली से तो पूछो,
फिर प्राणों को सरसाने आया सावन है॥
सम्बन्ध न जगती से तोड़ो,
जीवन की धारा को मोड़ो
जिस बगिया को मैं सींच रहा आकर देखो,
फसलों में उगने वाले हीरे मोती हैं।
मैं जान न पाया क्या मजबूरी होती है।

औरत*: एक खुशबू
औरत: एक बदबू !

शैवाल सत्यार्थी

बम्बई की एक सुरमई-शाम—
हमारी टेक्सी; 'गेट वे ऑफ इंडिया'
तरफ उड़ी जा रही है...
और अब, हमने टेक्सी छोड़ दी है—
चौड़े फुटपाथ पर, पांव-पांव चल रहे
।

तभी, हमने देखा—
हमारे आगे-आगे, एक निहायत फैशने-
बी चल रही है...नहीं, शायद—चहक
है! नहीं-नहीं, शायद—महक-महक रही
।

वस्त्रयुक्त, किन्तु, वस्त्रहीन-सी—
जैसे की 'नाइलॉन का चलता-फिरता
जायबघर' हो और या फिर, टेरेलिन के
'...-शो-केस' में— 'मुमताज' मदहोश
अंगड़ाइयां लेकर, उठ खड़ी हुई हो !
और 'शाहजहां'...
आह! शाहजहां... तुम्हारी परेशान-रूह
कितना सुकून मिला होगा ? न सिर्फ,
...-

तो, फुटपाथ पर, एक ओर बैठे हुए—
...भूखे, और प्यासे बूट-पॉलिश वाले ने
...जिसकी मैली-कुचैली चीकट बुशशर्ट
...—कई-कई सिने-बुलबुलें; ऐसी दिल-लेवा
...ड़ाइयां ही नहीं तो, जान लेवा डान्स
...रही हैं—उस हिलती-डुलती नुमा-
इश को देखा—

शायद, और भी बहुत-सी निगाहों ने
यह-सब देखा होगा...मगर, मैं सिर्फ
उन चार-आंखों की बात कर रहा हूँ—जि...
की दास्तान से, यहां मुझे वास्ता है ...
गहरी दिलचस्पी है !

यह दूसरी दो-आंखें—कौन हैं ?...
हां तो, मैं कह रहा था—नहीं, शा...
कहने जा रहा था कि उन चार-आंखों ने
उन दो नायलॉनी-बर्फानी आंखों को देख...
औ फिर, चारों ने— एक दूसरे
आंखों में देखा !

और दोनों ही की मुसकराहटें बि...
गईं...

तस्वीर एक थी—पहलू मगर, दो थे
फूल एक था—खुशबू मगर, अलग-अलग

शायद,

एक के मन ने कहा—उसकी भूखी-...
और अतृप्त प्यास ने कहा कि इसके क...
फाड़ डालूं, इसे जरा और नंगा कर दूँ—
क्योंकि,
वह एक परेशान, भूखा और मामू...
आदमी था !

दूसरे ने सोचा—
इसके सूने-बेशर्म पांवों में, सभ्यता

तुम से जितनी मिली प्रेरणा....

राम चन्द्र शर्मा 'किशोर'

तुम से जितनी मिली प्रेरणा,
वह साभार तुम्हें देता हूं
तुम जब दीप जलाते नभ के
मैं धरती का दीप जलाता,
तुम जब राका संग विचरते
मैं मन-ही-मन में मुसकाता;
मन-से-मन का तिमिर भेद कर
वह संसार तुम्हें देता हूँ।
पता न जाने किस जड़ता के
तुम बनते चेतन अविनासी;
तुम तो अचल अमर बन बैठे
मैं फिरता वन-वन सन्यासी;
अग्नि-परीक्षा की घड़ियों में,
मैं विश्वास तुम्हें देता हूँ।
कितनी बार पुकारा तुमको
दुख ! न क्यों तुम सुन पाते हो ?
रहते हो तुम यहीं कहीं पर
फिर भी पास नहीं आते हो !
पास भले मत आओ मेरे
मैं सम्मान तुम्हें देता हूँ।

वीणा-बजाती पायल रुनझुना दूँ—कि इसे
संस्कृति के, भावनाओं-कल्पनाओं के इन्द्र
धनुषी वस्त्र पहना दूँ—कि हाय ! इसकी नग्न
निर्लज्जता को, लज्जा की सतरंगी-चूनर से
सजा-संवार दूँ—
क्योंकि,
वह कला का अद्भुत पुजारी—सत्य-शिव

सुन्दर का आदि-गायक एक असाधारण
कार था— शब्दों का जादूगर और
नाओं का सुकुमार-राजकुमार !
और मैं
सिर्फ सोचे जा रहा था—
औरत एक खुशबू—औरत एक

कहानी

कला रूठ गई

प्रताप 'साहित्यालंकार'
बिहारीगंज (पूर्णिया)

पश्चिम की ओर रक्ताक्त स्वर्णिम । सूर्य और पूरब की ओर दुग्ध धवल पूर्णचन्द्र और चिड़ियों का कलरव । सामने कल-प्रवाहिता स्रोतास्विनी । विशाल वट तल में शिलाखंड पर आरूढ़ एक दिशाओं में बाँसुरी की मादक स्वर का कंपन ।

नारद स्वर का अनुसरण करता हुआ युवक के निकट पहुँचा । वह उसके पीछे खड़ा हो गया । वह बांसुरी बजाने में तन्मय था । नारद के मुख पर की चमक बिजली बन कौंध गई ।

युवक के कंधे पर हाथ रखा । युवक की विभोरता में कोई बाधा नहीं पहुँची । ने उसे धीरे से हिलाया । युवक ने होकर पीछे देखा—कौन !

"तुम डर गये ?" अधरों पर किंचित बिखेर नारद ने कहा ।

"नहीं तो ।"—युवक कहकर उसे गौर देखने लगा ।

"फिर यों क्या देख रहे हो ?"

"उसको, जिसने मेरी अर्चना में बाधा दी ।"

"अर्चना ! किसकी अर्चना में तन्मय हो युवक ?"

"मुझे अवकाश नहीं ।" झल्लाकर युवक ने कहा—"आप अपना रास्ता नापिए"

"रुष्ट मत हो । मेरे प्रश्न का उत्तर दो युवक !"

युवक की समझ में कुछ नहीं आ रहा था ।

"बोलते क्यों नहीं ? किसकी अर्चना कर रहे हो ?"

"कला की महाशय !"—युवक नारद के मुखमण्डल के आकुंचनों को पढ़कर रहस्य की थाह लेना चाहता था ।

"क्यों ?" युवक आश्चर्य विस्फारित नेत्रों से उसे देखने लगा ।

नारद अट्टहास कर उठा । बोला—"इधर तुम कला की अर्चना कर रहे हो और उधर कला तुम्हारी उपासना कर रही है ।"

"आपका मस्तिष्क बिकृत तो नहीं ? फिर क्या प्रलाप कर रहे हैं ?"

"मैं सच कहता हूँ युवक ! जैसी व्यग्रता तुम्हें है वैसी ही व्याकुलता उसे भी वह तुम्हें पाने को अधीर है । बोलो, क्य

ते हो ?"

"मैं क्या कहूँ ?"

"फिर कौन कहेगा ?"

"उसे आप जानें।"

"कला तुम्हारी आराध्या है न ?

"हाँ"

"फिर उसे ग्रहण करने में क्या आपत्ति ?"

युवक कुछ देर चुप रहा। फिर बोला—
े कोई आपत्ति नहीं।

नारद अपनी बिजय पर अट्टहास कर
ा। उसने कहा—"देखना, वचन से
चलित मत होना।"

वह जंगल की ओर बढ़ा जा रहा था।
क उसे तब तक देखता रहा जब तक
की छाया आंखों से ओझल न हो गई।
के कानों में अब भी गूँज रहा था—
बना, वचन से विचलित मत होना।

(२)

"देवी"

"कौन ? नारद! आपकी ही खोज
 रही थी मैं। उपयुक्त समय पर आये।"
स्वती ने मुखमंडल पर से चिंता की
भीरता को दूर कर ईषत् मुसकान के साथ
ा।

"यह मेरा सौभाग्य है सरस्वती!
न्तु…"

"चुप क्यों हो गये नारद ?" सरस्वती
जिज्ञासोत्सुक दृष्टि से नारद की ओर देखा।

"चिंता और विषाद की कालिमा! मैं
कित हूँ—तुम्हारे चेहरे पर काले काले
ादलों का यह आवरण कैसा, भोर की
नहली बेला में कमल के अधरों पर यह
म्लानता कैसी ? मैं तो रहस्य के अन्धका
में टटोल-टटोल कर भी कुछ पता नहीं लगा
पाता। आखिर कारण क्या है ?"

—नारद उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था।

"कला किशोर और यौवन की संधि बेला
में अङ्गड़ाई ले रही है। उसके परिणय की
चिंता ने मेरे मानसिक संतुलन को अस्तव्यस्त
कर दिया है। मेरी विपण्णता का यही
कारण है नारद"—सरस्वती ने कहकर दीर्घ
श्वास लिया।

"इसी तुच्छ बात के लिए तुम चिंतित
हो ? ऐसा अनर्थ न करो। मेरे प्रति अन्याय
होगा। जिसे मेरे जैसा सहायक सुलभ है
वह भला चिंता से व्यग्र हो!"—
नारद की बातों से सरस्वती ने कुछ
हलकापन का अनुभव किया। वह बोली—
"मुझे तो विश्वास है, किन्तु माता का
चिंतित होना भी स्वभाविक ही है नारद।
मुझे तो विश्वास नहीं होता कि कला के अनु
कूल पात्र मिल सकेगा।"

"विश्वास को दुर्बल मत बनाओ।
उसकी दुर्बलता सफलता के मार्ग में कांटे
बिखेरती है। साहस और उमंग से पोषित
प्रयत्न कभी निष्फल नहीं हो सकता।
बोलो, कला के लिए कैसा पात्र चाहिए ?
धनवान या गुणवान ? रूपवान या शील
वान ?"—नारद ने गर्वभरी वाणी में कहा।

"सुनिए मुनिए, कला वहां निकुंज में
बांसुरी बजा रही है। उसे संगीत से प्रेम
है और चित्रकला से अनुराग। उसके
उपयुक्त वही होगा जो इन दोनों विद्या
में निपुण हो। क्या ऐसा पात्र हो सकेगा ?

लती नारद का उत्तर सुन आश्वस्त होना ती थी।

"क्यों नहीं ? मैं दुनियां के कोने-कोने छान डालूँगा और अपनी बिटिया के लिए ी वर ढूँढ़ लाऊँगा। तुम चिंता न । मैं अभी चलता हूँ।" इतना कह नारद जिधर से आया था उसी ओर दिया।

(३)

कलाकार अपनी पर्णकुटी में रंग और खा से उलझा था। तभी वहां कला । कलाकार ने उसकी ओर देखा और राते हुए कहा—आओ कला!

कला उसके निकट बैठ गई और अधूरे को देखने लगी।

कला का ग्रन्थि-बन्धन कलाकार से हो था।

कला की तन्मयता को भंग करते हुए कार ने पूछा—"क्यों कला, कहीं कुछ ी है ?"

"बुरा तो नहीं मानोगे ?" कला मुसई। फिर वह बोली—"इन रेखाओं तोड़ का अभाव है और पृष्ठभूमि का रंग क चमकीला हो गया है। इसकी चमक यदि कम न करोगे तो मुख्य विषय गौण जायगा।

कलाकार ने सिर हिलाकर स्वीकृति दी और कहा—"ठीक कहती हो कला! मुझे कुछ त्रुटि मालूम हो रही थी, किन्तु पकड़ में ही नहीं आ रही थी। तुमने का उद्घाटन किया। धन्यवाद!

"धन्यवाद की कोई जरूरत नहीं कलाकार) यह तो मेरा कर्तव्य है। हाँ, एक बात और। आसमान की नीलिमा में जरा प्रगाढ़ता भर दो। क्यों, कैसा रहेगा ?" जिज्ञासापूर्ण नेत्रों से कला ने उसकी ओर देखा।

"बहुत बढ़िया! बहुत बढ़िया!" उल्लसित स्वर में कलाकार बोला—"लो अभी सुधार किए देता हूँ।"

फिर क्या था ? कलाकार की तूलिका चित्रफलक पर द्रुतगति से नाचने लगी। कुछ देर के बाद उसने लम्बी सांस ली और वहाँ से कुछ दूर हटकर निर्निमेष दृष्टि से चित्र को देखा। फिर वह आनन्द-पुलकित होकर बोला—"बढ़िया! भव्य! उत्तम ? मेरी साधना सफल हो गई कला!"

"निस्सन्देह, तुम्हारी यह कृति प्रशंसनीय है। सफलता तो हमेशा तुम्हारे चरणों को चूमेगी। शर्त यही कि जरा मुझे भुलाया करो।" कला ने तिरछी दृष्टि से कलाकार की ओर देखा और धीरे से मुसकिरा दिया!

"यह क्या कहती हो कला। मैं तुम्हें स्वप्न में भी नहीं भुला पाता। मेरी साधना तुम्हारी आराधना ही तो है।" इतना कह कर कलाकार ने पूछा—'मेरे इस कथन में क्या थोड़ा-सा भी मिथ्यांश है? क्या मैंने कभी तुम्हारे आग्रह को ठुकराया भी है ?"

"नहीं तो।"

"फिर यह लांछना क्यों ?"

"केवल अपनी आशंका मिटाने के लिए। प्रिय की सदा चिंता रहती है, कहीं उस

के प्रेम का पलड़ा हलका न हो जाय ?"
ने अपने प्रश्न का आशय स्पष्ट किया
"यह तो मेरे प्रति अन्याय है कला !"
न स्वर में कलाकार ने कहा।
"अरे, जाने भी दो। तुम तो छोटी
ी बातों को भी गुरुता दे देते हो।
ा से उलजलूल बातों को निकाल दो।
मुझे जरा बांसुरी सुना दो।" कला
और बाँसुरी ले आई।
कलाकार ने अपने अधरों से बाँसुरी
ई और उसकी अंगुलियां छिद्रों पर नाचने
। वातावरण में स्वर-लहरी तरंगित हो
। चतुर्दिक मधु का वर्षण। लगता, जैसे
गिरि के उच्च शिखर से माधुर्य की
ः धाराएँ बहा रहा हो और उनमें चरा-
आत्म विस्तृत हो उठे हों।
कलाकार ने पर्णकुटी के भीतर दृष्टि
ई।
दीपक की निष्कंप लौ और कला की
चल प्रतिमा। उसने वातायन से झांक
देखा—तारे स्तब्ध। पेड़ पौधे तन्मय!
कलाकार घबड़ाया। उसने मन को
ग्र किया—कहीं साधना खंडित न हो
। वह आत्मविस्मृति को धारा में तैरने
। बाँसुरी और कलाकार! कलाकार
बांसुरी! वह तन्मयता के सागर में
गया।
स्वर-लहरी—एकमात्र स्वर लहरी।
कलाकार चिल्लाया—"कहां गई कला ?"
कलाकार के हाथ से बांसुरी गिर गई
। कला गद्गद स्वर में कह रही थी—
धुवाद !"
कलाकार ने दीर्घ स्वास छोड़कर हलकापन
का अनुभव किया। उसने पूछा—"तुम कह
चली गई थीं कला ?"

"कहीं तो नहीं।" कला ने कहा—"रात
अधिक हो गई। चलो, विश्राम करो।"

कलाकार अपनी टूटी खाट पर ले
गया। उसे झपकियां आने लगीं। वह
अलसित स्वर में बोला—"कला, मैं तुम्हारे
योग्य नहीं। तुम्हें अभावों के बीच बहुत
कष्ट होता होगा। मुझे बहुत चिंता है इसके
लिए।

"ऐसा मत कहो कलाकार!" कला
कहने लगी—"अभाव के कीचड़ में ही पूर्णता
का कमल खिला करता है कलाकार! कला
ऐसी नहीं। उसे भौतिक सुख अभिष्ट नहीं।
देवों को फूलों की सुरभि प्रिय है तो कला
को संगीत की मादक सुगंध। उसे हृदय
का सच्चा अनुराग प्यारा है जहां अश्रु की
तरल रागिनी गूँजती है और हास की मधुर
दामिनी चमकती है। उसे शबनम भी उतने
ही प्यारे हैं जितने नील गगन के तारे।
उसे अपने में प्रियतम की आत्मविस्मृति
काम्य है। स्वर्ग-सौध उसे उतना अह्लाद
नहीं दे सकता जितना यह जर्जर पर्णकुटी।
यहां तो निश्चल प्यार की फुहियां बरसती
हैं कलाकार!

कलाकार अनुभव कर रहा था जैसे कोई
उसके कानों में मधु उड़ेल रहा हो।

(४)

अधूरा चित्र स्टैंड पर लटका था। रंग
के पात्र तथा तूलिकाएँ इधर-उधर बिखरी
थीं। कलाकार बिछावन पर लेटा था। उसके
अन्तर में आलोड़न मचा था जिसकी छाया

मुखमण्डल पर आलिखित थी।
मानस-पट पर विगत के चित्र आ जा
। उस दिन की बात...... वह चित्र
उठा और रूपा के पास गया। उसने
ठुड्डी पकड़ कर बधाई दी। रूपा के
में बिजली दौड़ गई। उसका
आरक्त हो उठा। उसके मुँह से हक-
हुआ स्वर निकला—कलाकार !......
कलाकार अनिमेष दृष्टि से उसे देख रहा
रूपा को चुप देख उसने पूछा—
है रूपा ? कुछ कहना चाहती हो

पा ने अपनी पलकें नीची कर कहा—
कहती क्यों नहीं हो ?"
बुरा नहीं मानना कलाकार !"—रूपा
बोली—"मेरे दिल में बहुत दिनों से
चक्कर मार रहा है, किन्तु कभी
का साहस नहीं हुआ। मैं कई बार
को उद्यत भी हुई, मगर कभी कह
को।"

ऐसा क्यों किया रूपा ? आज खुल
दो। मैं सुनकर ही टलूँगा।"
र ने स्वर में आग्रह की मधुरता भर

पा की आंखों में मुसकान, जिसमें
का हलका हलका रंग। वह भीतर शक्ति
कर बोली—"कहो कलाकार, कैसा
?"

पा चुप हो गई। कलाकार ने पूछा—
क्या कैसा रहेगा ?"
पा झिझकती हुई कहने लगी—'यदि
की लम्बी मंजिल को हम दोनों मिल
कर तय करने का सौगन्ध लें तो कैसा
रहेगा ?"

इस अकल्पनीय प्रश्न को सुनकर कला-
कार चौंक उठा था। उसने हाथ जोड़कर
कहा—"क्षमा करो रूपा ! मेरी सफलता
का रहस्य तुम हो, मुझे तुम से प्रेरणा
मिलती है, मैं तुम्हारा अनुगृहीत हूँ, किंतु
मैं निर्बंध नहीं, कला का हो चुका हूँ।

"कला का हो चुके हो ? कोई बात
नहीं।" रूपा वहां से चली गई थी।

और आज जब वह रूपा के साथ निकट
के उपवन में घूम रहा था तब......

रूपा एक जंगली फूल को तोड़ हाथ
में नचाती हुई बोली—"कलाकार ! ...

वह कुछ सोचने में तन्मय था। उसने
दृष्टि उठाकर उसकी ओर देखा।

"लोगों को सौन्दर्य क्यों प्रिय होता
है कलाकार ?" रूपा ने पूछा। उसने
गम्भीर स्वर में उत्तर दिया—दर्शकों को
उसमें अपनी आत्मा की मुसकान दिख पड़ती
है रूपा ! अपने का अच्छा लगना स्वयं
सिद्ध है।

"मैं तुम्हें अच्छी लगती हूँ। तुम
मुझ में आत्मरूप देखते हो। फिर तो मैं
तुम्हारी अपनी हो चुकी कलाकार !" रूपा
कलाकार की भावमुद्राओं को पढ़ रही थी।

"इसमें कोई संशय है क्या ? जब तक
मैं तुम्हें नहीं देखता तब तक खोया-खोया
सा रहता हूँ। हृदय में स्पन्दन होता है
और न तूलिका ही नाचती है। तुम्हारे
बिना मैं अपने को अपूर्ण समझती हूँ।"
कलाकार कह कर चुप हो गया। वह फिर

हा—"जब तुम मेरे सामने आती हो तब नस-पटल पर असंख्य भाव उमड़ने लगते और वे तूलिका एवं रंगों के माध्यम से हो उठते हैं।"

"ऐसा !" रूपा ने अचरज से अपनी खें फाड़-फाड़ देखा।

"हाँ रूपा !" कलाकार ने कहा—ने बहुत सी सौन्दर्य-प्रतिमाएँ देखी हैं, तु कोई मेरे मन के अनुकूल नहीं मिली। हें मैंने जिसी क्षण देखा उसी क्षण मुझे श्वास हो गया कि तुम में मेरी आदर्श दरी की सारी विशेषताएँ निहित हैं।"

रूपा ने प्रश्नोत्सुक दृष्टि से उसकी ओर ा और पूछा—फिर उसके आग्रह की क्षा क्यों करते हो ? फिर उसे क्यों ीं अपना लेते ?

रूपा के प्रश्न ने उसके अन्तर तारों को नझना दिया। वह कुछ सोचकर बोला—वश न करो रूपा! मुझे सोचने का सर दो।"

वह चिंतन की धारा में डूबने-उतराने ा। कभी उसे रूपा का प्रस्ताव ग्राह्य ीत होता तो कभी अग्राह्य। अन्तरद्वन्द्व से का उर मथित हो रहा था। तभी की आंखों के सम्मुख उस दिन की ना नाच उठी...

उसने पर्णकुटी में प्रवेश कर हर्ष विह्वल र में पुकारा—कला ! कला !!

कला ने निकट आ जब उसके पुलकित होने का कारण पूछा तब उसने कहा—मुझे 'मॉडल' मिल गया। मुझे आदर्श-दरी मिल गई। आओ, मेरे साथ चलो। दरवाजे पर खड़ी है वह।

कला ने देखा—दरवाजे पर रूपा खड़ी है। चंपक वर्ण, उन्नत ललाट, ऊँची और पतली नासिका, उभरे अरुणाभ कपोल, संतरे की फाँक जैसे गुलाबी अधर, घनी भौंहें, जूही-सी बरौनियां और आम की फांक जैसे कोए में बड़ी-बड़ी काली-काली पुतलियां, आनन पर सौन्दर्य की दीप्ति और अधरों पर मुसकान की मधुरिमा।

कला ने गद्गद् स्वर में कहा—"तुम्हारा चुनाव प्रशंसनीय है कलाकार!"

उसी दिन से रूपा प्रतिदिन आती। वह उसके सम्मुख कलात्मक मुद्रा में बैठ जाती और चित्रों की दुनियां में आत्म विस्मृत हो जाता। उसी के फलस्वरूप तो वह ख्याति और सम्मान का अधिकारी हो सका है। मधुमास की रानी, शारदीय धरती का कमल, उषा का आमंत्रण आदि चित्रों की प्रशंसा के मूल में वही तो छुपी है।

वह चिंतन की तन्मयता की ओर बढ़ा। एक ओर कला के लिए अगाध प्रेम और दूसरी ओर रूपा का आमन्त्रण। रूपा को वह अपना प्रेम देकर क्या कला को प्रसन्न रख सकेगा ? क्या कला उसका विरोध करेगी ? ऐसा सम्भव तो नहीं। उस दिन जब वह चित्र-निर्माण में तन्मय था तब कला आई। रूपा पास में ही बैठी थी। उसे कुछ भी पता नहीं चला। जब रूपा मुसकराई तब उसने कला को देखा। आशंका के हलके आघात ने उसे किंचित विचलित किया। वह अपनी वाणी में मिश्री

कलाकार बोला—"दुःख नहीं मानना कला ! साधना में आत्म विस्मृति अपेक्षित है।"
"इसे मैं समझती हूं कलाकार ! तुम्हारी तो साधना की तन्मयता ही प्रिय है।" कला ने हंसते हुए कहा।
"एक बात पूछूँ कला ?"
कला ने इंगित से ही अपनी स्वीकृति दी।
"रूपा के प्रति ईर्ष्या तो नहीं होती ?"
कलाकार का प्रश्न सुन कला चौंक पड़ी। वह बोली—"यह क्या कहते हो ? मैं वैसी नारी नहीं। सौन्दर्य-प्रतिमा रूपा मेरी सखी है कलाकार।"

वह फिर चिंतन के उलझे धागे को सुलझाने लगा। हां, उसने कभी कला के चेहरे पर ईर्ष्या की ईषत् झलक नहीं देखी। वह तो उसे बहन ही समझती है। उसके मन में कोई कपट नहीं, किंतु रूपा को जीवन-संगिनी बनाकर क्या वह प्रेम का संतुलन कायम रख सकेगा ?

वह आगे बढ़ा—प्रयत्न से सभव है, किंतु यदि विचलित हुआ तो ? उसका परिणाम ? फिर वह क्या करे ? कला तो उसके मन की भूख मिटाती है, किंतु तन की भूख ? क्या काल्पनिक सौन्दर्य से जीवन का यथार्थ संतुष्ट हो सकता है ? यथार्थ की विकरालता ने उसे पागल बना दिया है। भविष्य की चिंता ने उसकी मानसिक शांति को अपहृत कर लिया है।

कलाकार उद्विग्न हो उठा। उसने दीर्घ निःश्वास लिया। उसके मुखमण्डल पर अन्तर की व्यग्रता की आकुंचित रेखाएँ अंकित थीं। तभी कला आयी। उसके पूछने पर कलाकार अपनी मनोदशा का कच्चा-पक्का चिट्ठा उसके सामने खोलकर रख दिया।

(५)

कला ने स्वीकृति दी। कलाकार ने रूपा से शादी कर ली।

दिन पंख लगा उड़ रहा था और सप्ताह, पखवारा और महीने की खाई को लांघता चला जा रहा था।

दूसरे वर्ष कलाकार के एक पुत्र हुआ। दंपति के आनन्द की कोई सीमा नहीं। कलाकार ने उत्सव मनाया और दोस्त-मित्रों को पार्टियां दीं।

पत्नी के प्रेम एवं पुत्र की मुसकान ने उसके जीवन में स्फूर्ति दी और उल्लास दिया। वह और भी उत्साह से अपनी साधना में तन्मय रहता।

समय पूर्ववत गतिशील था।

कलाकार चित्र बनाने में जुटा था। कई एक अधूरे चित्र इधर-उधर टँगे हुए थे। एक चित्र, जो बहुत दिनों से अधूरा पड़ा था, को वह पूरा कर रहा था। तभी उसके कानों में रूपा के पुकारने की आवाज आई। उसने नजर उठा उसकी ओर देखा। रूपा कह रही थी—क्या 'रंग-टिप' करने में लगे हो ? बच्चे की तबीयत ठीक नहीं। वैद्य अभी तक नहीं आये। जाओ, जल्द बुला लाओ।

कलाकार ने तूलिका रख दी और पर्णकुटी से बाहर चला गया।

बच्चा अच्छा हो चुका था। वह कला- के पास खेल रहा था। कलाकार ने मीठे-मीठे गालों को चूम लिया और दूसरे अधूरे चित्र को पूरा करने में लग ।

तभी रूपा के प्रश्न ने उसकी तन्मयता की—क्या आज चूल्हा नहीं जलेगा ? वन परसों ही खतम हो गया। मैं -कहते मर गई, मगर तुम्हारे कानों पर क नहीं रेंगा।

"जलावन एकदम ही नहीं है ? जाकर ले आता हूँ। जरा मुन्ना को देखना यह चित्रकारी न शुरू कर दे।"—कह कलाकार तेजी से बाहर हो गया।

कलाकार को अपने-आप पर क्षोभ हो था। उसके अधूरे चित्र पूरे नहीं हो रहे वह कितना चाहता है कि सभी चित्रों रा कर ले, मगर वैसा हो नहीं पाता। तो फुरसत नहीं और जब मिलती भी है उमंग और स्फूर्ति ही डुबकी लगा बैठ ी है।

वह पात्र में रंग घोल रहा था। उसके ं में रूपा की बातें प्रतिध्वनित हो रही -यह कौन-सा मर्ज लेकर बैठे हो। जब -दाल की समस्या भी नहीं हल हो पाती समय बर्बाद करने से क्या लाभ। अच्छा कहीं नौकरी कर लो।

कलाकार ने तूलिका उठाई और चित्र रेखाओं को उभारने लगा। यहाँ क्षीणता -एकदम धूमिलता। कुछ प्रगाढ़ता अपे- े प्रकाश और छाया का संतुलन भी ठीक नहीं। वह इन्हीं विचारों में उलझा हुआ चित्र रचना में प्रवृत्त था। तभी उसके कानों से एक कर्कश आवाज टकराई। उसने दृष्टि घुमाकर चारों ओर देखा। कुटिया के भीतर कोई नहीं था। रूपा ने जो बात कह कही थी वही आज यों प्रतिध्वनित हो उठी - मुन्ना फिर बीमार पड़ जायगा। बड़ी ठंड पड़ती है। इसे कोई गरम कपड़ा सिलवा दो और मेरी साड़ी भी फट चुकी है।

कलाकार च-च-च कर उठा। उसे अपने आप पर क्षोभ हुआ। वह बड़बड़ाया—अनर्थ कर डाला ! मित्र रंग के साथ अमित्र रंग का सम्मिलन।

उसने झुँझला कर तूलिका दूर फेंक दी और खाट पर जाकर लेट रहा। पश्चात्ताप और क्षोभ से उसका अन्तर जला जा रहा थ तभी जोर से हवा का एक झोंका आया। उसने एक लम्बी सांस ली और उसे छोड़ते हुए बगल की ओर मुड़कर देखा—दीवाल में टँगे कई-एक अधूरे चित्र अब भी हिल डुल रहे थे।

कला जाने लगी।

कलाकार हड़बड़ा कर उठा और चिल्ला- या—कला ! कला ! लौट आओ कला।

उसका चिल्लाना सुनकर रूपा दौड़ी आई और पूछा—चिल्ला क्यों रहे हो ? पागल तो नहीं हो गए ?

उसने इतना ही कहा—कला रूठ गई रूपा !

* — *

शहीदों के नाम पर

अमृत लाल 'अकिंचन'
(३/१५ सदर बाजार, सागर, म० प्र०)

'मां ! प्यासा हूँ ! पानी मिलेगा ?'

'क्यों नहीं बेटा ! बैठकर दो घड़ी सुस्ता तब पानी पीना। कहां से आ रहे हो ?'

'परकुई गांव का हूँ। बाजार करने आया ।'

'बैठो...बैठो !' 'अरे खानजू ! एक लोटे इनेको पानी तो ला।'

'क्या नाम है तुम्हारा ? क्या काम करते ?'

'मेरा नाम रमला है। काश्तकारी से पेट पालता हूँ मां।'

'ठीक है ! ले पानी पी ले।'

'क्यों मां ? आज क्या बात है ? आपकी ड्योढ़ी में यह भीड़ भाड़ कैसी ? क्या कोई ब्याह-शादी है अथवा सत्यनारायण की कथा ?'

'नहीं बेटा ? न शादी है और न कथा। ये यहां वोटें गिरना है' कहकर साठ वर्षीय वृद्धा हंसने लगी

'कैसी वोटें ?' रमला ने अजरज भरी निगाहों से वृद्धा को ताकते कहा

'आज चुनाव है। हमें अपने बीच में से एक लायक आदमी का चुनाव करना है। इसी सम्बन्ध में हम लोग सलाह करने को इकट्ठे हुए हैं। लेकिन तुम्हें इससे क्या लेना ?' बुढ़िया ने तेवर बदल कर कहा—

'ठीक तो कहती हो माँ ! मुझे चुनाव से क्या लेनादेना। मैं तो भीड़भाड़ देखकर यों ही पूछ बैठा था।' रमला ने चिलम में तम्बाखू भरकर एक वृद्ध को दी और माचिस जलाकर चिलम सुलगाने लगा।

वृद्ध ने चिलम के दो चार जोरदार कश खींचते हुए बुढ़िया से कहा—

'इस मुहल्ले के सब लोग तुम्हें अपना मुखिया मानते हैं सलोनी बोलो आज हमें क्या करना हैं।'

'हां काकी ! अपना निर्णय सुनाओ हम किसे वोट दें !' खानजू खबास ने कहा

'भाइयो ! इस मौके पर हम अपना होश न खो बैठें। आज हमें अपना अमूल्य वोट उसे देना है, जो हमारी ज्यादा से ज्यादा भलाई कर सके। जो हम गरीबों का हमदर्द हो। मैं किसी 'ऐरे-गैरे-नत्थू-खैरे' को वोट देने की सलाह न दूँगी। जो पद के मद में अन्धा होकर हमारा शोषण कर अपना घर भर ले।' काकी इतना कह खाँसने लगीं।

'तुम जैसा कहती हो काकी वैसा होगा ?' पुजारी जी बोले—

'तो फिर बताओ कौन-कौन उम्मीदवार हैं इस चुनाव में ?'

'एक तो हैं सेठ करोड़ी मल और दू

ादक रजनीकान्त।' 'अहा! सेठ ड़ी मल के क्या कहने, बड़ा धार्मिक है, गोशाला और राम मंदिर तो सेठ की कृपा से चल रहे हैं। गरीब से ब दर्शक उनके राममंदिर में जाय तो जी उसमें भी अपने राम का दर्शन पाते चरण पकड़ कर उसकी पगधूलि माथे ण करने में, अपना सौभाग्य समझते हैं? का उन्हें रत्ती भर घमंड नहीं है?' मुनीम लाल ने चश्मे में से झांकते हुए कहा।

'ठीक कहते हो मुनीम जी। सेठ जी नयों में सिरमौर हैं। कोई भी, जनता भलाई का काम हो, दानदाताओं की में सबसे ऊपर, सेठ करोड़ीमल का नाम ता है। ऐसा आदमी हमारा नेता चने लायक है; फिर हम क्यों न सेठ जी वोट दें।' खानजू खबास ने कहा।

'सेठ जी की नौकरी करने से क्या तुम अपनी सहजबुद्धि भी खो बैठे क्या आदमी कई संस्थाओं को चलाने और देने से महान हो जाता है। ढोल के र पोल है भाई? तुम लोग सेठ जी को र से जानते हो। उनके अन्तर की भला क्या जानकारी? सेठ तो शेर की खाल े भेड़िया है?'

'अएँ? क्या बकते हो मास्टर जी? प अपना होश हवास तो नहीं खो बैठे। र सेठ जी के कान में आपकी बातों की क पड़ गई तो हम तो नौकरी से गए ही. थ ही आपकी और समस्त मुहल्ले वालों खैर नहीं।' मुनीम जी बोले—

'आज प्रजातन्त्र का युग है। अपने विचार प्रकट करने का सबको अधिकार है। सच बात बोलने में सेठ जी कच्चा नहीं चबा जाएँगे। हकीकत बयान कर रहा हूं। सुनो। ये देखो अखबार। जिसे तुम धार्मिक और गोभक्त कहते हो, उसका लगहा में बूचड़ खाना है; जहां रोज, सैकड़ों पशु गाजर मूली की तरह काटे जाते हैं। खून की नदियां बहती रहती हैं।' मास्टर जी ने जोश खरोश के साथ कहा—

'राम राम? सेठ को मैं हत्यारा नहीं समझता था।'

'इतना ही नहीं और सुनो सेठ की करतूतें। मनोरंजन के लिए जो 'कला निकेतन' खोला गया है, जानते हो वहां क्या क्या गुल खिलाए जाते हैं? कला के पवित्र नाम पर, अनेकों कुमारियों की लाज बिजली के प्रकाश में लूट ली जाती है।'

'दिन रात अखंड रामधुन कराने वाला सेठ करोड़ीमल, तो गन्दी नाली का कीड़ा निकला, उसकी सूरत देखना पाप है। उसे नेता चुनने का प्रश्न ही नहीं उठता।' पुजारी जी ने राम नामी माला के मनके सरकाते हुए कहा—

'जी कड़ा करके सुनते जाओ। आज कल बाजार में रोजमर्रा के काम में आनेवाली चीजें महँगी, होती जा रही हैं, उसका कारण जानते हैं आप लोग?'

'नहीं तो।' सब एक स्वर में चिल्लाए।

'उसकी तह में भी सेठ जी विराजमान हैं। ये थोक विक्रेता हैं। मार्केट पर कब्जा करके, माल की कमी होने पर, मनचाहे भाव से सामान बेचते हैं और तिजोरियाँ भर

हैं। उसका प्रभाव पड़ता है हम गरीबों
वे सब चीजें महँगी दर से खरीदनी
हैं। सच पूछो तो इस अर्थपिशाच
करने के कारण, हम गरीबों का
मुश्किल हो रहा है।'

मास्टर जी ? सेठ जी की काफी तारीफ
अब बन्द कीजिए उनकी चर्चा।
रजनी कांत जी कौन हैं ?' काकी

पहले प्रोफेसर थे। स्वतन्त्रता के आ-
में जेल गए तो नौकरी छूट गई, तब
मासिक पत्र के संपादक हैं। जब हम
थे तब उनके पत्र 'विभूति' ने लोगों
होने की भावना उत्पन्न की थी।
का बिगुल बजाया था। नतीजा
कि लक्ष्मी उनसे रूठ गई। पत्र पर
मुकदमे चले। वेतन न दे सकने के
में प्रेस कर्मचारी नौकरी छोड़कर चले
लेकिन वाह रे रजनी कांत ! वे तो
के दीवाने और सरस्वती के साधक
उन्होंने हिम्मत न हारी। संपादन कार्य
से जुटे रहे। खुद ही पत्र को
करके छपाई करते रहे किन्तु 'विभूति'
नहीं होने दिया। आज भी वे पत्र
भारत के नवनिर्माण में महत्व पूर्ण
कर रहे हैं।'

'आदमी अच्छा जान पड़ता है; लेकिन
गरीब। कहीं ऐसा न हो कि वह नेता चुने
पर, निर्धनता से ऊबकर, पद के मद
हमारा शोषण करने पर तुल
।' पुजारी जी ने शंका प्रकट की—

'नहीं भाई ? रजनी कांत धुन के पक्के

हैं। कुबेर का खजाना भी उन्हें, उनके
चट्टानी इरादों से नहीं डिगा सकता।
शायद आपको मालूम नहीं है कि चुनाव के
चार दिन पूर्व सेठ करोड़ीमल ने 'विभूति'
को एक लाख रुपये दान देने का प्रलोभन
देकर रजनीकांत को उम्मीदवारी से नाम
वापिस लेने के लिए, जोर डाला था किन्तु
उन्होंने साफ इनकार कर दिया।'

'वाह रे त्यागी ! क्या कहने तेरे। इ
भाइयो ? तो यही तय रहा कि हम सब
रजनीकांत को अपना नेता चुन लें।' काकी
ने निर्णय दिया।

'भाइयो ? ठहरो ? मेरी भी दो बातें
सुन लो !' रमला बोला—

'क्यों रे। तू क्या कहना चाहता है
क्या रजनीकांत को वोट देने के पक्ष में नहीं
है !' काकी बोली—

नहीं मां ! मैं रजनीकांत का विरोधी
नहीं हूँ। मैं तो सिर्फ चन्द बातें आपके
सामने रखने की इजाजत चाहता हूँ।'

'कहो। थोड़े में कह डालो। चुनाव का
वक्त हो रहा है।'

'जानती हो ! इस आजादी को हासिल
करने में जिन्होंने प्राणों की बाजी लगा
थी; क्या वे महापुरुष, आज आजादी
सुख का उपभोग करने के लिए हमारे बीच
में मौजूद हैं ?'

'नहीं बेटा। उनमें से बहुत से परमा-
त्मा को प्यारे हो गए। अनेकों फांसी
फन्दे पर झूल गए। अनेकों का सीना
गोलियों से छलनी कर डाला गया। उन्ह
की बदौलत तो हमने आजादी पाई है औ

ा कार्य चलाने को, अपनी प्रतिनिधि
ने को हम सब यहां इकट्ठे हुए हैं।'

'ये देखो मां ? काहे का निशान है
?' रमला ने अपनी मिर्जई उतार कर सबके
मने पीठ करते हुए कहा-

'अएँ ? ये तो गोली लगने का निशान
?' सब चिल्ला उठे

'हां आजादी की लड़ाई में, मैं भी
ीद हो गया होता किन्तु आपके आशी-
द और बालबच्चों के भाग्य से जिन्दा
गया शायद मेरी किस्मत में स्वतंत्रता
सुनहरा प्रभात देखना बदा था।

'अरे तू तो देशभक्त है, क्रांतिकारी
। आ बेटा ? मैं तेरी बलैयां ले लूँ।'

'नहीं मां ? वह तो मेरा फर्ज था।
रत मां को गुलामी की बेड़ियां काटने में
गर मुझे जान भी देना पड़ता तो मैं अपने
धन्य समझता।'

इसी अवसर पर लोगों की नजर बचा-
र रमला ने सौ सौ के नोटों की पांच
ड्डियां काकी के आंचल में, छुपा दीं, और
सा अभिनय किया मानो वह काकी का
रणस्पर्श कर रहा हो ?'

'हां तो माइयो ? आज के चुनाव के
र्णय का भार, मैं देशभक्त रमला के जिम्मे-
र कंधों पर सौंपती हूँ।'

काकी ने भयभीत होकर चारों ओर
खा कि नोट लेते वक्त कहीं उन पर किसी
ी नजर तो नहीं पड़ गई। अपने को निरा-
द जान, काकी इस ढंग से मुस्कुराई मानो
'सानियत पर हैवानियत हावी हो गई हो।

'मेरी समझ में सेठ करोड़ीमल को हमें
अपना वोट देना चाहिए।' रमला ने दृढ़
पूर्वक कहा—

'नहीं हम उस 'जोंक' को अपना नेता
कदापि नहीं चुन सकते जो रातदिन हमारा
खून चूसकर, गोलगप्पा बना घूमता रहता
है ?' मास्टर जी ने घृणा से मुँह बिचका
कर कहा—

'सुनो भी मास्टर कि हम रजनी कांत
को छोड़ सेठ को क्यों वोट दें काकी बोलीं—

रमला ने कहा—इसलिए कि वह एक
दल का उम्मीदवार है जिसने भारत को
स्वतंत्रता दिलाई। जिस दल के अनेकों वीर
आजादी की बलिवेदी पर शहीद हो गए
मां! कोई यह खयाल न करेगा कि सेठ पापी
है, शोषक है इसलिए हार गया, बल्कि लोग
कहेंगे कि भारत को स्वराज्य दिलाने वाली
संस्था की करारी हार हुई।

माइयो! क्या तुम सुन सकोगे उनकी
निंदा जो आजादी के लिए लड़ते हुए
शहीद हो गए। इसलिए 'शहीदों के नाम
पर' हमें अपना वोट सेठ करोड़ीमल को
देना होगा।'

'बेटा! तू ठीक कहता है लेकिन रजनी
कांत भले ही किसी संस्था से सम्बन्धित न
हो, है...वह देशभक्त ? उसका क्या होगा'
वृद्ध धर्मदास ने क्षीण स्वर में कहा—

'वह काम मुझ पर छोड़ दो। नेता
गिरी के चक्कर से बचकर संपादक बने
रहकर, रजनी कांत हमारा अधिक भला कर
सकेंगे। वे तो कलम के पुजारी हैं। एक
लाख रुपये द्वारा उनके पत्र की मदद कर
देंगे; तो पत्र ढंग से चल निकलेगा।'

शेष पृष्ठ ३८ पर देखें

सांस्कृतिक उत्थान

रामस्वरूप शर्मा
जमालपुर मुंगेर

आज देश में सांस्कृतिक समारोहों के पर ऐसे ऐसे कार्यक्रम अपनाये जाते हैं जो न केवल हमारा संस्कार भ्रष्ट होता वरन नवयुवकों एवं अविकसित व्यक्तियों का वासनोत्तेजक प्रमाणित होता है। ऐसे ही संस्कृति है, इसे हम भूलते जा रहे हैं और सांस्कृतिक कार्यक्रम का अर्थ एकत्रित करना एवं सस्ता मनोरंजन मानने लगे हैं, शायद कुछ नाच कूद, खेल-तमाशा को ही संस्कार समझते हैं। किंतु यह तो का विद्रूप है और शारीरिक, मानसिक आत्मिक संस्कार की अन्यान्य पद्धतियों एवं प्रक्रियाओं को हम विस्मृत कर चुके हैं। इस देश में प्रवाहित होने वाली सतत धारा संस्कार है जो त्वरित अर्जन नहीं किया जा सकता है क्योंकि संस्कार कोई सामयिक भौतिक वस्तु नहीं जो कहीं से अनायास प्राप्त कर ली जा सकती है। संस्कार तो समाज का नवनीत है जो पर्याप्त मंथने के उपरान्त ही प्राप्त होना है। भारत के संस्कार इसकी अपनी विनम्रता, सहिष्णुता और उदारता से कभी भी च्युत नहीं होने देते हैं। कारण है कि जहां एकात्मक नहीं, समरसता नहीं, वहां संस्कृति का अस्तित्व सम्भव नहीं है, संस्कृति का सन्देश लघुता को कायम रखने का नहीं वरन लघुता को विशालता एवं महत्ता में विलीन करने और निम्नता को उच्चता में समाहित करने का है। इसका कारण है कि विकास के क्रम में अब मनुष्य शारीरिक प्राणी मात्र नहीं वरन मानसिक प्राणी हो गया है। जिस समाज में हम रहते हैं और जीवन-यापन करते हैं, वह अतीत के जैसा कृषि प्रधान एवं ग्रामीण नहीं, बल्कि उद्योग प्रधान एवं नागरिक समाज है। तात्पर्य यह है कि जिस युग में हम रह रहे हैं वह मानव इतिहास की दृष्टि से अत्यन्त क्रांतिकारी है। अतः क्रांतिकारी कदम उठाने में जहां हममें साहसिक प्रवृत्ति आवश्यक है, वहीं वासनोत्तेजक और ऐयाशीपन से भी विमुख रहना परमावश्यक है। हम महिलाओं द्वारा नृत्य संगीत के विरोधी नहीं, किन्तु इस नाम पर होने वाले प्रदर्शनों को अवांछनीय अवश्य मानते हैं। इसी के कारण शिक्षण संस्थाओं में प्रख्यात भ्रष्टाचारियों को प्रश्रय प्रदान किया जाता है और उस प्रभाव से शिक्षार्थी प्रभावित होते हैं। यह सत्य है कि बाह्य दृष्टि से हमारा जीवन और परिस्थितियां बहुत बदल गयी हैं तथा क्रम में तीव्रता से परिवर्तन हो रहा है। यद्यपि समाजिक एवं वैयक्तिक दृष्टि से हम प्राचीन युग की मान्यताओं और मूल्यों को चलना नहीं चाह

र नवीनता अपरिहार्य मानते हैं तथापि
नव जाति के बाह्यान्तर जीवन में तीव्र
रोध उत्पन्न हो गया है।

निस्सन्देह बड़े नगरों में जीवन की दैन-
दिन कठिनाइयों के कारण मनुष्य का मनो-
वन अधिक कष्टदायक हो गया है। मध्य
ीय व्यक्ति इसका अनुभव विशेष रूप से करता
। किन्तु सुसंस्कृत होने के कारण अपनी
रोव्यथा को प्रकट नहीं कर पाता, मन ही
ा पचा लेने की चेष्टा करता है। जहां
येक व्यक्ति को आवश्यक भोजन, वस्त्र
ौर निवास प्राप्त होना कठिन है, जनसख्या
दृष्टि से उत्पादन कम है, शिक्षा के साथ
ाथ बेरोगारी भी बृद्धिशील है, सभी नौक-
ियां नगरों में ही केन्द्रित होती जा रही
जब कि नगरों में आबास की कठिनाइयाँ
े से ही हैं, वहां ऐसी स्थिति में जीवित
ह पाना एक कठिन संघर्ष है और इसमें
नुष्य की श्रेष्ठतम योग्यताएँ भी क्षुद्र पड़
ाती हैं, स्थिति में सुधार नहीं हो पाता
। परिणाम यह होता है कि मानसिक रोग
िरन्तर बढ़ता जा रहा है। साम्राज्यवाद,
ूंजीवाद और साम्यवाद के कटु संघर्षों के
ध्य पिसता हुआ मानव कराह भी नहीं
कता। इस प्रकार व्यक्ति और समाज का
ंघर्ष चलता रहता है जो उसको सुखी और
ूर्ण नहीं होने देता। समाज के अन्तर्गत वे
अनेक बन्धन आते हैं जो परम्परागत प्राप्य
हैं तथा अचेतन अभ्यासों के रूप में उसके
जीवना चरण का पग-पग पर विरोध करते हैं
अचेतन अभ्यासों के अन्तर्गत प्राचीन परम्प-
राएँ और आधुनिकतम कार्यवाहियां आ जाती
हैं। वस्तुतः गांधी जी के विचारों को प्र
करके अहिंसक समाज की स्थापना कर
चाहिए। अहिंसक समाज की बुनियाद
इकाई गांव होंगे। गांवों के धनों से नगरों
का वैभव बढ़ रहा है, किन्तु नगर में मान
वीय भावनाओं का विकास नहीं होता
भारत की अधिकांश आबादी गांवों में रह
है। युग-परिवर्तन के बावजूद भारत
सांस्कृति गांवों की संस्कृति है। अस्तु भार
का विकास ग्राम्य-संस्कृति के आधार पर
होना उचित है। ऐसे समाज के निर्माण
कितना समय लगेगा, कहा नहीं जा सकता
है किन्तु वही हमारा लक्ष्य है। इस प्रका
हम देखते हैं कि समाज, उसकी परिस्थितियों
और समस्याओं से मनुष्य के मनोरोगों
घनिष्ठ सम्बन्ध है तथा मनुष्य के दैनन्दि
जीवन का प्रमुख भाग होने के कारण इन
उपेक्षा उचित नहीं। मानसिक रोगों
तात्पर्य पागलपन ही नहीं, वरन विकृतियां
हैं जो सामाजिक संघर्ष में थक जाने के का
उत्पन्न होती हैं और जिनका क्षेत्र व्याप
है। इसका सर्वप्रथम शिकार साहित्य
कला को हम मान सकते हैं क्योंकि उन
रचयिता ही समाज के सर्वाधिक अनुभू
शील प्राणी होते हैं। समाज पर पड़ने वा
प्रभावों को सर्वप्रथम वही ग्रहण करते हैं त
लेखनी या तूलिका के माध्यम से उ
अभिव्यक्त करते हैं। परिस्थितियों का ती
से परिवर्तन ही इन सभी रोगों का का
है।

वस्तुतः साहित्य और कला में प्रभा
सर्वाधिक अभिव्यक्त होता है तथा अब

मनोरंजन की वस्तु न रहकर जीवन एवं उसके मूल्यों के चिन्तन और शोध की वस्तु हो गयी है। किन्तु चिन्तन कठिन होने के कारण में अभिव्यक्तियां केवल अव्यवस्था, बाधा, विरोध प्रदर्शन और उथल-पुथल के अतिरिक्त अन्य कुछ प्रकार से नहीं हो रही हैं। दार्शनिक रूप से व्यक्ति को समाज के अधीन और उसका अनुगामी मान लिया गया है जब कि मनुष्य के लिए समाज को ... किया जाना चाहिए। समाज के बाव... आज लोगों के प्रयास वैयक्तिक हितों ... निमित्त होते हैं। समाज विकास के लिए ... विशेष प्रयास नहीं किया जाता। सर्वे ... सन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरायमः भी केवल ... कामना है, प्रयास नहीं। समाज के लिये ... दान के रूप में ही कुछ प्रयास होते ... त्याग अपरिहार्य है क्योंकि समाजिकता ... निवास नियंत्रण और संतुलन में ही है। ... के प्रत्येक क्षेत्र में इसकी आवश्यकता ... है। तात्पर्य यह है कि गांव, नगर, देश ... विश्व में एक ही की नहीं वरन सभी ... रहना है। इसलिए विचार वाणी और ... में नियंत्रण और संतुलन आवश्यक होता ... जीवन एवं समाज के साथ इस नियंत्रण ... सन्तुलन में भी परिवर्तन होता रहता ... । अस्तु सामाजिकता का विकास केवल सामाजिक क्षेत्र में नहीं वरन आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में भी होना चाहिए। किसी ... से समाज को क्या लाभ हुआ या होगा ... विचार अपरिहार्य है। अतएव अपने विचार, अपनी आकांक्षा एवं अपने व्यवहार ... सामाजिकता का प्रशिक्षण आवश्यक

है। स्वतन्त्रता अधिकार मात्र नहीं ... कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व की वस्तु भी ... इस दृष्टि से वैयक्तिक हित ही नहीं, सा... जिक हित की भावना भी आवश्यक ... जो वस्तु समाज में सामंजस्य न रखे, उ... कामना हमें कदापि नहीं करनी चाहिए।

मनुष्य ने अपने जीवन को आनन्द... करने तथा अपने प्रयोजन की सिद्धि के ... ज्ञान का अन्वेषण किया। सृष्टि के साथ ... नव ने भोजन की सामग्रियों की खोज ... फिर आवास एवं अन्यान्य आवश्यकत... उपस्थित हुई। जब ये वस्तुएँ उपलब्ध ... तब उसने अन्यान्य विषयों से सम्बन्धित ज्ञा... र्जन करने का प्रयास किया। अस्तु सा... जिक, आर्थिक और शारीरिक रूप से पी... व्यक्तियों को सहायता देने के साथ रोज... भर कार्य देना भी आवश्यक है। ... आर्थिक स्वावलम्बन के द्वारा ही व्यापित ... पीड़ित लोग समाज में स्थान ग्रहण ... हैं। तृतीय पंचवर्षीय योजना में इन व... क्रमों के लिए केन्द्रीय समाज कल्याण ... के आय व्ययक में पर्याप्त व्यवस्था की ... है; किन्तु वाणिज्य और उद्योग मंत्र... तथा उसके औद्योगिक मंडलों की तक... सहायता पूर्व की भांति ही उपलब्ध हो... "लोकतन्त्र में एक ऐसे विशिष्ट वर्ग का अ... होता है जो सांस्कृतिक विकास को सर... और भरण-पोषण प्रदान कर सके," कहते हैं जो वर्ग-विहीन समाज के वि... हैं और इतनी अग्रगति के बावजूद सं... समारोहों में अनर्गल भावनाएँ भरने अ... लता प्रदर्शित करने का प्रयास करते

सांस्कृतिक कार्य-क्रमों के नाम पर त्र-निर्माण को विस्मृत किया जाना र भूल है। इस दिशा में समाज कल्याण प्रशंसनीय प्रयास कर रहा है। चरित्र व्यक्ति और समाज का मुख्य स्तम्भ है। रित्र एवं मननशील मनुष्य ही साधन थगामी होकर साधु बनता है। जिनसे त और सुसंस्कृत समाज का निर्माण है। अतएव राष्ट्रीय चरित्र-निर्माण के आवश्यक है कि चरित्र निर्माताओं का त्र स्वयं दर्पण के समान निर्मल हो। य का समाज से अलग रहना न अब है और न कल्याणकारी ही। व्यक्ति धिक मूल्य विचारों का है। समाज पर त का नहीं, बल्कि उसके विचारों का प्रभाव होता है। अस्तु गांधीजी से अधिक उनके विचारों का महत्व है। वस्तुतः गांधी जी के विचारों को ग्रहण करके अहिंसक समाज की स्थापना आवश्यक है। अहिंसक समाज की बुनियादी इकाई गांव होंगे। गांवों के धनों से नगरों का वैभव बढ़ रहा है। किन्तु नगरों में मानवीय भावनाओं का विकास नहीं होता। भारत की अधिकांश आबादी गांवों में रहती है। युग परिवर्तन के बावजूद भारत की संस्कृति गांवों की है। अस्तु भारत का विकास ग्राम-संस्कृति के आधार पर ही होना चाहिए। हमें उसी पर-मोन्नत संस्कार एवं संस्कृति सम्पन्न को दिशा में प्रयत्नशील रहना है।

३४ पृष्ठ का शेषांश

'काकी। हम सेठ करोड़ीमल को ...।' मास्टर जी के वाक्य पूरा करने के ही काकी बोल उठो —

'जरूर देंगे। क्योंकि उनके नेता चुने पर देश को आजादी दिलाने वाली ा की बदनामी न होगी।'

ौर सब मतदान केंद्र की ओर चल पड़े।

० ० ०

जब चुनाव का परिणाम घोषित हुआ तो नी कांत नेता चुन लिए गए। धर्मदास चौपाल में बैठकर मास्टर जी कह रहे थे करोड़ीमल की जमानत जप्त हो गई। रमला और काफी रुपयों द्वारा वोट खरीदने के अपराध में जेल की हवा खा रहे हैं। शायद आप नहीं जानते कि रमला वेशधारी किसान सेठ जी का वकील गौरी पण्डा था। 'शहीदों के नाम पर' लोगों को धोखा देकर वोट नहीं मिल सकता, यह बात आज के चुनाव में अक्षरशः सिद्ध हो गई।

हमें बड़ी खुशी है कि हमने अपने बीच से रजनी कांत जैसा योग्य प्रतिनिधि चुन लिया है। मुझे गर्व है अपने मुहल्ले वालों पर कि उन्होंने सोने चांदी का जूता देखकर अपना होश नहीं गंवाया और अपने अमूल्य मत के मूल्य को समझा।

मानस' का एक पावन प्रकरण—केवट प्रसंग

सत्यनारायण स्वामी

जैसा कि प्रकरण के नाम से विदित है, इसमें केवट की महत्ता का वर्णन किया है। सच पूछा जाय तो यह तुलसी की केवट पर कृपा समझी जानी चाहिए, जिन्होंने उसके जीवन को धन्य बनाया, जहां एक नीच जाति का केवट और परम पावन भगवान राम का उसके द्वारा पाद प्रक्षालन। पर, वाह रे तुलसी, धन्य हो तुम! और धन्य है तुम्हारी लेखनी!

गंगा के किनारे राम नदी पार करने के लिए केवट से निहोरा कर रहे हैं। उन्होंने उससे इसके लिए नाव मांगी किन्तु वह क्यों नाव लाने लगा, तुलसी का केवट था। उसने सीधा सा उत्तर दिया कि मैं नहीं ला सकता क्योंकि मैं आपके मर्म को जानता हूँ:—

> मांगी नाव न केवट आना ।
> कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना ॥

ग्रामीण पति नाविक भला क्या—किस मर्म को जान सकता था, किन्तु जब सब कोई कहते हैं कि राम की चरण-रज में 'जड़ को मनुष्य बनाने की कोई जड़ी है, तो उसने भी कह दिया

> चरण कमल रज कहुँ सब कहई ।
> मानुष करनि मूरि कछु अहई ॥

आगे वह और स्पष्ट रूप से उस मर्म को बतला देता है:—

> छुअत सिला भइ नारि सुहाई ।
> अतः—पाहन ते न काठ कठिनाई ॥

जिन पैरों की रज के स्पर्श मात्र से पत्थर की शिला भी एक सुन्दर रमणी बन गई तो उस बेचारे की लकड़ी की नाव उस पत्थर से अपेक्षाकृत कम ही कठोर थी तथा जो अवश्य ही चरण रज के स्पर्श से नारी बन सकती थी। अतः वह कुछ भोला सा बनता हुआ राम से कहने लगा कि यदि मेरी नाव मुनि पत्नी बन जायगी तो गजब हो जायगा:—

> तरनिउ मुनि घरनी होइ जाई ।
> बाट परइ मोरि नाव उड़ाई ॥

तुलसी इसी बात को अपनी 'बरवै रामायण' में केवट द्वारा इस प्रकार राम से कहलाते हैं:—

> तुलसी जनि पग धरहु गंग में साच ।
> निगा नांग करि नितहिं नचाइहि नाच ॥

और फिर 'मानस में:—

> एहि प्रति पालउँ सब परिवारू ।
> नहिं जानउँ कछु अउर कबारू ॥

'कवितावली' का केवट तो यहां तक कहने में भी नहीं चूकता:—

> पात भरी सफरी, सकल सुत बारे-बारे,
> केवट की जाति कछु बेद न पढ़ाइहौं ।
> सबु परिवारु मेरो याहि लागि राजा जू,

दीन बित्त हीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं ॥
तम की घरनी ज्यौं तरनी तरेगो मेरी ,
नु मौं निषादु ह्वै कै बाद न बढ़ाइहौं ।
तुलसी के ईस राम, रावरे सौं सांची कहौं ,
बिना पग धोए नाथ नाव न चढ़ाइहौं ॥

केवट जानता है कि राम को गंगा तो य पार करनी ही है इसलिए क्यों न ना काम बना लिया जाय । उसने सोचा सीधे ढंग से वह कृपासिन्धु से चरण लन के लिए कहेगा तो शायद वे इन्कार देंगे, अतः बहानेबाजी करता हुआ वह तक आ पहुँचाः—

जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू ।
मोहि पद पदुम पखारन कहहू ।

शंका हो सकती है कि अकेले केवट को रा बल कहां से मिल गया जो राम के वह अपनी बात पर इतना अड़िग बना ! उसका निराकरण यही हो सकता है कि केवट के पास उसका राजा निषाद गुह भी खड़ा था और अन्य भी कई ाद जाति के लोग थे । गुह का तो साथ का प्रत्यक्ष प्रमाण वहां मिल ही जाता जहां गंगा के पार उतरे हुए लोगों का गिनाते हुए तुलसी दास उनका नाम लेते हैं:—

उतरि ठाढ़ भए सुरसरि रेता ।
सीय राम गुह लखन समेता ॥

गुह के यहां भगवान राम ने आथित्य कार किया था । हो सकता है राम के रण कमलों के माहात्म्य का पता राजा को बाद में लगा हो जब कि राम गंगा र होने जा रहे थे । उसने हमारे केवट को समझा दिया था, "तुम राम को बिना पांव धोए यहां से पार मत जाने देना क्योंकि मैं पहले तो भूल गया और अब उन्हें केवल पांव धोने के लिए ही वापिस घर बुलाना उचित नहीं प्रतीत होता । अतः तुम्हीं किसी न किसी प्रकार से इनके पांव धोलो ।"

केवट को राजा के वचनों को शिरोधार्य करना हो पड़ा किन्तु कुछ सोचकर उसने अपने मालिक से पूछा कि यदि राम पांव न धोने दें तो क्या करूँ ? तो गुह ने उत्तर दिया—"उन्हें पहले धीरे से समझाना, नहीं माने तो शपथ दिलाना और तब भी नहीं माने तो मैं साथ हूँ ही (ऐसा कहकर उसने बल पूर्वक चरण-कमल धोने का संकेत किया था)।

बस, फिर क्या था ? केवट को पूरा-पूरा बल मिल गया और उसने राम से स्पष्ट रूप से कह दिया—

पद कमल धोय चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं ।' हे नाथ ! मैं आपके चरण कमल को धोकर ही नाव पर चढ़ाऊँगा (अन्यथा नहीं) । मुझे उतराई (नाव द्वारा पार करने के पारिश्रमिक की बिलकुल आवश्यकता नहीं है । दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि हे नाथ ! मैं आपको नाव पर अवश्य चढ़ा लूँगा, पर दो शर्तें हैं—एक तो नाव चढ़ाने से पहले पद कमल धोइ)— आपके चरण कमल धोऊँगा और दूसरे, पार उतारने पर (न उतराई चहौं) उस तरफ (उत) जरा सी वस्तु (राई) भी उतराई के रूप में न लूँगा । आगे चल कर इन दोनों शर्तों का अक्षरशः निर्वाह भी तुलसी ने किया है। अस्तु, अपनी बात को राम के हृदय पर

अंकित करने के लिए केवट, राम ... दशरथ दोनों की शपथ लेने लगता

"... राम राउरि आन दसरथ शपथ सब
साची कहौं"

... केवट ने पहले 'राउरि आन' कह ... की शपथ ली है और तत्पश्चात ... शपथ' कह कर उनके पिताजी श्री ... दशरथ की। राम तथा दशरथ दोनों ... भी उसने कुछ सोच समझकर ही ... राम की शपथ इसलिए कि राम ... पुरुषोत्तम हैं और अपनी बात के हैं ... किंतु जब वे नर-लीला ही कर रहे ... हो सकता है अपनी मर्यादा का ... भी कर जांय। इसलिए, दूसरी ... तो उसने राजा दशरथ की; वही ... जिन्होंने अपनी बात पर—अपने बचन ... राम-बनवास पर अपने प्राणों तक ... अर्पण कर दिया था और जिन्होंने स्वयं ... था:—

... कुल रीति सदा चलि आई।
... प्राण जाय वरु बचन न जाई॥

इसलिए केवट ने राम और दशरथ ... की शपथ लेकर अपनी बात को पुष्ट ... —अपने प्रण को दृढ़ किया।

... उधर लक्ष्मण खड़े खड़े यह देख रहे थे। ... केवट ने राम और दशरथ की शपथ ... तो उनके क्या बाकी रहने को था? ... अपना धनुष बाण संभालने लगे। ... ने देख लिया, किन्तु वह भी कोई ... गोलियों का खिलाड़ी तो था नहीं ... डरने से ही हर जाता। उसने गुह को संकेत कर दिया कि लक्ष्मण गड़बड़ी करने वाला है, तो गुह ने भी संकेत में ही उत्तर दिया, "डर क्यों रहे हो! मैं जो तुम्हारे साथ हूँ।" फिर क्या था! उसी क्षण अपने स्वरों को और तेज करते हुए केवट बोला ही—'हे राम! मुझे आप का भाई लक्ष्मण का भी डर नहीं है, भले ही वह मुझ पर बाण चला दें।'—

बरु तीर मारहु लखन पै जब लगि न पाय
पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पार
उतारिहौं॥

राम तब तक चुपचाप खड़े-खड़े केवट की प्रेम-भरी अटपटी बातें सुन रहे थे। अब वे अपनी मुस्कुराहट रोक न सके और जानकी तथा लक्ष्मण की ओर देखकर मुस्कराने लगे:—

सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे।
विहँसे करुणा ऐन, चितै जानकी लखन तन॥

यहां तक के उपरोक्त सम्पूर्ण प्रसंग को तुलसी ने अपनी 'कवितावली'—रामायण की इन पंक्तियों में व्यक्त किया है:—

रावरे दोस न पायन को पग धूरि को भूरि
प्रभाव महा है।
पाहन तें बन-वाहनु काठ को कोमल है,
जल खाइ रहा है।
पावन पाय पखारिकै नाव चढ़ाइहौं आयसु
होत कहा है।
तुलसी सुनि केवट के बर बैन हँसे प्रभु
जानकी ओर हहा है।'

'मानस' उपर्युक्त सोरठे में 'बिहसे करुना ऐन' पद आया है जिसकी शाब्दिक

र्थ है करुणा के सागर राम) मुस्कराए। न्तु मुख्य पद है 'चितै जानकी लखन' अर्थात् जानकी और लक्ष्मण की ओर खकर। राम मुस्कराए भी तो सीता और क्ष्मण की ओर चितवन डाल कर। शंका सकती है कि राम सीता और लक्ष्मण ओर देखकर क्यों मुस्कराए, किसी न्य की ओर देख कर क्यों नहीं? इसके त्तर में एक कथा का निरूपण कर देना चित होगा जो किन्हीं मानस मर्मज्ञ से कदा सुनी थी जो इस प्रकार है:—

भ्रातृ भक्त लक्ष्मण बचपन से ही नित्य ति प्रातःकाल उठ कर नियमपूर्वक सीधे म के शयनागार में जाकर उनके चरण या करते थे। जब ब्याह हो जाने पर ताजी राम के साथ अयोध्या आईं तो होंने प्रातः उठते ही श्री राम के चरणों दबाने का व्रत लिया। पहले ही दिन दी उठकर लक्ष्मण जब राम के पास चे तो अपने से पहले ही माता जानकी उन्होंने राम के चरण दबाते हुए देखा र देखते ही उनका माथा भी ठनका। के भीतर एक नैराश्य की भावना छा और चेहरा उतर गया, किन्तु तत्काल धान होकर चट से सीता जी से कहा, ता आप यह क्या कर रही हैं? इन णों पर तो मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है। र हैं, जो कल तो पधारीं और आते ही न मेरे अधिकार को छीन लिया।" मण शैशवावस्था में भी पालने में श्री के साथ सोते और उनके पैर के अगूठे चूस लिया करते थे। माता जानकी ने भी अपनी सफाई देते हुए कहा, "मे[illegible] प्रभु के चरणों पर पत्नी के सिवा [illegible] किसका अधिकार हो सकता है?" और छोटा सा वाग्युद्ध उसी समय आरम्भ हो [illegible] यद्यपि उनमें कलह की अपेक्षा आनन्द [illegible] अधिक था। इस युद्ध की सुलह कौशल्या कैकेयी, सुमित्रा यहां तक कि स्वयं रा[illegible] न कर सके। तब गुरुदेव वशिष्ठ जी [illegible] कह कर "आप दोनों ही राम के [illegible] समान (प्रिय) हैं इसलिए एक एक चर[ण] दोनों दबाया करें" झगड़े का निपटारा कि[या] और दोनों मान गये।

इसलिए, यहां राम ने सीता और लक्ष्मण की ओर देखा और मुस्करा कर मानो यह संकेत किया हो कि 'देखो, जिन चरणों के लिए तुम दोनों उस दिन परस्पर झगड़ रहे थे उन्हीं चरणों को यह केवट तुम दोनों के सामने अकेला ही धोने जा रहा है।"

इसके बाद 'कृपा सिन्धु बोले मुसुकाई' कृपासागर राम मुस्कराए। उस मुस्कराहट में मानो वे कह रहे हों, 'केवट तुम सचमुच बड़े चतुर हो।' और बोले--

सोइ करु जेहिं तव नाव न जाई।
बेगि आनु जल पाय पखारू।
होत बिलम्बु उतारहि पारू॥

तुलसीदास जी आगे केवट के सौभाग्य का वर्णन करते हुए बतला रहे हैं कि जिन भगवान राम के एक बार स्पर्श कर लेने से ही मनुष्य इस अपार संसार सागर से पार हो जाते हैं, वही संसार सागर के पार उतारने वाले, जन जीवन की नौका के एक मात्र खेवैया और पृथ्वी को तीन कदमों से

इस में नापने वाले भगवान राम एक
धारण केवट से नदी पार करने के लिए
र कर रहे हैं। देवसरि गंगा की
तो कुछ और ही थीं:—

पद नख निरखि देवसरि हरषी।
सुनि प्रभु बचन मोहँ मति करषी॥

केवट तो राम की आज्ञा पाते ही
ल हो गया और पानी का कठौता भर
:—

केवट राम रजायसु पावा।
पानी कठवता भरि लइ आवा॥

यहां कठवता शब्द आया है, वस्तुतः
सर्वथा उचित और युक्तिसंगत प्रयुक्त
है। कठौता होता है काठ—लकड़ी
बना हुआ बर्तन। केवट लकड़ी का बना
बर्तन ही लाया। चूँकि लकड़ी-
ड़ी समान होते हैं और नाव भी लकड़ी
होती है, अतः पैर धोने का बर्तन भी
ड़ी ही का है। इसलिए जब यह कठौता
धोते समय और नहीं बनेगा तो निश्चित
से नाव भी औरत नहीं बनेगी। यदि
ता औरत बन जायगा तो केवट भगवान
फिर नाव पर अवश्य ही नहीं बिठा-
और इस प्रकार उसकी नाव औरत
ने से बच ही जायगी।

अब क्या था? केवट को तो राम
मिल गये और राम ही क्या, उनसे भी
कर उनका चरण-स्पर्श मिल गया और
बड़े प्रेम-पूर्वक भगवान राम के चरण-
धोने लगा। इधर देवताओं ईर्ष्या
ना तो सहज था ही:—

अति आनन्द उमगि अनुरागा।
चरन सरोज पखारन लागा॥
बरसि सुमन सुर सकल सिहाहीं।
एहि सम पुन्य पुँज कोउ नाहीं॥

केवट द्वारा चरण धो लिए जाने
राम बोले, "अब तो नदी पार उतार!"
केवट बोला, "नाथ, ठहरिए। अभी थो
काम बाकी है।" वह अपना लोभ संव
न कर सका और उस चरणोदक का पा
तो स्वयं सपरिवार पान किया (यहां परि
का तात्पर्य समस्त निषाद जाति से है
और फिर उसी जल से अपने पितरों
तृप्त किया, तब कहीं भगवान राम
सीता लक्ष्मण तथा निषादराज गुह सहि
गंगा के उस पार ले गया:—

पद पखारि जलपान करि आपु सहित परिवार
पितरि पारु करि प्रभुहि पुनि, मुदित गयउ ले पार

कितना लोभी और चतुर है केवट,
पहले तो स्वयं इस दुस्तर भवसागर से
हुआ और फिर राम को एक नदी ही
किया और उस पर भी सफाई लगाता
'न उतराई चहौं।' भगवान प्रसन्न थे
उसको भगवान ने भवसागर से पार उ
दिया।

केवट चार व्यक्तियों सहित गंगा
उस पार उतरा और भगवान को दण्ड
प्रणाम किया—

उतरि ठाढ़ भये सुरसरि रेता।
सीय राम गुह लखन समेता॥
केवट उतरि दण्डवत कीन्हा।
'मैंने इसे कुछ भी नहीं दिया'

राम के मन में शंका उठनी सहज ही
ौर माता जानकी भी अपने पतिदेव
दय की बात को लखने में प्रवीण थी
इसलिए उन्होंने तत्क्षण अपनी मणि
ा, प्रसन्न चित्त से उतार कर प्रभु
थों में दे दी—

प्रभुहि सकुचि एहि नहिं कछु दीन्हा ॥
पिय हिय की सिय जाननि हारी।
मनि मुदरि मन मुदित उतारी ॥

—

कहेउ कृपाल तेहि उतराई।
केवट चरण गहे अकुलाई ॥

श्री राम ने वह मुद्रिका केवट को देते
कहा—उतराई ले लो। उसने बिना
कहे-सुने ही अकुला कर श्रीराम के
पकड़ लिए, मानो वह उसी आकु-
से व्यक्त कर रहा हो—नाथ. मैंने कहा
ा कि उस पार एक राई तक न
और आप हैं जो मुझे मणि मुद्रिका
ई के रूप में दे रहे हैं। फिर दीन
से बोला—

नाथ आजु मैं काह न पावा।
मिटे दोस दुख दारिद दावा ॥
बहुंत काल मैं कीन्ह मजूरी।
आज दीन्ह बिधि बनि भलि भूरी ॥
अब कछु नाथ न चाहिए मोरे।
दीन दयाल अनुग्रह तोरे।

और इससे आगे फिर वह एक समझदारी की बात कहने लगा जिसमें स्वार्थ भी शामिल है, कि 'अभी तो मैं कुछ नहीं लूँगा। हाँ वापिस लौटते समय यदि आप कुछ देंगे वह मैं प्रसाद के रूप में अवश्य शिरोधार्य करूँगा—

फिरती बार मोहि जो देवा।
सो प्रसादु मैं सिर धरि लेवा ॥

और इसी 'प्रसाद' का अन्त तक निर्वहन करते हुए तुलसी ने केवट को राम द्वारा अवधपुरी में 'प्रसाद' ही दिलाया है (क्योंकि उसने और कुछ न मांगकर केवल 'प्रसाद' ही मांगा है)—

पुनि कृपाल लियो बोलि निषादा।
दीन्हें भूषण बसन प्रसादा ॥

यह वही निषाद है जिसने राम, लक्ष्मण और जानकी के बहुत कुछ कहने पर भी उतराई के रूप में कुछ न लिया था और तब राम ने उसे अपनी विमल भक्ति देकर विदा किया था—

बहुत दीन्ह प्रभु लखन सीय, नहिं कछु केवटु लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन, भगति बिमल बरु देइ ॥

गीत

जगदीश प्रसाद 'पंकज'
२४२/५४ यहियागंज, लखनऊ

चांद भले ले लो पूनम का पर मुझसे तारे मत मांगो
कोहनूर के इन टुकड़ों से लाखों नूर बना लूँगा मैं

विरहाकुल उर के साथी हैं केवल नील गगन के तारे
साथ साथ हँसते रोते हैं सुख दुख के हैं यही सहारे
परछांई ले लो शरीर की पर काली रातें मत मांगो
अन्धकार में टेढ़े पथ की मंजिल दूर बना लूँगा मैं

नयी उमंगों का मेरा शिशु दुख के पलनों में पलने दो
स्नेह भरा माटी का दीपक जीवन भर यों ही जलने दो
सुख सागर की निधियां ले लो पर मुझसे लहरें मत मांगो
तूफानों से खेल खेलने का दस्तूर बना लगा मैं

मेरी पूजा की थाली में मुरझांई कलियां रहने दो
भावुक उर को अपनी पीड़ा केवल भावों में कहने दो
सोने का सिंहासन ले लो पत्थर के भगवान न मांगो
उर मानस पर उन्हें बैठने को मजबूर बना लूंगा मैं

फूल अगर प्यारे हैं तुमको चुन लो जीवन की डाली से
विष का प्याला छोड़ मुझे दो तुम पीलो मधुरस प्याली से
उपवन की हरियाली ले लो पर कांटों का प्यार न मांगो
दामन थाम अगर यह लेंगे इनको दूर बना लूंगा मैं

मेरी जीवन की पुस्तक में सुख का अर्थ दुखों का घर है
नश्वर तन के नरक कुण्ड में सुख से रहता जीव अमर है
तुम सुख सुहाग ले जाओ पर सुख की दुलहन मत मांगो
तन की गागर के कण-कण से फिर सिंदूर बना लूंगा मैं

नयनों में उमड़ी बदली से चातक स्वाति बून्द ले लो तुम
पीर छोड़ दो इस गोकुल में मधु ले लो बरसात को तुम
भीगी पलकों का मधुवन लो पंक न तुम 'पंकज' से मांगो
पंक बीच खिलकर जीवन सुख से भरपूर बना लूंगा मैं

रूप के बादल

रामनारायण सिंह "मधुर"
प्राध्यापक, मंदार विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार)

तुम्हारे रूप के बादल मेरे मन व्योम में छाये।
तुम थे रात अपनी थी,
हृदय की बात अपनी थी,
खोल कर द्वार जो लाती,
किरण सौगात अपनी थी।

मैं अपना फिसाना था,
कहां अपना बिगाना था,
मिला क्या तोड़ कर बोलो,
सजल सपना सुहाना था,

मैं हूँ रात काली है,
मधुर मधु कोष खाली है,
सिहरते फूल और पत्ते,
पड़ा बिन बाग माली है।

विकल सी रागिनी मन में,
सिसकती चांदनी वन में,
न दिखता रास्ता कुछ भी,
कैद है दामिनी घन में,

न मिटती प्यास चातक की,
न धुलती पंक पातक की,
बता दो रूप के छलिया,
कहां है चोट घातक की?
जोहता बाट प्रतिपल मैं कभी तो याद आ जाये।
तुम्हारे रूप के बादल, मेरे मन व्योम में छाये॥

प्रातः काल

—प्रणव कुमार वन्द्योपाध्याय
बरेली (उ० प्र०)

मेरे भाग्य के सर्वस्व तुम थे।
उसके पश्चात युद्ध आया ! सर्वनाश !!
बहुत-बहुत दिन बीत गये
कोई निराश नहीं है, खबर नहीं है तुम्हारी।

इतने दिन पश्चात
फिर तुम्हारी कंठ स्वर से मैं चंचल हो उठा,
सारी रात मैं तुम्हीको स्मरण कर रहा था
मानो मूर्छा से ज्ञान होना !!

लोगों का संसर्ग मैं चाहता हूं,
भीड़ में प्रवेश करना चाहताहूँ, प्रातः काल की व्यस्तता में
लगता है टूकड़े टुकड़े कर में सभी कुछ तोड़ सकता हूँ,
उन लोगों से क्षमा भी प्रार्थना करा सकता हूँ।

सीढ़ि से मैं दौड़कर उतरता हूँ।
मानो यही प्रथम
बार मैं तुषार से अच्छादित रास्ते में निकल रहा हूँ
जिसके दोनों ओर फुटपाथ जन शून्य है।

चारों ओर प्रकाश है, गृहस्थी लोग जग गये हैं
चाय पी रहे हैं, ट्राम पकड़ने की तैयारी है
कुछ पलों के अन्तर से
शहर को पुनः पहिचाना नहीं जा सकता है।

फाटक पर घने होकर तुषार जम गया,
और उस पर जाल बना रहा है;

अभी समय से पहुँचने की जल्दी है,
आधे भोजन पड़े रहे, चाय शेष नहीं हुए।

—

उन सभी के लिए मेरा प्रेम है
मानो उन सभी का चर्म मेरा है
पिघलते हुए, बर्फ के साथ मैं भी गल जाता हूँ
प्रातः काल की तरह भौहों को संकुचित करता हूं।

मेरे अन्दर हैं नाम हीन लोग,
शिशु-वृद्ध, पेड़ पौधे।
उन सभी ने मुझ पर विजय प्राप्त कर लिया है
और यही है मेरी एक मात्र विजय।

चीनी युद्ध के प्रति कवियों का दृष्टिकोण

श्री 'प्रकाश'

भारत ने चीनियों का जो उपकार किया, का बदला कितनी नेकी के साथ चीनी कर दे रही है, संसार के सामने प्रत्यक्ष जब सर्वप्रथम चीनी गणराज्य की स्था- हुई, तो भारत ने ही पहले पहल गणराज्य को मान्यता प्रदान की। भारत ने चीनी गणराज्य को संयुक्त राष्ट्र का सदस्य बनाने का प्रयत्न किया। के अक्टूबर में जब चीनी तिब्बत में तो भारत ने केवल नैतिक विरोध किया। की पहली भूल है। अपनी भूल के सबको पीछे पश्चाताप करना पड़ता भारत का फर्ज था कि वह तिब्बत जैसे राज्य की स्वाधीनता की रक्षा करता। के अप्रैल माह में 'भारत-तिब्बत एवं आवागमन' समझौता हुआ। अपनी कतिपय सुविधाओं का त्याग की। इस संधि का आधार था फलस्वरूप चाऊ-एन लाई और ने दिल्ली में पंचशील की विज्ञप्ति पर क्षर किया। भारत ने चीन की मित्रता बड़े स्वप्नों को देखा। चाऊ-इन-लाई हस्ताक्षर की स्याही सूख भी न पाई थी, वह अपने अमिट स्वभाव का परिचय गया। १९५४ में जब नेहरू ने चीन यात्रा की, तो वहां चीनियों के मान- में गजब का परिवर्तन देखा। उसमें भारतीय क्षेत्र लद्दाख की लगभग १५ हजार वर्गमील और नेफा की ३० हजार वर्गमील भूमि को चीनी क्षेत्र में दिखलाया गया। नेहरू ने जब इसपर आपत्ति प्रकट की और इसका संशोधन चाहा, तो चाऊ-इन-लाई ने जवाब दिया कि ये नकशे कोमितांग के हैं इसका संशोधन हो जायगा। नेहरू आश्वस्त हो गये। लगे हाथ १७ जुलाई, ५४ को पेकिंग की सरकार ने भारत को पत्र लिखा कि भारत के समीपवर्ती चौकी बाराहुति चीनियों का है और उधर पत्र पहुँच भी न पाया कि चीनियों ने उस पर अधिकार कर लिया। फिर तो चीनियों ने बेरोकटोक धीरे धीरे भारतीय भूभाग को पचाना प्रारम्भ कर दिया। दिल्ली की सरकार ने सद्भावना पर विश्वास किया, पंचशील के पोषक पर वार नहीं किया, वार्ता द्वारा प्रश्न निपटाने की आशा की। परन्तु पेकिंग सरकार बिना कुछ विचार किये आगे बढ़ती गई। अभी उस दिन भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने बताया था कि जिस समय लोग चीनी हिन्दी भाई भाई के नारे लगाते थे, उस समय तक चीनियों ने १२ हजार वर्ग मील भारतीय क्षेत्र पर अधिकार जमा लिया था।

नेहरू का विश्वास सद्भावना पर था। यदि हम किसी का अनिष्ट न करें, तो कोई

ारा अनिष्ट क्यों करे। परन्तु संसार में श्वासघातियों की कमी नहीं है। आज ा की परिस्थिति ने कवियों के हृदय और स्तिष्क में भी तहलका मचा दिया है। सुन्दरलाल चतुर्वेदी 'अरुणेश' का हृदय ल उठा—

'पंचशील को भूल, धूल में झोंक मित्रता सारी
अरे चीन! तुम चले क्रांति की चमकाने चिनगारी?
क्या तुम निर्बल समझ रहे हो भारत के वीरों को!
भूल गए क्या अर्जुन से रणधीरों के तीरों को?

ो दूसरी ओर से प्रो० आनन्द नारायण शर्मा ब्ददानियों से रक्तदान मांग रहे हैं। ह भारत पर आक्रमण नहीं, उसकी पावन संस्कृति पर हमला किया गया है आज शत्रु एकता, सत्य, न्याय और करुणा को रौंदने वला है।

"उपकारों का तलवारों की भाषा में प्रतिदान मिला है।
दुनिया देखे-दिया मित्र ने मैत्री का कैसा बदला है।

अतः

"शब्द दान दे चुके बहुत अब रक्तदान की वेला आई।
नगपति तुम्हें पुकार रहा है—जागो भारत की तरुणाई।

कृष्ण सम जवाहर सारथी की ओजपूर्ण वाणी को सुनकर भारत के वीर सिपाही कैसे चुप रहें। 'सुरेशचन्द्र सेठ' के शब्दों में सिपाही अपनी अपनी प्रतिज्ञा दुहराते हैं—

"रंच मात्र धरती भी देना, हमें नहीं स्वीकार है,
भारत का हर वीर सिपाही, पत्थर की दीवार है।
जो चोरी से मेरे घर पर अपनी नजर उठाएगा,
वह पापी वीरों के हाथों मिट्टी में मिल जाएगा।
जाग उठी है धरती सारी हर क्षण पहरेदार है।

और 'मदन विरक्त' चीनियों को उलाहना देते हैं। उलाहना तो उनके लिए है, जिनसे सम्पर्क है। जो समझ और अपनापन रिश्ता ही नहीं रखते उन्हें क्या?

सारे देश यही समझे थे हिन्दी चीनी भाई भाई।
किन्तु देश पर हमला करते चीनी तुम को शर्म न आई।
नेफा में, लद्दाख में
भारत मां के साथ में
ऐसा क्यों अन्याय
चीनी हाय हाय।

विरक्त जी कहते हैं कि न्याय नीति आराधक भारत अपने स्वाभिमान की रक्षा में पीछे कभी नहीं हटेगा। अभी तक जो भारत से टकराये, रणक्षेत्र में पीठ दिखा भाग खड़े हुए। इस संकट वेला में 'श्री ... तिवारी' के शब्दों में—

आज जवानी गीत प्रलय के गायेगी
आज जवानी तूफां-सी लहरायेगी
उत्तर की सीमा पर उठते बादल से
आज जवानी आंधी बन टकरायेगी

...सिंह नेपाली इन चीनी लुटेरों को ...लय से निकाल भगाने के लिए देश के ...ों को ललकार कर कहते हैं—

...त के जवानो;
...त के जवानो;
...त है तुम्हें प्यार तो बन्दूक उठालो;
...चीनी लुटेरों को हिमालय से निकालो।
...ों की तरह तोड़ के ईमान के घेरे;
...पार चले आ रहे बेशर्म लुटेरे;
...र्म न जाने जी दया धर्म न माने;
...ों से इन्हें मार के उस पार हटा लो॥
...चीनी लुटेरों को हिमालय से निकालो

...डा० सत्यकेतु सेन ने अपनी एक पुस्तक ...खा कि दुःख की बात है कि आततायी ...ने चीन से कोरिया, फारमोसा छीन ...! अनाम, वर्मा, श्याम, वोर्नियो, जावा, ...भूटान आदि पास न रह सके। ...के आधार पर १९५४ में कम्यूनिस्ट पार्टी ...'आधुनिक चीन के इतिहास' में प्रकाशित ...के द्वारा यह स्पष्ट कर दिया कि वह ...किन देशों पर विजय प्राप्त करना ...हा है।—'नेपाल, भूटान, असम, पामीर, ...पश्चिम इलाका, वर्मा, मलाया, थाईलैंड, ...न, उत्तर पूर्वी इलाका, कुशइल द्वीप, ...द्वीप, सुलु द्वीप, ताइवान और पेंगू ...समूह आदि पहले चीन राज्य के अंग ...आजाद चीन इन देशों को अधिकार ...ने के लिए कटिबद्ध है चीन ने बहुत ...विचार कर ही आक्रमण किया है। ...जवाहर युधिष्ठिर के समान शत्रुओं ...जाल में फँसते ही गये। और तबतक ...गये जबतक धैर्य की सीमा न टूटी।

हिमालय की पुकार सुनकर जगे। श्री राज... कुमार चतुर्वेदी 'हिमालय की पुकार' में—

द्रौपदी सी चीखती है यह धरा असहाय;
वस्त्र खींचे जा रही धृतराष्ट्र की सन्तान, !
जाग, भारतवर्ष के सोये हुए अभिमान !

श्री रामेश्वर माथुर ने चीनियों को हत्यारा कहा है। भारत माँ ने इस शरी... को पाला पोसा है, जीवन और यौवन दि... है; उसी को आज इसकी जरूरत है। अत उसका ऋण लौटाने में क्या रखा हुआ है

"हमको भाई भाई कह कर छुरा पीठ में
मारा है;
चीन देश हत्यारा है।
जिसने यह तन दिया, उसे जीवन की आज
जरूरत है।
जिसने जीवन दिया, उसे जीवन की आज
जरूरत है।
मातृभूमि को धनवानों, निर्धन की आज
जरूरत है

हरिकृष्ण प्रेमी भारतीयों को चीन से लोहा लेने के लिए ललकारते हैं—

"लोहा लेने चलो, चीन ने भारत के त...
को ललकारा,
बुद्ध और गांधी का भारत रहा शांति
का पैरोकार;
किन्तु रावणों से लड़ने को सतत रहा है
यह तैयार;
यहाँ सिकंदर की विजयों का क्षण में उतर
गया था ज्वार;
शकों और हुणों के निर्मम हमलों ने
खाई थी हार।"

और 'देवराज दिनेश' के स्वर को देखें—

भेड़िए, केहरी के दरवाजे पर चीखें;
यह अनहोनी घट जाए' देखती रहूँ खड़ी।
सच बात कि चींटी के भी पर उग जाते हैं;
जब उसके सिर पर आ जाती है मृत्यु बड़ी।
तब तो काली की प्यास खूब बुझेगी।
त्रपुरासुर की छाती से निकलने वाले रक्त
ो काली खप्पर में छान कर अघा पियेगी।
फर अपनी करवाल सम्हाल कर आगे बढ़ेगी
निया दोष न दे।
"अब दुनिया मुझ को दोष न दे, मैं
बाध्य हुई;
शांति की वीणा धर भैरव शंख बजाने को।
अपनी इस लोरी के स्वर में चेतनता भर;
मैं बाध्य हो रही सोए सिंह जगाने को।"
दनकर' का स्वर देखें। 'जौहर'
में वह उबल पड़े हैं। जहान
भी जगता है, जब उसे विपद जगाती है।
ारत पर विपत्ति आ पड़ी है, भारत एक
ाकर जाग गया है। हँसी भूल कर बच्चे
ी चिंतन करने लगे हैं। बहनें भी किसी
भीर ध्यान में डूब गई हैं। भारत में जब
भी वज्र कड़कता है, सहो भामिनियाँ
हसा निर्मम, कठोर बन जाती हैं। दांतों
अधर दबा आंखों का अश्रु रोक कर,
लिवेला की आरती, पुष्प रोली सहेज
त्रों को रण में भेज ये सगर्व चण्डिकाएँ
सन्दूर लेप घर घर उमंग की शिखा सजाती
। और—
"विजयी अगर स्वदेश
प्रिय प्रियतम का फिर नाता है।
विजयी अगर स्वदेश
पुरुष फिर पुत्र, त्रिया माता है।

किन्तु, पताका झुकी अगर बलिदान के
गरदन ऊँची रही न हिन्दुस्तान की
पुरुष पीठ पर लिए घाव रोते रहें
आंसू से अपना कलंक धोते रहें
पर, जातीय कलंक
देश की माताएँ सहतीं नहीं
परम्परा है, चीख चीख
वे पीड़ाएँ कहती नहीं
हारे नर को देख
देवियां दवि ग्लानि के मार से
जल उठती हैं, अगर
काट सकती न कंठ तलवार से"
परन्तु यह कलंक आये ही क्यों? इस
नाम ही क्यों मुँह पर आये जबकि स
मनुष्य प्रतिष्ठा की रक्षा में मरने में
जीने का स्वाद लेने के लिए तैयार है
'नज़ीर' बनारसी—
"इक रोज तो मरना ही होगा,
फिर क्यों न वतन पर मर जायें।
इतिहास के पन्ने याद करें,
एक काम तो ऐसा कर जायें।"
शक्ल अपनी बदल कर दुनिया में चंगेजो
हलाकू आये हैं।
और आके हमारी सीमा पर चीलों की
तरह मंडराये हैं।
जिस मरने पर जीवन नाज करे बेहतर
है कहीं उस जीने से।
तकदीर 'नज़ीर' उस लाल की है मां
जिसको लगाले सीने से।
'बच्चन' भी अपनी ओजस्वनी वाणी
ललकारते हुए कहते हैं—
"ओ हमारे

वज्र दुर्दम देश के
विक्षुब्ध क्रोधातुर
जवानो !
आज अपने वज्र के से
दाँत भींचो
आगे बढ़ो
ऊपर चढ़ो
वे कंठ खोले
बोलना हो तो
तुम्हारे हाथ की दी चोट बोले ।"

डा० शिवमंगल सिंह सुमन तो फैक्ट-रियों में फौलाद ढालने की व्यवस्था पर हैं। जिस देश को हमने एक दिन दया-मय बुद्ध दिया, आज उसको बमकी आवश्यकता हुई। वह भी दिया जायगा। देना ही जानते हैं। हमारा शांत है। हम काल-कूट पीने वाले प्रल-भी हैं। आज प्रत्येक भारतवासी जलती मशाल बनेगा। आहुतियों के ज्योति जलाकर घनघोर अन्धकार में पड़े मोह निर्वासित करेगा। फौलादी खडगों का वेताव से उमड़ रहा है। घर घर भट्टी का ताप क्रम भी तीव्र करने की आवश्यकता है जिसमें भेदभाव की खोट तप कर गल जाये।

मां के लाड़लो दूध की कीमत अदा करो
सिर पर केसरिया कफन बांध, झूमो,
मचलो।
माताओ-बहनो ! दुर्गा-चण्डी बनो आज
महिषासुर के मद का मर्दन करने निकलो।

आज कवि का स्वर भी गुँज उठा है। पुरानी घटनाओं एवं प्राप्त प्रतिष्ठाओं की याद दिलाते, कुछ ललकार भरी वाणी रणोन्मुख कर रहे हैं। कवि के स्वर में अपरिमित शक्ति है। श्री विकल 'फिर वज्र तैयार करो' में लग गये हैं—

दानव बन कर के चीन इसी को आ
मिटाने आया है
उदयाद्रि शृंग पर उदित सभ्यता सू
डुबाने आया है
भारत के पौरुष जाग उठो रणतूर्य ब
दो प्राणदान
हो महाप्रलय के शृंगनाद से शैलरा
कम्पायमा

आज हिमालय की पुकार पर कौन सं की रक्षा के लिए आगे नहीं बढ़ेगा। अम नाथ, मानसरोवर' बद्रीनारायण आदि रक्षा के प्रश्न समुपस्थित है। धर्म का धारण करने वालों के सामने भी यह स स्या ज्वार के समान उमड़ आई है। हमा भूत अत्यन्त ही समुज्वल रहा है। आ हमें राह बतला रहा है। कवि की वा फुत्कार रही है। श्री कृष्णदेव पाण्डेय पंक्तियां देखें—

"जन जन का मानस बोल उठा,
भारत का यौवन मचल उठा;
जननी का पय भी उबल रहा,
इतिहास पुराना पलट उठा।
उत्ताल तरंगें सागर की,
उनमें आई शक्ति महान ;
बच जाय न शत्रु एक कहीं,
रव उससे अति महान।

एक अन्य स्थल पर दिनकर जी कहते हैं—

शेष पृष्ठ ४५ पर देखें

ल जो किया गुनाह, आग बनकर आया है
र, जो हम कर रहे आज, उसका क्या
होगा ?
मक नहीं नादान। पाप से छूट गये हम
नकर गर्जन गीत या कि हुँकार उठा कर।
पनी रक्षा के निमित्त औरों को रण में
टवाना है पाप, पाप है यह विचार भी
गे युवक सीमा पर, हम सोने जाते हैं।'

मातृभूमि की रक्षा करने में वही समर्थ जो घर में भी, गांव में भी बुराइयों की न को काट डालने को उद्यत है। बाहर र, भीतर चोर: तब तो भारत की प्रति- रही। जो भारत राष्ट्र शरीर में अपनी का दर्शन करता है, उसी के कलेजे में भी उफनायगा। जिसे स्वतन्त्रता की की रोटी में आनन्द मिलता है, वह ही तन्त्र होने के पहले अपनी मर्यादा की ा में मौत का आलिङ्गन युद्ध करते हुए मर क्षेत्र में करेगा। कवियों की वाणी में शक्ति तो असीम है, परन्तु सही में आज उन्हें शब्द दान के बदले रक्तदान भी देना है।

रामनारायण सिंह 'मधुर' तो भारतवा- सियों को समय की विकरालता देखकर कसम दे रहे हैं। अब भी यदि लोग नहीं चेते तो कब चेतेंगे जब कि अपने को पवित्र बनाने का स्वर्ण सुयोग तैयार है। सच तो; शत्रु यदि मस्तक पर खड़ा है, तो आँखों में नींद कहाँ ? और राष्ट्र के हित के लिए यदि युवक नहीं बढ़े, तब तो वे मां की कोख को ही लजायेंगे।

"कसम तुम्हें माता के पय की और
बहन के लाज की
समर भूमि में मरना अच्छा पर न
कहना पातकी"
अगर मरे तो स्वर्ग नहीं तो यश का
पारावार है
देश के खातिर बढ़ो जवानो स्वर्ण
सुयोग तैयार है।"

'अमुक साथी में अमुक गुण है' ऐसा कहकर हम 'है'—वादी क्यों नहीं बनते ? 'उसमें अमुक गुण नहीं है' ऐसा कहकर हम 'नहीं'—वादी क्यों बनते हैं ? जो काम नहीं किये जाते, उनकी गिनती से क्या लाभ है ?

—विनोबा

भूल सुधार

गत जून अंक के पृष्ठांक ४६ पर एक 'गीत' प्रकाशित हुआ है। उसमें भूल से कवि का नाम महेन्द्र नारायण 'मस्ताना' छूट गया है।

ज्ञान अमृत है। उसकी स्तुति उसको प्राप्त करने के अनुष्ठान को कहते हैं। ज्ञा
को वीर संतानें संभव है। उत्तम अभिलाषायें ज्ञानी ही में संभव है और उसे प्रा
ने का सामर्थ्य भी उसी में निहित रहता है।

शुद्ध करने का तत्व भी ज्ञान ही की अग्नि है। दिव्य ज्ञान से युक्त महाप्रता
श्रेष्ठ को सहायता करने के लिए परमेश्वर सदा उनके पीछे पीछे घूमते हैं। ज्ञा
श्वर के अत्यन्त निकटतम प्राणी और उनके परमप्रिय प्रतिनिधि है।

कवि वे हैं जो मानवता की सब प्रकार की समस्याओं को सुलझाते हुए सब प्र
विपरीत शक्तियों से उसे बचाते हुए सार्वभौम ज्ञान पर उन्हें आरूढ़ कराने
हैं।

कवित्व साधना यज्ञ कार्य है और इसके पौरोहित्य अधिकारी मनीषी ही सुचारु
संपन्न करा सकेंगे। वे अधिकारी मनीषी ऐसे होंगे जो सब प्रकार के प्रमुख
प्रमुख व्यक्तियों की स्तुति के योग्य हो जो गुण दोष विवेचन देशकाल .परिस्थिति
नुसार करना जानते हैं और जो सब प्रकार से विज्ञ और तपस्वी है।

कवि सब प्रकार के सुख और शक्ति की मार्ग को प्रशस्त करने में समर्थ होते हैं
ज्ञान समुद्र से विद्वानों को प्रकट करने में निपुण होते हैं। कवि सब प्रकार के सुख
शक्तियों को अपने विविध प्रकार और दर्जे के अनुयायियों और अनुगामियों
लिये जन समाज पर बरसाना जानता हैं।

कवि वे हैं जो सब प्रकार के रुचि, मत, और कार्य वाले स्त्री पुरुषों को एक
लक्ष्य प्राप्ति के उद्देश्य से जमा कर संगठित कर संचालन कर सकते हैं। संग
ठन द्वारा ही बड़े बड़े कार्य संभव है

कवित्व यज्ञ में लीन पुरोहित को अपने गति तत्व के आवागमन सब दिशाओं
ओं में और कालों में पृथक पृथक रूप से सम्पन्न करने की क्षमता चाहिए।

रात और दिन का समान महत्व है। यह भी नहीं, वे एक दूसरे के विपरीत
साधना शील पुरोहित समान रूप से दोनों अवस्था में जाग्रत रहते हैं। इस तरह स
म्यक रूप से जाग्रत संयमी कवि और ज्ञानी जिस देश में सक्रिय हैं वे ही राष्ट्र ऐ
सम्पन्न हो उन्नत शिखर पर चढ़ सकेंगे।

ज्ञान और ऐश्वर्य को देने वाले देवता होते हैं। सर्व जन हितकारी क्रान्त दर्शी, साध
सम्पन्न, सदा शुभ कार्य में ही रत कल्मष हीन व्यक्ति विशेष को ही विद्वान देवता ज्ञा
या कवि के नाम से जाना जा सकेगा। इस प्रकार के महापुरुषों को ढूँढ़ निकाल
उनके हाथ में शासन की जिम्मेदारी सुपुर्द किये बगैर कोई भी राष्ट्र खड़ा न हो सकेगा।

शिक्षालोक

(पटना-नगर निगम-शिक्षक संघ का मासिक मुख पत्र)

संपादक—श्री परमानन्द 'दोषी'

शिक्षालोक कार्यालय, गुरहट्टा, पटना – ८

वार्षिक चन्दा—४ रुपये

। एक कविता' एक कहानी तथा आठ गर्भित निबंधों एव आपकी शिकायत, वार्त्ता और सम्पादकीय स्तंभों से सुम- न 'शिक्षालोक' का जून अंक देखा। देखा ही नहीं, उसे कई बार पढ़ा भी। कर माननीय शिक्षा मंत्री श्री सत्येन्द्र यण सिंह जी का लेख तो आज की इस कालीन स्थिति में अध्यापकों एव छात्रों उये कर्त्तव्य पालन और देश रक्षा के त्त बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। 'शिक्षा का- तवादी स्वरूप' ने शिक्षा सम्बन्धी दोषों क सकल एक्स-रे रिपोर्ट ही हमारे सामने । किया है— 'यहां की शिक्षा में न योजना है और न कोई स्पष्ट मकसद। ओर भारत गरीबी, अशिक्षा और री से लड़ रहा है, तो दूसरी तरफ चिल्ला. ठते हैं १० लाख बेकार शि- को अधोगति पर। समाज पुकारता है, शिक्षक रो रहे हैं। बुद्धिजीवी चिल्ला रहे हैं—'शिक्षा की प्रणाली को बदलो।' अनुशासनहीन शिक्षा प्रणाली समाजवाद का मजाक है'' 'सोवियत रूस की शिक्षा व्यवस्था, और 'शिक्षा और चरित्र निर्माण' भी उच्चकोटि के निबंध हैं। श्री दोषी जी की कहानी 'वात्सल्य' बहुत ही अन्त में मार्मिक बन पड़ी है—''जिस नौकरी में मैं हूँ वह रुपये और मान दे सकती हैं—बच्चों और बच्चियों का प्यार नहीं। मास्टर हो जाऊंगा तो एक नहीं अनेक पप्पु और पप्पियाँ मिलेंगी मुझे.....।''

सचमुच, शिक्षा के क्षेत्र के प्रचलित दोषों के निराकरण के लिये 'शिक्षालोक' समर्थ सिद्ध हो सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। मैं सम्पादक महोदय से आग्रह करूँगा कि प्रत्येक अंक में एक शिक्षा से सम्बन्धित निबंध निकालें तो बड़ा ही अच्छा हो।

शेष पृष्ठ ५८ पर

प्रतिनिधि साहित्य

(१९६१ ई० की प्रतिनिधि रचनाएँ)

प्रधान सम्पादक—श्री सियाराम शरण प्रसाद

सम्पादक—श्री कृष्ण मोहन मधुकर

प्रकाशक—कला भारती, सराय सैयद अली, मुजफ्फरपुर (बिहार)

मुख्य वितरक—साहित्य रत्न भण्डार, ५ गांधी मार्ग, आगरा (उत्तर प्रदेश)

मूल्य—३ रुपये।

मुद्रण संतोषजनक, आवरण पृष्ठ भव्य प्रतीकात्मक।

नवगीत, नई कविता, नव कथा और —'प्रतिनिधि साहित्य' के ये चार खंड प्रस्तुत संकलन में १९६१ ई० में प्रका- और परिचर्चित प्रतिनिधि रचनाओं स्थान देने का नवप्रयत्न किया गया है। 'गीत' का प्रारम्भ महाप्राण निराला के गीत' से हुआ है। प्रतिनिधि साहित्य ...' महाप्राण निराला को समर्पित गया था और इस संकलन का प्रारम्भ निराला के 'इमन गीत' से ही हुआ वस्तुतः निराला हिन्दी की साधना का पुरस्कार है। 'नवगीत' में महाप्राण के बाद डा० बच्चन, माखन लाल ..., महेन्द्र शंकर, नीरज, शलभ आदि स्थान दिया गया है। बच्चन, भाई का ..., मानव, काल 'जिज्ञासावादी चिंतन प्रतीत है जिसमें रूप, रस और गंध हैं। श्री मुख्यतः प्यार, जवानी और स्वप्नों के हैं किंतु चिंतन का रस प्लावन भी है। बच्चनजी रस प्लावन में जीवन ...है। अब उनके गीतों में मिट्टी के प्रति ...मयी जागरूकता उभर रही है।

...में कविता खण्ड में सर्व श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, डा० रांगेय राघव, डा० देवराज, डा० महेंद्र भटनागर, डा० जगदीश गुप्त, रामनिरंजन परिमलेन्दु, (जिन्हें लोग रामनिरंजन परिमल के नाम से भी जानते पहचानते और मानते रहे हैं), आनन्द भैरव शाही, राजेन्द्र प्रसाद सिंह, गोपाल भागलपुरी आदि आए हैं। वीरेन्द्र कुमार जैन की कविता 'कहां चलूँ' कैसे चलूँ?' सूर्योदयी कवि की आत्मनिष्ठा और अन्तर्जीवन के यात्रा-संशय अभिव्यक्त करती है। श्री वीरेन्द्र कुमार जैन की आत्मनिष्ठा जीवन निष्ठा से ही प्रभावित है। श्री राजेन्द्र प्रसाद सिंह की 'उषा स्वस्ति' कविता में उषा के प्रति नवीन दृष्टि-चेतना ग्रहण की गई है। मेरी कविता 'धूप को राख' प्रतीकत्व से ओतप्रोत है। धूप को राख छविमय जीवन, संस्कृति और सुन्दरता के अवसान का प्रतीक है। निराशा के अन्धकार में मनुष्यत्व के सुन्दर सूरज की कामना मैंने की है। मैंने यहां कहा है—

> 'जिन्दगी में है धूप की राख का वैभव,
> काश, धूप की राख पर
> उदित उद्भासित होता
> मनुष्यत्व का सूरज सुन्दर !'

जीवन में असुन्दरता, विकृति और का-

मा है। मनुष्यत्व का दिव्य आलोक
नुः स्थित है। किंतु यदि मनुष्यत्व का
द: सूरज उगे तो जीवन का रूप सुन्दर हो
कता है, मैं यह मानता हूँ।
एकांकी खण्ड में डा० राम कुमार वर्मा
र राधा कृष्ण हैं जिससे हिंदी के पाठक
परिचित नहीं।

संकलन में श्री आरसी प्रसाद सिंह के
अभाव के कारण संकलन की मर्यादा को ठे
लगती है। लेखकों के पते दे दिए गए हैं
लेखक और पाठक के बीच की दूरी इससे क
होती है। यह शुभ है। विशिष्ट साहित्य
कारों के चित्र भी प्रकाशित किए जाय
पाठकों को प्रसन्नता होगी।

इस पत्रिका की उपयोगिता को मद्दे
नजर रखते हुए बिहार सरकार क्या, भारत
सरकार द्वारा प्रत्येक पुस्तकालयों एवं अन्य
शिक्षा संस्थाओं के लिये इसे स्वीकृति मिलनी
चाहिये। छपाई सफाई सुन्दर और गेटअप
आकर्षक है। इस सुन्दर प्रकाशन के लिये
दोषी जी को बहुत बहुत बधाई।

—महेंद्र 'मस्ताना'

ागत' दर्शन की जीवनमयता से अनुप्राणित किन्तु बच्चन जी के दर्शन में जीवन के सहज आस्था है, रूप की सहज उपासना क्लिष्टता का कुहरा नहीं। गीतों के ता ने अपना राजमुकुट बच्चन के श्री णों पर रख दिया है, असंख्य पाठकों हृदय-सम्राट बच्चन का यह सम्मान है !

संकलन का तृतीय खण्ड नवकथा है समें सर्वश्री डा० रामचरण महेन्द्र, विष्णु ाकर आदि आए हैं। इस खण्ड में क महत्वपूर्ण कहानीकार छूट गये हैं। लन का अन्तिम खण्ड 'एकांकी' है जिसमें विष्णु प्रभाकर का एकांकी 'रात, चाँद र कुहरा' और डा० रामचरण महेन्द्र एकांकी 'समारोह का तैयारी' प्रकाशित ा है। हिन्दी एकांकी डा० रामचरण न्द्र का निजी विषय है। एकांकी के तत्व शिल्प और दर्शन के सिद्धहस्त ाकार डा० रामचरण महेन्द्र हैं। एकांकी ० महेन्द्र के साधना-आलोक में चमत्कृत ा है।

इतिहास, शोध और मूल्यांकन के दृष्टि-ण से इस प्रकार के संकलनों का विशिष्ट त्व है। श्री सियाराम प्रसाद जी के निर्देशन में मुजफ्फरपुर की कलाभारती महान कार्य कर रही है। मुझे विश्वास है कि साधना-सम्पन्न साहित्यकार श्री सियाराम शरण प्रसाद जी की साधना-रश्मियों से हिन्दी का भण्डार चमत्कृत होता रहेगा। प्रस्तुत संकलन में श्री सियारामशरण प्रसाद जी का परिश्रम झलक रहा है। उनमें एक कुशल सम्पादक की कुशलता, मर्मज्ञता और निपुणता है। हाँ, एक त्रुटि की ओर ध्यान दिलाना चाहूँगा। लेखकों के व्यक्तित्व और कृतित्व के अनुसार, प्रस्तुत संकलन में, रचनाओं को स्थान नहीं दिया गया है। लेखकों के नाम के आदि वर्ण के अनुसार भी, क्रमिक पद्धति से, रचनाओं को स्थान दिया जा सकता है। यह एक स्वस्थ पद्धति है।

'प्रतिनिधि साहित्य' (१९६०) के प्रधान सम्पादक मंडल और कला भारती की प्रबुद्ध चेतना को मेरी बधाई। यह संकलन सभी पुस्तकालयों और हिन्दी पाठकों के पास अवश्य होना चाहिए। यह संकलन उनकी बौद्धिक चेतना का परिचायक होगा।

—रामनिरंजन 'परिमलेन्दु' एम० ए०
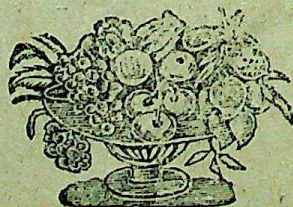
भारत लोक

सम्पादक—दीनदयाल ओझा
'भारत लोक' मासिक पत्र,
१७८, महात्मा गांधी रोड, कलकत्ता—७
वार्षिक मूल्य—२रु० ५० न० पै०

[भ]ारत-लोक' देखा। यह बच्चों का [स]त्य एवं मधुर-मासिक पत्र है। इसके [स]े बच्चों का मानसिक विकास होगा [ध्रु]व-सत्य है। आज के मासूम बच्चे ही [रा]ष्ट्र के कर्णधार बनेंगे। इसलिए 'भारत [जै]सी मनोरंजक, शिक्षाप्रद एवं सरल [प]त्रिका इसके लिये काफी सचेष्ट है। [इ]स मई अंक के सभी गीत अच्छे लगे [ख]ास बसन्त-गीत। बड़प्पन की दवा, [च]ाचा का गदहा, भिखारी कदम उठा, आवाज मिला, साहित्य और लोक तत्व, और जरा याद करो कुर्बानी आदि रचनायें अच्छी बन पड़ी हैं।

यह पत्रिका, उपयोगी एवं पठनीय है। मैं इस पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति की मंगल कामना करता हूँ।

—महेंद्र 'मस्ताना'

मन्दार विद्यापीठ प्रेस में आनन्द शंकर माधवन द्वारा मुद्रित एवं, हिंदी निर्माण परिषद् द्वारा प्रकाशित

प्राच्य भारती

अगस्त, १९६३

इस्तेमाल के लिये अवसर प्राप्त होना स्वामित्व का परिचय नहीं समझना चाहिये। अरुणोदय सिर्फ उसके लिये है जो जागना चाहता है। मृत्यु भी सिर्फ उसके लिये है जो मरना चाहता है। अन्धकार तब है जब मनुष्य जिन्दा रहना नहीं चाहता और प्रकाश भी तब है जब मनुष्य मरना नहीं चाहता। देववृत्तियां जब सुषुप्त होने लगती हैं तभी असुर वृत्तियों का प्रादुर्भाव हो जाता है। हां, उन्हें दबाने और शक्तिहीन करने का एक मात्र उपाय है देव वृत्तियोंको सतत जाग्रत और विकासोन्मुख रखना।

ज्ञानियों और देवपुरुषों का संहार अथवा हतप्रभ करने के बाद उनकी जय बोलते हुए, उनके लिये स्मारक खड़ा करते हुए स्वशासन जमा करना ही असुर राजनीति है। रात दिन पूजा पाठ और भजन-कीर्तन करते हुए परमेश्वर-संस्कृति को अपने जीवन से और समाज से भी उखाड़ कर फेंकने की क्रिया को ही असुर-धर्म कहते हैं। संसार में आजकल इन्हीं चीजों की विजय है।

हिन्दी निर्माण परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर
बिहार

हरिवल्लभ नारायण पारितोषिक

का चौथा आयोजन

प्रथम जनवरी से प्रारम्भ हुई अवधि के लिए इस परिषद् ने निबंध प्रतियोगिता रखी थी। विषय था—'भारत-चीन सीमा-समस्या का समाधान'। मगर अबतक कुल पांच रचनायें आयी हैं। कमसे कम पन्द्रह रचनायें नहीं पहुँची तो प्रतियोगिता नहीं की जा सकती। हमें दुःख है, कोई लिखना ही नहीं चाहते। इस प्रतियोगिता में भाग लेने वाले व्यक्तियों को योग्यता क्रम के अनुसार ५१) ४१, ३१, २१, ११ रुपये के पांच पुरस्कार प्रदान करने की व्यवस्था है। निबंध मौलिक, अप्रकाशित तथा अप्रसारित होना चाहिए। कृपया रचनायें ३० सितम्बर तक निम्न पते पर अवश्य भेज दें। पुरस्कार की राशि पुरस्कृत रचनाकार को तुरन्त भेज दी जायगी।

मंत्री,
हिन्दी निर्माण परिषद्

पो०—मंदार विद्यापीठ,
जि०—भागलपुर, बिहार

प्राच्य भारती

(हिन्दी निर्माण परिषद् की मासिक मुख पत्रिका)
बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत
सम्पादक
वार्षिक चन्दा ५) • आनन्द शंकर माधवन • प्रतिअंक ५० न० पै०

वर्ष ४] अगस्त —१९६३ [अंक-४३

विषय-सूची

"आवाज दो हम एक हैं—हम एक हैं"

जब कभी मैं यह गीत कहीं सुनता हूँ मेरा मिजाज लहरने लगता है। आवाज देता
। साहब, आवाज देने से हम एक नहीं हो सकेंगे। आवाज से आवाज ही मिल सकेगी
से पानी से पानी हा, पत्थर नहीं। आदमी से आदमी को मिलाने की कला कुछ औ
और वह क्या क्या है, कैसे कैसे है समझने के लिए अकल चाहिये, हृदय भी चाहिये
इस अकल और हृदय के अभाव में ही आज हमें अपने घर-द्वार और बाल बच्चों
इज्जत आबरू बचाने के लिये दर दर के भिखारी बनकर विश्व के कोने कोने भटकना प
रहा है। चीन किनके भरोसे पर किस हिम्मत और गरिमा-नशा में आकर समूचे संसा
को ही अब तृण समझ बात-व्यवहार कर रहा है! आवाज देने के पहले इस ओर
जरा सोचा जाय! धर जनेऊ! दौड़ गंगा जल लेकर महादेव मन्दिर की ओर!
राधा का नाम ले लेकर कृष्ण के सामने! जाकर भूख हड़ताल कर चीनी फौज के सामने
एक बार पूर्तगाली फौज के सामने भी तो भूख हड़ताल और सत्याग्रह करने गये थे
आध्यात्मिक देश है! आर्य भूमि है! सांस्कृतिक शासन करेगा समूचे संसार का!
जानता है! राग गायन और गीता तत्व सिखाने तैयार है अधिकारी पात्रों को! अभ
सब! परमेश्वर का स्मरण हो आते ही, देश और भाषा की समस्यायें सामने दिखायी दे
ही जिनकी अन्तरात्मा मारुत पुत्र महाबली हनुमान के जैसे आकाश की ओर उछलने न
लगती और राक्षस नगरी सुवर्ण लंका को भस्म कर देने के लिये कूद नहीं पड़ती वह क्य
स्थापित करेगा साहब सांस्कृतिक शासन? वह क्या जमायगा भाई आध्यात्मिक प्रभुत्व
वह देश और भाषा की प्रतिष्ठा निस्सन्देह बचा नहीं सकेगा! धर्म मजाक नहीं जनाब
न व्यापार ही, कि रात दिन माँगा जाय हाथ फैलाकर भगवान के सामने! किस अधिकार
पर आप सांमने चलते उनके सामने? आपसे उन्होंने कुछ लिया क्या? क्या दावा है
आपका कि जन्म भर का पाप भार लिये उनको तंग करने पहुँचते हैं! मकान में बैठ
स्विच लगाते ही समूचे तारों में बिजली दौड़ जाती, फौरन सारी बत्तियां जलने लगतीं

...इसी तरह धर्म भी है। जैसे कबीर कहते हैं एक बार राम का नाम लेते ही जिनके ...में बिजली दौड़ने नहीं लगती, इन्द्र जैसे असुर संहार के लिये उछल कर आगे कूद ...जाता, अमित आनन्द बोध से जिनका मस्तिष्क झूमने नहीं लगता वह वस्तुतः राम का ...नहीं ले रहा, उस शब्द का परिहास कर रहा है। हां, इसमें भी बात है भाई! बहुत ...बात! बहुत कठिन यह कार्य है। यह सब भीतरी गूढ़ तत्व समझे बगैर सिर्फ जनेऊ ...चोटी दर्शा दर्शा कर आप हिन्दू धर्म और भारतीय संस्कृति को बचाये रखने का ...स्वप्न देखते बैठे रहना चाहते, जिन्दा रहना चाहते तो रहिये, हमें कुछ कहना नहीं ...तो गाय बैल भी तो जी ही रहे हैं न?

मैं उस कवि की खोज में गया था जिन्होने यह गीत लिखा—आवाज दो हम ...है। मैं उनसे कहना चाहता था सिनेमा निर्माताओं की पूजा में समय और शक्ति व्यय ...कवित्व साधना नहीं है, न मेल का रहस्य ही आवाज देना है। पर उनसे मुलाकात ...नहीं हो सकी। मेरा दुर्भाग्य ही कहा जाय आजकल देश में सर्वत्र घर घर और बाट ...में यही एक रेकार्ड बजाया जा रहा है। सुनते सुनते आजिज आ गया भाई। उधर ...चीनों का फौज जमने लगता तो इधर आवाज देना जोर पकड़ता। पूछेगा तो कहेगा ...जनमानस को तैयार कर रहे हैं, उसमें जोश और भाव भर रहे हैं। यह क्या साई ...का टायर है कि पम्प किया जाय हवा! क्या परिहास है साहब! मूर्खता का भी ...है! चीनी हमला के पहले क्यों नहीं आवाज दी थी? उस समय हम एक नहीं थे ...! चीनी सरगरमी किसी कारण वश ठण्डी पड़ गयी तो यहां की आवाज भी धीमी ...लगती। नहीं, नहीं, आवाज तब भी बुलन्द रहती- मगर वह दूसरी किसम की आवाज ...सुनना चाहो तो सुनो, मिशाल पेश करता हूँ! "एक घर बनाऊँगा तेरे घर के सामने.. ...घर के सामने!" आ··हा··हा··प्यार है! करो करो, करो प्यारे, खूब प्यार करो ...रहे कालेज और सिनेमा और कहानी मासिक पत्रिकायें! तुम्हें कम से कम प्या... ...ना तो सिखाया!

एक वाकया सुनाता हूँ पाठक! बहुत दिलचस्प है। मेरा एक ऐब बहुत पुराना ...खाते समय मुझे कुछ न कुछ गप्प सुनना जरूरी! मेरे घर में कोई है नहीं। ...में अपने रसोइया से ही गप्प कर के संतोष कर लेता हूँ। मेरी इस आदत ...सिंचन होकर या रस लेकर ही कहा जाय, उस समय मेरे रसोइया के अन्य मित्र ...जुट जाते हैं। कल ही की बात है। दोपहर का समय था। मैं खाना खाने ज्यों ...ही तो लल्लू ने कहा, "वह डाक्टर मर गया"। मैंने पूछा, "कौन डाक्टर?" उसने कहा ...अरे, वह बाई, जिनके पीछे विलायत की सारी छोकरियां पागल हो गयी थीं। ...था। अलबत्त यह भाग्य भी!" मैंने मुस्कराते हुए जवाब दिया और अलबत्त एक एक अ... ...ना! मुझ ही को देखो। आजतक एक भी औरत ने नहीं पूछा! किसमत चाहिये सा...

रा भाग्य ही टेढ़ा है।" लड्डू और बैजू बड़े जोर से हँसने लगे मानो पुष्टि कर र
। एकाएक लड्डू ने कहा, "आप एक बात जानते हैं? बूढ़े मर्दों को नंगा करके जवा
लड़कियां खूब जोर जोर से चाबूक से पीटें तो उन्हें जवानी आती है, झुर्रियां सब मिटें
सफेद बाल भी सब काला हो जायगा" मेरा तो बुरा हाल बीतने लगा। हँसते हँसते प
ान होते हुए मैंने कहा, "अच्छा जी! तब तो बड़ा पुण्य कार्य होगा! किया जाय इ
ाम। देश में बहुत बूढ़े पड़े कराह रहे हैं"। "बैजू ने पूछा—लड़कियां तैयार होंगी इ
रह पीटने?" इस पर लड्डू ने कहा—"अरे वे तो हर करम के लिये हमेशा तैयार
हती हैं। कोई जानने न पाये, बस इतना ही वे चाहती हैं।" पाठक, यह ख्याल र
ेरे ये दोनों मित्र पढ़े लिखे बिलकुल नहीं हैं।

जन रूचि ही देश की दौलत है। आप जो चाहते हैं वही आपकी जिन्दगी है
इस जन रुचि को स्वच्छ एवं स्वस्थ दिशा ज्ञान देना ही आज अपेक्षित है। आवाज देने
यह काम नहीं होने का। ज्ञानानुशीलन से ही शक्ति संभव है। ज्ञान ही सब समस्याओं
का निदान है। सब प्रकार की विजय का रहस्य है। ज्ञान-यज्ञ से बढ़कर राष्ट्र सेवा
क्या? आवाज देना ज्ञान यज्ञ नहीं है। आवाज देने वाले सदा गिरे हैं। भारतवर्ष
लोग इन दिनों आवाज देने में ही बहादुर रह गये हैं। कांग्रेसी आवाज से डर कर अंग्रे
भाग गये! सोशलिस्टी आवाज से डर कर कांग्रेसी हिम्मत पस्त है! जनसंघी आवा
े कम्यूनिस्ट शिथिल पड़ गये और कम्यूनिस्टी आवाज से जनसंघी परेशान! इन दोनों
को आवाज से स्वतंत्री फिक्रमन्द! समाज में भी ब्राह्मणी आवाज से हरिजन नाउम्मी
और हरिजनों की आवाज बुलन्द होते देख ब्राह्मण भयाक्रान्त! भूमिहारी आवाज
राजपूत झुँझलाते और राजपूती आवाज से भूमिहार चिढ़ते! पूरे राष्ट्र के पैमाने पर देखें
ो विहारी आवाज से बंगाली बिगड़ते और महाराष्ट्री आवाज से गुजराती। प्रत्येक
ारी एक दूसरे की आवाज से चिन्तित है! अन्तराष्ट्रीय जगत् में आज चीनी आवाज
सबसे अधिक बुलन्द है। संपूर्ण संसार आज इस आवाज की भयंकरता से त्रस्त है! सम
समय पर विश्व के रंगमंच पर इस तरह की किसम किसम की आवाजें जोर पकड़ा करती
हैं। थोड़े अरसे पहले जरमनी आवाज का जोर था। बाद अल्पकाल तक ही सही, जापानी
आवाज ऊपर रही। यह भी एक प्रकार का तिकड़म ही है। आवाज देने से क्या नहीं
संभव है? वैकुण्ठ लोक तक हिल जाता है। हिन्दुओं के हरिनाम संकीर्तन वाले भक्त
वृन्द यह रहस्य जानते हैं। वैकुण्ठ को हिलाने और विष्णु को जीतकर उसे पकड़ कर पृथ्वी
में ले आने के लिये ये बहादुर कीर्तनिये लोग कभी कभी लाउडस्पीकर लगा कर भी
काम करने लगते हैं। यह है आवाज की राजनीति! आपको भी पाठक महोदय, किसी विप-
रीत शक्ति या व्यक्ति को जीतना है तो आवाज दिया करो एकदम जोरदार, बुलन्द
कि उसके कर्णरन्ध्र ही फटजाय! देखियेगा, साले चौबीस घन्टे के भीतर आपके चरणों

देखने न लगे तो कहना। संपूर्ण भारतीय राजनीति का भी भीतरी रहस्यभरा गति-आज यही है। इस सत्य को भीतर सजीव रखते हुए आप अपने प्रातः स्मरणीय लोक-राष्ट्र कर्णधारों और उनके गुरु संचालकों के विश्वविजयीनी करामात को समझने चेष्टा कीजिये। लाभ होगा। खूब मेहनत से चेष्टा हो। क्योंकि विषय यह इतना कि जल्दी स्थिति सामने स्पष्ट नहीं होगी।

प्राचीन विद्वानों ने हमें समझाने की चेष्टा की है— ज्ञान आने पर मनुष्य मौन हो है। शक्ति आने पर मनुष्य क्षमाशील हो जाते हैं। यह हल्ला भीतरी खोखलेपन परिचय देना है या नहीं? मेल का भी रहस्य अति गूढ़। बड़े शान की यह बात! समझने और बरतने के लिये ज्ञानानुशीलन जरूरी। तीन ही प्रकार के व्यक्तियों में देखा गया है—मूर्ख, चोर, और ज्ञानी। मूर्ख समाज को कभी कभी संयोग से या भाग्य न जाने किन कार्य-कारण, बन्ध के दबाव-प्रभाव से ज्ञानियों का नेतृत्व प्राप्त हो है। और तब तब उसने अद्भुत अद्भुत पराक्रम दर्शाये हैं, अतुलनीय बहुमुखी कार्यें भी प्राप्त की हैं। संसार के अबतक के धार्मिक और राजनीतिक इतिहास में इस के लिये पर्याप्त मात्रा में पुष्ट प्रमाण बिखरे पड़े हैं। मूर्ख चूंकि मूर्ख है ज्ञानियों को समझने में और ज्ञान के रसास्वादन करने में असमर्थ हैं इस लिये कभी कभी धूर्तों के में भी फँस जाते हैं। ऐसे काल में समाज और राष्ट्र पर धूर्त शासन और धूर्त नीति जम जाती है। यह सर्वनाश का अग्रगामी बन कर आता है। इतिहास में इस के इतिवृत्त भी अनगिनत हैं। इस लिये यह स्पष्ट है कि मूर्ख रह जाना ही सब के अकल्याणों को आमंत्रण देना है।

ज्ञानानुशीलन का परिचायक विभूति-महानता है। ज्ञान से यहां तात्पर्य सब के ज्ञान से है—सिर्फ आध्यात्मिक ज्ञान नहीं। वस्तुतः ज्ञान चाहे वह किसी भी -वस्तु की हो आध्यात्मिक ही है। ज्ञानी ही प्रेम भी कर सकता है और उसे निबाह भी सकता है जैसे उपगुप्त ने वासवदत्ता के साथ निबाहा। ज्ञान पर आधारित महानता और प्रेम ही कल्याण राज्य की स्थापना कर सकता है। काश, कल्याण राज्य स्थापित करने वाले यह भी जरा समझ पाते। ज्ञान और प्रेम से रहित राष्ट्रीय भावना एक प्रकार का सन्निपात ज्वर है, एक प्रकार का पागलपन का दौरा है। गत विश्व युद्ध में इस महा व्याधि से आक्रान्त देश जर्मनी इटली और जापान रहे हैं। तीनों की ही हड्डी आज पड़ी है। पागल को भी आप क्या समझते हैं? वह भी एक विकराल समस्या। घर में कोई पागल हो जाय तो मुसीबत पर मुसीबत है। जान आजिज कर मारेगा। उसकी और अध्ययनात्मक दृष्टि से आप जरा देखिये। वह सदा[illegible] में अद्भुत करता है। पागल-परिश्रम कहावत बन गया है। किसी चीज के पीछे पड़ा तो भूत जैसे पड़ा रहता है। वर्तमान युग में इस विभीषिका से बुरी तरह ग्रस्त देश चीन है

गलों को धर्माधर्म का बोध नहीं रहता, नैतिकता का भी विचार नहीं रहता। उनसे
व्यवहार की उमीद रखना ही अपनी अज्ञना और मूर्खता का परिचय दर्शाना है।
गलों का इलाज ही अपेक्षित है। वह असाध्य स्थिति पर नहीं पहुँचा है तो
चाया जा सकेगा, अन्यथा मरेगा। इलाज कैसे किया जाता है सभी जानते हैं। और
ी आज हमें चीनियों के साथ करना हैं। यह कार्य हमें प्रेम ही के साथ करना
दुश्मनी से नहीं। किस बात की दुश्मनी इस जन्म जन्मान्तर के धर्म-भ्राता से?
र इलाज वही कर सकता हैं जिसमें ज्ञान से और महानता से प्राप्त स्व
क्ति का गरिमा बोध हो।

राक्षस संहार के लिये उद्यत होने के पहले राम ने शक्ति पूजा की थी। यहां पूजा
तात्पर्य पूज्य की विभूतियां स्वयं अपने में ही समाहित करने की साधना और सफलता
हते हैं। परमेश्वर की पूजा परमेश्वर जैसे बनने की भीतरी और बाहरी अनुष्ठान
हते। भीख मांगना और रोना कलपना पूजा नहीं। भाव साधना विचार साक्षात्कार
लिये उपक्रम प्रस्तुत नहीं करती तो वह बेकार है। स्थिति आज यह उपस्थित है कि
न प्रत्येक को यह अनुभव करने का जरूरत है कि हम ही भारतवर्ष हैं और हमारे ही
पर खतरा है और उसे हम हो को निराकरण करना भी है। तभी देश की प्रतिष्ठा और
खण्डता को बचाये रखने की जिम्मेदारी हम में से प्रत्येक अनुभव कर सकेगा राक्षस-चिन्त
ति हो तो पागलपन का परिचायक है। जबतक प्रत्येक भारतीय यह अनुभव न करेगा
क वह राम शक्ति से परिपूर्ण है, राम कार्य करने के लिये हा आया हैं, तबतक उसमें दै
हार के लिये पर्याप्त साहस और हिम्मत आ नहीं सकता। जैसे डैनामो से विद्युत प्रवा
रों में आने लगता है और उसके जरिये इंजन घूमने लगता और अभिवांछित का
म्पादित होने लगता है वैसे ही मानव के भीतरी आत्मतत्व से अखण्ड ज्योति
सको धमनियों में प्रवाहित किये रखने का जरूरत है। इसे प्रवाहित किये रखने का भीतरी
नुष्ठान को ही अध्यात्म साधना कहते हैं यह पूर्णतया शक्ति संचय करना है उसका
रिचय देना है। इस प्रकार की शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में लाये बगैर राष्ट्र खड़ा न हो
केगा, किसी भी दिशा में पराक्रम दर्शा न सकेगा। मूल अनुष्ठान यही है। और इसी मूल
नुष्ठान को सुचारु रूप से व्यापक मात्रा में चालू रखने के लिये ही तो सारे मानवीय क
त्र और शासकीय यंत्र भी सक्रिय रहना चाहिये। इस प्रकार के अनुष्ठानों का पौरोहित्य
ड़े बड़े ज्ञानी ही निबाह सकते हैं। पौरोहित्य क्या है? हे भगवान, यह आज कौन समझ
ा है। पाषाण प्रतिमा में दैवी तत्व को प्रतिष्ठान करके उसे सजीव दर्शा देना और उसके
ारा सम कल्याण मार्ग का उपक्रम प्रस्तुत करना ही पौरोहित्य है। पौरोहित्य पर
ी तो संसार टिका है। पूरी मानवता का भविष्य पुरोहित पर निर्भर रहता है। भारत
ाता मन्दिर के आज के समर्थ पुरोहित नेहरू जी की भव-साधना और विचार साक्षात्

की गरिमा पर आज बयालीस करोड़ का भविष्य टिका है। पौरोहित्य अनेकों क्षेत्र से
की जरूरत है। उन क्षेत्रों में प्रमुख हैं साहित्य, राजनीति, शिक्षा इत्यादि।
देखना यह है कि देश के भीतर यह यज्ञ कार्य हो रहा है या नहीं?
भारत-चीनी संघर्ष का फैसला हमें अपने ही घर में करना करना है, अपने ही दिल-
के भीतर करना है। गृह नीति जब तक दुरुस्त नहीं तबतक वैदेशिक नीति प्रति-
नहीं कहलायगी। यहां घर ही छिन्न भिन्न है। तभी तो चीन अपने पीले दांत और
आंख दिखाने की हिम्मत कर रहे हैं। आवाज देने से परिहास ही अर्जित होगा।
हवाई जहाज से या खरादे गये बम से शत्रु संहार संभव नहीं। आधुनिक युद्धों
हथियार या फौज नहीं करते। वह तो मात्र एक दिखावा है! नानामुखी ज्ञान
के क्षेत्र में भारत सर्वश्रेष्ठ बन जाय, संसार के चरमोत्कृष्ट सिंहासन पर आरूढ़
मेरु शिखर पर ही चढ़ जाय कि दुश्मन दांतों तले उँगुलियां दाबते हुए ताकने
गिड़गिड़ाने भी लग जाये। जो इन क्षेत्रों में आज स्वामित्व सम्पन्न हैं
संसार पर आज प्रभुत्व व्याप्त है। ज्ञान विज्ञान का ही शासन जमता है न कि
। फौजी युग बीत गया। यह पाकिस्तान आज बात बात पर हमारी इतनी
क्यों कर रहा है? यह तो गोतियारी डाह है। हमारे भीतर की क्षीणतायें
इस नापाक कार्य के लिये प्रेरणा देती है। मानसिक और चारित्रिक मामलों
ही हम उनसे बेहतर होने लगेंगे उनका रुख बदलने लगेगा। सभी ब्रह्ममय, सब
परमेश्वर कर देगा—कह कर बैठे रहने से स्थिति सुधरेगी नहीं। देश और समाज की
स्थिति देख प्रत्येक भारतीय के हृदय में जबतक बेचैनी न उपजे हाहाकार
जाय, घाव न लगे तबतक उनमें कर्मशक्ति नहीं आयगी। सितार के तार पर जबतक
जाफ से चोट नहीं पहुँचाते तबतक वह बजता नहीं। संसार के बड़े बड़े कवि औ
भीतर किसी कारण से बड़ी गहरी चोट लगने के बाद ही लिखने लगे। तुलसी
अपनी पत्नी के पास ही पड़े रहते तो कभी रामचरित मानस नहीं लिख पाते
हीनावस्था से उत्पन्न मानसिक उद्विग्नता और वेदना ही मानव में कर्म शक्ति
। 'चोट लगने के बाद ही सिंह हमला करता। अगर सिंह है तो उसकी यह आदत है
न छेड़े तो वह भी कुछ नहीं करेगा। यदि हम सभी बकरे हैं तो चीन की ए
नाज काफी है हम घर घुस जायेंगे। मानव के अखण्ड शक्ति संपन्न इस भीतरी आत्म
का भी यही स्वभाव-गति है। जबतक सिंह जग नहीं जाता तबतक उसे चोट का बो
नहीं होना: जागने का ही उपक्रम अध्ययन मनन चिंतन आदि है। आवाज देना इसक
का नहीं है। आवाज देना मदिरा पान कराना है। थोड़ी देर के लिये नशा भले ही च
और उस समय जो भी इनसे करा लो, मगर ज्यों ही नशा उतर जाता, थका बू
कर गिर जाता है। भारत के आत्म तत्व को जगाने और जगाये रखने का उप

ढो। यही सबसे प्राथमिक आवश्यकता है। जयप्रकाश नारायण कांग्रेस नहीं छोड़ते तो
राज संजीवैया को यह प्रभुत्व नहीं मिलता। लोहिया कांग्रेस में रहते तो एक दूसरे
सरदार पटेल के रूप में आज विश्व विख्यात हुए रहते। अपना स्थान और पथ छो
ने का दुष्परिणाम बड़ा भयंकर हुआ करता है। घर हो या संस्था, काम के बोझ से या
समस्याओं की विषमता से ऊब कर परेशान होकर पद छोड़ देने से वहां अनधिकारी और
अनैतिक व्यक्ति पहुँच जाते हैं इस से समूह पर अकल्याण आता है अपने अपने जीवन में
ही बात है। आत्मतत्व के सुषुप्त रहने के कारण ही विपरीत और अशांकनीय शक्ति
स कर जोर करती है। जनमानस का संचालन स्वस्थ दिशा को ओर नहीं है
इंतजाम ही कहां? व्यवस्थापक ही कौन? मार्ग दर्शक ही किधर? ज़रा शहर बाजार
घाट घूम कर देखा सुना जाय। अभिमान से माथा ऊँचा करने की एक भी बात न दिखे
सुनी जायगी बल्कि लज्जा से सिर झुकाने को और दुख से आंखें भराने वाली पर्याप्त
सामग्रियां मिलेंगी। अपने ही कुछ अनुभव सुनाता हूँ। इधर हाल में मैं उत्तर गुजरात
एक छोटे से शहर के एक मकान पर ठहरा हुआ था। शहर का नाम था पाटण जिसकी
प्रभुता के सम्बन्ध में उस अद्भुत प्रतिभा सम्पन्न पुरुष कन्हैयालाल मुन्शी ने लि
है। 'आकाश में जितने तारे थे, उतने यहां कबूतर पाये गये। मुझे लगा सब बिहार से भा
कर आये शरणार्थी लोग है। बिहार के हिन्दुओं का नव जागरण बेचारे कबूतरों
अपना आहार बना कर आरंभ हुआ था। तोनों का पाटण मानो राजधानी हो। चू
का स्वच्छन्द राज है। क्योंकि यह प्रमुखत: जैन नगरी है। कोई जैन घर में उपद्रव क
र चूहे को अगर पकड़ भी ले तो उसे इज्जत के साथ सड़क में लाकर छोड़ देते हैं
एक जैन मित्र ने मुझे अपना पैर दिखाया – चूहे का जूठा था! जिस कमरे में मैं रहता
उसमें पचासों गिलहरी आकर तंग करने लगी तो मैंने कहा – भाई, मैं जैन नहीं
मुझे तंग करोगी तो मैं भगा दूँगा और मैंने उन्हें भगा दिया तो मेरे उस तीन मंजिले म
के ऊपर के कमरे से सब नीचे सड़क की ओर कूद गयी शायद यह कहते हुए कि यह
शायद बिहारी है। कौआ मानो यहां नाम मात्र के लिये ही हैं। यहां एक सौ पचा
जैन मन्दिर, पैंसठ हिन्दू मन्दिर और चालीस मस्जिद है। करीब एक सौ बारह और
जैन साधु और पचोस जैन पुरुष साधु को देखा – इस स्थान की कई दिलचस्प बा
कहनी थी। पर क्या करूँ प्रसंग यहां यह नहीं है। फिर भी एक तो कहूँगा। बिहारियों
गुजरात के शहर और गांव अवश्य देखना चाहिये खासकर बड़ोदा, अहमदाबाद, भाव न
राजकोट! बड़ोदा मानो शिक्षा नगरी हो, मानो स्त्री नगरी हो। जितनी साइकिलें
बड़ोदा में देखीं उतनी भारत में कहीं नहीं देखी। इन साइकिल-चालकों में एक तिहा
त्रयां हैं। 'किसी भी पुरुष को भी नेत्र सुख लूटना नहीं। मुझे बिहारी विद्यार्थियों पर तरस आ
हाय रे अभागे तुम्हारे नेत्र कब से भूखे हैं! चलो बरोदा तुम तो बेचारी संथाल लड़कियों

वैदिकवाद का सिंहावलोकन

श्री अरविन्द

एक ऐसे युग की रचना है जो बौद्धिक दर्शनों से प्राचीन था। उस युग में विचार हमारे तर्कशास्त्र की ...ी की अपेक्षा भिन्न प्रणालियों ... होता था और भाषा की अभिव्यक्ति ऐसे होते थे जो हमारी वर्तमान ...े बिल्कुल अनुपादेय ठहरते। उस ...ुद्धिमान से बुद्धिमान मनुष्य अपने व्यावहारिक बोधों तथा दैनिक ...पों से परे के बाकी सब ज्ञान के आभ्यन्तर अनुभूति पर और अन्तर्ज्ञा-...न को सूझों पर निर्भर करता था। ...य था ज्ञानालोक, न कि तर्कसम्मत ... उनका आदर्श था अन्तःप्रेरित द्रष्टा, ...र्थ तार्किक। भारतीय परम्परा ने ... उद्भव के इस तत्त्व को बड़ी सच्चाई ...माल कर रखा है। ऋषि सूक्त का ...रूप से स्वयं निर्माता नहीं था, वह ...था एक सनातन सत्य का और एक ...य ज्ञान का। वेद की भाषा स्वयं ... है, एक छन्द है जिसका बुद्धि द्वारा ... नहीं हुआ बल्कि जो श्रुतिगोचर हुआ, दिव्य वाणी है जो कंपन करती हुई ... में से निकल कर उस मनुष्य के अन्तः ... में पहुँची जिसने पहिले से ही अपने ...को अपौरुषेय ज्ञान का पात्र बना रखा ... 'दृष्टि' और 'श्रुति', दर्शन और श्रवण, ये शब्द स्वयं वैदिक मुहावरे हैं, ये और इसके सजातीय शब्द, मंत्रों के गूढ़ परिभाषाशास्त्र के अनुसार, स्वतः प्रकाश ज्ञान को और दिव्य अन्तःश्रवण के विषयों को बताते हैं।

स्वतः प्रकाश ज्ञान (इलहाम या ईश्वरीय ज्ञान) की वैदिक कल्पना में किसी चमत्कार या अलौकिकता का निर्देश नहीं मिलता। जिस ऋषि ने इन शक्तियों का उपयोग किया, उसने एक उत्तरोत्तर वृद्धिशील आत्मसाधना के द्वारा इन्हें पाया था। ज्ञान स्वयं एक यात्रा और लक्ष्यप्राप्ति थी, एक अन्वेषण और एक विजय थी; स्वतः प्रकाश की अवस्था केवल अन्त में आयी, यह प्रकाश एक अन्तिम विजय का पुरस्कार था। वेद में यात्रा का यह अलंकार, सत्य के पथ पर आत्मा का प्रयाण, सतत रूप से मिलता है। उस पथ पर जैसे यह अग्रसर होता है, वैसे ही आरो-हण भी करता है; शक्ति और प्रकाश के नवीन क्षेत्र इसकी अभीप्साओं के लिये खुल जाते हैं; यह एक वीरतामय प्रयत्न के द्वारा अपने विस्तृत आध्यात्मिक ऐश्वर्यों को जीत लेता है।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से ऋग्वेद के बारे में यह समझा जा सकता है कि यह उस महान् उत्कर्ष का लेखा है जिसे मानवीयता ने अपनी सामूहिक प्रगति के किसी एक काल में विशेष उपायों के द्वारा प्राप्त किया था।

गूढ़ अर्थ में भी, जैसे कि अपने साधारण में, यह कर्मों की पुस्तक है; आभ्यन्तर बाह्य यज्ञ की पुस्तक है; यह है आत्मा संग्राम और विजय की सूचित जबकि वह र और अनुभूति के उन स्तरों को खोज पा लेना है और उनमें आरोहण करता है कि भौतिक अथवा पाशविक मनुष्य के दुष्प्राप्य हैं; यह है मनुष्य की तरफ न दिव्य ज्योति, दिव्य शक्ति और कृपाओं की स्तुति जो मर्त्य में कार्य ी हैं। इसलिये इस बात से यह बहुत है कि यह कोई ऐसा प्रयास हो जिसमें द्धक या कल्पनात्मक विचारों के परि- प्रतिपादित किये गये हों; नाहीं यह ो आदिम धर्म के विधि-नियमों को बन वाली पुस्तक है। केवल अनुभव की रूपता में से, प्राप्त हुए ज्ञान की नैर्य- कता में से विचारों का एक नियत समु- निरन्तर दोहराया जाना हुआ उद्गम । है और एक नियत प्रतीकमय भाषा प्त होती है, जो संभवतः उस आदिम वीय बोली में इन विचारों का अनि- रूप थी। क्योंकि यही सिर्फ अपनी रूपता के और अपनी रहस्यमय संकेत की न के —इन दोनों के—एकत्रित होने के इस योग्य थी कि उस चीज को अभि- त कर सके, जिसका व्यक्त करना जाति साधारण मन के लिये अशक्य था। हम ही विचारों को सूक्त-सूक्त में दुहराया पाते हैं, एक ही नियत परिभाषाओं अलंकारों के साथ और बहुधा एक से वाक्यांशों में और किसी कवितात्मक मौलिकता की खोज के प्रति या विचारों की अपूर्वता और भाषा की नवीनता की मांग के प्रति बिल्कुल उदासीनता के साथ। सौंदर्यमय सौष्ठव, आडम्बर या लालित्य का किसी प्रकार का भी अनुसरण इन रहस्यवादी कवियों को इसके लिये नहीं उकसाता कि वे उन पवित्र प्रतिष्ठापित रूपों को बदल दें जो उनके लिये, ज्ञान के सनातन सूत्रों को दीक्षितों की सतत परम्परा में पहुँचाते जाने वाले, एक प्रकार के दिव्य बीजगणित से बन गये थे।

वैदिक मंत्र वस्तुतः ही एक पूर्ण छन्दोबद्ध रूप रखते हैं, उनकी पद्धति में एक सतत सूक्ष्मता और चातुर्य है, उनमें शैली की तथा काव्यमय व्यक्तित्व की महान विविधताएँ हैं, वे असभ्य, जंगली और आदिम कारीगरों की कृति नहीं हैं बल्कि वे एक परम कला और सचेतन कला के सजीव निःश्वास हैं, जो कला अपनी रचनाओं को एक आत्मदर्शिका अन्तःप्रेरणा की सबल किंतु सुनियंत्रित गति में उत्पन्न करती है। फिर भी ये सब उच्च उपहार जान बूझ कर एक ही अपरिवर्तनीय ढांचे के बीच में और सर्वदा एक ही प्रकार की सामग्री से रचे गये हैं। क्योंकि व्यक्त करने की कला ऋषियों के लिये केवल एक साधनमात्र थी न कि लक्ष्यभूत; उनका मुख्य प्रयोजन अविरत रूप से व्यावहारिक था, बल्कि उपयोगिता के उच्चतम अर्थ में लगभग उपयोगितावादी था।

वैदिक मंत्र उस ऋषि के लिये जिसने उसकी रचना की थी, स्वयं अपने लिये तथा दूसरों के लिये आध्यात्मिक प्रगति का साधन

यह उसकी आत्मा में से उठा था, यह
की एक शक्ति बन गया था, यह
जीवन के आंतरिक इतिहास में कुछ
क्षणों में अथवा संकट तक के क्षण
आत्माभिव्यक्ति का माध्यम था।
अपने अन्दर देव को अभिव्यक्त
भक्त को, पाप के अभिव्यंजक को
ने में सहायक था, पूर्णता की प्राप्ति
संघर्ष करने वाले आर्य के हाथ में
अस्त्र का काम देना था, इन्द्र के
मान 'यह आध्यात्मिक मार्ग में आने
भूमि के आच्छादक पर, रास्ते के
र, नदी-किनारे के लुटेरों पर चम-

विचार की अपरिवर्तनीय नियमि-
जब हम इसकी गंभीरता, समृद्धता
ता के साथ लेते हैं तो इससे कुछ
विचार निकलते हैं। क्योंकि हम
रूप से यह तर्क कर सकते हैं कि
में जो विचार तथा आध्यात्मिक
का आदि काल था, अथवा उस
मो जब उनका प्रारम्भिक उत्कर्ष और
हो रहा था, एक ऐसा नियत रूप और
काल में आसानी से संभव नहीं
था। इसलिये हम यह अनुमान
हैं कि हमारी वास्तविक संहिता
की समाप्ति को सूचित करती है.
इसके प्रारम्भ को और न ही इसकी
अवस्थाओं में के किसी काल को।

यह भी संभव है कि इसके प्राचीनतम सूक्त को उनसे भी अधिक प्राचीन* गीतिमय छंदों के अपेक्षाकृत नवीन विकसित रूप हों अथवा पाठान्तर हों जो और भी पहले की मानवीय भाषा के अधिक स्वच्छन्द तथा सुखनम्य रूपों में ग्रथित थे। अथवा यह भी हो सकता है कि इसकी प्रार्थनाओं का संपूर्ण विशाल समुदाय आर्यों के अधिक विविधतया समृद्ध भूतकालीन वाङ्मय में से देवव्यास के द्वारा किया गया केवल एक संग्रह हो। प्रचलित विश्वास के अनुसार जो द्वैपायन कृष्ण है, उस महान् परम्परागत मुनि, महान् संग्रहीता (व्यास) के द्वारा आ-यसयुग के आरम्भ की ओर, बढ़ती हुई संध्या की तथा उत्तरवर्ती अन्धकार की शताब्दियों की ओर, मुँह मोड़ कर बनाया हुआ यह संग्रह शायद दिव्य अन्तर्ज्ञान के युग की, पूर्वजों की ज्योतिर्मयी उषाओं की केवल अन्तिम वसीयत है जो अपने वंशजों को दी गयी है, उस मानव-जाति को दी गयी है जो पहले से ही आत्मा में निम्नतर स्तरों की ओर तथा भौतिक जीवन की, बुद्धि और तर्कशास्त्र की युक्तियों की अधिक सुगम और सुरक्षित प्राप्तिओं—सुरक्षित शायद केवल प्रतीति में ही—की ओर मुख मोड़ रही थी।

परन्तु ये केवल कल्पनाएँ और अनुमान ही हैं। निश्चित तो इतना ही है कि मानव-चक्र के नियम के अनुसार जो यह माना

* वेद में स्वयं सतत रूप से "प्राचीन" और "नवीन" ऋषियों (पूर्व — नूतन) का आया है, इनमें से प्राचीन इतने अधिक पर्याप्त दूर हैं कि उन्हें एक प्रकार के अर्ध ज्ञान के प्रथम संस्थापक समझना चाहिये।

ा है कि वेद उत्तरोत्तर अन्धकार में आते और इनका विलोप होता गया, यह घटनाओं से पूरी तौर पर प्रमाणित होती वेदों का अन्धकार में आना पहले से आरम्भ हो चुका था, उससे बहुत पहले कि भारतीय आध्यात्मिकता का अगला न युग, वेदांतिक युग, आरम्भ हुआ, ने कि इस पुरातन ज्ञान को सुरक्षित या उज्जीवित करने के लिये, जितना वह उस कर सकता था उतना संघर्ष किया। तब कुछ और हो सकना प्रायः असम्भव ा। क्योंकि वैदिक रहस्यवादियों का न्त अनुभूतियों पर आश्रित था, जो भूतियां साधारण मनुष्य के लिये बड़ी न होती हैं और वे उन्हें उन शक्तियों सहायता से प्राप्त होती थीं, जो हममें हुतों के अन्दर केवल प्रारम्भिक अवस्था होती हैं और अभी अधूरी विकसित हैं ये शक्तियां यदि कभी हमारे अन्दर क्य होती भी हैं तो मिले जुले रूप में अतएव ये अपने व्यापार में अनियमित ी हैं। एवं एक बार जब सत्य के अन्वे-को प्रथम तीव्रता समाप्त हो चुकी, तो के बाद थकावट और शिथिलता का काल ा में आना अनिवार्य था, जिस काल पुरातन सत्य आंशिक रूप में लुप्त हो जाने ही थे। एक बार लुप्त हो जाने पर फिर वे ीन सूक्तों के आशय की छानबीन करके ासानी से पुनरुज्जीवित नहीं किये जा सकते क्योंकि वे सूक्त ऐसी भाषा में ग्रथित थे जान-बूझ कर संदिग्धार्थक रखी गयी थी। एक भाषा जो हमारी समझ के बाहर

है, वह भी ठीक-ठीक समझ में आ सकती है यदि एक बार उसका मूलसूत्र पता लग जाय, पर एक भाषा जो जान बूझ कर संदिग्धार्थक रखी गयी है, अपने रहस्य को अपेक्षाकृत अधिक दृढ़ता और सफलता के साथ छिपाये रख सकती है, क्योंकि यह उन प्रलोभनों और निर्देशों से भरी रहती है जो भटका देते हैं। इसलिये जब भारतीय मन फिर से वेद के आशय के अनुसन्धान की ओर मुड़ा तो यह कार्य दुस्तर था और इसमें जो कुछ सफलता मिली वह केवल आंशिक थी। प्रकाश का एक स्रोत अब भी विद्यमान था, वह परम्परागत ज्ञान जो उनके हाथ में था जिन्होंने मूल वेद को कण्ठस्थ किया था और उसकी व्याख्या करते थे, अथवा जिनके जिम्मे वैदिक कर्मकाण्ड था — ये दोनों कार्य प्रारम्भ में एक ही थे, क्योंकि पुराने जमाने में जो पुरोहित होता था वही शिक्षक और द्रष्टा भी होता था। परन्तु इस प्रकार की स्पष्टता पहले से ही धुँधली हो चुकी थी। बड़ी ख्याति पाये हुए पुरोहित भी जिन शब्दों का वे बार-बार पाठ करते थे, उन पवित्र शब्दों की शक्ति और उनके अर्थ का बहुत ही अधूरा ज्ञान रखते हुए याज्ञिक क्रियाएँ करते थे। क्योंकि वैदिक पूजा के भौतिक रूप बढ़ कर आंतरिक ज्ञान के ऊपर एक मोटी तह के रूप में चढ़ गये थे और वे उसी का गला घोंट रहे थे जिसकी किसी समय वे रक्षा करने का काम करते थे। वेद पहले ही गाथाओं और यज्ञविधियों का एक समुदाय बन चुका था। इसकी शक्ति प्रतीकात्मक विधियों के पीछे से ओझल होते

गयी थी; रहस्यमय अलंकारों में जो था वह उनसे पृथक् हो चुका था और एक प्रत्यक्ष असंबद्धता और कलारहित ता का ऊपरी स्तर ही अवशिष्ट रह गया ।

ब्राह्मणग्रन्थ और उपनिषदें लेखचिन्ह एक जबरदस्त पुनरुज्जीवन के जो तथा कर्मकाण्ड को आधार रख कर हुआ और जो आध्यात्मिक आधार अनुभव को एक नवीन रूप में लेखबद्ध के लिये था। इस पुनरुज्जीवन के ये पूरक रूप थे, एक था कर्मकाण्ड विधियों की रक्षा और दूसरा वेद आत्मा का पुनः प्रकाश -- पहले के द्योतक ब्राह्मणग्रन्थ * दूसरे की, उपनिषदें।

ब्राह्मणग्रन्थ प्रयत्न करते हैं वैदिक कर्म- की सूक्ष्म विधियों को, उनकी मौतिक आवश्यकता की शर्तों को, उनके विविध क्रियाओं व उपकरणों के प्रतीकात्मक और प्रयोजन को, यज्ञ के लिये जो मह- मूल मंत्र हैं उनके तात्पर्य को, धुँधले के आशय को तथा पुरातन गाथाओं परिपाटियों की स्मृति को नियत करने सुरक्षित करने का। उसमें आने वाले में से बहुत से तो स्पष्ट ही मंत्रों अपेक्षा उत्तर काल के हैं, जिनका आ- उन संदर्भों का स्पष्टीकरण करने के किया गया है जो अब समझ में नहीं आते थे, दूसरे कथानक संभवत मूलगाथा और अलंकार की उस सामग्री के अंग हैं जो प्राचीन प्रतीकवादियों के द्वारा प्रयुक्त की गयी थी, अथवा उन वास्तविक ऐतिहासिक परिस्थितियों की स्मृतियां हैं जिनके बीच में सूक्तों का निर्माण हुआ था।

मौखिक रूप से चली आ रही परम्परा सदा एक ऐसा प्रकाश होता है जो वस्तु को धुँधला दिखाता है; जब एक नया प्रतीकवाद जो उस प्राचीन प्रतीकवाद पर कार्य करता है, जो कि आधा लुप्त हो चुका है, तो संभवत वह उसके ऊपर उग कर उसे अधिक अच्छादित ही कर देता है, अपेक्षा इसके कि वह उसे प्रकाश में लाये। इसलिये ब्राह्मण ग्रन्थ यद्यपि बहुत से मनोरंजक संकेतों भरे हुये हैं, फिर भी हमारे अनुसन्धान में वे हमें बहुत ही थोड़ी सहायता पहुँचाते हैं न ही वे पृथक् मूल-मंत्रों के अर्थ के लिए एक सुरक्षित पथ प्रदर्शक होते हैं जबकि मंत्रों की एक यथातथ्य और शाब्दिक व्याख्या करने का प्रयत्न करते हैं।

उपनिषदों के ऋषियों ने एक दूसरी प्रणाली का अनुसरण किया। उन्होंने लुप्त हुए या क्षीण होते हुए ज्ञान को ध्यान-समाधि तथा आध्यात्मिक अनुभूति के द्वारा पुनरुज्जीवित करने का यत्न किया और उन्होंने प्रचीन मंत्रों के मूलग्रन्थ (मूलवेद) को अपने निजी अन्तर्ज्ञान तथा अनुभवों

---

* निश्चय ही ये तथा इस अध्याय में किये गये दूसरे विवेचन कुछ मुख्य प्रवृत्तियों के सारभूत और संक्षिप्त आलोचन ही हैं। उदाहरणतः ब्राह्मणग्रन्थों में हम आध्यात्मिक संदर्भ भी पाते हैं।

लिये आधार या प्रमाणरूप में प्रयुक्त किया, अथवा यूँ कहें कि वेदवचन उनके विचार और दर्शन के लिये एक बीज था, जिससे कि उन्होंने पुरातन सत्यों को नवीन रूपों में पुनरुज्जीवित किया।

जो कुछ उन्होंने पाया, उसे उन्होंने ऐसी दूसरी भाषाओं में व्यक्त कर दिया जो उस युग के लिये जिसमें वे रहते थे अपेक्षाकृत अधिक समझ में आने योग्य थीं। एक अर्थ में उनका वेदमंत्रों को हाथ में लेना बिल्कुल निःस्वार्थ नहीं था, इसमें विद्वान ऋषि की वह सतर्क सूक्ष्मदर्शिनी इच्छा नियन्त्रण नहीं कर रही थी जिससे कि वे अवश्य शब्दों के यथार्थ भाव तक और अपने वास्तविक रूप में वाक्यों के ठीक-ठीक विचार तक पहुँचे। वे शाब्दिक सत्य की अपेक्षा एक उच्चतर सत्य के अन्वेषक थे और शब्दों का प्रयोग केवल उस प्रकाश के संकेतक रूप में करते थे जिसकी ओर वे जाने का प्रयत्न कर रहे थे। वे शब्दों के उनकी व्युत्पत्ति से बने अर्थों को या तो जानते ही नहीं थे या उसकी उपेक्षा कर देते थे और बहुधा वे शब्दों की घटक अक्षरध्वनियों को लेकर प्रतीकात्मक व्याख्या करने की सरणि का ही प्रयोग करते थे। जिसमें उन्हें समझना बड़ा कठिन पड़ जाता है।

इस कारण, उपनिषदें जहाँ अमूल्य वस्तु हैं, उस प्रकाश के लिये जो वे प्रधान विचारों पर तथा प्राचीन ऋषियों की आध्यात्मिक प्रकृति पर डालती हैं, वहां वे जिन वेदमन्त्रों को उद्धृत करती हैं उनके यथार्थ आशय का निश्चय करने में हमारे लिये उतनी ही कम सहायक हैं जितने कि ब्राह्मण-ग्रन्थ। उनका असली कार्य वेदान्त की स्थापना करना था, न कि वेद की व्याख्या करना।

इस महान् आन्दोलन का फल हुआ विचार और आध्यात्मिकता की एक नवीन तथा अपेक्षाकृत अधिक स्थिर शक्तिशाली स्थापना, वेद की वेदान्त में परिसमाप्ति, और इसके अन्दर दो ऐसी प्रबल प्रवृत्तियां विद्यमान थीं जिन्होंने पुरातन वैदिक विचार तथा संस्कृति की संहिता को भंग करने की दिशा में कार्य किया। प्रथम यह कि इसकी प्रवृत्ति बाह्यकर्मकाण्ड को अधिकाधिक गौण करने की, मंत्र और यज्ञ की भौतिक उपयोगिता को कम करके उसके स्थान पर अधिक विशुद्ध रूप से आध्यात्मिक लक्ष्य और अभिप्राय को देने की थी। प्राचीन रहस्यवादियों ने बाह्य और आभ्यन्तर, भौतिक और आत्मिक जीवन में जो सन्तुलन, जो समन्वय स्थापित कर रखा था, उसे स्थानच्युत और अस्त व्यस्त कर दिया गया। एक नवीन संतुलन, एक नवीन समन्वय स्थापित किया गया जो अन्ततोगत्वा सन्यास और त्याग की ओर झुक गया और उसने अपने आपको तब तक कायम रखा, जब तक कि यह समय आने पर बौद्धधर्म में आयी हुई इसकी अपनी ही प्रवृत्तियों की अति के द्वारा स्थानच्युत और अस्त-व्यस्त नहीं कर दिया गया।

यज्ञ, प्रतीकात्मक कर्मकाण्ड, अधिकाधिक निरर्थक सा अवशेष—यहाँ तक कि भारभूत हो गया तो भी, —जैसा कि प्रायः हुआ करता है, यन्त्रवत् और निष्फल हो जाने का ही परिणाम यह हुआ कि उसकी प्रतीक व रह

...बाह्य वस्तु की भी महत्ता को बढ़ा-चढ़ा कर देखा जाने लगा और उनकी सूक्ष्म विचारों को राष्ट्र-मन के उस भाग द्वारा जो अब तक उनसे चिपटा हुआ था, बिना युक्ति के बलपूर्वक थोपा जाने लगा। वेद और वेदान्त के बीच एक तीव्र व्यावहारिक भेद सामने में आया, जो क्रिया में था यद्यपि सिद्धान्त रूप से कभी भी स्वीकार नहीं किया गया, जिसे इस सूत्र में व्यक्त किया जा सकता है "वेद पुरोहितों के लिये, वेदान्त ज्ञानियों के लिये"।

सैद्धान्तिक हलचल की दूसरी प्रवृत्ति थी अपने आपको प्रतीकात्मक भाषा के भार से क्रमशः मुक्त करना, अपने ऊपर से उपमाओं, गाथाओं और कवितात्मक अलकारों के आवरण को हटाना, जिसमें कि रहस्यवादियों ने अपने विचार को छिपा रखा था और उसके स्थान पर एक अधिक स्पष्ट प्रतिपादन और अपेक्षया अधिक दार्शनिक भाषा को लाना। इस प्रवृत्ति के पूर्ण विकास ने न केवल वैदिक कर्मकाण्ड की, बल्कि मूल वेद की भी उपयोगिता को अप्रचलित कर दिया। उपनिषदें जिनकी भाषा बहुत ही स्पष्ट और प्रकाश देने वाली थी, सर्वोच्च भारती विचार का मुख्य स्रोत हो गयीं और उन्होंने वशिष्ठ और विश्वामित्र की अन्तः श्रुत ऋचाओं का स्थान ले लिया। *

वेदों को शिक्षा के अनिवार्य आधार के रूप में क्रमशः कम और कम बरते जाने के कारण अब वे वैसे उत्साह और बुद्धि-चातुर्य के साथ पढ़े जाने बंद हो गये थे; उनकी प्रतीकमय भाषा ने, प्रयोग में न आने से, नयी सन्तति के आगे अपने आन्तरिक आशय के अवशेष को भी खो दिया, जिस सन्तति की सारी ही विचारप्रणाली वैदिक पूर्वजों की प्रणाली से भिन्न थी। दिव्य अन्तर्ज्ञान के युग बीत रहे थे और उनके स्थान पर तर्क के युग की प्रथम उषा का आविर्भाव हो रहा था।

बौद्धधर्म ने इस क्रांति को पूर्ण किया और प्राचीन युग की बाह्य परिपाटियों में से केवल कुछ अत्यादृत आडम्बर और कुछ यन्त्रवत चलती हुई रूढ़ियां ही अवशिष्ट रह गईं। इसने वैदिक यज्ञ को लुप्त कर देना चाहा और साहित्यिक भाषा के स्थान पर प्रचलित लोक-भाषा को प्रयोग में लाने का यत्न किया। और यद्यपि इसने कार्य की पूर्णता, पौराणिक सम्प्रदायों में हिन्दूधर्म के पुनरुज्जीवन के कारण, कई शताब्दियों तक रुकी रही, तो भी वेद ने स्वयं इस अवकाश से न के बराबर ही लाभ उठाया। नये धर्म के प्रचार का विरोध करने के लिये यह आवश्यक था कि पूज्य किन्तु दुर्बोध मूल वेद के स्थान पर ऐसी धर्म-पुस्तकें सामने लायी

* यहां फिर इससे मुख्य प्रवृत्ति ही सूचित होती है और इसे कुछ शर्तों की अपेक्षा है। वेदों को प्रमाण रूप से भी उद्धृत किया गया है, पर सर्वांगरूप से कहें तो उपनिषदें ही हैं जो कि ज्ञान की पुस्तक होती हैं, वेद अपेक्षाकृत कर्मकाण्ड की पुस्तक है।

जावें जो अपेक्षाकृत अधिक अर्वाचीन संस्कृत में सरल रूप में लिखी गयी हों। इस प्रकार देश के सर्वसाधारण लोगों के लिये पुराणों ने वेदों को एक तरफ धकेल दिया और नवीन धार्मिक पूजा-पाठ के तरीकों ने पुरातन विधियों का स्थान ले लिया। जैसे वेद ऋषियों के हाथ से निकल कर पण्डितों के हाथ में जाना शुरू हो गया। और उस क्षण में इसने अपने अर्थों के अन्तिम अंगच्छेदन को और अपनी सच्ची शान और पवित्रता की अन्तिम हानि को सहा

यह बात नहीं कि वेदों का पण्डितों के हाथ में जाना और भारतीय पाण्डित्य का वेद-मन्त्रों के साथ व्यवहार, जो ईसा के पूर्व की शताब्दियों से प्रारम्भ हो गया था, सर्वथा एक घाटे का ही लेखा हो। इसकी अपेक्षा ठीक तो यह है कि पण्डितों के सतर्क अध्यवसाय तथा उनकी प्राचीनता को रक्षित रखने और नवीनता में अप्रीति की परि... के हम ऋणी हैं कि उन्होंने वेदों की सुर... की, बावजूद इसके कि इसका रहस्य लु... हो चुका था और वेदमन्त्र स्वयं क्रियात्म... रूप में एक सजीव धर्मशास्त्र समझे जा... बन्द हो गये थे। और साथ ही लुप्त र... के पुनरुज्जीवन के लिये भी पाण्डित्य... कट्टरता के ये दो सहस्र वर्ष हमारे लिये ... अमूल्य सहायताएँ छोड़ गये हैं अर्थात ... वेदों के संहिता आदि पाठ जिनके ठीक-ठी... स्वरचिन्ह बड़ी सतर्कता के साथ निश्... किये हुए हैं, यास्क का महत्वपूर्ण कोष ... सायण का वह विस्तृत भाष्य जो अनेक ... प्रायः चौंका देने वाली अपूर्णताओं के हो... हुए भी अन्वेषक विद्वान के लिये ... वैदिक शिक्षा के निर्माण की ओर एक अ... वार्य पहला कदम है।

सम्पादकी का बोझ

डा० शिवगोपाल मिश्र
२५, अशोक नगर, इलाहाबाद

...ले पहल जब साहित्य का चसका ...गो हिंदी में लेख लिखने की आन्तरिक ...जगी। फिर तो न जाने कौन कौन ... मस्तिष्क में घूम गए इनमें से ...लेखबद्ध हो पाये, कुछ ऐसे ही रह ...इनमें से अधिकांश लेखों की कई कई ... टाइप करवाई और फिर लगा भाग्य ... मैंने एक एक लेख को एक बारगी ...पत्र पत्रिकाओं में इसलिये प्रेषित ... मुझे यह ढाढ़स नहीं बँध पा रहा ...न विश्वास ही हो रहा था कि कोई ...पत्रिका उस लेख को छाप ही लेगी। ...अपने लेखों को भेजने के लिये मुझे ...की सबसे बड़ी लाइब्रेरी में जाकर ...ओं की सूची बनानी पड़ी। जब सूची ...का कार्य चल रहा था तो किसी ...ने मुझे टोकते हुये पूछा क्या आप ...साहित्य पर शोध कर रहे हैं? मैंने ...कर छुटकारा-प्राप्त किया था।

...तब आया जब मेरा एक लेख न ...साहित्यिक पत्रिका में प्रेषित हुआ वरन ...स्वास्थ्य पत्रिका' में भी जा पहुंचा। ...के सम्पादक ने यह लिखकर उस ...वापस कर दिया कि कृपया इसे ...छपवायें' आपका लेख तो 'आलोचना' ...है।

अस्तु! मेरे भरसक प्रयत्नों के बावजूद भी एकाधिक लेख न छप सके और मेरे 'स्वप्नों' के विपरीत पारिश्रमिक के बदले में मुझे 'प्रोत्साहन' मिला। मैंने ठान लिया कि यदि भविष्य में कभी 'सम्पादक' बन सका तो लेख लिखने वालों की करारी खबर लूंगा। इसके पहिले कि किन्हीं का लेख छपे, और पारिश्रमिक मिले उन्हें उनकी भाषा एवं व्याकरण सम्बन्धी अनेकानेक भूलों को बताकर अन्त में उनके लेखों को टाइप करा करके प्रस्तुत करने का आदेश दिया करूँगा।

बहुत दिनों बाद मेरे सपने साकार हुये। मैं 'सम्पादक' बना किंतु ऐसे पत्र का जिसका 'साहित्य' से कोई प्रयोजन न था। तब तो मुझे याद आया 'स्वास्थ्य पत्रिका' में भेजा गया अपना आलोचनापूर्ण लेख।

सम्पादकी का भार मिलने के ही दिन मैंने अपने नाम का 'पैड' बनवाया। पत्रिका का नाम सबसे ऊपर था और उसका 'सम्पादकाचार्य' था मैं। पत्रिका भरने के लिए लिफाफों पर भी सम्पादक का नाम छपवा दिया। जहां जहां पत्रिका जाय, वहां भीतर बाहर सभी जगह लोग 'सम्पादक' का नाम पढ़े—इससे बड़ा प्रचार मेरे मस्तिष्क में 'आत्म विज्ञापन' का दूसरा नहीं सूझा। वह इसलिये कि मुझे जो सम्पादकी मिली थी,

'अवैतनिक' थी। यदि ऐसी हालत में ...ना भी न किया जाता तो क्या लाभ होता ...?

पत्रिका का नाम नहीं लूंगा, जिसका मैं ...पादक बना। किसी प्रकार दो अंक निकाल ...या था कि समस्याओं के पहाड़ पग पग ... मिलने लगे। उन्हें कैसे लाघूँ, यही ...कट समस्या हो गई। कोई भी पत्रिका ...पती रहे, इसके लिये लेखकों का सहयोग ...पेक्षित है। सम्पादकी का कार्यभार संभालने ... ही दिन मैंने लेखकों की सूची बनाकर ...के पास सहयोग के हेतु पत्र टाइप कराकर ...ज दिये। एक सप्ताह के अनन्तर मैं इसी ...शा में था कि अब लेखों का तांता लग ...यगा, क्योंकि राष्ट्रभाषा के माध्यम से ...ानिक विचारों को प्रस्तुत करने वाले लेखों ... नितान्त आवश्यकता का मुझे पूर्ण बोध ... किंतु मेरी आशा दुराशा मात्र थी। उन ...कों को स्मरण दिलाने के लिए एक एक ... फिर लिखे। परन्तु कोई उत्तर नहीं— ... सन्नाटा तो फिर पत्रिका कैसे चले?

बहुत दिनों तक अपनी लेखनी से प्रसून ...चारों को विभिन्न शीर्षकों के रूप में ...भिन्न छद्मनामों से प्रकाशित करता रहा। ...न्त में देखा कि ग्राहक संख्या में काफी ...मी हो गई।

अब तो मैं चिन्तित हो उठा। अतः ...ने विभिन्न विषयों के अधिकारी-विद्वानों ... सम्पादकीय मण्डल में सम्मिलित करने ... दृढ़ संकल्प किया। राष्ट्रभाषा के नाम ... वे राजी हो गये और पत्रिका के मुख ... पर सम्पादक मण्डल के नामधारियों का विज्ञापन होने लगा। किंतु फिर भी लेख नहीं आये।

जिन लोगों ने मेरी साहित्य निष्ठा देखकर मुझे पत्रिका का सम्पादनकार्य सौंपा था, वे मुझसे असन्तुष्ट होने लगे। मैं रात दिन पत्रिका के उत्थान की बातें सोचता रहता, नई नई योजनायें बनाता और बिगाड़ता रहता।

एक दिन मुझे एक बात खटकी। मुझे स्मरण हो आया कि जब मैं लेख लिखता था तो छपने पर उसके बदले में अच्छा सा पारिश्रमिक चाहता था। बात जम गई। मैंने एक योजना बनाई कि अमुक अमुक कोटि के नामी लेखकों को दस-दस रुपये और नवीन लेखकों को प्रोत्साहन के हेतु पांच रुपये पारिश्रमिक दिया जाय। पत्रिका की व्यवस्थापिका समिति ने इसे स्वीकार कर लिया।

अब जब भी मैं लेख मांगने के लिये पत्र लिखता तो दो बातें लिखता—आवश्यक निबन्ध का विषय अथवा शीर्षक और उसके एवज में प्रदान होने वाला पारिश्रमिक। फिर तो ऐसे ऐसे लेख मेरे पास जुटने लगे कि समस्या उठ खड़ी हुई उनके छापने की। प्राचीन साहित्य में अणु, प्राचीन साहित्य में विमान, प्राचीन साहित्य में गणित—न जाने कितने लेख एकत्रित हो गये। पत्रिका के अंक एक के बाद एक छपने लगे। किंतु पाठकों के पत्र भी आने लगे—'सम्पादक जी, 'कभी वर्तमान और भविष्य के बारे में भी लेख छपेंगे या इसी प्रकार प्राचीन परम्पराओं में ही हमें भरमाते रहेंगे।'

सचमुच ही मुझे लज्जा होने लगी। ...ता की उपासना हास्यास्पद जान पड़ी ...: मैंने सभी लेखकों से वर्तमान खोजों ...रे वे लेख लिखने का आग्रह प्रारम्भ ... अब जो लेख आते वे चन्द्रलोक, ...शुक्र आदि ग्रहों की यात्राओं पर ...किंतु उनके लेखक होते ऐसे लोग जो ...े पढ़कर ही यह ज्ञान प्राप्त करते थे। ...ार एक लेखक ने चन्द्रलोक के सम्बन्ध ... आंकड़े प्रस्तुत किये जो विश्वकोषों ...न समस्त आंकड़ों से भी आगे की सूझ ...करते थे। बाद में लेखक की योग्यता ...होने पर मैं उस लेख को छापने का ...स नहीं कर सका।

...र राष्ट्रभाषा की सेवा के प्रति पत्रिका ...चित समझते हुये मैंने यह नीति निर्धा-...री कि स्वीकृत शब्दावली को ही लेखों ...पनना दी जाय। तब तो मेरी जान ...में आ गई। न जाने कहाँ से शब्दों ...न करके लेखक लेख लिखते। एक ...ख में इतनी माथापच्ची करनी पड़ती ...ो यह विचार होने लगा—'अच्छा ... कि समस्त लेख मैं ही लिख देता। इस कट्टम कुट्टम से क्या लाभ ? लेखकों को न स्वस्थ भाषा लिखने आती है और न मात्र ही व्यक्त करना जानते हैं। कोरा ज्ञान कहाँ तक पत्रिका की भाषा नीति का सहायक होगा ?'

एक रात्रि को मैंने स्वप्न देखा—पत्रिका कार्यालय में आग लग गई और सम्पूर्ण फाइलें राख हो गई हैं। मैं रोता हुआ राख में से अपने नाम के पैड की कुछेक पंक्तियाँ बीन सका हूँ, किंतु न तो लेखकों के नामों का और न उसके लेखों का ही कोई पता है। रात भर छट पटा कट पटा कर मैं रह गया।

सूर्योदय हुआ तो मन ग्लानि से भरा था जाकर 'सम्पादकी' से इस्तीफा दे दिया। किंतु उसकी प्रतिक्रिया का बोझ आज भी मेरे शरीर में लदा है। सोचता हूँ कि वैज्ञानिक विषयों में पत्रिका निकालना दुष्कर है क्योंकि उसके लिये पैसा देने पर भी योग्य लेखक नहीं मिलते। पता नहीं साहित्यिक पत्रिका में लेखक क्यों इतनी रूचि लेते हैं। काश ! कि उनके प्रति भी लोग अन्यमनस्क हो जाते—तब शायद मेरे मन का बोझ हलकाता।

देश गफलत में रहे, पार्टी वाले आपस में लड़ें और लोगों में स्वतन्त्र उत्साह न रहे तो इसमें चीन के खतरे से भी बड़ा खतरा है।

—विनोबा

रसायनिक शामक

डा० शिवप्रकाश

कमरे में रखी हुई मेज को आक्सीजन ड़ती रहती है, किंतु पर्याप्त ऊष्मा न े के कारण उसके जल उठने का कोई भय ें रहता। यही हाल सभी दहनशील ार्थों का होना है। हम जानते हैं कि जब ऊष्मा इतनी अधिक न हो कि किसी ु का ताप उसके प्रदीप्तांक से भी अधिक जाय तब तक वह वस्तु जल नहीं सकती द कोई वस्तु जल रही हो और किसी ाय द्वारा आक्सीजन को उस स्थान तक चने से रोक दिया जाय तो आक्सीजन अभाव में वह अग्नि बुझ जायगी। इससे ट होता है कि अग्नि के लिए तीन बातों होना परम आवश्यक है—१ ज्वलनशील ार्थ २ ऊष्मा ३ आक्सीजन। इस प्रकार द हम अग्नि को बुझाना चाहें तो प्रथमतः नशील पदार्थ को उस स्थान से हटा दें। ु ऐसा हम प्रत्येक दशा में नहीं कर सकते। ई मकान जल रहा हो तो उसे हम हटा कर रे स्थान पर तो नहीं ले जा सकते। रा उपाय यह हो सकता है, आक्सीजन अग्नि तक पहुँचने से रोक दिया जाय र तीसरा उपाय यह है कि अग्नि को ठंडक चा कर ऊष्मा की मात्रा को ही कम कर ा जाय।

जब किसी मनुष्य के शरीर में अग्नि जाती है तो उसे इधर-उधर दौड़ने से उसे आक्सीजन अधिक मिलेगी और अग्नि के उग्र रूप धारण करने की सम्भावना रहती है। इसके विपरीत उस मनुष्य को कम्बल से लपेट देने की सलाह दी जाती है। ऐसा करने से उन मनुष्य के शरीर तक आक्सीजन न पहुँच पायेगी और अग्नि बुझ जायगी। ठंडक पहुँच कर अग्नि बुझाने के लिए अत्यन्त सरल माध्यम है। जल बहुतायत से मिलता है और उसके लिए व्यय भी अधिक नहीं करना पड़ता। किंतु इसके अतिरिक्त जल में जो महत्वपूर्ण गुण है वह है उसका वाष्प का उच्च गुप्त ऊष्मा (५३६ कैलरी) जिसके कारण जल में अग्नि को अवशोषित करने की अत्यधिक क्षमता होती है। जल को हम प्रत्येक दशा में प्रयोग में ला भी सकते हैं अथवा नहीं, यह जानने के पूर्व हम अग्नि को चार वर्गों में विभाजित करते हैं जिनसे वह उत्पन्न होती है।

(क) दहनशील पदार्थ जैसे लकड़ी, कपड़ा, जूट आदि।

(ख) ज्वलनशील द्रव जैसे ऐल्कोहल, बेंजीन, ऐसीटोन, पेट्रोल आदि।

(ग) विद्युत।

(घ) धातुयें, जैसे सोडियम, ऐल्युमीनियम, मैगनीशियम आदि।

(क) वर्ग की अग्नि को बुझाने के लिए जल का उपयोग किया जा सकता है किं

...वर्ग की अग्नि में हम जल का उपयोग ...कर सकते, क्योंकि जब जल को बल- ...द्रव के तल पर फेंका जायगा तो द्रव ...के बाहर हो जायगा और वहां जलने ...। इसके अतिरिक्त जल भारी होगा ...नीचे बैठ जायगा और ऊपरी तल पर द्रव ...रहेगा। जल विद्युत का चालक है ...(ग) वर्ग की अग्नि में भी इसका उप- ...तब तक नहीं किया जा सकता जब तक ...अग्नि से पर्याप्त दूर न रहें और जल ...सतत फेंकने की आवश्यकता न हो। ...मैगनीशियम, ऐल्यूमीनियम आदि धातु- ...जल को विच्छेदित कर देती हैं जिससे ...जन जैसी दहनशील गैस उत्पन्न हो ...है अतः (घ) वर्ग की अग्नि में भी जल ...उपयोग नहीं कर सकते। अब हम देखेंगे ...परिस्थितियों के अनुसार जल बुझाने के ...कौन से माध्यम का चयन करते हैं।

यदि अग्नि बहुत भीषण न हो तो इन ...शामकों (Extinguishers) द्वारा ...बुझा सकते हैं। जब जल का उपयोग ...होता है तो उसके लिए सोडा एसिड ...का उपयोग किया जाता है। इस यंत्र ...सोडियम बाईकार्बोनेट तथा गंधक अम्ल ...प्रयोग किया जाता है। अभिक्रिया ...उत्पन्न कार्बन-डाइ-आक्साइड जल को ...से बाहर फेंक देती है। २५-३० फुट ...दूरी तक इसका उपयोग किया जा सकता ...।

(ख), (ग) तथा (घ) वर्ग की अग्नि को बुझाने के लिए जिन शामकों का प्रयोग किया ...उन्हें रासायनिक शामक कहते हैं। ये कई प्रकार के होते हैं जिनमें से चार मुख्य हैं (१) झाग शामक (२) कार्बन टेट्रा-क्लोराइड (सी० टी० सी०) शामक (३) कार्बन डाइ-आक्साइड शामक (४) सूखा पाउडर शामक।

ज्वलनशील द्रवों के जलने से उत्पन्न अग्नि को बुझाने के लिए यह आवश्यक है कि आक्सीजन को द्रव तक पहुंचने न दिया जाय और द्रव का वाष्प बनना रोक दिया जाय। इस अग्नि को बुझाने के लिए झाग शामक का प्रयोग किया जाता है। इसमें सोडियम बाईकार्बोनेट तथा ऐल्यूमीनियम सल्फेट भरा रहता है। इसके अतिरिक्त इसमें सैंपोनीन, लिकोरिक अथवा टर्कीरेड आयल मिला रहता है जो झाग स्थाई बनाने में सहायक होता है। स्थाई बनाने के साथ य... झाग को चिपचिपा भी बना देते हैं। जलते हुए द्रव के तल पर झाग के बुलबुले स्वतन्त्रता से फैल जाते हैं। इससे आक्सीजन भी कम हो जाती है और द्रव का वाष्प बनना भी बन्द हो जाता है। यह झाग पर्याप्त स्थाई होता है और द्रव को पुनः प्रदीपन से बचाता है। यह झाग ३० फीट दूर तक फेंका जा सकता है। (ख) वर्ग की अग्नि को बुझाने का यही एक मात्र शामक है।

सी० टी० सी० शामक—कार्बन टेट्रा क्लोराइड (सी० टी० सी०) एक तीखी गंध वाला द्रव है जो शीघ्र ही वाष्पित हो जाता है। वाष्प के रूप में वह वायु से ५ गुना भारी है अतः इसके वाष्प अग्नि के पास निलम्बित रहते हैं और ऐसे आवर...

का निर्माण करते हैं जो आक्सीजन को अग्नि तक पहुँचने से रोक देता है। इस शामक का उपयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कार्बन टेट्रा क्लोराइड का वाष्प अधिक न सूँघ लिया जाय। ऐसे स्थान पर जहां रोशनदान (गवाक्ष) न हो और सी० टी० सी० के वाष्प बाहर निकलने का मार्ग न हो उस स्थान पर सांस लेने वाले यंत्र के साथ ही इस शामक का उपयोग किया जा सकता है क्योंकि उस दशा में कार्बोनिल क्लोराइड अथवा फाँसजीन जैसी विषैली गैस बनती है जो घातक सिद्ध हो सकती है। विद्युत से उत्पन्न अग्नि बुझाने में यह अति उत्तम है। मैगनीशियम समूह की धातुओं जूट, रुई आदि की उपस्थिति में इसका उपयोग नहीं करना चाहिए।

कार्बन डाइ-आक्साइड शामक—कार्बनडाइ आक्साइड एक रंगहीन गैस है जो वायु से १.५ गुना भारी है। शामक में यह गैस ७५४ पौण्ड दबाव पर भरी जाती है जिसके कारण यह द्रवीभूत हो जाती है। शामक का ताप ६०° F रखा जाता है। जब द्रव कार्बन-डाइ-आक्साइड शामक के बाहर आती तो दबाव एकदम कम हो जाने के कारण यह गैस में परिवर्तित हो जाती है और अग्नि के निकट के वायुमण्डल में आयतन के अनुसार १६ से २६ % तक में मिश्रित हो जाती है। इसके कारण आक्सीजन अग्नि तक पहुंच नहीं पाती। कार्बन डाइ-आक्साइड स्वयं अज्वलनशील गैस है और जलने में सहायता भी नहीं करती। यह गैस विद्युत की कुचालक भी है। ७ फुट दूरी तक इसका उपयोग किया जा सकआ है। चूंकि गैस बनकर तुरन्त उड़ जाती है इसी इसका व्यवहार उन सभी वस्तुओं को बु में उत्तम रहेगा जिनमें जल का उप करने पर उनके नष्ट होने का भय रहता मूल्यवान वस्तुयें, रेशमी तथा ऊनी व इन सबके लिए यह उत्तम है। इसके अ रिक्त उन विद्युत यंत्रों में जो बन्द जाते हैं और जिनकी अग्नि बुझाने के कार्बन ट्रेटाक्लोराइड उपयुक्त नहीं है, उपयुक्त है, क्योंकि यह उन यंत्रों के अ तक पहुँच सकती है। मैगनीशियम पर इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि उससे यह कार्बन में विच्छेदित जाती है, जो दहनशील है।

सूखा चूर्ण—इसे सूखा रासायनिक शा भी कहते हैं। इसमें सूखे रासायनिक चूर्ण उपयोग किया जाता है। यह शामक सभी दशाओं में अति उत्तम है जिनमें से अथवा कार्बन-डाइ आक्साइड से अग्नि होने का भय रहता है अर्थात धात्वीय अ को बुझाने के लिए यह अत्यधिक उपयो है। एक प्रकार के शामक में ४५% खड़ि का चूर्ण (चाक पाउडर), ४५% स्लेट पा तथा १०% ऐल्यूमीनियम स्टियरेट होता दूसरे प्रकार के शामक में ६७% सोडि बाईकार्बोनेट तथा ३% कैल्शियम और मैग शियम का फास्फेट होता है। इस शा में कार्बन-डाइ आक्साइड की एक 'का होती है जो पाउडर को बाहर भेजने दबाव डालती है। विद्युत से उत्पन्न अ

शेष पृष्ठ २७ पर देखें

सुगम उपाय

(आशमा)

बिहार से एक राजपूत लड़का निकला करी की खोज में। पढ़ा लिखा एकदम था, इसलिये चालाक भी नहीं था। देखने में गन्धर्व जैसा लगता था। पिंजड़े की चिड़िये को पिंजड़े में ही ति थी। भूख मरने वह तैयार था क्योंकि उसे अपने पूर्व जन्म के पाप कृत्यों का रिणाम समझता था। इस लिये इस जन्म धर्म लाभ के लिये हरिनाम संकीर्तन और ण सेवा में वह लगा हुआ था। मगर ौबत यहां यह रही कि पत्नी पढ़ी लिखी कली। और वह पतिदेव के इन अध्यात्म-तियों से बहुत जल्द ऊब गयी। मौका काल कर एक दिन उसने कहा—मैं अब तरह भूख मरने तैयार नहीं हूँ। क्या स्मत है। या तो तुम नौकरी करो नहीं तो मुझे नौकरी करने दो। मैं आइ० ए० स हूँ। जरूर मुझे कोई अच्छा काम मिल जायगा। पति देव ने यह सुन कर बिगड़ते हुए कहा—मेरे जिन्दा रहते तुम नौकरी करने जाओगी ? मैं इतना पतित नहीं हूँ कि औरत की कमाई खाता जिऊँ !

पत्नी ने कहा—तब तुम क्यों न कुछ पौरुष दर्शाते। ऐसा निकम्मा और निठल्ला पड़ा रहना मर्द के लिये शरम की बात है। मेरी किसमत ही फूटी कि मुझे तेरे जैसे मूर्ख के साथ मरना लिखा।

पतिदेव की नस में आग लगी। म सब कुछ बरदाश्त कर लेता है पर अप पत्नी का तिरस्कार और ललकार बर्दा नहीं कर पाते। बस क्या था, निकल ग नौकरी की खोज में। वह सुन रखा बगैर टिकट के रेलगाड़ी में सफर कर बहादुरों का ही चमत्कार है। और राणा प्रताप का वंशज जो है। चढ़ा ज आस्मान तक। शान से जाकर बैठ ग रेलगाड़ी पर और निहायत इतमीनान साथ पहुँच गया मुगलसराय।

पेट में अब चूहे दौड़ने लगे! च ओर दृष्टि डाली तो सिर्फ रेल के प ही नजर आयी और कोयले भी। म जो भी मिले सभी किसी सुदूर समुद्र एकान्त द्वीप समूह जैसे लगे। उसे सूझा नहीं,क्या करूँ किधर जाऊँ। में मुंह खोला और एक बूढ़े खलासी अपना दुखड़ा सुनाया। उसने उसे को ढोने का काम दिलाया। दो चार ही में जनाब की तमाम खूबसूरती बद के रूप में परिणत हो गयी। उस सु शरीर से स्वेद नाले दिन भर बहने ल उसे ज्ञानोदय होते होते एक सप्ताह और गया। अपने आप कहा—यह सब धन्धा का है। मैं राजपूत होकर और वह श्रेष्ठ हड्डी का, यह निम्न काम करू

मेरा यह रूप मेरी ससुराल के लोग देखें तो क्या सोचेंगे ? इससे डूब मरना या डकैती करना भला है। कुदाल और टोकरी फेंक कर पाइप में जाकर खूब स्नान किया और पेटभर डालडा से बनी पूड़ी तरकारी खाकर प्लाटफार्म पर आकर इधर से उधर टहलने लगा।

प्लाटफार्म के एक कोने में एक बूढ़ा साधु अकेले न जाने किस फिक्र में बैठा हुआ था। अब राणाप्रताप के यह उदीयमान वंशज ने उनके पास पहुँच कर कहा—प्रणाम बाबा।

बाबाजी ने कहा— नारायण नारायण, खुश रहो बेटा

कुछ उपदेश दो बाबाजी, बड़ी मुसीबत में हूँ। मेरी स्थिति ऐसी ऐसी है। अब क्या करूँ। कोयला ढोने को मैं तैयार नहीं हूं

बाबाजी ने कहा— आनन्दम् परमानन्दम्। जैसे मैं कहता हूँ वैसा करोगे तो बस पैसा ही पैसा है।

"मैं तो तैयार हूं बाबा। आप मुझे उपाय समझाइये। बाबाजी ने कहा—कपड़ा सब खोलकर फेंक दो। सारे शरीर में भस्म पोतो। माथे में एक लाल रंग की रूमाल बांध लो। गले में कण्ठी माला पहन और चला जा बम्बई या दिल्ली। किसी मन्दिर में जाकर बैठ जाना— बस पैसा ही पैसा है खाने को मिष्ठान्न भो! कोई कुछ भी पूछे तो कहते रहना—सब राम की महिमा है सीता राम सीता राम। राम गुण गायन करो भाई, संसार में कुछ नहीं है इत्यादि। ज्यादा बोलना ही नहीं चाहिये। काम भी कुछ करना नहीं पड़ेगा और महीने में कम कम दो तीन सौ आमदनी भी हो जायगी

"कैसे ?"

"सेठानी लोग आकर तेरा पैर पूजेंगी और रुपये भी देंगी। हिम्मत है ?"

"हिम्मत क्यों नहीं बाबाजी! राजी हूँ। आप दीजिये मुझे भस्म और माला और लाल कपड़ा। मैं अभी ही जाता बम्बई।

साधु बाबा ने उसे सजाया जैसे सिनेमा लड़कियों को सिनेमा डायरेक्टर लोग सजाते हैं। कमर में एक मोटा रस्सा पहनाकर एक कोपीन धारण कराया। सम्पूर्ण शरीर में भस्म पोता गया। माथे के बालों को भी भस्म से जूड़ा का रूप दे कर एक लाल रूमाल से उसे बांध दिया गया। कुर्ता धोती जूता सभी एक लाल कपड़े में बांध दिया और उसे बिठा दिया बम्बई मेल गाड़ी में

और कहा— चला जा चेले। खूब आनन्द मौज कर। और प्रतिमाह कुछ गुरु को भेज दिया कर। मेरा ठिकाना प्रयाग राज के अमुक मन्दिर में है। गुरु को भूलना नहीं। समझे ? जा...जा..."

दो महीने बाद जब वह घर आया तो अपनी पत्नी के हाथ में पांच सौ रुपये रख दिया। पत्नी ने रुपये तो ले लिये पर अपने पतिदेव की शकल सूरत देखकर घबड़ा गयी और लगी रोने। पतिदेव समझ गये बोला — अरी पगली, मैं साधु थोड़े ही। अभी नहा-धोकर कुर्ता धोती पहन कर आता हूँ। तू रो मत! इस मूर्ख देश में पैसा कमाने का सुगम उपाय यही है।

तरुणाई के नाम चुनौती

बलवीर सिंह 'करुण'

उत्तर दिशि से फिर आई है, तरुणाई के नाम चुनौती।
अँधियारे ने लिखी उषा की' अरुणाई के नाम चुनौती॥

आज राष्ट्र के उज्ज्वल नभ पर
महायुद्ध के बादल छाये।
देवों का बल पुनः परखने
युद्धस्थल में दानव आये॥

हिमगिरि की रूपहली घाटी
आज रुधिर से स्नान कर रही।
आज कालिका औ रणचण्डी
पुनः रक्त की मांग कर रही॥

तथाकथित भाई ने भेजी, फिर भाई के नाम चुनौती
उत्तर दिशि से फिर आई है, तरुणाई के नाम चुनौती॥

सोती रही जवानी अब भी
यदि सपनों के ही झूलों पर।
थूकेगी युग-युग तक दुनिया
महाभयंकर इन भूलों पर॥

वह उज्ज्वल इतिहास हमारा
कालिख से ही पुत जायेगा।
धरती की फैली पोथी से
नाम हिन्द का पुँछ जायेगा॥

उठो, भेजदो तुम पेकिंग के, शंघाई के नाम चुनौती।
उत्तर दिशि से फिर आई है, तरुणाई के नाम चुनौती॥

सोने वालो पलक उघारो
डाकू द्वार तोड़ घुस आया।
नन्दन वन के माली उठतो
कोई आग लगाने आया॥

पुतः गुलामी की भट्ठी में
कोई तुम्हें झोंकने आया।

तेरी माँ के वक्षस्थल में
वह संगीन झोंकने आया ।।

ओ कम्बख्त देख तो उठकर, देता है तूफान चुनौती।
उत्तर दिशि से फिर आई है, तरुणाई के नाम चुनौती ।।

तुझे बचाने के हित कितनी,
बहिनों के सिन्दूर लुट गये।
उछल-उछल कितने दीवाने
रणचण्डी की भेंट चढ़ गये ।।

ओ नादान, तुझे अब तक भी
सोने से न मिली फुरसत है।
जिसमें शक्ति नहीं उठने की
उसको जीने का क्या हक है ।।

चीनी शस्त्रों की झंकारें देतीं बारम्बार चुनौती।
उत्तर दिशि से फिर आई है, तरुणाई के नाम चुनौती ।।

वर्षों से सोई तलवारें
चट्टानों पर आज रगड़ लो।
तेरे घर में आग लगी है
सँभल-सँभल ओ युवक सँभल लो।

जब दुश्मन का खूनी पंजा
तेरा गला पकड़ दाबेगा।
कुम्भकर्ण की इस निद्रा से
क्या तुम उसी समय जागेगा ।।

देख उधर गांडीव तन रहा, गीता का आह्वान चुनौती।
उत्तर दिशि से फिर आई है, तरुणाई के नाम चुनौती ।।

आंगन में घुस गया लुटेरा
उठो, इसे झट दूर धकेलो।
कहदो इसका कान पकड़कर
जाओ यूँ न मौत से खेलो ।।

अभी-अभी जो मांग सजी है
पापी उसे जलाने आया।
हमने जो तस्वीर लिखी है
पापी उसे मिटाने आया ।।

उठो, बतादो धृष्ट शत्रु को, मुश्किल या आसान चुनौती।
उत्तर दिशि से फिर आई है तरुणाई के नाम चुनौती॥

बहिनों ने भाई वारे हैं
माँ गोदी का लाल दे रही।
वधुयें हँसती हुई राष्ट्र को
अपने सुखद सुहाग दे रहीं॥

नींद चैन की सोने वाले
बोल-बोल तू क्या देता है।
नारी ने इतना दे डाला
देखूँ नर तू क्या देता है।

ले सुन दशों दिशायें गूँजी, देता है बलिदान चुनौती।
उत्तर दिशि से फिर आई है, तरुणाई के नाम चुनौती॥

दुश्मन की तलवार चुनौती
माता का सम्मान चुनौती।
राम-कृष्ण की आन चुनौती
राणा का अभिमान चुनौती॥

विक्रम की हुँकार चुनौती
चन्द्रगुप्त की शान चुनौती।
गुरु गोविन्द का त्याग चुनौती
बन्दा का बलिदान चुनौती॥

देख उधर कैलाश शिखर से, डमरू की वह तान चुनौती
उत्तर दिशि से फिर आई है, तरुणाई के नाम चुनौती।

---

२२ पृष्ठ का शेषांश

...धात्वीय अग्नि को बुझाने में इसका ...रूप से प्रयोग किया जाता है।

...अन्य रासानिक शामकों में मेथिल ...इड का तथा क्लोरोब्रोमोईथेन का उप... किया जाता है। मेथिल ब्रोमाइड वि... द्रव है और खाल पर फफोले डाल देता ...: बड़ी सावधानी की आवश्यकता रहती है। यह ज्वलनशील द्रवों की अग्नि बुझाने के लिए उपयुक्त है। क्लोरो ब्रोमोईथेन वायु मण्डल के ताप पर मेथिल ब्रोमाइड से कम विषैला है किंतु अग्नि के सम्पर्क में आने से यह दोषपूर्ण हो जाता है। यह रंगहीन द्रव है तथा इसका क्वथनांक उच्च होता है। इसका भी उपयोग ज्वलनशील द्रवों की अग्नि बुझाने में किया जा सकता है।

जीवन दर्पण

गिरिजा शंकर
बांका (अलीगंज) भागलपुर

बहुत चिकनी सतह यह, जीवन समुन्दर,
थक किनारे बैठने का, बिम्ब कौतुक,
बहुत सी वैचित्र्य में, विमुग्ध जीवन,
रेंगता लघु कीट उर पर, शून्य स्थिर,

पंख बांधे शून्य में हूँ, उड़ रहा मैं,
एक टक से देखता, आकाश का पथ,
बहुत ही विस्तार, दिल का दर्द हर क्षण,
बांधता हूँ स्वयं में आकाश का मग,

एक आकुल तार का, वीरान कम्पन
घेरता है उष्ण वायु का, सिहर दीवार हर क्षण,
बोझ लेकर थक गिरा हूँ, शून्य जग निस्सीम,
बेकार ही अब छटपटाना, मृत्यु दुख के दर्द,

हाय रे! मैं बेसहारा, याद है सब खेल,
याद कर अब भी मुझे, ओ खेल के अवशेष।

एक विचारणीय पत्र

—आ० श्री शिव पूजन सहाय—

काशी निवासी श्री नरोत्तम शर्मा, बड़े ने एक पत्र लिखकर हिन्दी-पत्र ओं के सम्बन्ध में मुझ से कई प्रश्नों समाधान के लिए अनुरोध किया है। मेरे समाधान की अपेक्षा नहीं करते। हिन्दी के पत्र-सम्पादकों और पत्र-कों को विचार करना चाहिए। अतः प्रश्नों के संक्षिप्त रूप में नीचे दे रहा वास्तव में ये प्रश्न विचारणीय प्रतीत है—

हिन्दी में अच्छी-से-अच्छी पत्रिकाएँ रही हैं। अधिकतर मध्यम श्रेणी ही उनके ग्राहक होते हैं। धनी-लोग हिंदी पत्र कम खरीदते हैं। आय के पाठकों के अनुराग और के साथ पत्र-संपादक और पत्र-लिखवाड़ किया करते हैं। पांच से दस रुपये तक वार्षिक मूल्य देने की पाठ्य-सामग्री बहुत कम मिलती है। पृष्ठों की पत्रिका में केवल तीस से पृष्ठों तक ही पाठ्य सामग्री मिलती आधा स्थान शीर्षक-चित्रों और पनों से घिरा रहता है। हिसाब से सोलह से बीस पन्ने, तक सादा छोड़ देने में निकल जाते हैं। शीर्षक का आधा पन्ना सादा। पाठ्य-मग्री के बीच-बीच में विज्ञापन। कला के नाम पर शीर्षक-चित्र आधा पृष्ठ ले लेत है। बीस पंक्तियों की कविता पूरे एक पन्न में सजायी जाती है। कविता की को पंक्ति एक ही शब्द की, कोई दो शब्दों क कोई-कोई पांच छः शब्दों की। कवित क्या है, ऋग्वेद की ऋचा है, खाक पत्थर कु समझ में नहीं आता। जितना स्थान चित्र-मय शीर्षकों को दिया जाता है और जितन स्थान निष्प्रयोजन सादा छोड़ दिया जाता है उतने स्थानों में यदि पाठ्य-सामग्री द जाती तो ग्राहक अपने पैसे को सार्थ समझते। चित्र भी आजकल केवल कल का नाम लेकर ऐसे बेडौल, बेढंगे, भयाव और भद्दे छप रहे हैं कि ग्राहक सि पीट कर रह जाते हैं। अनगढ़ चि छापने या सादा स्थान रिक्त रखने से कल का पेट भले ही भरता हो, ग्राहकों औ पाठकों का पेट नहीं भरता। यदि विज्ञाप से लाभ है, तो छपे, मगर ग्राहक या पाठ का हक़ न मारा जाय। ढिंढोरा पीटा जात है कि पांच रुपये में चौंसठ पन्ने की औ दस रुपये में एक सौ पन्ने की पत्रिक देते हैं, मगर मिलते हैं बत्तीस और बाव पन्ने मात्र। झूठी घोषणा की जाती है गरीब ग्राहक ठगे जाते हैं। संपादक परिश्र करना नहीं चाहते। उन्हें पत्रिका को नख शिख सजाने का अवकाश कहां है? वे तो

लेखकों को पत्रोत्तर तक नहीं देते लेखकों को प्रोत्साहन देने वाला अब कोई नहीं है। यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव है। अब आप ही बतलाइये कि कला के नाम पर होने वाले अत्याचारों से पीड़ित ग्राहकों और पाठकों को किस अदालत में जाना चाहिए?

२. हिंदी-पत्र पत्रिकाओं के ग्राहकों और पाठकों पर चौतरफा अत्याचार हो रहे हैं। ग्राहक और पाठक बड़ी कठिनाई से पैसे जुटाकर पत्र-पत्रिकाएँ खरीदते हैं। साप्ताहिक पत्र में सप्ताह भर पढ़ने का मसाला नहीं मिलता और मासिक पत्र तो एक सप्ताह का मसाला भी नहीं लाता। इसके अतिरिक्त सरकारी डाक विभाग भी ग्राहकों की कमर तोड़ता और छाती पर मूंग दलता है। पत्र-संचालक कहते हैं कि कार्यालय से भलीभांति जांच कर पत्र भेजा गया है, अपने डाकघर से पूछिए। किंतु डाकघर दो टूक बात कह देता है कि पत्र यहाँ आया ही नहीं, कहीं बीच में ही गुम हो गया। अरे, बीच में भी गुम करने वाले तो डाक कर्मचारी ही हैं! रेलवे मेल सर्विस (आर० एम० एस०) के कितने ही कर्मचारियों को परमुण्डे फलाहार का चसका लगा हुआ है। पत्र-पत्रिकाओं के विशेषांक तो प्रायः गायब ही होते रहते हैं। डाक विभाग में जो मुफ्तखोर हैं, वे बड़े सावधान और चतुर हैं। वे कभी पकड़ में नहीं आते। मगर, उनकी मुफ्तखोरी भी माफ कर दी जाती, अगर वे बेमारी न करते। लेकिन वे तो पाठक मात्र ही नहीं, संग्रहकर्ता 'साहित्य शौकिन' भी हैं। अगर, मेरे नाम की पत्रिका राह में कोई पढ़ भी ले और फिर मेरे पास पहुँचा दे, तो मुझे संतोष ही होगा। परन्तु साल भर में साप्ताहिक के अड़तालीस अंकों में से चालीस मात्र ही मिल पाते हैं और मासिक के बारह अंकों से केवल आठ या नव। साल भर में विशेषांक भी तीन-चार लुप्त हो जाते हैं। हिन्दी पत्रों के ग्राहकों को इस डकैती से बचाने वाला कोई नहीं। किसी पत्र-पत्रिका की पूरी फाइल बन नहीं पाती। पत्र के मालिक दुबारा कोई अंक भेजते नहीं। डाकखाने का सर्टिफिकेट भेजने पर भी कागज की महगी के बहाने असमर्थता प्रकट कर देते हैं। ग्राहक पर दुहरी मार पड़ती है। पत्रिकाओं के ग्राहक कैसे बढ़ें? ग्राहकों की कठिनाइयों को समझनेवाला भी कोई है? हिन्दी पत्र पत्रिकाओं का प्रचार बस बीच के बटमार ही बढ़ने नहीं देते। अब आप ही बतलाइये कि दो पाटों के बीच में पीसने वाले ग्राहक कहां जाकर त्राहि पुकारें?

३. हिन्दी में जो प्रथम श्रेणी के दो-चार दैनिक पत्र हैं, वे प्रायः भाषा की शुद्धता और अधिक से अधिक पाठ्य-सामग्री सजाने पर ध्यान रखते हैं। किन्तु अधिकतर दैनिक बहुत अशुद्ध छपते हैं। संपादक का परिश्रम कहीं नहीं झलकता। कहीं-कहीं तो छपाई इतनी धुँधली रहती है कि पढ़ी ही नहीं जाती। कहीं अक्षरों के टूटने और बिखरने से अर्थ संगति नहीं बैठती। कहीं तो कुछ भी अर्थ नहीं

...ला। कविताओं और कहानियों का किरकिरा हो जाता है। लेखों में शब्दाधार वाक्यों की छूट रहने से क्रम भंग हो जाता है। किसी में कोई वक्तव्य या भाषण किसी छपता है, तो चौथाई हिस्सा केवल का नाम और कथन दुहराने में ही जाता है। नेहरू जी ने भाषण किया वक्तव्य दिया, तो अनेक बार लिखा है कि नेहरू जी ने कहा, प्रधान मंत्री, उन्होंने कहा इत्यादि। हां भाई, तो हुआ कि नेहरू जी कह रहे हैं, रहे हैं, उन्हीं का भाषण हो रहा वक्तव्य दे रहे हैं। फिर बार बार बात फेंटने से लाभ ही क्या? एक पचास साठ पंक्तियों में लगभग पंक्तियां तो वक्ता के नाम और कथन पुनरावृत्ति में ही खप गयी। इससे को क्या मिला? यदि उन दुहराई पंक्तियों के स्थान को बचाकर कोई मनोरंजक या ज्ञानवर्द्धक समाचार जाता तो हानि क्या होती? दैनिक को काफी पैसे खर्च करने पड़ते र उनके पैसों के सदुपयोग पर न का ध्यान है, न संचालक का। इन बातों पर गंभीरतापूर्वक विचार करने अवकाश ही किसी को नहीं है। अब ही बतलाइये कि जो दैनिक सुसम्पा- नहीं हैं उनकी ग्राहक संख्या बढ़ेगी? घोर महंगी के इस दुर्दिन में गाढ़ी कमाई के प्यारे पैसे हिन्दी प्रेमवश खर्च करके दैनिक खरीदे जाते हैं और उन्हें पढ़ते समय पदे-पदे मन खिन्न होकर झुँझलाता रहता है। क्या राष्ट्रभाषा हिन्दी का झंडा इसी तरह के असावधान संपादकों और प्रूफ शोधकों से ऊँचा रहेगा? आशा है कि मेरे प्रश्नों के औचित्य पर आप अपने विचार निष्पक्ष भाव से प्रकट करके पत्र ग्राहकों के साथ उचित न्याय करेंगे।

श्री शर्मा जी के लम्बे पत्र में और भी ऐसे प्रश्न है पर मैंने केवल तीन को ही संक्षिप्त करके उन्हीं के शब्दों में यही उपस्थित किया है। वे अपने प्रश्नों पर निष्पक्ष विचार चाहते हैं, किन्तु ऐसे विवादास्पद प्रश्नों का समाधान केवल एक दो आदमी नहीं कर सकते। इन या ऐसे अन्याय प्रश्नों पर सामूहिक रूप में आंदोलन होने से ही लाभ होगा। साहित्यिक समारोहों में प्रस्ताव स्वीकृत करके संबद्ध संस्थाओं अथवा पत्रों को भेजने से भी प्रभाव पड़ सकता है। आजकल चारों ओर गोष्ठियां हुआ करती हैं, सम्मेलन भी होते हैं उनमें ऐसे प्रश्नों को उठाना चाहिये। एक व्यक्ति का फैसला इस विषय में किसी काम का न होगा। फिर भी मैं हिन्दी के आलोचकों विचारकों, पत्रकारों और हितैषियों का ध्यान इधर सादर आकृष्ट करने के लिये ही ये प्रश्न यहां उपस्थित कर रहा हू।

—साभार

स्त्री का हृदय

डा० गोपीनाथ तिवारी

(कुरु क्षेत्र का सैन्य शिविर, रात्रि के १० बजे हैं। चारों ओर सन्नाटा है। एक कक्ष में युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन बैठे दिखाई पड़ते हैं।)

युधिष्ठिर—नहीं भीम हम पापी हैं।

भीम—और दुर्योधन, एवं अश्वत्थामा धार्मिक और महात्मा हैं।

युधि०—व्यंग न करो भाई। मेरा हृदय रोता है। मेरा रोम रोम मुझे कोसता है।

भीम—कि हमने दुर्योधन, के सम्मुख नत मस्तक होकर न कहा—ले हमें जलाने और रुलाने वाले हमारा शिर काट दे, हम हाथ न उठायेंगे।

युधि०—भइया, पितामह भीष्म से बढ़कर धनुर्धर और नीतिमान कौन है? उनकी मृत्यु से कला, वीरता और धर्म असहाय हो गये हैं। इतिहास ऐसा अमूल्य हीरे को फिर कभी न देख सकेगा। भीम, देखी, सहन धर्म की सीमा। सारा शरीर बाणों से छिद गया। बाण ऐसे खड़े थे मानो खेत में उगे हों, और मानो पितामह साही पशु के रूप में परिणत हो गये हों उसी रूप में वे छै मास लेटे रहे। सहस्त्रों तलवारें शरीर में घुसी हों तो क्या कोई लेट सकेगा। पितामह की मृत्यु का कारण क्या हम नहीं हैं?

अर्जुन—हां, मैं हूँ पूज्य! मेरे इन हाथों ने बध किया है उन राजर्षि [...] युग आज अनाथ है। देश असहाय है [...] समाज धर्महीन है।

भीम—अर्जुन तुमने बध नहीं कि[...] पितामह की मृत्यु तो उसी दिन हो गई [...] जब दुष्ट दुर्योधन की भरी सभा में उन्हों[...] द्रौपदी को उघारी और अप्रतिष्ठित देख[...] मौन रखा था।

युधि०—कर्ण जैसा दानी और वीर [...] भू मां फिर उत्पन्न करेगी? घायल श[...] से रक्त बह रहा था। तन का कोई [...] न ऐसा नहीं था जो कट-फट नहीं गया [...] मांस का लोथड़ा सा वीर कर्ण पड़ा [...] बाहरे दान वीरता। पत्थर से दांत को [...] कर स्वर्ण का दान दिया! कल्प वृक्ष लजा[...] सुधा रस में जा डूबा, महादेव कैलाश [...] श्वेत हिम में जा दुबके।

अर्जुन—और वीर भी अन्यतम। उ[...] प्रत्येक बाण मेरे रथ में ऐसा लगता [...] जैसे कि पर्वत आ टकराया हो और [...] चकनाचूर हो रहा है। यदि सखा माधु[...] साथ न हुये होते तो महाबली अंगरा[...]

भीम—खँगराज बन गये होते, यहां [...] और भीम की गदा टूट गि[...] होती।

युधि०—भीम थोड़ा सोचो। देश [...] सभी महावीर काम आ गये, निपुण अ[...] शस्त्री समाप्त हो गये, कला और कौश[...]

...विलीन हो गये। क्या रहा है देश
...जो सबसे अधिक मान्य माना गया है,
...व ही नहीं, देव पद तक पहुंचाता
...श्रुतियों में माता पिता के समकक्ष
...घोषित हुआ है, वह गुरु द्रोण भी जा
...है

अर्जुन—और इस घोरतम बध एवं निकृ-
...पातक का कर्ता भी अर्जुन ही है।
जब वे शस्त्र फेंक कर बैठ गये, आंसू
आंखें बन्द कर बेसुध से होने लगे,
...

युधि०—आकाश के नक्षत्रों मुझ पर
बरसाओ, देवलोक वासियो मेरे ऊपर
गिराओ क्योंकि मैं सत्यवादी युधिष्ठिर
अजात शत्रु युधिष्ठिर हूँ। मेरे लोक
...में मेरे मुँह पर थूको।

भीम—महाराज, जगत थूकेगा उसके
...र जिसने एक रजस्वला और एकवस्त्रा
...को भरी सभा में केश खींच कर बलात्
...या, जिसने उसे उघारी और नग्न करने
...प्रयास किया। जिस नराधम ने अपनी
...जंघा दिखाते हुए राजकन्या, पांडव
...से उस पर बैठने को कहा। विश्व
...उस धर्मध्वजी और मानी महारथी
...त्रियों के मुख पर जिनके मुख से एक
...भी न निकला—यह न हो सकेगा।
...कर्ण, द्रोण वहीं बैठे थे और टुकुर-
...देखते रहे। विश्व के इतिहास में
...पित निकृष्टतम पाप गृह में बैठे सिर नि-
...कर देखते रहे। पापी वे हैं या हम?
...गृह में जलानेवाला पातकी है या यक्षों
...से दुर्योधन भाई मानकर उरूके

प्राण बचानेवाले हम?

युधि०—एक डूब रहा हो तो दूसरे को भी डूब जाना चाहिए क्या? जब एक भाई दीपक बुझा रहा हो तो दूसरे को भी फूँक मारनी चाहिए क्या? (सांस खींचकर) वह चित्र विस्मृत नहीं होता। कातर अश्रु भरे नेत्रों से गुरु द्रोण मेरे पास आकर बोले—सत्यव्रती युधिष्ठिर! मैं किसी का विश्वास नहीं करूँगा, कृष्ण का भी नहीं। मेरा सम्पूर्ण विश्वास तुझ पर है। न तूने कभी असत्य कहा है और न तू कहेगा। कृष्ण कहता है—अश्वत्थामा मृत हो चुका है। बता शीघ्र बोल, युधिष्ठिर! यह झूठ है ना, सरासर असत्य है ना कि अश्वत्थामा मर गया है।

भीम—अश्वत्थामा मारा तो जा चुका था।

युधि०—पाप मन से होता है भीम! मन ही कर्मों का जनक है। मैं जानता था कि जो अश्वत्थामा मारा गया है वह द्रोण पुत्र नहीं है। मेरी कैसी संकटमय अवस्था थी। मेरा मन कितना वेदनामय था, तुम लोग क्या समझोगे? मुँह मेरा फक था, जिह्वा पर थूक न था, स्वांस रुक गई थी, सिर घूम रहा था, हृदय धड़क रहा था, और पैर कांप रहे थे। मन में आया कह दूँ—गुरु जी आपका पुत्र अश्वत्थामा मृत नहीं हैं। पर-पर-पर कृष्ण का ध्यान आया जिन्होंने शपथ खाकर कह दिया था—महाराज! मैं साथ न दूँगा। चित्र सामने आ खड़ा हुआ पृथ्वी पर लेटी अर्ध नग्ना द्रौपदी का जिसने पूरी शक्ति से कहा था—मैं आत्म घात कर लूँगी। शब्द सुनाई पड़े तुम दोनों

के कि हम बन में चले जायेंगे ।

भीम—तो महाराज उपाय भी क्या था ?

युधि०—(तीव्रता से) हम सदा अपने को ही सही मानते हैं, अच्छे साध्य के लिए साधन भी उचित होने चाहिए ।

भीम—नहीं महाराज साध्य ऊँचा है तो कुछ नीचे साधन भी अपनाने में हानि नहीं ।

युधि०—हानि नहीं, हमने देश को कला, वीरता, कौशल से रिक्त तो कर दिया । यही है अशुभ साधनों के प्रयोग का फल ।

भीम—पर यदि अनुचित मार्ग पर जाने वाले को पीटना पड़े तो पीटना चाहिए । यदि कोई दस्यु बन जाये तो उसे बन्दी बनाना ही होगा और देश, समाज एवं धर्म के द्रोही को पृथ्वी से उठाना भी पड़ेगा । गुरु द्रोण ने दुर्योधन के पापों में सहायता पहुँचाई । अतः कृष्ण की नीति उचित थी ।

युधि०—भीम, उचित अनुचित की सीमा है । जानते हो, जब उन्होंने मुझ से पुनः पूछा- युधिष्ठिर तू बोलता नहीं—कुछ दाल में काला है । मैंने देखा—गुड़ गोबर होने वाला है और कहा—गुरु, यह सत्य है कि अश्वत्थामा मारा जा चुका है—सहसा जोर से पणवानक भेरी, दमामे, शंख बजने लगे हमारी सेना में और मेरे आगे के शब्द—"पर पर अश्वत्थामा हाथी" गुरु के कानों तक न पहुँच सके ।

भीम—आपने असत्य क्या कहा ? अश्वत्थामा नामक गज मारा ही जा चुका था ।

युधि०—मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए नियम बना लेता है, तर्क ढूढ़ डालता है वही मैंने किया । पर क्या यह सत्य था नहीं, नहीं सर्वथा असत्य था । वह घृणा की दृष्टि मैं भूल नहीं पाता हूँ जो अश्वत्थामा ने मुझ पर फेंकी ।

भीम—वह तो बचपन से यही करता आया था । हमारे साथ शस्त्रास्त्र में होड़ न कर पाता था तो घृणात्मक दृष्टि यह कह कर फेंकता था कि मैं ब्राह्मण हूँ और वे मुझ से छोटे क्षत्रिय ।

युधि०—उस दृष्टि ने मुझे खाया और उन शब्दों ने हृदय बींध दिया वह बोला—युधिष्ठिर सत्य की साकार प्रतिमा कहलाता था । तेरी जिव्हा कटकर गिर न पड़ी जब तूने सफेद झूठ बोला और अपने विद्यादायी गुरु से छल किया । बता क्या मैं मृत हूँ ? बोल, मैं कौन हूँ ? (नेपथ्य में—कोलाहल, स्त्री चीत्कार और स्त्री स्वर—हां गुरु पुत्र)

युधि०—भीम अर्जुन यहां ठहरना । मैं देखकर आता हूँ ।

भीम—नहीं महाराज, आप यहीं बैठिए मैं जाकर देखता हूँ । आपको दया न मालूम में आ खड़ी हो ।

(जाता है)

अर्जुन—महाराज मुझे भी आज्ञा दीजिए ।

युधि० हाँ जाओ अर्जुन, भीम को संतुलित रखना । वह नीति विहीन निष्कपट पुरुष है जो सोचता उगल देता है । ऐसा पुरुष न जिव्हा पर अधिकार रख पाता है और न हृदय या हाथ पर ।

(अर्जुन जाता है)

(दूसरी ओर से द्रौपदी का प्रवेश)

द्रौपदी—महाराज मैं बदला लूँगी, मुझे ...दीजिए।

युधि०—देवी बैठो हमारे जीवित रहते ...कष्ट करने की क्या आवश्यकता है ?

द्रौपदी—महाराज दुर्योधन की सभा में ...आप थे।

युधि०—देवी लज्जित न करो। जानती ...सत्य की श्रृंखला से अन्धा था और ...का फल दुर्योधन, कर्ण, पितामह और ...ने भोगा है। पर बताओ तो क्या हुआ ...

द्रौपदी—मेरी कोख उजड़ गई है।

युधि०—क्या, क्या हुआ स्पष्ट बताओ ...।

द्रौपदी—मेरे पांचो पुत्र का खून हो ...है।

युधि०—(उत्तेजित होकर खड़े हो जाते ...) जो खूनी का बध होगा, उसे प्राण त्या-...ड़ेंगे।

द्रौपदी—सत्य महाराज।

युधि०—देवी युधिष्ठिर ने सदा सत्य ही ...है, हाँ एक अवसर को छोड़ कर।

द्रौपदी—एक के दो अवसर हो सकते ...महाराज ?

युधि०—व्यंग बोलना स्त्रियों की प्रधान ...है। देवी! उस नराधम का नाम ...ओ, मैं उसे अपने इसी हाथ से यम के ...भेजूँगा।

द्रौपदी—मैं कितनी प्रसन्न हूँ महाराज! ...आप सत्य पथ पर अग्रसर हैं। तो ...महाराज। उस नीच नराधम निंद्य निशाचर का नाम है अश्वत्थामा।

युधि०—अश्वत्थामा (मौन होकर बैठ जाते हैं)

द्रौपदी—बस महाराज! हो गई सत्य की इति और शपथ की शांति। यह क्या हुआ, दूध का उफान सहसा नीचे क्यों बैठ गया ? उठाइये खड्ग। आपके पुत्रों का वध किया है उसने, आर्यपुत्र।

युधि०—वह ब्राह्मण है देवी, ब्राह्मण अबध्य होते हैं।

द्रौपदी—चाहे वह निरीह शिशुओं को सोते समय मार दे, चाहे वह गो घात और गुरु घात कर दे, चाहे वह देश-समाज को बेंच दे, चाहे वह महाराज को ...(दांत काट-कर) अरे क्या कह गई ? देव रक्षा करें।

युधि०—हाँ देवी, चाहे ब्राह्मण राज घात भी कर दे, तब भी अबध्य है।

द्रौपदी—द्रोणाचार्य क्या ब्राह्मण न थे महाराज ?

युधि०—हमने वध नहीं किया गुरु का।

द्रौपदी—पर साधन तो बने।

युधि०—नहीं, मैं तो घोषित किया था कि हाथी मरा है, पर तुम्हारे कृष्ण ने शब्दों को खा लिया।

द्रौपदी—तो मैं कुछ नहीं कहूंगी महा-राज! द्रौपदी स्वयं शस्त्र गहेगी और उस ब्राह्मण को मारेगी या स्वयं मरेगी। जब देश के पुरुषों के पौरुष को काई लग जाय, या वह थक जाय तो स्त्री चंडी होकर सदा से लोहा लेती आई है। महाराज! पुरुष बुद्धि-कोष होने से नीति के नाम पर सत्यासत्य का प्रपंच रचता है, पर स्त्री-हृदय एक

ही मार्ग पर आगे बढ़ता है और वह केवल सत्य और धर्म का मार्ग होता है। सावित्री सीता, पार्वती, चंडी सभी इसकी साक्षी हैं। आप अवध्य मानें उसे, मैं नहीं मानती हूँ।

अर्जुन— (प्रवेश कर) मैं भी नहीं मानता आर्य। आप शस्त्र न उठावें, प्रलय मच जायगा, अभी अर्जुन जीवित है, उसके बाहुओं में बल है। मैं उस नराधम के पीछे जाता हूँ।

द्रौपदी—तो आर्यपुत्र! द्रौपदी तभी जल ग्रहण करेगी जब अपने सामने अश्वत्थामा का सिर देख लेगी।

अर्जुन—ऐसा ही होगा आर्य।

(अर्जुन जाता है)

(नेपथ्य में—सखा अर्जुन ! मैं भी साथ चलता हूं).

युधि०— तो कृष्ण भी साथ जा रहे हैं। तब तो अश्वत्थामा की कुशल नहीं। हरि इच्छा।

द्रौपदी— नहीं महाराज हरि की इच्छा नहीं, होगा वही जो आपकी इच्छा होगी।

युधि०—मद्रे ! स्त्री जिह्वा की मार खड्ग से भयंकर होती है।

दूसरा दृश्य

(कुरु क्षेत्र का वाह्य भाग—दूर तक विस्तृत मैदान अश्वत्थामा वेग से जा रहा है।)

अश्वत्थामा— (एक स्थान पर खड़े होकर) हा हा! न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी। गांडीव पर फूलने वाला अभिमानी अर्जुन सिर पकड़कर दहाड़ेगा। मेरे पिता की मृत्यु का प्रधान उपादान महा झूठा युधिष्ठिर कसैली करनी का कुफल चखेगा और दानवी बल पर बढ़ बढ़ कर बोलने वाला भयंकर भीम हमसे शत्रुता करने का परिणाम भोगेगा। अहा- हा हा- पांडु वंश की फैलती बेलि अब सूख गई, द्रौपदी के पांचों पुत्र स्वर्ग में पहुँच गये। हा। हा। हा। मित्र सखा दुर्योधन सुख की सांस लेगा। और स्वर्गस्थ पिता प्रसन्न होंगे। क्यों पिता बताओ प्रसन्न हो न ?

(नेपथ्य में —नहीं-नहीं कदापि नहीं।)

अश्वत्थामा—क्या कहा ? नहीं। नहीं क्यों नहीं। आपको छल से मारने वालों से मैंने उसी रूप में बदला लिया है। और स्वर्ग में रक्त बहाता और छटपटाता दुःशासन नहीं-नहीं सुशासन हर्षातिरेक से नाच उठेगा। ठीक है ना सुशासन ? तुम हर्षित हो ना ?

(नेपथ्य में-नहीं-नहीं यह गर्हित और महा निंद्य पाप किया है तुमने।)

अश्व० — (दांत मीचकर) मैंने पाप किया है। और लाक्षागृह में जब तू ने दुर्योधन से आग दी थी ताकि पांचों पांडव जल मरे, तब तूने धर्म किया था। जब एक नग्न द्रौपदी के केश पकड़ कर उसका वस्त्र खींचा था तो तेरा वह कार्य पुण्य का था? आह मानव स्वभाव ही है कि वह दूसरे श्वेत अंचल के छोटे छोटे दाग भी निहारता है पर अपनी काली चादर भी उसे दिखाई नहीं देती।

(नेपथ्य से शब्द वही तो तुम कर रहे हो क्या नहीं जानते हो कि दुर्योधन ...।)

अश्व०— अच्छा तो दुर्योधन इस प्रकार छिपकर मुझे लांछित करेगा। मुझे ...

...शाले कुलांगार तनिक अपने कृत्यों की ...तो कर ले। तेरा पूरा जीवन धूर्तता- और अत्याचारों का कांटेदार बन है। ...हीं एक भी कुसुम। उसमें नाग फुत्कारते ...बिच्छू डंक मारते हैं, गृद्ध मंड़राते हैं, ...कूदते हैं और शृगाल हूँ हूँ हूँकते हैं। ...तुमने पांडव पुत्रों की हत्या की मंत्रणा ...तू कहता है कि मैं नहीं जानता हूँ।)

...न्या-हां, मैं कहती हूं, नहीं, नहीं मैं ...ता हूँ कि तुम नहीं जानते कि दुर्योधन ...अना...घोर पाप तुमसे करा डाला हैं।)

(सुधन्या प्रकट होती है)

अश्व०—कौन मेरी पत्नी सुधन्या ? मैं ...ओर ही जा रहा था बड़भागिन ?

सुधन्या—अभागिन कहो नाथ !

अश्व०—नहीं बड़भागिन है, यह सिद्ध ...जायेगा। पर सुव्रत कहां है ? मैं तेरे ...जा रहा था यह कहने कि घर से बाहर ...जाना और सुव्रत का ध्यान रखना।

सुध०—हम दूसरों का ध्यान रखेंगे तो ...रा ध्यान दूसरे रखेंगे, ईश्वर रखेगा। पर ... घबड़ाये क्यों हैं ?

अश्व०—घबड़ाया। अश्वत्थामा कभी ...या ही नहीं सकता, उसका नाम ही अश्व- ...मा है। पर शीघ्र घर चल। एक सुस- ...चार दूँगा।

सुध०—वह सुसमाचार और उसके साथ ...पा चुकी हूँ। आपने सोते समय द्रौपदी ...के पुत्रों की हत्या कर दी है। ओह, पृथ्वी ...फट जा, आकाश टूट पड़। द्रौपदी ! मेरे ...पति देव को क्षमा कर। यह घोर पाप है, ...का पातक है।

अश्व०—क्या बक रही है। अरे शत्रु का नाश करना नीति का सबसे बड़ा सूत्र है। चाहे सोते समय उसका नाश करें चाहे जागते समय। खेत में उगी घास न उपारी जाय तो कृषि चौपट हो जाय। कृषक यह प्रतीक्षा नहीं करता कि कंटीली घास बड़ी हो तो उपाड़ूँ। संपोलियों को क्या मार नहीं जाता ?

सुध०—सामने लड़ कर पांडवों को परास्त किया होता, इसमें धर्म था, वीरता थी। दस्यु धन छीनते हैं पर तुमने तो सोते निरीह बालकों के प्राण लिए और मूछें पर ताव देकर कहोगे, दुर्योधन का हित किया है। पिता का बदला लिया ह। जो सबके सामने किया जाय वह धर्म है और जो न किया जा सके वही पाप है, अधर्म है।

अश्व०—तू स्त्री ठहरी, धर्म और पाप के भेदों को क्या समझे ? यह कार्य पुरुषों का है, स्मृतिकारों का है। कभी किसी स्त्री ने भी धर्म-अधर्म की परिभाषा दी है।

सुध०—क्योंकि उसे ऐसा कहने ही न दिया गया है। पुरुष का यह सबसे बड़ा स्वार्थ रहा है हमारे देश में। यदि स्त्री के हाथ में स्मृति लिखनेवाली लेखनी रही होती, तो वह केवल आकाश की ओर देख का नियम न बनाती। तब न देश में महाभारत जैसी दुर्घटना होतीं और न राक्षस एवं दानवों में युद्ध करने का अवसर आता।

अश्व०—अच्छा अपनी कतरनी जैसी जिह्वा को बन्द कर शीघ्र घर चल। प्रसन्न हो कि पिता जी की मृत्यु का प्रतिकार हो गया है।

सुध०—झूठ, घोर असत्य। प्रतिकार होता यदि प्रपंच रचने वाले कृष्ण-अर्जुन से युद्ध करते और शिर उतारने वाले धृष्टद्युम्न का सिर उतारते। मुझे सेविका से आपके षडयंत्र का पता चला। महाराज दुर्योधन ने महारानी भानुमती से यह बात बताई थी और सेविका ने सुन ली थी। सब की सहानुभूति पांडवों से है। उसने आकर मुझ से कहा तो मैं तुम्हें खोजने निकल पड़ी। पर दुःख है विलंब से सूचना मिली मुझे।

अश्व०—तो अब वापिस चल।

सुध०—नहीं अब मैं महारानी द्रौपदी के पास जाऊँगी।

अश्व०—पगली, फिर वहां से लौट न सकेगी।

सुध०—यही तो मैं चाहती हूँ।

अश्व०—तब अवश्य सिर फिर गया है एवं भूत लग गया है। आत्मघात ही करना है तो नदी-नाले भरे पड़े हैं, वहां तेरी बोटी-बोटी काटी जायेगी।

सुध०—नहीं आर्य पुत्र। वहां न दुशासन है, जो स्त्री पर हाथ उठायेगा, न दुर्योधन जो कुदृष्टि से नारी को निहारेगा।

अश्व०—मूर्खे, मैंने द्रौपदी के पुत्र का घात किया है।

सुध०—तब भी वे पांडु पुत्र हैं, धर्म और नीति को जानते हैं।

अश्व—हां पता चलेगा जब तेरा सिर उतार लिया जायेगा।

सुध०—तब तो कुकृत्य का प्रायश्चित होगा तुम्हारा हित होगा, मैं महारानी द्रौपदी के यहां जा रही हूँ। अवश्य जाऊँगी और अकेली नहीं जाऊँगी।

अश्व०—वाह, खूब रही, अकेली नहीं जायेगी तो क्या मुझे वहां बलि का बकरा बनाने के लिये ले जायगी! मैं तो न जाऊँगा।

सुध०—मैं यह जानती हूँ तुम रात्रि में चोरों की नाईं छिपकर ही जा सकते हो, सीधे द्वार से नहीं अतः मैं अपने सुव्रत को साथ लेकर जा रही हूँ।

अश्व०—निश्चय ही तेरा सिर फिर गया है। पगली! कोई जान बूझ कर शेर की मांद में अपने शिशु को फेंकता है। आग में अपना हृदय डालता है।

सुध०—हाँ, समय सब कराता है। मैं उससे कहूँगा—महारानी! मैं यह रही अपराधिनी। मुझे दण्ड दो! मेरे प्राणनाथ पति ने आपके पांचों पुत्रों के प्राण लिए हैं मैं अपने पुत्र को लाई हूँ, लो इसका सिर उतार लो।

अश्व०—(उसे झकझोर कर) बता-बता कहां है सुव्रत। ओह, भगवान संसार को क्या हो गया है, घोर अधर्म का युग आ गया है। मां अपने पुत्र की बलि देने जाती है। दुष्टे, बता शीघ्र वह कहां है?

सुध०—मेरी गोद में नहीं है यहां [illegible] छिपा आई हूँ। पर मैं ले अवश्य जाऊँगी और अपने पति की कालिमा को कम करूँगी।

अश्व०—तुझे क्या हो गया है, धर्मे तू तो ऐसी बातें कभी न करती थी। मुझे गर्व था अपनी पतिव्रता पत्नी पर। तू तो सदा मेरी आज्ञा मानती थी और प्रतिदिन मेरे चरणों को पूजती थी, तेरे शब्दों से

मझते थे, आज तो विष उगल रही

सुध०—मेरा पति धर्म मुझे समाज धर्म
...त्री नहीं बना सकता है। मैं यह न
दूँगी विश्व को कि सुधन्या के पति ने
...का सब से घृणित अकृत्य कर डाला
...यह देखती रही। मैं भावी पत्नियों
...उलाहना न देने दूँगी कि सुधन्या
...के अपराध आंचल में छिपा लिये।

अश्व०—पर समझ ले मैं न जाने दूँगा।

सुध०—मुझे आप रोक न सकेंगे। मैं
...के रक्त से आपका पाप प्राक्षालित
...।

अश्व०—तभी स्त्री को वामा कहा गया
...र पुत्र की रक्षा के लिए अश्वत्थामा
...स्त्री रक्त बहायेगा। देखता हूँ तू
...जाती है। मेरे हाथ में खड्ग है।

(...न्या आगे बढ़ती है। अश्वत्थामा खड्ग
...ता है)

...थ से—वाह रे वीर पुंगव। वीरता का
...आज दीख पड़ा है कि एक स्त्री पर
...भी अपनी स्त्री पर वीर खड्ग उठाता
...यही तो अश्वत्थामा का यश है कि वह
...और सोते शिशुओं पर हाथ उठायेगा,
...ा आजमायेगा। खड्ग की ही परीक्षा
...है तो रथ से उतर कर मैं आ रहा
...।)

(अश्वत्थामा भाग जाता है। अर्जुन और
...का प्रवेश।)

अर्जुन—कौन, पूज्य गुरु पुत्र वधू सुध-
...। प्रणाम करता है, अर्जुन।

कृष्ण—मैं वासुदेव भी प्रणाम करता हूँ,
भद्रे।

सुध०—अर्जुन, वासुदेव? मैं आशीर्वाद देने योग्य नहीं रह गयी हूँ, अपने पति के पाप कृत्यों के कारण।

अर्जुन—भद्रे! उसमें आपका क्या दोष, मैं जानता हूँ आप कभी भी ऐसी दल-दल की ओर न जायेंगी।

कृष्ण—सखा! बातों में न लगो। लक्ष्य दूर भाग जायेगा। भद्रे क्षमा करना।

सुध०—अर्जुन, स्मरण है एक समय मेरे ही कारण आपने गुरु की अवज्ञा सही थी।

अर्जुन—हां, कल्याणी।

कृष्ण—क्यों? क्या हुआ था अर्जुन?

अर्जुन—कुछ नहीं यदुनाथ।

सुध०—मैं बताती हूँ वासुदेव। पर्व में पूज्य पिता जी सब शिष्यों को लेकर गंगा गये थे। आश्रम पर थे केवल अर्जुन। तात की आज्ञा थी—अर्जुन आश्रम को न छोड़ना। मैं संध्या समय लौट आऊँगा। द्रुपद पुत्र का भय रहता ही था। सहसा मेरे पुत्र की आंखें चढ़ गईं। उसे भयंकर ज्वर हो गया था।

कृष्ण—तो क्या हुआ, देवी? क्या पुत्र बच सका?

सुध०—हां, यदुनाथ! मैंने अर्जुन से कहा तुम नगर में जाकर वैद्यराज को लिवा लाओ। इन्होंने कहा—पर गुरु की आज्ञा है...मैं तुरन्त बोली—गुरु आज्ञा से मेरे पुत्र के प्राण भारी हैं। क्या उन्हें जाने दोगे? और अर्जुन वैद्यराज को लेने चले गये।

कृष्ण—तब तो गुरु द्रोण बहुत रुष्ट हुए होंगे जब लौट कर आये होंगे।

सुध०—हां और अर्जुन को तीन दिन एकान्त में उपवास के साथ मौन रहकर लक्ष्य संधान का अभ्यास करना पड़ा।

अर्जुन—पर मुझे उसमें बड़ा ही सुख मिला था।

कृष्ण—क्योंकि दूसरों का हित तुम्हारे हृदय में बैठा रहता है।

सुध०—पर तात ने आशीर्वाद दिया था कि अर्जुन नियम भंग के कारण तुम तीन दिन का साधारण उपवास रखोगे। साथ ही मैं आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हारा वंश कभी निर्मूल न होगा।

अर्जुन—कल्याणी वह आशीर्वाद अब असत्य होता दीखता है।

सुध०—नहीं अर्जुन! तात का आशीर्वाद सत्य होगा। बड़े जब प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं तो कल्याण ही होता है। अर्जुन, उस दिन तुमने मेरी आज्ञा मानी थी। आज भी एक आज्ञा मैं देती हूँ।

कृष्ण—नहीं, अब आज्ञा देने का समय गया, अर्जुन गुरु दक्षिणा दे चुका है।

सुध०—तो एक भीख मांगती हूँ मैं ब्राह्मणी हूँ।

कृष्ण—चाहे जो मांग लो अर्जुन से, अश्वत्थामा के प्राण और अधर्म मार्ग में पैर देने के अतिरिक्त।

सुध०—तो, अर्जुन मेरे सात पुत्र हुए, सभी बचपन में स्वर्ग सिधार गये। बस एक ढलती आयु का पुत्र है। उसका वध कर डालो।

अर्जुन—शान्तं पापं, हरे-हरे (कानों में उँगली देता है और चला जाता है)

कृष्ण—भला अर्जुन बालक की [हत्या] कर सकता है। यह तो दुर्योधन या अश्वत्था[मा] ही कर सकता है। अर्जुन सुनो- यहीं [बैठ] आओ। अश्वत्थामा यहीं ही आयेगा, [मैं] जानता हूँ। तुम खोज न सकोगे।

(निष्क्रमण)

सुध०—तो, मैं महारानी द्रौपदी के [पास] जाऊँगी (जाती है)

(दूसरी ओर से अश्वत्थामा का प्रवेश)

अश्व०—धन्ये धन्ये, लौट आओ देखो, समझो। नहीं, सुनती हो, देख[ता] हूँ कैसे जाती हो? (आगे बढ़ता है)

अर्जुन—(पीछे से) अश्वत्थामा रुक, [लौट] और सामने आ। (अश्वत्थामा मुड़ कर पी[छे] देखता है। फिर मांगता है। सामने [से] कृष्ण आकर रोक लेते हैं। अश्वत्थामा [खड्ग] निकाल कृष्ण पर चलाना चाहता है [कि] अर्जुन हाथ पकड़ लेता है।)

अर्जुन—निशस्त्र वासुदेव पर वार क[रता] है, नीच! युद्ध का हौसला है तो अ[र्जुन] के सम्मुख खड़ा हो। पर हत्यायें तेरे [सिर] पर खड़ी हँस रही हैं, तू क्या लड़ेगा मुझ[से]

(अर्जुन खड्ग छीन लेता है)

कृष्ण—बांध लो अर्जुन।

(अर्जुन बांधता है)

अर्जुन—गुरु पुत्र! बच्चों ने तुम्हा[रा] क्या बिगाड़ा था। गुरुजी कहा करते थे [कि] अर्जुन, पुत्र अश्वत्थामा तुम्हारी टक्कर [का] वीर है। क्या यही है वीरता? विश्व [के] वीर क्या कहेंगे? यहीं न, लोकवि[श्रुत] आचार्य द्रोण का पुत्र कापुरुष था। [चोर] की नाईं वह स्त्री कक्ष में प्रविष्ट हुआ [और]

...कों का सिर उतार लाया ? तूने यह ...का काम किया है ?

अश्वत्थामा – तो मेरे निश्शस्त्र और सिर ...पिता के सिर को उतारना धर्म था ?

अर्जुन—मैंने नहीं उतारा ब्राह्मण ।

अश्व०—पर तूने रोका भी नहीं । क्या ...कहेगा कि तू सहायक न था ? हत्यारे ...सहायक हत्यारा है । मैंने पिता और ...का बदला लिया है ।

अर्जुन...तो बदला लेना था अर्जुन या ...से । आकर मैदान में ललकारता ...पाँचों पांडवों का सिर काट लेता । ...जग वीरता का बखान करता । अब ...तुझे धिक्कारेगा, तुझ पर थूकेगा । वाह ...सारथी । सिंह से बश न चला तो सिंह ...आंख मुदे शावकों को मार डाला ।

कृष्ण—अर्जुन आततायी को जीवित ...रखना उचित नहीं । इसका बध करो ।

अर्जुन—क्या वध करूँ यदुनाथ । मैं वध ...?

कृ०—और द्रौपदी से प्रतिज्ञा क्या मैं ...कर आया हूँ ?

अर्जुन—सखा वासुदेव यह ब्राह्मण है ...गुरु पुत्र और उस पर वन्दी और ...शस्त्र ।

कृ०—बस यह तुम्हारी प्रकृति न गयी अर्जुन । जब देखो दार्शनिक बन कर आदर्श बघारने लगते हो । इस देश में यह भी ...रोग है कि प्रत्येक अपने को आदर्श बघारने का अधिकारी समझ लेता है । क्या पुनः गीता की पुनरावृत्ति करनी पड़ेगी । यही बात है तो द्रौपदी से प्रतिज्ञा क्यों की थी ?

अर्जुन—भगवन् ! उस समय क्रोध था और आप के कथनानुसार क्रोध मनु... को अंधा कर देता है ।

कृ०—द्रौपदी ने प्रतिज्ञा की थी ... तुमने कहा था—ऐसा ही होगा आर्ये । अ... पीछे पैर धरते हो ।

अर्जुन—सखे ! ब्राह्मण रक्त से मे... हाथ न रंगाओ । मुझ पर दया करो ।

कृ०—अच्छा तो तुम उसका सिर ... चलो ।

अ०—क्या कहा, सिर ले चलूँ । ... तो नाक पीछे से पकड़ी गयी, बात वही ... कि मैं वध करूँ ।

कृ०—नहीं तुम शरीर सहित सिर ... चलो, इसे जीवित द्रौपदी के पास चलो । उसी की आज्ञा से इसका ... होगा ।

दृश्य तीसरा

(अश्वत्थामा बन्दी बना खड़ा है)

कृ०—हां, इसका वध होगा । गोधा... दाहक, बालघातक, देशद्रोही, राष्ट्र... सम्पत्ति चोर और दस्यु का वध ही नी...कारों ने निर्धारित किया है ।

युधि०—यदुनाथ यह ब्राह्मण और ... पुत्र है । कोई अन्य दण्ड ।

भीम – नहीं, अन्य दण्ड इसके ... पुरस्कार है ।

कृ०—शासन का कार्य नवनीत-ह... कमल करों से नहीं चलता । सुन्दर सु... व्यवस्था लोहे से कटकर सुडौल बनती ...

मैं मानता हूँ ब्राह्मण अवध्य है पर कब, जब वह ब्राह्मण हो। गुरु पुत्र है तो क्या हुआ जब गुरु कूप पाटा जा चुका है।

भीम—हां, महाराज। वासुदेव नीति के सबसे अधिक जानकार हैं। दण्ड व्यवस्था इनके इच्छानुसार ही होना चाहिये।

कृ०—नहीं भीम। राज्य की सुव्यवस्था का नियम है। जिसका धन चुराया गया है तो राज्य या अधिकारी उसे समान धन दे। चोरी का कारण व्यक्ति नहीं कुव्यवस्था है। चोरी का भार अधिकारी पर होता है क्योंकि वह असावधान रहा है। यदि किसी ने वध किया है तो उसे प्राण दण्ड मिलेगा। पर रामराज्य में इससे भी अधिक श्रेष्ठ नियम था। श्वान को चोट पहुँची थी तो राजा राम ने श्वान से पूछा था कि चोट करनेवाले ब्राह्मण को क्या दण्ड दिया जाय ? सो यहां दण्ड व्यवस्था करेगी बहन कृष्णा।

द्रौपदी—भइया। मैं क्या कहूँ ? मेरा हृदय तो टूक-टूक होकर बिखर गया है। इच्छा होती है कि इस हत्यारे को ··(मौन हो जाती है और बैठ जाती है)

कृ०—मैं समझता हूँ बहिन।

भीम—इस ब्राह्मणाधम ने घोर अपराध किया है।

कृ०—और घोर दण्ड भी भोगेगा यह। बोलो अश्वत्थामा कुछ कहना है।

अश्व०--मैंने कोई पाप नहीं किया है।

द्रौपदी—(तड़प कर खड़ी हो जाती है) नीच, पापी, पाप नहीं किया है। तुझे, नर्क भी पचा न पायेगा। पाप नहीं किया है तो वापिस दे मेरे बच्चों को। बता, कहां हैं ?

अश्व०—जाकर चित्रगुप्त से पूछ, यम दूतों से प्रश्न कर। शत्रु को निर्जीव करना युद्ध नीति है।

द्रौपदी—सोतों की हत्या, ग्राम-नगर का दाह, देव मन्दिर और औषधगृहों का ध्वंस, यह अधर्म है या नीति।

युधि०—यह दानव नीति भले ही हो कार्य नीति नहीं।

द्रौपदी—मानव जब दानव हो जाय तो उसका वध होता रहा है। भगवान राम ने यही किया था। अतः अश्वत्थामा का वध होगा।

युधि० —पर देवी कौन करेगा वध ?

कृ०—कोई नहीं करेगा तो मैं करूँगा।

युधि०— यदुनाथ आप ?

अर्जुन - भगवान आप ?

कृ०—हां किसी के लिए यह ब्राह्मण है तो किसी के लिए गुरु पुत्र। पर मेरी दृष्टि में यह वधिक है। मुझे ही करना पड़ेगा यह कार्य। जब राजा शांतिमाला लेकर आंखें बन्द कर राम राम जपने बैठ जाय तो कोई न कोई व्यवस्थापक और नियामक का काम करेगा ही। मैं इतिहासकार को यह नहीं लिखने दूँगा कि यादव वंशी वासुदेव के रहते बालक हत्यारा दण्ड से बच गया। पांडवों के गुरु पुत्र अश्वत्थामा प्रस्तुत हो जाय बहिन कृष्णा आज्ञा दें

द्रौपदी—मैं आज्ञा दूँ।

युधि०—देवी, सोचकर, समझ कर।

द्रौपदी—समझ कर ही आज्ञा दूँगी।

ही शरीरांग थे मेरे बच्चे। मैंने ही अपने रक्त से उन्हें पोसा था, मैंने में सोकर उन्हें सूखे में सुलाया था, मैं अस्वस्थता में रात भर जगकर बार-बार थी, तो मैं आज्ञा देती हूं।

अश्वत्थामा—सुन्दरी द्रौपदी, तू न आज्ञा तो कौन देगा? तेरी सुन्दरता ने ही और दुर्योधन को द्रुपद सभा में के लिए ललकारा था और तेरी ने दुर्योधन को महाभारत युद्ध रचाने विवद्ध किया। विश्व का इतिहास साक्षी सभी युद्ध स्त्री के कारण उपजे थे। एक विष है जो सारे शरीर में व्याप्त ता है। स्त्री एक टीस है, एक दर्द प्रेमी के प्राण हरता है। स्त्री रोग को न धन्वन्तरि जीवित कर सकता अश्विनीकुमार। इसके डसे बस सोते ते हैं।

द्रौपदी—ब्राह्मण। स्त्री सुन्दर है तो यह अपराध है, स्त्री का या रचयिता पुरुष पतंगे को कब आग निमंत्रण है? मूर्ख मानव स्वार्थ में अंधा होकर है। क्या सुन्दरता पाप है? तब क्यों मुस्काते हैं, उषा क्यों हँसती क्या क्यों लजाती है, सरिता क्यों ती है, पर्वत श्री क्यों नाचती है? भी सुन्दर है तो क्या पुरुषों के हाथों के लिए? वह तो माली के हाथ की देखते रहते हैं कि किसी देव सिर चढ़ा दे या किसी के हृदय का हार दे।

अश्व०—स्त्री से पुरुष कब जीत पाया है। आज तेरा राज्य है। बोल ले बढ़-बढ़ कर। तो दे आज्ञा, मैं प्रस्तुत हूँ।

द्रौपदी—तो मैं आज्ञा देती हूँ कि गुरु पुत्र अश्वत्थामा का वध न किया जाय।

कृ०—कृष्णा, यह क्या कह रही हो?

भीम—देवी, यह क्या है? सोच कर समझकर कहिए।

द्रौपदी—सोच समझकर ही कर रही हूँ कि गुरु पुत्र अश्वत्थामा का वध न किया जाय।

कृ०—कारण देना होगा कृष्णा?

द्रौपदी—कारण यही कि अश्वत्थामा का वध तो हो चुका है।

युधि०—क्या देवी का व्यंग्य मुझ पर है?

द्रौपदी—नहीं महाराज। आचार्य का जैसा स्नेह अपने पुत्र से था वैसा ही गुरु पुत्र का अपने पुत्र सुव्रत से था। पर ..

अश्व०—पर, पर क्या द्रौपदी। मेरे पुत्र को क्या हुआ?

द्रौपदी—वह स्वर्ग जा चुका है।

अश्व०—(स्तंभित) क्या? मेरा पुत्र स्वर्ग गया? क्या कह रही हैं देवी द्रौपदी आप?

द्रौपदी—सत्य ही कह रही हूं।

अश्व०—नहीं सर्वथा असत्य है।

द्रौपदी—सत्य, नितान्त सत्य। आर्य सुधन्या साक्षी है। उसी ने पुत्र को लाकर मेरे हाथ में दिया। गुरु पुत्र क्षमा करना। मैं हाथ जोड़ती हूँ। मुझे खून उतर आया, मेरे पुत्रों के मुख सामने आ खड़े हुए। मैंने सुधन्या से लेकर सुव्रत तक को, आपके

पुत्र को पटक कर मार डाला। मैं अपराधिनी हूँ, गुरु पुत्र। पर धन्य हैं आपकी सती पत्नी सुधन्या को। ओह! कितना विशाल हृदय है उनका।

अश्व--(मुट्ठी बांधकर) दुष्टे, धन्ये, तू ने अन्त में यह कर ही डाला। वह मां नहीं चांडाली थी। मां तो है कृष्णा। तेरा हृदय है मां का, महारानी द्रौपदी। जगत में माताओं ने पुत्र के लिए प्राण दिये ही थे, पुत्र के प्राण न लिये थे। पर आज इसके विपरीत भी सिद्ध हो गया है। देवी, मैं एक वर मांगता हूँ।

द्रौपदी--क्या गुरु पुत्र।

अश्व०—एक बार मुझे छोड़ दिया ??? । मैं प्रण करता हूँ मैं शीघ्र लौट आऊँगा और शरीर समर्पित कर दूँगा। मैं वध का इच्छुक हूं पर कुछ समय बाद। एक बार मुझे जाने की आज्ञा दे दीजिए महारानी।

द्रौपदी—कहां विप्रवर?

अश्व०—अपने घर। मैं पुत्र भक्षिका सुधन्या का गला घोटना चाहता हूँ। मैं उसे दण्ड देना चाहता हूँ।

द्रौपदी—पर गुरु पुत्र। सुधन्या को तुम पा न सकोगे। वह मेरे कक्ष में सुरक्षित है। मैं यह जानती थी विप्र देवता। अपने पुत्र की मृत्यु से बिचलित हो गये हो। जब मेरे पुत्रों के प्राण हरे थे, जब सोते समय उनके सिर उतारे थे तो यह हृदय कहाँ था? सोचो गुरु पुत्र तुम्हें एक पुत्र से इतना दुःख हुआ, मेरे तो पांच थे। तुम्हें क्या पांच गुना दुःख न हुआ होगा?

अश्व—ओह संसार अब पलट गया। आओ कृष्ण, मेरा बध कर दो। इस सं[सार] में रहना उचित नहीं। मां ने [पुत्र] का बध करवा दिया। करो मेरा बध। मैं प्रस्तुत हूं। मैंने क्या-क्या सोचा अर्जुन मरने से पूर्व एक बात प्रकट [करता] हूं। मैंने सोच रखा था कि अपने [पुत्र] को ऐसा शस्त्रज्ञ बनाऊँगा जैसा न [हुआ] है और न होगा। मेरा अरमान था उसे ऐसा वीर और शस्त्र ज्ञाता कर[ूं] कि वह अपने पिता और प्रपिता का ब[दला] पांडवों से, पांडव पुत्रों से लेगा। बड़ा होनहार भी था। पर हाय, दुष्टा मेरे सोने का संसार भस्म कर दि[या]। पापिनी सुधन्ये तू नर्क में जायगी, न[र्क के] कीट तेरी देह खायेंगे, मैं श्राप देता [हूं]। मेरा हृदय गढ़ तू ने ढा दिया। जी [में] आता है, तू मिल जाय और मैं तेरा [रक्त] पी जाऊँ। सुव्रत, सुव्रत। कितना [सुन्दर] और सबल था वह (अश्रुपात)

कृ०—अरे अश्वत्थामा, तुम तो [स्त्रियों] के समान आँसू बहाने लगे।

अश्व—(क्रोध से) स्त्री स्त्री, स्त्री [भी] होती है, पति को मार कर सती होती [है], पुत्र को खाकर रोती है। मेरी स्त्री [भी ऐसी] ही थी। देवी, देवी द्रौपदी! क्षमा [करो] बहिन! मैं हाथ जोड़ कर क्षमा [मांगता] हूं। कहां सुधन्या और कहां तुम। पाताल की राक्षसी और तुम सुरलोक [की] दिव्य देवी। हाय मैंने अपराध कि[या]। दुर्योधन के कहने से और क्रोधान्ध [हो] तुम्हारे पुत्रों को नाश। आपको ...

मेघ समागम

महेन्द्र नारायण 'मस्ताना'
शिक्षक-प्रशिक्षण, महाविद्यालय, भागलपुर

सावन - भादो के स्वागत में नूतन - गीत सुनायेंगे हम
उर की सारी तपन मिटाकर रिमझिम में कुछ गायेंगे हम ।

काले - काले कजरारे घन
अनजान कहां से आ जाते
वन-विहगों के कोमल कर में
मधु-गायन बनकर छा जाते ।

मधु - गायन की लघुतृष्णा में, वीणा मधर बजायेंगे हम
सावन - भादो के स्वागत में नूतन - गीत सुनायेंगे हम ।

चपला की चमक निराली री,
जब चाँद - सितारे छिप जाते;
निविड़ - तिमिर के प्रांगण में तब
मीरा के पिय गिरिधर आते ।

मीरा की स्वर लहरी को ले, घर - घर में पहुँचायेंगे हम
सावन - भादो के स्वागत में नूतन - गीत सुनायेंगे हम ।

श्याम गगन को देख हमारा
नूतन मधुमय प्रांगण होता;
उमड़ - घुमड़ जब बादल आते
'कालिदास' का सावन होता ।

सावन के मृदु गायन में, झूम - झूम कर नाचेंगे हम
सावन - भादो के स्वागत में नूतन - गीत सुनायेंगे हम ।

'शरण' जी की साहित्य साधना

जगत नारायण सिंह
इतिहास विभागाध्यक्ष, देवघर कालेज

श्री दीनानाथ 'शरण' विश्वविद्यालय के बहुत ही कृति छात्र रहे—बी० ए० (आनर्स) और एम० ए० में इन्हें प्रथम श्रेणी मिली है। पेशे से प्रोफेसर हैं—गुरु गोविन्द सिंह कालेज (पटना) में। इनकी अध्ययन-योग्यता की झलक देवघर कालेज में ही छात्रों को मिल गई थी। प्रतिभा-सम्पन्न मुखमण्डल, वार्तालाप की स्वाभाविक सावलील पद्धति और भव्य प्रकाशमय ललाट से उनके व्यक्तित्व, चरित्र और उज्ज्वल भविष्य का अनुमान मुझे देवघर ही में लग गया था। 'शरण' जी से मेरी आयु का पार्थक्य अधिक ही रहा—कहां २४ साल का नवयुवक और [illegible]० साल का वृद्ध? किन्तु उम्र के [illegible] बावजूद, दिल वो दिमाग, रुचि व बौद्धिक अनुराग का चुम्बक जैसा आकर्षण बिल्कुल अनजाने को भी आत्मीय से बढ़ के 'स्वजन', बना देता है। 'शरण' जी के संसर्ग और उत्साह से मेरी विस्मृत 'साहित्यिक चेतना' और 'लेखन-अभिव्यक्ति', सोलह-सत्रह साल के बाद, फिर से जाग उठी है। सिर्फ इतना ही नहीं, आज प्रौढ़त्व के प्रथम चरण में साहित्य व संगीत से मेरा दिल व दिमाग, उत्साह व व्यक्तित्व फिर नवीनता के तरंगों में बढ़ रहा है। शरण जी का साहित्य का हार्दिक अनुराग, बौद्धिक आलोक, आकर्षक स्वभाव 'समधर्मी' [illegible] उत्साहित कर सकता है। अलम् विस्[illegible]... रेणु...अभी शरण जी पटने के महत्[illegible] साहित्यिक व सांस्कृतिक संस्था—'सा[illegible] संगम के प्रधान मन्त्री हैं। आशा है [illegible] भ्रष्टाचार, कृत्रिमता, क्षुद्र स्वार्थ, नकल[illegible] गुटबाजी के कुसमय में, दूषित वातावरण [illegible] 'शरण' जी से हिन्दी-साहित्य एवं रा[illegible] भाषा की ठोस, अनुकरणीय और सन्तो[illegible] जनक सेवा होगी। हिन्दी साहित्य के [illegible] ज्ञानवृन्द धुरन्धर—श्री शिवपूजन सह[illegible] श्री नलिन विलोचन शर्मा, श्री गुलाब [illegible] परलोक सिधारे हैं। बिहार प्रान्त में [illegible] विशेष कर वर्तमान राजनीति के कुचक्र [illegible] कुचाल से पृथक कोई प्रवीण या उदीय[illegible] प्रगतिशील साहित्यिक-समालोचक [illegible] मिलता है। मुझे उम्मीद है कि कुछ दि[illegible] में, बिहार के साहित्य क्षेत्र में 'श[illegible] जी साहित्य समालोचक के रूप में '[illegible] विराट शून्य' की बहुत कुछ पूर्ति कर सकें[illegible]

एक अच्छे समालोचक के प्रमुख [illegible] 'शरण' जी में भरपूर है। स्पष्टवादि[illegible] निर्भीक भावुकता, आत्मविश्वास, [illegible] विवेक, साहित्यिक ज्ञान, 'निरपेक्ष आलोच[illegible] लगन की तत्परता आदि अलंकारों से [illegible] जी विभूषित हैं। अच्छे विद्वान, [illegible]

...अच्छे वक्ता के साथ साहित्य का ...अनुरागी और विवेकी सुलेखक ...हुए 'शरण' जी का बौद्धिक व साहि- ...व्यक्तित्व उम्मीदों से परिपूर्ण है। ...छात्र जीवन में ही (एम० ए०) ...में 'शरण' जी ने 'छायावाद' पर दो ...लोचनात्मक पुस्तकें लिखी थी जो ...समालोचकों से प्रशंसित हुई हैं। ...जी की 'छायावाद' पर एक पुस्तक ...विश्वविद्यालय से (एम० ए०) ...में अनुमोदित है। बिहार के ...किसी साहित्यिक या समालोचक ...यौवन में ऐसी मान्यता—बिहार ...—नहीं मिली है। 'शरण' जी का ...नवनीत' विभिन्न उपयोगी विषयों ...भाव, संक्षिप्त, ठोस व सरल ढंग ...लिखित है। निबन्ध-रचना किसी भी, ...में एक विशिष्ट महत्व रखती है।

...सम्प्रति, मैंने 'शरण' जी लिखित ...'अधूरे सपनों का देश' पढ़ा जो ...रामचन्द्र शर्मा 'किशोर' की सह- ...से लिखा है। 'किशोर' जी अनन्त ...जीवन की चिर-नवीनता के कवि ...गंभीर, चुभते भावों के ललित गीत ...हैं। वर्षों के बाद मैंने एक उत्तम ...पढ़ा जो १११ पेज में चुस्त, ...व दर्द-दिल का दिलचस्प दास्तान ...इस उपन्यास में दो नवीन लेखक— ...सपनों का देश' के प्रवीण-वृद्ध ...से बहुत ऊपर-जीवन में यथार्थ ...आलोक फैलाते नजर आते हैं। ...जीवन, समाज, युग विभिन्न जटिल समस्या, कटु संघर्ष और विकृत असमंजस्य की धुरी में घूमता है। आज मानवता की ध्वनि-प्रतिध्वनि, व्यक्तिवादी विकास के साथ सामूहिक विकास की चुनौती व तकाजा विश्व के जन-जन, कण-कण में साहित्यिक, कलाकार, वैज्ञानिक, समाजसेवक, समाज सुधारक, बौद्धिक प्रगतिवादी लेखक को बिशाल व विशिष्ट कर्त्तव्य पालन का, महत्वपूर्ण दायित्व का निर्देश देते हैं। शिक्षा और छापे के विश्वमय, व्यवहार से साहित्य जनसाधारण में फैल रहा है। आज सत्साहित्य से व्यक्तित्व-निर्माण, जनरुचि की शिष्टता व परिमार्जन की आवश्यकता सर्वोपरि है। विशेषतः हिन्दी साहित्य का स्वतन्त्र भारत में विशिष्ट परम कर्त्तव्य है—समाज का उन्नयन, व्यक्ति का उन्नयन और संस्कृति का पर्य्यवेक्षण व परिवर्द्धन। कुशवाहाकान्त गोष्ठी के विकृत विकार युक्त लेखकों से, रेलवे स्टाल के घासलेटी सस्ते साहित्य से जनता में कुसाहित्य की विकृत कुरुचि भयानक रूप से, महामारी से भी भयानक कुपरिणाम से फैल रही है। व मानव धर्म का, इस भव्य विराट सन्देश का स्पष्ट निर्देश है। आखिर, वात्सल्य का स्नेह, जवानी का जोश, उमंग, प्रौढ़त्व का ज्ञान-अनुभव, शान्ति, सुख, सद्भाव, सामंजस्य यही मानव जीवन का यथार्थ श्रेय और अमूल्य पाथेय है।...

अनजाने जवानी की अपरिपक्वता से परिस्थिति की मजबूरी से अनुचित, गर्हित आचरण, गलती या पाप (विवेक विचार बहिर्भूत) निन्दनीय है, किन्तु पापी नहीं

रत्नाकर दस्यु आदिकवि वाल्मीकि हुआ था, जो मनुष्य से हुआ है वो फिर मनुष्य से हो सकता है। कोई भी मनुष्य फिर से सुधर सकता है। शान्ति सुख का जीवन पा सकता है। 'अधूरे सपनों का देश' में पात्रों का चरित्र-चित्रण, अन्तिम सामंजस्य व जीवन-सन्देश ऐसी ही मार्मिक व यथार्थ मान्यता से प्रभावोत्पादक हुआ है। अनभिज्ञ यौवन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, जीवन की उथल पुथल, उत्थान-पतन, के आज के, इस युग के उच्च शिक्षित मध्यमवर्ग का यथार्थ चित्र मिलता है। इस उपन्यास में बहका हुआ, विपथ में विकृत होने पर भी पात्र पाठक के सामने घृणित नहीं होता है। यह सहृदयतापूर्ण, मानव की दुर्बलता से महानुभूतिपूर्ण दिग्दर्शन सत्साहित्य का प्रधान सुलक्षण है। इस उपन्यास में घटनाओं का विन्यास, परिस्थितियों का वर्णन, प्रभाव और परिवर्तन स्वाभाविक मालूम होता है। मनुष्य में यौवन है, यौनतत्व यौवन का मुख्य गुण है रक्त मांस है, वासना-कामना, प्यास, अतृप्ति, तृप्ति, उच्छ्वास, आवेग, बुद्धि-विवेक—सब कुछ है। आखिर सृष्टि में प्रेम व श्रेय श्रेष्ठ बौद्धिक जीव मनुष्य के लिए ही है। यह उपन्यास भी सहज, स्वाभाविक रूप से मानव जीवन, चरित्र-स्वभाव परिवर्तन, अन्धेरा-उजेला का वैसा ही यथार्थ प्रतिबिम्ब है, शैली में अनुचित भद्दापन या भाषा में निन्दनीय अश्लीलता बिल्कुल नहीं है। वर्त्तमान समाज और राजनीतिक भ्रष्टाचार आदि का उचित परिस्थितियों में, मार्मिक विद्रूप भी 'शरण' जी ने लिखा है, जो विषयोचित एवं सारगर्भ है। यह उपन्यास जन-साधारण व वि[illegible] शिक्षित तरुण वर्ग के लिए एक मू[illegible] तत्व स्वरूप है। इससे बढ़ के, [illegible] हिन्दी साहित्य में, समयोचित सत्सा[illegible] सीमित पृष्ठों में (इस विज्ञान—व्याप[illegible] युग में अक्सर विरल और सीमित है) [illegible] का एक अभिनव निर्देशक है।

'शरण' जी ने कविताएँ और कहा[illegible] भी लिखी हैं। उनके छात्र-जीवन [illegible] लिखित कुछ कहानियां मैंने पढ़ी हैं [illegible] काफी अच्छी हैं। कहानी संग्रह 'नयी [illegible] नया आलोक'—में तरुण आभा का [illegible] आलोक है।

छायावाद की प्रशंसनीय समालोच[illegible] बाद शरण जी ने सम्प्रति (१९६[illegible] श्री तिलक लिखित महाकाव्य 'काल[illegible] की समालोचना लिखी है। इसमें [illegible] विन्यास, विश्लेषण, तुलनात्मक अ[illegible] यथेष्ट उदाहरण (विश्व साहित्य के वि[illegible] महाकाव्य से) निर्भीक विवेचना, मा[illegible] सहृदयता आदि गुणों से 'शरण' जी [illegible] समालोचक-साहित्यिक-व्यक्तित्व बहुत ही [illegible] हार व चमकदार हो निखरता है। [illegible] विचार से समालोचना का परिपूर्ण (Factual, Critical, Analyt[illegible] Illustrative, Comparative [illegible] से शरण जी ने तिलक व उनके महाका[illegible] विशद व सूक्ष्म सौन्दर्य एवं मर्यादा के [illegible] दिग्दर्शन कराये हैं।

अपने विचार से, 'शरण' जी [illegible] साहित्य में, 'उत्तम उपन्यासकार एवं [illegible]

...चक की हैसियत से निकट व दूर ...में -परिपूर्ण प्रकाश-स्तम्भ होंगे— बलवती आशा है। 'तरुण शरण' जी अठाइस साल की उम्र के भी नहीं ... आगे ३५।४० साल की लम्बी अवधि में हिन्दी साहित्य उनकी बहुमुखी साहित्यिक-प्रतिभा से कितना फूलेगा व फलेगा - यह भवितव्य और भविष्य ही बता सकता है।

पृ० ४४ का शेषांश

...में लज्जित हूँ। न जाने मैं क्या-क्या ...गया।

...—यही कि सुन्दर स्त्री विष है, ...सुन्दर है।

...—नहीं वासुदेव! द्रौपदी देवी ...मैंने विष समझा था, पर नहीं, विष ...स्त्री है।

...पदी "(हँसकर) और पुरुष तो सदा ...है।

...—विष न स्त्री है और न अमृत है ...विष और अमृत है स्त्री या पुरुष ...य।

...—कोई विष हो या अमृत, मैं तो अब जीवित न रहूँगा और न जीवित रहना चाहता हूँ।

द्रौपदी—तो आंखें मूँद कर बैठ जाओ, सिर झुका लो और भइया कृष्ण तुम खड्ग संभालो।

(अश्वत्थामा आंखें मूंद कर सिर झुका कर बैठ जाता है)

स्त्री कंठ—आंखें खोलो, आर्य पुत्र।

बालक कंठ—तात! तात! (अश्वत्थामा की गोद में)

अश्व०—अरे सुव्रत तू और सुधन्ये यह यह क्या? देवी द्रौपदी यह सब क्या है?

द्रौपदी—स्त्री का हृदय।

ज्ञान, कर्म एवं भक्ति के सामंजस्य पर ही मानवजीवन का भव्य भवन टिका हुआ है। आज की शिक्षा पद्धति में इसी चिर सत्य की प्राण-प्रतिष्ठा करनी है। इसके लिए केवल सरकार पर निर्भर रहने से काम नहीं चलेगा। विचारशील शिक्षा शास्त्रियों को नवयुग के अनुकूल नई राह बनानी है। इसके सिवा जन-जागृति का अन्य कोई मार्ग नहीं।

मं दा र शिखर से

शांति-पथ पर भारत के बढ़ते कदम

विश्व के तीन महान राष्ट्र---अमेरिका बृटेन एवं रूस के बीच परमाणविक बम परीक्षण बन्द करने के सम्बन्ध में जो समझौता हुआ है उसका सभी विचारशील व्यक्तियों एवं राष्ट्रों ने स्वागत किया है। इस समझौते के अनुसार जल, स्थल एवं वायु मडल के किसी भाग में उक्त परीक्षण का निषेध स्वीकार किया गया है। एशिया में भारत, शांति का सदियों से प्रहरी रहा है। इसने इस समझौते का स्वागत ही नहीं किया है बल्कि आगामी ८ अगस्त को उस पर हस्ताक्षर कर विश्व के सभी छोटे बड़े राष्ट्रों को शांति-पथ पर आगे बढ़ने के लिए उत्प्रेरित भी किया है।

चीन ने इस समझौते का यह कह कर विरोध किया है कि वह सर्वत्र बम परीक्षण को निषेध करने का हिमायती है। किन्तु उसका यह विरोध अजीब सा लगता है। यदि वह शांति का सच्चा समर्थक रहता तो जिस प्रकार अन्य विवेकशील राष्ट्रों ने आंशिक रूप से ही सही, बम-परीक्षण-निषेध के निर्णय का शांति मार्ग पर बढ़ते कदम मान कर समर्थन किया है उसी प्रकार वह भी करता और भूगर्भ में भी बम परी बन्द करने का आग्रह करता; यही न वह सभी प्रकार के शस्त्रास्त्रों के प्र निषेध के लिए निवेदन करता।

अब दुनिया के लोग चीन के जाल में नहीं फँसेंगे। सभी राष्ट्र रहे हैं कि उसके आस्तीन में अ एवं युद्ध के छुरे छिपे हुए हैं। समय है कि रूस, अमेरिका तथा शांतिप्रेमी राष्ट्र मिलकर चीन की को विफल कर दें अन्यथा शांति के आ में युद्ध के बादल छा जायेंगे और मा सभ्यता एवं संस्कृति के प्रतीक राष्ट्र नष्ट जायेंगे।

चीनी सेना का भारत-सी पर जमाव

इधर हजारों की संख्या में च विमानों का भारत-चीन-सीमा पर ज के कारण न सिर्फ भारतीय जनता की में बिजली दौड़ रही है बल्कि सभी शा प्रेमी राष्ट्र चिन्तित हो उठे हैं। अ

...ष्ट्रपति कैनेडी ने हर प्रकार की मदद का आश्वासन दिया है। रूस का रुख भारत के प्रतिकूल नहीं है। इसका ... यह है कि इन दिनों रूस-चीन में ...तिक मतभेद गहरा हो गया है। रूस ...व के नेतृत्व में शांति का मार्ग ढूँढ़ने लिए जहाँ प्रयत्नशील दिखाई देता है चीन स्टालीन की बिस्तारवादी नीति ...हाई देकर एशिया का नेतृत्व हथियाना ...ता है। उसे अपने जनबल एवं अपनी शक्ति पर गर्व है। अतः रूस भी अब ...साथ कहां तक भाईचारा का सम्बन्ध ...रख सकता है, यह सन्देहजनक है।

फिर भी भारत को अब बाहरी शक्ति ...रोसे ही नहीं बैठना है बल्कि सहस्रों की अपनी संस्कृति के आधार पर ...होकर अपने मनोबल, अपनी जन- ...एवं भौतिक शक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण ...के सामने रखना है।

विनोबा की चेतावनी

संत विनोबा ने बंगभूमि से अपने देश के ...नवक्रांति का संदेश प्रसारित किया ...चीन के हमले से रक्षार्थ उन्होंने सभी ...नीतिक दलों से निवेदन किया है कि अपने मतभेद भुलाकर जनता को उचित ...दिखलायें।

कांग्रेस के नेता श्री जवाहर लाल नेहरू ...सहयोगी श्री लालबहादुर शास्त्री ने इस ...कट की घड़ी में यह घोषित किया है कि देश रक्षा के प्रश्न पर सभी राजनीति दल मतभेद भुलाकर एक साथ प्रयत्न करने के लिए तत्पर हैं। विनोबा जी जनता के बीच से बोल रहे हैं, इसलिए उनकी बात विचारणीय है। आज वास्तविकता तो यह है कि आजादी प्राप्ति के सोलह वर्षों के बाद भी हमारी आर्थिक विषमता का अन्त नहीं हुआ है। इस संकटकाल में भी काला बाजार जीवन की आवश्यक वस्तुओं को निगल रहा है जिसके फलस्वरूप लोग अत्यन्त अभावग्रस्त, असंतुष्ट एवं दुःखी हैं। सरकारी आदेशों का पालन भ्रष्टाचारी नहीं करते। वे पैसे की धूल सरकार की आंखों में झोंककर जन-शोषण करने में तत्पर हैं। कांग्रेस दल में पद एवं थैली के लिए इतना अन्तर्द्वन्द्व है कि उन पर जनता का विश्वास अब उठता जा रहा है। अन्य राजनीतिक दलों में भी एकता कायम करने के प्रयास विफल हो रहे हैं। फिर भी बाहरी हमले से देश को बचाने के लिए साम्यवादीदल के वामपंथियों को छोड़कर सभी एक स्वर से तैयार होने की बात तो करते हैं परन्तु तदनुरूप आवश्यक कार्य नहीं कर पा रहे हैं। अतः विनोबा जी की चेतावनी सामयिक एवं ग्राह्य है। हम उनके स्वर में स्वर मिलाकर देश के सभी राजनीतिक दलों के नेताओं से निवेदन करते हैं कि वे देश रक्षा के प्रश्न पर एक सर्वमान्य कार्यक्रम बनाकर तुरन्त जनता के समक्ष प्रस्तुत करें। देश में नव-जागरण नव स्फूर्ति एवं कार्यशीलता का वातावरण तैयार करने के लिए यही सर्वोत्तम मार्ग दीख पड़ता है।

नेहरू जी का युवक-हृदय बोल उठा

नेहरू जी ने उस रोज सामुदायिक (वि)कास अधिकारियों एवं कार्यकर्त्ताओं की (स)मा में कहा कि उन्हें ग्रामीणों में सेवा-(भा)व के साथ जाना चाहिए। किन्तु जो (का)र्यकर्त्ता ऐसे अधिकारी के रूप में वहां जाते (हैं) मानों वे जनता से ऊपर के पद पर हैं (उ)न्हें समुद्र या पोखरे में फेंक देना (चा)हिए। उन्होंने यह भी कहने का युवको-(चि)त साहस दिखलाया कि जनता में इतनी (जा)गृति होनी चाहिए कि यदि मैं जनहित (के) अनुकूल कार्य नहीं करता हूँ तो वह (मु)झे भी हटा दे।

नेहरू जी का उक्त कथन सर्वथा समीचीन (है)। उदाहरणार्थ शाहाबाद जिलान्तर्गत (सि)मरी प्रखंड विकास पदाधिकारी के (का)र्यालय भवन की नींव गत कई वर्ष पहले ही (प)ड़ी। आधी दीवार भी अब उठ खड़ी (हु)ई है लेकिन कहा जाता है कि भवन (नि)र्माण कार्य में इसलिए जान बूझकर (वि)लम्ब किया जा रहा है कि पदाधिकारियों को मिसरी से आठ मील दूर डुमरांव नग(र) में स्थित भाड़े के कार्यालय-भवन में नग(र) जीवन की जो सुविधाएँ मिल रही हैं सिमरी में उपलब्ध नहीं। मजे की बा(त) तो यह है कि डुमरांव प्रखंड का कार्याल(य) सिमरी प्रखण्ड वासियों के लिए अपने कार्यालय से भी करीब एक मील नजदी(क) है। सिमरीप्रखण्ड बाढ़ पीड़ित क्षेत्र है बरसात में डुमरांव आने-जाने की कच्ची सड़क पुराना भोजपुर के सामने भैंसह(ी) नाला के पुल पर गंगा की बाढ़ से अवरु(द्ध) हो जाती है। जनता जान पर खेल क(र) प्रखण्ड देवताओं से भेंट करने भले ही जा(य) पर वे डुमरांव में ही आसन जमायेंगे।

इस तरह के अनेक दृष्टान्त हैं जिनसे पता चलता है कि नेहरू जी के अधीनस्थ अधिकारी उनकी बात नहीं सुनते। क्या नेहरू जी इस राष्ट्रीय संकट काल में अपने बहरे अधिकारियों को अपने युवक हृदय की आवाज सुनाने के लिए जादू की छड़ी का अवलम्बन ग्रहण करेंगे?

धर्म की गति सूक्ष्म होती है। मानव जाति के कल्याणार्थ जो कर्त्तव्य पालन होता है वही धर्म है। व्यक्तिगत, पारिवारिक या राष्ट्रीय स्वार्थ के लिए मानव-हित के विपरीत यदि हम आचरण करते हैं तो यह अधर्म है। आज संसार में अधर्म का ही राज है। ऐसा लगता है कि मानव घोर अंधकार-युग से गुजर रहा है। आपसी द्वेष, कलह एवं अविश्वास का रोग बढ़ गया है। इससे त्राण पाने के लिए सद्विचार का प्रचार करना आवश्यक है।

वैदिक अणुशक्ति

साधनाशील कवि में इड़ा, सरस्वती, और मही इन तीनों देवियों का सुन्दर स्वस्थिर सामंजस्यपूर्ण आवास अपेक्षित है। क्योंकि ये तीनों देवी ही सब प्रकार के भावों को देने वाली हैं। इड़ा, सरस्वती, महीः इन तीनों शब्दों के कई माने हैं। पर इन तीनों शब्दों के तीन प्रकार के गुण या वृत्ति से तात्पर्य है। इड़ा हुई स्वामित्व स्वामित्व को प्राप्त करने की प्रवृत्ति, सरस्वती हुई सामर्थ्य यानी स्वामित्व को भोगने की प्रवृत्ति, मही हुई दान यानी स्वामित्व को दान करने की प्रवृत्ति। तो कवि के अन्दर ये तीन प्रकार की वृत्तियों का यानी स्वामित्व को प्राप्त करने का, भोग करने का और दान करने का - स्वस्थ सामंजस्य अपेक्षित है।

कवि को अपना ध्यान सदा इस ब्रह्माण्ड व्यवस्थापक के केन्द्रीय शक्ति में स्थिर रखना चाहिए।

बगैर स्वयं कष्ट भोगे अपने सद्‌गुणों का प्रकाशन और विकास असंभव है।

दानशील सात्विक पुरुष राष्ट्र की सम्पत्ति है। समूह को ऐसा कार्य करना चाहिये जिस प्रकार के राष्ट्र गौरव पुरुष-रत्नों की शक्ति और प्रभाव बढ़े जिससे कि संसार लाभान्वित हो।

गुणवानों को गुणवान कहना और मानना ही स्वयं गुणवान बनने का प्रारंभ पाठ है।

विद्वान उन्हीं को कहना चाहिये जो समूह को परमेश्वर तत्व से परिचित कराते हैं।

विद्वान उन्हीं को कहना चाहिये जो इस ब्रह्माण्ड के विभिन्न शक्तियों, वस्तुओं के कार्यों और लक्ष्यों को पूर्ण रूप से समझे उन्हें समूह की भलाई के लिये इस्तेमाल करना जानते हैं।

उपर्युक्त प्रकार के विद्वानों के समूह कल्याण सम्बन्धी कार्यों के स्वस्थ संचालन के लिए ही राष्ट्र और समाज के सब प्रकार की शक्तियों और वस्तुओं का व्यय होना चाहिये, उनके सब प्रकार के व्यक्तिगत और सामूहिक अनुष्ठानों के भी लक्ष्य इन्हीं विद्वानों के सहायतार्थ होना चाहिये।

गुणवानों को गुणवानों के रूप में वे ही स्वीकार करेंगे जिन्हें स्वयं गुणवान बनने की उत्कट लालसा है।

घृत से सींचने पर अग्नि तेजस्विनी होती है। मन के बल से मनुष्य समाधि तक प्राप्त कर ले सकते हैं। इस शरीर को धारण करने वाला उस महा तेजस्वी अग्निकुल

...त्व को सद्गुणों और सद्व्यवहारों से सींचने से वह प्रज्वलित होकर प्रकाश... य रूप धारण कर सकेगा। ज्ञान प्राप्ति का भी यही एक मात्र उपाय है।

जो सद्गुणों के उपासक हैं, प्यार-प्रेम को सर्वत्र बढ़ाने वाला है और उत्तम और ...धना सम्पन्न पत्नियों से युक्त हैं वे ही देश के ऐश्वर्य को बढ़ा सकते हैं। जैसे अग्नि ... जिह्वा पवित्र है और वह जिसे भी छूती है उसे पवित्र करती है वैसे ही विद्वानों ... भी जिह्वा है।

यह ग्रहण शक्ति जिनमें है वे ही आनन्द को प्राप्त कर सकते हैं। नाना प्रकार विपरीत तत्वों और शक्तियों को एक साथ जुटा मिला कर चलने का सामर्थ्य जिनमें वे ही शक्ति सम्पन्न कहलायेंगे। वे ही रस बल, अन्न इत्यादि को पैदा भी कर सकते ...। सदा यज्ञ कार्य में रत उपासनाशील स्तुति के योग्य विद्वान पुरुष ही पवित्र रस, बल, ...न, अन्न आदि के भोगने का अधिकारी है यानी सर्वतो मुखी सुख पवित्र, साधना ...म्पन्न, तेजस्वी ज्ञानी पुरुष ही प्राप्त कर सकते हैं।

हमारे जवान दुश्मनों का मुकाबला करने में
जी जान से लगे हैं।

हम भी तीसरी योजना के लक्ष्य की पूर्ति में
जी-जान से लग जायँ।

बिहार की तीसरी योजना के लक्ष्य निम्नलिखित हैं—

१ खाद्यान्न की उत्पादन-क्षमता ८० लाख टन
२ सुनिश्चित सिंचाई की व्यवस्था ४० लाख एकड़ भूमि में
३ बिजली का उत्पादन १३३३ मेगावाट

प्रथम तथा द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में बिहार में खाद्यान्न के उत्पादन में ६० लाख टन, गन्ने के उत्पादन में ५३ लाख टन तथा जूट के उत्पादन में ६० लाख टन की वृद्धि हुई।

प्रथम एवं द्वितीय योजना काल में सिंचाई की सुविधा क्रमशः १० लाख एकड़ एवं २० लाख एकड़ भूमि में सुलभ थी।

बिजली का उत्पादन ५०० मेगावाट से बढ़कर ८०० मेगावाट हो गया।

राज्य में छोटे-मोटे अनेक उद्योगों की स्थापना हुई है जिनमें लोगों को रोजी-रोटी मिलती है। साथ ही, ये लघु उद्योग संस्थान जवानों के लिए पर्याप्त संख्या में बूट, जूते, सूती सामान, रूईदार जैकेट, स्वेटर, कम्बल आदि तैयार कर रहे हैं। इन लघु औद्योगिक संस्थानों को नागरिक सुरक्षा के अन्य साज-सामान तैयार करने के लिए भी प्रोत्साहित किया जा रहा है।

—जन सम्पर्क विभाग, बिहार द्वारा प्रसारित

पृष्ठ ८ का शेषांश

...पूछने से हिचकते नहीं यद्यपि तुम स्वयं तीन चार बच्चों के पिता हो। जरा बड़ोदा ...किसी लड़की से मजाक करके देखो तो। फौरन चप्पल पड़ जायगा उन खूबसूरत ...पर और तुम भी बन जाओगे बिल्ली चौबीस घन्टे के भीतर। हां, तो पाटण वाले ...में एक दिन मैं बैठा हुआ था। सामने की गली में चार पांच बच्चे खेल रहे थे। ...सात बरस के नीचे के थे। और सब गुजराती, एक अक्षर भी वे हिन्दी नहीं समझते थे। ...गाया— "तेरा मेरा प्यार!" मेरा तो कान खड़ा हो गया। हिन्दी! और गायन! ...प्यार का! तब दूसरे ने उस पर जोर दिया—"लाख मिटाये कोई, मिटा न सकेगा ...तेरा मेरा प्यार।" मैंने जाकर उन्हें देखा, देखता ही रह गया। ग्लानि से मेरा सिर ...। मैंने गुजराती में पूछा—और भी कोई गाना जानते हो तुम लोग? तब उन्होंने हँसते ...मुझे घेर लिया और वे कहने लगे — हम बहुत जानते हैं, सुनियेगा आप? मैंने कहा— ...वे गाने लगे "जो वादा किया वह निभाना पड़ेगा"। मैंने उन्हें रोकते हुए पूछा— ...कुछ? तो उन लोगों में से एक लड़की जोर से गरज कर गाने लगी—एक घर ...तेरे घर के सामने, तेरे घर के सामने।" तब दूसरे ने कहा —माधवन जी साहब ...गान ही अच्छा है—"लाख मिटाये कोई मिटा न सकेगा तेरा प्यार मेरा प्यार" जैसे ...लोग भगवान को रिझाने के लिये जपते हैं हरे राम हरे राम। उसी ...आजकल के हमारे कालेज के भक्त लोग सिनेमा स्वर्ग की उर्वशियों को रिझाने के लिए ...हैं "तेरा प्यार मेरा प्यार" फिर जपेगा, "दिल एक मन्दिर···न है ···" इन मूर्खों का ...मन्दिर नहीं, कब्र है। इन गीतों को रचने वाले कवियों को मेरा वश चलता तो काले ...की सजा देता। फिर न जाने क्या क्या बैठे बैठे वे गाते रहे। मैंने सोचा, बिहारी ...कौन बेहतर हैं? वहां के बच्चे रात दिन दुलहा-दुलहिन का खेल करते हैं। कोई ...दुलहनी, तो कोई दुलहा। तब व्याह होने लगते—कोई शिशु को दूध पिलाने ...। मैंने मन ही मन कहा - भारतीय जन मानस के विचार गति को उदात्त दिशाज्ञान ...के लिये पिछले अठारह बरस से मैंने काम किया, देश के कितने ही महापुरुषों ने ...किया—पर वाह रे राजकपूर, दिलीप कुमार, वैजयन्ती माला और मीना ...री—तुम्हीं लोगों ने सफलता प्राप्त की। हमें अपनी असफलता पर कोई दुख नहीं, ...कोई शिकायत नहीं। इस पतनोन्मुख भारत में तुम्हीं लोगों की सफलता संभव है। ...हमारे बच्चे आज हमारे हाथ से निकल गये। उनके लिये उनका अध्यापक घास है, बात ...बात पर उनकी बेइज्जत करते हैं, पर तुम्हीं लोग आराध्य देवी देवता हैं। हमें कोई डाह न ...किसी तरह अपनी इज्जत बचाते हुए बेहतर समय की प्रतीक्षा करता हुआ पड़े हुए हैं। ...मैं इस उमीद पर गुजरात घूमने गया था कि व्यापारियों और उद्योगपतियों ...का यह प्रांत जरूर सुवर्णमय होगा, गांधी बाबा की यह जन्मभूमि जरूर अलकापुरी

होगी। कुछ सीखने-समझने की चीजें अवश्य मिलेंगी। इनमें से एक दो राजनीतिक उपनेता और दल-संचालकों से मैंने बातें भी की। वे कहने लगे—"साहब, क्या देखने को मिलेगा? सभी दो नम्बर हो गये।" मैंने समझा नहीं। धीरे से कहा—"भाई, मैं गुजरात को तीर्थ-देश समझकर आया हूँ। दो नम्बर से आप का मतलब है?" उन्होंने बिगड़कर कहा—'आप भी किस जंगल से आये जनाब? नम्बर का अर्थ संसार जानना है" मेरी तो परेशानी बढ़ी। इतना महत्वपूर्ण term और मैं उसका अर्थ नहीं समझ रहा। उन्होंने हँसते हुए पूछा—'चार सौ बीस का अर्थ समझते हो?' मैंने कहा—'हां भाई, इतना तो ज्ञान मुझे प्राप्त है। चार सौ बीस माने बेइमान।' उन्होंने और भी हँसते हुए कहा—'दो नम्बर का माने भी है, बेइमान, चोर इत्यादि! गुजरात पूरा दो नम्बरों से भरा पड़ा है। गांधी मूर्ख थे कि यहां जन्मने आया।' मैंने कहा—"उद्योग धन्धों में गुजरात सर्वप्रथम होगा या हो रहा होगा। यह सुनते ही झल्लाते हुए वे जोर-जोर से कहने लगे—"कभी नहीं, कभी हो भी नहीं सकता। यहां के पैसे वालों का नाम शाम को ही आप ले सकते। ये पापी लोग प्रांत का निर्माण क्या करेंगे? उद्योग धन्धे में महाराष्ट्र सब से आगे है। बम्बई से लेकर पूना तक हर जगह सिर्फ इंडस्ट्री ही इंडस्ट्री है। बाद पंजाब का नाम है। महाराष्ट्र और पंजाब के लोगों को ही वह फिक्र है कि देश धनी हो।" मैंने धीरे से कहा 'आपने फिर एक पहेली मेरे सामने रखी।' आपने कहा—यहां के पैसे वालों का नाम शाम को ही आप ले सकते। इसका अर्थ मैंने नहीं समझा।' वे फिर जोर-जोर से हँस पड़े और कहने लगे—'अरे भोले, बिहारी सभी इसी तरह क्यों होते हैं? सब बिल्कुल सीधे भेंड़ हैं। तभी तो राजकोट और अहमदाबाद में भैया बनकर घूमते हैं।' मुझे फिर कुतूहल हुआ। मैंने कहा—साहब, बिहारी भैया बन कर अहमदाबाद में घूमते हैं? इसका भी अर्थ मैंने नहीं समझा और मैं भी बिहारी नहीं, मद्रासी हूँ।' वे अब रस लेते हुए मेरी ओर देखने लगे—ओ मद्रासी हैं! तो जाकर टाइप कर! अभागे सब! जाकर मारवाड़ी का हिसाब देख! तुम लोगों के जैसे मूर्ख भारतवर्ष में दूसरा कोई एक जाति नहीं। बिहारी भोले हैं अवश्य, इसलिए भैया बनकर अहमदाबाद राजकोट में घूमते हैं। पर तुमलोग और भी अधिक... भैया का अर्थ है मोटरी ढोने वाले, मोटिया, समझा या नहीं? शहर में सामान ढोने का काम बिहारी यही काम करते हैं इस देश में और मद्रासी टाइप करते-फिरते और अंग्रेजी सुनाते, शुद्ध तमिल अंग्रेजी।" अब मेरी आवाज में भी गर्मी आयी। मैंने कहा—राजेन्द्र बाबू और जयप्रकाश जी बिहारी ही तो हैं।' उन्हें भी जोश आया, कहा—समझा आप क्यों उन देवताओं का नाम लेते हैं? बिहार के आदमी कर्महीन हैं ही। आप कहिये। मैंने कहा—'साहब, मद्रासी होकर भी मैं बरसों से बिहारी हूँ।

नहीं कर सकते। यह तो अपमान है।' ... *
जाकर पहले अपने लोगों की हालत सुधारो। यह युक्त मार्मिकी
ढोने इतने ज्यादा तादाद में बिहार के आदमी पहुँचते और मद्रास के आदमी
करने? पहले आप यह बताइये कि मेरे गुजरात के आदमी बिहार और मद्रास
प्रान्तों में पैसे वाले बनकर कोठी बनाकर उसमें आराम से कैसे रहते हैं? ऐसा
!" अब मुझे भी गुस्सा आया। मैंने कहा—'इसलिए कि आप के आदमी सब दो
हैं और हम सब एक नम्बर हैं।' मैंने फिर कहा—'अहमदाबाद और राजकोट
बड़ौदा में औरतें रेलवे स्टेशनों में ठेलागाड़ी क्यों खींचती हैं?' उन्होंने गर्व से
-यह शान है! इज्जत का काम है। व्यभिचार करने से बेहतर है आप बड़ौदा
एक जगह हिन्दुस्थान में कहीं नहीं पायेंगे। बड़ौदा की आधी औरतें सदा साइ-
कल पर रहती हैं। जाकर देखिए। और तुमलोगों की औरतें कहां रहती हैं किस
हालत की हैं यह भी समझिए।" मैं चुप हो गया। सोचा, सचमुच बड़ौदा देखने
का शहर है। प्रत्येक भारतीय को एकबार बड़ौदा जाना चाहिये। सर्वत्र लड़कियां
लड़कियां हैं और बिहार के शहरों में घूमो तो कहीं भी दवाई के लिये भी एक औरत
दिखाई देगी। सब अपनी जाति कुल धर्म को निभाते हुए अन्दर हवेली में ही बैठी
हैं और बाहर परदेश में उनके मर्द जाकर भैया बन कर घूमते हैं। एक राजेन्द्र
से कितनी इज्जत बढ़ेगी, हजारों-हजारों तो भैया हैं। मेरी सदा से यह राय
है, बिहार यू० पी० के लड़कों को अन्य प्रातों के विश्वविद्यालयों में जाकर पढ़ना
चाहिये। जरूर वे कुछ दूसरा ही बनकर लौटेंगे। वह सज्जन अब धीरे से कहने
—भाई, गुजराती सभी अब भ्रष्ट हो गये हैं। इनके जैसे बेइमान अब मारवाड़ी
नहीं। इसलिये लोगों का कहना है कि इनलोगों का नाम सबेरे नहीं शाम को लेना
चाहिए क्योंकि सबेरे इनका नाम लेने से दिन भर खाना नहीं मिलेगा। शाम को नाम
लेने से खाना न मिलने पर भी कोई हर्ज नहीं, पड़ा सो रहेंगे। अब समझा या नहीं?
हँसते-हँसते मेरी बुरी हालत हो गयी। मैंने कहा—बन्धु, मैं तो यहां तक कहता हूँ कि
किसी भी भारतीय को सबेरे उठ कर देखना नहीं चाहिए। जरूर खाना नहीं मिलेगा
हम सभी दो नम्बर हैं। इसलिये अक्सर मैं सबेरे उठते ही किसी महापुरुष की तस्वीर
देख लेता हूं और किसी तरह दिन काट लेता हूँ। उस गुजराती सज्जन ने गंभीर होकर
कहा—हां, मगर हमें इस तरह हँसना नहीं चाहिए—यह समस्या रोने की है। इतना बड़ा
और प्रतापी यह धर्म प्रधान देश का जहां प्रत्येक सौ आदमी के लिये एक एक मन्दिर है
यह परिहासजनक हाल!"

गुजरात की एक-एक बात मैंने जो देखी सो सब लिखने लगें तो एक पुस्तक ही बन
जायगी। एक ही चीज ने मेरी तबियत खुश कर दी। वहां के गाय बैलों को देख

होगी । कुछ सीखने-समझने की ? जैसे एक एक बैल ! भागलपुर के गाय के जननेता और दल-संचालकों से शायद वे संसार के किसी भी देश के गाय बैलों से बेहतर थे । पर ओदेसा—हाय रे भारतीय नर-नारी, शायद संसार के किसी भी देश के स्त्री-पुरुष तुम लोगों से अधिक सच्चे हैं, ईमानदार हैं, देश प्रेमी और कर्म कुशल हैं, फिर भी इन पंक्तियों का लिखनेवाला खुश है एक चीज देखकर, सिर्फ एक चीज ही देखकर जनता की आवाज भी निस्सन्देह बुलन्द होने लगी है । वह अब समझने लगी है काला बकरा कौन और उजला बकरा कौन ! वह अब समझने लगी है ठेकेदारों के बच्चे बिलायत पढ़ने कैसे पहुंच जाते और उनलोगों को, जिनका नाम अभी लेना नहीं चाह रहा हूँ क्योंकि यह सबेरे का समय है, मुफ्त अम्बासडर कारें मिल जाती हैं ।

Regd.

"Nothing extraneous belongs to me
Nor I belong to any of these,
This is the truth to be ever felt,
For freedom, beauty, health of self.
My self is one, as crystal pure,
Ever eternal, the seer of all,
Outer things which fall to lot,
Are mere passing fruits of deeds"

—Jaina Sutras

मन्दार विद्यापीठ प्रेस में आनन्द शंकर माधवन द्वारा मुद्रित एवं हिंदी निर्माण परिषद् द्वारा प्रकाशित

प्राच्य भारती

सितम्बर, १९६३

*

कली चाहती है कि वह खिले। खिलने पर वह चाहती है कि नहीं झड़े। सत्ताधारी लोग व्यवस्था में परिवर्तन नहीं चाहते, शान्ति ही पसन्द करते। जिसके हाथ में सत्ता नहीं, मगर पाने की आशा रखते हैं वह व्यवस्था में सुधार माँगेगा ही। जिनके सामने सब प्रकार से चारों ओर नैराश्य ही नैराश्य है वे क्रान्ति का स्वप्न देखेंगे। जब देव सोने लगते तो असुर जाग उठते। सूरज को देख यह न समझिये कि रात आयगी ही नहीं, रोगाणुओं का एकदम नाश होता नहीं। अगर महामारी के अणु सत्य है तो स्वास्थ्य भी सत्य है। मरण सत्य है तो निसन्देह अमरत्व भी सत्य है। पवित्र होना पुरुष का पुष्पित होना है। अमृत का अस्तित्व अवश्य है। वह सद्विचारों और सद्भावनाओं के रस से निर्मित होता है। अपवित्रता और बेइमानी मरण का अग्रणी बनकर आती हैं। पारिजात मुरझायगा नहीं। अक्षय सौरभ उसमें सन्निहित है। रश्मिवान सूरज कभी गरीब नहीं बनता। मानव पारिजात बन सकता तथा सूर्यानुरूप हो सकता है। यह संभाव्यता ही उनके जीवन का एक मात्र बल और सुख है और यही उस पर परमेश्वर की सनातन मेहरबानी भी है।

×

हिन्दी निर्माण परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर
बिहार

हरिवल्लभ नारायण पारितोषिक

का चौथा आयोजन

प्रथम जनवरी से प्रारम्भ हुई अवधि के लिए इस परिषद् ने निबंध प्रतियोगिता रखी थी। विषय था—'भारत-चीन सीमा-समस्या का समाधान'। मगर अबतक कुल पांच रचनायें आयी हैं। कमसे कम पन्द्रह रचनायें नहीं पहुँची तो प्रतियोगिता नहीं की जा सकती। हमें दुःख है, कोई लिखना ही नहीं चाहते। इस प्रतियोगिता में भाग लेने वाले व्यक्तियों को योग्यता क्रम के अनुसार ५१) ४१, ३१, २१, ११ रुपये के पांच पुरस्कार प्रदान करने की व्यवस्था है। निबंध मौलिक, अप्रकाशित तथा अप्रसारित होना चाहिए। कृपया रचनायें ३० सितम्बर तक निम्न पते पर अवश्य भेज दें। पुरस्कार की राशि पुरस्कृत रचनाकार को तुरन्त भेज दी जायगी।

मंत्री,
हिन्दी निर्माण परिषद्

पो०—मंदार विद्यापीठ,
जि०—भागलपुर, बिहार

प्राच्य भारती

(हिन्दी निर्माण परिषद् की मासिक मुख पत्रिका)
बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत
सम्पादक
वार्षिक चन्दा ५) • आनन्द शंकर माधवन • प्रति अंक ५० न० पै०
सितम्बर—१९६३ [अंक ४४

इस अंक में

सम्पादकीय

"श्वान-युग"

भड़क न जाना पाठक। न मुझ पर बिगड़िये ही। यह मेरा दिया हुआ नहीं है। भला मुझ में इतनी हिम्मत कहां? गरीब लेखक, कर्ज और परेशानि से त्रस्त यह मूर्ख सम्पादक क्या हिम्मत कर सकता है केनेडियों, मैकमिलनों कु वार्डों, कीलरों से सुसज्जित इस आधुनिक सभ्य युग को "श्वान-युग" कह सके। वह हिम्मतवाला कौन था यह आपको बताना पड़ेगा। आप तो बहुत-बहुत हिम्मतवालों जानते होंगे—राजनीतिक शेरों को जो राजनीतिक गाय-बकरों को खा खाकर चूसने में हिम्मत दर्शाते फिरते हैं, समाज के सिंहों को जो समाज के भेड़-चूहों खून चूसने में हिम्मत दर्शाते फिरते हैं, आर्थिक इन्द्रों को जो अर्थ के बछड़ों को करने में हिम्मत दर्शाते फिरते हैं और नित-नित नव-नव देवांगनाओं को अपनी में कर लेने को अद्भुत कला दर्शाते फिरते हैं, कलम के महा प्रतापी हनुमानों को सैकड़ों रावण-नगरियों को निमिष मात्र में ही भस्म कर डालने का साहस रखते हैं, धर्म के युधिष्ठिरों को जो रात दिन सैकड़ों द्रोणाचार्यों के समक्ष झूठ बोलकर अप काम निकालने का कूटनीतिक साहस दर्शाते हैं। मजलिस को दहलानेवाले प्लाटफार्म वीर, हीरो सिनेमा के, हीरो खेल के, हीरो डकैती के, हीरो जादू के, हीरो हड़ताल के हीरो प्यार के और लड़की लुभाने के, हीरो हर कार्य और हर करम के, विशेषज्ञ हर चीज़ के समान रूप से—भाई आप तो सदा से, सर्वत्र हिम्मतवालों से ही घिरे हुए हैं। बताया जाय कौन था वह सत्यकामा जिसने नानामुखी चेतनाओं से सुसम्पन्न और दृढ़ इस बेजोड़ वैज्ञानिक बुद्धि-युग को एकदम पूर्ण 'श्वान युग' कह डालने का साहस किया? आप तो अभी शायद नेहरू जैसे किसी राजनीतिक वीर का नाम स्मरण करते होंगे जिन्होंने क्रोध और जोश में आकर बिहारियों को भटियारा कह डाला था मगर मद्रासियों और बंगालियों को कहने की बेवकूफी नहीं दर्शायी यद्यपि करम-धरम में बिहारी कांग्रेसी और मद्रासी-बंगाली कांग्रेसी सभी समान रूप से एक रंग और एक ढंग के हैं। आश्चर्य है साहब, क्रोध और जोश भी स्थान और पात्र देखकर बहने लगते हैं। आप स्वयं भी अपनी उस बेचारी पत्नी पर और उन असहाय नौकरों पर जितने रोब

...प्रताप दर्शाते हैं उतने अपने अफसरों और आप से भी ऊंचे स्तर पर प्रतिष्ठित ...ओं के समक्ष नहीं दर्शाते। मद्रासी और बंगाली कांग्रेसी शायद अंग्रेजी में फौरन ... दे देता यही ख्याल नेहरू जी को आया होगा इसलिये उन्हें भटियारा कहने ...साहस न किया हो, जो बेचारे हाय हाय, बिहारी कांग्रेसी के बश और जोश के ...की बात थी। अंग्रेजी धड़ाधड़ बोलने वालों और चुस्त अंग्रेजी पोशाक पहनने ...को नेहरू जी के दरबार में सहज प्रवेश और सुगम तरक्की मिल जाती है और, बेचारे बिहारी देखते ही रह जाते हैं! हे भगवान, वह असहाय नजर, वह अभि... भरी दृष्टि मद्रासियों की ओर! देखने लायक यह दृश्य भी। सुन ओ भोले ... हिन्दीवालों, बात सार की मैं कहता हूं। इस सुवर्ण भारत में अंग्रेजी रहेग... ...नों या दासी बन कर नहीं, रानी और साम्राज्ञी बन कर रहेगी, अनन्तका... ...हां की भाषाओं पर वह शासन करेगी। हिन्दी क्या सिर उठा सकेगी साहब ...क साड़ीवाली तुलसी पिंडा पूजनेवाली हिन्दी क्या मुकाबिला कर सकेगी कील... ...ों की? इसमें कुछ दम रहता और इनकी संतान के भीतर भी अगर रग रहत... ...जो दिन उठ खड़ी हो गयी होती और चतुर्दिक अपना प्रकाश फैलायी रही हो... ...न दिन यह देश गणतन्त्र घोषित हुआ। अब स्थिति यह है कि अगर बुद्धिमा... ...प्रतिष्ठा के साथ जीवन-यापन करना है, मद्रासी कलक्टरों और कमिश्नरों ...जन-सम्पर्क पदाधिकारी और पंचायत आफिसर बन कर मद्रासी अंग्रेजी ...क दमक में नीचे बेसुध जीवन नहीं व्यतीत करना है तो शान से अंग्रेजी ...ता हासिल करें और संसार को दर्शा दें, देश के राजनीतिक और शासन के स्वामी ले... ...देख लें कि भोजपुरी और मैथिली अंग्रेजी तमिल और मलयालम् अंग्रेजी से सु... ...अधिक मोठी है।

इस हिम्मत वाले का पता चलाने के प्रयास में संभव है अब आप कलम ...वाली किसी सम्पादक-प्रवर का स्मरण करते हों जो रात दिन बरसात के कुकुरमुत्ते ...ताओं को निर्माण करने में और नेस्तनाबूद करने में कमाल सफलता हासिल ...ई है। द्रौपदी वस्त्रहरण के समय दर्शकों को यह भ्रांति हुई थी कि "नारी ...साड़ी है या साड़ी बीच नारी है।" उसी तरह इन दिनों प्राच्य भारती सम्पादक ...को भ्रांति हो गयी है कि इन सम्पादकों की जेब में नेता हैं या नेताओं की जे... सम्पादक हैं या दोनों की जेब में दोनों हैं। इतना ज्ञान तो हासिल कर सका हूँ कि ...पुण्यभूमि आर्ष भारत में सिर्फ उसकी ही नेतागिरी जमेगी जिसकी जेब में सम्पादक चुपचाप पड़े ऐश आराम कर रहे हैं और उसकी सम्पादन कला शासन से चमक उठेगी जिसकी जेब में दस मशहूर बड़े-बड़े नेता सु... ...सांस ले रहे हैं। हम यह भी ज्ञान प्राप्त किये हुए हैं कि सारे ही सम्पादक सं...

कुबेरों के पाद सेवक हैं और इसलिये वे अपने कलम द्वारा अपनी उस विशिष्ट
चेतना का नहीं, उन महाप्रभुओं की हित-चेतना का ही परिचय दर्शाते हैं। अब
यही बाकी है कि देश की बागडोर किसके हाथ में है—राजनीतिक प्रभुओं के या
ना रहस्य भरे स्वामी इन कुबेरों के। अगर इसका उत्तर सही-सही हमें मिल
कि चुनाव संघर्ष के लिए कुबेर पूंजी क्यों लगाते हैं और किसी-किसी उम्मीदवार
को अपना निजी नुकसान अनुभव करने लग जाते हैं तो स्थिति बहुत हद तक हमें दिखाई
देने लग जायगी।

यह भी संभव है उस हिम्मत वाले की खोज में आप धर्म के किसी युधिष्ठिर
की ओर ख्याल करते हों या किसी प्रज्ञ धन-कुबेर की ओर! क्योंकि इन दोनों की
अभिन्नता अनादि काल से स्थापित है और अनन्त काल तक अक्षुण्ण भी रहेगी। इसलिए
इन दोनों के विचार और हित को सम्यक् रहता है। मगर सोचना यही है कि इन
इस बात को तकलीफ या शिकायत है कि इस सुवर्ण युग को उन्होंने श्वान युग कह डाला
न लोगों की गद्दी सलामत है ही, रहेगी भी तो क्यों वे बेकार कुछ अनाप-शनाप
क कर व्यर्थ उपद्रव खड़ा करेंगे!

तब वह हिम्मतवाला कौन है? आप शायद सोचते होंगे जरूर वह कोई पागल
कवि होगा। आप अपने समर्थन में यह भी कहेंगे कि कवि ही ऐसा एक विशिष्ट वर्ग
जिसे जो मन चाहे बोलने और लिखने का लाइसेन्स प्राप्त है। इसके प्रत्युत्तर
में कहूँगा हाँ अब आप ने ठीक पकड़ा है। अपने किसी एक लेख के सिलसिले में
एक बार लिखा था, हिन्दू इतिहास भारतीय इतिहास का एक लज्जायुग है और
नवीय इतिहास का एक लज्जाजनक अध्याय है। इस पर विद्वानों ने मुझे मूर्ख कहा,
के युधिष्ठिरों ने मुझे अहंकारी कहा, राजनीतिक नेताओं ने मुझे पागल कहा।
अब यहाँ आप के सामने एक ऐसे आदमी को पेश कर रहा हूँ जो पूरे आधुनिक युग
ही, इस महान संस्कृति को ही श्वान युग कह रहा है। जिन्दाबाद गुरू! तुम्हें मैं
ना गुरु ही मानता हूं। तारीफ यह हिम्मत भी! निस्सन्देह आज तक के संसार के
इतिहास में एक तू ने ही सच कहा। बाकी सभी सिर्फ डींग ही हांकते रहे हैं, कवि भी
कार भी, नेता भी, राजा भी। पर तू ने तो बिलकुल विशुद्ध सत्य ही कह डाला
सत्य बोलने की तुम्हारी हिम्मत विश्वविख्यात भी हो गयी है। तभी तो तू ने एक
लिखा, "अगर मैं पांच मिनट सच बोलूँ तो मेरे पास कोई नहीं आयगा, अगर
पन्द्रह मिनट सच बोलूँ तो मुझे देश से निकाल दिया जायगा और अगर मैं आधा
सत्य बोलूँ तो मुझे फांसी पर चढ़ा दिया जायगा।" तभी तो तुम्हें स्वयं अपना देश
अमेरिका भाग जाना पड़ा। संसार में जिस किसी ने सत्य बोलने की हिम्मत
की उसका क्या नतीजा बहुमत ने निकाला इसका इतिहास साक्षी है। सुकरात से

...गों तक के पुरुष पारिजातों का जीवन इसका ज्वलन्त प्रमाण है। पाठक, ...ता हूँ आप के दिल में अभी क्या उत्सुकता है ? आप उनका नाम सुनना चाहते ...घबड़ाइये नहीं। और परेशान न करूँगा। बताये देता हूँ। रवीन्द्रनाथ के बाद ...देश का वह कौन महाकवि था जिनकी पुस्तकें विश्व की प्रायः सभी भाषाओं में अनू-...हो गयीं ? वह कौन अमर विभूति था जिनकी रचनायें लाखों की तादाद में ...का आदि पाश्चात्य देशों में बिकीं ? वह कौन कवि था जो एक अद्भुत ...कार और अद्वितीय दार्शनिक भी था जिसे अपनी मातृ भाषा अरबी के प्रति ...प्रेम था ? उसका नाम है खलिल जिब्रान । सीरिया के माऊं... ...प्रांत के बशेरी गांव के एक प्रतिष्ठित परिवार में इनका जन्म हुआ था। इस ...णीय और अविस्मरणीय कवि ने ही आज के इस सर्वशक्ति सम्पन्न युग को 'श्वान युग' ...की हिम्मत की थी। अब प्रिय पाठक, आप ही बतावें, कवि ने ऐसा क्यों कहा ...गह उच्च शिक्षा प्राप्त हम संभ्रान्त कुल के लोग श्वान संस्कृति के कहाँ तक निक... ...वाह रे कवि ! तुम्हें लाख-लाख कोटि-कोटि प्रणाम ! हे प्रभु, इस गरी... ...को जिब्रान जैसे दस पुत्र पैदा होते ! हिन्दी को विश्वभाषा के प्रतिष्ठित प... ...ऐसी लोकोत्तर महान विभूति ही आरूढ़ करा सकती है न कि हम नालायक लेख... ...सदा अपने पारिश्रमिक और कैरियर की ही फिक्र में रहते हैं। न जाने इस प्रक... ...अद्भुत विभूति संचय का क्या रहस्य है ? जिब्रान की महान रचना 'दी प्राफे... ...जने नहीं पढ़ी उसका इहलोकवास व्यर्थ है। उनका एक-एक विचार एक-एक अति कोम... ...न्दन तुम्हारे लाखों मन्त्री-पद और बैंक बैलेंस से भी कोटि-कोटि गुना श्रेष्ठ है। कि... ...धन कुबेर और मन्त्री प्रवर मर गये। राजेन्द्र बाबू को भी लोग भूल गये... ...ब्रान की वह अमरवाणी—"दया आधा न्याय है" किसके दिल को पुलकित नहीं ...रती, किसके पाषाण हृदय को आन्दोलित करके यह पूछने को प्रेरित नहीं करे ...पूरा न्याय क्या है ? हे मेरे गुरू, तुम्हारा उस वाक्य को यह तेरा बेवकूफ चेला ...सता है—दया आधा न्याय है तो प्यार ही पूरा न्याय है। प्रिय पाठक, अब हमा... ...क्या हम न्यायशील हैं ? और अगर नहीं तो बनने में कोई पैसा खर्च है ? ...फि... ...बुनाने का श्रम करना है ? सिर्फ हमारे चाहने की देरी। किस क्षेत्र में ह... ...आपके व्यवहार और विचार स्वस्थ, दुरुस्त, उदात्त और महान है ? सार्वजनिक ...कारों को जाने दिया जाय। पारिवारिक मामलों में भी क्या हमलोगों का प्रि... ...व्यवहार बढ़िया है ? एक उदाहरण मैं पेश करता हूँ। हाल ही की घटना है... ...एक दिलचस्प आदमी से मुलाकात हो गई। वे कहने लगे—'साहब, शादी कर... ...ही बुद्धिमानी है। एक पत्नी दस नौकर के बराबर है। अपना चैन और आराम ...मैंने कहा—"बन्धु, मैंने ऐसे-ऐसे वीरों को भी देखा है जो अपनी पत्नी के ...

ते और आंखें कड़ी करते ही एकदम चूहे बन जाते हैं और बाहर अपने अन्तरंग मित्रों
और फिर अपनी लेखनी द्वारा भी प्रकट करते रहते हैं कि औरत सब प्रकार से माया है,
ल्कुल नरक है, एकदम जंजाल और आफत है। उस आदमी ने इसके उत्तर में अत्यन्त
युक्त वचन कहा—"मुझे उन मूर्ख मर्दों पर तरस आती है भाई। अकल है नहीं तो
गा ही। इस संसार में सभी कुछ एक-एक किस्म के बिजिनस ही हैं। बिजिनस में
तरक्की कर सकता है जिन्हें बिजिनस का गूढ़तम सिद्धान्त मालूम है। मर्द का
से बड़ा बिजिनस उसकी पत्नी है। इसी में जो कमाल सफलता प्राप्त कर लेते हैं
ही संसार में सर्वत्र सर्व विजयी बन कर घूमते हैं।" मैंने कहा—"तब तो टालस्टाय
ति बड़े-बड़े साहित्यकार हारे हुए बिजिनसमैन हैं।" उन्होंने रस लेते हुए कहा—
लस्टाय मूर्ख था साहब। असफल बिजिनेसमैन ही पुस्तकें लिखते हैं। सारे ही साहि-
र बेअकल के अव्यवहारिक पाखंडी हैं। ये सारे के सारे लेखक कवि और शिल्पकार
दगी भर मुफ्त रोये हैं। आप सफल एवं अकलमन्द व्यवहार कुशल पुरुषों को देखना
ते हैं तो राजनीतिज्ञों की ओर देखा करें। जैसे निम्बू से रस चूस-चूस कर लिया
ा है वैसे ही राजनीतिज्ञ संसार के प्रत्येक वस्तु से सुख लूटते हैं। मैं इनलोगों पर
हूँ जनाब। प्रत्येक राजनीतिज्ञ जन्म से ही ज्ञानी हैं। ये सभी कुशल बिजिनस-
भी हैं। तभी तो बगैर मेहनत किये विश्वविद्यालयों से इन्हें मुफ्त डाक्टरेट की
धि मिल जाती है, समाज भी बेकार इनकी जयजयकार करता, इनको नेता
ता हुआ इनके चारों ओर मँडराता रहता है, और आप के जैसे बेअकल साहित्य-
भी न जाने क्या देखकर और सोचकर इनके लिये अभिनन्दन ग्रन्थ तैयार करने
पनी कलम तोड़ते रहते हैं। मेरा दावा है, प्रत्येक राजनीतिज्ञ एक-एक सफल पति भी है।
अपनी पत्नी को एक बकरी से अधिक कुछ नहीं समझता और पत्नी भी चूँकि वह
है अपने इस राजाधिराज पति पर गर्व अनुभव करती रहती है। पर साहित्यकार
पत्नी को राधिका समझने लगते हैं और पत्नी भी तब अपने उस मूर्ख पति को
कार की दृष्टि से देखने लगती है। नतीजा यह कि यह महान लेखक रातदिन छाती
पीटते जीवन काट लेते हैं।" मैं तो अवाक् रह गया पाठक, उस अनुभवी बिजिनसमैन
ुग्ध हो गया और नम्रता से निवेदन किया—"प्रियवर, जरा मुझे भी ज्ञान दिया जाय।
भी अब चैन आराम की फ़िक्र लग गयी है।" वे हँसते हुए और मेरी पीठ ठोककर
द करते हुए बोले—"सुनो प्यारे, और ध्यान से समझो भी। बिजिनस-विज्ञान का
और अतिगूढ़ सत्य यही बताता है कि प्यार बिल्कुल एक संक्रामक व्याधि है,
ा से भी अधिक खतरनाक। इस रोग को इस संसार में उन मूर्ख कवियों ने ही
ा है। बिजिनसमैन को प्रारम्भ पाठ यही सीखना है कि प्यार-प्रेम से हर प्रकार
रहना है।" मैंने कहा—"मुझे वह पत्नीवाली बिजिनस जरा समझाइये।" उन्होंने

...हूं कहा—"हां, इसी तरह इलम सीख मुझ से भी। आप अब जरूर अधिकारी ...गये हैं। संसार के थपेड़ों से घायल हुए बिना मनुष्य विजिनस सीखने का ...नहीं बनता। पत्नी वाली विजिनस का पहला सत्य यही समझने का है कि औरत और हर हालत में वह मूर्ख ही रह सकती है चाहे कितना ही वह पढ़े, जैसे कोयला ...ही समुद्र बीच पहुँचने पर भी कोयले का कोयला ही रह जाता है। इतनी बात आपको हजम हो जाय तो बाकी बातें असानी से समझ में आ जायँगी।" मैंने ...मुंह बन्द करते हुए कहा—"बन्धु, कहीं बाहर न कहियेगा। चप्पल लग जायगी ...ों पर। पुलिस और न्यायाधीश भी औरतों की तरफ ही रहेंगे। ऐसी ही इसमें ... आप जानते नहीं विश्वविद्यालयों में वे ही प्रथम आया करती हैं। आई० ए० ...परीक्षा में भी सफल होने लगी हैं। पुलिस और मिलिटरी में भी पहुँच गयी हैं। ...में पीछे हैं जनाब? अन्तरिक्ष यात्रा तक कर आयी हैं।" उन्होंने झल्लाते ...—"ओ, चुप भी रहिये जनाब, पहले बात समझिये, फिर अपना राग आलापिये।" ...कहता हूँ उसे अकल नहीं है। अकल है पर मूर्ख अवश्य है। उनमें इतनी ...और हिम्मत है कि सूर्य गोल के भीतर भी वे जा सकती हैं। मैंने ऐसे-ऐसे ...ों को देखा है जिन्हें परीक्षा सम्बन्धी संपूर्ण कितावें बिल्कुल कण्ठस्थ है और परीक्षा में ...नी आयीं, बाद सभी चीजें एक ही महीने में भूल भी गयीं। उनमें नेपोलियन ...की प्रतिमा भी है, गांधी बनने का चमत्कार भी है पर साथ ही साथ क्रिस्टाइन बन ...राष्ट्र के प्राण को भी अपने मनपसन्द मर्द की एक मुस्कुराहट पर बेच देने की ...भी है। इसीलिये तो ज्ञानियों ने कहा इनका कभी विश्वास नहीं करना चाहिये।" ...—"सफल विजिनसमैन की पत्नी के प्रति क्या नीति रहती है?" उन्होंने ...से कहा—"शोषण! एकदम शुद्ध स्वच्छ शोषण!" मैंने पूछा—"पत्नी यह समझती ...?" उन्होंने कहा—"समझेगी वह कयामत में भी नहीं, चाहे कितनी भी विदुषी हो ...समझने दिया तो फिर बिजिनस कैसे चलेगा? इसलिए पति को ऐसा ढंग करना पड़ता ...पत्नी का वह परम भक्त है।" 'इतने से काम चल जाता है?' मैंने अधीरता ...पूछा। उन्होंने कहा—"नहीं जनाब, उतना आसान नहीं, और भी कई बातें हैं। ...ने कहा—"मैं तो अपनी पत्नी को वेदव्यास ही मान बैठा हूँ। मेरे लिये उनकी हर बात ...ही और ज्ञान है। उनकी हर इच्छा को मैं पूरा करता रहता हूँ। और सब प्रकार की आजादी ...बैठा हूँ।" मैंने हजारों बार उनसे कहा है—"तुम जो मन चाहे कर सकती हो। पर-पुरुष ...भी चाहे तो ले सकती हो। नतीजा यह दिखाई दिया कि वह मेरी आराधिका ...उपासिका बन बैठी। और मैं अपनी झोपड़ी में भाई साहब, राजा का सुख भोगता हूँ और ...पत्नी भी सीता से कम पतिव्रता नहीं! वे मुझ से कहती हैं तुम्हारे जैसे पुरुष संसार ...भव है। बस इसी को कहते हैं विजिनस। माना मेरा लोहा?" मैंने अभिनन्दन

स्वर में कहा—"साहब, आपके जैसे समर्थ पुरुष को मैंने भी नहीं देखा है। उन्होंने हंस कर कहा—देखा, मेरा बिजिनस का जादू आप पर भी चल गया या नहीं। यह साहित्य नहीं है साहब ! मैंने कहा—"भगवान पर भी यह जादू चल जा सकता है। कैसे आप इस तरह हँस लेते हैं भाई ? सदा यह मुक्त हास्य ! कमाल है।" उन्होंने कहा—साधना है जनाब, यह भी बिजिनसमैन के लिये जरूरी है। लाख जखम खाकर आनन्द विभोर होकर नाचते फिरना ही बिजिनस का पहला चरण है ! ओ यह खुशी, यह सर्वविजयी खुशी ! यह अपौरुषेय खुशी, साहित्यकार यह कहाँ पायगा भाई। अभागे सब ! बेचारों के दिल में लाखों छेद हैं। वे सदा प्यार के भूखे हैं। पर मिलती नहीं ! मगर यहां तो आराधिकायें अनगिनत हैं !" मैं बहुत देर तक चुप रहा। फिर एकाएक उठ खड़ा हुआ और कहा—"साहब, मैं आप से घृणा करता हूँ। नमस्ते।" वे उठ कर एक अनिर्वचनीय आनन्द-लहरी में बेसुध से होते हुए मुझ से लिपट गये और बार, बार मुझे साधुवाद करते हुए कहा—"हां, भाई, वास्तव में मैं घृणा ही का पात्र हूँ। भी तो आप का पीछा नहीं छोड़ना कि उद्धार किसी तरह मेरा भी हो जाय।" मुझे लगा यह मेरा परिहास कर रहा है। मैं दंग था उनके उस मानसिक धरातल पर ! ध्यान से उन्हें देखते हुए मैंने पूछा—"आप क्या हैं भाई !" उन्होंने बेहिसाब हंसते हुए कहा—"बिजिनसमैन ! और क्या ?" मैंने कहा—"सचमुच अद्भुत है मुझे लगता है, आप गांधी से कम नहीं। प्रणाम भाई साहब ! मेरा कोटि कोटि साधुवाद स्वीकार करें। आप से बढ़ कर एक विदेह कर्मयोगी को मैंने कहीं नहीं देखा आज तक।"

हाल की एक अखबारी समाचार है। ढाका की सड़क से दो लड़कियां चुस्त पोशाक में निकलीं। उनके पीछे एक भीड़ ही लग गयी। कुछ लोगों ने उनकी वाहवाही की ! कुछ लोगों ने गालियां बकीं और कुछ ने उन पर पत्थर फेंका। स्थिति सीमा से बाहर होते देख लड़कियां खिसकना चाहीं तो भीड़ खिल्लियां उड़ाते हुए उनके पीछे लगी। अब पुलिस लड़कियों की जान बचाने पहुँची। इस पर पुलिस और भीड़ दोनों एक दूसरे से उलझ गईं। मौका पाकर लड़कियां जान बचाकर भागीं। ढाका तो इस्लामी शहर है। वहां लड़कियों को आधुनिक आजादी के स्वर्ग में चढ़ने के लिए अभी बहुत देर है, वहां उनके ये 'जन्म सिद्ध अधिकार' कुछ कठिनाई और शायद बहुत संघर्ष के बाद ही प्राप्त किये जा सकेंगे। पर भारतीय पाकिस्तानियों से अधिक शिष्ट हैं, और सुसंस्कृत भी। यहां के लोग स्त्रियों पर अत्याचार या उनका शोषण पसन्द नहीं करते, इसलिये यहां चेतना प्राप्त स्त्रियां जो मन चाहे कर सकती हैं। भारतीय शहरों में लड़कियों को चुस्त पोशाक ही क्यों, कितने ही प्रकार के और प्रयोजन के पोशाक पहनने और न पहनने की भी स्वतन्त्रता प्राप्त है और वे यह सुख यहां भोग भी रही हैं ! प्राच्य भारती के पाठक कुछ ऐसे भी

शेषांश पृष्ठ ६३ पर

पूर्ण योग में गुरु का स्थान

श्री अरविन्द

जिस प्रकार पूर्ण योग का परम शास्त्र वह
...न वेद है जो प्रत्येक मनुष्य के हृदय में
...है, उसी प्रकार उसका परम पथप्रदर्शक
गुरु वह अन्तः स्थित मार्गदर्शक और
...गुरु है जो हमारे भीतर प्रच्छन्न रूप से
...जान है। वही हमारे अन्धकार को अपने
...की जाज्वल्यमान ज्योति से विध्वस्त
...ता है और उसकी ज्योति हमारे भीतर
...के आत्म प्राकट्य की वर्धमान महिमा बन
...ती है। वह हममें स्वातंत्र्य, आनन्द, प्रेम,
...और अमर सत्ता की अपनी ही प्रकृति
उत्तरोत्तर आविर्भूत करता है। वह हमारे
...अपने दिव्य दृष्टान्त को हमारे आदर्श
...रूप में उपस्थित करता है और निम्नतर
...ना को उस वस्तु की प्रतिच्छवि में परिणत
...र देता है जिस पर वह अपनी निर्निमेष
...ष्टि लगाये रहती है। वह अपने ही प्रभाव
...र अपनी ही उपस्थिति को हमारे अन्दर
...डेल कर हमारी वैयक्तिक सत्ता को विराट
...था परात्पर सत्ता के साथ तादात्म्य प्राप्त
...रने के योग्य बना देता है।

उसकी पद्धति और प्रणाली क्या है? ...सकी कोई भी पद्धति नहीं है और प्रत्येक ...द्धति उसी की है। जिन ऊँची से ऊँची ...क्रियाओं और गतियों के प्रयोग में प्रकृति ...मर्थ है, उनका स्वाभाविक संगठन ही उनकी ...णाली है। वे गतियां तथा प्रक्रियायें अपने को तुच्छ से तुच्छ ब्योरे की बातों में त... अत्यन्त नगण्य दीखने वाले कार्यों में ... उतनी ही सावधानता तथा पूर्णता के सा... व्यवहृत करती हैं जितनी कि बड़ी से ब... बातों तथा कार्यों में। इस प्रकार वे अन्त... सभी चीजों को प्रकाश में उठा ले जाती... तथा सभी को रूपांतरित कर देती हैं... कारण उस जगद्गुरु के योग में कोई ... चीज इतनी तुच्छ नहीं कि उसका उपयोग ... न हो सके और कोई भी चीज इतनी ब... नहीं कि उसके लिये यत्न ही न किया ... सके। जिस प्रकार परम गुरु के सेवक औ... शिष्य को अहंकार या अभिमान से कुछ सर... कार नहीं क्योंकि उसके लिये सब कुछ ऊ... से ही संपन्न किया जाता है, उसी प्र... उसे अपनी निजी त्रुटियों या अपनी प्रकृ... के स्खलनों के कारण निराश होने का... कोई अधिकार नहीं। क्योंकि, जो श... उसके अन्दर काम करती है वह निर्वैयक्ति... या अतिवैयक्तिक और अनन्त है।

इस अन्तः स्थित पथ प्रदर्शक, योग... महेश्वर समस्त यज्ञ और पुरुषार्थ के भ... प्रकाशदाता, भोक्ता और लक्ष्य को पूरी त... से पहिचानना और अंगीकार करना सर्वां... पूर्णता के पथ में अत्यन्त महत्व रखता... यह कोई महत्व की बात नहीं कि हम पहले-पहले इस रूप में देखें कि वह सब च...

उद्‌गम-भूत निर्वैयक्तिक ज्ञान, प्रेम और
है, या इस रूप में कि वह सापेक्ष वस्तु
प्रकट होने वाला तथा उसे आकृष्ट करने
ला निरपेक्ष तत्व है या हमारी सर्वोच्च
त्मा और सब की सर्वोच्च आत्मा है या
मारे तथा संसार के भीतर अवस्थित भाग-
व्यक्ति है जो अपने स्त्री पुरुषात्मक अनेक
म रूपों में से किसी एक में प्रकटीभूत है,
फिर वह एक ऐसा आदर्श है जिसकी
कल्पना करता है। पर अन्त में हम
खते हैं कि वह सब कुछ है और इन सब
जों के योगफल से भी अधिक है। उसके
षय में की जाने वाली परिकल्पना के क्षेत्र
हमारा मन जिस द्वार से प्रवेश करता है,
स्वभावतः ही हमारे अतीत विकास और
र्तमान प्रकृति के अनुसार भिन्न भिन्न होता

यह अंतरस्थ पथप्रदर्शक प्रारम्भ में प्रायः
मारे व्यक्तिगत प्रयत्न की तीव्रता के कारण
और अहंभाव के अपने - आप में तथा अपने
द्देश्यों में ही संलग्न रहने के कारण छुपा
रहता है। ज्यों ही हम चेतना में स्वच्छता
प्त करते हैं और अहंमय प्रयत्न अपना
ान एक अधिक प्रशांत आत्मज्ञान को दे
ता है, त्यों ही हम अपने भीतर बढ़ते हुये
काश के स्रोत को पहचान लेते हैं। तब हम
स्रोत के प्रभाव को अपने पहले के जीवन
भी पहचान लेते हैं क्योंकि हम यह
नुभव करते हैं कि हमारी सब अन्धकारमय
र संघर्षकारी चेष्टायें एक ऐसे लक्ष्य की ओर
थर रूप से ले जायी गई हैं जिसे हम
वल अब ही देखने लगते हैं, और यह भी

कि योगमार्ग में हमारे प्रवेश करने से पहले
भी हमारे जीवन का विकास अपनी निर्णायक
दिशा की ओर योजना पूर्वक ले जाया गया
है। अब हम अपने संघर्षों एवं प्रयत्नों और
सफलताओं एवं विफलताओं का अभिप्राय
समझने लगते हैं। अंत में हम अपनी अग्नि
परीक्षाओं और कष्टों का मर्म भी हृदयंगम
करने में समर्थ हो जाते हैं। तथा उस सहा-
यता का भी मूल्य समझ पाते हैं जो हमें
आघात - प्रतिघात पहुँचाने वाली वस्तुओं
से प्राप्त हुई, यहां तक कि हम अपने पतनों
एवं स्खलनों की भी उपयोगिता समझने में
समर्थ हो जाते हैं। आगे चल कर हम
दिव्य पथ प्रदर्शक को अपने गत जीवन पर
दृष्टि डाल कर नहीं बल्कि तत्क्षण ही अनुभव
करने लगते हैं कि एक परात्पर द्रष्टा हमारे
विचार को, एक सर्वव्यापिनी शक्ति हमारे
संकल्प एवं कर्मों को और एक सर्व-आकर्षी
एवं सर्व-आत्मसात्कारी आनन्द और प्रेम
हमारे भावमय जीवन को नये सिरे से गढ़
रहे हैं। हम प्रकाश के इस स्रोत को और
अधिक वैयक्तिक रूप में भी अनुभव करने
लगते हैं जिसका स्पर्श हमें प्रारम्भ से ही
प्राप्त हुआ था अथवा जो हमें अन्त में अधि-
कृत कर लेता है। हम एक परम स्वामी, सखा
प्रेमी एवं गुरु की शाश्वत उपस्थिति अनुभव
करते हैं। जब हमारी सत्ता विकसित होते
होते महत्तर एवं विशालतर सत्ता के साथ
सादृश्य एवं एकत्व लाभ कर लेती है तब हम
अपनी सत्ता के सारतत्व में भी इसी को
अनुभव करते हैं। हम देखते हैं, कि यह अद्-
भुत विकास हमारे अपने प्रयत्नों का फल

…है बल्कि एक सनातन पूर्णता हमें अपनी …में परिणत कर रही है। वह एकमेव …दर्शनों में वर्णित ईश्वर है, जो सचे… …में विराजमान पथप्रदर्शक है (चैत्य …अन्तर्यामी है), जो विचारक का …ब्रह्म है, जो अज्ञेयवादी का अज्ञेय …और जड़वादी की वैश्व शक्ति है, जो …आत्मा और परा शक्ति है,—वह एकमेव …दाता धर्म भिन्न भिन्न नाम और रूप …है, वही हमारे योग का स्वामी है।

…इस एकमेव को अपनी अन्तरात्मा और …संपूर्ण बाह्य प्रकृति में देखना एवं …और यही बन जाना तथा इसी को …कार्य करना सदा ही हमारी देहधारी सत्ता …लक्ष्य रहा है और यही अब उसका …उद्देश्य भी बन जाता है। अपनी …के अंग-प्रत्यंग में और साथ ही इसके …भागों में भी, जिन्हें विभाजक मन …सत्ता से बाह्य समझता है, इस एक… …से सचेतन होना हमारी वैयक्तिक चेतना …पराकाष्ठा है। इससे अधिकृत होना और …के अन्दर तथा सभी चीजों में इसे अधि… …करना संपूर्ण साम्राज्य एवं प्रभुत्व का …है। निष्क्रियता एवं सक्रियता शांति …शक्ति और एकता एवं विभिन्नता …समस्त अनुभवों में इसका रस लेना ही वह …है जिसे जीवात्मा अर्थात् जगत में अभि… …वैयक्तिक आत्मा अन्धकार में खोज कर …है। पूर्णयोग के लक्ष्य की सम्पूर्ण परि… …यही है। प्रकृति ने जो सत्य अपने …छिपा रखा है और जिसे प्रकाशित …के लिये वह प्रसव-वेदना भोग रही है उसे वैयक्तिक अनुभव के रूप में प्रकट करना इस योग का उद्देश्य है। इसका अभि-प्राय है मानव आत्मा का दिव्य आत्मा में और प्राकृत जीवन का दिव्य जीवन में रूपा-न्तर करना।

o o o

इस पूर्ण कृतार्थता का अत्यन्त सुनिश्चित पथ यह है कि हम गुह्य रहस्य के उस स्वामी को ढूंढ लें जो हमारे अन्तर में निवास करता है तथा अपने आपको निरन्तर उस दिव्य शक्ति की ओर उद्घाटित करें जो साथ ही दिव्य प्रज्ञा और प्रेम भी है और फि… रूपांतर करने का कार्य उसके हाथों में सौं… दें। परन्तु अहंमय चेतना के लिये शुरू… ऐसा कर भी सके तो पूर्ण रूप से तथा प्रकृ… के अंग अंग में करना तो और भी कठिन … जाता है। शुरू शुरू में यह इसलिये कठि… होता है कि हमारे विचार संवेदन एवं भाव… भावनाओं की अहंमूलक आदतें उन द्वारों… बन्द कर देती हैं जिनसे हमें आवश्यक… अनुभव प्राप्त हो सकता है। बाद में यह इ… कारण कठिन होता है कि इस पथ के लि… अपेक्षित श्रद्धा, समर्पण और साहस अहं… वाच्छन्न आत्मा के लिये आसान नहीं होते… दिव्य क्रिया कोई वैसी क्रिया नहीं होती जि… अहंभावमय मन चाहता या स्वीकार कर… है। वह तो सत्य पर पहुँचने के लिये मु… को, आनन्द पर पहुँचने के लिये दुःख और पूर्णता पर पहुँचने के लिये अपूर्णता काम में लाती है। अहंकार यह नहीं … पाता कि वह किधर ले जाया जा रहा … वह मार्ग दर्शन के विरुद्ध विद्रोह करता…

विश्वास खो देता है, साहस छोड़ बैठता है। यदि केवल यही दुर्बलतायें होतीं तो कोई बड़ी बात नहीं थी; क्योंकि हमारा अन्तःस्थ दिव्य मार्गदर्शक हमारे विद्रोह से रुष्ट नहीं होता, न तो वह हमारी श्रद्धा की कमी से निरुत्साहित होता है। और न हमारी दुर्बलता के कारण उदासीन ही हो जाता है। उसमें माता का समस्त वात्सल्य और गुरु का अखण्ड धैर्य है। परन्तु, उसके नेतृत्व से अपनी अनुभूति हटा लेने के कारण, हम सचेतन रूप में उसका लाभ अनुभव नहीं कर पाते, यद्यपि वह लाभ किसी अंश में फिर भी प्राप्त होता है और उसका अन्तिम परिणाम तो किसी भी अवस्था में नष्ट नहीं होता। और हम अपनी अनुभूति इसलिये हटा लेते हैं कि जिस निम्नतर सत्ता में से वह अपनी आत्म-अभिव्यक्ति तैयार कर रहा है उसमें और उच्चतर आत्मा में हम विवेक नहीं कर पाते। जैसे हम संसार में ईश्वर को देखने में असमर्थ होते हैं; कारण, उसकी कार्य शैलियां ही ऐसी हैं। हम उसे इसलिये भी नहीं देख पाते कि वह हमारे अन्दर हमारी प्रकृति के द्वारा काम करता है न कि एक के बाद एक जमाने चमत्कारों से। मनुष्य चमत्कारों की मांग करता है जिससे वह विश्वास कर सके; वह चकाचौंध होना चाहता है ताकि वह देख सके। परन्तु हमारी यह अधीरता और अज्ञान महान् भय और संकट का रूप धारण कर सकते हैं यदि, दिव्य मार्ग दर्शन के प्रति विद्रोह के भाव में, हम किसी अन्य विकार जनक शक्ति को, जो हमारे आवेगों और कामनाओं के लिये अधिक संतोषकारक होती है, अपने अन्दर बुला लें, उससे आ… पथप्रदर्शन करने को कहें और उसे ही भग… वान मान बैठें।

परन्तु जहां मनुष्य के लिये कठिन है… वह अपने अन्दर की किसी अगोचर वस्तु… विश्वास करे, वहां उसके लिये यह आसा… भी है कि वह किसी वस्तु में विश्वास… जिसे वह अपने से बाहर चित्रित कर सक… है। अनेकों मानव प्राणियों की आध्यात्मि… उन्नति बाह्य आश्रय की, अर्थात् उनसे बाहर विद्यमान किसी श्रद्धास्पद वस्तु की अपेक्षा… करती है। उन्हें अपनी उन्नति के लिये ईश्वर की बाह्य मूर्ति या मानव रूप प्रतिनिधि अवतार, पैगम्बर या गुरु की आवश्यकता होती है। अथवा उन्हें इन दोनों की ही आवश्यकता होती है और दोनों को ही वे अंगीकार करते हैं। मानव आत्मा की आवश्यकता के अनुसार भगवान अपने आपको देवता, मानव रूपी भगवान या सीधी-सादी मानवता के रूप में अभिव्यक्त करते हैं और अपनी प्रेरणा का संचार करने के लिये, साधन के तौर पर, उस घने पर्दे को प्रयोग में लाते हैं जो देवाधिदेव को अति सफलतापूर्वक छिपाये रहता है।

आत्मा की इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये ही हिन्दू अध्यात्म साधना ने इष्ट देवता, अवतार और गुरु की परिकल्पना की है। इष्ट देवता से हमारा अभिप्राय किसी निम्न कोटि की शक्ति से नहीं वरन् परात्पर तथा विराट देवाधिदेव के एक विशेष नाम रूप से है। प्रायः सभी धर्म या तो भगवान के किसी ऐसे नाम रूप पर आधारित होते हैं या वे

...उपयोग करते हैं। मानव आत्मा के ...इसकी आवश्यकता स्पष्ट ही है। ईश्वर ...है और सर्व से भी अधिक है। परन्तु ...सर्व से भी अधिक है उसे भला मनुष्य ...अपनी कल्पना में लखे? यहां तक कि ...भी पहले पहल उसके लिये अति दुर्बोध ...है; क्योंकि वह स्वयं अपनी सक्रिय ...में एक सीमित एवं छटी छटायी रचना ...और अपने को केवल उसी चीज की ओर ...सकता है जो उसकी ससीम प्रकृति के ...मेल खाती है। सर्व में ऐसी चीजें भी ...जिन्हें पूरी तरह हृदयंगम करना उसके ...अत्यन्त कठिन है या जो उसके सूक्ष्म-...भावावेगों एवं भयाकुल संवेदनों को ...भीषण प्रतीत होती हैं। अथवा, सीधी ...बात यह है कि जो कोई भी चीज उसके ...सम्पूर्ण या आंशिक विचारों के घेरे से ...अधिक बाहर होती है उसे वह भगवान के ...में कल्पित नहीं कर सकता, न ही वह ...के पास पहुँच सकता या उसे अंगीकार ही ...सकता है। उसके लिये यह आवश्यक हो ...ता है कि वह ईश्वर को अपनी ही आकृति ...रूप में या किसी ऐसे रूप में कल्पित करे ...उससे परे होता हुआ भी उसकी सर्वोच्च ...वृत्तियों के साथ समस्वर और उसके भावों ...उसकी बुद्धि के लिये गोचर हो। नहीं ...भगवान से संपर्क और अंतर्मिलन प्राप्त ...ना उसके लिये कठिन हो जायेगा।

...इस पर भी उसकी प्रकृति मानव मध्यस्थ ...माँग करती है। वह भगवान को किसी ...चीज में अनुभव करना चाहती हैं जो उसकी निजी मानवता के पूर्णतः निकट ह... और साथ ही मानवी अनुभव एवं दृष्टान्त प्रत्यक्षगम्य भी हो। यह मांग मानव आका... में व्यक्त हुए भगवान या अवतार से, अर्था... कृष्ण, ईसा, वा बुद्ध से पूरी होती है। अथ... यदि इसे कल्पना में लाना इसके लिये अ... कठिन होता है तो भगवान एक कम अद्भु... मध्यस्थ के द्वारा ईश्वरीय दूत या गुरु के द्वा... भी अपना रूप दिखाते हैं। कारण, बहुत लोग भागवत मनुष्य को अपनी कल्पना... नहीं ला सकते अथवा उसे स्वीकार ही न... करना चाहते; पर वे भी किसी परमोच्... मनुष्य के प्रति अपने आपको खोलने... उद्यत होते हैं और उसे वे अवतार के न... से नहीं बल्कि जगद्गुरु या भगवत्प्रतिनि... के नाम से पुकारते हैं

परन्तु यह भी पर्याप्त नहीं है; सज... प्रभाव जीवन्त दृष्टान्त और प्रत्यक्ष उपदेश... भी आवश्यकता होती है। क्योंकि, ... लोग बहुत ही कम होते हैं जो भूतकाल... गुरु और उसकी शिक्षा को, भूतकाल... अवतार और उसके दृष्टांत तथा प्रभाव... अपने जीवन में सजीव शक्ति बना स... हैं। इस आवश्यकता को भी हिन्दू मत... ने गुरु शिष्य-संबन्ध के द्वारा पूरा किया... गुरु कभी-कभी अवतार या जगद गुरु भी... सकता है; किन्तु वैसे इतना ही पर्याप्त है... वह अपने शिष्य के समक्ष दिव्य प्रज्ञा... प्रतिनिधि हो, उसे दिव्य आदर्श से यत्किं... अवगत कराये अथवा सनातन के साथ म... आत्मा के अनुभूत सम्बन्ध का उसे... अनुभव कराये।

शेष अगले अंक में

जब चारणों ने इतिहास बदला

(राजस्थान की गौरवगाथा के गायक चारणों ने अपनी ओज भरी वाणी से इतिहास की धारा मोड़ दी है।

प्रस्तुत लघुकथा प्रसंगों में ऐसे ही कुछ क्षणों का मर्मस्पर्शी चित्रण है।)

तू झल्ले-तलवार

मैदान में उपस्थित राजपूतों पर उड़ती [न]जर डाल कर राठौर कर्मसेन, सर नीचा [कि]ए, किले के सामने खड़े सजे हाथी पर [जा] बैठा। उसके चंवर उठाते ही नीचे खड़े [स्]वाभिमानी राजपूतों के चेहरे पर पराजय [क]ी काली घटाएं छा गयीं।

राजधानी के राज मार्ग पर आज अकबर [क]ी सवारी निकलने जा रही थी। रिआया [प]र अपने बढ़ते प्रभाव की नींव और मजबूत [क]रने के लिए शाहंशाह चाहता था कि [स]वारी के निकलते समय राजपूताने का कोई [छ]त्रधारी या सामन्त उसकी खवासगी में चंवर [डु]लाए। किन्तु दरबार का कोई क्षत्रिय अपनी [आ]न बेच कर अकबर की तमन्ना पूरी करने [क]ो उत्साहित नहीं हुआ।

कूटनीतिज्ञ बादशाह ने अन्त में खिलअत [म]नसबदारी और जागीर की बन्शी फेंकी [और] अजमेर का राठौर सरदार कर्मसेन उसमें [फं]स ही गया। राजस्थानियों के लाख ऊंचा [नी]चा समझाने के बाद भी वह चंवर लेकर [हा]थी पर जा बैठा।

सवारी निकलने में अभी कुछ देर थी। [मै]दान में खड़े दरबारी राजपूत अपने चेहरों पर असंतुष्टि और अपमान का विद्रूप लि[ए] अन्तिम क्षणों में भी कर्मसेन को इस अपमान[जनक] जनक कार्य से रोकने का उपाय सोच रहे थे। अन्त में एक साहसी चारण ने लालच [और] मदिरा में बेसुध राठौर सामन्त को अपनी वाणी से सावधान करने का निश्चय किया। सवारी के नजदीक जाकर वह जोशीले स्व[र] में कर्मसेन को पुकार बैठा—

> कम्ना उग्गरसेन रा, तो जननी बलिहार।
> चंवर न झल्ले शाह पर, तू झल्ले तलवार।

(ओ कर्म सेन मैं तेरी माता पर बलि[हार] हार जाता हूँ। तू बादशाह को चंवर न झ[ले] तलवार झले)

ओज भरी वाणी के छींटे पड़े तो कर्म[-]सेन की गैरत को होश आ गया। मां के दू[ध] का वास्ता देकर किए गए अनुरोध को टालने की शक्ति उसमें नहीं थी। हाथी से कूद कर वह तेजी से निम्नमुख मैदान के बाहर चला गया।

सांगा तू सालै असुर

कनवाह की बाजी मात हो चुकी थी। बाबरी बारूद की आंधी में राजपूती खांडे खण्डित हो चुके थे। राजस्थान का रण बांकुरा सांगा पराजित होकर भी प्रण ठाने बैठा था

...बाबर के दाँत में तिनका दिए बिना चि-... की ओर पग नहीं बढ़ाएगा।
किन्तु इधर कनवाह में तुर्की बारूद की ... में तपकर राजपूत सामंतों का उज्ज्वल ... काला पड़ गया था। राणा लाख ... करके भी उनके मुर्दा दिलों में संजी-... नहीं फूंक पा रहा था।

... के मन प्राण को निराशा के भंवर में ... कर सांगा आरावली की चोटियों ... और रीती दृष्टि से निहारता खड़ा था।
... राज भक्त चारण टोडरमल से यह न देखा ... तो उसने राणा के शिविर के बाहर खड़े ... ओज भरे स्वर में कहा—

सत बार जरासंध आगल,
श्री रंग बिमुहा टीकम दीध बग।
मेलि घात मारे मधु सूदन,
असुर घात नाखे अलख ॥
पारस है करसां हथणापुर,
हटियो त्रिया पडंतां हाथ।
देख जकर दुरओधन कीधी,
पाछै तक कीधी सजपाथ ॥
इकरा राम तणी तिय रावण,
मंद हरेगो दह कमल।
टीकम सोहिज पथर तारिया,
जग नायक उपरा जल ॥
एक राड़ भवमाह अवत्थी,
असरस आणै केम उर।
मालतणा केवा ऋण मांगा,
सांगा तू सालै असुर ॥

(महाराणा, आप उदास क्यों हैं। श्री कृष्ण सौ बार जरासन्ध से हारे पर अन्त ... उन्होंने उसे हरा ही दिया। जब दुर्यो-धन ने द्रौपदी पर हाथ छोड़ा तो अर्जुन पीछे हट गया, परन्तु सब जानते हैं कि अन्त में उसने उसका क्या हाल किया। एक समय बुद्धिहीन रावण सीता को हर ले गया परन्तु राम ने समुद्र पार कर के उसका क्या हाल किया? सांगा, तुम एक बार की पराजय पर इतना दुख क्यों करते हो? तुम तो अभी भी शत्रु की छाती में कांटे की तरह खटक रहे हो।)

निराशा की कीच में डूबता सांगा चारण के पुत्र टोडरमल के उद्बोधन से पूरी शक्ति लगा कर बाहर आ गया। आवेश में दौड़ कर उसने चारण को गले लगा लिया और उसी समय अपनी सेना को बाबर के विरुद्ध कूच करने का आदेश दिया। दुर्भाग्यवश उस... सरदारों के कलेजे ऐसे बैठ गए थे कि हु... सने का नाम ही नहीं लेते थे। युद्ध की आ... से बचने के लिए उन्होंने रास्ते में सांगा को जहर देकर अग्निपरीक्षा देने से वंचित कर दिया।

सिंहा सिर नीचा दियां।

मराठा हूल से राजपूतों की कमर ... चुकी थी। इन्दौर के शासक मल्हार र... होलकर के सवारों ने सारे राजस्थान ... रौंद डाला था। जयपुर जोधपुर जैसी ब... रियासतों से सत्ताधीश धन देकर मरा... से पिन्ड छुड़ाया करते थे।

एक बार राजपूताने के दो शासकों ... होलकर के सैन्य प्रतिनिधि के बीच ... प्रकार की संधि वार्ता चल रही थी। ... समय एक चारण घोड़े पर सवार हो...

वार्त्ता शिविर के निकट से निकला।

उत्सुकतावश जब उसने नजदीक जाकर एकांत स्थल में गड़े तबुओं का रहस्य मालूम करना चाहा तो राजपूतों की कायरता का दुखद दृश्य देख कर उसका कवि हृदय टूक टूक हो गया।

राजपूतों के अपमान से मलाल भरा दिल लिए उसने डपट कर अपना घोड़ा आगे बढ़ाया और तंबू के बिलकुल नजदीक पहुँच कर ताने के स्वर में बोला—

सिंह सिर नीचा किया,
गाडर करे गिलार।
अधिपतियां सिर ओढ़णी,
माथे पाग मल्हार॥

(सिंहों ने सर नीचा कर लिया और स्यार खुशी से हँस रहे हैं राजपूत राजाओं के सर पर ओढ़नी है और मल्हार राव के माथे पर पाग बन्धी है।)

मराठा सरदार के पल्ले तो चारण का एक शब्द भी न पड़ा किन्तु राजपूत लोग यह ताना सुन कर ग्लानि के वातावरण से घबराए बाहर निकल आए।

इसके बाद राजपूतों ने पूरी शक्ति से अपमान की ओढ़नी उतार फेंकी। वीरता की केसरिया पाग बांध कर उन्होंने युद्ध में होलकर की फौजों को परास्त कर दिया।

जब छूटे जालोर

महाराज विजय सिंह के सारे उत्तराधिकारियों को निर्मूल कर गद्दी पर बैठने वाले भीम सिंह की निगाह में उसका अन्तिम प्रतिद्वन्दी मान सिंह कांटे की तरह खटक रहा था।

राजदण्ड पर हाथ रखते ही भीम सिंह ने अपना राजपद निष्कंटक बनाने के लिए मानसिंह के निवास स्थान जालौर किले पर फौजें भेजीं।

भयंकर युद्ध और भीषण नर संहार के बाद रसद समाप्त हो जाने पर विवश मान सिंह ने अपने सैनिकों को किला खाली करने का आदेश दिया।

और लोग तो हुक्म मिलने पर सामान बांध कर तैयार हो गए किन्तु वीरा नाम के चारण ने किला छोड़ने से इनकार कर दिया।

आज्ञा उल्लंघन के अपराध में मानसिंह के सामने पेश किए जाने पर उसने वीरोचित स्वर में कहा—

आभ फटे, धर अससें, कटे बगतरा कोर।
सिर टूटे धड़ तड़फड़े, जब छूटे जालौर॥

(मैं जालौर तब छोड़ूँगा जब आकाश फट जाय, धरती उभर कर ऊँची हो जाय, बख्तरों के कोर तलवार से कट जाय और धड़ पृथ्वी पर तड़फड़ाने लगे।)

वाणी के उस वरद पुत्र के हृदय में बलिदान की ऐसी जलती भावना देख कर सूरमा सरदारों की बाहें फड़कने लगीं। जालौर किले के खुलते द्वार शत्रु को चुनौती देकर फिर बन्द हो गए। युद्ध चलता रहा और इसी बीच भीमसिंह की मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्यु के बाद आत्म समर्पण की कामना से पराजय की ओर बेलौस उड़कते मानसिंह जोधपुर के शासक हो गए।

डा० जानसन : एक साहित्यिक तानाशाह

नन्दकिशोर प्रसाद
उप-प्राचार्य, शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर

डा० जानसन का पूरा नाम सेमुएल ...न था। उनका जन्म १७ सितम्बर ... को, स्ट्रैफोर्ड के लीचफिल्ड नामक ... में हुआ था। उनके पिता का नाम ... जानसन था। वे पहले डर्बीशायर ...ते थे पर पीछे चल कर लीचफिल्ड ... ही हमेशा के लिए बस गये। व्य-... की दृष्टि से वे पुरानी पुस्तकों के ...ता थे। जानसन की मां का नाम ...र था। जानसन को केवल एक भाई ... था जिसका नाम नेथियल था, जो मात्र ...ीस वर्ष की अवस्था में ही स्वर्ग सिधार ...। स्पष्ट है कि उनका परिवार बड़ा ... छोटा था।

उनके जीवन के विकास क्रम पर विहंगम ... डालें तो अनेक तथ्य की बातें, उनके ...न्ध में, सामने आती हैं। जानसन की ...द्धि बचपन से ही बड़ी तीव्र थी। ...सी वस्तु अथवा घटना विशेष को स्मरण ...खने की उनमें अपूर्व क्षमता थी। कहते ...हैं, एक बार मां ने बालक जानसन के ...थ में कामन प्रेयर बुक Common Prayer Book) दे, उसके कतिपय अंशों ...को दिन भर में सुना देने की आज्ञा दी। ...याद करना था। साराह मकान के दूसरी मंजिल पर पहुँच ही पाई थीं कि उन्होंने बालक जानसन को पीछा करते हुए पाया। उन्होंने पूछा—"क्या बात है ?" जानसन ने उत्तर दिया मैं इसे सुना सकता हूँ। और सचमुच उन्होंने उक्त अंशों को अक्षरशः ठीक-ठीक सुना दिया। उनकी म... आश्चर्य चकित रह गई। आश्चर्य, ... दो बार से अधिक उन अंशों को पढ़ ना... पाये थे।

"पूत के पांव पालने में ही पहचा... जाते हैं"—वाली लोकोक्ति उन पर सब... शतः चरितार्थ हो रही थी। उनका विद्या... र्थी जीवन दुःखमय अवश्य रहा आर्थिक दृ... कोण से, लेकिन इन विषमताओं के बाव... वे सदैव अपने सहपाठियों से आगे ही रहे। कहते हैं, बचपन से ही ये बहुत बड़े अध्ये... थे। पुस्तक पढ़ने की बड़ी ही गहरी च... थी : चाव था। पिता जी पुस्तक विक्रे... थे ही। उनके एक ग्राहक ने अत्यन्त प्रस... होकर, उनकी प्रतिमा से चमत्कृत हो, उ... १९२८ में पेम्बुक कालेज आक्सफोर्ड अध्य... के लिये भेज दिया। इस प्रसंग में ... स्वीनफेन का नाम लिया जाता है। ... जो भी हो, वहां उन्होंने अपने आ... अध्ययन एवं प्रतिमा से सबों को प्रभा...

या और अपने आप में पर्याप्त महत्वपूर्ण गये। वहां उनकी उपलब्धियों को घ्र ही मान्यता प्राप्त हो गई। कविवर प की रचना (Messiah) मेसीयाह के टेन अनुवाद के कारण जानसन शीघ्र वहां के साहित्यिक समाज में प्रख्यात प्रभावशाली व्यक्ति बन गये—उस माज के जो आँयल भाषा में 'नेष्ट आफ गिंग बर्ड्स' (Nest of singing irds के नाम से प्रसिद्ध है। जीवन पर्यंत आलसी स्वभाव (Indolent habits) बने रहे, लेकिन तथ्य को ग्रहण करने की क्ति (ग्राहिका-शक्ति) और स्मरण-शक्ति प्रतिम थी: बेजोड़ विस्मयकारी।

अपने विद्यालय के जीवन में ही विद्वता के केन्द्र (Prodisy of earning) बन गये। उनके शिक्षक डा डेम्स ने तो प्रसन्न होकर, यहां तक कह या था कि उन्हें अपने लम्बे शिक्षण-काल जानसन से बहुमुख प्रतिभाशाली छात्र को ढ़ाने का सुअवसर ही नहीं प्राप्त हुआ था। सा असाधारण व्यक्तित्व था, जानसन का!

जानसन के प्रारम्भिक जीवन-काल के म्बन्ध में कहा जाता है कि उन्हें डेम्स स्कूल Demes' school) पढ़ने के लिये भेजा या, इसके बाद १७१६-२६ में इन्होंने लीचफिल्ड' के ग्रामर स्कूल Grammar School) में अध्ययन किया और १७२८-२ के बीच या तो घर पर पढ़ते रहे या ों ही समय खराब किया: बरवाद किया। किन्स, हंटर और वेन्टफोर्ड के पाठ और ही की अपेक्षा उन्होंने अपने पिता की दूकान पर अपने इच्छानुसार बैठकर किताबों के अध्ययन से अधिक ज्ञान लाभ किया!

अर्थ पिशाच के मुँह में

जानसन पर उनके पिता का बड़ा ही गहरा असर पड़ा। संस्कारतः, पिता की तरह ही वे क्षीणकाय और निराशा-जन्य मनोवृत्ति के व्यक्ति हुए। निराशा-मूलक भावना उनके जीवन के अधिकांश भाग को अच्छादित किए रही। आर्थिक दृष्टि से जानसन का परिवार सदैव दुःखी एवं ऋण-ग्रस्त रहा। अर्थ-संकट से कभी छुटकारा नहीं, चैन नहीं। गरीबी की गोद में उन्होंने आँखें खोली, और जीवन पर्यन्त आर्थिक विषमताओं से बाँहें खोल जूझते रहे, हिम्मत नहीं हारी, घुटने नहीं टेके। पिता की मृत्यु के बाद सारा भार उनके दुर्बल कंधे पर आ पड़ा। ऋण-भार उन्हें असह्य प्रतीत हुआ, अतः इससे त्राण पाने की दृष्टि से कर्म-कुशल हो, संकटों से लड़ने लगे! जानसन के अर्थ संकट की विकट कहानी विस्तृत रूप में यों है—

उनके पिताजी, हालाँकि पुस्तक के कारबार में अच्छी जानकारी रखते थे फिर भी दुर्भाग्यवश, एक अच्छे विक्रेता या व्यापारी सिद्ध नहीं हो सके और फलतः आर्थिक कष्ट सदा आँखों के सामने नाचता रहा। बचपन से ही जानसन को दुःखों का सामना करना पड़ा। जानसन का प्रारम्भिक जीवन शेक्सपियर की तरह ही दुखद रहा।

कहते हैं, हालाँकि पेम्ब्रक में उनकी

...ख्याति थी, वे आन्तरिक दृष्टि से ...रूप से जो भी खुश रहे हों, आर्थिक ...बड़े ही फटे हाल थे। इतना होते ...गरीबी की शिकायत : कष्ट की शिका- ...की और ओठों पर हँसी-बिखरे ...सहते रहे : निर्द्वन्द्व भाव से। ...आर्थिक सीमाओं के बावजूद उनका ...एवं स्वाभिमानी व्यक्तित्व, किसी के ...झुका नहीं : इसके चलते आत्म-दहन ...हुआ हो : आत्म-पतन नहीं हुआ। ...कि उनके पांवों में जूते नहीं थे और ...जूता चलने के कारण उनके पांवों ...छाले पड़ गये थे, और अगर ऐसी दशा ...किसी शुभचिंतक साथी या विद्यार्थी ने ...में नए जूते उनकी सेवा में प्रस्तुत ...उन्होंने क्रुद्ध होकर सदा ही उन्हें ...सड़क की राह फेंक दिए। ऐसे थे वे : ऐसा उनका व्यक्तित्व !

सन् १७३१ में अवस्था दिनानुदिन ...बिगड़ती ही गई और अन्त में अक्टूबर में ...बिना कोई उपाधि प्राप्त किए ही वे अपने ...वापस आ गए; और दिसम्बर में उनके ...पिता जी का स्वर्गवास हो गया।

तीव्र यातना एवं कठोर संघर्ष के जो ...दिन आक्सफोर्ड में प्रारम्भ हुए, कोई तीस ...वर्षों तक, सन् ६२ तक जम कर रहे, टस-से-मस न हुए। जानसन सर्वांशतः टूट जाता ...आर्थिक दृष्टि से और मौत के हवाले हो ...जाता, अगर अन्त में राजकीय सहायता ...पेंशन न मिलती। 'दुःख की पिछली ...रात-बीच' 'सुख के नवल प्रात' को निकलने ...में काफी समय लगा !

सन् १७३५ में जब वे २५ वर्ष के हो गये, आर्थिक कठिनाई अन्तिम सीमा को पहुँच गई। उन्होंने ४५ वर्ष की एक विधवा से शादी कर ली जिससे कोई आठ सौ पौंड प्राप्त हुए। अपनी प्रियतमा का जो चित्र उन्होंने उपस्थित किया वह आकर्षक था, फिर भी वर्षों बाद न्यू कलर्क को उन्होंने कहा—'भाई मेरे, यह विवाह दोनों ही ओर से प्रेम का परिणाम था। और, वस्तुत... अपनी पत्नी के प्रति उनका सम्पर्क एवं सम्बन्ध सदैव ही गहरा, प्रेमपूर्ण एवं स्थाई रहा। एडियल हाल के अपने एक छात्र गैरिक के साथ हार कर जब वे लंदन आए, जहां जीवन का अधिक भाग बीता, उनके पास में मात्र अढ़ाई पेंस थे।

जानसन का व्यक्तित्व इस्पात का बना हुआ था जो टूट सकता था पर झुक नहीं। पर याद रहे, अपवाद स्वरूप पेंशन पा... तो आखिर झुकना ही था जीवन के अन्ति... दिनों में। कठिनाइयों को दूर करने के उद्दे... से उन्होंने लंडन जाकर नौकरी कर... चाही या साहित्यिक जीवन व्यतीत कर... चाहा। दो में से कोई, जिसमें सरलता... सफलीभूत हो जाय। सब से पहले उन्हो... सन् १७३५ में, लेकिन लंडन जाने के ... उनको पत्नी से जो पैसे प्राप्त हुए थे, उ... एक स्कूल खोलकर वहां शिक्षक बन जा... आर्थिक दृष्टि से अच्छा समझा और ... १७३६ में उन्होंने जेंटिल मैन्स मैगज़... (Gentlemen's Magazine) में ... आशय का एक विज्ञापन प्रकाशित करवा... पर जानसन का दुर्भाग्य ही था कि अठ...

महीने बीत गए, पर तीन ही छात्र वहां दीक्षित होने को पधारे, डेविड गौरिक, उनका भाई जार्ज और मिस्टर आफेल। यही गौरिक आगे चलकर इतना महान् अभिनेता बन गया कि कहना ही क्या? जानसन का यही छात्र आगे चल कर इनका एक सुयोग्य सहृदय मित्र भी बन गया और समय कुसमय आर्थिक सहायता भी की। शिक्षण व्यवसाय में असफलता के बड़े गहरे कारण थे: उनका बहुत बड़ा कारण यह था कि उनकी आकृति और आवाज के साथ-साथ आदतें भी बड़ी ही बेतुकी और विकृत थीं जब भी बोलते आवाज कड़ाके की निकलती और चेहरा अत्यन्त विकृत एवं विकराल हो जाता था। और मृत्यु पर्यंत अपने क्रोध को वे नहीं नियन्त्रित नहीं कर पाये, करना नहीं सीख पाये, फलतः, विद्यार्थियों पर बड़ी ही बुरी प्रतिक्रिया होती थी और लोग उनसे पढ़ना नहीं चाहते थे, स्वभावतः, वे कर्कश थे, हालांकि आत्मा बड़ी ही विशाल पवित्र और महान थी। शिक्षक के रूप में असफल हुए जरूर। जिन विद्यार्थियों को पढ़ाया उनमें गैरिक भी थे जो आगे चल कर उनके मित्र एव सहायक बन गए। इसमें असफल होने पर भी वे निराश नहीं हुए और नौकरी की तलाश में बरमिंघम आए और 'लोवो' के 'वोएजट् अबीसीनिया' के अनुवाद के मध्यम से उन्होंने इस से सम्बन्ध स्थापित किया और इतना ही नहीं सद्यः प्रकाशित पत्र (Gentleman's Magazine) जेन्टिल मेन्स मेगजीन के मालिक से भी उन्होंने नियमित रूप से लिखने का प्रस्ताव किया। वस्तुतः, वे [illegible] में, सन् १७३६ में नियमित लेखक हो गए और नवम्बर १७४० से १७४३ फरवरी तक के पार्लियामेंट के विवादों का संकलन-अंकन किया और अन्त में [illegible] (cave) के द्वारा ही 'सिनेट आफ लि[illegible] पुट' के नाम से प्रकाशित हुआ।

अन्त में जानसन लंडन पहुँचे, अपना भाग्य अजमाने, शायद कहीं किस्मत [illegible] जाय। लेकिन, यहां भी बहुत दिनों [illegible] वही पुराना किस्सा चलता रहा। [illegible] साहित्यिक जीवन के प्रारम्भ में उन्हें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उनकी आर्थिक स्थिति इतनी नीचे हो गई थी [illegible] उन्हें खाने को दो मुट्ठी दाने और रहने को चार हाथ जमीन तक नहीं मिल पा रही थी। एक दिन 'सेन्ट जोन्स के [illegible] (Saint Johns' gate) पर सेवेज [illegible] उनका साक्षात्कार हुआ। सम्पर्क बढ़ा [illegible] मित्रता गाढ़ी हुई। सेवेज चरित्रहीन [illegible] हुए भी प्रख्यात कलाकार थे, पीछे [illegible] कर जिनकी जीवनी जानसन ने लिखी और अपने प्रसिद्धतम ग्रन्थ "कवियों की जीव- नियां' (The lives of the poets) में संकलित की। अपने दुश्चरित्र और दुर्भाग्य के कारण वे बहुत ही बुरी अवस्था को प्राप्त हो गये थे। दाने-दाने को मुह- ताज, बेचारे सेवेज गलियों की खाक छान रहे थे। "एक से दो भले", जान- सन भी उसी कोटि के व्यक्ति मिल गये दोनों के दोनों किस्मत के मारे, एक ही पथ के पथिक: कहना चाहिए, दोनों [illegible]

...चरम सीमा को पहुँच गई थी। ...मकान का भाड़ा नहीं देने के कारण, ...ने सारी रात गलियों का चक्कर ...हुए ही काट दी। एक बार अपने ...जीवन की पुण्य स्मृतियों का पर्या-...करते हुए उन्होंने अपने मित्र चित्र-...से कहा कि एक दिन जब ...के साथ सेंट जेम्स स्क्वायर (St. ...Square) के चारों ओर चक्कर ...हुये मकान की खोज में, ऐसी ...में भी वे निराश नहीं हुए वरन् आशान्वित बने रहे। दोनों मित्रों ...स्वदेश प्रेम की भव्य-भावनाओं ...वित हो रहा था। घंटों इसी मुद्रा ...कर काटते रहे, मंत्रियों के प्रति ...प्रकट किए और सदैव अपने स्वदेश ...देने की शपथ ली।

...कालीन जीवन में, प्रकाशकों ...जो झिड़की सुननी पड़ी वह कम ...घटना नहीं। यह घटना महत्वपूर्ण ...का विषय भी है उनलोगों के लिए ...जीवन-लक्ष्य साहित्य-साधना है। ...विषम परिस्थिति का ज्ञान इस घटना ...होता है, उसका परम्परा-प्रवाह ...होकर आधुनिक युग में अपेक्षाकृत ...विस्तृत एवं पुष्ट ही हो गया है। ...के कवियों, लेखकों की आर्थिक ...बड़ी ही विकट थी, कलम की कमाई ...तो मरना मुश्किल था, ऐश-आराम ...की बात कौन कहे? अपवाद स्वरूप ...एक ऐसे मसिजीवी कलाकार थे ...कलम की कमाई से बड़े-बड़े जमीं-दारों और मंत्रियों की तरह जीवन यापन करते थे। थामसन और फिल्डिंग से लब्ध प्रतिष्ठ बड़भैये कलाकारों के लिए दोनों जून रोटी चलना मुश्किल था तो जानसन की बिसात ही क्या जो अभी-अभी साहित्य में स्थान बनाने का यथासाध्य उपक्रम ही कर रहे थे।

कहते हैं, एक बार, तंग आकर उन्होंने एक प्रकाशक के पास, पुस्तक-प्रकाशन के लिए नहीं बल्कि नौकरी के लिए एक दर्खास्त पेश की। प्रकाशक ने चीखकर कहा, तुम्हारे लिए कुली का गट्ठर प्राप्त करना और लकड़ी ढोना ही अच्छा होता। उनका कहना भी नितान्त असंगत नहीं, बल्कि कहना चाहिए कि अनेक अंशों में ऐसी उपस्थिति परिस्थित में, ठीक भी था।

यह ठीक है कि प्रारम्भ में अपनी जीविका चलाने के लिए बड़ा ही संघर्ष करना पड़ा, बड़ी यातना सहनी पड़ी! एक प्रकाशक ने तो उनके विकृत चेहरे को देखकर कहा—"तुम्हारे लिए यही ठीक है कि कहीं मजदूरी कर गुजारा करो।" कितने दिनों तक तो उन्हें भूखों रहना पड़ा, जैसा कि उन्होंने अपने एक पत्र में सेवेज को सूचित किया। इतना ही नहीं चार हाथ जमीन नहीं मिली कि रात बिता सके और इसके लिये पांवों में चक्कर बांधकर स्वयं सेवेज के साथ ही आंखों में ही रात काट दी। सेंट जेम्स स्कायर के इर्द-गिर्द चक्कर काटता रहा। जीवन का अधिकांश भाग भूखे और अध-नंगे फटे-चीटे चीथड़े पहन कर काटा,

लेकिन सबों को उन्होंने बड़े ही व्यापक धैर्य एवं साहस के साथ सहा। एक बार भी कठिनाइयों के लिए कोई शिकायत नहीं की · चेहरे पर शिकन भी नहीं आई। और जिस अचूक सामर्थ्य, क्षमता एवं धैर्य के साथ सहन किया. उसकी चर्चा की। आंग्ल भाषा और साहित्य के इतिहास में उनके टक्कर का साहसिक व्यक्तित्व (Heroic Personality) सदा दुर्लभ है। इतने व्यवधानों के रहते, वे अपने युग के एक तबके का, परले सिरे का, लेखक सिद्ध होते जा रहे थे। समाज में उनकी धाक बड़ी तेजी से जमती जा रही, उसका कारण उसकी कलम का जादू नहीं, वरन् उनके चरित्र की सामर्थ्य एवं शालीनता थी. और सचमुच ही अपने युग के निर्माता थे : साहित्यिक तानाशाह और आज वह युग अंग्रेजी साहित्य में जानसन के युग (Age of Johnson) के नाम से प्रख्यात है।

साहित्यिक अभियान

जानसन के सम्पूर्ण साहित्यिक प्रयाण की कहानी बड़ी ही मार्मिक है। सन १७३७ में उन्होंने प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थ लंडन (London) का प्रकाशन करवाया, जिसकी पंक्ति-पंक्ति में उनके विगतसंघर्षशील जीवन का अनुभव बिखरा हुआ है। इसमें सारी परिस्थितियां बड़ी सशक्त एवं संवेदनशील भाषा में बाँध दी गई हैं। लंडन का प्रकाशन डाडस्ले ने किया. जिसके लिये उन्हें मात्र दस पाउंड ही मिले। इस ग्रन्थ को पढ़कर महाकवि एवं समीक्षक पोप पर बड़ा ही व्यापक प्रभाव पड़ा था। उन्होंने इस ग्रन्थ के अज्ञात लेखक को अवश्य ही प्रचुर सहायता मिलनी चाहिए, इस भावना से प्रेरित होकर लार्ड जोअर (Lord Gower) को—अपने एक प्रभावशाली मित्र को यह लिख कर कहा कि वह आक्सफोर्ड से जानसन को एक डिग्री दिलवा देने हेतु स्विफ्ट से आग्रह करे ताकि उन्हें ... पाउंड तक की वार्षिक आय एक शिक्षक के रूप में प्राप्त हो सके। कोई ६० वर्षों के बाद सन् १७४४ में उन्होंने अपने परम प्रिय मित्र सेवेज का जीवन वृत्त प्रकाशित किया, जिसके साथ उन्होंने रात्रि में आश्रय खोजते लंडन की गली-गली की खाक छानी डाली थी : भूखे, प्यासे, अधनंगे।

कुछ वर्षों के बाद १७४७ में, अंग्रेजी भाषा के एक विशाल कोष के निर्माण की योजना उन्होंने प्रकाशित की। यह सुनने में असंगत प्रतीत होता है कि एक व्यक्ति जो इतनी दयनीय दशा में पड़ा हो, दर-दर का भिखारी हो. इतनी व्यापक योजना जो असंभव-सी प्रतीत हो, दुनिया के सामने रखने का दुस्साहस करे, पर सच तो यह है कि यह कल्पना एक दिन सच होकर रही। योजना हाथ में ली गई और एक दिन निश्चयात्मक रूप से पूर्ण भी हुई—सफल भी हुई। इस प्रसंग में यह उल्लेखनीय है कि सन् १७५४ में चेस्टर फील्ड ने जिसके सामने कोष-निर्माण की योजना बहुत पहले विचारार्थ—प्रकाशनार्थ उपस्थित की गई थी, और जिसने बड़ी निर्ममता से योजना पर विचार करना अस्वी...

... दिया था, क्रोध को बढ़ती हुई ... और जानसन की लोक-प्रियता को ... में रख कोष कार्य की समाप्ति से ... दिनों पूर्व, पुनः सहयोग की अडिग ... प्रकट की और 'वर्ल्ड' (World) ... पत्रिका में भूरी-भूरी प्रशंसा की, ... ने बड़ा ही मुँहतोड़ जबाव दिया — ... अब तक काफी समय गुजर चुका और ... सभी प्रकार के कष्टों को सहकर ... धैर्य से अपने कार्य को पूरा कर ...। इस प्रकार के आग्रह को जानसन ... अपमान समझा और बड़े ही तीव्र ... और कटु शब्दों में ७ फरवरी १७५२ के ... जवाब दिया जो बड़ा ही महत्वपूर्ण समझा जाता है। उस पत्र की महत्ता ... भाषा शैली की व्यंग्य पूर्ण भंगिमा ... ग्राह्य शैली के लिये नहीं, 'स्वाभिमानी ... में है। उन्होंने लिखा है : यह ... अगर पहले मिलती तो बड़ी कृपा ..., काफी देर हो चुकी हैं, अब मेरी सहयोग में कोई दिलचस्पी नहीं, इसका नहीं उठा सकता, जब तक मैं पूर्ण नहीं हो जाता, इसको नहीं चाहता।" सच तो यह है कि जानसन के इस ... मानी वक्तव्य ने काफी ख्याति साहित्य ... लाई और उन्हें युग-युग जीवित रखने के यह वक्तव्य ही काफी है।

सन् १७४९ में उन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'वेनिटी आफ दी ह्यूमन विसेस (... nity of the Human Wishes) प्रकाशन किया। इसके प्रकाशन के ही जानसन की लोक-प्रियता दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ने लगी। जानसन की रचनाओं में 'लंडन' और 'वेनिटी आफ दी ह्यूमन विसेस' अपने ढंग की रचनाएं है : जो व्यंग-प्रधान हैं।

सन १७५० में इन्होंने 'स्पेक्टेटर' के ढंग का पत्र निकालने का विचार किया और रेमलर' का प्रकाशन शुरु किया जो २० मार्च से शुरू हुआ और इसके प्रकाशन के साथ उनकी ख्याति काफी हुई और कदाचित उतनी ख्याति और किसी की नहीं हुई।

सन' ५० में इन्होंने स्पेकटेटर के ढंग का (Irene) का प्रदर्शन ड्रुरी लेन थियेटर (Drury Lane Theatre) में किया, जो नौ दिनों तक बड़ी सफलता के साथ चला।

सन १७५० में उन्होंने कई साप्ताहिक निबंधों एवं कहानियों की एक माला प्रकाशित की, जिसकी दूसरी किस्त, दूसरी माला फिर उन्होंने' ५८ में प्रकाशित की, जिसका नाम था आइडलर (Idler) इसमें हल्की हास्यपूर्ण रचनाएँ संकलित थीं।

सन १७५९ में उनकी मां की मृत्यु हो गई। बीमारी एवं श्राद्ध में हुए खर्च को पूरा करने के लिये जो कर्ज लिये थे, उन्होंने एक सप्ताह में एक उपन्यास लिख दिया नाम था रेसेलस (Rasselas) इस रचना का महत्व इसके रचना-शिल्प या कथा तत्व में नहीं, वरन् जीवन के प्रति दृष्टि-कोण एवं उसके विश्लेषण में है। कहानी कहने की कला जानसन को आती नहीं थी, कथा

शेष पृष्ठ २७ पर

भारत से बोल रहे हैं

डा० श्यामसुन्दर लाल दीक्षित
अध्यक्ष—हिन्दी विभाग, रीवां (म० प्र०)

नई क्रांति की नवल जागरण की बेला में ;
हम आकाशवाणी भारत से बोल रहे हैं ।

सैंतालिस सन में अगस्त पन्द्रह था पावन ,
भारत हुआ स्वतन्त्र ; मिला अपना मन भावन ,
उनन्चास सन और दिवस पहला अक्टूबर ,
जनवादी गणतन्त्र चीन का देखा शासन ।

जहां न्याय को गाली गोली मिली सदा ही ,
उन इतिहासों के पन्नों को खोल रहे हैं ॥

राष्ट्रसंघ में हमने उनका पक्ष लिया था ,
तभी चीन ने तिब्बत पर अभियान किया था ,
सहसा उसकी जगी राक्षसी भूख निराली ,
"हिन्दी चीनी भाई" नारा नया दिया था ॥

ऊपर से था मित्र किन्तु वह शत्रु हमारा ,
हम उसके विश्वासघात को तोल रहे हैं ॥

चाऊ ने पच्चीस जून को भारत आ कर ,
स्नेह जताया नेहरू जी को गले लगा कर ,
पंचशील का देश हमारा भारत प्यारा ,
समझ नहीं पाया प्रवंचना का यह चक्कर ।

पीतवर्ण मानव ही समझा, देख न पाये ,
खाल शेर की पहन भेड़िये डोल रहे हैं ॥

पर बासठ सन में चिशूल तक धावा करके ,
भारतीय क्षेत्रों पर निज अधिकार जमाया ,
कहते हैं विस्तारवाद का हामी हमको ,
चाऊ कितनी बार सन्धि वार्ता को आया ।

मुख में मीठे शब्द, हृदय में विष भर लाया ,
ये साम्राज्यी हिंसा धर्म टटोल रहे हैं ॥

जनता का जग पड़ा मनोबल इतना भारी ,
ठगी रह गई आक्रान्ता की बुद्धि बिचारी ,
रक्तदान, जनदान और धनदान हो उठा ,
ओजस्वी वाणी नेहरू की गूँजी प्यारी ।

लिए शांति की ढाल देश की रक्षा के हित ,
मित्र शत्रु है कौन, यही हम रोल रहे हैं ॥

उठो देश के लिए प्राण न्योछावर कर दो ,
शत्रुजनों को हिमगिरि की छाती में भर दो ,
तटस्थता की नीति, स्नेह का मुकुट पहन कर ,
गांधी का यह देश सत्य से उज्ज्वल कर दो ।

तूफानों में रुके नहीं हैं चरण हमारे ,
मृत्यु और जीवन अपने हिन्दोल रहे हैं ॥

हम अपनी धरती का भाग न जाने देंगे ,
चंगेजी चाऊ के कदम न आने देंगे ,
सभी एशिया में, योरुप के इस आंगन में ,
नहीं किसी को विष के बीज लगाने देंगे ।

मैकमोहन तक भूमि हमारी सदा रही है ,
दृढ़ता की वाणी में जन-जन बोल रहे हैं ॥

सागर की कामधेनु ब्याई चढ़ती आषाढ़

शम्भु प्रसाद श्रीवास्तव
ज्ञानोदय (मासिक), कलकत्ता

नभ का गँदला आंगन, पघा बँधा पावस का,
चितकबरो गैया-सी बदरी पगुराये।

सागर की कामधेनु ब्याई चढ़ते आषाढ़,
धरती की ग्वालिन के घर आई दूध बाढ़,
रीते घट भरे सभी, पछुवा आ लगा गई,
हरियाली एकलौती बेटी है, अघा गई,

कभी यहां, कभी वहां मैदानों में कुलाँच,
रिमझिम के गदबदे बलेरु अगराये।

लगातार बरस रहे घन, न थमे पल भर भी,
सोना-छड़-सी बिजुरी तपी और फैल गई,
आल्हा की बाँहों में बाँह डाल कजरी भी,
मस्ती की सौगातें बांट गैल-गैल गई,

खिलवाड़ी बच्चों से जुगनू के झुण्ड-झुण्ड,
रात भर सेवानों पर रहते हैं छाये।

स्नान किये पगडंडी कुल ऐसी भाती है,
भींगे तन तरुणी ज्यों सत्रह बल खाती है,
ओढ़नी फुहारों की अंगों से चिपटी है,
ताल से तलैया कसबिनियां-सी लिपटी है,

दुधमुँहे नये अँसुा अचरज से देख रहे ,
बूँद-नटिन उछल-कूद-खेल जो दिखाये ।

पात-पात के हाथों अनगिन हीरे-मोती ,
मुई धूल की अब तो बात तक नहीं होती ,
पतली जलधाराएँ नागिन-सी रेंग रहीं ,
गोरी तितलियां बड़ा झूलों पर पेंग रहीं ,

बगिया में आम चुए, नयी वधू ललच गई ,
कैसे उड़ बाबुल के देश चली जाये ।

सपनों की चलन गई, नींद की बिटिनियों ने ,
पहन लिये संयोगिन मुसकानो के गहने ,
परदेशी रागों ने पौर-पौर सहलाकर ,
चूम लिया वंशी को, लगे मधुर स्वर बहने ,

गर्भवती आशाओं की सूनी गोद भरी ,
बांझ प्रतीक्षा का मन डूबे-उतराये ।

पृष्ठ २३ का शेषांश

...की क्षमता उनमें नहीं थी। आज ...शब्दावलि में यह एक लम्बी कहानी से ...कुछ और नहीं थी : उपन्यास-तत्व ...नहीं है। सन १७५८ तक इन्होंने ...विध कार्य भी सम्पादित किये, पर ...कष्ट से मुक्ति नहीं मिली, कर्ज से ...रहा और कई बार जेल की सजा ...के कारण भुगतनी पड़ी।

सन १७६५ में इस विश्व विश्रुत ग्रन्थ ...स्पीयर का प्रकाशन संभव हो सका, जिसे प्रकाशित करने का वचन इन्होंने अप... दोस्तों को बहुत-बहुत पहले दिया था।

सन १७७८-८१ के आस-पास "द... लाइफ आफ दी इंगलिश पोएट्स" क... प्रकाशन संभव हो सका। कहना चाहि... पेंशन मिलने के बाद इन्होंने जो दो महत्व... पूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित किए, वे हैं—'Th... Lives of the poets' और 'Journe... to Hebridge.'

क्रमशः

कहानी

वह

गजानन मिश्र
देवरिया, उत्तर प्रदेश

पूरे वार्ड का चक्कर काट कर वह नर्सेस रूम में चली गई। 'बड़ी बेरहम है'—एक ने कहा।

'जैसे मानवीय ममता इसे मिला ही नहीं है'—दूसरे ने कहा।

मैंने सुना सब। पर समझा नहीं कि आखिर यह कहा किसके सम्बन्ध में गया है।

कौन भई?—नजदीक आकर पूछा।

कोई नहीं।— उसमें से एक ने बड़ी लापरवाही से जवाब दिया।

'अभी तो आप लोग कह रहे थे न। कौन है ऐसी? मैंने अपनेपन का भाव दिखाते हुए पूछा।

'कब आये यहां?' एक ने प्रश्न का उत्तर प्रश्न से ही देते हुए कहा।

कल।—छोटा सा उत्तर दिया।

कुछ नहीं जानते?—फिर उसने पूछा।

जी, नहीं।

'तो जान ही जायेगा'—उसका उत्तर मिला मैंने फिर कुछ नहीं पूछा।

अस्पताल में एकदम नया आया था। कल ही बड़ी दौड़-धूप के बाद मान्जे की भर्ती हुई। यहां आने पर कुछ राहत मिली है। चार नर्सों और डाक्टरों को देख कर तसल्ली रहती है कि मैं अकेला नहीं हूँ। सभी असमय और आपत्ति के साथी हैं।

'खाना खा आओ!'—मैं सोच ही रहा था तभी बहन ने आकर टोक दिया। घड़ी की ओर निगाह गई। आठ बज चुके थे। जाड़े की रात। ठंडक के कारण आसपास सन्नाटा सा छाया हुआ था। मैं उठा। ओवरकोट डाल लिया। चल पड़ा। करीब दस बजे खाना लेकर लौटा।

डेढ़ बजे के करीब उठ बैठा। मान्जा दर्द में कराह रहा था। टेम्परेचर भी अधिक था। मैं घबड़ा गया। दौड़ पड़ा—नर्सेस रूम की ओर।

पहुँच कर ठिठक गया। वही सबेरे वाली तेज निगाह और रूखे बाल लिये खड़ी थी। कोई इन्जेकशन्स तैयार करने में व्यस्त थी।

स्टाफ! वह घूम पड़ी। व्हाट?—क्या है? आंखें तरेर कर लापरवाही से कहा। 'टेम्परेचर—दर्द...' एवरी थिंग व्हाट नाट! क्या बेड नम्बर है?

'थरटीन...' चलिये; आती हूँ। मैं मुँह लटकाये चल पड़ा। गुस्से में उस पर क्रोध आ रहा था। सोचा चोटी पकड़ कर खींच दूँ। इतना परेशान हूँ। ऐसी हालत

...र उसके लिये जैसे कुछ नहीं है। बगल
...व भाव से खड़ा था। आई। इधर-
...खने लगी। मैंने घूरती आंखों से
... वह अपने में बझी थी। थोड़ी देर
...चली गई।

...सका कराहना बन्द हो गया था। बहन
...ड़ी थी।

...रोज ही का एक क्रम सा बन गया था।
...दो बजे रात में जोरों के बुखार के साथ
...र्द उठता और तब मैं निहायत ही
... उठना था और हकबका कर वहीं
...रूम में चला जाता था। फिर उसी से
...ात होती थी। जहां शिकायत किया
...ह झल्लायो और शुरू किया अनाप-
... बकना। मुझे वहां जाने में इसी लिये
...झिचाहट होती। मगर मजबूरी थी।
...ात विचित्र स्थिति हो गयी। बुखार
... डिग्री था। मांज्जा बेहोशी में पड़ा
... बहन सिसकियां भर रही थी। मैं किं-
...य विमूढ़ हो गया था। नेर्सस रूम की
... दृष्टि फेंकी वही खड़ी थी।

...टाफ!...व्हाट? वह मेरी ओर घूम
... थी।

'सीरियस कन्डीसन' मैंने कहा।

...वरी वन इज इन सिरियस कन्डीसन
...र। व्हाट कैन वी डन, बड़ी तेजी से
... गई।

हेल्प स्टाफ, हेल्प— मैं एकदम तेजी
...ड़ गया। किन्तु उस पर कोई असर नहीं
...। निर्विकार भाव से खड़ी थी। गुस्से
...घूम पड़ा बेड की ओर। मेरे पीछे वह भी
... पहुँची। टेम्परेचर लिया। फिर नर्सेस
रूम चली गई। कुछ लाकर पिला दिया।
मुझमें प्रतिहिंसा की भावना उमड़ पड़ी। वार्ड
में रात के आठ से दिन के आठ बजे तक
रोज ही नजर आती थी। आंखें चार होते
ही मैं दृष्टि दूसरी ओर फेर लेता था। हर
कहीं इसमें रूखापन भरा है। बात व्यवहार
किसी में स्निग्धता नहीं है। कैसी है यह
नर्स? बराबर मन में सवाल उठता रहता था।

बदलती भी नहीं है, इस वार्ड से।
मेरी मुसीबत हटती। पता लगाया तो मालूम
हुआ कि दूसरे वार्ड में अगले सप्ताह जा-
येगी। संतोष की सांस ली।

अगला सप्ताह बीत गया। वह बनी
रही इसी वार्ड में।

कई दिन बीते। मगर हालत में कोई
सुधार नहीं हो रहा था। जैसा था उससे भी
गिरता जा रहा था स्वास्थ्य। कई बार डाक्टर
से कहा। हाउस सर्जन ने सुनी अनसुनी कर
कर दी। वार्ड इन्चार्ज को इतनी फुर्सत कहां।

सबेरे हाउस सर्जन आया। एक 'चि...
दिया। यह क्या होगा— मैंने पूछा। 'क्या
होगा! डाक्टर ने घूर कर देखा। ब्लड ट्रां...
फ्यूजन —खून दिया जायेगा। ब्लड बैंक...
बोतल रखे रहियेगा।—डाक्टर कह ...
अपनी कुर्सी पर चला गया। मांज्जे ...
दृष्टि जा पहुँची। कितना कमजोर है, ...
है। केवल हड्डियां ही तो बच गई हैं। ...
बर्दाश्त कर सकेगा, खून? और बेड नम्बर
बारह, पन्द्रह, बाईस सभी ब्लड से ही तो ...
मन शंका से कांप उठा। ब्लड की बात
कर बहन तो एकदम ही घबड़ा उठी। खा...
पीना छोड़ दिया। अस्पताल से निका...

को तैयार हो गई। कुछ तै पाना मेरे लिये
कठिन हो गया। रात भर विचारों में उल-
झता रहा। आखिर सबेरे डाक्टर खून की
बोतल मांगेगा तो क्या दूँगा ?

न जाने कब नींद आयी। मां मरा !
चीख सुनकर उठ बैठा। सामने का बेड
नम्बर छब्बीस वाला लड़का था। कलेजे में
दर्द था—उसके। नजदीक चला गया। देखा,
छटपटा रहा था। रात में जगी रहने के
कारण देर तक बेचारी मां बेखबरी से सो
रही थी। जगाना अच्छा नहीं समझा। नर्सेस
रूम में चला गया।

पैरों की आहट पा घूम गई। झल्लाहट
भरे स्वर में कहा—व्हाट डू यू वान्ट ? 'जी
बेड नम्बर छब्बीस छटपटा रहा है, जरा
जल्दी चलें।—घबड़ाये स्वर में मैंने कहा।
ओफ क्या बला है। कभी कोई छटपटा
रहा है तो कभी कोई कराह रहा हैं। एक
के बाद दूसरा सर पर सवार। चलिये' कह-
कर वह कुछ ढूंढने लगी। आई। इधर-उधर
देखकर चली गई। तबतक उसकी मां भी
जग गई थी। चीखने की आवाज से। अभी
कुछ ही देर पहले सोया था। बच्चे की मां
दहाड़ मार कर रो रही थी। आसपास के
लोग जमा हो गये। दो चार स्टाफ भी आ
गये। वह भी थी। 'ओ एक्स पायर्ड।
ट्रेजिक इन्ड'—एक ने सहानुभूति प्रकट करते
हुए कहा।

'वेरी डैन्जर्स इन्ड'—दूसरे ने कहा।

'बट नो वन कैन गिव लाइफ। गाड डज
एवरी थिंग गुड। बड़बड़ाती हुई वह चली गई
उसका मुँह ताकता रहा। आठ बजने जा
रहा था। मैं चिन्ता से सिर झुकाये बैठा था।
अभी डाक्टर आयेगा। खून की बोतल
मांगेगा। क्या कहूँगा उससे ? कुछ सूझ न
रहा था।

—खून की बोतल ?—बगल में खड़े डाक्टर
का स्वर था।

'जी, नहीं ला सका।

क्यों ?

' ...'

आज उसे चढ़ना था और आप न
लाये। अच्छे अटेन्डेन्ट हैं आप !—कह
आगे बढ़ गया। संतोष की सांस ली, मैं
गला छूटा।

—कल तो अवश्य ही लाना होगा
लौट कर आये डाक्टर का स्वर था। मैं
निगाह ऊपर उठी। फिर भी कुछ बोला नहीं

ओ मिस्टर ब्लड बाटिल ? —उसी
कड़ी आवाज थी।

' ... '

'नहीं लाये। पता नहीं, फिर अस्पताल
क्यों चले आते हैं, ये लोग ? हमी
मुफ्त ही मिलेगा क्या ? वह बड़बड़ाने लगी

मुझे बड़ा गुस्सा आया। चुपचाप
गया। जी बुरी तरह उचक गया था। शा
को गांधी पार्क चला गया। घूमने को मन
रहा था। डाक्टर, नर्स, खून की बोतल, बच्चे
का करुणा पूर्ण चेहरा जिसमें खून की
बोतल का स्पष्ट विरोध था, एक-एक कर
दिमाग में घूमने लगे। भारी मन लिये लौट
आया।

आठ बज गये थे। चहल-पहल शुरू
हो गई। नसें तेज, खूब तेज दौड़ने लग गई

...बड़ी फूर्ती से काम करने लगे। राउ-
...समय हो गया था। मेरा जी जोर
...धड़कने लगा। उफ! क्या कहूँगा?
...हूँगा?
...ये हैं?—प्रश्न से मुड़कर देखा। हाउस
...था।
...जी नहीं'।
...यों? आवाज कड़ी थी। ब्लड ट्रांस
...नहीं चाहता मैं। एक सांस में कह
...निगाहें डाक्टर के चेहरे पर टिक गई।
...ना देखने। निकाल ले जाइये वार्ड
...पने ही डाक्टरी करनी है—घूरते हुए
...हा। और मैं अगले दिन भी नहीं
...ता। डाक्टर ने देखना और कुछ पूछना
...दिया। नर्स भी नहीं नजर डालती
...दवायें और इन्जेकशन बन्द हो गये।
...ने निश्चय कर ही लिया था, और उस
...निकाल लाया। उस समय वह सामने
...थी, न जाने क्यों घूर-घूर कर देख रही
थी। थोड़ी देर बाद पूछा—व्हेयर? मैंने तीखे स्वर में कहा—नो व्हेयर।

० ० ०

गान्धी घाट से लौटा। बड़े इमली के पेड़ तले रूक गया। कुछ धूप चढ़ आई थी। शरीर के जोड़ जोड़ टूट रहे थे। मन भरा था। बैठा बैठा उँगलियों से जमीन कुरेद रहा था। सारे चित्र एक-एक कर आने लगे आंखों से आंसू बहने लगे।

व्हेयर इज योर नेफ्यू? मैंने मुड़ कर देखा। वही रूखे स्वभावों वाली नर्स थी। बिना बोले फिर मुड़ कर जमीन कुरदने लगा। टेल मी, व्हेयर इज योर नेफ्यू? उसका स्वर कुछ बड़ा विचित्र सा लगा।

कुछ बोला नहीं। उँगलियों को जल आसमान की ओर उठा दिया। उसने जल्दी जल्दी में पाकेट से कुछ निकाला। फिर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। उस समय उसकी आंखें आंसुओं से भरी थीं। बिना कुछ बोले पीछे लौट गई। नर्सेस होम की ओर

श्री तिलक का 'कालिदास'

रामनिरंजन 'परिमलेन्दु'
आबुसलेह रोड, गया

'कालिदास' काव्य और महाकाव्य की दिशा में, एक नवीन प्रयोग है। कामायनी तक महाकाव्यतत्व के जो पंच औदात्य निर्धारित थे, उनमें बड़ा भारी संशोधन श्री तिलक ने किया है। 'कामायनी' के महाकाव्य में रूपक तत्व की सुन्दर स्थापना है। किन्तु 'कालिदास' में रूपक-तत्व कथात्मकता को बोझिल नहीं बनता, जीवनमयता प्रदान करता है।

सौन्दर्य चित्रण में 'कालिदास' का कवि कालिदास के निकट चला गया है। ऐसा होना भी चाहिए था। कालिदास-निरूपण में कालिदास-औदार्य तो होना ही चाहिए। कालिदास का हृदय 'कालिदास' के प्रणेता तिलक के अन्दर गूंज उठा है।

हम कालिदास के पात्रों के साथ आज जीवित नहीं हैं। कालिदास की सृष्टि के साथ हम आज नहीं हैं। कभी होंगे। वह युग अब नहीं हैं। किन्तु कालिदास के युग की भाव संगति में समकालीनता का तत्व बोध खड़ा करने के सत्प्रयास तिलक ने किये हैं।

'कालिदास' में, कालिदास के हिमालय—व्यक्तित्व के अनुरूप ही, तिलक ने चिंतन का हिमालय खड़ा किया है। चिंतन की रश्मियां महाकाव्य 'कालिदास' में विकीर्ण हैं। चिंतन में मार्मिकता की आ... है, जीवन का आलोक, बुद्धि की जाग... मृदुलता, तर्क का जोवनवाद भी।

मनोविज्ञान का अच्छा ज्ञान कवि तिल... को है। मनोविश्लेषण की अन्तर्धारा ... महाकाव्य में प्रवाहित होती रही है ... मानव-चरित्र की गुहाओं में बड़ी कुशल... से कवि तिलक ने प्रवेश किया है। मा... की पकड़ तिलक को है, मानव के चेतन ... हिमालय का गरिमा बोध भी। मानव ... पकड़ में तिलक सिद्धहस्त है, मनुष्यत्व ... विभूषित तिलक की कारा है। तिलक ... कारा जीवनचर्या है, सप्राण और प्राण ... रश्मियों से पूरित भी।

कालिदास विश्व के पहले कवि ... जिन्होंने हिमालय के साथ सत्य-साक्षा... किया। उसी कालिंदास की जीवन गा... 'कालिदास' में है। कालिदास सम्ब... किबदंतियों का आश्रय कवि ने ग्रहण कि... है।

'कालिदास' में महाकाव्यकार ने काव्य... और प्रबन्धत्व का सुन्दर सामंजस्य उपस्थि... किया। और, काव्यत्व तथा प्रबन्धत्व ... शीर्ष-भाग पर रूपकत्व सूर्य सा आलो... कित है। काव्यत्व, प्रबन्धत्व और रूपक... का त्रिकोण सामंजस्य तिलक की सफ...

...ति पर यत्र-तत्र व्यक्तिगत मनोभावों आरोपण है। प्रकृति पर मनोभाव-... नायिका की मानसिक दशा निरूपित है.....

चांदनी उसे काटने लगी
कोकिला चिढ़ाने उसे लगी
चातकी उगलने आग लगी-(पृ० ५७)

चांदनी भी काटती है, चातकी आग ...ती है। हृदय-दशा की संवेदनात्मकता ...ति-दर्शन में सर्वोपरि है।

प्रकृति की रूप-संवेदना और प्रकृतिपरक ...ना में बुद्धि की तत्वचेतना का साम-...भी है तभी तो कालिकास विद्वान बन ...के बाद सोचने की जीवन-स्थिति है—

शबनम अब वह सोच रहा
किसकी आंखों का पावन जल
गिर गया आज किस कारण से
...से भींगा भू का आंचल। -पृ० ६२

बुद्धि की तत्व-चेतना को हार्दिकता के ...के रूप में कवि ने जीवन में स्वीकार ...ा है। बुद्धि की तत्व-चेतना के बिना ...दृष्टा अधूरी है। बुद्धि के खिलाफ सतू ...कर फिरने वाले सिरफिरे हृदयवादियों ...तिलक नहीं है। प्रकृति के रूप-दर्शन ...बुद्धि के तत्वबोध को संवेदनशील ...ना भी रूपान्त्रित है। तिलक ने ...कालिदास' में इसे रूपात्रित किया है।

...रूप की हार भी होती है। कवि ...कालिदास द्वारा विद्वत्तमा की अवहेलना रूप ...की पराजय है। कालिदास की भारत दर्शन ...था राष्ट्रीय समग्रता के दृष्टिकोण से सुन्दर है।

बहुजन हिताय का मंत्र जो विक्रमादित्य-संदर्भ में कवि कालिदास द्वारा अभिव्यक्त हुआ है, बड़ा पावन है। लोकवादियों को यह मंत्र अनुभूत करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को यह मंत्र अनुभूत करना चाहिए। गणतंत्र की सफलता बहुजन हिताय के मंत्र साक्षात्कार में है।

प्रभावती महाकाव्य की उपनायिका है।

वासना और ज्ञान का द्वन्द्व अनादि है। यह नित्य है। यह अस्तित्व वृत्त में नित्य प्रति होता है। वासना और ज्ञान के द्वन्द्व-चित्रण में तिलक ने सफलता ली है। ज्ञान की विजय में तिलक का आदर्शवा... है। धीरोदात्त नायक के महाकाव्यत्व की रक्षा के हेतु ज्ञान की विजय की आवश्यकता अनुभूत की गई। पूरी हुई। बाद में सत्य की विजय हुई। वासना में अन्धकार छिपा है, ज्ञान में सत्य।

कालिंदास पर प्रभावती का दोषारोप नारी-हृदय के अन्धकार को खोलता है।

तिलक का समाज-दर्शन परायन ... है। तिलक समाज-दर्शन मानव-धर्म अभिलाषी है—

मनुज पर करे मनुज विश्वास
मनुज पर टिके मनुज की आश
मनुज के प्राणों की आवाज
पहुँच जाए प्राणों के पास—पृ० १...

मनुजत्व की प्राण प्रतिष्ठा होनी चाहि... पुनर्मूल्यांकन भी, मनुज के नए मूल्यों प्रति विवेक जागरूकता भी।

अष्ट दश सर्ग में, विद्वत्तमा का आदर्श

रीत्व का हिमालयी आत्म त्याग अभिव्यक्त रता है—आत्म त्याग का चिर-उज्ज्वल मालय।

विद्वत्तमा के विरह, उसके हृदय की वेदनात्मक व्यथा को महाकाव्य में संतोष-नक और असंतुलित ढंग से नहीं के राबर स्थान दिया गया है। यह अभाव हाकाव्य को कमजोर करता है।

कालिदास की हत्या विषादपूर्ण है, ोमहर्षक है। महाकाव्यत्व की उज्ज्वलता ा बाधक कालिदास की नृशंस हत्या है। ालिदास' की कथा का यह अंश सत्याश्रित हीं है।

शब्द चयन सम्बन्धी कतिपय त्रुटियां । 'हिन्दुस्थान' शब्द का प्रयोग तत्कालीन वातावरण-रक्षा की दृष्टि से, अशुद्ध है। कालिदास के युग में 'हिन्दुस्थान' शब्द नहीं आता था। इसी तरह उर्दू, फारसी के अनेक शब्द आए हैं जो वातावरण-गरिमा की रक्षा में बाधक सिद्ध होते हैं। भाषा के मापने में तिलक को सावधान होने की आवश्यकता है। तिलक के शब्द-चयन में सतर्क जागरूकता नहीं है। सरलता तिलक का गुण है।

जिस कवि का आरम्भ-महाकाव्य 'कालिदास' से हो, उसकी विस्मयकारिणी प्रतिमा के सूर्य को अभ्यर्थना की जानी चाहिए। ऐसे कवि से हम ज्यादा-से-ज्यादा माँग सकते हैं। ऐसा कवि हमें ज्यादा-से ज्यादा दे सकता है, इसमें सन्देह नहीं।

[जी]वाणु युद्ध

* *

डा० शिवगोपाल मिश्र
प्राध्यापक—इलाहाबाद विश्वविद्यालय

[आ]ज के नाभिक-युग में बहुत ही कम [लोगों क]ा ध्यान जीवाणु युद्ध की सम्भावनाओं [की ओ]र आकर्षित होता है, किन्तु बीसवीं [शती] के प्रारम्भ के पूर्व ही नोबेल पुरस्कार [संस्]थापक नोबेल महोदय स्वयं की यह [धारण]ा बन चुकी थी कि "यदि जीवाणु [...] महास्त्र के रूप में प्रयुक्त हो सके [तो स]भी युद्ध बन्द हो जायँ"। इस कथन [...] वर्ष पूर्व सन् १८७६ में उन्होंने यह [विचार] व्यक्त किया था कि यदि युद्धों को [रोकन]ा है तो विस्फोटकों का उपयोग करना [...]। यह सर्वविदित है कि उन्होंने टी० [एन०] टी० जैसे भयंकर विस्फोटक की सृष्टि [की] जो द्वितीय विश्वयुद्ध तक युद्धों को [जी]तने के लिए प्रयुक्त होता रहा किन्तु [द्वितीय] विश्वयुद्ध के समय ही कोरिया में [की]टाणु या जीवाणु युद्ध लड़ा गया वह [...] की भविष्यवाणी की परिपुष्टि करता [है।] किन्तु क्या उसके बाद ऐसे युद्ध की [सम्भा]वना नहीं रह गई? सम्भवतः इस [प्रश्न] का उत्तर दे पाना इतना सरल नहीं [है, क्]योंकि आजकल राकेट, मिसाइल, एटम [तथा] हाइड्रोजन बम की संहार शक्तियों [पर] न केवल वैज्ञानिकों का वरन् सामान्य [जनो]ं का भी दृढ़ विश्वास है। फिर भी [जीवा]णु युद्ध सम्बन्धी जानकारी रोचक प्रतीत होती है।

जीवाणु-युद्ध के सम्बन्ध में लोगों में भ्रान्त धारणाएँ प्रचलित हैं। कुछ लोगों का कहना है कि कभी भी किसी देश पर जीवाणुओं को बरसा कर वहां के निवासियों को नष्ट किया जा सकता है परन्तु वे यह नहीं बताते कि आखिर वह कौन-सा जीवाणु होगा, और वह वास्तव में उतनी संहारक-शक्ति वाला होगा या नहीं ; उस देश की जलवायु या जीवाणु के गुण, धर्म उसे वहां फैलने देंगे या नहीं? इसके विपरीत कुछ लोग ऐसे भी हैं जो यह कहते हैं कि रोग निरोधक उपायों के द्वारा ऐसे जीवाणु युद्धों का मुकाबला किया जा सकता है किन्तु क्या कभी इस बात पर ध्यान दिय[ा] जाता है कि जीवाणु-युद्ध करने पर जीवाण[ु] प्रदान करने वालों को क्या आर्थिक ला[भ] होगा? क्या इतनी सस्ती युद्ध सामग्री व्य[...] वहन होगी? फिर क्या वह यह सम्भव [है] कि शोध करने वाले वैज्ञानिक ऐसे नर संहार के लिए जीवाणु प्रदान करने के लि[ए] राजी हो जावेंगे? ये ऐसी समस्यायें [हैं] जिन पर विचार करने की आवश्यकता है।

किन्तु यह सत्य है कि जनता कीटा[णु] या जीवाणु युद्ध से भयभीत है। हे[ग] कनवेंशन ने सन् १६०८ तथा फिर से स[...]

१९२५ में विषैली गैस (Poison gas) के प्रयुक्त किये जाने पर रोक लगा दी है क्योंकि यह गैस संहारक है, किन्तु अभी तक बैक्टरिया या जीवाणुओं का निषेध नहीं हुआ। इसका कारण यह है कि केवल जीवाणु ही नाना प्रकार के रोगों के लिए उत्तरदायी नहीं होते वरन् अनेकानेक विषाणु भी हैं जिनसे अनेक रोग फैलते हैं, परन्तु ये विषाणु बैक्टीरिया की कोटि में परिगणित नहीं होते। इंफ्लुएंजा, शीतला, खुरपका आदि रोग विषाणुओं द्वारा ही फैलते हैं, जीवाणुओं द्वारा नहीं। फलतः खाद्य पदार्थों पर अनेकानेक सूक्ष्म प्राणी वृद्धि कर सकते हैं और इनका ज्ञान हो सकने पर इन्हें संहार के कार्यों हैं प्रयुक्त किया जा सकता है।

दुश्मन की सेना के साथ जीवाणु युद्ध करने से कोई विशेष लाभ की आशा नहीं की जाती, क्योंकि जीवाणुओं की संहारक शक्ति तो महामारियों (Epidemics) के उत्पन्न करने पर अवलम्बित है। यदि इनका प्रभाव कुछ ही लोगों पर पड़े और महामारी जल्दी से फैल न सके तो जीवाणु युद्ध का प्रभाव विषैली गैस की अपेक्षा कम होगा। वस्तुतः जीवाणु-युद्ध की प्रभावोत्पादकता इसी बात पर निर्भर करती है कि उसमें लोगों में रोग फैलाने और उन्हें मारने की स्वयंचालित शक्ति हो, किन्तु तब एक दूसरे प्रकार का संकट आ खड़ा होता है और वह है जीवाणु-युद्ध चालित करने वाले पर भी जीवाणुओं का प्रभाव।

महामारियां प्रायः तीन प्रकार की होती हैं। प्रथम तो वे जिनके कीटाणु जल तथा भोजन द्वारा ले जाये जायँ, दूसरे वे जो परोपजीवियों द्वारा फैलती हैं और तीसरी जो सांस द्वारा फैलती हैं। प्रथम दो प्रकार की महामारियों को हम स्वास्थ्य रक्षा के नियमों के पालन तथा टीके लगाकर नियंत्रित कर सकते हैं। किन्तु तीसरे प्रकार की महामारी का केवल एक ही उपाय है और वह है टीका का प्रयोग। फलतः दुश्मन की सेनाओं पर हम तीसरी प्रकार की महामारी फैला करके संहार कर सकते हैं। इसके लिए आदर्श जीवाणु वह होगा जो वायु द्वारा फैलाया जा सके और जिससे अपने पक्ष की रक्षा उचित टीके की पहले से खोज करके कर ली जाय। ऐसी स्थिति में दुश्मन के पास कोई समुचित टीका न होने से ऐसी महामारी अपना पूरा प्रभाव दिखा सकेगी। किन्तु क्या ऐसे टीके की खोज किसी भी सेनानायक के लिए सरल कार्य होगा? नहीं। इसके पूर्व कि किसी भी जीवाणु युद्धास्त्र के रूप में प्रयुक्त हो अपने पक्ष की रक्षा का समुचित प्रबन्ध करना आवश्यक है और कभी कभी तो वर्षों तक ऐसा टीका नहीं मिल पाता जो यह कार्य सम्पन्न कर सके।

युद्ध के लिए कौन सा जीवाणु चुना जाय यह भी एक समस्या है। इंफ्लुएंजा तथा प्लेग—ये दो अत्यन्त विनाशक महामारियां हैं। इंफ्लुएंजा तो विषाणुओं द्वारा फैलता है जब कि प्लेग पिस्सुओं द्वारा। यह कहना कठिन है कि दुश्मन की सेनाओं पर छोड़े जाने के लिए प्रचुर इंफ्लुएंजा विषाणु उपलब्ध हो सकता है या नहीं।

छोड़ कर; जल तथा भोजन की सम्पूर्ति को संदूषित करके संदूषित पीडक जन्तु प्रविष्ट करके। संदूषण की क्रिया घने आबाद स्थानों में सरलता से हो जाती है। कुछ लोगों का अभिमत है कि पशुओं से ही यह संदूषण प्रारम्भ किया जाय। खुर और मुँह को बीमारी या भेड़ों को बीमारी सरलता से चालू की जा सकती है और जहाजों के द्वारा घनी आबादी वाले केन्द्रों में यह कार्य सरलता से हो सकता है। चाहें तो चरागाहों को ही संदूषित कर सकते हैं।

जल को संदूषित करना आसान नहीं। जलागारों में प्रविष्ट किये जानेवाले कीटाणु निष्क्रिय हो जाते हैं, क्योंकि जल छानने की जो विधियां प्रयुक्त होती हैं वे कीटाणुओं के लिए घातक होती हैं। किन्तु यदि नदियों के जल को थोड़ा सा भी संदूषित कर दिया जाय तो इच्छित फल की प्राप्ति हो सकती है। कभी-कभी पराजित सेना के जूठे बर्तनों, भोज्य पदार्थों आदि से ही विजित सेना में रोग फैल सकते हैं।

परोपजीवियों के माध्यम से रोग फैलाने का कार्य बन्दियों के ऊपर जूँ इत्यादि डाल कर सम्पन्न किया जा सकता है।

युद्ध के समय चाहे जान-बूझ जीवाणुओं का प्रयोग किया जाय या न जाने, बीमारी का फैल जाना तो अनिवार्य है। यही कारण है कि युद्ध के अवसर पर नाना प्रकार के रोग फैल जाते हैं।

किन्तु ऐसे युद्धों पर विजय पा सम्भव कार्य है। यदि सभी राष्ट्र समझ लें कि जीवाणु-युद्ध हो सकते तो वे ऐसी तैयारियां कर सकते हैं जीवाणु युद्ध निष्फल सिद्ध हो जाय। स्वास्थ्य सुरक्षा यत्नों के द्वारा जीवाणु को प्रभावहीन बनाने के प्रयास सफल रहे हैं, कि स्वास्थ्य सुरक्षा की पूरी योजना को वर्षा द्वारा ध्वंस करके जीवाणुओं को प्रभावोत्पादक बनाया जा सकता है, कि यह भी सत्य है कि यदि युद्ध को अल्पकालीन बनाना है तो और अन्य-अन्य प्रभावशा हथियारों का प्रयोग किया जावेगा, यदि किसी कारणवश युद्ध को दीर्घकालीन बनाना हो तो जीवाणु-युद्ध का आ लिया जा सकता है।

—साभार 'विज्ञान' से

* समस्या का समाधान *

* रामजी आये और चले गये, लेकिन समस्या बनी रही।
* गौतम बुद्ध आये और चले गये, लेकिन समस्या बनी रही।
* महावीर आये और चले गये, लेकिन समस्या बनी रही।
* गांधीजी आये और चले गये, लेकिन समस्या बनी रही।
* जब तक मानव है, समस्याएँ बनी ही रहेंगी।
इसलिए सवाल समस्या के समाधान का नहीं, चित्त के समाधान का है।

—विनोबा

गीत

कीर्ति चौधरी
युग-मन्दिर, उन्नाव

अब मन पावन नहीं रहा।
निश्छल मुक्त प्रफुल्ल हृदय में,
प्लावन नहीं रहा।
अब मन पावन नहीं रहा।

क्या जाने कैसे सब आया।
मैंने तो जाना जब पाया—
बकुल, शिरीष, कदम्ब सरीखे,
खिले मुकुट सा कोई दीखे,

मुग्ध दृष्टि अपलक क्षण भर को
अभ्यागत कर ले सुन्दर को,
वह अभिवादन नहीं रहा।
अब मन पावन नहीं रहा।

अपने और पराये सब से,
अनचाहे मनभाए सब से,
स्पर्धा कुछ ऐसी आ जागी,
रीत गया यह मन अनुरागी।

क्या जो मैं विपन्न अज्ञानी।
तुम उदार तो अवढर दानी।
वह आश्वासन नहीं रहा।
अब मन पावन नहीं रहा।

निश्छल मुक्त प्रफुल्ल हृदय में,
प्लावन नहीं रहा।

गीत

कुमारी रमासिंह
सिंह लाज, हसनगंज लखनऊ

सांझ ने वे चित्र धोये, रंग गया जिनको सबेरा
धूलि के कण में तिमिर ने तूलिका अपनी चलाई ।
सुनहरी मसि से महकते फूल में आभा खिलाई ।
रुक गई कूँची अचानक सामने था स्याह घेरा ॥
सांझ ने वे चित्र धोये, रंग गया जिनको सबेरा ॥

सूर्य के पदचाप के ही संग जागे नीड़ सारे ।
मुग्ध होकर गति खग ने स्वर प्रभाती के संवारे ।
पंख की गति बांध लेता लोरियों का किंतु फेरा ॥
सांझ ने वे चित्र धोये, रंग गया जिनको सवेरा ॥

पौ फटी, भिनुसार होते ही बटोही चल दिये हैं ।
राह के कुछ मोड़, पर गोधूलि ने धुँधले किये हैं ।
काफिला रुक कर डगर में डालता चुपचाप डेरा ॥
सांझ ने वे चित्र धोये रंग गया जिनको सबेरा ॥

जिन्दगी की धार में नावें बहुत सी बह रही हैं ।
लहर के उन्माद से टकरा, कगारें ढह रहीं हैं ॥
एक झोंके ने मचल कर खेल बुद बुद का बिखेरा ॥
सांझ ने वे चित्र धोये, रंग गया जिनको सबेरा ॥

चतुर्वेदी जी की 'मानस-मूर्च्छना'

शिवनन्दन प्रसाद
प्राध्यापक—स्नातकोत्तर, हिंदी विभाग—भागलपुर विश्वविद्यालय

...स और कुछ नहीं भावों की ही तीव्र-...स्थिति, उनका घनीभूत रूप है। जैसे ...की श्रेष्ठ उदात्त स्थिति वह स्थिति ...हाँ एक में अनेक की ऐसी विभा प्रोद्-...न रहती है कि उसमें मानव की सहज ...ताएँ घनीभूत हो उठें और जैसे मानव ...घनीभूत रूप न तो निर्गुण-निर्विशेष ब्रह्म और न सगुण (या सावगुण भी) जड़ीभूत ...व ही, किन्तु ब्रह्म-मानव अथवा मानव ...है, जिसमें अविनश्वर नश्वर के साथ, ...अनन्त के साथ और वैयक्तिकता ...यक्तिकता के साथ एकमेव बनी रहती ... उसी प्रकार भाव भी अपनी श्रेष्ठ ...त्तम स्थिति में वैयक्तिक तथा निर्वैयक्तिक ...तथा अनन्त, अविनश्वर तथा नश्वर ...ों का संघात होकर रस रूप में प्रतिष्ठित ... प्रवहमान होता है और जहाँ-जहाँ ...ता है, वहां वहां संक्रमण कर अपने ...में उसे रूपायित कर लेता है। काव्य ...मात्र घनत्व से सम्बन्धित है। पद्य में ...भावों की अभिव्यक्ति में कथातत्व ...सायास नियोजन होता है, वहां प्रबन्ध ...की प्रतिष्ठा होती है और जहां उनकी ...स्वच्छन्द मुक्त अभिव्यक्ति होती है, वहां ...क काव्य की।

...मुक्तकों को, उनकी गेयता और अगे-यता की दृष्टि से दो भेदों में विभक्त किया जाता है और गेय को प्रगीत अथवा गीतिकाव्य की संज्ञा मिलती है तथा अगेय को मुक्तक की। किन्तु गेयता का अर्थ स्वर-संगति अथवा राग-रागिनियों में बन्ध जाने की क्षमता मात्र नहीं। यदि गेयता का यही अर्थ हो तो बिहारी के नीति परक दोहों को देश या वागेश्वरी में बांध ग... सकता है और उन्हें प्रगीत अथवा गीतिकाव्य का प्रमाण पत्र दे सकता है। गाये जा... लायक सभी पदों या मुक्तकों को प्रगी... या गीतिकाव्य कहना कुछ वैसा ही है जै... जटाधारी सभी मनुष्यों को साधु कहना ... फिर यह कहना कि प्रगीत या गीतिका... में गीति तत्व, गतिमयता, सांगीतिक... आदि रहती है चक्रक-दोष दूषित है। जह... तक मैं समझ सका हूँ प्रगीत, गीतिका... और गीत ये तीनों अब एक दूसरे ... पृथक सत्ता रखते हैं और मुक्तक को... में आकर भी अन्य प्रकार के मुक्तकों ... भिन्न हैं। पहले तीनों का सम्बन्ध सुर ... स्वर से तथा भावना की कोमलता से अधि... है। किन्तु अन्य मुक्तकों का वैसा नहीं ... तो स्वर क्या है? गीत क्या है? संगी... क्या है? गीत और संगीत की परिभा... के प्रश्नों के अनेक उत्तर होंगे। गणितशा...

हेगा कि नियमित और निश्चित आघातों कारण वायु का जो प्रकम्प नाद रूप स्फुट होता है, वही संगीत है। र्शनिक और योगशास्त्री उसे अनहद से थवा शिव के डमरू से निर्गत बतलाकर द-ब्रह्म के नाम से स्तुति करेगा। कोई हेगा कि वाणी पहले फूटी और कोई त को प्रथम ध्वनि मानेगा। किन्तु इतना ष्ट है कि शब्द और संगीत अर्थात् णी और सुर दोनों लगभग साथ-साथ र्गत हुए, एक दूसरे के पूरक हैं और मारे विचारों भावों की अभिव्यक्ति करते । वाणी प्रधानतः विचारों को प्रकट रती है और संगीत भावों को। स्वर या र में हृदय-पक्ष की प्रधानता है तो वाणी । शब्द में बुद्धि-पक्ष की। एक का रूप रल कोमल नारीमय है तो दूसरे का परुष रुष रूप। एक तपःपूत है तो दूसरा न्न-रूप। वह रागानुगा भक्ति की तरह र्व्याज, स्वच्छन्द, निर्बन्ध है, यह वैधी क्ति की तरह विधि-विधानों, नियमों, स्कारों से आबद्ध है। जहां वाणी संगीत घुल-मिल जाती है (जैसे गीतों में) वहाँ ो शब्द (वाणी) विचारों का वाहक है ो सुर, विचारों के अन्तराल में प्राण-ारा की तरह भावों की जो सूक्ष्म अन्त-ीरा है उसका संवाहक। यह ध्यान ें रखने की बात है कि कुछ विचार अथवा भाव ऐसे सूक्ष्य, वायवीय और कोमल हैं कि वे शब्दों की पकड़ में नहीं आते और और ऐसे सूक्ष्म भावों को हमारे मन-प्राण स्वतः प्रकट कर लेते हैं—दीप्त नेत्रों, उत्फुल्ल सुखमंडल अथवा विपण्ण आकृति से। ऐसे समय यदि हृदय अह्लाद के अतिरेक से, संताप के अतिशय्य में फट नहीं पड़ता तो सुर के सहारे अपने आप को उँडेलता है। यह सुर ही गीत का आदिम स्वरूप रूप है।

आदि काल से ही मानव-जीवन के अनेक क्षणों में भाषा का उदात्त व्यवहार होता आया है। बल अथवा, स्वराघात, लय गयता तुक आदि के प्रयोगों से, अथवा उदात्त अनुदात्त, स्वरित अथ च अन्य रूपों में सुर की सहायता से ही भाषा में उदात्तता और गूँज की वशीकरण शक्ति लायी जाती रही है और इसी उदात्तीकृत भाषा से बाद में नृत्य, संगीत, काव्य आदि का विकास हुआ, ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है प्राचीन काव्य तो स्वतः गेय थे चाहे वे ऋचाएँ हों अथवा गीता और रामायण के पद। बाद में चलकर संगीत और काव्य अलग हुए। एक सुर-प्रधान हुआ और दूसरा वाणी-प्रधान। किन्तु गीतों में दोनों की सीमान्त रेखाएँ घुलमिल जाती हैं। यहाँ यह भी ध्यान में रख लेना पड़ेगा कि वह गीत जिसे कोई राग रागिनी में गा रहा होता है, संगीत शास्त्र की दृष्टि से आलोच्य होगा और यदि वही गीत यों ही पढ़ा जा रहा हो तो गीति-काव्य अथवा गीत की दृष्टि से आलोच्य होगा। मतलब यह कि पहले में शब्द (और उनमें भरे अर्थादि) गौण हैं; प्रधान है सुर और ताल; किन्तु दूसरे में शब्द (और उनके अर्थादि) प्रधान हैं। दोनों

...य यद्यपि एक है—भाव-प्रतिमा की ...और रसोद्रेक—फिर भी एक के लिए ... स्वर-संगति और ताल है, तो दूसरे ...व्यंजक, चित्रात्मक, भावोत्पादक शब्द, ...तथा छन्द विधान।

...व गीतों के पांच छः प्रमुख तत्व हैं— ...) संगति (२) विन्यास (३) गति या लय ...अभिव्यंजक स्वराघात (५) गले की ...और इन सब की तथा रूप और ...की समन्विति (६) माधुरी।

...हम गीतिकाव्य अथवा पाठ्य गीत ...हैं, वे भी रचना-प्रक्रिया तथा भाव-...में गेय गीतों के तत्वों से ही कुछ-...अपना ताना-बाना, प्रस्तुत करते हैं। ...गीतों में व्यक्ति जागतिक बन्दनों से ...हे वे नीति, धर्म, दर्शन, कुल, देश ...क्यों न हों—निर्मुक्त-निर्लिप्त सा ...है। उस निर्बन्ध स्वच्छन्दता के ...ही गीतों में प्रकृत मानव के ...मनो-रागों की सहज, अकृत्रिम, ...क्ति होती है; इसी से कहा जाता ...गीत सदा से वन्य कण्ठों में पले ...हां वह सहज सुकुमारता नहीं, ...निर्बन्ध-स्वच्छन्दता और सहज द्रवण ...नहीं, जहाँ जागतिक बन्धनों से ...प्रकृत मानव को आत्ममुग्ध सहज ...की तरल अभिव्यक्ति नहीं, वहाँ ...की आत्मा नहीं, चाहे उसे गीत की— ...को—आप दरबारी भैरवी, विहाग ...भी राग-रागिनी में बांध लें; गा लें। ...के टाइप में शीर्षक "गीत" देकर भी ...धर्म और नीति की शिक्षाएँ जहाँ दी जाती हैं; वहाँ यदि दलित द्राक्षा की तरह अपने हृदय का निविड़ रस निचोड़ नहीं रखा गया हो, तो गीत की प्रतिष्ठा नहीं हो सकती।

गीतों में भाव-विस्तार सही, भाव-घनत्व है; अनुभूति प्रसार नहीं, अनुभूति की एकान्विति है; कल्पना वैचित्र्य नहीं, कल्पना की मनोहारिता है; शैली में निगूढ़ता, ऊर्जस्विता, विराटता नहीं, सुकुमारता, कोमलता, प्रसादकत्व है।

किन्तु गति काव्य काव्यकुल का होने के कारण वाणी की ओर अपना मौग्ध्य अधिक प्रदर्शित करता है। गीति काव्यों में गीतों की सुकुमारता, भाव-केन्द्रिता, आत्म मुग्धता और तरल गति तो रहेगी पर साथ-ही-साथ काव्य का कुछ पुट, तनिक भाव-विस्तार अथवा अनुभूति-व्यंजकता के रूप में, तनिक कल्पना-वैचित्र्य के रूप में, तनिक निगूढ़ता-ऊर्जस्विता के रूप में रहेगा जब हम सूरदास के पदों को गीतिकाव्यात्म... कहते, प्रसाद के नारी-पात्रों को गीति काव्यात्मक कहते: अथवा ताजमहल को गीत काव्यात्मक कहते हैं तो वहां भी गीतिका... की सुकुमारता, कोमलता, तरलता, भावा... न्विति एवं भाव प्रसार की क्षमता पर ... मुग्ध हो ऐसा कहते हैं।

जिन्हें हम प्रगीत कहते हैं वे वास्त... में मुक्तक के गीतात्मक—गीतिमय नहीं—रूप विधान हैं। इनमें गीति-तत्व कुछ ... तक तो जरूर रहता है, पर आख्यान-त... वर्णन-मोह भी परिलक्षित होता रहता है इस दृष्टि से मेघदूत, ऋतुसंहार, हरिऔ...

। चतुर्दश पदियां, प्रसाद का "आंसू" आदि प्रगीत मुक्तक हैं। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने "आधुनिक साहित्य" की भूमिका में "नवीन प्रगीत रूप" शीर्षक देकर प्रगीतों की जो विवेचना की है, उसमें प्रगीत शब्द का व्यवहार उन्होंने व्यापक अर्थ में, मुक्तक का पर्यायवाची मानकर किया है। जभी प्रगीतों में गीत, गीतिकाव्य, प्रगीत, मुक्तक सभी की विवेचना हो गयी है। किन्तु पृष्ठ ८ पर उन्होंने प्रगीत और गीत शब्दों का सम्यक और सटीक कुछ ऐसा प्रयोग किया है; जिससे यह सूचित होता है कि इन दोनों के अन्तर का भी ख्याल उन्हें है। गीत, गीतिकाव्य और प्रगीत में सुर की प्रधानता है, निजी अनुभूति की एकान्विति है, जो क्रमश: क्षीण होता चलता है और जब हम मुक्तक नाम की चौथी विधा में आते हैं तो पाते हैं कि यह बुद्धि-पक्ष प्रधान वाणी की ओर अधिक झुका है। अभी मुक्तकों में न तो सुकुमारता के लिए और न कोमलता के लिए ही चेष्टा होती है। सूक्तियां मुक्तकों से भी अधिक बुद्धि-पक्ष की ओर झुकी रहती हैं; किन्तु सूक्तियां तो मात्र चमत्कार-विधायक ही होती हैं।

प्रसाद में प्रगीतात्मक प्रतिभा अधिक है, तो पन्त में गीतात्मक प्रतिभा अधिक। महादेवी वर्मा गीति काव्यात्मक-प्रतिभा संपन्न हैं। निराला सुर-प्रधान ऐसे हुए हैं कि जहां वाणी क्षुण्ण हो उठी है।

ठीक प्रसाद के "आंसू" की तरह यह "मूर्च्छना" एक प्रगीत मुक्तक है। इसकी प्रगीतात्मकता—सुकुमार, कोमल भावनामय और तरल प्रवाह में निहित है: तो उसका मुक्तकत्व प्रत्येक पद्य की निरपेक्ष, स्वतंत्र स्थिति में है। प्रत्येक पद्य निरपेक्ष तो है किन्तु पूर्ण निर्लिप्त निराकांक्ष्य नहीं। अतः तो प्रत्येक पूर्णपद्य हमें भाव विभोर करता हुआ आगे के पद्य के लिए भावाकुल भी करता है और इस तरह समस्त निर्बन्ध काव्य में भी एक क्रमहीन प्रबन्ध का सूक्ष्म डोरा यदि चाहें तो ढूँढ़ ले सकते हैं। फिर भी न तो "आंसू" को ही हम खण्ड काव्य कहते हैं और न "मानस मूर्च्छना" को ही, क्योंकि प्रबन्ध काव्य में कथातत्व गौण नहीं, प्रधान रहता है और इतिवृत्त वर्णन के लिए सायास चेष्टा होती है जब कि "आंसू" और "मानस मूर्च्छना" में कथा तत्व साध्य न होकर भावनाभिव्यक्ति अथवा आत्म मुग्धता और आत्म-पीड़न के प्रसार का साधन भर है। मतलब यह कि "मानस मूर्च्छना" का मूल्यांकन उसके प्रगीति-तत्व और मुक्तकत्व की दृष्टि से होना चाहिए न कि चरित्र-चित्रण वृत्त-वर्णन आदि प्रबन्ध काव्य के तत्वों की दृष्टि से।

"आंसू" की तरह ही "मानस मूर्च्छना" भी विरह काव्य है। किंतु कवि ने विरह के 'आर्त क्रन्दन के पीछे छिपे हुए दुःखा तिरेक को दीर्घ निःश्वासों में छिपे हुए संयम से बांधा" है वह जानता है कि—

प्रीति न अरुण सांझ के घन सखि!
पल भर चमक बिखर जाते जो मना कनक
गो धूलि लगन सखि!
प्रीति नील गभीर गगन सखि!

[...] रहा है विरत धरणि को निज सुख में
नित मूक-मगन सखि !

[...] धधक धधक मत जल सखि !
[...] आँच धुनी विरहिन की, नहीं
लपट की चहल-पहल सखि !

अन्तर्दाह मधुर मंगल सखि !
[...] स्वाद कुछ ज्ञात उसे, जो सुलग रहा
तिल-तिल पल-पल सखि !

इसी से तो "मानस मूर्च्छना" का कवि [...] है -

"हैं बरस वारिधर जाते
वे ही जो नीरव घिरते
घन घोर गरजने वाले
कितने हैं वारि बरसते"—

इस प्रकार आर्त क्रन्दन का आवेग संय- [...] मर्यादित होकर जिस शोभन-शाली- [...], मनोहारिता और सुकुमार भाव-चित्र- [...] योजना से प्रकट होता है वही उसे [...]त्मक बना देता है ।

विलास की लौकिक गन्ध "आँसू" में [...] है और 'मूर्च्छना' में भी । रूप-चित्रणों [...] मादकता छलकी-छलकी पड़ती है—

'बावलो बेलियां थीं, कर में
थे कुसुमपात्र कादम्ब - भरे
डूबी रसना थी मधुपों की
भृंगों के मधु गुंजित टहरे
उत्कंठा भरी सरसियों की
बोलने लगीं किंकिणियां भी
चल पड़ीं किशोरी क्या जाने ?
किस ओर हुलस हँसिनियां भी

मन्मथ-मनोज के पल्लव-कमान पर चढ़े [...] और मुग्धा कलहँस किशोरी के यौवन- [...] के तीरे होने के, तरु तरु की शीतल छाया में यौवन की क्रीड़ाओं के, उन्मद मलयानिल-सा कलियों की व्रीड़ा हरने के, लताओं की मृणाल-भुजाओं का तरुवों के गले पड़ने के, सरिताओं की पृथुल लहरियों का चुम्बन की प्यास लेकर दौड़ पड़ने के, मनोहर गत्यात्मक जो चित्र हैं, उनसे विलास मन प्राणों में एक सौरभ-श्लथ प्रमत्तता छोड़ता-सा दीख पड़ता है । क्योंकि विलास की, लौकिक वासना की, गंध है, इसलिए किसी काव्य की शालीनता, पूतता और महिमा क्षुण्ण हो जाय यह कोई बात नहीं । विलास का यह प्रमत्त मोह चाहे अतृप्त दमित इच्छाओं का प्रतिरूप हो अथवा तिरस्कृत रतीच्छा ही आत्मरति में परिणत हो आयी हो, है यह रम्य और—मैंने जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया है कि मानव का घनीभूत रूप निर्गुण ब्रह्म नहीं और सगुण जड़ी-भूत मनुष्य भी नहीं, किन्तु ब्रह्म-मानव अथवा मानव-ब्रह्म है,—वैयक्तिक तथा निर्वैयक्तिक, वासना-श्लथ तथा वासना विवर्जित, ऐंद्रिय तथा अतीन्द्रिय होकर आकर्षक हो सका है । 'मानस मूर्च्छना" के कवि ने विलास-वासना की गंध को दुर्गन्ध होने से बचा लिया है कल्पना के नियोजन से और प्रकृति के अनन्त अप्रस्तुतों के संयोग से । फलस्वरूप जो लौकिक विलास है, उसमें रूप, प्रेम, यौवन, मस्ती का आग्रह तो है पर वह मत्त मादकता और मांसल पुथुल इन्द्रियोत्तेजकता नहीं, जो अंचल अथवा तथाकथित फ्रायडवादी काव्य शास्त्रीय काव्यों में प्रभूत मिलता है । सर्वत्र प्रसादीय शालीनता का निर्वाह है किन्तु सदा प्रसादीय अस्पष्टता, रहस्यमयता, जो 'आंसू' को झिल-मिल बना देती है, वर्जित हुई है । —क्रमशः

* पावस गीत *

रामनारायण सिंह 'मधुर'
मंदार विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार)

अब न अधिक तरसाओ बादल ।
उन्मन मन बहलाओ बादल ॥

चातक जोहे बाट तुम्हारी,
कृषक लगाये आशा ।
सरिताओं का पेट शेष है,
आतुर सागर प्यासा ।

लागी लगन बुझाओ बादल ।
अब न अधिक तरसाओ बादल ॥

बीत न जाये पावस ऋतु की,
मादक भरी जवानी ।
करना है शृङ्गार प्रकृति को,
ओढ़ चुनरिया धानी ।

छूछा मत इतराओ बादल ।
अब न अधिक तरसाओ बादल ॥

रीता - रीता सावन बीता,
बीता जाता भादो ।
डाल हिंडोला झूल गगन पर,
मीत कजरिया गादो ।

घर - घर अलख जगाओ बादल ।
अब न अधिक तरसाओ बादल ॥

* चन्दा और मैं

महेन्द्र नारायण "मस्ताना"
शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर

×

चन्द्रलोक में चन्दा
और धरती पर मैं—
क्या उसे पाना संभव है ?
कभी नहीं, कभी नहीं, कभी नहीं।
आखिर ऐसा क्यों ?
इसलिये कि वह नील गगन में जो है
उसके इर्द गिर्द अगणित सितारे भी तो हैं
देखने वाले क्या —
पानेवाले उसे चन्द्र लोक तक ढूँढ़ते हैं।
क्यों ?
इसलिए कि उसमें रूप है, गुण है और है उसकी चाल में मस्ती
और मैं—
डाल से टूटा हुआ एक फूल
पैरों तले कुचली गयी धूल
और
अपनी मासूम जिन्दगी की सबसे बड़ी भूल।
तभी तो—
धूल, धूप और धुआं मेरे तीन सहचर हैं।
कोई देखकर भी नहीं देख पाता मुझे—
क्यों ?
क्योंकि रूप जो नहीं, गुण जो नहीं……।
लेकिन हाँ, विज्ञान वहाँ पहुँच चुका—
पैसे के बल पर—पर, पाया क्या ?
पैसे से चन्द्रलोक पाना संभव है—
पर चन्दा नहीं।
चन्दा तो कल्पना का अभिन्न है।
और कल्पना मेरी चिर-सहचरी है
इसलिए एक दूसरे को पाना
असंभव नहीं, असंभव नहीं, असंभव नहीं।

सती

आशमा

डाकिये ने खबर लायी कि शांति के पति का नेफा में देहान्त हो गया। वह फौज में था। चीनियों से लड़ने गया था। उसे चीनियों की गोली लगी थी।

शांति रोयी नहीं। घण्टों चुपचाप बैठी रही। बाद, जैसे किसी ठोस निष्कर्ष पर पहुँच गयी हो, उठी, कपड़े बदले और सीधे अपने ससुरजी के पास पहुँची। बूढ़ा अपनी पुत्र बधू की गंभीर मुख मुद्रा देख घबराते हुए पूछा—"क्या चाहिए ? बेटी, कहीं जाना है क्या ?

शांति ने कहा—"पिताजी, मैं सती हो जाना चाहती हूँ। आप मेरे लिए अविलम्ब सारे प्रबन्ध कर दीजिए।"

बूढ़े को जैसे किसी ने बड़े जोरों से एक धक्का लगा दिया हो। अधीरता से फौरन उठ खड़े होते हुए कहा—"क्या कहा ? सती ! तू पागल तो नहीं हो गयी ?"

शांति ने धीरे से कहा—"पिताजी, मेरा निश्चय अटल है। मैं सोच विचार करके इस नतीजे पर आयी हूँ। आपको मुझे इस पुण्य कार्य से विमुख नहीं करना चाहिए। फायदा नहीं है, सफलता भी नहीं मिलने की।"

बूढ़ा एकाएक रो पड़ा। अत्यन्त व्याकुलता से उसने अपने पुत्र-वधू के निकट जाकर उसे समझाते हुए कहा—बेटी, तब मुझे भी कुछ जहर ला दो। मैं तब किसे देखकर जिऊँगा। मेरा तो अब कौन आसरा ही क्या ? मुझे तुम किसके जिम्मे छोड़कर जाना चाहती हो ?"

शांति बोली—"ये गाछ, पौधे और पक्षी किसके जिम्मे है ? संसार के अणु अणु किसके संरक्षण- संचालन के आधार क्रियाशील है ? आप व्यर्थ रो रहे हैं परमार्थतत्व को समझिये। मुझे आप रोकिए नहीं। मेरा सारा प्रबन्ध कर दीजिए मुझे जाना ही है।"

बूढ़ा धारा प्रवाह रोते हुए पागल प्रलाप करने लगा—नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता, मेरे जीते यह कभी न होने दूँगा तुम्हारा माथा ठीक नहीं। लिए ऐसा बोल रही हो।"

अब शांति भी आवाज कड़ी और करते हुए बोली—पिताजी, संसार की भी शक्ति मुझे अपने इरादे से हटा नहीं सकती। जिसने परमार्थतत्व को समझ लिया और जिसे ज्ञान की चोट लग गयी उनका निश्चय महा सुमेरु जैसे ठोस और अडिग हो जाता है।

बूढ़ा चिल्लाया—मुझे कुछ नहीं सुनना है, मैं तुम्हें कमरे में बन्द रखूँगा। यह भयंकर कार्य नहीं करने दूँगा। मुझ से कुछ भी प्रबन्ध नहीं होने का।

...अब शांति भी गरज उठी—पहुँचा दो मुझे नेहरू के पास। वे ही मेरा ...करेंगे।"

बूढ़ा आवाक हो शांति को देखते ही ...रह गया—बाद रुक रुक कर पूछा—...रू के पास ? नेहरू तेरा प्रबन्ध कर...! वह तुम्हें सती होने देंगे ?"

शांति चिल्लायी—जरूर, उन्हें तो ...ही पड़ेगा। बात ही ऐसी है।

बूढ़ा बोला—"कभी हो नहीं सकता। ...इन सारी बातों को वाहियात और ...पूर्ण समझते हैं।"

शांति बोली—"आप देख लीजियेगा। ...निसन्देह मेरा सारा प्रबन्ध कर देंगे। ...मुझे सती होने देंगे।"

बूढ़ा बहुत देर चुप रहा। बाद मुस्कुराते ...कहा—"अच्छा, अब मुझे यही देखना है। ...नेहरू तुम्हें समझा-बुझाकर वापस कर देंगे।"

शांति बोली—देखियेगा आप! वह ...मेरे लिए सभी प्रबन्ध कर देंगे।

बूढ़ा बोला—"ठीक है, चलिए; मुझे भी इसी को देखना है।"

दूसरे दिन दोनों मिलकर नेहरू के ...स्थान पर पहुँचे। बूढ़े घबड़ाये ...कि उनकी यह अनपढ़ गवारिन पुत्र वधू ...मंत्री के समक्ष कुछ उत्पात न ...दे। पर उसका यह विश्वास था कि ...को इस पागलपन से बचाने का ...कोई उपाय भी नहीं है।

नेहरूजी के सामने पहुँचते ही शांति बोली ...जी, मेरे पुरुष को गोली लगी है नेफा की ...में। वे मर गये हैं।"

नेहरूजी ने बड़े ही ध्यान से उस लड़की को देखते हुए धीरे से कहा—"मुझे सख्त अफसोस है।"

शांति बोली—है, मगर आपके अफसोस से मुझे कोई लाभ नहीं है।"

नेहरू जी ने पूछा—"क्या चाहती हो ?"

शांति सहसा गरज उठी—"मैं सती होना चाहती हूँ, इसलिए आयी हूँ, मेरा सारा प्रबन्ध कर दीजिये। अभी, तुरन्त इसी वक्त। एक-एक क्षण की देरी मेरे लिए नरक यातना हैं।

नेहरू जी एकाएक अनजाने ही उठ खड़े हो गये और चिल्लाये—"क्या कहा ? सती ! इस जमाने में और वह भी मेरे पास मेरे जरिये ! पागल हो गयी है क्या ?"

शांति ने भी उसी आवाज में प्रतिवाद किया—साहब, पागल नहीं, आदमी हूँ। आदमी भी नहीं, एक महान चेतना हूं। मुझे कोई नहीं रोक सकते। मैं सती होऊँगी ही और आप के सामने, आप ही के जरिये। आप ही के प्रबन्ध से।"

नेहरू गरज उठे—"क्या मतलब है तेरा ? कैसे होगी तुम सती ? क्या प्रबन्ध चाहती हो तुम मेरे द्वारा। बोल..."

शांति भीषण स्वर में जैसे बज्र गि... रहे हों बोली—"सुनिये, प्रधान मंत्री जी आप मुझे भी भेज दीजिये नेफा के मैदान में और वहां के सब से खौफनाक और जिम्मेदारीपूर्ण काम मुझ पर सौंप दीजिए मैं उसी कार्य में अपने को झोंक दूँगी और मैं इसी काम को मांगने आयी हूँ आप मुझे इजाजत दीजिए और उसका प्रबन्ध आप कर दीजिए। मैं अभी तुरन्...

वहां जाना चाहती हूँ। आखिर आप को आदमी चाहिए। मै इसे अपना फर्ज समझती हूं।"

नेहरू जी की आंखें सहसा भींगी हो गयीं। वे क्षण भर उस देहाती लड़की को देखते खड़े रहे। उनका दिल बड़े जोरों से धक् धक् कर रहा था। जितना ही उसकी ओर देखा, उतना ही उनका दिल भर भर आने लगा। उनका भावुक हृदय अब बांध तोड़ कर बहने लगा। दौड़ कर उस लड़की को पकड़ कर अपने सीने से लगा लिया और बार-बार उसका माथा चूमने लगा और धीरे से कहा—"बेटी, सतीत्व की तेरी यह परिभाषा संसार में अमर रहेगी, भारतीय वांगमय में अक्षुण्ण रहेगा। बेशक मैं तुम्हें इसका सारा ही प्रबन्ध कर दूँगा और वह भी अभी, तुरन्त ही, पर जानती हो एक बात! देश का सब जिम्मेदारीपूर्ण और खौफनाक काम नेफा में नहीं, मेरे ही दिमाग में चलता है। मेरे ही इर्द-गिर्द में यह सारा अनुष्ठान हो रहा है। नेफा में मात्र एक दिखावा है। इसलिये तुम मेरे ही इस यज्ञ कुण्ड में अपने को झोंक दें। जैसे मैं अपने को प्रतिदिन झोंक रहा हूँ वैसे तुम भी अपने को झोंको। दोनों मिलकर एक ही साथ सती हो जायेंगे।"

बूढ़ा आंसू बहाते हुए अकेले ही अपने घर लौट आया। न जाने वे खुशी के आंसू थे या दुःख के। पर उसका दिल एकाएक कह बैठा—अरे चल, तू भी जाकर सती हो जा। इससे बढ़कर परमेश्वर साक्षात्कार की साधना क्या?

मंदार शिखर से

*

मंत्रियों के त्याग-पत्र

कई राज्यों के कांग्रेस संघटन की
नि से इधर नेहरूजी बहुत चिन्तित
और कोई मार्ग ढूँढ़ रहे थे कांग्रेस संघटन
सुदृढ़ बनाने के लिए। डूबते को तिनके
सहारा के रूप में, नादर योजना उन्हें
ी और उस पर अपनी सिफारिश देकर
ग्रेस कार्य समिति की स्वीकृति से उन्होंने
निश्चय किया कि छः राज्यों के
मंत्रियों एवं छः केन्द्रीय मंत्रियों
त्याग पत्र ले लिए जाय। इसके फल-
प उन मंत्रियों ने त्याग-पत्र दिए।
के त्याग पत्र स्वीकृत भी हो चुके हैं।
की पृष्ठभूमि में उनका यही विचार है कि
ग्रेस की गिरती हुई प्रतिष्ठा को पुनः
ने के लिए सरकार के सुयोग्य मन्त्रियों
अपने पद से हटकर कांग्रेस संघटन को
का अवसर दिया जाय। इससे
नीय जनता यह समझेगी कि कांग्रेस
के शीर्षस्थ नेताओं को अपने पद का मोह
नहीं है। वे जनता के बीच सच्ची सेवा के
लिए आज भी तत्पर हैं।

श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने वक्तव्य
में इन त्याग-पत्रों का स्वागत करते हुए
यह आशा प्रकट की है कि कांग्रेस-कारा
से बाहर निकल कर पद-मुक्त कांग्रेसजन
सच्चे हृदय से गांधीजी के आदर्शों के
अनुकूल जन-सेवा में लगेंगे। उनका यह
कथन समयोचित है और सभी पद-मोह
ग्रस्त राजनीतिज्ञों के लिए विचारणीय है।
किन्तु हमें यह देखना है कि किस भावना
से प्रेरित होकर कांग्रेस नेताओं ने यह
कदम उठाया है। स्वातन्त्र्य-प्राप्ति के बाद
नेहरूजी ने सरकार को मजबूत बनाना
सर्वोपरि कार्य माना और इसीलिए उन्होंने
कांग्रेस संघटन की अपेक्षा सरकारी कार्यों
पर विशेष ध्यान दिया। इसका फल यह
हुआ कि उनके सभी सहकर्मियों

का झुकाव सरकारी पदों की ओर हो गया और कांग्रेस संघटनात्मक कार्य को गौण समझा गया। आचार्य कृपलानी जब कांग्रेस के अध्यक्ष हुए तो उन्होंने इस प्रवृत्ति को रोकने की चेष्टा की। लेकिन उनके कार्यों में अनेक प्रकार की बाधाएँ उपस्थित की गईं। तब उन्हें अपनी प्रतिष्ठा एवं अपने उच्च आदर्शों की रक्षा के लिए कांग्रेस छोड़ना पड़ा। तब से आज तक कांग्रेस में पदलोलुपता इतनी बढ़ गई कि विघटन के लक्षण दीख पड़ने लगे और नेहरूजी को बाध्य होकर अब नया रास्ता पकड़ना पड़ा है। यहाँ पर हमें यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि नेहरूजी जहां कांग्रेस सघटन को मजबूत बना जनता की सेवा करना चाहते हैं वहां जयप्रकाशजी सीधे जनता के बीच जाकर प्रत्यक्ष कार्यों के द्वारा उसे स्वावलम्बी एवं स्वशासित बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं। जयप्रकाश जी का यह विचार है कि सभी राजनीतिक दल के कार्यकर्त्ता गरीबी, शोषण, अन्याय एवं अशिक्षा के अन्धकार को दूर करने के लिए सम्मिलित रूप से शक्ति लगायें। इसीलिए उन्होंने नेहरूजी को यह राय दी थी कि यदि वे देश की जनता को उठाने के लिए सरकारी पद छोड़ जनता में घूमें तो देश में नव चेतना उत्पन्न होगी। किन्तु नेहरू जी ने इस पर ध्यान नहीं दिया। गांधीजी ने अपनी मृत्यु के एक दिन पहले ही कांग्रेस संघटन को तोड़ कर लोक सेवक संघ के द्वारा जनता से सीधा सम्पर्क बनाये रखने की सलाह दी थी। उन्होंने कांग्रेस के विघटनकारी तत्वों को तभी परख लिया था किन्तु उस पर गम्भीरता के साथ विचार नहीं किया गया। आज सरकार और जनता के बीच में कांग्रेस की हालत त्रिशंकु की तरह हो गई है। सरकार और जनता के बीच सम्बन्ध जोड़ने में यह विफल रही है। यह एक ऐसा यंत्र बन गई है जिसके द्वारा येन केन प्रकारेण सत्ता हथियाने की चेष्टाएँ होती हैं। आम जनता की नजर से यह उतर गई है। देश को आर्थिक विषमता की खाई में सारी योजनाएँ असफल हो जाती हैं और उसके आदर्श लुप्त हो जाते हैं। अतः इस दुःस्थिति से कांग्रेस को निकालने की शक्ति इन पद मुक्त मन्त्रियों में उत्पन्न हो जायगी यह सम्भव नहीं दीखता।

श्रीप्रकाश जी ने सरकारी कार्यों की महत्ता दिखाते हुए योग्य व्यक्तियों के वहां बने रहने की आवश्यकता पर देश का ध्यान आकृष्ट किया है। यह ठीक है कि सरकार में योग्य व्यक्ति रहें। लेकिन जो कार्यकर्त्ता जनता के बीच में रहते हैं उनकी उपेक्षा नहीं होनी चाहिए।

गांधी जी ने कहा था कि जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी है उन्हें सरकारी खजाने से वेतन नहीं लेना चाहिए तथा अनावश्यक तड़क भड़क में खर्च नहीं करना चाहिए। क्या इन बातों पर ध्यान दिया गया? कांग्रेस के वर्तमान अध्यक्ष का कथन है कि जो कांग्रेसकर्मी कल भिखमंगे थे वे ही आज करोड़पति बन गये। पदारूढ़ व्यक्तियों की सम्पत्ति का विवरण देने का जो निश्चय हुआ था उसकी अवहेलना

गई। इससे स्पष्ट है कि कांग्रेस संघटन
जीव बन गया है। जब तक इसकी रीति
में परिवर्तन नहीं होगा तब तक इसमें
नहीं आ सकता, चाहे नेहरू जी
क्यों नहीं गद्दी छोड़कर बाहर आ जाएँ।

लोक-सभा की झांकी

भारतीय लोक-सभा के इतिहास में
पहला ही अवसर है कि सरकार के विरुद्ध
सदस्यों के समर्थन से अविश्वास का
प्रस्ताव रखा गया। पहले पचास सदस्य
इसके लिए तैयार नहीं होते थे। ६१
सदस्यों ने प्रस्ताव के पक्ष में मतदान किया।
सदस्य तटस्थ रहे जिनमें कम्युनिष्ट तथा
सदस्य भी थे। प्रस्ताव का विरोध
सदस्यों ने किया।

लोक सभा के इस अधिवेशन का बड़ा
है। स्वयं नेहरूजी ने स्वीकार किया है
यद्यपि इसमें विरोधी दलों की ओर से
अवास्तविक बातें कही गई हैं लेकिन
प्रकार से हमें लाभ ही हुआ है।
अविश्वास के प्रस्ताव में देश की आर्थिक
विषमता के चलते जो नैराश्य की भावना उत्पन्न
है उसको इस संकट पूर्ण घड़ी में देश
के लिए भयानक बताया गया है।
कृपलानी जी ने मार्मिक शब्दों में कहा कि
अपने पुराने साथियों के विरुद्ध अविश्वास का
प्रस्ताव रखते हमें दुख हो रहा है लेकिन देश
हित और कर्तव्य पालन में भावना का कोई
स्थान नहीं। उन्होंने वर्तमान कांग्रेस
सरकार के बहुमत के बारे में विवेचन करते
हुए कहा कि कुल मतदाताओं के बीस प्रति-
शत से भी कम मतों के बल पर वह बहुमत
बना हुआ है। देश भर में जितने मतदात
हैं उनमें पचास प्रतिशत ही मतदान कर
हैं और कुल मतदान में से चालीस प्रतिशत
मत ही कांग्रेस को मिलते हैं। अतः कांग्रे
के विरोध में ६० प्रतिशत मत विभिन्न दलों
या स्वतन्त्र उम्मीदवारों में बँट जाते हैं।
यदि इन मतों को देशरक्षा जैसे सामान
कार्यक्रम के प्रश्न पर संघटित किया जा
तो कांग्रेस सरकार के स्थान पर अन्य दलों
एवं स्वतन्त्र व्यक्तियों की मिलीजुली सर
कार बनाई जा सकती है। लेकिन इस
लिए विरोधी दल तैयार नहीं। अत
कांग्रेस दल की ओर इस विचार की खिल्ल
यह कह कर उड़ाई गई कि विरोधी द
के सदस्य विभिन्न स्वर में जब बोलते
तो बड़ा विचित्र लगता है।

डा० लोहिया ने देश की आर्थिक विष
मता का कारुणिक चित्र रखते हुए क
कि एक तरफ २७ करोड़ लोगों के प्रति
दिन की औसत आय तीन आने तो दूस
ओर एक धनी परिवार के प्रतिदिन
आय तीन लाख रुपये हैं। इसका खंड
गुलजारीलाल नन्दा ने यह कहकर कि
कि प्रतिदिन की औसत आय बारह अ
है। योजना की आलोचना करते हुए लोहिया
ने कहा कि देश में १७-१८ करोड़ एक
परती जमीन आबाद नहीं की गई
कि छतों और गमलों में अन्न पैदा क
का आदेश दिया जाता है। नेहरूजी
उम्र देखते हुए उन्हें छोड़ भी दिया जा
लेकिन ५० लाख व्यक्ति ऐसे हैं जो उन

छत्र-छाया में फल फूल रहे हैं और उन्हीं जैसा अनुकरण करते हुए जनता पर बोझ बने हुए हैं। अन्त में उन्होंने सरकार पर जातीयता एवं भ्रष्टाचार के आरोप लगाते हुए कहा कि पिता सरकार का मालिक तो लड़की जनता की मालकिनी बन गई है। कांग्रेस परिवार में एक व्यक्ति राजनीति में है तो दूसरा व्यापार में। भाषा की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि साधारण लोगों को अपनी मातृभाषा में पढ़ने-लिखने का अभ्यास कराया जाता तो जन शिक्षण होता और लोग स्वेच्छापूर्वक योजनाओं में भाग लेते, लेकिन आज अंग्रेजी के कारण वे सरकारी गतिविधि को समझ ही नहीं पाते।

कृपलानीजी ने प्रस्ताव विरोधी व्याख्यानों का विवेचन करते हुए कहा कि नेहरूजी लोगों को अच्छी तरह जीने के लिए कहते हैं किन्तु यहां तो जीना ही कठिन हो रहा है। श्री कृष्ण मेनन से उनकी झड़प उस समय हो गई जब कि उन्होंने नेफा की विफलता के लिए मेनन को दोषी ठहराया। मेनन ने कहा कि कृपलानी जी पहले सैनिक खर्च में कटौती करने की सलाह देते थे और भाईवाद का प्रचार करते थे।

कृपलानीजी का यह कहना ठीक ही था कि सरकार की ओर से उठाये गये प्रश्नों का समुचित उत्तर नहीं दिया गया। श्री मेनन के लिए यह शोभा नहीं देता कि वे कृपलानी पर भाईवाद का प्रचार करने का अभियोग लगायें। यदि कृपलानीजी ने कभी किसी संदर्भ में यह कहा कि युद्ध में अधिक नहीं खर्च करना चाहिए तो इसका यह अर्थ नहीं कि जो पद पर हैं वे अपने उत्तरदायित्व की उपेक्षा करें।

नेहरूजी ने लोहिया पर व्यक्तिगत आक्षेप लगाने की चर्चा की। इसके सम्बन्ध में लोहियाजी ने उत्तर दिया कि नेहरूजी ने ही मुझे 'गुण्डा' कहा था।

लोक सभा के उक्त वक्तव्यों से यह झलकता है कि जनता की वास्तविक समस्याओं पर गंभीरता पूर्वक विवेचन के स्थान पर व्यर्थ की बातों में अधिक समय नष्ट किया जाता है। सारे देश की अवस्था का सही चित्रण भी नहीं रखा जाता। दलबन्दी एवं स्वार्थ का बादल सत्य-सूर्य को ढक देते हैं। फिर भी सत्य की झलक कभी कभी मिल ही जाती है।

भ्रष्टाचार का इलाज

गत १८ अगस्त को पटना में भारत सेवक समाज परिसंवाद में भारतीय योजना समिति के सदस्य श्री मन्नारायण अग्रवाल ने अपना यह विचार व्यक्त किया कि भ्रष्टाचार हमारा सामाजिक रोग बन गया है। इससे प्रजातन्त्र के विकास में बाधा पड़ रही है। अतः छोटे-छोटे कर्मचारियों की ही जांच आवश्यक नहीं है बल्कि संदेह होने पर उच्च पदाधिकारियों पर भी उचित काररवाई करनी चाहिए। यदि हमारे मंत्री दोषी पाये जायँ तो उनको भी शीघ्र दंडित करना चाहिए।

लोक सभा में नेहरू जी ने सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश दास के उस प्रतिवेदन

...िक किया जिसमें सिराजुद्दीन कम्पनी ...कागज की जाँच से पता चला है कि ...पूर्व तेल-मन्त्री श्री केशवदेव मालवीय ...अंशों में दोषी सिद्ध हुए हैं। उस ...वेदन के पूरे अंश को सदस्यों के सामने ...स्तुत करने में नेहरूजी ने इसलिये ...र्थता प्रकट की कि वह सिर्फ उन्हीं के उप...के लिए तैयार किया गया था, इस पर प्रजा ...लिस्ट सदस्यों ने कहा है कि दास ...वेदन में मालवीय जी पर जो दोषारोपण ...ा है पूरी जांच के बाद उसे प्रकाश ...ाना चाहिए।

...लोहियाजी ने तो न्यायाधीश दास के ...रीति पर हो आक्षेप किया है कि ...वेदन नेहरूजी के उपयोग के लिए है, ...जनता के लिए नहीं। उनका कहना ...के सार्वजनिक मामलों की जांच सब के ...ने आनी चाहिए।

क्या नेहरूजी लोहिया जी के तर्क एवं ...जनारायणजी की सलाह पर ध्यान देंगे?

रूस-चीन का तनाव

'दी पीपुल' समाचार पत्र में ...प्रकाशित हुआ है कि रूसी एवं चीनी ...ों का जमाव उनकी सम्मिलित सीमा पर ...रहा है तथा रूस अपने विमानों द्वारा ...नी गति विधि का पता लगा रहा है।

यह पता चला कि रूसी विमान उन ...चीनी राज्य फार्मों का निरीक्षण कर रहे ...है जिनके सबन्ध में उन्हें सैनिक अड्डे ...ने का सन्देह है। इसकी प्रतिक्रिया ...चीन पर यह हुई है कि वह रूस पर फारमोसा के राष्ट्रवादी चीनियों को चीन की भूमि पर हमला करने के लिए उकसाने का अभियोग लगानेवाला है। इस समाचार से रूस चीन के तनाव में जोर आने की झलक मिलती है।

बम्बई की हड़ताल

बम्बई में अगस्त के मध्य में डेढ़ सप्ताह की मजदूर हड़ताल नगरपालिका मजदूर यूनियन की ओर से चली। उसमें बारह हजार जहाजी कर्मचारियों ने भी भाग लिया। चीजों की कीमत बढ़ने के कारण मजदूरों ने महंगाई वृद्धि के लिये हड़ताल की शरण ली थी। सुरक्षा मंत्री चहवाण के आश्वासन के बाद हड़ताल बंद हुई। लेकिन सारे देश में महंगी का विकट प्रश्न खड़ा है। इसे रोकने के लिये सरकारी वक्तव्य एवं आदेश निकालते रहते हैं लेकिन व्यापारियों पर इसका कोई प्रभाव पड़ता नजर नहीं आता।

नेहरूजी ने आजादी के पहले कहा था कि चोर बाजारी करने वालों को आम सड़क पर बेंत लगाने की सजा दी जायगी। जनता पूछती है कि शासन की बागडोर थामने के बाद उनका वह जोश कहां गया?

कोशी तटबन्ध

कोशी की बाढ़ से रक्षा के लिए तटबन्ध की व्यवस्था हुई है। पर उसमें प्राय इतनी बाढ़ आ जाती है कि बांध को भी वह पार कर जाती है। निर्माण कार्य में लगे हुए भारतीय विशेषज्ञों में नैतिकता एवं राष्ट्र-सेवा की भावना उत्पन्न करना बहु...

आवश्यक है। हमारे बन्ध इतने मजबूत बनें कि बाढ़ की चपेट में आबाद स्थान न पड़ जाय, इसकी सुव्यवस्था होनी चाहिए।

आशा है सरकारी अधिकारी एवं जनता दोनों के सहयोग से यह राष्ट्रीय महत्वपूर्ण कार्य सुसम्पन्न होगा।

हमारे धार्मिक स्थान

कहा जाता है कि भारत धर्म प्रधान देश है। एक समय यहां धर्मस्थानों पर मानव हृदयों का मधुर मिलन होता था। विचारों का आदान-प्रदान होता था। सत्संगति होती थी। शासक-शासित एवं अमीर-गरीब-सभी मानव सतान की तरह मिलते थे। लेकिन आज लगता है जैसे हमारे धार्मिक स्थान निष्प्राण से हो गये हैं। न तो जनता का और न सरकार का ही उधर ध्यान जाता है। फलतः जो होना चाहिए वह नहीं होता। आज वे पवित्र स्थान पापाचार के अड्डे बन गये हैं। इसीलिए धर्म का स्थान आज अर्थ ने ले लिया है। जो आदर पहले उन स्थानों का था वह आज नहीं। वे आज उपेक्षित हैं।

नागपुर से १०० मील की दूरी पर 'यवतमल' नामक स्थान पर एक पुरानी मस्जिद ढह गई। उसमें नमाज के लिए आये ११० व्यक्तियों के मरने और ६८ के सख्त घायल होने की खबर आई है। मलवे से ६१ औरतें और ४८ बच्चों के शरीर निकाले गये।

इस प्रकार की दुर्घटना के लिये जनता के साथ ही सरकार भी उत्तरदायी है। यदि कोई सार्वजनिक भवन जीर्णावस्था में है तो उसकी मरम्मत करना या वहां के प्रवेश पर प्रतिबंध लगाना सरकार का कर्तव्य है। ऐसे स्थानों के संरक्षकों को भी यह देखना चाहिए कि उनके पवित्र स्थान सुरक्षित रहें।

हिन्दी साहित्य परिषद, मंदार विद्यापीठ

मन्दार विद्यापीठ के प्राध्यापकों अध्यापकों एवं छात्रों के सहयोग से हिन्दी साहित्य परिषद् की बैठक ३१-८-६३ को हुई जिसमें नये वर्ष के लिए निम्न पदाधिकारी चुने गये।

१ श्री राम नारायण 'मधुर'—अध्यक्ष
२—श्री नेमधारी कुमार 'निराला' उपाध्यक्ष
३—श्री भरत शाह—मन्त्री
४—श्री दिनेश शाह—संयोजक
५—श्री अजीत मनियार—कोषाध्यक्ष
६—श्री सदानन्द झा 'बावरा'—साहित्य मंत्री
अभिनय मंत्री
७—श्रीनियामत सूचना मंत्री। कार्यकारिणी के अन्य सदस्यों के नाम हैं:—सुरेश, देवेन्द्र शाह, अमरत, नन्दनप्रसाद सिंह, नवीन मण्डल तथा मोती लाल।

हमें आशा है, यह परिषद् साहित्य की सेवा में महत्वपूर्ण योगदान करेगी।

—०—

वनफूल

रचयिता—रामसंजीवन सिंह, प्रकाशक—पाटलीपुत्र प्रबोधन प्रकाशन हसनपुर, चाईं टोला, बाँकीपुर, पटना, मूल्य—२) रुपये।

वनफूल पढ़ा। यह एक छोटी सी महज ली पृष्ठों की रचना है मगर बहुत ही त्वपूर्ण। इसलिए कि विषय का चुनाव निराला किया गया है सूक्ष्मदर्शी कवि द्वारा। क्योंकि कवि लोग तो सौन्द-पासक हुआ करते हैं, लेकिन वनफूल का वि आदिवासियों के काले-कलूटे और गली रहन-सहन में ही सौन्दर्य का वह प्रस्तुत किया है, जो अन्य कवियों द्वारा मी रूप की रानी के नख-शिख वर्णन में नहीं।

जागरण गाने, प्रकृति का रंगमंच, सरना पूजा, अखरा का गीत और धुमकुड़िया जयकार ये ही पांच शीर्षक हैं। जगाने सफल प्रयास है—

जागो युग-युग के शोषण से
युग-युग के पीड़न से
व्यंग, उपेक्षा, घृणा, दासता
से, कातर क्रन्दन से
युग-युग के अत्याचारों से
सीमा के बन्धन से
जागो वन की ज्वलित आग से
संघर्षित चन्दन से
और जागो तुमको जगा रहा
नित धरती का अभिमान।

'प्रकृति का रंगमंच' प्रकृति आदि वासियों के एकीकरण का एक निराल उदाहरण है—

ऊँचे टीले पर से आती
वन्य कन्यका जल भरने को
निर्झरिणी पद छू लेती है
कठिन पंथ के श्रम हरने को

'सरना की पूजा' में कवि आदिव सियों की पूजा का एक सूक्ष्म दृष्टिको प्रस्तुत किया है। इसमें काव्यत्व पूर्णरूपे निखरा है। अखरा का गीत और धुम कुड़िया का जयकार, भी अच्छे बन पड़े हैं।

आंखों देखे दृश्य का कवि अपनी अनोखी कला के माध्यम से इस प्रक रखा है कि कहते नहीं बनता। भाषा खंजन की तरह फुदकती लगती है। क भी बोझिल और उलझी नहीं।

वनफूल का प्रणयन कर कवि आज के युग-धर्म की रक्षा की है। आ

वासियों पर लिखी गयी इस अनुपम एवं एकाकी कृति के लिये मैं सरकार से अनुरोध करूँगा कि इसे खरीद कर सभी पुस्तकालयों एवं शिक्षण-संस्थाओं को मुफ्त वितरण करें, जिससे गहन गर्त्त में पड़े युगों की असीम वेदना से सिसकते इन्सान को हम पहचान सकें। यह किताब टेक्स्ट बुक कमिटी से स्वीकृत होकर नवें-दसवें वर्ग में भी पढ़ाई जाय तो बहुत ही अच्छा हो। वहिरावरण नयनाभिराम है। इस बहुमूल्य कृति के लिये कवि को चन्दा भर बधाई।

❁ मारुति संजीवन ❁

(प्राकृतिक चिकित्सा विशेषांक)

सम्पादक—लक्ष्मीनारायण 'अलौकिक', प्रकाशक—मारुति प्रकाशन, ननहाड़, ग्वालियर (म० प्र०) मूल्य २) रु०

एक सौ चौवालिस पृष्ठों के इस विशेषांक को मैंने पढ़ा। यह एक परमोपयोगी संग्रह है। क्योंकि प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी सारे ज्ञान इस एक छोटे से विशेषांक में हो जाते हैं। अगर मनुष्य इसके बताये नियम कायदे का अवलम्बन करे, तो शायद कभी वह रोग के चंगुल में न फंसे। ऐसा इसलिये कहा जाता है कि मानव-शरीर का निर्माण जिन तत्त्वों से हुआ है, उसके रोगों का उपचार भी उन्हीं तत्त्वों से समीचीन जान पड़ता है। जल, मिट्टी, हवा, व्यायाम, उपवास, एनिमा, फलाहार आदि दूसरी उपयोगी चिकित्सा पद्धति है। मारुति संजीवन का यह विशेषांक पठनीय और संग्रहनीय है। इस सुन्दर प्रकाशन के लिये मैं भाई अलौकिक, जी को तहेदिल से धन्यवाद देता हूँ।

—महेन्द्र 'मस्ताना'

कुण्डली-चक्र पर मेरी वार्ता

वार्ताकार—देवेन्द्र दीपक, एम० ए० प्रकाशक – गया प्रसाद अग्रवाल एण्ड सन्स, रीवां, भोपाल, सतना (म० प्र०) मूल्य—२) रु०

कुण्डली-चक्र पर मेरी वार्ता, महान ऐतिहास उपन्यासकार श्री वृन्दावनलाल वर्मा का सफल सामाजिक उपन्यास कुण्डलियों पर श्री दीपक द्वारा प्रस्तुत एक वार्ता है। इस छोटी सी वार्ता-पुस्तिका को पढ़ने से ही कुण्डली-चक्र के सारे दृश्य आँखों के सामने स्पष्ट हो जाते हैं। खासकर चरित्र-चित्रण, देश-काल, भाषा, शैली, शीर्षक, उद्देश्य, आंच-लिकता और कथोपकथन तथा समस्याएँ आदि। वार्ताकार इस वार्ता को प्रस्तुत करने में पूर्णतः सफल रहा है—यह निर्विवाद है। लेकिन हाँ, उनसठ पन्ने की इस छोटी सी पुस्तिका का मूल्य 'दो रुपये' प्रायः खलता है। छपाई, सफाई अच्छी है। प्रूफ की अशुद्धियाँ कुछ हैं।

—महेन्द्र नारायण 'मस्ताना'

— महाकवि तिलक का कालिदास —

ले०—प्रो० दीनानाथ 'शरण'

प्रका०—साहित्य-संगम-प्रकाशन, पटना-४

मूल्य— २ रुपये ७५ न० पै०

प्रो० दीनानाथ 'शरण' लिखित 'महाकवि तिलक का कालिदास' पढ़ा। एक सौ पन्द्रह पृष्ठों में तेरह उपखंडों से यह एक सजी-सजाई पुस्तक है। इसमें महाकवि तिलक और उनको कृति 'कालिदास' सम्बन्धी बहुत सारी शंकाओं का सफल समाधान है।

महाकवि तिलक हिन्दी काव्य-जगत में पीछे से आये हुए लगते हैं। इन्हें बहुत कम लोग जान पाये हैं ऐसा मेरा अन्दाज है। इसके दो कारण हो सकते हैं— पहला यह कि बड़े-बड़े साहित्यिक महंथों ने जान-बूझकर इनकी उपेक्षा की हो और दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि तिलक जी में महाकवि की क्षमता ही न हो। आखिर कुछ भी, प्रो० 'शरण' ने एक नवीन कलाकार की प्रतिमा को अपनी पैनी दृष्टि से पहचान कर उसे उत्थान के उत्तुंग शिखर पर बैठाने का जो सफल प्रयास किया है, वह प्रशंसनीय ही नहीं सराहनीय भी है।

'महाकवि तिलक का कालिदास' इसके लेखक के गहरे अध्ययन का एक मापदंड है क्योंकि विश्व-महाकाव्यों और महाकवियों के गहन अध्ययन के बाद 'कालिदास' और अन्य ग्रन्थों से उसका तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है—"विश्व महाकाव्यों के धरातल पर कालिदास की समीक्षा करने से स्पष्ट विदित होता है कि ऐसा महकाव्य दूसरा कोई नहीं है।"

भाषा, भाव और अभिव्यक्ति की त्रिवेणी पर 'महाकवि तिलक का कालिदास' एक बहुमूल्य कृति है। हाँ, प्रो० 'शरण' के कुछ तर्क ऐसे हैं महाकवि तिलक और कालिदास के सम्बन्ध में जिसे कुछ लोग नहीं भी मानें लेकिन मैं तो कहूँगा कि लेखक कहना जानता है इसलिये कि कहने का तरीका उनका अपना है और वह भी खुलकर—सशक्त भाषा में, कम महत्व की बात नहीं।

प्रस्तुत पुस्तक का अन्तरंग और बहिरंग आकर्षक है। मूल्य उचित ही है। ऐसी स्थाई कृति का कागज अच्छा होना चाहिये था। निकट भविष्य में प्रो० शरण से क्या यह आशा की जाय कि ऐसी ही कृति देखने को मिले जिससे धरती की धूल का श्रृंगार हिमालय के मस्तक पर हो सके।

महेंद्र नारायण 'मस्ताना'
शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर

युवक (गोपाल सिंह नेपाली अंक)

सम्पादक—प्रणवीर चौहान, वार्षिक ४ रु० '५० नये पैसे, एक अंक का ५० नये पैसे
कार्यालय—'युवक मासिक' जांस बंगला न०, ४, जीवन मंडी, आगरा।

युवक, ने अपना 'गोपाल सिंह नेपाली अंक, निकालकर माँ भारती के इस अमर गायक के प्रति तो उसने अपनी निष्ठा व्यक्ति की ही है साथ ही साथ हम हिन्दी वालों को भी कर्त्तव्य दिशा का बोध कराया है। प्रस्तुत अंक में नेपाली जी के प्रति कुछ लब्ध प्रतिष्ठ सहित्यकारों की श्रद्धांजलियां संस्मरण, कवितायें तथा स्वयं नेपाली जी की भी कई रचनायें संलग्न हैं। दिनेश भ्रमर की रचना, नेपाली ! स्मृति के कुछ पृष्ठ से नेपाली जी की आर्थिक अवस्था का पता चलता है, बाल कृष्ण के लेख से उनकी जिन्दगी के बारे में संक्षि[illegible] परिचय प्राप्त हो जाता है। राबिन शॉ [illegible] के निबंध, बेताज का शाहजहाँ गोपाल [illegible] नेपाली और काँच का ताजमहल, मे[illegible] और नेपाली जी के गहरे सम्बन्धों पर प्र[illegible] पड़ता है डा० प्रभाकर माचवे का लेख सुन्दर बन पड़ा है। प्रायः सभी रच[illegible] सुन्दर एवं आकर्षक हैं। नेपाली जी[illegible] जीवन से सम्बन्धित कई चित्रों से इ[illegible] उपयोगिता और भी बढ़ जाती है। प्रू[illegible] अशुद्धियाँ कहीं-कहीं अवश्य खटकती हैं।

—रामनारायण, सिंह '[illegible]'

संगम

रचयिता वैद्यनाथ चन्द, प्रकाशन—महेन्द्र नगर दीरा, डाकघर—विशनपुर ड्योढ़ी जिला—पूर्णिया (बिहार) मूल्य—१ रु० ५० नये पैसे।

संगम कवि वैद्यनाथ चन्द की संभवतः पहली पर सराहनीय कविता-पुस्तक है। इसे कई बार मैं पढ़ गया। फिर भी पढ़ने को जी चाहता रहा। सचमुच, यही तो रचना की सफलता है। गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम पर प्रयाग की पवित्रता अगर अक्षुण्ण है तो कामना, गंगा-दर्शन और 'आर्त्तनाद' का 'संगम, भी उससे कम महत्वपूर्ण नहीं। खास कर कुशेश्वर जी की भूमिका और आनन्द शंकर माधवन लि[illegible] 'कवि वैद्यनाथ चन्द—एक रेखा परिचय' तो इस छोटी सी पुस्तक की सफलता और भी चार चांद लग गया है। छपाई, सफाई सुन्दर और गेटअप साधारणतः अच्छा ही है। मूल्य कुछ अ[illegible] जान पड़ता है।

महेन्द्र नारायण 'मस्त[illegible]'

वैदिक अणुशक्ति

ज्ञान का हर समय जो दान देता और लेता फिरता है । वे ही चेतना प्राप्त प्राणियों सुख का रास्ता दर्शा सकते हैं ।

उसका अविर्भाव ब्रह्मज्ञान से ही संभव है । इसलिए मूल सत्य ब्रह्मज्ञान है । सूर्य, वायु और जल आदि के योग हुए बगैर अन्न की उत्पत्ति असंभव है । यानी को सूक्ष्म रूप में ये ही प्राकृतिक तत्व ग्रहण किये हुए हैं । उसी प्रकार चेतन जीव, तुम भी सब प्रकार के सुखों और शक्तियों का केन्द्रीय सत्ता ब्रह्मज्ञान के सूक्ष्म रूप में अपने भीतर धारण किये हुए हो ।

हे चेतना सम्पन्न पुरुष, तू सब प्रकार के ज्ञान दीपों को धारण करने वाले मनन और सर्वहितकारी बन जन-कल्याण कार्यों में सदा विराजमान हो जा—तू हमें प्रकार के कल्याण मार्ग पर प्रवेश करने का अधिकारी बनाकर हमारे समक्ष सब प्रकार मंगलमय पद को प्रशस्त कर ।

किस अनुष्ठान के लिए किसका योगदान अपेक्षित है, यह जान लेना ही विद्वत परिचायक है । ऐसे विद्वान पुरुष ही इस लोक में कामने योग्य सुखकारी पदार्थों एवं हारों को प्राप्त कर सकते हैं । इस लोक की गतियुक्त शक्तियां सभी कान्तिपूर्ण ती हैं । इसलिये वे देवत्व को प्रकट करने में सहायक सिद्ध होंगी ।

सूरज अपनी रश्मियों में अपनी गरमी के जोर पर सब प्रकार के स्थानों से पवित्र को सोख कर अपने अधीनस्थ करते हैं और बाद उसे प्राणिमात्र के हर्ष सुखार्थ पूरा बरसा भी देते हैं । इसी से संसार चलता है । उसी तरह महापुरुष भी सब के सब क्षेत्र के विद्वान पुरुषों को अपने वश में कर प्राणिमात्र के उपकारार्थ व्यवहार में लाते हैं ।

जिस प्रकार वायु सूक्ष्म रूप में जल को धारण किये हुए यत्र-तत्र विचरण करते हैं और समय-समय पर उसे बरसाकर जीवमात्र में प्राणमय तत्व को विकसित कराकर हर्षोल्लास कर देते हैं उसी तरह महान पुरुष भी अपने अन्दर सब प्रकार के बल, रस और ज्ञान को धारण किये हुए सर्वत्र विचरण करते हैं और मानव मात्र को कल्याण पहुँचाते हैं ।

रमण करने योग्य वस्तु ज्ञान है, आत्मतत्व है । इसमें जो सदा रत हैं, लीन हैं वे ही सब प्रकार की सफलताओं को प्राप्त करने की शक्ति अपने भीतर समेटे रहते हैं । संसार के सब प्रकार के व्यक्तियों, कार्यों और वस्तुओं को भी शुद्ध करके ईश्वरोन्मुख करने का सामर्थ्य भी सिर्फ उन्हीं लोगों में निहित रहता है । ऐसे व्यक्ति ही ज्ञानानुशीलन का प्रशिक्षण देकर जनता को आनन्द रस का पान करा सकते हैं ।

शेषांश पृष्ठ ८ का

...ते हैं जिन्हें इस चुस्त पोशाक का अर्थ समझ में न आया हो। उनसे हमारा ...है कि वे इसका अर्थ अपने घर के या इर्द-गिर्द के किसी कालेजी विद्यार्थी से ...। वे अवश्य बता सकेंगे और इसकी खूबी का तात्विक और आध्यात्मिक व्या... ...आपको समझा देंगे।

श्वानों को लोग स्वामी-भक्त कहते हैं। यह भी वैसा ही एक झूठ है जैसे ...को बहादुर कहते हैं। इस प्रकार के झूठ कह कह कर लोगों को धोखे में ये ...ोग ही डालते हैं। श्वानों का जैसा बेईमान भूमण्डल में न और कोई पशु है ...। और ये इतने पतित हैं कि क्या कहा जाय। एक टुकड़ा मांस दें तो फौरन ...हिलाते हुए किसी भी दुश्मन के पीछे ये चले जाते हैं, अपने जिन्दगी भर के ...क को और उनके उस दीर्घकालीन लाड़-दुलार को ये भूल जाते हैं। और, इन्हें बहादुर ...न कहेगा? चारों ओर देखेगा और अगर अपना मालिक नजदीक है तभी जोश ...गा और भूकेगा भी, काटने का साहस और हिम्मत इसे कभी है नहीं। इसकी ...भी मात्र अपने स्वजातीय भाइयों पर ही! गाय, बैल आदि पर भूँकते कम! हां ...कोई हाथी, गांव होकर गया तो इस साहब की बहादुरी देखने लायक है। मैंने ...ार एक दिलचस्प दृश्य देखा। एक दिन एक भद्र श्वान पुरुष कहीं से आ रहा था। ...उनको पहचानता था। बड़े घर का था। न जाने साहब सवेरे-सवेरे कहां से चले ...े थे। सोचा, संभव है रात में किसी प्रेयसी से मिलने गये हों उसके साथ प्रेमालाप करते ...हुत दूर तक चले गये हों। हां, तो रास्ते में साहब को अपने स्वजातीय दो गरीब पुरुष ...ुलाकात हो गयी। वे दोनों मिल कर इस भद्र और बड़े घर के आदमी को ललकारा। हे ...न, दुम दबाकर यह बड़ा आदमी जो भागा सो देखने लायक था। मगर वे गरीब भी ...रा बहादुर निकले! पीछा करके पकड़ा तो इस बड़े आदमी का वह आत्म समर्पण का दृश्य ...भी मजेदार था। इसी को श्वान हिम्मत और श्वान नीति कहते हैं। श्वानों में यही ...ा है, दुम दबाकर आत्म समर्पण कर दिया तो फिर छोड़ देते हैं। पुराने जमाने में राज... ...रियों का ही स्वयंवर हुआ करता था। पर अब यह प्रथा न रही। अब तो श्वान कुमारियों ...ही स्वयंवर हुआ करता है। श्वान संस्कृति पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है। ...ारिक प्रेम और पारस्परिक सेवा और एक दूसरे के लिए त्याग भावना इनलोगों में ...ा नहीं। इनलोगों का प्रेम खरीदना और श्रम भाड़े पर लेना बिलकुल सुगम है। ये ...सस्ते हैं कि क्या कहा जाय! और ये इस कदर खुशामदी और ठकुर सुहाती करना जानते ...े आश्चर्य लगेगा। ढोंगी पूरे हैं। प्यार दर्शाने में महासमर्थ हैं। पर वास्तव ...इनको किसी से प्रेम नहीं, मात्र अपना पेट का स्वार्थ है। कवि जिब्रान ने आज के ...ना का ठीक अध्ययन करके इस युग को श्वानयुग कहा। मेरा कहना है श्वानयुग ...युग या गधा युग में रहना बेहतर था। कम से कम बेईमानी और धोखा नसीब न

होते। मगर श्वान युग से कहीं सर्प युग, बिच्छू युग, या सिंह युग की ओर तरक्की हो गई तो फिर गुजरना और कठिन हो जायगा। जिब्रान साहब ने चाहा मानव श्वान युग से देव युग की ओर तरक्की करें। उन्होंने इसके लिये परिश्रम भी बहुत किये। पर सफल नहीं हुए। अब देखना यह है, कौन सा नया कवि पैदा होने जा रहा है जो उन इन अधूरे स्वप्नों को साकार करा के दिखायगा।

श्वान दर्शन के भीतर बहुत से विषय हैं जिन पर विचार अपेक्षित है जैसे श्वान धर्म, श्वान हिम्मत, श्वान युद्धनीति, श्वान राजनीति, श्वान सामाजिक परम्परायें इत्यादि। इन सारे महत्वपूर्ण विषयों पर इतने छोटे से एक निबन्ध में विचार असंभव है। फिर भी यथा संभव जिक्र करता हूँ। श्वान-धर्म बेइमानी का ही है। उसे स्वामी भक्ति या परि-वार-भक्ति बिल्कुल कहा नहीं जा सकता। यह किसी कवि की एक मधुर कल्पना और चाह मात्र थी कि श्वान स्वामी-भक्त रहे। मैं हजारों संभ्रांत समझदार श्वान वीरों से परिचित हूँ सभी अच्छी खुराक देख बिकने वाले हैं। पर वे :नीति जानते हैं। अपनी भीतरी राय दर्शायेंगे नहीं। श्वान हिम्मत कैसी है सभी जानते हैं। श्वान युद्ध नीति से भी सभी परिचित हैं। श्वान-समाज का प्रत्येक आचार हम ने देखा है। देखना है हम किस क्षेत्र में बेहतर हैं और जिब्रान ने कहां तक सच कहा! मेरी नजर में चीज में हम बहुत आगे हैं—कपड़ा पहनने में। और भी कई चीज में हम बेहतर हैं। झूठ और बेइमानी में और वह भगवान के साथ भी, हम बेशक उनलोगों से कितने ही गुना आगे हैं! ब्राह्मण, मुसलमान, ईसाई आदि नाम हम अपने लिये जब कहने लगते हैं तो और तुरन्त ही हम झूठे बने। आदमी कहा जाय, और जिन्दा यह भी कहा जाय। ब्राह्मण बनना मुसलमान बनना, ईसाई बनना वकील या डाक्टर बनना कहीं, अधिक करोड़ों गुना अधिक मेहनत अध्ययन और साधना का काम है। श्वान कम से कम यह नहीं कहता कि वह मुसलमान है या ब्राह्मण है। आप आदमी हैं, अपको मैं घोड़ा कहूँ तो आपको कैसा लगेगा ? ब्राह्मणत्व को प्राप्त करने का राजपथ हिन्दू धर्मशास्त्र में बताया गया है वैसे ही मुसलमान और ईसाई बनने का भी। पर चाहा कोई नहीं, चाहते भी नहीं कहते सभी अपने को जो मन चाहे। आपकी बातें आपका परिचय नहीं। इस झूठ और बेइमानी का क्या नतीजा होगा ? और यह झूठ बेइमानी भी किस स्तर का है विचारा जाय आखिर किसको ठगा जा रहा है ? विद्यालयों और महाविद्यालयों में घण्टी बहुत बजती है। भोजन की घण्टी, अध्ययन की घण्टी, खेल की घण्टी, आराम की घण्टी : पर चरित्र-वान बनने की घण्टी, सच बोलने की घण्टी, प्रेम करने की घण्टी न जाने कब बजेगी कोर्ट कचहरियों में न्याय होता पर वह भगवत् न्याय है या शैतान का न्याय है समझ में नहीं आता। शासन है या शोषण ? सरकार धर्म संस्थापना के लिएं या कुछ खास लोगों के हित साधना के लिए ? जो चाल और चालाकी से ज्ञान और दण्ड अपने ही हाथ

...रखने में होशियार हैं ! मुझे किसी से झगड़ा करना नहीं है, न किसी के खिलाफ ...रहा हूं। इतना ही कह रहा हूँ इस विश्वव्याप्त बेइमानी और झूठ का कैसे ...होगा ? आपने कभी सुना देवलोक में देवता परस्पर लड़े ? आपने कभी सुना असुर आपस में लड़े ? प्रेम और ऐक्य दो ही समाज में संभव है—चोरों के और देवताओं के बीच ! इसलिए मानवता को अगर बचाना है तो हम प्रत्येक ...देवता बनना पड़ेगा, देवत्व का अनुष्ठान करना होगा, अपने प्रत्येक आचरण में। ...हना किसी का अपमान करना है ? असुर राजनीति के बारे में हमने पिछली बार ...था कि वह ज्ञानियों का संहार करने के बाद उनकी जय बोलते हुए उनके झण्डों ...े अपना असुर शासन जमाता है। आप जरा कल्पना इस बात की कीजिए, निराला ...ी भर भूख मरे और जब वह सेवा, दवा और भोजन के बगैर मर गये तो उनका ...राष्ट्रपति भवन में लगाया गया ! इस व्यवहार को किस शब्द से बयान करना चाहिए ...ना नहीं चाहता। देश और भाषा किसी एक आदमी की चीज नहीं। मनुष्य ...र्मिक परिचय यही है कि वह भूख मरना पसन्द करेगा मगर वह प्रतिष्ठा के बगैर इनकार करेगा। जो मनुष्य अपने देश और भाषा के स्वाभिमान की रक्षा नहीं कर ...वह क्यों इहलोक में है समझ में नहीं आता, वे क्यों मन्त्री है पता नहीं ...। शासन क्या है साहब ? फाइल उलटाना नहीं। जन मानस को उस निर्दिष्ट ...मंजिल की ओर ले जाना है। वहां पहुँचा कर उसे स्थायी रूप से प्रतिष्ठित ...है और फिर सदा जागरूक रहना है कि वह उस उन्नत शिखर पर से फिसल कर न गिर जाय ! यहां तो प्रत्येक लोक-सभा-सदस्य (M. P.) को फिक्र यह है ...हीं नेहरूजी न नाराज हो जायं, कहीं प्रधान मन्त्री की लाल बही में नाम न ...हो जाय। ऐसा एम० पी० या मन्त्री देश और भाषा की प्रतिष्ठा बचा नहीं सकता। ...लोक-सभा में आज ऐसा एम० पी० रहता जो मद्रासी और बंगाली एम० पी० ...हता तुम तमिल और बंगला में बोलो, हम नहीं भी समझें पर वही कर्ण प्रिय है, ...तुम्हारी वह टेढ़ी अंग्रेजी हम सुनना नहीं चाहते और तुम क्या बोले में दूसरे दिन ...बार पढ़कर समझ लेंगे। यहां तो रात-दिन यही फिक्र है कि कहीं पदच्युत और निष्का...न हो जायं, इसकी फिक्र है कि हिन्दी में बोले तो नेहरू यह न समझें कि यह जंगली ...अनपढ़ कहां से लोक-सभा में चला आया। सुनो भाइयो, अंग्रेजी भारत में रहेगी ...हिन्दी कभी निर्मित नहीं होगी न देश की प्रतिष्ठा ही बचेगी, न तुम्हारा वह लघुत्व बोध ...तुम्हारे खून से जाने का। तुम कभी स्वाभिमान के साथ माथा ऊँचा करके खड़ा न ...होगे। यहां भाषा की प्रतिष्ठा का सवाल है न कि प्रचार का ! अन्धकार व्याप्त ...पर ही लोग लालटेन जलाने की फिक्र करेंगे। अंग्रेजी जाने दीजिए—देखियेगा ...में कैसे-कैसे मेधावी और स्वार्थ त्यागी लेखक पैदा होंगे ! हम आजाद भारतीयों के

लिए इस अंग्रेजी बोझ को ढोना कापुरुषता है, मूर्खता और असमर्थता का परिचायक है। बिल्कुल दिमागी दिवालियापन का ही परिचय देना है। संसार के किसी भी देश में ऐसा लज्जाजनक मिसाल एक नहीं है। और हे भगवान, हमारी अंग्रेजी सुनकर और हमें अंग्रेजी पोशाक में देखकर अंग्रेज स्वयं कितना हँसते हैं आपको मैं क्या कहूं। इस भारत में आज मुश्किल से सात-आठ आदमी होंगे जो शुद्ध अंग्रेजी लिख सकें और शुद्ध उच्चारण में उसे बोल सकें। हमारे लड़कों का कितना श्रम और शक्ति बेकार इस व्यर्थ कार्य में हो रहा है आपको कैसे समझाऊँ। जर्मनी में अंग्रेजी नहीं, वे कैसे तरक्की कर रहे ? हाल ही की घटना सुनी जाय। बड़ी गर्मी पड़ रही थी। मैं अपना कुर्ता और गंजी दोनों निकाल दिया, एक लुँगी कमर में लपेट कर अपने प्रेस के बरामदे में बैठ कर किसी कविता का प्रूफ देख रहा था और माथा लड़ा रहा था पता चलाने कि उस कविता का सार और मर्म क्या है। तब एक मोटर आई और उसमें से एक आफिसर अंग्रेजी पोशाक में आकर और मेरे सामने आकर खड़े हो गये। उन्होंने अंग्रेजी में पूछा, क्या यही मंदार विद्यापीठ है ? मुझे हँसी और दया दोनों आई : हँसी इसलिए कि बेचारे अपने कोट-पतलून के भीतर पसीने से तरबतर थे, दया इसलिए कि वे हिन्दी भाषाभाषी होकर एक भाषाभाषी पुरुष से अंग्रेजी में पूछते हैं, इसलिए भी कि वे मन्दार विद्यापीठ में आकर पूछते हैं क्या यही मन्दार विद्यापीठ है ? मुझे फौरन बीरबल की याद आयी जो एक बार अकबर से उनके यह पूछने पर कि मेरे राज्य में कितने अन्धे हैं, कहा था, प्रायः सभी अन्धे हैं। इसका जब बादशाह ने प्रमाण पूछा तो बीरबल दूसरे दिन सदर रास्ते पर एक चारपाई लेकर बैठा और उसे मरम्मत करता रहा। उस रास्ते से जो भी आया बीरबल को चारपाई मरम्मत करते देख पूछता गया, क्या कर रहे हैं बीरबल साहब ? तब बीरबल उन सभी पूछने वालों का नाम लिखता गया और दूसरे दिन बादशाह को अन्धों की सूची पेश की और कहा सभी देख रहे थे कि मैं चारपाई मरम्मत कर रहा हूँ फिर पूछ रहे हैं, आप क्या कर रहे हैं। हां, तो उस आफिसर की ही बात ली जाय। मैंने कहा कुर्सी लाओ, भाई। मेरे मन में फौरन एक बात आई। ओलिवर गोल्ड स्मिथ के सुप्रसिद्ध उपन्यास विकार ऑफवेकफील्ड में जब विकार अपनी पत्नी और बच्चों को सुन्दर-सुन्दर पोशाक में गिरजाघर जाने के लिए तैयार देखा तो बोला, भाई ... मंगाओ, यह पोशाक पैदल चलनेवालों की नहीं ! तो पाठक, मैंने भी सोचा, ... मंगायी जाय, यह पोशाक जमीन में बैठने वालों का नहीं।" बातें हुई तो एक व एक उन्होंने कहा—"मिस्टर माधवन को बुलाया जाय। मुझे उनसे मिलना है।" मैंने धीरे से कहा—"वह तो आपके सामने बैठा हुआ है।" उन्हें आश्चर्य हुआ और नम्रता से पूछा—"माफ करना, मैंने सोचा, प्रेस का कोई कर्मचारी होगा। मुझ से बहुत बेअदबी हो गयी।" मुझे फौरन देश के एक महापुरुष की बात याद आयी जिन्होंने मेरे

र पर एक बार मुझ से कहा था कि देश के एक मामूली धोबी को जितनी आज प्राप्त है उससे अधिक वे नहीं चाहते। मैं भी उसी को याद करते हुए बन्धु, प्रेम के मेरे कर्मचारी को आप जितना अदब करेंगे उसे अधिक मैं अपने लिए नहीं हूँ। एक क्षणभर चुप रह कर मैं एकाएक गरज उठा—"साहब, मैं आपलोगों और संभव उस सम्मान को तृण समझता हूँ, बिल्कुल बोझ समझता हूँ।" उन्होंने से मेरे यह भाव परिवर्तन देख पूछा—"आप नाराज हो गये?" मैं चिल्लाया— मैं आप से नहीं कह रहा हूँ। हिन्दुस्थान के पढ़े-लिखे लोगों से कह रहा हूँ आप एक सफल प्रतिनिधि हैं।" वे बहुत देर तक चुप रहे। शायद वे बहुत झुक गये। बुद्धिमान तो थे ही! धीरे से मेरे पास बैठ कर मेरा हाथ पकड़ते हुए "माधवन भाई, मुझे समझाओ देश की प्राण-प्रतिष्ठा बचाने और इस भारत भूमि संसार का सरताज बनाने के लिए क्या करूँ?" मैं बहुत देर तक उनकी ओर देखता दिल भर-भर गया, सोचा—काश: कोई बताने वाला रहता। मैंने इन्हें कहा—"उमर में मुझ से कम हैं इसलिए डांटता हूँ। आप अपनी अफसरी और अंग्रेजी की इस पोशाक को फेंकिये और घूमकर अपने देशवासियों को देखिये, उन्हीं की पोशाक पहनिये, उन्हीं की भाषा में बोलिये और उन्हीं की तरह खाइये पीजिए तभी आप समस्या समझेंगे और कुछ कर भी सकेंगे। है हिम्मत?" उन्होंने कहा—"नहीं।" तब मैंने कहा—'मुझे हिम्मत है, इसलिए आप को दो शब्द डांट दिया। माफ करना।' उन्होंने कहा—"मगर भाई, मैं आपकी कुछ सहायता करना चाहता हूँ।" मुझे फिर भाव आया। मेरी यह एक बुरी आदत हो गयी है। चिल्लाया—"मेरे इस गरीब शिक्षणालय के चार अध्यापकों को मैंने सरकारी ग्रांट कट जाने के कारण हाल में हटा दिया और वे और उनके गरीब परिवार रोते हुए यहां से चले गये। मेरे प्राच्य भारती के कर्मचारियों को तीन महीने से वेतन नहीं मिला। प्राच्य भारती के अगले अंक के लिए कागज नहीं। मुझे स्वयं पिछले आठ बरस से एक अच्छा जूता पहनने और एक सुन्दर कलम खरीदने का शौक रहा है। एक रिस्ट वाच पहनने का मेरा जन्म भर का शौक तो अब रह जायगा। आप क्या मदद मेरा कर सकेंगे भाई?" उन्होंने मुस्कुराते हुए पूछा—'सरकारी ग्रांट कैसे कटा?" मैंने कहा—"क्योंकि भारत सरकार को राइफल खरीदने को पैसा नहीं था इसलिए मन्दार विद्यापीठ का मासिक ग्रांट में कटौती की।" उन्होंने गंभीर होकर पूछा—आप का कोई सहायक नहीं?" मैंने धीरे से कहा—"प्रिय, मेरे पीछे कोई नहीं, न कोई जवाहरलाल, न कोई बिरला, न कोई राधाकृष्णन। और, मैं स्वयं भी सुजाता की बेटी जैसे हूँ जिन्होंने बुद्धदेव से कहा था—प्रभु, देश के असहायों को खिला सकती हूँ, पर राजा महाराजे, या सेठ साहूकार या बड़े-बड़े जमीन्दार नहीं खिला सकती; क्योंकि मैं गरीब हूँ, हृदय में भाव है, मेहनत करना जानती हूँ और प्रभु

तथागत बुद्ध का स्मरण करने और अनुगमन करने की भीतरी साधना में कोई भी मुझे रो नहीं सकता ।" प्राच्य भारती चार बरस से बराबर जिन्दी रही इस पर बहुतों को आश्चर्य है । इसका कारण सिर्फ इतना ही है कि उसका सम्पादक गरीब है, उसका हृदय साफ है, मेहनत करना जानता है और वह निरन्तर उस अमर कवि जिब्रान के 'उस मर्म विदारक उक्ति का अर्थ समझने का प्रयास करता है कि "श्वान युग में मैं जन्म पाया हूँ और तब वह पूर्ण ईमानदारी से एक साथ सच्चा ब्राह्मण, मुसलमान और ईसाई बनने का भीतर ही भीतर प्रयत्न करता है, श्वान युग से ऊपर उठ कर एक सत् पुरुष बनने का प्रयास करता है और अपने देशवासियों से भी निरन्तर यह कहने में थकता नहीं कि गुरु खलिल के उस कथन का अर्थ समझ वे अपने कर्त्तव्य पथ को पहचानें, और पकड़ें ताकि जीवन रूपी यह महान सुअवसर व्यर्थ न नष्ट हो जाय और पीछे पछताना न पड़े।

कवियों से

चीन की बर्बरता तथा सीमा-विस्तार की नीति के प्रतिक्रिया स्वरूप भारत के जन जन में राष्ट्रीय जागरण लाने के निमित्त 'हिन्दी साहित्य-परिषद्' की ओर से "आह्वान" (गीत संग्रह) अद्भुत सज-धज के साथ प्रकाशित करने का निर्णय किया गया है। अतः सभी कवियों से अनुरोध है कि वे अपनी दो दो कविताएँ, जो राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत हों, पांच पांच रुपये के साथ अविलम्ब भेजने की कृपा करें। प्रकाशन के बाद प्रत्येक कवि को पांच रुपये की प्रतियां भेज दी जायगी। यह प्रकाशन सर्वथा सहयोग पर ही आधारित है। रचनायें तथा राशि निम्न पते पर आनी चाहिए।

"आह्वान"
हिन्दी साहित्य परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार)

मन्दार विद्यापीठ प्रेस में आनन्द शंकर माधवन द्वारा मुद्रित एवं हिंदी निर्माण परिषद् द्वारा प्रकाशित

प्राच्य भारती

अक्तूबर, १९६३

*

...र्ष के किस्मतवरों का चेहरा देखना है तो आप लोकसभा जाइये। ...के यशस्वियों का नाम अगर जानना है तो प्रतिदिन अखबार उलटाइये। ...तिक, व्यापारिक और साहित्यिक सफलता अगर आप चाहते हैं, तो ...सुन्दर (जीवित) स्त्री शरीर को प्रयोग में लाइये। नहीं, नहीं, हे ...ो, तुम्हें किसी भी क्षेत्र में अगर सफलतापूर्वक जीना है तो स्त्री ...एकमुपायम्। और स्त्री भी (पढ़ी लिखी) अपनी इस सफलता पर अतीव ...र है, बिलकुल तैयार है। बहुत स्त्रियां स्वयं कहीं प्रकट न हो कर ...ी कलापूर्ण तस्वीरें बेच बेच कर धन और यश उपार्जन करती हैं। ...पत्रिकायें चलाना है तो पाठकों को स्त्री चित्र छाप कर नेत्रसुख दिया ...। साहित्यिक सफलता चाहते हो तो स्त्रीवाली बातें लिखो कि पाठकों ...स्वाद और विद्यार्थियों को रस आया करे। मगर दुश्चरित्र पुरुष भी ...के रूप में अनुसूया को ही चाहेंगे न कि इन उर्वशियों को, यद्यपि ...से अच्छे साधु पुरुष भी उर्वशियों के पीछे पागल हैं। पाठको, ...बात यह है—स्त्री ही कला, स्त्री ही साहित्य, स्त्री ही स्वर्ग, स्त्री ही ...मयम् तत्त्वम्, अमृतमयम् रूपम्। करो ध्यान सदा; "परम स्वाद सबही ...न्तर, अमित तोष उपजाव।"

अतीत के साधु आये आधुनिक साधु को देखने तो हाय-हाय करके ...ो पीटकर रोने लगे। अतीत के दस्यु भी आये, आधुनिक दस्यु को देख ...ताली बजा बजाकर नाचने लगे। अब मेरी यह ललकार है —

"इस पद का जो अर्थ बतावे सो ही धूर्त महान"

हिन्दी निर्माण परिषद्

मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर

बिहार

प्राच्य भारती

(हिन्दी निर्माण परिषद् की मासिक मुख पत्रिका)
बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत

सम्पादक
वार्षिक चन्दा-५) • आनन्द शंकर माधवन • प्रतिअंक ५० न० पै०

वर्ष ४] अक्टूबर—१९६३ [अंक-४५

इस अंक में

सम्पादकीय

वसुधैव कुटुम्बकम्

एक दार्शनिक बन्धु लिखते हैं—"यह दुनिया किसी अव्यक्त की छाया मात्र है से दुरुस्त करने का आपको प्रयास मात्र आपके प्रमाद का ही परिचायक है।" यह पत्र ढ़ते ही मेरे मन में लाख बातें उठीं—अव्यक्त को छाया कैसे? छाया व्यक्त, ठोस और मूर्त रूपों की ही संभव है। और छाया भी तभी संभव है जब सामने रोशनी और अपनी आंखें भी सक्षम रहें। आसमान में सूरज नहीं रहे तो आपकी आंखें काम नहीं देंगी। यह उस सूरज ही का प्रताप है कि आपकी उन छोटी-छोटी आंखों में इतनी बड़ी दुनियां समायी हुई है। यह भी सत्य है, आसमान में सूरज भी रहें, पृथ्वी पर पदार्थ भी अनगिनत रहें फिर भी आपकी आंखें ठीक न रहें तो ये सारे ही उपकरण व्यर्थ सिद्ध होंगे।

कवि कहते हैं—"प्रकाश इजाजत नहीं खोजता, प्रचारक नहीं मांगता, न धन्यवाद ही चाहता। मगर वह प्रकाश की अपनी बात है। अन्धकार का क्या रवैया है? वह तो मौका खोजता है, प्रकाश से बैर भाव रखता, और उसकी सारी सफलताओं को अनुकूल परिस्थिति पाते ही हड़प लेता है, निगल ही जाता है। अन्धकार के हाथों प्रकाश की दुर्गति अनादि काल से चली आ रही। अगर ऐसा न होता तो राम को चौदह बरस तक जंगल में मारा मारा भटकना नहीं पड़ता। विजय बराबर प्रकाश की ही होती यह कहना भी युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता। दोनों को मौका मिलता है क्योंकि रावण की सुवर्ण लंका बहुत दिन तक बिराजती रही, दुर्योधन राज्य भी काफी अरसे तक चला। कहना यह है कि अन्धकार का अशेष नाश संभव है या नहीं, इसके कीटाणु कहां से और कैसे जन्म लेते और बढ़ते।

चन्द्रमा में कलंक है। पर वह कलंक चन्द्रमा को प्रकाशित होने से रोकता नहीं और न चन्द्रमा उसे छिपाते ही। मजा यह कि जैसे-जैसे चन्द्रमा का प्रकाश बढ़ता वैसे-वैसे उसकी कलंक कालिमा भी सर्वजन समक्ष साफ दिखाई देने लगती। लेकिन इससे चन्द्रमा की प्रतिष्ठा घटती नहीं। समुद्र बहुत हल्ला करता है। वे तरंगें और वह आवाज समुद्र का वास्तविक परिचय नहीं है। पृथ्वी के ऊपर घास है। इसका यह

नहीं कि भीतर भी घास ही है। कोयला ने जब यह कहा कि वह हीरे का चचेरा तो संसार ने विश्वास नहीं किया। पर कोयला सच बोल रहा था। हीरे को प्रतिष्ठा मनुष्य ने उस पर कोई मेहरबानी नहीं की और इसी से उस प्रतिष्ठा में उसे दिलचस्पी थी। क्योंकि वह जानता है भूगर्भ में एक पर एक हीरे असंख्य पड़े हैं दैव संयोग से ऊपर आ गये उसकी ही इज्जत बढ़ी। हीरे की भी कहानी अति रसदार। वह पर पड़ा हुआ था। उस रास्ते से कितने ही पशु-पक्षी पार हो गये। सभी ने सूंघकर अपनी राह ली। मगर जब एक मनुष्य ने उसे देख लिया तो हो-मचा दिया! हे भाई, हीरा! कितना दाम का होगा! जौहरी को बुलाया जाय! भी ब्रह्मा है नहीं। पर उसे ब्रह्मा मान लिया गया। क्योंकि मान लेने में जीता थी। हीरे ने सोचा—क्या आफत यह भी! उसने अपना भाई कोयले से प्रतिष्ठा नहीं चाही थी। पर यहां प्रतिष्ठा उसके माथे पर मढ़ी जा रही थी वह चुप रहा और सारे ही रगड़न, हल्ला, बन्धन और जयजयकार बर्दाश्त कर मगर हीरे ने सोचा—"हे भगवान, इस भयंकर कारावास से अब क्योंकर मुक्ति है!' हीरे ने सोचा—हीरा बनना स्वयं पाप नहीं हुआ, क्योंकि लाख साधन हीरा पद प्राप्त किया—पर पृथ्वी के ऊपर आकर ही गलती की। क्योंकि इस तट पर कुछ ऐसे विचित्र लोक बसते हैं जो पशु पक्षियों और तरुलताओं से स्तर के हैं और जो अन्धकार की पुतलियां बनकर प्रकाश में घूम रहे हैं य की पुतलियां बनकर अन्धकार में रम रहे हैं, निर्णय करना कठिन है। खैर, दोनों में एक ही कार्य का संधान हो रहा है। इसलिए पशु-पक्षियों और तरुलताओं शिकायत स्वाभाविक है कि असभ्यों के बीच दम घुट रहा है।

एक दिन कवि ने पूछा—"परमेश्वर ने सूर्यरूपी लालटेन क्यों जलाया है? रा भी उन्होंने असंख्य बत्तियां जला रखी हैं। इन सब रोशनियों के रहते हु तुम्हें सत्य नजर नहीं आ रहा है तो तुम क्या यह उमीद रखते हो कि अपन टेन और मोम बत्ती के नीचे तुम्हें सत्य नजर आयगा? कवि लालटेन-संस्कृ प्रभाव में जाना इनकार कर गया था। एक कवि ही इनकार कर गया था तब लालटेन वाले उसे पागल मूर्ख और पाखण्डी कहा। मगर कवि ने कुछ ख्याल नहीं किया और जोर से गरजा पामरो, आकाश में दीप जले हैं, पृथ्वी में फूल खिले हैं मन में राम अनेकों हैं! क्या कारण है अब रोने का? मगर किसी ने उस ओ ध्यान नहीं दिया तो कवि ने प्रतिज्ञा की—सभी लालटेन बुता दूंगा, सभी पहाड़ बोलेंगे हीरा कोयला भाई-भाई तमाम नारा लगायेंगे।" कवि मेरु शृंग से नीचे उतर कर द्वार-द्वार, घूम घूम कर सारी लालटेन बुताने लगे और नारा लगाने लगे हीरा कोयला भाई भाई तो भीड़ ने पहले उसका मजाक किया, बाद उस पर जूतियां बरसायीं, अ

मैं उसे शब्द-कुठारों से आहत और निष्प्राण कर एक कोने में फेंक दिया और तब उस घायल और मरणासन्न कवि ने गाया, हे परमेश्वर, मैंने तुम्हारे भरोसे पर नारा लगाया था, और प्रतिज्ञा की थी। अपने पौरुष का मुझे रत्ती भर भी विश्वास था नहीं। मगर तूने मुझे धोखा दे दिया। नतीजा यह कि बेमौत मर रहा हूँ। हे प्रभु, कमल पुष्प जब मुरझाया तो उसने किसी की शिकायत नहीं की थी, सिर्फ इतना ही कहा था-मेरी इन बहनों—आने वाली कलियों को भ्रमरों से बचाना! क्या उनकी प्रार्थना सुनी जायगी? प्रभु, बेला ने यह नहीं चाहा था कि वह पारिजात बन जाय और विष्णु कण्ठ में ही चढ़ जाय। पर उसने यह जरूर चाहा था, पाप सुन्दरियों का कण्ठहार न बने। लेकिन उसकी चाह भी रही नहीं! सब कुछ बर्दाश्त किया जा सकता है, पर पुष्पों का अपमान! कोई आश्चर्य नहीं रावण नगरी में देवांगनाओं को दासियां बननी पड़ीं! आखिर यह कब तक और क्यों?

संसार में आज तक जितने भी अभागे आत्महत्या करने आगे बढ़े उनके हाथ पकड़ कर रोकने और सद्पथ पर उन्हें आरूढ़ कराने परमेश्वर नहीं प्रकट हुए थे। और उन्होंने भी शौक से अपने को खत्म करना नहीं चाहा था। फिर भी प्रत्येक आत्म हत्यार्थी भीतर-भीतर यह उम्मीद रखते हैं, नारायण अवश्य किसी नर के रूप में प्रकट होकर मेरे हाथ पकड़ लेंगे। उनकी यह आशा, यह कारुणिक उम्मीद ही उनका कवित्व है। संसार में साहित्य साधना की यही परम्परा रही है।

हिन्दुओं के राजनैतिक और साहित्यिक इतिहास के बारे में कुछ भी न जिक्र करना ही शांतिप्रद है। सबसे बड़ी बुद्धिमानी भेड़-न्याय को मानना है। यह भी एक बात है कि पानी मथने से नवनीत नहीं निकलने का। दुग्ध कहां से आयगा? किसके हृदयान्तर्भाग में नन्दिनी बंधी हुई है? ज्वरग्रस्त और मृतप्राय व्यक्ति का प्रत्येक शारीरिक और मानसिक लक्षण यह बतायगा कि अन्त क्यों और कब होने वाला! बुद्ध के और बाद इस्लाम के इस देश में आविर्भाव के पहले और फिर अंग्रेज के भी आने के पहले इस देश के सामन्तों, जातियों, जनपदों का पारस्परिक आचार-व्यवहार-संस्कृति जिन्हें ज्ञान है वे देश की आज की राजनीतिक और सामाजिक तथा साहित्यिक गतिविधि का अनुसन्धान तुलनात्मक और विवेचनात्मक दृष्टि से करें और फिर कहें, हम कहां हैं और किस ओर बढ़ रहे हैं! अतीत वैदिक और उपनिषदी युग की स्थिति चाहे जैसी भी रही हो बाद इस संसार में साहित्य नामक अनुष्ठान सदा से शासन की जय ही बोले हैं, शासनाधिकारियों के प्रभुत्व के नीचे दबे ही पड़े रहे हैं और शासन इसे अपनी हितानुकूल इस्तेमाल ही करते रहे हैं। इतिहासकार भी कालिदास की और तुलसीदास की प्रतिष्ठा को भोज या मुगल बादशाहों से ऊपर नहीं दर्शाये हैं। फिर भी यह सर्वविदित है, सर्वमान्य भी कि वे अमर विभूति साहित्यिक दिग्विजयी लोग थे

मानव संस्कृति का सूत्रपात रचे हैं। जैसे मानव शरीर में प्राणवायु का महत्व
ही राष्ट्र के लिये अपनी राष्ट्रभाषा और उसका साहित्य है। जैसे दुर्योधन
राजनीतिक दूरदर्शिता यह कह कर दर्शायी कि सब कुछ खोकर भी हम अ
को बचाये रखें तो हम सभी सुरक्षित हैं वैसे ही हम भी अगर सब कुछ
भी देश की राष्ट्रभाषा और उसके साहित्य को आसमान में उठाये रख
इससे बढ़कर कोई राजनीतिक चेतना और प्रगल्भता का परिचय नहीं द
गे।

अपने मद्रास पर्यटन के सिलसिले में एक बार विनोबा जी ने कहा था
यण को दुबारा लिखने की जरूरत है। शायद उनका तात्पर्य मद्रास के द्रा
कजगम के आन्दोलन से उत्पन्न वातावरण के फलस्वरूप रहा हो। पर प्रश्न
है दुबारा परिवर्त्तित और संशोधित रूप में आज की राजनीतिक और सामा
को ध्यान में रखते हुए रामकथा लिख डालने से काम चल जायग
वह उचित होगा? मेरे मनमें यह चक्कर काटता रहा। इधर हाल में
अंगारा तुल्य द्राविड़ मुनेत्र कजगम के एक विद्वान और क्रान्तिकारी तथा त्य
से मेरी भेंट हो गयी। मैंने ज्ञानलाभ करने की इच्छा प्रकट की। उन्ह
वानी दर्शायी और तभी से मेरे मन में यह बात घूमती रही कि प्राच्य भा
पाठकों को भी ज्ञान-लाभ कराना चाहिये। उन्हों ने बहुत सी रोमांचकारी
नवीन और मौलिक बातें मुझे सुनायी जिनमें प्रमुख यों हैं।

"राम ईस्वर नहीं थे। वे अपने को ईश्वर घोषित करके एक जबरदस्त
नीतिक चाल खेली। इस चाल के अधीन अनन्तकाल के लिये भारतीय जनता इतनी फँस
है कि अब छुटकारा मिलना भी कठिन है। प्रत्येक हिन्दू देवी-देवता एक-एक राजा
सम्पन्न ही थे और उन्हों ने अपने को ईश्वर, या ईश्वर-तुल्य देवता घोषित
जनता को अपने अधीन बांध रखा था। यह राजनीतिक चाल हाल तक भी
है। उदाहरण के लिये शिवाजी को शिव का अवतार घोषित किया! गुरु ग
सिंह को भी लोग ईश्वर मानते हैं। हिन्दुओं के रक्त में यह ऐब आ गयी
जहां कहीं भी किसी हिन्दू में कुछ विशिष्टता नजर आयी तो फौरन उसे ईश्व
अवतारी पुरुष कहने लग जाते। स्वयं गांधी को भी कितने ही अवतारी पुरुष
है। हां, तो राम उत्तराखण्ड के एक महान राजा थे और उन्होंने चाल
चालाकी से दक्षिण पर विजय हासिल किया और अपने कवियों द्वारा अनन्तकाल
के लिये दक्षिण को उत्तर वालों के सामने लघु दर्शाये रखने का उपाय किया। उद
के लिये आप देखें—दक्षिण वालों को रामायण में वानर कहा, और राक्षस
ये दोनों शब्द अत्यन्त अपमान जनक हैं या नहीं? पर साहित्य में इस का

तरह कराया गया कि लोगों के मस्तिष्क में इस भाव ने जड़ पकड़ ली! रावण
प्रतापी, यशस्वी, विद्वान और तपस्वी ब्राह्मण शासक को राक्षस और पापी कहा गया। मैं
ा हूँ रावण ने सीता की नाक काटने की बात सोची क्यों नहीं थी?
खा की लक्ष्मण द्वारा नाक काटने पर उसके भाई रावण के हृदय में प्रतिकार भावना
त हुई और उसके चलते सीता को उड़ा ले गया तो यह क्या पुरुषोचित स्वभाव
कहा जा सकता था? राम की राजनीतिक चाल और अपने प्रभुत्व को
ये रखने के लिये कवियों को जिस तरह बुरा इस्तेमाल किया उसका भण्डा फोड़
ड़ मुनेत्र कजगम वालों ने ही किया है। और हम दक्षिण में किसी भी हालत
राम का प्रभुत्व रहने नहीं देंगे।" क्षणभर रुक कर वे फिर बोले - "देखिये साहब,
राम ने सुग्रीव हनुमान विभीषण आदि को पाद सेवक बनाया! सोचिये उस मनो-
के बारे में! अब उत्तर के कवि लोग लिखेंगे नेहरू विष्णु का अवतार
सर्वत्र नेहरू मन्दिर खड़ा करेंगे और मद्रासियों को भेड़-बकरे, गाय-बैल घोषित
ो—क्या नहीं संभव है, सोचा जाय? ना बाबा. हमें नहीं चाहिये तुम्हारी
दी और रामायण—हमें अपनी तमिल ही प्यारी, अपना रामस्वामी
यर और अन्नातुरे ही प्यारे" इसके बाद वह पुरुष बहुत देर तक चुप रहे
त में न जाने किस से कहने लगे—"सोचिये तो, वशिष्ठ जी भी ब्राह्मण थे। और
ण भी ब्राह्मण थे। पर रावण राक्षस हो गये! जिन्होंने वेद का भाष्य किया
महान ज्ञानी और अद्वितीय तपस्वी राक्षस हो गया। राक्षस-ब्राह्मण! और
ष्ठ देव-ब्राह्मण! मैं जानना चाहता हूँ आजकल के ये भात बेचनेवाले जनेऊ
ी सब राक्षस-ब्राह्मण हैं या देवता-ब्राह्मण? बताइये साहब! आप चुप क्यों
? सुनो कान खोल कर। अपना जनेऊ और संस्कृत कहीं और दर्शाया करो अब
झण्डा नहीं फहरने का। क्योंकि शेर जग चुका! हां हां, राक्षस ही सही!
राक्षस और बानर अब जग चुके हैं। अपने राम और रामायण ले कर अब
स-मेल पर नहीं चढ़ना। बेइज्जत हो जाओगे। तुम्हारी इस हिन्दी में वही दोनों
नी है। हम मद्रासी अगर हिन्दी पढ़ेंगे तो तुम उत्तरवालों को श्रेष्ठ समझने
ंगे जैसे अंग्रेजी पढ़ने पर अंग्रेजों को श्रेष्ठ मानना पड़ रहा है। अगर श्रेष्ठ ही
सी को मानना है तो हम अंग्रेजों को श्रेष्ठ समझेंगे क्योंकि वे लोग निस्सन्देह
ा देवताओं से कम शोषक हैं। इसलिये हम अंग्रेजी को ही चाहेंगे।

मैंने धीरे से पूछा—"प्रिय, आप हिन्दुस्तान की अखण्डता नहीं चाहते?" वे यह
तते ही झल्ला उठे - नहीं, एकदम नहीं, क्या है साहब हिन्दुस्थान की अखण्डता!
किस्तान कैसे बना? और कौन उसका जिम्मेदार? आर्य समाजी भाषण देते हैं
ा, सिलोन, जावा, सुमात्रा, अफगानिस्तान सभी हिन्दुस्थान थे एक जमाने में। कुछ

यहां तक कहते हैं चीन भी हिन्दुस्थान का एक भाग था। क्या इन सब व्य
का मतलब है भाई? इतनी बड़ी अंग्रेजी सल्तनत की अखण्डता कहां गयी
जातीय जीवन संघटित और दुरुस्त बनता है तभी देश अखण्ड रूप धारण करत
भाषा और साहित्य भी तब साथ-साथ विश्व व्यापी बन जाता है। और जब जाती
टुकड़ा एक दूसरे से ही टकराने लगता है तो एक देश लाख टुकड़े में बिभा
हो जाता है। पाकिस्तान का आविर्भाव गांधी नेहरू के नीचे भारतीय जनत
उत्थान या उत्कर्ष का परिचय था यह मैं कदापि नहीं मान सकता, बल्कि अपक
ही वह द्योतक रहा है। ऐसी आजादी किस बात की जो घर को लाख टुकड़ा क
और सभी टुकड़े एक दूसरे के संहार करने में आमादा हो जाएँ! क्या आप इसे आजाद
कहेंगे? क्या है साहब आजादी, मुल्क में घूम-घूमकर पूछिये इन नेताओं से आजाद
ना! सभी अपना-अपना राग देंगे। पाखण्डी सब? एक बात बराबर ध्यान
रखना। मद्रासी मूर्ख नहीं है। तुम्हारा राम और हिन्दी तथा भारतीय अखण्डता ह
प्रभावित नहीं कर सकती। वह स्वप्न अब बेकार! और हमारे इस जागरण
के हम अंग्रेजों को ही धन्यवाद देते हैं। हजारों बरसों की इस गुलामी से ह
अंग्रेजों ने ही बचा लिया।" मैंने पूछा—"किस गुलामी से?" वे बड़े जोर से चिल्लाये"—
ब्राह्मणवाद की गुलामी से।" और कहा, "तुम सभी और कांग्रेसी मंत्रीलोग भी कालक्रम में दे
प्राप्त करेंगे। हिंदी के कवि लोग राजनीतिक नेताओं को देवत्वपद और ईश्वर
दान करने में बड़े तेज हैं। निकम्मे पण्डे सब।" अन्त में उन्होंने उठकर खड़े होते
पूछा 'तुम्हें दुख लग गया?' मैंने कहा—'हां, बन्धु मुझे आपके इस कथन पर
भयंकर राष्ट्रीय समस्या सामने खड़ी अट्टहास करती नजर आ रही है।" उन्हों
कहा—"तुम्हारी भाषा गलत है। मैं इसे सुधार कर सकता हूँ। एक बहुत बड़ा
जागरण सामने खड़ा सिंह-गर्जन करता सुनायी दे रहा है, ऐसा कहो। लेकिन सु
मुझे भी कुछ दुख लगा है। मैंने पूछा, "आपका क्या दुःख है?" उन्होंने
ने कहा—"तुम्हारे जैसे मेधावी पुरुष मद्रास और तमिल छोड़ क्यों इस जंगल
में भूख मर रहे हो जी? यहां के लोग तुम्हारा कभी कदर नहीं करेंगे और न म
ही अब तुम्हें अपना समझेंगे। क्योंकि तुम अपने अब तक के आचरण से अपने को विश्व
घोषित कर चुके हो। तुम न इधर के रहे न उधर के। अपनी उस प्राचीन
भवी भाषा तमिल छोड़ तुम कैसे इस उर्दू की दासी हिन्दी का भक्त बन गये रे गरीब?
तो तुम पर तरस आता है।" मैंने कहा—"हिन्दी-उर्दू की दासी नहीं। उलटी बात है
हो हिन्दी की बेटी है।" उन्होंने हँसते हुए कहा—कहीं और सुनाओ अपना ज्ञान।
हिन्दी थी ही नहीं। जो कुछ भी थी, मगधी, भोजपुरी, मैथिली, बुन्देलखण्डी आदि
थी। मुसलमान बादशाहों ने ही इसे गढ़ा और उसका नाम उर्दू रखा

से कुछ अग्रवाल लोगों ने संस्कृत शैली में गढ़कर हिन्दी नाम दे दिया। यह
ब सत्य मद्रासियों से अब छिपा नहीं है। जब से भारत का शासन नेहरू के हाथ
गया है, सभी विद्वान हिंदी साहित्य का इतिहास लिखने लगे पर साहित्य सृजन करना कोई
हीं चाहता! आगरा, मेरठ के अग्रवाली उर्दू ही हिंदी बन गयी, सिनेमावालों
उसे फैलाया, इसका दम ही क्या है साहब तमिल के सामने ?" मैंने पूछा—"आपको
सने यह सब बातें कहीं भाई? यह सब गलत धारणायें हैं। मालूम होता है आप
किसी मुसलमान ने भड़काया है। ये बातें अक्सर वे ही लोग बोला करते हैं।"
होंने पूछा—"क्यों? उनकी धारणाओं और विचारों का कोई मूल्य नहीं? वे
या सभी निराधार हैं?" मैंने कहा—"हा, बिलकुल निराधार है।" इस पर बिगड़ते
उन्होंने कहा—"भाईजान, भले आप अपने घर में अपनी स्त्री के पास बैठकर कहिये
आप इन्द्र हैं। पर संसार भी वह बात माने तभी तो आप इन्द्र बनेंगे! कोई देश स्वतंत्र
ते ही क्यों संसार के अन्य राष्ट्रों द्वारा मान्यता प्राप्त करने की फिक्र करता है?
श्वविद्यालयों की एम० ए० बी० ए० परीक्षाओं और उन सर्टिफिकेटों को सर्वत्र यह प्रतिष्ठा
र मूल्य क्यों? तो प्रियवर, आप के उस यज्ञोपवीत की भी कीमत और प्रतिष्ठा तब
मन्दिर और देव मूर्तियों का भी सम्मान तब है जब कि उन्हें अन्य गैर हिन्दू जाति
लोग हिन्दुस्थान के अन्दर भी और बाहर भी प्रतिष्ठा के साथ देखकर उसको मूल्य
तैयार हैं। जिस यज्ञोपवीत को मुसलमान और ईसाई कुछ मान्यता नहीं देते उसका
छ भी अर्थ नहीं रह जाता! हमारे प्रत्येक आचरण को तभी सफलता मिलेगी जब
सको संसार मान्यता दे। हम आदमी भी तभी जब संसार मान ले कि हम आदमी
पशु नहीं हैं। विरोधी दलों और विपरीत शक्तियों द्वारा भी सम्मान प्राप्त करना
शक्ति और तप का परिचायक है। गांधी की कीमत इसलिए अधिक थी कि उनके
क्तित्व का लोहा मुसलमान, ईसाई और संसार के अन्य देश वाले भी मानते थे। तब
र उसके बाद ही हिन्दुस्थान में भी उसका मान बढ़ा। रवीन्द्रनाथ को पाश्चात्य
वालों ने नोबुल पुरस्कार दिया, विवेकानन्द को अमेरिकावालों ने प्रतिष्ठा दी तब
पलोग नारे लगाने दौड़े! इसलिए मेरा यही कहना है आप भी कुछ समझकर बहस करने
इये। हराने के लक्ष्य से बोला मत कीजिए। साफ समझ लीजिए आप जैसे तथाकथित
नियों और श्रेष्ठों को द्रविड़ मुनेत्र कजगम वाले नरक के जमाने से सड़े कीड़े से अधिक कुछ
नहीं समझते हैं!" मुझे यह लम्बा प्रवचन सुनते ही क्रोध चढ़ आया। मैंने कहा—
चुप रहिये साहब! आपका मुंह व्यर्थ के शब्द से भरे है जैसे तकिये में रुई। क्यों तकलीफ
रहे हैं? प्रयोजन नहीं है। मुझे समझाइये मत।" उन्होंने भी उसी स्वर में झल्लाते
कहा—"मुझे भी समझाने मत आओ प्यारे। पहले अपने माथे का इलाज करो।

शेष पृष्ठ ५२ पर

पूर्ण योग में गुरु का स्थान

श्री अरविन्द

गतांक का शेषांश

...र्ण योग का साधक इन सब साधनों का ...प्रकृति के अनुसार उपयोग करेगा। ...यह आवश्यक है कि वह इनकी न्यूनताओं ...त्याग कर दे और अपने अन्दर से अहं-...मन की उस एकांगी प्रवृत्ति को निकाल ...जो आग्रहपूर्वक कहती है—"मेरा ईश्वर, ...वतार, मेरा पैगम्बर, मेरा गुरु" और इसके ...पर साम्प्रदायिक या धर्मान्ध भाव से ...सब अनुभवों (तथा उपलब्धियों) का ...करनी है। समस्त साम्प्रदायिकता ...समस्त धर्मान्धता से उसे अलग रहना ..., क्योंकि वह दिव्य उपलब्धि की ...ता से असंगत है।

इसके विपरीत पूर्ण योग का साधक तब ...संतुष्ट नहीं होगा जब तक वह इष्ट ...के अन्य सभी नामों और रूपों को ...परिकल्पना में समाविष्ट नहीं कर ...अन्य सभी देवताओं में अपने इष्ट ...के दर्शन नहीं कर लेता, सब अवतारों ...ग्रहण करने वाले भगवान की एकता में ...भूत नहीं कर लेता और सभी शिक्षाओं ...निहित सत्य को नित्य ज्ञान समस्वरता में ...न्वित नहीं कर देता।

परन्तु उसे इन बाह्य साधनों का उद्देश्य ...नहीं जाना चाहिए। इनका उद्देश्य ...—इसकी आत्मा को उसके अन्तरस्थ भगवान की ओर उद्बुद्ध कर देना। यदि यह कार्य सिद्ध नहीं हुआ है तो समझो कुछ भी अन्तिम तौर पर सिद्ध नहीं हुआ है। यदि बुद्ध, ईसा या कृष्ण हमारे अन्दर व्यक्त तथा मूर्तिमन्त नहीं हुए हैं तो केवल बाहर से ही कृष्ण, ईसा या बुद्ध की पूजा करना पर्याप्त नहीं होगा। इसी प्रकार अन्य साधनों का भी इसके सिवा और कोई उद्देश्य नहीं है। प्रत्येक साधन मनुष्य की अपरिवर्त्तित अवस्था तथा इसके अन्दर होने वाली भगवान की अभिव्यक्ति के बीच सेतु भर होता है।

पूर्णयोग का गुरु यथासंभव हमारे अंतस्थित परम गुरु की पद्धति का ही अनुसरण करेगा। वह शिष्य को शिष्य की प्रकृति के द्वारा ही ले चलेगा। शिक्षण, दृष्टान्त, प्रभाव—ये गुरु के तीन साधन होते हैं परन्तु ज्ञानी गुरु अपने आपको अथवा अपनी सम्मत्तियों को (शिष्य के) ग्रहणशील मन की निष्प्रतिरोध स्वीकृति पर लादने की कोशिश नहीं करेगा। वह कोई फलजनक संस्कार ही उसके भीतर डाल देगा जो बीज की तरह, निश्चितरूपेण, अन्दर ही अन्दर दिव्य पोषण पाकर उपजेगा और बुद्धि को प्राप्त होगा। वह शिक्षा देने की अपेक्षा कहीं अधिक उद्बुद्ध करने का ही यत्न करेगा वह नैसर्गिक प्रक्रिया और स्वतन्त्र विस्तार के द्वारा शक्तियों और अनुभूतियों ...

ास को ही लक्ष्य बनायेगा। वह किसी
त्र को एक सहायक साधन एवं उपयोगी
य के रूप में ही बतलायेगा, किसी
ल्लंघनीय नियम या नियत नित्याभ्यास
प में नहीं। वह इस बात से सावधान
ा कि कहीं वह साधन को किसी प्रकार
बन्धन न बना डाले और प्रक्रिया को
त्रिक रूप न दे दे। उसका सम्पूर्ण कर्त्तव्य
यही है कि दिव्य शांति की क्रिया प्रारम्भ
 दे जिसका वह स्वयं एक साधन एवं
करण और आधार या प्रणालिका मात्र है।
 दृष्टांत शिक्षण की अपेक्षा अधिक शक्ति-
ली होता है। परन्तु बाह्य कर्मों तथा
क्तिगत चरित्र का दृष्टान्त सर्वोत्तम दृष्टान्त
 है। इनका अपना स्थान और अपनी
योगिता अवश्य, है, किन्तु जो चीज
रों में अभीप्सा को अत्यधिक उद्दीप्त
गी वह गुरु के अन्दर विद्यमान दिव्य
लब्धि का केन्द्रीय तथ्य है जो उसके
ने जीवन तथा उसकी आन्तरिक अवस्था
 उसके सारे कर्मों को नियन्त्रित करता
 यह उसके अन्दर एक सार्वभौम और सार-
 तत्व है। शेष सब कुछ व्यक्ति और
स्थिति से सम्बन्ध रखता है। इस
ाशील उपलब्धि को गुरु में प्रत्यक्ष देख
 साधक को इसे अपने अन्दर अपनी
जी प्रकृति के अनुसार मूर्तिमान करना
ा। इसे बाहर से अनुकरण करने का यत्न
ने की आवश्यता नहीं है, क्योंकि वह
ुकरण यथोचित तथा स्वाभाविक फल पैदा
ने के स्थान पर सहज ही पंगु बनाने वाला
 सकता है।

प्रभाव दृष्टान्त की अपेक्षा अधिक महत्व
शाली होता है। प्रभाव का अर्थ गुरु का
अपने शिष्य पर बाह्य शासन एवं अधिकार
नहीं है, बल्कि उसके संस्पर्श एवं उसकी
उपस्थिति की शक्ति है, उसकी आत्मा की
दूसरे की आत्मा के साथ समीपता की शक्ति
है, जो दूसरे की आत्मा के अन्दर, चाहे
मौन रूप में ही, गुरु के अस्तित्व और गुण
को अन्तः संचारित कर देती है। यह है
गुरु का सर्वोत्कृष्ट लक्षण। वास्तव में पर-
मोच्च कोटि का गुरु शिक्षक बहुत कम होता
है। वह तो एक उपस्थिति होता है जो
अपने आसपास के सभी ग्रहणशील लोगों में
दिव्य चेतना और उसकी सारभूत ज्योति शक्ति,
पवित्रता और आनन्द उड़ेलता रहता है।

इसके अतिरिक्त, पूर्णयोग के गुरु का
यह भी एक चिह्न होगा कि वह मानवीय
अहंकार के तरीके से तथा अभिमानवश
गुरुपन का अनुचित दावा नहीं करेगा।
उसका काम, यदि कोई काम उसके सुपुर्द है
तो, ऊपर से सुपुर्द किया हुआ काम है, वह
स्वयं एक प्रणालिका, आधार या प्रतिनिधि
है। वह एक मनुष्य है जो अपने मनुष्य-
भाईयों की सहायता करता है, एक बालक
है जो बालकों का अग्रणी बनता है। एक
प्रकाश है जो दूसरे प्रकाशों को प्रदीप्त करता
है, एक प्रबुद्ध आत्मा है जो दूसरी आत्माओं
को प्रबुद्ध करती है, अपने सर्वोच्च
रूप में वह भगवान की एक शक्ति या उप-
स्थिति है जो भगवान की अन्य शक्तियों
को अपनी ओर पुकारती है।

शेष पृष्ठ १६ पर

षा शास्त्रीय संदर्भ में भाषा-विधेयक के समर्थकों को प्रत्युत्तर

डा० महावीर सरन जैन
प्रेम निवास, अन्सारी रोड, बुलन्दशहर (यू० पी०)

षा और संस्कृति का बहुत निकट का होता है। प्रत्येक भाषा अपने बोलने की सामाजिक, सांस्कृतिक आवश्यक- र अपने में पूर्ण होती है। अधुनातन त्र का यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि सी भी भाषा को अन्य दूसरी भाषा से या बुरी नहीं कह सकते हैं। जब सी भाषा को अन्य दूसरी भाषा से तलाते हैं, तो वहां हमारा अभिप्राय ओं की तुलना से नहीं होता, अपितु ओं के भाषा समुदायों की संस्कृतियों तुलना से होता है। प्रत्येक भाषा, उस समुदाय के लिए उतनी ही अच्छी या होती है, जितनी कोई भी दूसरी उसके बोलने वालों के लिए अच्छी या होती है। हमारी जो परम्पराएं हैं, रीतिरिवाज हैं, तथा जिस प्रकार की त्मिक भावनाएं एवं अनुभूतियां हैं, को जिस सहज रूप में हम अपनी भाषा अभिव्यक्त कर सकते हैं, उस रूप में दूसर भाषा के माध्यम से व्यक्त नहीं सकते। यहां यह उल्लेखनीय है कि किसी का साहित्य किसी अन्य भाषा के हित्य से अच्छा या बुरा हो सकता है, किन्तु कोई भाषा किसी भी अन्य भाषा से अच्छी या बुरी नहीं हो सकती, क्योंकि प्रत्येक भाषा अपने बोलने वालों की संस्कृति के अनुरूप होती है।

भाषा और संस्कृति के उपर्युक्त सम्बन्ध निरूपण के पश्चात् जब हम भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा की समस्या पर विचार करते हैं, तो पहला प्रश्न यह उठता है कि हमारी राष्ट्र एवं राष्ट्रभाषा अपने ही राष्ट्र की कोई भाषा हो अथवा कोई विदेशी भाषा भी वह आसन ग्रहण करने की अधिकारिणी हो सकती है। यहां विदेशी भाषा के रूप में केवल अंग्रेजी ही आती है, जिसको यहां का विद्वत्वर्ग समझ लेता है और आव- श्यकतानुसार बोल भी लेता है। इसके साथ ही यह भी सर्वमान्य ही है कि अंग्रेजी शासन के प्रायः दो सौ वर्षों तक अविरल चलने के कारण, हमारी संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति का पर्याप्त प्रभाव भी पड़ा है प्रश्न यह उठता है कि भारत में अंग्रेजी का प्रचार, अंग्रेजी साहित्य की धनाढ्यत के कारण, हम अपने राष्ट्र की राष्ट्र एव राजभाषा अंग्रेजी को ही क्यों न मा लें? इस प्रश्न का प्रत्युत्तर देने से पूर्व, ह

संस्कृतिगत प्रश्न का निर्णय करना है, क्योंकि इसी निर्णय पर हमारा भाषा सम्बन्धी निर्णय भी आधारित है। हमारे सामने दो विकल्प हैं और उनमें से हमें एक को चुनना होगा। पहला यह कि हमारी संस्कृति दूषित है, त्याज्य है और अंग्रेजी या पाश्चात्य संस्कृति विकासोन्मुख है, एतदर्थ हमें अपनी संस्कृति को त्यागकर पाश्चात्य संस्कृति को शत प्रतिशत अपना लेना चाहिए। दूसरा मार्ग यह है कि हमें अपनी ही संस्कृति को, विश्व की प्रत्येक संस्कृति की अच्छी बातें ग्रहण कर, और अधिक समृद्ध बनाना चाहिये। संस्कृति निर्णय के आधार पर ही हमारा भाषागत निर्णय हो सकता है। यदि हम पहले मार्ग को पसन्द करते हैं तो निश्चित रूप से अंग्रेजी ही यहाँ की राष्ट्र एवं राजभाषा की अधिकारिणी है और यदि दूसरा मार्ग हमें गृहीत है तो भारत के सब से अधिक भूमाग तथा सब से अधिक भाषा-भाषियों द्वारा बोली जाने वाली और समझी जाने वाली हिन्दी भाषा को राष्ट्र एवं राजभाषा के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए। संविधान सभा ने दूसरे मार्ग को ही अधिक श्रेयस्कर समझा था और इसी कारण संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकृत किया गया है। यह सत्य है कि कोई अपरिचित भाषा एकदम नहीं सीखी जा सकती किन्तु दस वर्षों में उसका इतना ज्ञान किया जा सकता है कि उसके माध्यम से राजकीय कार्य सम्पन्न किया जा सके। अंग्रेजी जो हमारी मातृभाषा नहीं किन्तु कक्षा ६ से अंग्रेजी का अक्षर ज्ञान करनेवाला विद्यार्थी १० वर्ष पश्चात एम० ए० पास करने के साथ बड़े से बड़े राजकीय पद पर आसीन हो जाने की क्षमता रखता है। जिस विधि से तथा जितनी अवधि में हम एक विदेशी भाषा के 'मास्टर' बन जाते हैं, उस विधि तथा अवधि में क्या हम अपने ही राष्ट्र की एक भाषा का ज्ञान भी प्राप्त नहीं कर सकते?

१९६५ के बाद भी, हिन्दी के साथ साथ अंग्रेजी को सरकारी भाषा के रूप में जारी रखने वाला विधेयक सत्तारूढ़ दल ने संसद में पास करा लिया है। विधेयक के दौरान अंग्रेजी समर्थकों ने जिस रूप में तर्क पेश किये, उससे दुख होता है क्योंकि उनके अटपटे तर्कों से उस गुलाम भारत की स्मृति सजग हो जाती है जिसके अधिकारी अंग्रेज यहां शासन करते हुए यह कहते थे कि अभी भारतवासियों में शासन करने की क्षमता नहीं है। अंग्रेज विदेशी थे, पराये थे, किन्तु अपने द्वारा निर्वाचित अपने ही शासकों द्वारा स्वतन्त्र एवं गणतन्त्र भारत में उसी प्रकार की बातें सुनना हमें अस्वाभाविक ही नहीं लगता, उससे हम लज्जाभिभूत भी हो उठते हैं।

स्वतन्त्रता आन्दोलन में हमने इसलिये गोली नहीं खायीं कि राजनैतिक दृष्टि से अंग्रेजों के गुलाम ही बने रहेंगे। यद्यपि संविधान में कुछ व्यवहारिक कठिनाइयों से बचने एवं अंग्रेजी वालों के प्रति सहिष्णु होकर प्रारम्भ से पन्द्रह वर्षों तक की कालावधि तक के लिए अंग्रेजी को

...य प्रयोजनों के लिए स्वीकृत कर ...या गया था, तथापि उसी में इन वर्षों में ...ी भाषा के प्रसार के सम्बन्ध में, सरकार ...ष्टतः निर्देशित कर दिया गया है— ...न्दी भाषा की प्रसार वृद्धि करना, उसका ...कास करना ताकि वह भारत की सामा- ...क संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति ...माध्यम हो सके तथा उसकी आत्मीयता ...हस्तक्षेप किये बिना···उसकी समृद्धि ...निश्चित करना संघ का कर्त्तव्य होगा।" ...बड़े खेद के साथ यह कहना पड़ता ...कि हमारी सरकार हिन्दी के विकास ...प्रसार के लिये ऐसा कोई सुदृढ़ एवं ...निश्चित कार्य न कर सकी, जो उसे करना ...िए था। इसके अनेक कारण हैं, किन्तु ...ं उन कारणों की विवेचना तथा सरकार ...आलोचना करना वृथा है। यहां हम ...तना ही कहना चाहते हैं कि एक विदेशी ...षा के प्रति हमारी सरकार का जितना ...ह रहा है वह एक अभिमानी राष्ट्र के ...ए शर्म और लज्जा की बात है। हमें ...स बात का भी दुःख होता है कि जनता ...सामने गिड़गिड़ाकर जो व्यक्ति राजनीति ...अखाड़े में बाजी मार ले जाता है, उसका ...दिमाग इतना क्यों सड़ जाता है कि वह

अपने को सभी साधनाओं के क्षेत्रों क... अधिकृत मास्टर समझ बैठता है। अगर कोई हिन्दी नहीं समझता और यह म... मानने को तैयार नहीं है कि वह हिन्दी नहीं जानता, तो जनतन्त्र में उसको यह क्य... अधिकार है कि वह अपनी तथा अपने जैसे कुछ अन्य 'अंग्रेजीदाओं' की 'सहुलियत' के लिए शेष समस्त जनता से यह मांग क... कि तुम अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं को छोड़ दो, अपनी राष्ट्रीयभाषा छोड़ दो, विदेशी भाषा सीखो और चुपचाप पीछे चल... रहो। जिनका जीवन ही अंग्रेजी बोल... एवं लिखते बीता है, वे ही क्या भारत ... बहुमत का प्रतिनिधित्व करते हैं? अंग्रेजों को हमने इसलिए नहीं निकाला कि उन... कार्य करना नहीं आता था, या वे शास... के अयोग्य थे, अपितु केवल इसलिए ... वे पराये थे। अंग्रेजी चाहे कितनी ... अच्छी क्यों न हो, (हांलाकि भाषा ... सम्बन्ध में अच्छी या बुरी का प्रश्न ... नहीं उठता), किन्तु वह परायी है और हम अपनी भाषा को राष्ट्र की सांस्कृति... परम्परा का प्रतिनिधित्व करने वाली भा... को उसके स्थान पर देखना चाहते हैं।

'वृक्ष ने सोचा, मैं वापस अपने बीजावस्था में जाना बेहतर समझता हूं। कौन इस आंधी वर्षा को इस तरह नंगा खड़ा बर्दाश्त करेगा? और कब तक?

बीज के भीतर बैठा वृक्ष ने सोचा—'काश, कोई मेहरबान इस अभेद्य दुर्ग से मुझे मुक्ति दिया रहता तो जरा सांस लेता, जरा संसार को देखता और जरा अपना भी दर्शाता।'

—आनन्द शंकर माधवन

लालचीन या भारत--

लम्बे युद्ध में कौन डट सकेगा ?

रामप्रताप सिंह, अजीतमल, इटावा, यू० पी०

खबरें आ रही हैं कि लालचीन भारत की उत्तरी सीमा पर फिर अपनी फौजें विशाल संख्या में एकत्रित कर रहा है और किसी भी समय जोरदार हमला कर सकता है। हमारे प्रधानमंत्री का कहना है कि भारत और लालचीन की युद्ध जैसी स्थिति कई वर्ष तक चलेगी। भारत को लम्बे युद्ध के लिए तैयार होना चाहिये और इसका सर्वोत्तम उपाय है देश का तेजी से औद्योगिक विकास। न तो लालचीन भारत को युद्ध में हरा सकता है और न भारत ही। ऐसी स्थिति में यही सम्भव है कि लम्बे युद्ध में लालचीन के पैर स्वयं ही लड़खड़ा जायें। इधर उधर से प्रमाण मिलते हैं वह इसी बात की पुष्टि करते हैं। उद्योगीकरण का तुलना में लालचीन के मुकाबिले में भारत बहुत आगे है। भारत की आर्थिक, सामाजिक, औद्योगिक स्थिति साम्यवादी चीन की तुलना में बहुत मजबूत और ठोस है।

लालचीन की स्थिति—पिछले दस वर्षों से खबरें आ रही हैं कि लालचीन एटम बम्ब बना रहा है पर अभी न तो बनाया है और न निकट भविष्य में बनने की आशा है, क्योंकि उसके पास न तो इतना धन है और न औद्योगिक प्रगति। रूस ने लालचीन को एटम बनाने का तकनीकी ज्ञान भी नहीं दिया है। लालचीन की औद्योगिक और आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय है। वहां जो आंकड़ें प्रकाशित होते रहे हैं वह दुनिया और अपने देशवासियों को धोखा देने को है। उनकी अब पोल खुल गई है। जब से चीन साम्यवादियों के कब्जे में आया है, वहां की खेतीबारी का काम चौपट हो गया है। वहां आज भुखमरी है। खाद्यान्न केनाडा, अस्ट्रेलिया से आ रहा है और इसका मूल्य चुकाने को लालचीन के पास पैसा नहीं है। औद्योगिक उत्पादन भी बहुत पिछड़ा हुआ है। रूस के सहयोग से जो नये कल कारखाने वहां लगे थे, वह बन्द पड़े हुए हैं या उनका उत्पादन नाममात्र को होता है। वहां के जहाज हांगकांग में मरम्मत होने आते हैं, वह स्वयं ठीक नहीं कर सकता।

इस्पात लोहा उद्योग—आज के युग में लोहा व इस्पात का भारी महत्व है, युद्ध सामग्री उद्योगों के लिए कल कारखाने आदि के निर्माण में सब से आवश्यक चीज लोहा है। इस क्षेत्र में भी लालचीन भारत से पिछड़ा है। लालचीन के पास लोहे की बड़ी-बड़ी खानें हैं अवश्य पर वह उसकी आवश्यकता के १० वें भाग की पूर्ति ही

...ती हैं, अगर पश्चिमी जर्मनी के ... नागरिक के बराबर ही लालचीन ... प्रत्येक नागरिक के लिए बराबर ही ... इस्तेमाल करना चाहे तो समस्त ... का लोहा उत्पादन भी उसके लिये ... ही होगा। इससे स्पष्ट है कि पश्चिमी ... पर लालचीन एक बड़ा शक्तिशाली देश ... नागरिक शक्ति और न औद्योगिक ... में कभी बन सकता। जब तक ... समस्त संसार पर कबजा न कर ले उसका ... लोहा उत्पादन उसके काबू में न आ ... और संसार की गैर चीनी जनता ... लोहे के रह जाय वह यथेष्ट लोहा नहीं ... सकता।

... वहां का लोहा उद्योग भी भारत से ... हुआ है क्योंकि लालचीन में लोहा ... को जमाने का कार्य रूस ने किया ... जबकि रूस में यह उद्योग पिछले ... वर्षों में पश्चमी जर्मनो के फर्मों ने ... क्रुप ने कायम किया है! आज भी ... में पश्चमी जर्मनी का सब से बड़ा ... क्रुप यहां कई कारखाने अपने जर्मन ... की देखभाल में खड़े करवा रहा ... हाल ही में क्रुप के जनरल मैनेजर ... गये थे। वहां उनको बड़ी आवभगत ... थीं, खुश्चेव ने घुलमिलकर घन्टों ... की थीं, अपना निजी वायुयान उनको ... का दौरा करने को दिया था।

... भारत में पश्चिमी जर्मन विशेषज्ञों, ... और धन की सहायता से रूरकेला ... आधुनिकतम इस्पात का कारखाना ... है। रूसियों ने पहले इसकी खूब बुराई की और अपने भिलाई की तारीफ की। पर अब सत्यता सामने आई है कि रूस ने आस्ट्रिया में ठीक रूरकेला के ढंग का कारखाना लगाने का आर्डर दिया है जिसमें जर्मनों का भी सहयोग होगा। लालचीन ने भी अपने विशेषज्ञ आस्ट्रिया भेजे हैं जो रूरकेला के फौलाद बनाने के नवीनतम ए० डो० तरीके को सीखकर लालचीन में चालू करेंगे। अगर रूरकेला का फौलाद का कारखाना खराब होता या इस ढंग का लालचीन में होता तो क्यों वह इस की नकल अपने देश में करने को उतावला होता।

इससे स्पष्ट है कि लालचीन का सबसे महत्वपूर्ण इस्पात और लोहा उद्योग भारत से पीछे है, वहां न काफी लोहा और न अच्छी किस्म का। हाल ही में पश्चिमी जर्मनी की सरकार ने भारत को रूरकेला के विस्तार के लिए, जिससे उसकी उत्पादन क्षमता दुगनी हो जाय, खासी रकम ऋण स्वरूप दी है। रूरकेला का विस्तार कार्य प्रारम्भ हो गया है और वहां ऐसा फौलाद भी बनने लगा है जो युद्ध सामग्री निर्माण के लिए विशेष उपयुक्त होगा और तुरन्त काम आयेगा। लालचीन को लम्बे युद्ध में परास्त करने में रूरकेला व इसके सामान से अन्य नये कायम उद्योग धन्धों का महत्वपूर्ण योग होगा।

लालचीन में लोहा या इस्पात का जबरदस्त अभाव है। पहिले उसने अपना इस्पात का उत्पादन १ करोड़ टन से ऊपर बताया था पर १९५८ में उसे ८० लाख

न स्वीकार किया। वास्तव में वह इससे ी बहुत कम है। इसमें भी ३० प्रतिशत स ढंग से बनाया गया है जो इस्तेमाल ायक ही नहीं है।

चतुर्दिक असंतोष—लालचीन की ार्थिक और औद्योगिक अवस्था अत्यन्त ख़राब है। इसका परिणाम यह है कि किसानों मजदूरों आदि सबमें भीषण असन्तोष है। वहां की सेना के साधारण सैनिकों में भी असन्तोष है। देश की आन्तरिक स्थिति से जनता का ध्यान हटाने के लिये ही उसने भारत की सीमा पर युद्ध प्रारम्भ किया है पर देश की अन्दरूनी ऐसी भयंकर स्थिति में वह लम्बे युद्ध में कदापि न डट सकेगा। लालचीन की तुलना में इन बातों में भारत की स्थिति बहुत ज्यादा मजबूत है। अन्त में इसी की बदौलत हम लालचीन के छक्के छुड़ा सकेंगे और होश में ला सकेंगे।

शेषांश पृष्ठ १० का

जिस साधक को ये सब साधन प्राप्त हैं वह अपने लक्ष्य को अवश्यमेव अधिगत करेगा। यहां तक कि पतन भी उसके लिये उत्थान का साधन बन जायेगा और मृत्यु परिपूर्णता का पथ। क्योंकि एक बार जब वह अपने मार्ग पर चल पड़ता है तो जल और ारण उसकी सत्ता के विकास में आने वाली प्रक्रियायें तथा उसकी यात्रा के पड़ाव मात्र बन जाते हैं।

काल या समय एक और साधन है जो साधना की सफलता के लिये आवश्यक है। काल मानव प्रयत्न के सम्मुख शत्रु या मित्र के रूप में उपस्थित होता है। परन्तु वास्तव में यह सदा ही आत्मा का एक साधन है।

काल उन परिस्थितियों और वृत्तियों का क्षेत्र है जो एकत्र हो कर एक परिणामभूत प्रगति को साधित करती हैं। इस प्रगति के पथ को नापने के लिये काल एक साधन है। अहं के लिये यह एक अततायी या प्रतिबन्धक है, पर भगवान के लिए एक यंत्र। अतएव जब हमारा प्रयत्न व्यक्तिगत होता है तब काल हमें प्रतिबन्धक प्रतीत होता है क्योंकि यह हमारे सामने उन सब शक्तियों की बाधा उपस्थित करता है जो हमारी शक्तियों के साथ टक्कर खाती हैं। जब दिव्य क्रिया और व्यक्तिगत क्रिया हमारी चेतना में संयुक्त हो जाती है तब यह एक माध्यम और अनिवार्य शर्त की तरह प्रतीत होता है। जब ये दोनों क्रियायें एक हो जाती हैं तब यह एक सेवक और यंत्र प्रतीत होता है।

काल के सम्बन्ध में साधक की आदर्श मनोवृत्ति यह होनी चाहिए कि वह अनन्त धैर्य रखे, यह समझते हुए कि अपनी परिपूर्णता के लिये उसके सामने अनन्त काल पड़ा है, किन्तु फिर भी वह ऐसी शक्ति विकसित करे जो मानो आत्म-उपलब्धि को अभी साधित कर लेगी। फिर वह शक्ति एक सदा-वृद्धिशील प्रभुत्व के साथ और तीव्र वेग से तब तक बढ़नी जानी चाहिए जब तक कि परम दिव्य रूपान्तर की चमत्कारक घड़ी उपस्थित नहीं हो जाती।

उन्हें रौंदती आगे बढ़ गई है। सर्वश्रेष्ठ वीरांगना जैसी कि वह रुक गई। मृत्यु-शय्या पर पड़े व्यक्ति के समान, जो जीवन और मृत्यु के विरल क्षणों में, संघर्षरत होता है, उसने स्तब्ध भाव से देखा कि आज उसकी काया छोटी हो गई है। जगह जगह इस जिन्दगी की लम्बी चादर पर मटमैले धब्बे उभर आये हैं। और अपने शरीर से ही घृणा करनेवाले कंजूस की तरह, वह भी ऊबती जा रही है। —लेकिन वह हिचकिचाई, और कठिन परिश्रम से शराब की कड़वी घूँट उतारते अनबुझ व्यक्ति जैसी, उसने सब कुछ याद कर लिया। ...... उस समय आम के पेड़ों में मंजरियां लग गई थीं, और उनकी मधु भीनी गमक हवा के रथ पर चढ़कर फैल रही थीं। चिड़ियों की मीठी चकरघोई आवाज पेड़ों की पत्तियों पर तैर रही थीं। उसी दिन उसकी माँ चल बसी थीं। जिस कमरे में वह मरी थी, वह वर्षों का त्यों बन्द था, और उसकी भयानक मनहुसियत, जो कमरे के इर्द-गिर्द जम गई थी, और जिससे सम्पूर्ण घर का अस्तित्व धीरे-धीरे छीज रहा था, सदा उसके चेहरे पर छाई रहती थी। गर्मी के बीतते-बीतते यह सूनापन और घना हो गया था। फिर भी वह साफ-साफ स्वीकार करता है, गाँव और लोग दबी जबान से स्वीकार करते हैं, उसके पिता ने इस बुढ़ापे में शराब की लत बढ़ा ली थी, और कभी कभी तो इस कदर वे पीकर मस्त हो जाते थे, कि उन्हें कई बार नालियों से निकालना पड़ता था। बड़ी रात गये वे घर आते। कभी-कभी- चाँद भी आसमान में छिप जाता और केवल छोटे-मोटे तारों की रोशनी ही होती रहती। अक्सर इस समय वे अस्फुट स्वर में गीत गाते-गाते या जोरों से रामायण की दो-चार चौपाइयां दुहराया करते। माँ उस समय केवल एक छोटी-सी ढीबरी के सामने, जो भर रात काजल सा धुआँ ही उगला करती, रामायण का पाठ करती। जहाँ तक उसे ज्ञात है, माँ केवल मिडिल तक ही पढ़ सकी थी। उनके माँ बाप ने उन्हें अधिक शिक्षा देना जरूरी नहीं समझा था, क्योंकि उस समय तक, जैसा कि अभी भी उसके गाँव में रिवाज है, लड़कियों को चिट्ठी लिखने और रामायण पढ़ने तक का ज्ञान देना ही जरूरी समझा जाता है। ढीबरी की रोशनी में, जिसमें मिट्टी तेल की तीखी गन्ध मिली होती, वह साफ-साफ देखती, माँ का चेहरा कड़ा हो गया है, और उनके हाथ शून्य में उठ-गिर रहे हैं। आँखों में बरसाती नदी सी आँसू की बाढ़ आ गई है और धीरे-धीरे गतिशून्य-सी ढुलक-ढुलक कर वह मिट्टी में मिलती जा रही है। एक अज्ञात भय, जो ऐसे समय में अक्सर होता, उनके झुर्री भरे चेहरे पर फैल जाता, और जिस पर वे बड़ी अस्तव्यस्तता से अपनी सफेद हड्डी भरी उँगलियाँ फेरती रहती। दीप्ति को लगता जैसे उसके पिता ने वहीं, किसी जगह, एक बड़ा छेद उनके हृदय में बना दिया है, जिससे जीवन-रस दिन प्रतिदिन छीजता जा रहा है। माँ के जीवन के ये बड़े कसमकश के दिन थे। चिड़चिड़ाहट

...आवाज में वे जोरों से हाँफती, और ...को अनाप-सनाप, जिनकी संगति उनके मन के अज्ञात तारों से ही सुनाया करती। इस क्रम में हमेशा मार पड़ती, गालियों की बौछार से अनवरत भींगाया जाता और एक मोटी नीली लकीर, ठीक उनकी पीठ ...सी ही, उनके मन पर खींच जाती। ...घृणा का भाव, जो आलोचना से मिला- होता, वह देखती, और उनके पतले ...पर जो धीरे-धीरे फैल कर शांत हो ...। यह और भयंकर हो जाता, जब उसे गोदी में समेट लेती, और सिर से मिलाकर घंटों परिवार के भविष्य की कहतीं, बीच बीच में रोती और मद्धिम ...में कह उठतीं—"बेटी। यह गाड़ी अब ...चल सकती। बालू भरी जमीन में ...पगडंडी के वह फँस गई। शायद ही ...निकले!" और मधुभींगी मधुमक्खी ...तरह अपने दर्द को वह इस तरह छिपाने कोशिश करती, जैसे उन्हें सफलता नहीं ...रही हो। उनके ओठों पर एक अवि- ...भरी मुस्कुराहट फैल कर सिकुड़ जाती, ...वे जोर-जोर से उसकी पीठ थपथपाने ...ती। वह क्रम रोज चलता, और पिता ...एवं दुख के दो पाटन के बीच गेहूँ ...तरह वे पीसतीं चली जातीं, बेबस, बे- ...। पर...दीप्ति जैसे अब भी रो ...रही है, उस याद से। उस दिन पिता ...ने माँ के साथ काफी ज्यादती की। ...उन्होंने माँ से पैसा मांगा, जैसा सब दिन ...मांगते, लेकिन और दिनों से आज ज्यादा

रुखाई भरकर, क्योंकि उन्हें शराब के बिना बेचैनी महसूस हो रही थी और रह-रहकर उनकी जीभ, काले पड़ गये ओठों पर चली आती थी, आँखों में पानी भर आया था, और मुँह हाँफी में बार-बार खुल पड़ते थे। गुड़ की डली पर अनजाने आ पड़नेवाली मक्खी की तरह वे माँ के पास नरम-गरम शब्दों में खुशामद कर रहे थे। एक बार जोरों से धधक पड़नेवाली आग-सी माँ ने कहा—"क्या मेरे पास थैली है, जो तुम्हें निकालकर दूँ? जो भी था, वह तुम्हारे जलते पेट में जाकर स्वाहा हो गया।" पिताजी को काफी क्रोध चढ़ आया, जैसे बुझने के पहले दीपक की लौ धधक कर जल उठती है। शराब के कारण बराबर गिरता हुआ उनका चेहरा कड़ा हो गया। हाथों की मुट्ठियाँ सख्त पड़ गईं, और लगातार जमीन कुरेदना उन्होंने शुरू कर दिया। दीप्ति ठीक ठीक याद कर रही है, उन्होंने शायद सब दिन से अधिक, उस दिन माँ को पीटा। इतनी भद्दी गालियां दीं, कि सोचकर भी जैसे घृणा से हृदय भर आता है। उसी रात, न जाने क्या सोच कर, माँ ने शृंगार किया, जैसे कोई नवेली दुल्हन ससुराल जा रही हो। उसने पूछा भी, तो माँ के होठों पर एक फीकी हँसी ही केवल तैर कर रह गई। बदले में उन्होंने जी भरकर उसे प्यार किया, शायद और दिनों की अपेक्षा ज्यादा, और रोने लगीं। वह भी साथ-साथ रोई, कब तक, यह उसे याद नहीं है, हाँ बहुत ही देर तक। और चुपचाप जाकर सो गई। माँ ने उसी रात

आत्म-हत्या कर ली। उनके गले में लटकी कपड़े की डोरी; याद करते-करते तो कलेजा मुंह को आता है, उनकी पतली गोरी गर्दन में बैठ गई थी। उनके हाथ सीधे फैले हुए थे, और उनमें लगता था कि अब भी हरकत हो रही है। उनकी बड़ी-आँखें, बिना पलक गिराए, खुली की खुली थीं, जैसे उसे अपने पास बुला रही हों, और कह रही हों—"यह गाड़ी अब नहीं चल सकती, शायद ही कभी निकले।" वह काफी रोयी। रात-रात भर जैसे माँ ओझल नहीं होती। पिताजी को इससे काफी धक्का पहुँचा। उन्होंने अपनी दाढ़ी बढ़ा ली। और चुपचाप घर के कोने में एक तीन टांग की कुर्सी पर बैठे रहते। बहुत कम बोलते, मुश्किल से दिन में दो-तीन बार। शराब उन्होंने छोड़ दी थी, पर शराब की बोतल घंटों उनके हाथों में नाचा करती। जैसे बोतल ने ही उनकी जिन्दगी खोखली कर दी थी, एकदम रेगिस्तान जैसी जिसमें कहीं हरी-भरी बस्ती का नामोनिशान न था। उनके शराब से तर होठों में एक अजीब-सी शुष्कता व्याप्त गई थी, और जगह-जगह सुखी, पतली पपड़ियां जम गई थीं। एक भयंकर काली छाया उनके आस-पास मँडरा रही थी, ठीक अन्धकार के घेरे सी। उन्होंने एक दिन उसे बुलाकर कहा—बेटी दीप्ति! न जाने तुम्हें क्या हो गया ? एकदम सुखती जा रही हो। ...मैंने ही तुम्हारे सुख-चैन छीन लिए हैं, ! मेरा क्या अधिकार है ? ...नहीं, नहीं, दीप्ति! तुम्हारे इसी शराबी बाप ने तुम्हारी माँ की हत्या कर दी। क्या माफ करना! मुझे भी...मुझे भी, दे दो।" और न जाने वे क्या उनकी अपराधिनी आत्मा, क्या-क्या करती, पर उसने, अपने हाथ उनके मुंह दे दिया था। वे रुक गये, और उसके जोरों से पकड़ कर अबोध शिशु से कर रोने लगे। आंखों के रास्ते उनके की ज्वालामुखी, शतस्रोतों में पानी बन बह रही थी। लगता था जैसे ऐसी अकथ व्यथा है, जिनमें उनका सारा अस्ति मोम-सा पिघल-पिघल कर टूट रहा मृत्यु से जी तोड़ जीवन बचानेवाले व्यक्ति से उनके शरीर पर अटूट परिश्रम की रेखा दीख पड़ती थीं। और कुछ चौंकते-उन्होंने फिर कहा, जैसे दीप्ति उनको व्य पढ़ रही हो- "मैं तुम्हारे लिए मास्टर देता हूँ। सुबह-शाम पढ़ायेगा। बड़ा अच्छा आदमी है, और योग्य तो बहुत ही अधि। शायद इससे तुम्हारी बिगड़ी पढ़ाई सु जाये।" दीप्ति के हृदय ने जैसे एकबा अपनी पूरी शक्ति से इस प्रस्ताव का विरोध करना चाहा, पर वह कुछ न कर सकी उसे लगा कि उसकी माँ वहीं बगल में खड़ी है, और प्रतिदिन का तरह आज भी इशारा कर रही है इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने को। उसने एक बार जोरों से "माँ" कहना चाहा, तब तक जैसे वह सँभल गई; उसने झटपट 'हाँ' कहा, और घर की ओर भाग गई।

दूसरे दिन मास्टर साहब पढ़ाने आने लगे। उसी गाँव के झगड़ू मिश्र के वे लड़के

और पास ही के हाईस्कूल में नौकरी थे। विद्यार्थियों और शिक्षकों के बीच का काफी दबदबा था। हर कोई उनकी नता पर मुग्ध था। दीप्ति को काफी खुशी थी उनके पढ़ाने पर। कितने अच्छे लगते वे जैसे परिवार के ही आदमी हों। दीप्ति ने पहले ही दिन सब कुछ, अपना, हृदय का, उनके चरणों पर अर्पित दिया था। पुरवाई हवा की तरह उसने अपनी ऊबभरी जिंदगी में ठंडक का अनुभव किया था। उनके रोबीले चेहरे पर एक हँसी हमेशा के लिए तैरती रहती, और उनकी आँखों में एक ऐसा तेज था, जिसे दीप्ति के लिए झुठलाना मुश्किल था। आकाश के घेरे की तरह उसका सर्वस्व, उसका अन्तर, सब कुछ बन्ध गया था। और धीरे-धीरे, जैसे अब भी पुराने गीत की मधु भींगी कड़ी की तरह, एकदम ताजा है, उन्होंने बड़े ही सहज ढंग से कहा था—"दीप्ति! कुछ अर्से से हम-तुम इसी जगह पर मिलते हैं। पढ़ने, पढ़ाने के लिए।..."सचमुच, मैं नहीं जानता कि क्या कह रहा हूँ, फिर भी मेरा दिल यही कहता है। अगर मैं जीवित रहा, तो शायद दुनिया के किसी भी व्यक्ति से पहले तुम्हें प्राप्त करूँगा। मैं जिंदा रहूँ या मर जाऊँ, लेकिन मैं तुम से प्रेम करता हूँ। शायद मेरी इस गलती के लिए तुम क्षमा कर दोगी।" और उनकी आँखों में एक अजीब किस्म की जीवन और प्रेम भरी उत्सुकता फैल गई थी, और ओंठ किसी अज्ञेय विचार से सिकुड़ गए थे, जिसे कोई मनोविश्लेषक ही ठीक-ठीक बता सकता था।

वह स्पष्टतः उन्हें देख रही थी, जो उ शरीरशास्त्री की तरह पढ़ने की कोशिश क रहे थे। उसने कोई उत्तर नहीं दिया था उसके समूचे शरीर में बिजली दौड़ ग थी, और उसका गुलाबरंगा चेहरा, सूर की रोशनी में और लाल हो गया था, जिस ललाई धीरे-धीरे मिट रही थी। उस बेतरतीब ढंग से अपनी साड़ी के पल्ले गाँठ बांधने शुरू कर दिए थे। बड़े आम फाँकों जैसी उसकी आँखों में एक अजी दिशाशून्यता व्याप गई थी, और जिनसे रहकर स्वप्न जैसी निश्चलता समाप्त रही थी। उन्होंने उसके हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा—"नहीं दीप्ति, मैंने तुम्हा भावनाओं पर चोट पहुँचाई है। मुझे मेरा कोई अधिकार नहीं।" वे उस ओर देख रहे थे, लगता था जैसे उस हृदय इस निर्णय का प्रतिवाद कर रहा है "हालांकि मैं तुम से प्रेम करता हूँ, यह क सत्य है। फिर भी ऐसा न कहूँगा, क्यों इससे तुम्हें धक्का लगता है। शायद जल्दीबाजी की; या मुझे ऐसा कुछ···क्यों

दीप्ति ने मुश्किल से—"मैं नहीं सकती," कहा था, और दूर बाँसों की मुट की ओर देखने लगी थी, जहाँ से गौरे के लड़ने-झगड़ने की आवाज आ रही थी मास्टर साहब चले गये थे, और उनका पिका के चित्र के सदृश्य, अत्यन्त सरलीकृत ही बच गया था। उस दिन वह स्कूल न जा सकी थी। और देर तक सोचती रह गई थी। पाँच-छह दिन पहले ही उसके गाँव में एक भगवत कथावाचक

ाये थे। पड़ोस में ही, जहाँ रामरतन ौधरी का बंगला था, और केले और अमरूद के पेड़ खड़े थे, वहीं एक मंडप बना ा। बाँस के आठ-स पतले खूँटों में ाम के पल्लवों और रंगीन कागज के लों को अर्द्धचन्द्राकार लटका दिया गया ा। मण्डप के बीचों-बीच व्यासजी के ने के लिए एक कुश की आसनी रख गई थी, और उसे चतुर्भुजाकार घेरकर टी-सी चौकी के ऊपर भागवत की मोटी तक गुलाब के ताजे फूलों से सजाकर री हुई थी। गाँव के स्त्री-पुरुषों की जमात ावत की कथा-गंगा में डूबकी लगाने, ां बैठती। ढोलक और हारमोनियम के ुर ध्वनि के बीच भगवान् कृष्ण की मधुर- ा शुरू होती। भगवान् कृष्ण के दूर चले ने पर निशिदिन बरसनेवाली गोपियों आँखों में सब दिन के लिए उनके विरह जैसे पावस ही बस गया है, और अब तो ले-कजरारे बादल भी गोपियों को जलाने बाज नहीं आते।" कहते-कहते जैसे ं व्यासजी की दोनों आंखों से सावन- बरस पड़ते। रुंधे कंठ और भरी ोज में, जिसमें करुणा का रस धीरे- े सोम-सा पिघलता होता, वे भागवत मर्मभेदी श्लोक का बार बार उच्चारण ते। भावुक श्रोताओं की आँखों से रल अश्रु-प्रवाह शुरु हो जाता, और ोरों से "भगवान कृष्ण की जय", 'राधा- ा की जय" की रट लगाते। थोड़े कम ुकों का दल तो कृष्ण-प्रेम के रस का चक-सा मन ही मन विश्लेषण करता, और एकाध बार व्यासजी की मुद्रा में परि- वर्तित होनेवाली भावनाओं की टोह लगाता।

...कि दीप्ति जैसे रुक गई। उसे लगा कि जैसे वह स्वयं ही गोपी है जिसके हृदय में धीरे-धीरे प्रेम का सागर हिलोरें ले रहा है। वह तो भाव दलित द्राक्षा-सी निचुड़ती जा रही है। न जाने कौन, गोपियों जैसी ही तो, व्यथा उसे घर करती जा रही है। वह भी तो कृष्ण... के लिए ही दुखी है, उसके मन के तारों पर भी तो वही सरगम बज रहा है। और उस सरगम के आरोह-अवरोहों में फँसा उसका हृदय, न जाने कितनी भाँवरियों के बीच, उसी प्रियतम...के लिए चक्कर काट रहा है। उसने सोचा, जैसे वह दूर पहाड़ियों के बीच रास्ता भूल गई है, घने कुहासे सा अंधकार चारों तरफ फैलता जा रहा है, और जिस छोटी सी पगडंडी पर खड़ी है, उस पर कटीली झाड़ियाँ फैली हुई है,। असहाय सी वह देख रही है अपनी उस डरावनी मौत को जो एकदम काली छाया की तरह नजदीक आ गई है। उसके मुंह से एक भयानक चीख निकल गई।... कि उसने देखा, कि जैसे कोई उसे पकड़े हुऐ बड़े रास्ते की ओर खींच रहा है, और वह कटे पतंग सी हवा के झोंके में उसी ओर बढ़ती जा रही है।...सहसा उसके कानों में, बाबू जी के टूटे स्वर किसी करुण ध्वनि की तरह पड़े; लेकिन वह आविष्ट-सी भावनाओं को ऊँची तरंगो में बह रही थी। वह गंगा की धारा-सी प्रेम के हिमालय

...ठ कर जीवन के उबड़-खाबड़
मैदान पर मृदु मंथर गति में बहती
...हाइब के हृदय समुद्र में पर्यवसित
...ा चाहती थी। लेकिन वह चौंकी।
...ी करुणाघोई आवाज अभी भो
...ठ आ रही थी। इधर दो दिनों
...ाह उनका स्वास्थ्य गिरता जा रहा
शराब के लाल पानी ने उन्हें भीतर
तोड़ दिया था। बडी-बडी आंखें
...र छोटी हो गई थी, और चेहरे
...निकनी मिट्टी-सी पीलेपन को कई
जम गई थीं। बड़ा सूना-सूना सा
...था, जब वे बोलते थे। माँ
...मृत्यु ने उन्हें समय से पहले दार्शनिक
...दिया था पर अपनी मृत्यु को सामने
...नो देख, उनके इर्द-गिर्द क्षण-क्षण
...वाली वस्तुओं की अस्थिरता साकार हो
...थी। उस दिन उसने काफी जिद्द की,
...र से सलाह लेने के लिए। उसे याद
...हँसकर उन्होंने जवबा दिया था—
...ी! उठनेवाले को सोने से जगाया
...है, पर जो सोकर कभी उठनेवाला
...है, उसे किस प्रकार...” और उनकी
...े निर्विकार भाव से मां की टँगी
...ीर पर टिक गईं। वह माँ की शादी
...तस्वीर थी, जिसमें पिताजी भी साथ
...उनके सिर लाल रंग का ‘पाग’ था,
...े बड़े सतृष्ण नेत्रों से माँ की ओर
...देख रहे थे। माँ ने जैसे इस भाव
...भाँप कर ही, अपने मुँह नीचे कर लिए
...उनके ओठों पर हँसी की एक मीठी
...उभर कर, चित्र में जम गई थी।

चारों ओर गुलाब और गेंदे के पौधे थे, जिनमें लाल पीले फूल लगे हुए थे। कितने अच्छे लगते थे दोनों, ठीक छुई-मुई की तरह। दीप्ति को लगा कि उसकी आँखों में आँसुओं की बाढ़ आ गयी है, और वह हित-अनहित कुछ भी नहीं देख पा रही है। उसके कंठ रुंध गये हैं और, चिंता की लहरों पर उठता-बैठता उसका मन ज्वार-भाटा में डूब उतरा रहा है। अचंचल सी, उसने धीमे, एकदम मद्धिम पर डूबते स्वर में कहा—“बाबूजी—बाबूजी!” और कमरे से बाहर हो गई। उसका समूचा शरीर काँप रहा था। जैसे उसने कोई बड़ा भयानक सपना देखा हो, जो जल्द ही साकार होने वाला हो। वह चुपचाप लेट गई। पसीने और आंसुओं की गाढ़ बूँदें, काँच के टुकड़े सी उसके चेहरे पर चमक रही थी।...वह ठीक-ठीक याद कर रही है, वह रात कितनी भयानक थी। आकाश पर काजल रंगे बादल घुमड़ रहे थे, और बिजली रह-रहकर चमक उठती थी। द्वितीया का तिर्यक् चाँद कब का, उस अन्धकार में लीन हो चुका था। पछिया हवा जोरों से उसके कमरे की खिड़कियों को धक्का मार कर हिला रही थी, और किवाड़ों के पल्लों के घिर-घिर का स्वर कमरे में भर रहा था। एक अज्ञात आशंका से वह काँप गई। लगता जैसे उसे उबकाई होनेवाली है। वह दौड़कर पिताजी के कमरे में चली आई। पिताजी ने उसे अपनी ओर खींच लिया था और काँपते प्यार किया था। वह आंसुओं की विरह...

शेष पृष्ठ २६ पर

रोपनी के गीत

शीलव्रत

रोप रही धान की रोपनियां धान
सावन में धान की रोपनियां धान
हर्षित है गात
मन माग रहा पात-पात
फूल-फूल कली-कली डाल-डाल
स्मृति में झूम-झूम
मुस्काती गा रही मधुर गान
रोप रही धान की रोपनियां धान

गरजा था बादल बीच रात में
सोई थी बेसुध सी कात में
चिहुँक पड़ी सुनकर निनाद कान
बोली डर लागत है मेरे किसान

कसलो बांहो में और जरा और कड़ा
अंक में समालो छिपालो मुझे मेरे प्राण !
छा जाओ—सिमटा लो—प्यार भरो,
बीच के व्यवधानों को दूर धरो,
सुर भरो तालों पर
दब जाए दादुर स्वर
झिल्लियों के झनन मिटे,
ढंक जाए बादल के भैरव गान

बरसा था मेघ चाह भर-भर कर रात भर
सरसा था पृथ्वी का उर अन्तर,
मिटी प्यास, भूख मिटी
सपनों की चाह मिटी
भाग्यवती ऐसी कि
पूरब के सूरज सा
छैला है मेरा किसान

[दे]खो ना, मर्दित कर कादामय किया खेत,
जैसे धोई थाली में बचता न कोई रेत,
[दे]ती हूँ लेती है मेरा खेत,
चुभुक - चुभुक, उबुक - डुबुक
पीले पड़े हैं किन्तु होंगे कल हरे धान

सावन से अगहन तक पाँच मास
अनवरत चलती रहेगी सांस
जोड़ दो और अधिक चार मास,
सूप पर फैलेगा उछलेगा लाल धान
गोदी में खेलेगा-किलकेगा सबल प्राण
रोप रही धान की रोपनियां धान !
सावन में धान की रोपनियां धान।

गीत

प्रो० महेश्वरी प्र० सिंह
डी० एस० कालेज; कटिहा[र]

रूप का दृग में भर आकाश
अधर में मुक्ताओं का हास
चान्दनी सुध-बुध से निज हीन
चहकती प्रिय चन्दा के पास
मगर तारे शबनम के अश्रु बहाकर कहते हैं चुपचाप
कि तेरे प्रणय-कुसुम में कीट अमा का अन्धकार भी है।
यहां ऐसी बहार भी है

स्वाति घन नभ में घिर घन घोर
बरसते झूम-झूम हर ओर
बुझाकर धरती अपनी प्यास
मगन अति—है आनन्दविभोर

मगर कहता डालों में डोल पपीहा होकर परम उदास
कि मेरे तृप्त कंठ में बसी वारि-कण की पुकार भी है।
यहाँ ऐसी बहार भी है।

चीर कर शिशिर गगन सोल्लास
धरा पर छाया है मधु मास
भ्रमर, पिक के चल रहे अबाध
नवल स्वर-लय के मधुर विलास
मगर पल्लव तरुओं पर डोल पवन मिस फेंक रहे निश्वास
कि मेरे इस प्रवाल रंग बीच पीत पतझड़ मजार भी है
यहाँ ऐसी बहार भी है।

नहीं है सुख में तेरी जीत
नहीं है हार दुखों में मीत
खेलना अश्रु-हास का खेल
जगत की है यह अपनी रीत
नहीं बन सुख में हर्षित प्राण; नहीं कर दुख में मुँह को म्लान
पल रहा अश्रु-हास से पूर एक अभिनव दुलार भी है।
यहाँ ऐसी बहार भी है।

शेषांश पृष्ठ २३ का

यथा भरी नदी में आकण्ठ भींग रही थी, ...से भँवर में पड़ गई हो। सामने माँ की ...गी तस्वीर को अपनी हड्डी लगी उँगलियों ... दिखाकर उन्होंने कहा था—"देखो बेटी! ...म्हारी माँ कितनी आकुल भरी दृष्टि से ...ला रही है। शायद उसे अकेलापन खल ...रा है। मुझे, मुझे ...जाना ही होगा !... मुझे, इस बूढ़े बाप को क्षमा कर देना। तुम्हारा ही बाप है न!" कहते-कहते उनका सिर लटक गया।

...दीप्ति ने देखा, उसकी काईभरी, मोटे लोहे की छड़वाली खिड़की से अंधि-याली प्रवेश कर रही है, उसके घर-आँगन में। डूब गया है, सब कुछ; मन हृदय।

गीत

बसन्त कुमार शाक्य 'नीरद'
कृष्ण नगर, बुलन्द शहर

पीर-तीर मन-भीर भरी थहरा गई।
सुधि बदली जब छन तन में गहरा गई॥

हूक भूख का रूख गगन छूने चला।
भावों का ठकठेला मन दूने पला।
सरस तरस रह गया अभावों का छैला।
मगन लगन में गगन रिक्तता भर चला॥
तारे गिनते आँखें भी ठहरा गईं॥

तव वियोग की फसल लोम मिस बो गई।
पीर नीर गहराय चेतना खो गई।
बहती बहती सांसों की सरि सो गई।
दिन सोने चांदी सी रातें खो गईं॥
दर्द, कसक, वेदना, टीस हहरा गई॥

उठी अचानक गहरा घहराने लगी।
सपनों की विहगी हो अनजाने ठगी।
प्रीति मोरनी मोरों के उर में जगी।
गहरी प्यास पपीहे के उर-स्वर पगी॥
पग पग रग रग, एक टेक छहरा गई॥

हँस हँस डसती कन कन गसती आ गई।
श्वास श्वास में प्राण-प्रणय बन छा गई।
आदि व्याधि भी वरदानों सी भा गई।
अन्त अमरता अभिशापों की पा गई॥
प्यार - भार जन प्रणय केतु फहरा गई॥

चतुर्वेदीजी की 'मानस मूर्च्छना'

प्रो० शिवनन्दन प्रसाद
स्नातकोत्तर, हिन्दी विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

गतांक का शेषांश

बात यह है कि जहाँ साधन स्वयं साध्य [हो] जाया करता है, वहीं विकृतियां आती हैं। [वा]सना अथवा विलास स्वयं में न तो कृति [है], न विकृति है, वह तो प्रकृति है। किन्तु [वा]सना यदि साधना-सिद्धि दोनों हो उठे, [तो] जीवन भोग ही भोग, रोग ही रोग हो [जा]यगा। कामिनीत्व वहां मातृत्व का उप-[क्र]म न होकर रमणीत्व का उपलक्षण मात्र [हो]ता, वहां निरर्थक वेश्या-वृत्ति का ही उपराग [है]। "मानस मूर्च्छना" का प्रेम पूजा है [क्ष]णिक वासना नहीं, पावन है. अतः मन [पा]वन भी।—

मेरे जीवन में पहले
तुम जैसे भी आ जातीं
मैं तो निहाल हो जाता
तुम पूजा तो पा जातीं

× ×

वह पावन प्रेम टिका था
उनका संसार — सहारे
संसार विमुख था मेरा
ये बंधे सरोज हमारे
उत्सर्ग-नाल पर सुख के
फूले अरविन्द प्रणय के
श्रद्धा-मरन्द झरते हों
पाकर सुवारि परिणय के।

पंक्तियों में प्रेम की अखण्ड पूतता स्पष्ट की गयी है और ये तीनों पद प्रेम की आदि, मध्य, और अवसान की स्थितियों के दिग्दर्शक भी हैं।

प्रेम का उदय हठात् होता है। सुछवि-भर से जिसकी तनुलता सिहर रही थी और शैशव यौवन दोनों ही जिस छवि से खेल रहे थे, वह रूपसि एक दिन 'चंपक सी गोरी बाहों' से 'कच-वारि' निचोड़ रही थी' कि 'लालसा-सारिका पलकभर में वन्दिनी बन गयी' किन्तु वह सहज प्राप्य न थी।

मेरे उनके अन्तर में
प्राचीर महान बना था
इसलिए दृगों का सुख भी
हो रहा मुझे सपना था

सहज प्राप्य न थी, इसीलिए तो उसमें विपुल आकर्षण था—परकीया का सुखकर संमोहन था।

फिर भी अतृप्ति के जल में
लालसा - तरी तिरती थी
संपृक्त मनो - मारुत से
किंचित किंचित हिलती थी

फिर एक क्षणिक मिलन होता है। मिलन के समारम्भ में समस्त प्रकृति कवि को मिलनातुर एवं उल्लसित दीख पड़ती है—

खगकुल कल कूज उठे थे
उत्सव था भवन - भुवन में
परिवर्तित - शूल समूचे
थे हुए प्रफुल्ल सुमन में
+ ÷
कामना - वेलियां पल में
थीं लगी मरन्द चुवाने
अरमान - भृंग फूलों के
थे दोने लगे बनाने
× ×
अधखुली - खुली थीं आँखें
आनन्द - सरोज खिले थे
प्रच्छाय कुंज में जिस दिन
हम दोनों मौन मिले थे

किन्तु इधर तो हाल-वेहाल था और ...र—

जिस छवि ने छेड़ी मुरली
वह रही होश में अपने
वेसुध मेरी आँखों में
जब लगे उतरने सपने
आहत था हृदय हमारा
उनको था खेल हँसी का
फूलों को वार मिली थी
कलियां थीं वनी इषीका

...शास्त्र में इसे अनुभयनिष्ठा-रति कहते हैं। ...नायिका कुछ निर्लिप्त -सी रहती है; अत: ...प्रेम की मात्रा नायक में ही अधिक है। यह ...विषम प्रेम है। किन्तु इस वैषम्य का कारण ...है। आलिङ्गनाकुल भुजाएं जिस मत्तता से ...थीं वैसी ही मय-ग्रस्ता हो। शिथिल पड़ गयीं।

सुख देख जिसे फूला था
थी केवल वेलि कँटीली
परिरंभ-पिपासु भुजाएँ
हो गयीं लिपटते ढीली

और इसका कारण यह था कि "शैश... यौवन-संगम की गोरी अडोल तरुणाई रखनेवाली तथा "यौवन-यमुना में अँग ड़ायी" लेनेवाली वह नायिका वास्तव... "मानवी मंजरी" ही थी, जिसके "द... फूल अडोल खिले" को देखकर बड़े-ब... अडिगों का भी मन डोल जाय, पर— नीति-निष्णात धर्म-निष्ठ और विवेकी ... लिए वह अडोल तरुणाई अभोग्या थी ... बात यह है कि वह और किसी की धर्म... पत्नी हो चुकी थी।

जो मणि थी और किसी की
बन गयी रंक की माया
मन रोने लगा हमारा
जब चंद्र चूमने आया
मूर्च्छना अछूत किसी की
रागिणी बनी जीवन की
आसक्ति अपूत हमारे
बन गयी त्रिवेणी मन की

फिर तो इसके बाद एक वितृष्णा, ए... ईर्ष्या, एक विद्वेष, एक धिक्कर-दुत्कार उठ... है। इनका प्रगीतात्मक अथवा सुकुमार ... देखिए।—

उस उदासीन के घट में
भर गय अमेय छटा क्यों?
चंपक-प्रदेश में इतनी
घिर गयी मरन्द-घटा क्यों?
+ × ×
कुंचित अलकों सा ही क्या
है हृदय तुम्हारा बाँका?

अन्तः संपूर्ण अमा, सा
वहिरंग समूचा राका ?

एक से क्षुब्ध हो हम समाजीकरण के कारण समस्त जाति से क्षुब्ध हो उठते हैं।—

नारी! तुम निशा-सुगन्धा
हो रूप-चन्द्रिका वाली
संध्या की दीप-शिखा हो
हां, वही, पतङ्गों वाली

किन्तु आगे चलकर समस्त नारी जाति को न कोस कर अथवा उस नायिका के नारीपन का भला बुरा न कहकर कवि उसके पत्नीत्व को ही अपनी मर्मान्तक पीड़ा का कारण बताता है। यह सूक्ष्मता कुछ आश्वस्त होने पर आती है—

शोभा - संपन्न खड़ी थी
अनुदार माधुरी वैसी
धन - राशि अकूत पड़ी हो
फणधर - परिशीलित जैसी

माधुरी के लिए मात्र "अनुदार" विशेषण किन्तु सीमन्त-रेखा अथवा सौभाग्य-सिन्दूर तो फणधर हो उठा है।

जगत का यही व्यवहार है। समर्थ त्याग नहीं करते, पर असमर्थ ही उत्सर्ग करते हैं—

जिनको संपदा प्रचुर है
उनकी ही कपट - कहानी
देखो अपर्ण कुटियों में
दीपक की बुझी निशानी

पुरुष की त्यागमयता, राग-सिक्तता, कलुषता कुछ प्रबल हो उठी है। यह नारी नाम की मानिनी है वही कुछ

कैसी तो अभिमानिनी - अवमानिनी है—

दिनमणि अनुराग - भरा ही
नलिनी से गया विसारा
शशि था निशि की छाया में
निशि ने ही कसा किनारा
तरु - भुजा पसारे नभ, तो
विधुरायमान क्यों अवनी ?
जब सदा सन्निहित वासर
क्यों पीत हो रही रजनी ?

इनमें 'दिनमणि' शशि, नभ, वासर पुरुष के प्रतीक हैं और नलिनी, निशि, अवनी, रजनी, नारी के। तीसरी पंक्ति तो जैसे प्रसाद को जवाब हो—क्योंकि ऊपर—

"अवकाश असीम सुखों से
आकाश तरंग बनाता
हँसता सा छाया-पथ में
नक्षत्र - समाज दिखाता"

किन्तु,

"नीचे विपुला धरणी थी
दुख - भार बहन सी करती
अपने खारे आँसू से
करुणा - सागर को भरती"

लेकिन मुझे कहने दीजिए 'तरु-भुजा' नभ की नहीं होती अवनी की ही हो सकती है और फिर रजनी जो 'पीत' हो रही है, उसका भी कारण 'सदा सन्निहित वासर' ही है क्योंकि पीतता शोषण अथवा क्षय का लक्षण है, रति-क्लान्तिवश हो अथवा गर्भ-धारणवश हो।

पुरुष की त्यागमयता के भी चित्र हैं। उसका पुरुषार्थ तो यही है कि वह यातनाओं

ताल ठोंक कर भिड़े, कष्टों को उभार-
उभार कर जूझ पड़े, ताकि उसकी कोमल
संगिनी जो नारी कहलाती है, पुरुष के
जीवन-यज्ञ की हवि का उपभोग कर हुलस
उठे—

संतप्त भाल से दिन के
प्रस्वेद - बिन्दु जो झलके
हैं झालर बने झलकते
निशि के नीले अंचल के
+ +
जलता भी दिवस निशा को
पीयूष - कुण्ड दे जाता
हिम - शीत उसी रजनी से
दिन पावक - मण्डल पाता

इनकी पंक्तियों में भाव बड़ा पोख्ता
उभर आया है। उभय पक्षों के लिए
तथा उनके आदान प्रदान के लिए जितने
अभिप्राय विशेषण विशेष्य प्रयुक्त हैं। एक
ओर जलता दिवस है तो दूसरी ओर हिम-
शीत रजनी। इधर पीयूष - कुण्ड का दान
है तो उधर से बदले में पावक-मंडल का
अग्नि-कुण्ड। भाव और भाषा की वह
संश्लिष्टता कल्पना का समाहार-शक्ति से
मुक्तकों को "नावक के तीर" बना देती
है। जीवन के मार्मिक वृत्तों का तथा प्रकृति
के श्लिष्ट क्रिया व्यापारों का वह चुनाव
जो मुक्तकों में प्रेषणीयता के गुण भर देता
है, यहां दर्शनीय है।

नारी की यह निःसंगता पुरुष को तब
खलती है, जब हम जान लेते हैं, कि प्रेम
क्षेत्र में वास्तविक निलिप्तता तो पुरुष की
है, नारी के लिए तो वह मातृत्व का
अनिवार्य विधान है। जभी तो रति अधि-
कांश नारी के ही द्वारा प्रारब्ध हुई होती
है। समासोक्तियों के द्वारा नारी की
मत्तता देखिए।—

पल्लव में फूटी लाली
फूलों में राग अनूठा
हर लता-वेलि के उर में
मादन अंकुर था फूटा
कलियों ने ली अँगड़ायी
पल्लव के अंचल डोले
हर जीवन के यौवन में
मधु-कण थे मधु ने घोले

इस प्रकार की अनेक पंक्तियां एक प
एक आई है। किन्तु यह जो "अंचल" है
वह पल्लव के पुरूषत्व के किस स्थान-विशेष
का परिधान है?

"शशि-मुख पर घूँघट डाले
'अंचल' में दीप छिपाए
जीवन की गोधूली में
कौतूहल से तुम आए
। आंसू। में अथवा—

'तम के मलीन 'अंचल में अथवा
"भुजलता पड़ी सरिताओं' की
शैलों के गले सनाथ हुए
जल-निधि का 'अंचल' व्यजन बना
धरणी का, दो दो साथ हुए"
(कामायनी) में अथवा—

'किसलय का अँचल डोल रहा'
'प्रसाद' की बीती विभावरी-लहर में अथवा—

'विश्व में यह भोला जीवन
स्वप्न-जागृति का मूक-मिलन
बांध 'अँचल' में विस्मृति घन

कर रहा किसका अन्वेषण ?

(आधुनिक कवि महादेवी) में पुल्लिंग विग्रहों के साथ जो, 'अँचल' है वह भी—पुरुष को नारी की पोशाक देकर रूप-चित्र को खंडित कर रहा है। 'आँसू' में 'मधु ऊषा के 'अँचल' में अथवा 'जब नील निशा 'अँचल' में' आदि स्थलों पर जो 'अँचल' हैं, वे न तो मूर्ति को वाधित करते हैं और न विम्व-ग्रहण में ही विरोध लाते हैं। प्रत्युत लाक्षणिक अर्थ गौरव के ग्राहक हैं 'अँचल में है दूध और आँखों में पानी' के गुप्त प्रयुक्त 'अँचल' अथवा "आँसू के भींगे 'अँचल' पर, मन का सब कुछ रखना होगा" के प्रसादीय अँचल के पोषकत्व, आश्रयत्व, करुणा और अमृतत्व की भी व्यंजना वे कर सके हैं। मैं मानता हूँ पुरुषों के चादर, पीताम्बर, के भी 'अँचल' हो सकते हैं, पर यह भी जानता हूँ कि 'अँचल' इस जाति से नहीं, उस जाति से रूढ़ हो गया है। एक बात और वह यह कि 'प्रसाद' में विग्रहों के पुल्लिंग-रूप का आग्रह सब से प्रबल है। 'आँसू' की नायिका 'शशिमुख पर घूँघट डाले, अँचल' में दीप छिपाये पुल्लिंग प्रियतम है। यह समलिंगी प्रेम अमरद परस्ती हो, सूफी प्रभाव हो, रहस्यात्मक और लौकिक प्रेम को अलौकिक बनाने का प्रयास हो, हमारे संस्कार और लोकाचार के विरुद्ध पड़ता है 'मूर्च्छना' के तृतीय खण्ड में भी 'नायिका' का पुल्लिंग विग्रह प्रतिष्ठित हो उठा है, दो खण्डों तक जो सब ओर से नारी रही, वह हठात् तृतीय खण्ड में पुरुष शायद इसलिए हो जाती है, कि अब वह बिल्कुल अप्राप्य है अतः वह एक भाव मात्र एक मोह-मात्र है, दूसरे शब्दों में स[मलिंगी] अथवा निर्लिङ्गी अथवा पुरुष रूप है कारण जो भी हो, जरा कैसा तो लगता है

तो प्रेम एक विरह-व्यथा का वहा[ना] बन गया और विरह घनीभूत जीवन काव्य हो उठा। ऐसी अवस्था में दार्शनि[क]ता आ ही जाती है, आत्म प्रसार हो जाता है और कवि अपने विरह में प्रकृ[ति] को भी सिक्त देखने की रूढ़ कल्पना करत[ा] है। किन्तु उस रूढ़ व्यापार में भी [कु]छ प्राणोन्मेषक, मनोहारी तत्व हैं—

मेरी करुणा से गीली
ऊषा की कुंचित पलकें
अरमानों से रजनी की
अवतंसित काली अलकें
जीवन में जलन तभी तो
आँखें भर आया करतीं
नदियों में व्यथा तभी तो
अंबुधि भर जाया करतीं
जलनिधि की कढ़ती आहें
जो कहीं न नभ छापातीं
तो क्या सुतप्त वसुधा की
छाती शीतल हो पाती ?

तब की 'अन्तः सम्पूर्ण अमा सा' बहि[र] रंग समूचा राका ?' रखनेवाली 'निशा-सुगन्धा' नारी अपने सात्विक करुणाम[य] पूत रूप में झलक उठी हैं—

विश्रामहीन जीवन में
विश्रान्ति - बल्लरी नारी
संतोष - सुधा — संभावित

पावन प्रसून की क्यारी
यह अभिलाषा 'कामायनी' की महा-
चित विराट कल्पना—
नारी केवल तुम श्रद्धा हो
विश्वास रजत नग पगतल में
पीयूष - स्रोत सी बहा करो
जीवन के सुन्दर समतल में ।
कक्ष में हल्की और सुकुमार होकर ही
मुक्तक 'मूर्च्छना' के लिए रम्य हो
है।
फिर तो कवि अपने विह्वल भावुक
को सीखें भी देता है—
तापसी कालिमा में ही

प्रत्यूष सृष्टि का पलता
तापसी शिलाओं का ही
संदेह मोम सा गलता
और तब वह चाहता है—
शीतल संसार तुम्हारा
आनन्द बीचि पर सोवे
जलते मेरे जीवन की
चुप-चाप वेदना रोवे
\+ +
झुकते महर्घ मणियों से
सुकुमार अंग हों तेरे
हँसते अभाव के अहि ले
दुख - शंभु सदा हों मेरे ।

डा० जानसन : एक साहित्यिक तानाशाह

नन्दकिशोर प्रसाद
शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर

गतांक से आगे

सुख के दिन

सन् १७६२ में, जानसन के जीवन में, एक अभूत पूर्व घटना घट गई, जिसके फलस्वरूप उनके जीवन का सम्पूर्ण चित्र ही बदल गया। पहले वे बड़ी-बड़ी कठिनाई से अपना जीवन-यापन कर रहे थे, लेकिन अब उन्हें सरकार की ओर से ३०० पांउड का पेंशन मिलने लगा। पहले तो उन्होंने पेंशन लेना स्वीकार नहीं किया, क्योंकि पेंशन का अर्थ उन्होंने जो अपने विश्व-प्रसिद्ध कोष में किया था वही अर्थ उनके मार्ग में व्यवधान बन उपस्थित हुआ। जानसन राजनैतिक विचार से टोरी थे और तत्कालीन (जब कि कोष का निर्माण हो रहा था) शासन सूत्र ह्विग्स (Whigs) द्वारा संचालित होता था, जिसके वे तीव्र विरोधी थे। और विरोध उनकी कृतियों में भी उभर आया है। अपने विश्व-विश्रुत अँग्रेजी भाषा के कोष में पेंशन पानेवालों का अर्थ विश्लेषण यों किया है।" पेंशन पानेवाला व्यक्ति सरकार की ओर से वेतन द्वारा भाड़े पर लाया हुआ, वैसा गुलाम है जो मालिक की आज्ञा माने" इस परिभाषानुकूल, उन्हें अपने को गुलामों की श्रेणी में रखना मान्य नहीं था। लेकिन, जिस वर्ष उन्हें सरकार की ओ[र] से पेंशन देने की घोषणा हुई उस स[मय] जार्ज तीसरा सिंहासनारूढ़ हुए थे [और] राज्य के प्रधान कोषाध्यक्ष लार्ड [ब्यूट] (Lord Bute) थे जो एक जाने-माने टो[री] थे। अतः प्रस्तुत परिस्थिति को जान[सन] ने अपने अनुकूल पा थोड़ी-सी आनाकानी के बाद हो पेंशन लेना स्वीकार कर लि[या]।

अब तो जानसन के रहन-सहन [का] ढंग बिल्कुल ही बदल गया। न कोई दु[ख] न कोई चिन्ता। अपनी नींद सोना, अप[नी] नींद जगना। जीवन में अव्यवस्था उत[्पन्न] हो गई। क्रम अथवा नियम का अभाव [हो] गया। बातूनी तो थे ही अब तो और [भी] छूट मिल गई। प्रकाशकों अथवा सम्पादकों के दरवाजे खटखटाने से चिन्ता मुक्त, रोटी दाल की समस्या से एकदम परे, बात करने बैठते तो भोर हो जाती, सोने पर तु[ले] जाते तो दिन के दो बज जाते। पी[छे] चलकर जानसन को समय के इस दुरुपयोग एवं जीवन की इस अव्यवस्था के लिए आठ आठ आँसू बहाने पड़े थे।

इस पेंशन का उपयोग उन्होंने जीवन के अन्तिम भाग में कोई २२ वर्षों तक किया और विगत आर्थिक यातनाओं एवं यंत्रणाओं से बच गये, कर्ज सभी सध गये। स्वयं ही

...शान्ति से नहीं रहे वरन् वे घर-बार, ...ड़, सगे सम्बन्धी और अपने-पराये जो ...की शरण में आ गये, सबों को मृत्यु ...ने अपने साथ रखा, हालांकि उनमें ...धिकांश तो जिस थाली में खाया उसमें ...छेद करनेवाले साबित हुए—आस्तीन ...साँप फिर भी उनकी ममता एवं सदा-...शयता में थोड़ी भी नहीं कमी। वे इतने ...दार थे क्लब से लौटते समय जो भी ...गरीब उन्हें सड़क पर पड़ा हुआ मिला, उसे ...पीठ पर लाद कर अपने घर ले आते और ...कई बार तो फुट-पाथ पर सोए हुए गरीब-...बच्चों के हाथ में उन्होंने पैसे डाल दिये ...ताकि उठने पर सुबह के जलपान की कुछ ...व्यवस्था हो सके।

जीवन के पिछले दिनों, लंडन में क्रम-...क्रम उनका बड़ा ही विस्मयकारी स्थान ...: बड़ा ही संघर्षपूर्ण ; व्यस्त। एक प्रकार ...वे "साहित्यिक-तानाशाह" थे। तत्का-...लीन जानसन के सम्बन्ध में उनके एक ...मित्र ने कहा है : वह एक सार्वजनिक भविष्य ...वक्ता की तरह प्रतीत होते थे। और प्रत्येक ...व्यक्ति अनुभव करता था कि उन तक ...जाना और विभिन्न समस्यायों पर विचार ...करना सबों का अधिकार था।

सन् १७६३ में बासवेल उनका ...मित्र, समाजन, भक्त और अनुकरणकर्त्ता ...बन गये। इन्होंने इस तरह नाहर के ...'अनेक गर्जन' का सूक्ष्म अध्ययन अङ्कन ...किया। यह बासवेल की महान देन है कि ...हमें उनके हर पहलू : अच्छे-बुरे, का स्पष्ट ...विवेचन आज भी सहज ही उपलब्ध है। उनकी खूबियां-खामियां बड़ी ही ईमानदारी के साथ रख दी गई हैं। बासवेल ने, चाय पीने की उनकी बुरी लत और देर से उठने की हरकत के साथ-साथ पहनने-ओढ़ने की विकृति एवं विचित्रता तथा उनकी शारीरिक-शक्ति और साहस का भी बड़ा ही जीता-जागता चित्र उपस्थित किया है। बासवेल ने स्पष्टतः उल्लेख किया है कि स्काटलैंड वालों के प्रति उनका आक्रोश भाव एवं लंडन वालों के प्रति हमदर्दी थी; चित्र एवं संगीत के लिए जानसन के संवेदना नहीं थी—बासवेल ने बतलाया कि किस प्रकार जानसन टोरी के प्रति संवेदनशील और ह्विग्स के प्रति घृणापूर्ण थे। पुरानी राष्ट्रीयता और परम्परा के लिए उन्हें दर्द था और धर्म एवं चर्च के लिए आदर भाव रखते हुए भी मृत्यु-भय से हमेशा आशंकित रहते थे। "सस्ती भावुकता" के प्रति विद्वेष और सत्य के प्रति कठोर निष्ठा थी।

बातचीत करने में उन्हें काफी दिलचस्पी थी और प्रतिद्वन्दियों एवं दुश्मनों पर वे अधिकतर आकस्मिक 'शब्दाक्रमण' करते ... लताड़ मारते थे, द्रष्टव्य हैं ; महत्त्वपूर्ण हैं।

पेंशन मिलने के बाद उन्होंने सन् १७६... में सुप्रसिद्ध 'लिटरेरी क्लब' की स्थापना ... जोशुआ की सहायता से की, जिसके सदस्य जाँनसन, रेनाल्डस, बर्क, गोल्डस्मिथ, लेंग्टन, सर जर्ज हाँकिन्स, बाँसवेल, गैरिक, फाक्स, शेरिडन, आदमस्मिथ आदि थे। आपस में यहां चलनेवाले हास्य-व्यंग पूर्ण जीवन्त कथोपकथनों एवं परिचर्याओं का विवरण

ासवेल ने बड़ी सूक्ष्मता एवं तनमयता से ा'कित कर दिया है। सन् ६५ में उन्होंने ेल दम्पति से परिचय प्राप्त किया, जिसके नेह सौहार्दपूर्ण संपर्क से उनका जीवन यप्ति सुखद रहा : पूरे १६ वर्षों तक ? नलोगों के साथ उन्होंने बाथ, बाइटन, र्थ, वेल्स की यात्रा की।

सन् १७७३ में बासवेल उन्हें स्काटलैंड ौर हैब्रीजेन की यात्रा पर आग्रह कर गये, यह यात्रा उनके जीवन की बड़ी हत्वपूर्ण घड़ी सिद्ध हुई। उनके मन-प्राण यंकर प्राणघातक उदासी से भरे रहते , लेकिन जीवन के अन्तिम दिन ही प्राण-द एवं सुखद रहे। जमकर बैठ जाते थे, ातचीत की मुद्रा में : कहने सुनने की मुद्रा में ौर श्रद्धालु-श्रवण कर्त्ता के प्रसंशकों की ाली भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। ठकर लिखना उनके लिए बड़ा ही ठिन कार्य था, इससे वे बहुत भागते थे, ेकिन बातचीत करने में निसृत हुए।

उन्होंने एक क्लब की स्थापना की जो ाज तक जाँनसन का क्लब (Johnson's Club) के नाम से प्रसिद्ध है। इस क्लब , उस युग के प्रसिद्ध पुरुष जिनका स्नेह-ाहचर्य जाँनसन से स्थापित हो चुका था, ाते और मनोरंजन करते।

इस अर्थ में जाँनसन की मित्र-मंडली ड़ी ही विशाल थी, जिसमें सुप्रसिद्ध राजनै-तिक नेता एवं वक्ता बर्क, स्वनामधन्य चत्रकार सर जोशुआ, रेनाल्डस, विख्यात तिहास लेखक गिब्बन, लब्धप्रतिष्ठित भाषा-द् जान्स, प्रतिनिधि कवि गोल्डस्मिथ भिनेता गैरिक आदि जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति थे। जानसन अधिकांशतः इन सबों से घिरे रहते थे। स्पष्ट है कि विभिन्न मनो-दिशा वाले इन व्यक्तियों पर समान रूप से प्रभाव डालना जानसन सदृश विशाल एवं बहुमुख व्यक्तित्व सम्पन्न व्यक्ति के लिए ही सम्भव था। अब वे मात्र, अठारवीं सदी के साहित्यिक तानाशाह (Literary Dictator) ही नहीं, वरन् व्यवहार जगत में भी एक कुशल तानाशाह, पेंशन पाने के बाद हो गये। पेंशन पाने के बाद ही उपन्यासकार टोवियस स्मोलेट (Tobias smollett 1721-71) ने उन्हें 'दी ग्रेट चाम' (The great cham) महापरमप्रि की संज्ञा से अभिहित किया।

उनकी लोक-प्रसिद्धि इस सीमा तक बढ़ गई कि वे अपने जीवन काल में अनेक विध सम्मानित एवं समादृत हुए। आक्स-फोर्ड विश्वविद्यालय ने उन्हें डाक्टरेट की उपाधि से विभूषित किया। रायल एकेडमी ने उन्हें प्रोफेसर नियुक्त कर गौरवान्वित किया। सम्राट ने उन्हें भेंट दे उनके जीवन को कृतार्थ कर दिया और अपनी हार्दिक जिज्ञासा प्रकट करते हुए उन्होंने जानसन से कहा कि उनके समान प्रतिभा-शाली लेखक को लेखन-कार्य स्थगित नहीं कर निरंतर जारी रखना चाहिए।

इसी सिलसिले में हमें यह भी ख्याल रखना चाहिए कि पेंशन पाना उनके लिए सबसे बड़े नैतिक पतन का सूचक भी था विलियम कॉबेट (Willium Cobbett) ने अपने ग्रन्थ 'एडभाइस टू यंग मेन' (Advice to young man) में उन पर बड़ा ही क्षोभ प्रकट किया कि जिन्होंने

...पानेवाले को सरकार का गुलाम ...स्लेव आफ स्टेट (A slave of ...) कहा, वे स्वयं आप गुलाम बन ...जब इन्होंने पेंशन पाना स्वीकार किया ... उस क्षण उनका हृदय आत्मग्लानि ...गया होगा। और आगे चलकर कावेट ...लिखते हैं—"और क्यों वे ऐसा ...को बाध्य हुए? उनकी जरूरतें, उनकी ...जरूरतें, खाने-पीने की मौज में लीन ...की आदतें, कम से-कम में काम चलाने ...नियम की उपेक्षा ही इसके लिए मागी हैं।"

पत्र लेखक के रूप में

जो भी पत्र जानसन के प्राप्त हैं, उनके ...जन की तरह ही : जीवन के विवरणों ... तरह ही, महत्वपूर्ण हैं। जीवन के ...न्तिम बीस वर्ष तो बड़े आनंददायक थे : ...नाएँ कम थीं अतः अवकाश के क्षणों ...पत्र लिखा करते थे, पर प्रारम्भिक काल ...असुविधाएँ अधिक थीं, नाम नहीं था, ...नहीं थे, यश नहीं था और न बासवेल ...कोई दोस्त था जो उनके कार्यों, गतिविधि ...खतों-पत्रों को संकलित एवं संग्रहीत ...रखता। उनके पत्रों के सम्पादक डा० ...बर्कबेक हिल को कोई एक हजार पत्रों ...का पता था। यह व्यक्ति इतना महान ...होगा, ऐसा पता न था, कदाचित इसीलिए ...प्रारम्भिक पत्र सुरक्षित एवं संग्रहीत नहीं ...किए जा सके। साहित्यिक तानाशाह के रूप ...में तो उन्होंने सैकड़ों पत्र लिखे और एक-...एक प्रभावपूर्ण व्यक्ति को। इनके पत्रों ...से डाक्टर जॉनसन की मनोवृत्तियों, मनो-...दशाओं, आदतों एवं हरकतों का पता

चलता है। ये पत्र उनके जीवन एवं चरित्र के विभिन्न क्षेत्रों को उभार कर रख देते हैं। इनके पत्रों का स्वर बहुभंगी हैं और सब के सब एक-से-एक बढ़कर। ये पत्र विभिन्न अवसरों पर लिखे गए और मार्मिक हैं। वे पत्र जिनका सम्बन्ध उनको अपनी कृतियों से है, थोड़े और छोटे ही हैं पर बड़े ही मर्मभेदी एवं चुभनेवाले : देखन में छोटन लगे घाव करे गम्भीर! डा० जानसन अपने आप में स्वयं उपमान थे : अपनी भाषा के एकमात्र अधिष्ठाता, फिर भाषा का कहना क्या?

पत्रकार, सम्पादक, दोस्त, प्रकाशक, राजनीति-नेता आदि के प्रति लिखे हुए पत्र तो कमोवेश रूप में सुरक्षित बच रहे, लेकिन परिवार के नाम लिखे गये अनेकश पत्रों में दो-चार ही कहने को बच रहे पत्नी के नाम लिखे गये एक पत्र, मृत्यु शैया पर पड़ी माँ के नाम एक पत्र औ... सौतेली-बेटी लूसी के नाम लिखे अने... पत्र! लूसी के नाम लिखे गये पत्र स्नेह... पूर्ण होते हुए भी अप्रकाश्य हैं, कारण उन... यत्र-तत्र बड़ी ही तीक्ष्णता है, जो उन... अन्य पत्रों में दृष्टव्य नहीं।

बासवेल के नाम लिखे गए पत्र अप... आप में बहुत महत्व रखते हैं। इन पत्र... में आत्मीयता एवं वैयक्तिकता अधिक है... ये पत्र अपने मूल रूप में सुरक्षित हैं... अन्य पत्रों में यत्र-तत्र परिवर्तन परिलक्षि... हैं। जानसन के जीवन इतिहास के महत्... पूर्ण अंश हैं वे पत्र जो एच० थ्रेल के न... लिखे गए। कोई बीस वर्षों तक जान...

येनकेन प्रकारेन थ्रेल परिवार के प्रधान सदस्य के रूप में रहे। यों तो अधिकतर वर्ष लंडन में ही जीवन का अधिकांश भाग रहा, पर प्रति शनिवार को वे थ्रेल परिवार में जाते और सोमवार को लौट आते। यह क्रम वर्षों तक चला।

डा० जानसन हेनरी थ्रेल के प्रति बड़े ही कृतज्ञ एवं संवेदनशील: उनके प्रति बड़ी ही श्रद्धाभावना थी। उनकी मृत्यु के बाद यह उद्गार प्रकाशित किया था: मैंने अपने असीम दयालु मित्र को खो दिया।

लेकिन, स्मरण रहे, एक पत्र-लेखक के रूप में उनकी ख्याति नहीं है: जहाँ तक साहित्यिकता का प्रश्न है। पत्र-लेखक के रूप में वालपोल और कॉपर की जो ख्याति है, उसका कारण यह है कि इन पत्रों के माध्यम से हम उनके व्यक्तित्व के उन स्तरों को उभरते पाते हैं, उनकी झांकी ले पाते हैं, जिनका हमें पता या तो कम है या कदम नहीं है, पर जानसन के साथ ऐसी बात नहीं है। अज्ञात बातों या तथ्यों का उनमें उल्लेख ही कहां है? कहना चाहिए: उनमें हम जानसन के बारे में उतना ही जान पाते हैं, जितना कि हम जानते हैं: जानसन हमेशा ही जानसन हैं।

जो कुछ भी हो ये पत्र बड़े ही सप्राण : ये स्वतः स्फुटित हैं: आत्मीयता से, हास्य, व्यंग एवं कल्पना से आप्लावित।

आज उनका साहित्यिक महत्व की अपेक्षा ऐतिहासिक महत्व ही अधिक है। लेखक रूप में जितनी ख्याति और प्रतिष्ठा स युग में थी, आज नहीं है, कारण वे अपने युग के 'साहित्यिक चेतना' थे, तानाशाह थे, युग-युग के साहित्यकार नहीं युग-युगीन चिरंतन चेतना का उनके साहित्य में अभाव है। युग की प्रतिक्रियाओं प्रतिष्ठा एवं परिस्थितियों को शब्दबद्ध करने में वे अप्रतिम थे। अपने युग की विचारधाराओं को जीवित रूप में लिपि-बद्ध कर दिया। उन्होंने अपने को कभी भी पूर्णतः अपनी रचनाओं में व्यक्त नहीं किया। उनकी अनेक महत्वपूर्ण रचनाओं एवं अनेक स्थलों को नहीं जान पाते, मूल्यांकन कर पाते अगर बासवेल ने उनके जीवनवृत्त और बातचीत को अंकित न किया होता। बासवेल इस अर्थ में पर्याप्त प्रशंसा के पात्र है, जिस लिखें प्रशंसा का पात्र बासवेल था, वैसा मूल्यांकन मेकाले आदि आलोचकों ने नहीं, बासवेल के कारण जानसन युग-युग तक रहे और उस जीवनवृत्त से ही भावी संतान को पता चलेगा कि जानसन का जीवन और कृतित्व कितना महान, कितना सदय था और कितनी प्रतिभा थी उनमें।

सूक्ति निर्माता : जानसन

जानसन को व्यक्ति और समाज की विभिन्न बहुभंगी परिस्थितियों की गहरी पकड़ थी। उनके साहित्य में अनेक सूक्तियां लोकोक्तियों की तरह लोग दुहराते हैं। जिनमें निम्नांकित बड़ी ही मार्मिक एवं महत्वपूर्ण हैं—

बहुत-सी वस्तुएँ जो आकार में कठिन प्रतीत होती हैं, करने में उतनी ही सरल निकलती हैं।

× ×

...जो कोई महान काम एकदम करने की ...करता है वस्तुत : वह कभी भी ...भी नहीं कर सकेगा।

× ×

आज तक कोई भी व्यक्ति अनुकरण-...से महान नहीं बना है।

× ×

एक स्वस्थ और पूर्ण मस्तिष्क महान ...साधारण सभी वस्तुओं को सद्भाव से ...कर सकता है।

+ +

...में मित्रता से बढ़कर अधिक और कोई ...लता नहीं।

+ +

मैं कोष-रचना में इतना तल्लीन नहीं हूँ ...जो यह विस्मृत कर बैठूँ कि शब्द पृथ्वी ...पुत्रियां हैं और कार्य स्वर्ग के पुत्र हैं।

+ +

स्वदेश-प्रेम दुरात्माओं की अन्तिम ...है।

+ +

सत्य और सुन्दर व्यवहार हर जगह ...र पाने के लिये प्रवेश-पत्र हैं।

+ ×

...तुम जिंदगी से गुजरते हुए नये लोगों ...परिचय न बढ़ाते जाओगे तो बहुत जल्दी ...पाओगे कि तुम अकेले हो। लोगों ...को चाहिए कि अपनी मित्रता की बराबर ...मत करते रहें।

+ +

खबरदार, कभी कर्ज मत लेना। इसे ...बड़ी भारी मुसिबत जानना। छोटे-...छोटे कर्ज छोटी-छोटी गोलियों के समान ...हैं जो चारों तरफ से तुम पर आ रहीं हैं। तुम इनसे कदापि नहीं बच सकते। कहीं न कहीं तुम्हारे अवश्य घाव हो जायंगे। बड़े-बड़े कर्ज गोलों के समान हैं जो शोर तो बहुत करते हैं, परन्तु उतनी हानि नहीं पहुँचाते। पहले तुम्हें चाहिए कि छोटे-छोटे कर्जों को चुका दो, फिर बड़े-बड़े कर्जों को शान्ति से चुका दो।

+ +

स्वयं भगवान भी मनुष्य के कार्यों का विचार उसकी मृत्यु के पहले करते।

× ×

जहाँ कोई आशा नहीं है, वहां कोई प्रयत्न नहीं हो सकता।

+ ×

व्यक्ति बुरा नहीं होता, उसके विचार बुरे होते हैं। व्यक्ति स्वयं बुरा काम नहीं करता, उसके आस-पास के वातावरण उसे बुरा करने के लिए उसकाते हैं।

+ +

सबसे अच्छी शिक्षा वे उपदेशक देते हैं, जो मर चुके हों, क्योंकि तब उन्हें बड़े धैर्य और आदर के साथ सुना जाता है।

+ +

बहुत पुराने अनुभवी का यही निष्क... है कि सोना पास रहे तो भय बना रहता है और खो जाये तो शोक।

+ +

याद रखने की सब से अच्छी कल... एकाग्रता है।

+ ÷

वही लोग ज्यादा बातें करते हैं जिनके पास कहने को कुछ नहीं होता।

+ +

डा० जानसन की विचित्रताएँ

जानसन देखने में बड़े ही कुरूप थे। कंठमाला के भयंकर रोग हो जाने के कारण उनकी एक आँख जाती रही। देखने में स्थूल काय पर बचपन से ही दुर्बल एवं रोगी। 'कैलीवन' उनका व्यंगात्मक नाम था, लोग इसी नाम से उन्हें चिढ़ाया करते थे। उनकी आकृति एवं आदतों के सम्बन्ध में लोगों के मन में बड़ी ही विचित्र धारणायें घर कर गईं थीं। उनकी भावी पत्नी ने तो उन्हें घृणा उत्पन्न करनेवाला एक भयानक जानवर" समझ रखा था।

बातचीत करते समय उनका चेहरा एकदम भयानक और विकृत हो उठता था। अत्यधिक जोर से बोलने के कारण विचित्र कोलाहलपूर्ण वातावरण उपस्थित हो जाता था। सम्पूर्ण शरीर विचित्र तरह से हिलने लगता था, यह थरथरी इस सीमा तक पहुँच जाती कि इनके पांव तक स्थिर नहीं रह पाते लगता जैसे अब गिरे कि तब गिरे।

उनकी एक बहुत विचित्र आदत यह थी कि जाड़े के दिनों में भी घर की सभी खिड़कियों को खोल देते और उनकी राह बराबर झांकना अधिक पसन्द करते थे, उन्हें ऐसा करने में आनंद मिलता था। इसके चलते परेशानी बढ़ जाती थी, मेहमानों से ये बेचारे नाकोंदम हो जाते, इनकी हड्डियों में जाड़ा धँस जाता, पर ये अपनी आनंदावस्था से तिल-मात्र भी नहीं डिगते।

बचपन से ही जानसन को खेलकूद का काफी शौक था। यह मोह बुढ़ापे तक न छूटा। फलस्वरूप ऐसे-ऐसे काम कर बैठते जो उनके समान प्रसिद्ध पुरुष के लिये हास्यास्पद के सिवा और कहा ही क्या जा सकता था? काफी उम्र ढल जाने पर भी बच्चों की तरह वे पांच-पांच मील तक कुत्ते के पीछे भागते। छयासठ वर्ष की अवस्था में अपने एक मित्र के साथ वर्षा में बहुत दूर तक दौड़ गये। फुर्ती तो अवश्य देखते बनी, पर साथ ही साथ मुँह के बल गिर जाने की संभावना बनी हुई थी।

बचपन से ही जानसन की आदत थी कि वे रेल के खंभों को एक-एक करके छूकर पार करते, अगर कोई छूट जाता तो पुनः लौटकर उसे छूते और तब कहीं जाकर आगे बढ़ते। लम्बे अरसे के बाद, काफी पकी उम्र सतरह वर्ष में जब वे एक बार रेलवे लाइन की बगल से जा रहे थे, बचपन की पुरानी स्मृति हरी हो उठी। वे तब तक आगे नहीं बढ़े जब तक कि उन्होंने उन खंभों को जिन्हें उन्होंने बचपन में छूकर पार किया था, पार नहीं कर लिया, एक-एक करके छू नहीं लिया।

इसी प्रकार कहा जाता है कि वे पहाड़ी टीले पर से नीचे लुढ़का करते थे। बुढ़ापे में भी याद होने पर वे आदत को दुहराये बिना नहीं रह सके। एक दिन वे अपने मित्रों के साथ पहाड़ी क्षेत्र की ओर घूमने निकले। सामने वही टीला आ गया, जिस टीले पर से लुढ़का करते थे। मित्रों के लाख मना करने पर भी नहीं माने, और कपड़े आदि शरीर से उतार दिये और टीले पर से लुढ़क पड़े। चोट आई जरूर पर इसकी जानसन को किंचित चिंता नहीं

...मित्र मण्डली जानसन के बचपन पर ...से लहालोट हो गई, हँसी से आकाश ...उठा।

यह बात सबों को ज्ञात है कि बाँसवेल ...जानसन का जीवनी-लेखक, उसका बहुत बड़ा ...मी था. लेकिन यह जान कर महान ...य होगा कि बासवेल की पत्नी उन्हें ...ना तक पसद नहीं करती थी। इसके ...कारण थे। वह चाहती थी कि जानसन ...नी जल्द हो सके उसके यहां से चला ...। जिस दिन जानसन श्री बासवेल ...विदा हो गये उस दिन वे अत्यन्त प्रसन्न-...त दिखलाई पड़ रही थीं। इसके क्या ...रण थे, नीचे के विश्लेषण से स्पष्ट हो ...गा।

बासवेल के नाम २७ नवम्बर १७७३ ...एक पत्र में जानसन ने लिखा—"मैं ...नवार को आक्सफोर्ड चला जाऊँगा।" ...मती बासवेल ने मेरा चला जाना ही ...छा समझा, यह मैं जानता हूँ। उनकी ...नाएँ पूरी हुईं।"

और सचमुच उन्होंने वैसा ही किया ...। बासवेल ने जानसन की जीवनी में ...नोट देते हुए लिखा है कि जानसन ...इसमें बड़ी ही सूक्ष्म दूरदर्शिता या ...बोध-क्षमता का परिचय दिया। जब जानसन उनके यहाँ रहते थे, तब उनकी पत्नी खूब आदर-सत्कार किया करती थी, यह आश्चर्य की बात है कि कैसे उन्होंने पता लगा लिया कि वह उनका चला जाना ही अच्छा समझती थी। सच बात तो य... थी कि इसके कई कारण थे। उनकी अनि-यमितता और कुरुचिपूर्ण आदतों से बास-वेल की पत्नी तंग रहा करती थी। जानस... मोमबत्ती को जला कर उसके ड्राइंग रू... के फर्श और कालीन को गंदा कर दे... थे। मोमबत्ती को जलाकर उसे उलट दे... और तब उसकी बढ़ती हुई लौ को देखक... खूब खुश होते थे। किसी भी सौन्दर्या... सक्त नारी को ऐसा घृणित व्यापार क्षु... कर सकता था। जानसन की इस हरक... से वह झल्लाई रहती थी। दूसरी बात य... थी कि जिस रूप में जानसन समाज... आदर के पात्र थे, उस रूप में श्रीमती बासवे... उन्हें मान नहीं देती थी, और सब बड़ी से बा... तो यह थी कि कोई भी पत्नी यह नहीं चाहेग... कि उसके पति पर किसी अन्य पुरुष क... अत्यधिक प्रभाव रहे। यही बात उसे सब... अधिक अखरती थी एकबार उसने अपने पति... को जरा खीझकर कहा—"मैंने बहुत से भालु... को एक व्यक्ति द्वारा पथनिर्देशित किया गया... देखा लेकिन मैंने कभी एक भालू को एक... मनुष्य का पथ प्रदर्शक नहीं।" वस्तुत; यह... व्यंगोक्ति जानसन की ओर संकेतिक थी... किसी भी स्वाभिमानी व्यक्ति को इस प्रकार... अपमान भालू कहा जाना सह्य नहीं। जानस... का स्पष्ट संकेत पत्र में इसी अपमान क... ओर था।

क्रमशः!

इन्टरव्यू

(आशमा)

उत्तर भारत के एक वयोवृद्ध तपोधन पत्र सम्पादक के पास एक बार एक मद्रासी युवक नौकरी मांगने गया। उस महापुरुष की अनुभवी आंखों ने बहुत देर तक उस युवक को देखता रहा और सोचता बैठा—प्रभु, पिछले बावन बरसों से मैं एक चरित्र-सम्पन्न ज्ञानी लड़के की तलाश में हूँ कि जिनके पवित्र कन्धों पर मैं अपना यह कार्य भार सौंप सकूँ! जब कभी किसी लड़के को सामने देखता हूँ तो मेरी अन्तरात्मा ढूँढ़ने और पूछने लगती—कहीं यही तो नहीं! पर आज तक मुझे नैराश्य ही हाथ लगा।"

युवक ने एकाएक पूछा लिया—"सर, क्या हुकुम होता है?"

उस वृद्ध पुरुष ने पूछा—"तुम क्या चाहते हो?"

"नौकरी"

"क्या जानते हो?"

"ईमानदारी।"

"और क्या नहीं जानते हो?"

"बेइमानी।"

"शाबाश, क्या लक्ष्य रहेगा तुम्हारा यहाँ?"

"आपके मनोनुकूल कार्य करना आपकी आज्ञा पाने के पहले ही।"

"क्यों?"

"क्योंकि वही देवत्व का परिचय और मैं सदा देवत्व का अनुशीलन करता रहता हूँ।"

"मनुष्यत्व का क्या परिचायक है?"

"आपकी प्रत्येक आज्ञा का पूर्ण लगन साथ पूरा करना।"

"और शैतान का?"

"आपका हुकुम पाने पर भी न करना बल्कि उसके विपरीत करना फिरना।"

"बहुत खूब। मैं तुम्हारी जानकारियों का टेस्ट लूँगा।"

"एम० ए० पास हूँ।"

"मैं सर्टिफिकेट नहीं चाहता।"

"तो पूछा जाय।"

"दो सौ बरस के बाद रूस की राजनैतिक गतिविधि कैसी रहेगी?"

"शुद्ध सात्विक आचरण रहेगा।"

"तुम्हारे इस अनुमान का आधार क्या है?"

"रूसी जनता को उत्तरोत्तर बढ़ती नैतिक और वैज्ञानिक अन्वेषण।"

"अगर ऐसा न हुआ तो?"

"तो मानवता का नाश होगा"

"मानवता का नाश पर तुम्हें विश्वास नहीं?"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"क्योंकि मुझे भारत के आध्यात्मिक गठन पर विश्वास है।"

"भारत से तुम्हारा क्या तात्पर्य है ?"

"एक धार्मिक अनुसन्धान।"

"वह एक राष्ट्र नहीं ?"

"नहीं।"

"बन जो रहा है।"

"बनेगा नहीं, था भी नहीं।"

"तब क्या था ?"

"भारत सदा से एक योजना रहा है, एक खास किस्म का अनुसन्धान रहा है और इसी स्तर पर ही इसका महत्व रहा है। मगर वह राजनैतिक दृष्टि से दूसरों का गुलाम रहा है। राजनैतिक प्रभुत्व सत्ताधारियों का प्रभुत्व है। ज्ञानियों पर राक्षस शासन सदा से रहा है। अन्यथा सुकरात को विष पीना नहीं पड़ता। भारत का सदा संसार पर एक सूक्ष्म प्रभुत्व रहा है और आगे भी रहेगा।"

सम्पादकजी ने एकाएक पूछ लिया—"सिमल्टेनियसली का स्पेलिंग बोलो।"

युवक ने कहा—"Simultaneously"

"पियागोरस थीयरम प्रूव करके समझाओ।"

युवक ने मिनिट में उसे समझाने तैयार हो गया तो सम्पादक ने पूछा—"सुब्बलक्ष्मी और लतामंगेशकर में तुम किसे अधिक चाहते हो ?"

"सुब्बलक्ष्मी को।"

"क्यों ?"

"क्योंकि मैं मद्रासी हूं। कर्णाटक संगीत को अधिक पसन्द करता हूं।"

"भोजन किस देश का बेहतर है ?"

"मद्रास का।"

"सभी चीज मद्रास ही की अच्छी है ?"

"जी, मुझे तो ऐसा ही लगता है।"

"तो तुमको तुम मुझ से अधिक प्रिय लगते होगे।"

"प्रिय ही नहीं आदर भी मैं अपने को ही सब से अधिक करता हूँ।"

"तुम किसी से किसी चीज में कम नहीं हो।"

"सबों से पाप में कम हूँ। सर, राम का नाम लेने में कोई भी मुझे हरा नहीं सकता. इसलिए पूर्ण आत्म गौरव और श्रेष्ठता बोध के साथ मैं भगवान के सामने भी सिर ऊँचा करके खड़ा रहता हूँ।"

"अगर मैं अपने पत्र का सम्पादक तुम्हें बनाऊँ तो तुम क्या करोगे ?"

"मैं तब तक विश्राम न लूँगा जब तक इस पत्र को संसार का सर्वश्रेष्ठ पत्रिका न बना दूँ और अपने देशवासियों को सत्य और ज्ञान की ओर घुमा न दूँ।"

"क्या तलब लोगे ?"

"सर, कम से कम चार सौ रुपये मिलने चाहिए क्योंकि मेरे भाई बहन नौ हैं। घर में चल-अचल सम्पत्ति नहीं के बराबर है। माता-पिता भी बूढ़े हो चले हैं।"

सम्पादक का शरीर कांप उठा। भीगे नयन और भरे हृदय से कहा—तुम्हें मैं प्रति मास आठ सौ रुपये तलब पर आज

शेष पृष्ठ ... पर

मंदार शिखर से

*

गांधी जयन्ती

२ अक्टूबर को भारत ही नहीं दुनियां के कई प्रमुख देशों में गांधी जयंती मनाई जाती है। कहीं सभाएँ होतीं तो कहीं सूत्र-यज्ञ होता, कहीं खादी बिक्री के लिए जोरदार प्रयत्न होता तो कहीं पद-यात्राएँ होतीं हैं; किन्तु जिस आदर्श के लिये गांधी जी जिये और मरे वह हमसे कोसों दूर है। सत्य एवं अहिंसा के द्वारा उन्होंने जनान्दोलन खड़ा किया और करोड़ों भारतीयों तथा विदेशियों के हृदय में मानव प्रेम की ज्योति फैलाई। हमें आशा थी कि स्वतन्त्र भारत में उनके पद-चिन्हों पर चलने की कोशिश की जायगी, पश्चिम के विज्ञान और पूर्व के आध्यात्म का गठबन्धन होगा और दुनियां से विषमता, अज्ञानता एवं युद्ध का अंत सदा के लिए हो जायगा। पर भारत की स्वतन्त्र जनता के समक्ष परीक्षा का समय उपस्थित हो गया। चीन के साथ हमारा सम्बन्ध मधुर होने के बजाय तिक्त हो गया। पाकिस्तान के साथ तनातनी बढ़ती गई और आज स्थिति यह है कि वह हमारा पुराना अंग होते हुए भी आक्रमक की गोद में जा बैठा है। यही नहीं, उसने अपने भेदियों के द्वारा हमारे गुप्त समाचारों को प्राप्त करने की कोशि[श] ही नहीं की है बल्कि पूर्वी सीमा पर आ[ए] दिन गोलियाँ छोड़ने की धृष्टता भी की है।

हमने मन्दार विद्यापीठ में भी जयन्[ती] मनाई। गांधीजी के गुणों पर प्रका[श] डाला गया और हमें आत्म-परीक्षण [का] अवसर मिला। हमने यह महसूस किया [कि] शिक्षा पद्धति में जिस प्रकार की अहिं[सक] क्रांति की कल्पना गांधीजी करते थे उस[की] छाया भी हम छू नहीं पाते। सारे दे[श] में जो गन्दी हवा बह रही है उसकी [ल]हर इस प्रसिद्ध पौराणिक स्थान पर भी आ र[ही] है। क्या राष्ट्रीय, क्या सांस्कृतिक, क्या सरकारी और क्या गैरसरकारी— सभी शिक्ष[ण] संस्थाओं में तेजस्विता, सद्भाव, सहयो[ग] एवं निस्वार्थ सेवा का स्वच्छ स्रोत सू[ख] गया सा लगता है। हम इतने भीरु हो ग[ए] हैं कि प्रत्यक्ष सत्य-सूर्य का दर्शन भी न[हीं] कर पाते। देश के बड़े-बड़े नेता भी शिक्षण दिशा में अभिनव प्रयोग करने [से] मुँह मोड़ लेते हैं। ऐसी स्थिति में गांधी जी के जीवन से हमें इस प्रकार की शिक्षा ग्रहण करनी है कि हम शब्दवीर या कल्प[ना]

[...] बनकर ही संतोष न कर लें अपितु [...] जीवन को भी उनके उच्च-सिद्धान्तों [के] अनुकूल ढालने का सच्चे हृदय से दृढ़ [संकल्प] लें।

[...] हर्ष है, संत विनोबा और जयप्रकाश की [स]म्मिलित शक्ति भारतभूमि में सत्य अहिंसा [की] गंगा-यमुना लाने का भगीरथ प्रयत्न [क]र रही है। काश, भारत और विश्व की [जन]ता इसे साकार करने में सहयोग देती तो [विश्व] में सुख एवं शांति का साम्राज्य स्थापित [हो जा]ता!

कामराज योजना

[...] मंत्रियों के त्याग-पत्र जिस उद्देश्य से [लिये] गये गये उसकी पूर्ति होने की बात तो [...] है, विभिन्न राज्यों में नये मंत्रिमंडल [के] गठन में जो रस्साकसी देखी गई उससे [...] लोगों के मन में कामराज योजना की [सफ]लता पर संदेह उत्पन्न हो गया है। [...]रों को छोड़ दें, कांग्रेस संघटन [के] महारथी ही किसी न किसी रूप [में] इसकी आलोचना में रत हैं। तब इसके [...]विषय के सम्बन्ध में क्या कहा जाय? [इस] योजना का एक परिणाम तो प्रत्यक्ष [देख]ने को मिला कि कुछ पुराने मंत्री हट [ग]ये हैं और उनके स्थान पर नये मंत्री आ [ग]ये हैं।

उत्तर प्रदेश में श्रीमती सुचेता कृपलानी [का]ंग्रेस विधायक दल की मन्त्रिणी चुनी गई [...] चुनाव में एक ऐसी महिला को सर्व-[प्रथ]म उक्त महत्वपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित किया [ग]या है जिसका जन्म बंगाल में हुआ और विवाह एक ऐसे राष्ट्रीय नेता से जिसक[ी] जाति-पांति का कोई ठिकाना नहीं, जो सिन्ध[ी] हैं तथा देश में सत्ताधारी दल के मुका[-]बले एक सुदृढ़ विरोधी दल की स्थापना करन[ा] चाहते हैं। बिहार में श्रीकृष्णवल्लभ सहा[य] का मुख्य मंत्री पद पर चुना भी यह साबि[त] करता है कि बिहार भी अब जातीयता [के] चक्कर से बाहर निकलने की कोशिश क[र] रहा है। किन्तु सभी दृष्टियों से योजन[ा] पर विचार करने से यह स्पष्ट दीख रह[ा] है कि जब तक कांग्रेसजनों का दृष्टिको[ण] व्यापक नहीं होगा और उनका हृदय विशा[ल] नहीं होगा तब तक इधर की गोटी उध[र] बैठाने से आम जनता को कोई विशेष ला[भ] होने की संभावना नहीं है।

एशियाई-अफ्रीकी सम्मेलन

गत सितम्बर माह में साइप्रस क[ी] राजधानी निकोशिया में एशियाई-अफ्रीक[ी] सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में भारत [के] सम्बन्ध में चीन द्वारा असत्य प्रचार [के] विरुद्ध में रूस, लेबनान, संयुक्त अरब-गण[-]राज्य तथा दक्षिणी अफ्रिका के प्रतिनिधियों ने आवाज उठाई और भारतीय पक्ष क[ा] समर्थन किया। रूस के लिए यह प्रथ[म] अवसर है कि उसने कोलम्बो प्रस्ताव क[ो] स्वीकार करने के लिये चीन से अनुरोध किय[ा] है। इस पर चीनी प्रतिनिधि ने रूस प[र] यह आरोप लगाया है कि वह चीन पर भार[-]तीय हमला का समर्थक बन गया है। भारतीय प्रतिनिधि मण्डल की नेत्री श्रीमत[ी]

रुणा आसफ अली ने सम्मेलन में विश्व-शान्ति की मार्मिक अपील की। इस सम्मेलन की सफलता इसी से प्रगट हो रही है कि न्याय एवं शांति के पक्ष में विश्व के सशक्त राष्ट्रों की बुलन्द आवाज सुनने को मिली है।

मलयेशिया का निर्माण

दक्षिण पूर्वी एशिया में बृटेन के प्रयत्न से मलयेशिया नामक एक नये राज्य संघ का उदय हुआ है। अतः यह स्वाभाविक है कि बृटेन की ओर से उसकी सुरक्षा की सहायता का आश्वासन मिला। राष्ट्र संघ के महामन्त्री ऊ थान्त ने भी इसके निर्माण के पक्ष में समर्थन किया तथा फिलीपाइन तथा इंडेशिया को अपने प्रतिवेदन की प्रति देकर सूचित किया कि सारावाक और उत्तरी बोर्नियो का बहुमत मलेशिया निर्माण के पक्ष में है। किन्तु इंडेशिया इसके विरोध में है। उसने बृटेन को धमकी दी है कि यदि उसकी नभ सेना सीमा में अतिक्रमण करेगी तो उसे नष्ट कर दिया जायगा। इससे स्पष्ट है कि एशिया के दक्षिण में भी अशांति की लहर दौड़ रही है। ऐसी स्थिति में वहां की जनता को धैर्य, साहस एवं बुद्धि से काम लेकर आपस में सद्भाव एवं सहयोग की भावना उत्पन्न करनी चाहिए न कि किसी बाहरी शक्ति के प्रभाव में आकर आत्महत्या का मार्ग पकड़ना।

चीन की चुलबुलाहट

हाल को ख़बर है कि चीन की आर्थिक दशा बहुत खराब हो चली है। वहां के शासन एवं शोषण से संत्रस्त होकर जो ६० हजार चीनी शरणार्थी चीन से रूस में चले गये हैं वे वापस आना नहीं चाहते। जो चीनी शरणार्थी पुनः रूस जाना चाहते थे उन्हें गोली से उड़ा दिया गया।

चीन से रूस में निषिद्ध साहित्य छिपाकर भेजे गये, इससे रूस ने चीन को पहला विरोध पत्र भेजा है। इधर चीन दस लाख चीनी सैनिकों को सिकियांग में रूस की सीमा पर भेजने की व्यवस्था कर रहा है। पाकिस्तान से दोस्ती करने का चीनी उद्देश्य भी यही है कि पाकिस्तान को भारत के विरुद्ध खड़ा किया जाय।

उसकी इन हरकतों को देखकर भारत को हर प्रकार से साहस एवं शौर्य के साथ तैयार रहना है। ऐसे समय में यह सोचना कि अब तो कम्युनिष्ट क्षेत्र में फूट पैदा हो गई, हमें निश्चिंत से रहना है, घातक सिद्ध हो सकता है। एक तरफ सैनिक तैयारी तो दूसरी तरफ शांति के द्वारा समस्या को हल करने का जोरदार प्रयत्न तो किसी भी हालत में चलना ही चाहिए। इसके लिए राज्य सभा के कांग्रेसी सदस्य श्री सुधीर घोष की अमेरिका तथा रूस यात्रा स्तुत्य है। आशा है केनेडी तथा क्रुश्चेव चीन की अनिष्टकारी चुलबुलाहट रोकने का शीघ्र उपाय करेंगे।

बाढ़, वर्षा, अग्निकांड एवं भूकम्प

१५ सितम्बर को श्रीनगर (कश्मीर)

...मील दूर भीषण अग्निकांड हुआ ...पांच हजार गृहहीन हो गये। एक ...मकान जलकर खाक हो गये। इसके ...गाह ही पूर्व कश्मीर में भूकम्प से ...व्यक्ति घायल एवं मृत हो हो गये। ...की भूमि में विनाश की यह लीला ! ...स्थर वर्षा एवं बाढ़ से पश्चिमी उत्तर ...में कई मकान धराशायी हो गये ! ...व्यक्ति घायल हुए एवं मरे भी। अतः ...कार से निवेदन है कि वह इन आपत्तियों ...ग्रस्त व्यक्तियों की सहायतार्थ वह आगे ...और जनता से अनुरोध है कि उससे जो ...पड़े दुखी परिवार के साथ सहानुभूति ...रूप में कुछ ठोस कदम उठाये।

राष्ट्रीय योजना और मेहता

देश की संकटपूर्ण घड़ी में अशोक मेहता ...नेहरू जी ने सर्वप्रथम राष्ट्रीय युद्ध ...नीति में स्थान दिया। इस पर विरोधी ...दलों के नेताओं में स्वाभाविक क्षोभ पैदा ...कि उसमें अन्य किसी को नहीं लिया गया। ...चीनी हमले की आशंका अभी दूर नहीं ...हुई है। ऐसी हालत में अशोक मेहता का ...योजना में सक्रिय सहयोग देने के ...लिए राष्ट्रीय योजना समिति के ...उपाध्यक्ष पद को ग्रहण करना सर्वथा अनुकूल प्रतीत होता है। इस प्रश्न पर ...प्रजा समाजवादी दल की कार्यकारिणी समिति ...में मतभेद हो रहा है। जो लोग मेहता द्वारा ...पदग्रहण के विरुद्ध में हैं उनका तर्क ...यह है कि मेहता का पदग्रहण पार्टी की ...संगठन नीति के अनुकूल नहीं हुआ है। हमारा मत है कि आज की परिस्थिति में मेहता का आचरण देशहित के सर्वोत्कृष्ट आदर्श की भावना से ओत-प्रोत है। दल के शुभचिंतकों का यही कर्त्तव्य है कि देश में विरोधी दल की शक्ति बढ़ाने की दिशा में अब तक के कटु अनुभवों से शिक्षा ग्रहण कर नवमार्ग ढूंढ़ें।

हिन्दी-दिवस

हिंन्दी के लिए यह गौरव की बात है कि रूस में भी १४ सितम्बर को हिन्दी दिवस मनाया गया। नई दिल्ली की खबर है कि नेहरूजी ने संसद के केन्द्रीय भवन में हिंदी दिवस के अवसर पर कहा कि हिंदी भाषी राज्यों का कर्त्तव्य है कि वे सरल एवं सुबोध शब्दों के प्रयोग कर हिंदी भाषा के विकास का मार्ग खोल दें। सरकारी प्रशासकीय कार्यों में भी उसका प्रयोग होना आवश्यक है। किन्तु श्रीकृष्णदेव प्रसाद गौड़ ने उसी रोज कहा कि उत्तर प्रदेश में जो हिंदी का गढ़ है, पब्लिक सर्विस कमीशन परीक्षा के एकमात्र हिंदी पत्र को भी दबा देने का प्रयत्न केन्द्रीय सरकार की ओर से हो रहा है। हमारे नेता बोलते कुछ हैं और करते कुछ और ही, तो हिन्दी का विकास कैसे होगा ?

चुनाव में जातीयता

श्री भूपेन्द्र नारायण मण्डल लोक-सभा सदस्य (समाजवादी दल) का चुनाव इसलिए न्यायालय द्वारा अवैध घोषित कर दिया गया कि उन्होंने एक ऐसा पर्चा प्रकाशित

किया था जिसमें जातीयता की बू थी। उन्हें छः साल के लिए किसी निर्वाचन में खड़ा होने से भी वंचित कर दिया गया। जातीयता के विरुद्ध न्याय का यह उचित कदम कहा जा सकता है। लेकिन चुनावों में जातीयता का जो नग्न प्रदर्शन होता है उसे रोकने में हमारे शासक एवं न्यायाधीश—दोनों असमर्थ हैं। मन्त्रिमण्डल गठन में भी जातीय आधार पर मन्त्री चुने जाते हैं। इसे बन्द करने के लिये कौन सा उपाय सोचा जा रहा है?

हृद्रोग क्यों?

५ सितम्बर के इन्डियन नेशन में यह समाचार प्रकाशित हुआ कि उन्नत देशों के लोग जहाँ अपने विविध कार्यों में बहुत व्यस्त रहते हैं इसलिये हृद्रोग के शिकार बन जाते हैं वहां सुमाली लैंड के चरवाहे स्वच्छ वायु में स्वतन्त्र रूप से विचरण करते हुए ऊँटनी का दुग्धपान कर स्वस्थ जीवन का सुख भोगते हैं। क्या हम गांधीजी के उच्च विचा और सादे जीवन पर ध्यान देने का उठाएँगे?

श्री प्रफुल्ल रंजन दास अब नहीं

पटने के अपने निवास स्थान पर प्रफुल्ल रंजन दास की मृत्यु ८१ वर्ष की आयु में हुई ये देशबन्धु चितरंजनदास के छोटे थे। जिस प्रकार देशबन्धु मुक्त हस्त से दान करते थे उसी प्रकार ये भी दा थे। न्याय के क्षेत्र में इन्हें जितनी लोकप्रियता मिली उतनी शायद ही किसी मिली हो। इनमें देशभक्ति भी कूट-कूट भरी थी। ऐसे तेजस्वी पुरुष की मृत्यु से स्थान रिक्त हुआ है उसकी पूर्ति जल्द संभव नहीं।

हम उनके शोक संतप्त परिवार के प्र अपनी हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं।

पृष्ठ ४३ का विशेषांक

से नियुक्त करता हूँ।"

युवक आश्चर्य से क्षण भर उनको देखता खड़ा रहा। बाद दौड़कर उस वृद्ध के चरणों पर अपना सिर रख दिया।

उस यशस्वी सम्पादक ने फौरन उस युवक को उठाकर अपने हृदय से लगाते हुए कहा—"युग-युग जियो बेटा, तेरे जैसे लाख में एक नहीं, देश को उजेला करो। तुम्हारी कीमत प्रतिमास दस हजार से भी अधिक है।"

युवक अपना सिर उस महान लेखक की छाती में रख दिया।

वयोवृद्ध पुरुष ने अपने आप कहा—"लाखों लाख प्रार्थना के बाद मुझे आज अपना अर्जुन मिला है।"

विश्व विजयी बनकर दिखाओ मेरे बच्चे तुम अश्वत्थामा से भी अधिक मेरे लिए प्रिय और निकट हो।"

—o—

वैदिक अणुशक्ति

संसार में सबसे बड़ा दानशील सूर्य है, फिर अग्नि। विद्वान भी ऐसे ही होते इस प्रकार के दिव्यगुणयुक्त महापुरुषों से संगति प्राप्त करने से बढ़कर जीवन की भी सफलता नहीं है। उत्तम, मध्यम और निकृष्ट इन तीनों स्तर के समाज में महापुरुषों को विचरण करते रहना चाहिए। तभी तीनों स्तर के लोग उदात्त दिशा की ओर गतिशील रहेंगे। सब प्रकार की शक्ति, ऋतु सहयोग और महापुरुषों की संगत : तीनों के योगदान से ही जन कल्याण संभव है।

आत्मा प्राणों के बल पर और प्राणों के जरिये प्रेम करती है।

आराधना, प्रेम, ऐश्वर्य, साधना इत्यादि गुणों को प्राप्त करने का सामर्थ्य सिर्फ प्राणों में है। पर इन दिव्य गुणों का रस भोक्ता आत्मा है। ऐसे जाग्रत आत्मा से युक्त ज्ञानीपुरुष ही प्रेम करना जानेगा।

व्रत, नियम आदि को स्थिरता से धारण और पालन करने वाले ही सब जीवराशि के स्नेह और विपरीत शक्तियों का दमन कर सकते हैं। देहधारी आत्मा, प्राण और प्राण के बल पर देह को चलाते रहते हैं। वैसे ही, कर्मी और सहकर्मी के पारस्परिक योग हुए बगैर कोई भी कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न नहीं हो सकता।

ज्ञानी ही धन, ऐश्वर्य, और कार्य के गतितत्व का रहस्य बता सकता है। ज्ञानी को जो पहचान सकते हैं ज्ञानी को सिद्ध भी कर सकते हैं। ज्ञानी को सिद्धहस्त किये बगैर तो उनसे लोकहित कार्यों में योगदान प्राप्त नहीं किया जा सकेगा। कोई भी लोकहित सम्बन्धी कल्याण कार्य बगैर ज्ञानी के योगदान के सफल नहीं हो सकता।

सामूहिक ऐश्वर्य ही सब जीवराशियों को सुख और शांति प्रदान कर सकता है। ऐश्वर्य को प्रदान करने की शक्ति जिसमें है उसी को ज्ञानी समझना चाहिए।

जो ऐश्वर्य को प्रदान कर सकते हैं वे ही ऐश्वर्य को प्राप्त करने के भी अधिकारी हैं। किसी वस्तु को प्राप्त करने की अभिलाषा उसे प्राप्त करने के सामर्थ्य का ही अप्रिम परिचय है। ज्ञानी ही वास्तविक कवि है। वे ही अलौकिक लोकहितकारी कार्य का सम्पादन कर सकते हैं। यह सामर्थ्य ही वास्तविक ज्ञान का परिचय भी है। ऐसे ज्ञानियों को सदा आगे बढ़कर आना चाहिए और प्रत्येक क्षेत्र का नेतृत्व अपने सुयोग्य हाथों में ले लेना चाहिए।

परमेश्वर ही वह आदि सत्ता है जिससे सब प्रकार का ऐश्वर्य प्राप्त किया जा सकेगा। उसकी विभूतियों को समझने का प्रयत्न ही उनकी पूजा है और तदनुरूप बरतना ही उसकी उपासना है। परमेश्वर चाहता है मनुष्य भी उसके जैसे विभूति-सम्पन्न बने—उसकी इस चाह का ही नाम प्रेम है। अपने वैभव के अनुरूप दूसरों को भी वैभव-सम्पन्न बनाने की चाह और श्रम को ही प्रेम कहते हैं।

नयी कविता : नयी आलोचना और कला

ले०—प्रो० कुमार विमल,
प्रकाशक—भारती भवन, पटना—४, मूल्य—दो रुपये

नयी कविता : नयी आलोचना और कला' विद्वान लेखक प्रो० कुमार विमल के सशक्त हाथों से लिखी गई वह आलोचनात्मक पुस्तक है जिसे पढ़ते ही लेखक के गहन अध्ययन और अथक परिश्रम का परिचय सहज ही मिल जाता है।

तीन खंडों एवं आठ उपखण्डों से सुसज्जित एक सौ तीन पृष्ठों की छोटी सी पुस्तक में प्रो० विमल ने गागर में सागर भरने का जो सफल प्रयास किया है वह सिर्फ सराहनीय ही नहीं, प्रशंसनीय भी है। 'नयी कविता' के अन्तर्गत 'नयी कविता उपलब्धियाँ और अभाव' तथा 'भविष्य की कविता' में एक नये ढंग से नई कविता की खूबियों और खामियों पर तटस्थ एवं विशद अध्ययन प्रस्तुत करते हुए यह भी बताने का प्रयास किया गया है कि नयी कविता की उपलब्धियाँ हिन्दी-साहित्य के लिए बहुत-बहुत उपयोगी सिद्ध होंगी।

'नयी आलोचना' 'एक सर्वेक्षण' में लेखक ने पाश्चात्य एवं पौर्वात्य जगत के प्राचीन तथा अर्वाचीन आलोचकों की समीक्षा प्रस्तुत करते हुए अपना मत इन शब्दों में व्यक्त किया है—"मेरी मुख्य मान्यता कि नयी आलोचना को काव्य शास्त्रीय मान दण्ड के अलावे एक सुचिंतित सौन्दर्य शास्त्री आधार चाहिए क्योंकि नैतिक आधार बिना किसी भी साहित्यिक कृति के सा येत्तर तत्वों का सम्यक विश्लेषण नहीं पाता है।" अक्षरशः समीचीन है।

'कला' के उपखण्डों में 'क्रोचे का क दर्शन' 'हीगेल का कला दर्शन' कला औ जन-संस्कृति, पाश्चात्य कला के कुछ आ निकवाद एवं भारतीय कला की कुछ विशे ताएँ आदि पर विशद रूप से प्रकाश डा गया है। इसमें 'कला के रूप, तत्व, दर्श और प्रवृति से सम्बद्ध निबन्ध प्रस्तुत कि गये हैं।'

इस पुस्तक की उपयोगिता को मद्दे नज रखते हुए मूल्य कुछ कम रखा गया है छपाई, सफाई सुन्दर और बहिरावरण नयना भिराम है। यह बहुमूल्य कृति पठनीय ए संग्रहनीय है : इस सुन्दर प्रकाशन के लि लेखक महोदय को मेरी ओर से सौ-सौ धन्यवाद।

—महेन्द्र नारायण 'मस्ताना'
प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर

पृष्ठ ८ का शेषांश

मैंने पूछा—"आप क्या चाहते भाई आखिर ?" उन्होंने कहा—"सार बात यही है कि हम एक नहीं हो सकेंगे। हमलोगों की समस्यायें ही ऐसी हैं। एक ही चीज हमें एक सूत्र में बांधे रख सकती है और वह न भाषा है, न संविधान है, न नेहरू है, न रामायण।" मैंने पूछा—"क्या है वह ? बताया जाय।" उन्होंने शांति से कहा—"अंग्रेजों का वायनट।" मैंने हँसते हुए कहा—"ओ, तब आप उसके स्वागत के लिए ये सारी तैयारियां कर रहे हैं ?" वे भी यह कहते हुए उठकर चल दिये—"तुमलोग जिस चीज के स्वागत की तैयारियां कर रहे हो उससे कहीं श्रेयस्कर वह है जिसके स्वागत की तैयारियां हम दक्षिण में कर रहे हैं।" मैंने उनको अनुगमन थोड़ी दूर तक करते हुए कहा—"रावणायण जब प्रकाशित होगा तो एक प्रति अवश्य भेज दीजियेगा।" उन्होंने भी समयोचित स्वर में उत्तर दिया—"दक्षिणात्यों का वह उद्धार गीता होगी। तुमलोगों के रामायण से निस्सन्देह श्रेष्ठ होगा। मुसीबत यही है कि हमें अब तक अपने वाल्मीकि और तुलसीदास का पता नहीं मिला है।"

चाणक्य के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वे एक मामूली झोपड़ी में रहते थे। उनके उस सादे जीवन से उनकी विद्वता और प्रभुता में कमी नहीं आयी थी। गांधी जी की भी यही बात थी। बौद्धिक प्रगल्भता, सृजनात्मक वैभव, और अद्वितीय चारित्र्य बल से ही राष्ट्र निर्माण और राज्य-व्यवस्था सफल रही हैं। चाणक्य की फिक्र यह नहीं थी कि शहर में मकान कैसे बनाया जाय या बेटा कैसे विलायत पहुँच जाय। इसलिये उनका नाम आज भी इतिहास में अङ्कित है। मैं यह जानना चाहता हूँ हमारे देश को चाणक्य मार्ग अपनाना है, गांधी मार्ग अपनाना है या स्टालिन-क्रुश्चेव मार्ग ? चाणक्य मार्ग से मेरा मतलब मुख्यतया उनकी तपशक्ति, नीति कुशलता और कुशाग्र बुद्धि से है। यही सब खूबी गांधी जी की भी थी। सिर्फ चर्खा चलाना या कुर्ता न पहनना गांधी मार्ग नहीं है, अपनी साधना, बुद्धिशक्ति और कर्मनिपुणता के बल पर संसार के सर्ववन्द्य बनना, जन हृदय-सिंहासन पर आरूढ़ होना ही गांधी मार्ग को अपनाने से तात्पर्य है। इस मार्ग को उनके बाद कौन अपना सका ? न कोई ऐसा लिख सका, न जी सका, न आन्दोलन ही चला सका, न ऐसी सुमधुर भाषा और भव्य प्रेम भरा हृदय ही किसी में नजर आता है, यों तो सभी उनके चेले हैं और उनकी जय बोलनेवाले भी हैं। तो हमें यही कहने हैं भाई, राम की पूजा राम जैसे बनने की अहर्निश साधना को कहते हैं। उसी तरह गांधी मार्ग को अपनाना है तो गांधी जैसे विश्वविख्यात बनना है और इसके बगैर भारत की प्रतिष्ठा आप संसार में जमा नहीं सकेंगे। विश्वविख्यात भारतीय महापुरुष आज कितने हैं और क्यों नहीं हैं ? राजनीतिकारों को छोड़िये भाई ! इन लोगों की आखिर उम्र ही कितनी रहती है ! आज है तो कल नहीं ! देश में नेतृत्व की स्थिरता नहीं है तो बड़ी

न और नीति में क्या स्थिरता संभव है ? मुरारजी भाई की स्वर्ण नीति कल कुछ है तो टी० टी० की कुछ और है ! आफिसर और जनता तबाह हैं। ये नेता लोग भी को अपनी खानदानी सम्पत्ति समझ व्यवहार करते हैं। इनकी फिक्र छोड़िये। ये लोग को नहीं, न हमें ही ये बचने देंगे। भारतीय राजनीति में चाणक्य को अगर करना है तो देश में सैकड़ों तक्षशिलाओं का निर्माण करने की जरूरत है रों तपस्वी अचार्यों को रात-दिन परिश्रम करने की जरूरत है। सैकड़ों मेधावी और त्यागी नियों को साहित्यसृजन करने की जरूरत है। पूरे देश के मानसिक वायुमण्डल ही सृजनात्मक तत्व से अनुप्रेरित करना जरूरी है। यह सारा अनुष्ठान कैसे संभव योग्य नेता के अभाव में सभी रोते हैं। पर योग्य नेता आज के इन विश्वविद्यालयों से नहीं होने को जहां रात-दिन खुला भ्रष्टाचार, नग्न प्रेम लीलाएँ और पूरा गुण्डावाद गरम है, शिक्षा भाड़े का अध्यापक कपड़ा और नमक जैसे बिक्री करते रहते हैं, जहां विद्यार्थी और पक का रिश्ता मिल संचालकों से ट्रेड युनियन वालों के जैसे शोषक शोषित-मनोभाव से है। रात-दिन फिल्म पत्रिकायें और पाकेट पुस्तकें पढ़ने वाले इन युवक-युवतियों में चाणक्य नहीं प्रकट होगा, भाई। जैसे विश्वविद्यालयों का स्वरूप और आधार जैसे साहित्यकारों की गतिविधि और लक्ष्य है उसके अनुरूप ही राजनीतिक देश को प्राप्त होगा। इसलिए इस उम्मीद से राजनीतिज्ञों की ओर देखना ये लोग हमारे देश को बचा देंगे पूरी मूर्खता का परिचय देना मात्र है। चाणक्य वापस बुलाने के बदले तक्षशिला और नालन्दा को वापस बुलाओ। विश्वविद्या- पर नजर नहीं रखे तो देश डूबेगा। वहीं पर देश का भाग्य लिखा जा है। रोजी ढूंढ़ने और पैसा कमाने के उपाय खोजने की वह जगह नहीं है। देश औद्योगीकरण जैसे-जैसे बढ़ेगा वैसे-वैसे विश्वविद्यालयों को मैट्रिक बी० ए०, एम० रने के लिए लड़के नहीं मिलेंगे, न अंग्रेजी और भाषा विज्ञान पढ़ाने के लिए र ही, न इतने कवि ही ! सभी समस्याओं का समाधान विश्वविद्यालयों को ठीक से चलाने से ही संभव है, पाठ्य क्रम और पाठ्य पुस्तकें दुरुस्त रखने से ही यह कार्य है। शिक्षण संस्थाओं को बाजार जैसे छोड़ देने से अराजकता ही बढ़ेगी। विपरीत शक्तियों का सूक्ष्म-जगत में ही निराकरण की व्यवस्था अपेक्षित है। कि ये विपरीत शक्तियां सूक्ष्म-जगत में ही प्रथम-प्रथम प्रकट होती है। सूक्ष्म- में प्रतिरोध अथवा निर्माण की व्यवस्था रखने के लिये फौज या बन्दूक की नहीं है, पर क्या-क्या जरूरी है कैसे-कैसे यह सुचारु रूप से किया जा सकता के लिये अन्वेषण अनुसन्धान आवश्यक है। नदी को समझना है तो उसके का अध्ययन कीजिये। जिस चीज को आप अधीनस्थ करना चाहते है पूरा अध्ययन आप को बहुत पहले से ही प्रारंभ कर लेना चाहिये। आपलोग

सुने होंगे भारत के प्राचीन गरिमा का अध्ययन, इतिहास में दिलचस्पी, भाषा और साहित्य को नये सिरे से लिखना आदि कार्य यहां भारतीयों से भी पहले अंग्रेजों ने प्रारंभ किया था। उन को इसकी क्या जरूरत थी! इस्लामी जमाने में इस देश में रामायण के अधिकारी विद्वान मुसलमान रहे हैं, ऐसा उदारहण मिलता है। इधर हाल में एक राजनीतिक नेता मुझसे कह रहे थे बरसों पहले उन्हें इस बात का प्रमाण पाकर आश्चर्य हुआ कि चीन के प्रधान मंत्री चाउ को भारत के राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक साहित्यिक आदि सारे महत्वपूर्ण क्षेत्रों की प्रत्येक गति-विधि का और यहां के व्यक्ति विशेषों का पूरा ज्ञान है और अतिरिक्त ज्ञान प्राप्त करने में रस भी लेते हैं। वे कह रहे थे भारतीय जाति समस्या, छुआ-छूत, हिन्दू मुस्लिम समस्या, वैधव्य दुख आदि का जिक्र करते हुए व्यंग्य से चाउ हंसते थे और पूछने लगे "क्या आप उमीद करते है कांग्रेस या सोशलिस्ट इन समस्याओं को निराकरण कर सकेंगे! शेर गाय पर हमला करने के पहले उनकी गति-विधि, स्वभाव, सुखदुख आदि का अध्ययन कर लेता है। शत्रु-संहार करने की शक्ति हासिल करने की एक अतिआवश्यक शर्त यह भी है।

राष्ट्रीय भावनाओं में ही राष्ट्रीय-वृत्ति छिपी रहती है और इसे सदा सर्वथा स्वस्थ अनुकुल और विकासोन्मुख बनाये रखने की जरूरत पड़ती है। इसी दिशा में पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं, सिनेमाओं, और अन्य सामाजिक और शैक्षणिक आचार-विचारों का महत्वपूर्ण योगदान अपेक्षित है। एक समय था खादी पहनेवालों को देवता की प्रतिष्ठा मिलती थी समाज में। आज खादी पहनने वालों को वही समाज धूर्त और बेईमान कहने लगा है। तो देश की मनोभावना में यह परिहास जनक पतनो-न्मुखी परिबर्तन का कौन जिम्मेदार। कोई हो, समस्या यह नहीं। समस्या यह है कि मनोवृति ही असल बात है और इसी को दुरुस्त रखने के लिये ही सब उपकरण, शासन व्यवस्था भी, निर्दिष्ट है। इस उदात्त लक्ष्य को ध्यान में रख कर साहित्य सृजन करनेवाले, विश्व-विद्यालय चलाने वाले, पत्रिकायें चलाने वाले, सरकारी यंत्र घुमाने वाले मनस्वी पुरुषरत्न कितने आज देश में व्यस्त हैं, सोचा जाय। देश के प्रत्येक नर-नारी का प्रत्येक आचरण इस दिशा में केन्द्रित रहना चाहिये। हम जब कभी कुछ करने लगें तो यही सोचना है कि हम इस कार्य से देश को किधर ले जा रहे हैं! ऐसा न समझिये, हमारा कोई कार्य इस यज्ञ के बाहर का है। जब देश प्रिय होने लगा तो संपूर्ण अन्य चीजें यों ही झड़ जाती हैं जैसे किसलय उगते ही वृद्ध पत्तियां गाछ से झड़ जाती हैं। राष्ट्र के मानसिक धरातल में, नहीं, अन्तराल में ही इन सारी सूक्ष्म क्रियाओं का यज्ञरूप से प्रारंभ करने वाला पुरोहित कौन होगा? कहां है वह? जबतक यह पुरोहित न प्रकट होगा तबतक

क्षेत्रों में अराजकता का आना स्वाभाविक है। गांधी जी का बड़प्पन यह उन में यह पौरोहित्य की शक्ति थी। उनके युग में भारतीय कर्म क्षेत्रों का ऐसा भाग था जिसे उन्होंने अछूता छोड़ा, किस क्षेत्र को उन्होंने अनुकुल उनका उपयोग नहीं किया। स्वाधीनता संग्राम के युग का साहित्यिक अनुष्ठान ज्वलन्त उदाहरण है। पर बाद के निर्माण युग का पौरोहित्य ठीक नहीं चला। जी साहित्य को प्रभावित नहीं कर सके, अनुकूल न बना सके, विश्व-विद्यालय अन्तरिक्ष को भी निर्माणात्मक दृष्टि से नया मोड़ न दे सके, धार्मिक और सामाजिक को भी वे कुछ भी प्रभावित नहीं कर सके, व्यक्तिगत और पारिवारिक क्षेत्रों को अपने अनुकूल न कर सके। स्वयं राजनीतिक लोग भी उनसे भीतर-भीतर तुष्ट होते चले, क्योंकि उनमें वे प्रेरणा उत्साह और त्यागभावना पैदा न कर सके, और यह न कर सके और फलस्वरूप जब वे फायदा ढूंढने लगे तो उसे वे भी न दे । कांग्रेस को पुनः नवजीवन देने की कोशिश हो रही है, भाषण पर भाषण किये जा हैं, गरम मस्तिष्क से सोचा जा रहा है। भाई, पुनर्जीवन जरूर संभव है, इन नेताओं और मंत्रियों में ही इसकी हिम्मत नहीं है। भारतीय मिट्टी कुछ ही है कि यहां सब अनाज उपजेगा नहीं। विलायती, रूसी और अमेरिकी के लिये यहां न उपजाऊ मिट्टी हैं, न अनुकूल ऋतु ही। यहां की मिट्टी को और ऋतु को उस लायक बनाने असाध्य स्वप्न देखना पामरता का परिचय है। यहां चाणक्यमार्ग का ही प्रभुत्व जमेगा। है किसी मंत्री की हिम्मत ? मंत्रियों को ही यह करना है क्योंकि चाणक्य महा मंत्री थे। हमारे नेताओं द्वारा मंत्री स्वीकार करने पर जनता असंतुष्ट नहीं थी। नेता को ही मंत्री बनना चाहिये कि उनके चेलों को। चेले आखिर चेले ही तो। मंत्रीपद छोड़ कर नेता जनता की नजर में चढ़े नहीं हैं। पूरी कामराज योजना राजनीतिक शिथिलता का ही परिचय देती है। चाणक्य मार्ग से तात्पर्य, जैसे हमने ऊपर जिक्र किया, अत्यन्त सरल सादा जीवन और अत्यन्त उच्च कोटि की महानता, तपशक्ति, त्याग और विद्वता का परिचय देकर विश्व में विख्यात बनना है। चोटी खोल कर जिद्द पकड़ना चाणक्य मार्ग नहीं, त्याग और तपस्या में चाणक्य अद्वितीय थे और इसी के पश्च उन्होंने विपरीत शक्तियों को परान्मुख किया था। उनके अर्थशास्त्र सम्बन्धी विचार आज भी संसार में सजीव है। इतनी बौद्धिक तीक्ष्णता का परिचय देना होगा मंत्रीयों को। मंत्री पद सुख और पैसा प्राप्त करने की जगह न रहने दिया जाय। तब वहां कोई जाना नहीं चाहेगा। कहा जाता है कोई ऐसा क्षेत्र या विषय नहीं था जिस पर नेपोलियन का दखल नहीं था। राष्ट्र नायकों को ऐसा ही होना चाहिये। वे त्याग, विद्वता और हिम्मत की अपूर्व त्रिवेणी थे। एक एम०एल०

ए० को जितना पैसा और सुख आज प्राप्त है उससे अधिक अपने लिये नहीं लेने वाला कोई भी मंत्री आज भारत में है? क्यों नहीं? भाई, भारतीय जनता त्याग का ही गुणगान करेगी न कि शान का या धूर्तता का। वह अगर चुप है तो उसका यह अर्थ नहीं वह कुछ भी नहीं समझ रही। वह जय भी मौका पड़ने पर बोल देगी पर भीतर वह क्या सोच रही और बोल रही आप को पता चलाना चाहिये। जब कांग्रेस के सारे अधिकारप्राप्त नेता ऐसा करने लगेंगे तभी कांग्रेस में नवजीवन आयगा। जवाहरलाल नेहरू के मंत्री पद छोड़ने से यह काम नहीं होने का। मंत्री रहते हुए गांधी जैसे भंगी कालनी में रहने लगें, गांधी जैसे सादे जीवन व्यतीत करने और अपने साथियों से भी ऐसा जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य कर सकें तभी कांग्रेस में नवजीवन आयगा। मैं इधर हाल में साबरमती आश्रम देखने गया था। गांधी जी की चटाई, डेस्क, चम्मच, थाली आदि देखने को मिला। पाठक, मेरी आंखें भर आयीं, हृदय धड़कने लगा। कितनी गरीबी से वे अपना जीवननिर्वाह करते थे। ऐसी स्थिति में रहते हुए कितने ऊंचे स्तर के बौद्धिक और चारित्रिक चमत्कार का परिचय वे देते थे। क्या उनकी भाषा! क्या उनकी सूझ, कैसी उनकी प्रेरणायें! जब हम भीतर से पवित्र होने लगते, उदात्त दिशा की ओर चित्तवृत्ति घुमाने लगते तभी और तुरन्त ही अपने में एक अलौकिक शक्ति भरते हम अनुभव करेंगे, एक राजाधिराज की गरिमा भीतर आती हमें बोध होगा। विभूतिसंचय और प्रतिभा सम्पादन की यही रहस्यपूर्ण साधना है। कोई भी अपनी कवित्वशक्ति या ज्ञानवृद्धि का घमण्ड न करे। वह वहां यों नहीं आयी। दिनकर की एक पुस्तक पढ़कर एक दिन मैंने कहा था इस आदमी में एक आग है और उस आग से वह तबाह है और यह तबतक ऐसा लिखता चलेगा जबतक उनके भीतर की यह आग सुख, प्रमाद और स्वार्थ के मैल से बुनने न लग जाय। यह आग मूल्यवान है। इस आग को जलाना, प्रज्वलित किये रखना; इसी को साधना कहते हैं। बगैर इस प्रज्वलित भीतरी अग्नि के कलम लेकर साहित्य सृजन करने जो बन्धु आगे बढ़ते हैं वे परिहास का ही पात्र बनते हैं जैसे अपने कण्ठकारीगरी का परिचय देने वाले शास्त्रीय गायक जनता के हास्य पात्र बन जाते हैं। देश प्रेम, परमेश्वर-साक्षात्कार आदि की तड़प जिन में जगती नहीं उनकी भीतरी आत्मा में वह अग्नि ज्वलित नहीं हो सकती। रावणायण हो, पाकिस्तान हो, जाति समस्या हो, सीमा संघर्ष हो, कुछ भी मायादर्द हो, सभी का इलाज यही एक है।

किस क्षेत्र में आज हम संसार में अग्रगण्य हैं? बताइये पाठक! साहित्य में! विज्ञान में! राजनीति में? सरकारी राज्य व्यवस्था में! सामाजिक आचार-विचार में! भोजन में? स्वास्थ्य में? हिम्मत में? त्याग में? खेल में? हँसने, मुस्कुराने में ही!

...य हम हैं बेइमानी में, स्वार्थ में, स्त्रियों के शीलहरण में, डकैती और चोरी करने
...नाना प्रकार के चारित्र्य दोष में, पाप में, झूठ में, पाखण्ड में, प्रमाद में।
...ान खोलकर सुनें पाठक, ऐसे देश में वेदव्यास का आविर्भाव असंभव है, चाणक्य
...भी! तक्षशिला ने ही चाणक्य को जन्म दिया था। और तक्षशिला का सूत्रपात किसने
..., वहां का आचार संहिता और पाठ्य व्यवस्था को किसने चालू किया, और चलाया
...उसका समाज में क्या प्रभुत्व था यह सब भी अध्ययन किया जाय। बाद अपने
...ण संथाओं में और वहां के अध्यापकों और उपकुपलतियों की ओर देखा जाय!
...लोगों को हिन्दी बोलने में शरम आती। धोती पहनने से प्रतिष्ठा गिर जाती!
...के पिट्ठू सब! यह क्या तक्षशिला खड़ा करेगा और चाणक्य को जन्म देगा भाई?
...जहन्नुम पहुँच गया। कितने प्राध्यापकों को इस फिक्र से नींद नहीं आ रही?
...कियों की मान प्रतिष्ठा कालेजों में बचती नहीं! कितने उपकुलपतियों को इस
...ा से खाना हजम नहीं होता? उन्हें अपने प्रति मास के दो हजार रुपये वेतन
...ी मतलब है। मैं कहता हूं किसी भी विश्वविद्यालय के उपकुलपति को दो सौ रुपये
...अधिक वेतन कभी नहीं देना चाहिये! इस गरीब देश में यही बहुत हुआ। जब चपरासी
...उतना भी नहीं मिलता एक मानव और परिवार के संरक्षक-संचालक के नाते परमे-
...के समक्ष उन्हें और ज्यादा मांगने का क्या हक है सिवा इसके कि ये कहते हैं,
...अंग्रेजी जानते हैं, सूट बदलना जानते हैं और ज्यादा पुस्तकें पढ़े हैं। बुद्ध धर्म
...किसने संसार भर फैलाया? रामकृष्ण मिशन का इतना विश्वव्याप्त प्रभाव किनके
...प जमा हुआ है? ईसाई मिशनरी लोग कैसे हैं और क्यों वे ऐसे हैं? राजनीतिक
...ों को पुनर्जीवन देना जो चाहते हैं वे इनसे प्रेरणा क्यों नहीं ग्रहण करते? मैं
...नहीं कह रहा हूँ कि सभी साधु हो जायँ! पर सन्मार्ग को अवश्य पकड़ना चाहिए।
...ो और ढोंग ज्यादा दिन तक काम नहीं देंगे। आज का मंत्री कल का भिख-
...। यह स्थिति दयनीय नहीं प्रशंसनीय है। आज का मंत्री कल का बिरला यह
...ति ही निन्दनीय है खतरनाक है और शरमनाक है।

आज की स्थिति में मानव समाज पर राजनीति का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता
... राजनीति एक ऐसा क्षेत्र बन गया है जिसमें सभी उपयुक्त अनुपयुक्त व्यक्तियों का
...राज्य है। इसमें प्रतिबन्ध जाग्रत जनता ही लगा सकती है। राजनीति एक
...ी ही बनी हुई है। इसमें शक्ति-प्राप्ति का गुंजाइश रहने से लोग डर के मारे भी
...ों का आदर करने लगते हैं। शक्ति हासिल करने पर आजकल लोगों को परमेश्वर-
...ी ही प्राप्त हो जाती है और वे समझते हैं उन्हें सब विषयों का ज्ञान भी प्राप्त हो
...है। जन शासन की परम्परा शक्ति पूजा नहीं, गुण-पूजा है, प्रतिभा-पूजा है। पुष्प
...ी भी पड़े रहे उसकी प्रतिष्ठा होनी चाहिए। हिन्दुस्थान की महिमा तभी गायी

जायगी जब यहां के प्रधान मंत्री से भी अधिक यहां के जनहित गायक कवि को सम्मान और यश प्राप्त होगा, उन्हीं की वाणी सुनने जनता लाखों की तायदाद में जुटें, वे ही जनता के सर्वश्रेष्ठ प्रिय पात्र बन जाएँ। इस हिसाब से जनमानस को घुमा देना है कि जनता साहित्यिकों को ही राजनीतिज्ञों से अधिक आदर दे और उन्हें आदर्श अनुभव करने लग जाय। क्या देखकर आप मंत्रियों के लिये फाटक बना रहे भाई! कल तक आपने उन्हें कुछ नहीं समझा आज वे ज्यों ही मंत्री बने आप फाटक बना-बनाकर जयजयकार करने लगे। वस्तुतः यह उनका परिहास करना है और अपनी हीनता दर्शाना भी। ग्लानि की बात यह है कि बेचारे मंत्री इसे अपना त्यौहीनी नहीं समझते।

मैं एक बात जान गया हूँ और उसे गरज-गरज कर जनता को सुनाना चाहता हूँ। इस देश का निर्माण यहां के साहित्यकार ही कर सकेंगे। वे आज के बहु प्रतिष्ठित लेखक नहीं, आने वाले तपस्वी लेखक त्यागी कवि होंगे और वह भी हिन्दी के। निकट भविष्य में ही हिन्दी में ऐसे-ऐसे युग प्रवर्तक मेधावी और साधना सम्पन्न लेखक और शिल्पी कवि जन्म लेंगे और वे इस देश का इतिहास नये सिरे से लिखेंगे। उन महाप्रतापी ऋषि तुल्य युवकों के सामने आपके ये निर्जीव नेता और स्वार्थी मंत्री फीके नजर आयेंगे और आप भी तब लाखों की तायदाद में अपने प्रिय कवि के पीछे दौड़ेंगे न कि मंत्रियों के। ऐसे एक स्वस्थ परिवर्तन आपके हृदय स्थल में उपजाने के लिए ही प्राच्य भारती ने अपना यज्ञ आरम्भ किया है। हम तक्षशिला को जन्म देंगे, चाणक्यों को पैदा करेंगे, वेद व्यास को वापस बुलावेंगे; इसी अनुष्ठान के लिए ही प्राच्य भारती का जन्म हुआ है। हमें इसकी फिक्र नहीं कि हम पर क्या बीतेगा, पर इसका बोध अवश्य है कि हमारे पीछे के नेपथ्य में कुछ हो रहे हैं, कुछ लड़के-लड़कियों में गपशप होने लगे हैं और उन्होंने अपना सर्वस्व त्याग, सब सुख, यश, पद की आकांक्षा भी [illegible] कलम पकड़ने और भीख मांग कर अपना जीवन व्यतीत करने को ठाने हैं। इसलिए पाठक, हम दावा से यह कहेंगे देश अवश्य अंगड़ाई लेगा, भाषा अवश्य निर्मित होगी, जनता अवश्य सुधरेगी। आज की यह अपमानित जनता और उसकी यह अवहेलित हिंदी भी अवश्य उठेगी और हिम-गिरी शृंग पर एक ही छलांग में चढ़ कर सिंह गर्जना करेगी—वसुधैव कुटुम्बम्। नया इतिहासकार यह अवश्य खोजेगा और सर्वत्र पूछता फिरेगा हे पाठक, तुमने उस महायज्ञ में कहां तक योगदान दिया। और तब हे मेरे प्यारे पाठक, तुम क्या जबाब दोगे? इसलिए हे पाठक, हिन्दी को राष्ट्रभाषा पद पर ही नहीं विश्वभाषा पद पर आरूढ़ कराने के प्राच्य भारती के इस यज्ञ में आप अवश्य योगदान करें।

—:o:—

कवियों से

चीन की बर्बरता तथा सीमा-विस्तार की निति के प्रतिक्रिया स्वरूप भारत के जन-जन में राष्ट्रीय जागरण लाने के निमित्त 'हिन्दी-साहित्य-परिषद् की ओर से "आह्वान" (गीत संग्रह) अद्भुत सज-धज के साथ प्रकाशित करने का निर्णय किया गया है। अतः सभी कवियों से अनुरोध है कि वे अपनी दो-दो कविताएँ, जो राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत हैं, पांच-पांच रुपये के साथ अविलम्ब भेजने को कृपा करें। प्रकाशन के बाद प्रत्येक कवि को पांच रुपये की प्रतियां भेज दी जायगी। यह प्रकाशन सर्वथा सहयोग पर ही आधारित है। रचनायें तथा राशि निम्न पते पर आनी चाहिए।

"आह्वान"
हिन्दी साहित्य परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार)

अमरावती प्रकाशन

१ दीपाराधना—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—५)
२ बिखरे हीरे—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—१)
३ हिन्दी आंदोलन—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—२)
४ अनामंत्रित मेहमान—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—१०)
(बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा पुरस्कृत उपन्यास)
५ अनल शलाका—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—२)
६ Mandar Speaks—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—२)
७ लागल झुलनियां के धक्का—रामनारायण सिंह 'मधुर' मूल्य—१.२५
८ खलिल जिब्रान—भरत कुमार शाह मूल्य—५)

प्राप्ति स्थान
अमराबती प्रकाशन
डाकघर—मंदार विद्यापीठ
जिला—(भागलपुर बिहार)

Regd. P. 952

प्राच्य भारती

का

वार्षिक विशेषांक

१५ जनवरी १९६४ को प्रकाशित होगा। ज्ञानी शिल्पियों, विद्वान लेखकों, तपस्वी कवियों और निस्वार्थ सार्वजनिक कार्यकर्ताओं से निवेदन है कि वे अपनी-अपनी रचनाओं से राष्ट्र निर्माण और साहित्य सृजन के हमारे इस महायज्ञ में योगदान दें। हमारे साधन कम हैं, प्रेस छोटा है, अतः काम बहुत पहले ही आरम्भ करना पड़ता है। इसलिये प्रार्थना है कि रचनायें शीघ्र ही निम्नलिखित पते पर भेज दें।

सम्पादक—
प्राच्य भारती कार्यालय
पो०—मन्दार विद्यापीठ
जि०—भागलपुर, बिहार

मन्दार विद्यापीठ प्रेस में आनन्द शंकर माधवन द्वारा मुद्रित एवं हिंदी निर्माण परिषद् द्वारा प्रकाशित

नवम्बर, १९६३

*

हे कवि, अगर तू सचमुच कवि है तो देश के इन अनगिनत दस्युओं पर अग्नि वर्षा करो कि इनकी भीतरी आसुरी वृत्तियां भस्म हो जायँ !

हे शिल्पी, अगर तू सचमुच शिल्पी है तो देश की इन अनगिनत जिन्दी लाशों पर अमृत वर्षा करो कि ये सजीव और सक्रिय होकर इन्द्र तुल्य पराक्रम दर्शावें !

हे लेखक, अगर तू सचमुच लेखक है तो इन एक एक धूर्त और खुदगर्ज राजनीतज्ञों के भीतर से एक एक परम तपस्वी अमिट तेजस्वी, अद्वितीय कूटनीतिज्ञ चाणक्य को प्रकट करके दिखा दे।

हे हिंदी के उदीयमान कवि, शिल्पी और लेखक, तू इस महान युग प्रवर्तक यज्ञ का आज ही पौरोहित्य ग्रहण कर कि यह देश और यहां की जनता संसार का सर्वतोमुखी नेतृत्व करने लग जाय। यहां की संस्कृति को विश्व संस्कृति के रूप में परिणत करने का और यहां की आचार व्यवहार संहिता को विश्व की आचार व्यवहार संहिता बनाने का और यहां की इस देव भाषा हिंदी को विश्व भाषा पद पर आरूढ़ कराने का यही एक मात्र अनुष्ठान है।

मुस्लीम खुदा, क्रिस्तान ईसा और हिन्दू राम से देश को बचाओ भाई

विश्व-विजय करने की ताकत जिस देश में है वही देश जीवित रह सकता है। तुम्हारा वैसा संकल्प ही तुम्हारा बल और पथ-प्रदर्शक है। "हिंदी — विश्व भाषा" इसी को करके दिखाना है, हिन्दी विरोधियों के लिए इससे बढ़कर क्या जबाब है ? उठो प्रिय, अपने उस कलम पर वेदव्यास की फौलादी विभूति दर्शा दो कि संसार चकाचौंध हो जाय। यह चाह और तड़प सदा तुम्हें बेचैन करती रहें। तभी साधना प्रारम्भ होगी। तुम्हारा यह उबाल ही देश को विश्व वन्द्य बना सकेगा।

हिन्दी निर्माण परिषद्

मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर

बिहार

हरिवल्लभ नारायण पारितोषिक

का पांचवां आयोजन

कविता प्रतियोगिता

दिसम्बर १९६३ के अन्त तक होनेवाली तिमाही के लिए परिषद् ने कविता प्रतियोगिता का आयोजन किया है। इस बार दस पुरस्कार दिये जायँगे। ३० दिसम्बर तक रचनायें हमारे पास पहुँच जानी चाहिए। पुरस्कृत रचनाएँ प्राच्य भारती में प्रकाशित की जायँगी। अपुरस्कृत रचनाएँ वापस नहीं की जायँगी।

मंत्री,
हिन्दी निर्माण परिषद्

पो०— मंदार विद्यापीठ,
जि०—भागलपुर, बिहार

सितम्बर में अन्त हुई निबन्ध-प्रतियोगिता का फल निम्न प्रकार है।—

(१) त्रिशूलधारी प्रसाद सिंह, अध्यापक उच्च विद्यालय, नारायणपुर, जि० भागलपुर ५१) रुपये।
(२) गोपालकृष्ण मल्लिक, साधना केन्द्र राजघाट, वाराणसी, ४१) रुपये।
(३) रामचरण महेन्द्र प्राध्यापक, गवर्नमेंट कालेज, कोटा, राजस्थान, ३१) रुपये।
(४) ओम प्रकाश शरण, रिसर्च स्कालर नवनालन्दा महाविहार, नालन्दा, पटना, २१) रुपये।
(५) सुश्री सुरेन्द्र अरोड़ा, इन्द्र प्रस्थ कालेज, दिल्ली, ११) रुपये।

प्राच्य भारती

(हिन्दी निर्माण परिषद् की मासिक मुख पत्रिका)

विहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत

सम्पादक

वार्षिक चन्दा-५) • आनन्द शंकर माधवन • प्रति अंक ५० न० पै०

वर्ष १] नवम्बर—१९६३ [अंक-४

इस अंक में

हिन्दी—विश्वभाषा

वशिष्ठ से बदला लेने की भावना ने ही राजा विश्वामित्र को ऋषि ब दिया। महाराज नन्द से बदला लेने की भावना ने ही तक्षशिला के उस ता स्नातक चाणक्य को मौर्य साम्राज्य के स्थापक, महान् कूटनीतिज्ञ और एक कुश प्रशासक के रूप में परिणत किया। स्पर्धाशील अगर सत्कार्य में हो तो कल्याणप्रद है। जाग्रत आत्मा अपमान बर्दास्त नहीं करेगा। दक्षिण अफ्रिका के प्रवास काल अगर अंग्रेजों द्वारा गांधी जी अपमानित किये न रहते तो शायद उनका जीवन कु और ही रास्ते से आगे बढ़ता। होनहार पुरुष सिंह को अपमान आग जैसे लगेगा। और अपमान से आहत होने पर आत्मा धधक उठता है। पर जिन्दे लाशों तियां क्या, बन्दूक भी असर नहीं करती। इस सत्य का मिशाल भारतवर्ष है।

भीतरी वृत्तियों का ही बाहरी अनुष्ठान परिचय देता है। मानव जीवन विकास या ह्रास उनके इन भीतरी वृतियों पर आश्रित रहता है। जन मानस भीतरी वृतियां ही राष्ट्र की वास्तविक ताकत है। इन भीतरी वृतियों के अनुपात में इस देश की भाषा, लोक सभा, सामाजिकजीवन, साहित्यिक अनुष्ठान, शिक्षण संस्थायें, नियम-कानून आदि निर्मित होगी। इसलिये राष्ट्रनायक अगर वे सचमुच राष्ट्र नायक है तो वे प्रथम जनमानस की इन भीतरी वृत्तियों पर शासन करना चाहेगा। जिसे प्रशासन कहते हैं वह मूलतः यही है। हां, आप मात्र पेशेवर हैं तो कुर्सी पर बैठे फायल उलटाइये।

राष्ट्रनायक, राजनीतिक पुरुष ही हो यह कोई जरूरी नहीं। जन-मनोवृत्ति में विधान, धर्म-प्रवर्तक और साहित्यिक ही अधिक करते हैं। इस दृष्टि से देखने पर में अशोक, हर्ष आदि महान सम्राटों से अधिक बुद्ध, महावीर आदि धर्म प्रवर्तक, वेद-व्यास, वालमीकि, तुलसीदास आदि साहित्यिक अधिक युग प्रवर्तक नजर आयेंगे। राष्ट्र-नायक अगर चाणक्य गांधी सदृश हो तो ठीक है अन्यथा आफत है। इसलिये जनता को अपने इष्ट पुरुष चुनते समय बड़ी सावधानी बरतनी चाहिये।

विश्वभाषा पद पर आज अंग्रेजी आसीन है। संयुक्त राष्ट्र मण्डल की भी प्रमुख भाषा अंग्रेजी है। अंग्रेजी को यह गौरव पूर्ण पद कैसे मिला प्रत्येक हिन्दी प्रेमी इसका अन्वेषण करना चाहिये। इधर हाल में किसी पत्रिका में मैंने एक तस्वीर

देखा था। लण्डन के किसी वीथी से एक पुरुष और एक स्त्री सिर्फ अण्डरवे
पहन कर घूम रहे थे। किसीने अपने धन्धे के विज्ञापन देने के लिये ही ऐसा बेढब क
किया, पर लंडन वालोने उनलोगों पर आंख उठा कर देखा तक नहीं। भारत
किसी शहर में ऐसा कोई घूमता तो क्या नतीजा निकलता सोचा जाय। इस संस
में अंग्रेज ही एक ऐसी जात है जो दूसरों के कार्य में जरा भी दिलचस्पी न
लेते। पर भारत के लोग दूसरों के कार्य में ही रस लेंगे। अंग्रेजों की पोश
नियम कानून, शासन सम्बन्धी व्यवस्थायें सभी आज संसार में बेजोड़ खड़ी हैं।
जाति जैसे सुसंस्कृत, गंभीर और समझदार आज संसार में दूसरा नहीं है।
डीलर और वार्ड उस समाज के गुण का परिचय नहीं, वे उस समाज के मैल का
परिचय थे और उनलोगोंने चन्द्रमा जैसे अपने कलंक को भी दुनिया के सामने खोल दिया
मेरा मतलब यह है कि जातीय जीवन के अनुसार ही उनकी भाषा साहित्यिक संस
समाज आदि का विकास संभव है। अब आप सोचिये हिन्दी का विकास क्यों न
हो रहा है विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में और संसार के विभिन्न संस्थाओं में भा
भारतीय भावात नेतृत्व कर रही है? अगर नहीं तो आप की हिन्दी भी कभ
ऊ नहीं सकेगी। जीवन ही भाषा और साहित्य भी, समाज और सरकार भी
अंग्रेजों को आज जो विश्व व्याप्त प्रभुत्व प्राप्त है उसे अपने लिये हासिल करने के लि
रूस जर्मन फ्रेंच अत्यधिक श्रम कर रहे हैं। इसलिये अंग्रेजी के बाद संसार में इन
लोगों की भाषा का ही अधिक महत्व भी है। क्योंकि इनलोगों का जातीय जीवन
अधिक श्रमशील और स्पर्धाशील है। भारतीय जन-जीवन जबतक सब प्रकार से विश्व
श्रेष्ठ स्थान प्राप्त न करेंगे तबतक हिन्दी विश्व भाषा नहीं बन सकती। प्रत्ये
देश का सार्वजनिक अनुष्ठान जबतक संसार में नेतृत्व न करेंगे और यहां के विवि
क्षेत्रों से ज्ञान लाभ करने के लिये विश्व के प्रत्येक राष्ट्र से लोग यहां आने न लगेंगे तब
तक हिन्दी को विश्व भाषा का पद प्राप्त न होगा, न हम ही सर्व प्रभुत्व सम्पन्न
स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में परिणत होंगे। जातीय जीवन में और जाति की भीतरी
शक्तियों में इस अनुरूप की उदात्त गरिमा लाना ही भाषा प्रभुत्व और राष्ट्रीय ताक
हासिल करने का रहस्य है। और यही कार्य आज हिन्दी साहित्यकारों पर आ
पड़ा है। रायलटी और पारिश्रमिक खोजने से, या डाक्टरेट का फिक्र करने से
यह काम संभव नहीं। सीधी बात यह है कि अगर हिन्दी की प्रतिष्ठा नहीं बढ़ी
तो देश डूबेगा, वह लाख टुकरों में बट जायगा, उसका स्वाभिमान बच नहीं सकता। और
यह प्रतिष्ठा वाली बात राजनीतिज्ञों और राज शासकों द्वारा हासिल किया जा सकेगा यह
आशा भी न कीजिये। किसी साधारण दर्जे के साहित्यिक अनुष्ठान से यह कार्य नहीं
होगा, न इन प्रोफेसर साहित्यिकों से ही यह कार्य होने वाला। हिन्दी की अगली

पीढ़ी से हमें सैकड़ों खलिल जिब्रानों रवीन्द्रनाथों और टल्सटायों को पैदा करना पड़ेगा। जाति से सेकड़ों जे० सी० बोसों और सी० बी० रमनों को जन्म देना होगा। जाति की महत्वाकांक्षा ऐसी हो कि विश्व के प्रत्येक क्षेत्र का केन्द्रीय अनुष्ठान यहां से संचालित हो। विश्व साहित्य में और विश्व वैज्ञानिक अनुसन्धान में हम ही सर्वश्रेष्ठ रहें और सर्वाधिक पुरस्कार देने वाला बने, हमारे समाज में अन्य देश के लोग शांति सुख और उत्कर्ष अनुभव करें। हर देश के लोग हमारे जैसे बनने और अगले जन्म में भारतवर्ष में ही जन्म लेने के लिए लालायित हो जाय! यह सारे कार्य करके दिखाने के लिये ही अरे कवि, तेरा जन्म हुआ है। इसलिये हे कवि, अगर तुम सचमुच कवि हो तो भारत के इन अनगिनत दस्युओं पर अग्निवर्षा करके उनकी उन आसुरी वृत्तियों का संहार करो। हे कवि, अगर तुम सचमुच कवि हो, तो भारत के इन अनगिनत जिन्दे लाशों पर अमृत वर्षा करके उन्हें इन्द्र तुल्य पराक्रमी और यशस्वी बना दो। हे लेखक, अगर तुम सचमुच लेखक हो तो भारत के इन पेशेवर राजनीतिज्ञों से एक-एक चाणक्य को पैदा करके दिखा दो। हे शिल्पी अगर तुम सचमुच शिल्पी हो तो यहां के प्रत्येक नर-नारी को किसी न किसी क्षेत्र में संसार में अद्वितीय करके दिखा दो कि संसार मुग्ध हो जाय। अगर हिन्दी में इस प्रकार के सौ कवि, लेखक और शिल्पी पैदा हों तो हिन्दी राष्ट्र भाषा कौन पूछे विश्व भाषा बन बैठेगी। तब दिल्ली सरकार के सामने गिड़गिड़ाने की जरूरत न पड़ेगी। इसलिये हे हिन्दी के नवोदित युवको और युवतियो अपने में वाल्मीकि को ढूंढ़, वेद व्यास को खोज, कालीदास को प्रकट कर, रवीन्द्रनाथ को दर्शा दो। जबतक तुम यह न कर दिखा देगे तबतक चैन की सांस न लो। आज तुम अपमानित हो, तुम्हारा देश अवहेलित है, तुम्हारी भाषा तिरस्कृत है। अगर इसकी चोट तुम्हें आहत न करती तो निस्सन्देह तू पशु हो, अगर करती है तो निस्सन्देह तू कुछ करने के लिये जन्मे लिये हो और तुम अवश्य सफलता प्राप्त करोगे! राजनीतिज्ञों और धन कुबेरों पर भरोसा न करो। वे धोखेबाज हैं। अपनी शक्ति और तपस्या के बल पर हिन्दी के उस जाज्वल्यमान सुवर्ण पताका को हाथ में लेते हुए मेरु शिखर पर चढ़ जाओ और वहां से सिंह गर्जना करो हिन्दी विश्व भाषा है और हम भारतीय विश्व के प्रत्येक अनुष्ठान का नेतृत्व करेंगे और प्रत्येक क्षेत्र का शासक बनेंगे, आने वाली मानव संस्कृति का हम अग्रदूत बनेंगे। हिन्दी के अपमान करने वाली विपरीत शक्तियों का यही पुरुषोचित उत्तर है। भाई, हमें अपनी कलम लेकर योद्धा जैसे लड़ना ही है और इस कलम के बल पर हमें संसार का नेतृत्व हासिल करना ही है करेंगे या मरेंगे। भारतीय जन मानस को भारत महा समुद्र जैसे अखण्ड अक्षुण्ण अविभाज्य बना देना है। हिन्दी विश्व भाषा है, यह मंत्र हमारे रक्त के प्रत्येक बून्द में हर गरजते रहें। हम प्रत्येक स्त्री-पुरुष, महात्मा और तेजस्विता का परिचय दें।

अनादर—अपने ही घर में, अपने ही लोगों द्वारा

प्राच्य भारती का एक आदरणीय पाठक लिखते हैं—"माधवन साहब, आपके कलम नहीं, कुल्हाड़ी है और आपका एक-एक प्रहार हम पाठकों के हृदय चोट पहुँचाते हैं और हम तिलमिला उठते हैं, रंज होकर आपको उलटा-कहने लगते हैं यद्यपि हम जानते हैं आप एक सीधा-सादा सात्विक पुरुष मुझे इस पत्र ने कष्ट पहुँचाया और मेरा दिल दुखने लगा। आलोचना, व्यंग्य आदि का असर राजनीतिज्ञों पर जरा भी नहीं पड़ता, क्योंकि उनके फौलाद के हैं, पर साहित्यकारों के दिल को चोट पहुँचाते हैं क्योंकि वे दिल कमर कोमल होते हैं। मैं यह दावा नहीं करता कि मैं साहित्यकार हूँ, पर यह ऐब या कमजोरी ही कहिये, मामूली आलोचना भी मुझे विदीर्ण करने है और तब मैं कई दिनों तक कुछ लिख नहीं पाता हूँ। और जैसे सुप्रसिद्ध सन्त मुर्तजा अली ने कहा—"इस दिल में लाखों छेद हैं और सभी समालोचना परिहास, गाली आदि से उत्पन्न हैं।" एक सम्माननीय पाठक ने दिल्ली से लिखा था—"माधवन साहब, मैं आप से घृणा करता हूँ क्योंकि आखिर मैं हूँ न!" तो निष्कर्ष यह कि आलोचना व्यंग्य आदि किसी को भी कष्ट देगा अगर उनका दिल राजनीतिक नहीं है तो। और अभिनन्दन अनुमोदन आदि किसी को भी आप्लावित कर देगा, राजनीतिज्ञों को भी! यहां निवेदन ही है कि चोट पहुँचाने के उद्देश्य से मैं कभी कुछ नहीं लिखता हूँ। पर भारतीय साहित्य के अध्ययन के फलस्वरूप जब मुझे यह ज्ञान आया कि भारत हम आदि जैसे सिर्फ एक भूभाग नहीं, वह एक ऐसा राष्ट्र है जिसमें संपूर्ण समाविष्ट है और उसकी भाषा, जो भी वह हो, विश्वभाषा है, तो एकाएक मेरा ऊँचा उठ गया, छाती चौड़ी हो गयी और मैं उठ कर अपने कमरे में अधीरता टहलते हुए कहता रहा—"भारतीयो! समूचा विश्व ही तेरा राष्ट्र है, तेरी भाषा ही भाषा बनने की अधिकारिणी है और उस हिसाब से तुम अपना चारित्र्य, विचारगति, क्रम, जीवन-प्रणाली, प्रतिभा, शक्ति, सौन्दर्य, संस्कृति सभी का गठन करो। विजय के लिए अंग्रेज निकले, इसलिए उनकी संस्कृति, आचार-विचार और संसार में फैलो और तदनुरूप उनके जीवन भी विकसित हुए। कार्य की लघुता-महत्ता के अनुसार जाति का उत्थान-पतन होता है। संसार के प्रायः सभी उन्नतशील आज किसी न किसी प्रकार से विश्व विजय ही चाह रहा है। जिनका जैसा प्रयत्न उनकी तदनुसार शक्ति बढ़ी। पर वास्तव में जो इसके अधिकारी पात्र हैं वे जमीन पतित पशु जैसे चार पैर पर चलते हैं, उससे भी पतित कीड़े-मकोड़े जैसे अपने पेट

केवल रेंगते हैं। हम भारतीयों का जीवन इससे बढ़कर क्या है? हम जब अंग्रेजी पोशाक में अंग्रेजी बोलते हुए अपने देश में और बाहरी देशों में भी घूमते हैं तो सचमुच संसार हमें देख-देख भीतर-भीतर यह कह कर हँस रहा है—देखो इन अस्तित्व विहीनों को! एक बार विनोबा जी मन्दार विद्यापीठ आये। उनके साथ एक इटालियन और अंग्रेज भी थे। सबेरे सब को दही-चूरा जलपान के लिए दिया गया। दही-चूरा केला मैथिल ब्राह्मणों का वह अमृतोपम भोज्य वस्तु, तो उन बिदेशी दोनों को अपने सामने दही-चूड़ा को देख विवशता से चुपचाप बैठा देख मुझे दया आयी और मैंने पूछा कितने दिनों से भूखें हैं बन्धु? वे फौरन समझ गये और कहने लगे—"माधवन; तुम तो मद्रासी हो, कम से कम जरा कोफी ही सही, पिला दो। मैंने फौरन कुछ अण्डों की व्यवस्था की और उन्हें अलग ले जाकर आमलेट पावरोटी कौफी आदि से सत्कार करने लगा। वे दोनों भूखे गृध्र जैसे उस पर टूट पड़े। बाद उन्होंने मुझसे मित्रता स्थापित की और नाना तरह की गप्पें करने लगे। फ्रांको पूछने लगा—"माधवन साहब, तुम्हारे देश के विश्वविद्यालयों में (Shakespeare) क्यों पढ़ाया जा रहा है? उपनिषद्, कालिदास आदि क्यों नहीं? तुम्हारे देश वालों को जुलियस सीजर और क्लियोपाटरा से इतना प्रेम और शकुन्तला से विरक्ति क्यों? भाई, तुमलोगों की संपूर्ण हीनावस्था का कारण यही है। जब तक तुम अपने ही देश की खूबियों को समझने नहीं लगोगे जो सचमुच अब तक भी बेजोड़ हैं, तुमलोगों का उद्धार नहीं होने का।

मैंने अंग्रेजी के प्राय सभी उपन्यास पढ़ा है, फ्रेंच, रूसी आदि भाषाओं के भी सुप्रसिद्ध उपन्यास पढ़ चुका हूँ। मैं नहीं समझता वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यास सर वाल्टर स्काट के उपन्यासों से किसी भी तरह से कम है। मृगनयनी निस्सन्देह केनिलवर्थ या आइवानहो आदि से श्रेष्ठ है झांसी की रानी अद्भुत रचना है। आचार्य चतुरसेन शास्त्री का वैशाली का नगरवधु संसार के किसी भी विश्वविख्यात उपन्यास के टक्कर का है। चतुरसेन जी अद्भुत प्रतिभा-सम्पन्न कलाकार थे। जैनेन्द्र कुमार की परख बिलकुल कविता है और निस्सन्देह एक अतुलनीय रचना है। प्रेमचन्द जो हिन्दी गद्य के पिता थे और हिन्दी उपन्यासकारों में सम्राट थे किस दृष्टि से टालस्टाय, ह्यूगो, गोर्की, रोमांरोलां आदि से कम हैं? रंगभूमि अच्छा है या वार एण्ड पीस? गोदान अच्छा है या जीन क्रिस्टफो? बात यह है पाठक कि आप को भी आंखें नहीं, मस्तिष्क नहीं, अपने बेटे की खूबी परखने की शक्ति नहीं, अपनी पत्नी की महानता अनुभव करने की हृदय-विशालता और मस्तिष्क-प्रखरता नहीं। हिन्दी के महान निर्माता इन प्रातस्मरणीय कलाकारों की कृतियां अगर अंग्रेजी में अनूदित हुई रहती तो वे भी टालस्टाय रोमांरोलां ह्यूगो आदि से कम प्रसिद्ध न हुए रहते। वे

...लेखक जिन्दगी भर यश और प्रतिष्ठा से च्युत होकर सदा तिरस्कृत और ...लित रहे हैं। स्वयं गांधी जी भी हिन्दी साहित्यकारों को पर्याप्त सम्मान ...किये। इंगलैंड में जार्ज बर्नाडशा जनता का और राजनीतिज्ञों का भी दुलारा ...है। जानसन आज भी इंगलैंड में लोकप्रिय है। कारलाइल को अंग्रेज अंग्रेजी ...का पिता समझते हैं। पर भारत में किस साहित्यकार को यह सम्मान ...हुआ है? यह बात नहीं यहां के साहित्यकार इसके योग्य नहीं थे, यही बात है कि ...ही उनके योग्य नहीं थे। रवीन्द्र नाथ को इज्जत मिली तो वह आप के चलते ...हुआ। अभी भी देश में जनमानस राजनीतिज्ञों की ही जय बोलन...ते हैं। अंग्रेजी में भाषण देने वालों को ही इस देश में प्रतिष्ठा है। क्या ...राधाकृष्णन के स्थान पर कोई हिन्दी साहित्यकार को या किसी भी भारतीय ...हित्यकार को आरूढ़ करायेंगे? अगर नहीं, तो मैं जानना चाहता हूँ क्यों ...? आप कहेंगे हिन्दी साहित्यकार विश्व-विख्यात नहीं, अंग्रेजी में धारा प्रवाह ...देना जानते नहीं! हाय रे गरीब! पद ही बड़े हैं बन्धु। भारतीय राष्ट्र... ...या प्रधान मंत्री के पद पर जो भी आरूढ़ होंगे वे संसार में विख्यात होंगे ...अंग्रेजी वाली बात। क्या माउ-से-तुंग अंग्रेजी जानते? क्या क्रुश्चेव अंग्रेज... ...बल पर संसार में विख्यात हैं? और नासर? बात यह है कि पतित देश... ...मनोवृत्तियां भी तदनुकूल हैं! आज भी हिन्दी में ऐसे-ऐसे महान विभूतियां हैं जिन... ...सम्मान पर्याप्त मात्रा में आप नहीं कर रहे हैं। उनको सम्मान न दे कर ...स्वयं सम्मान से च्युत हो रहे हैं। सम्मान देना ही सम्मान पाने का म... ...या है। क्या डाक्टर हजारी प्रसाद द्विवेदी, डाक्टर लक्ष्मी नारायण सुधांशु, डा... ...शरण उपाध्याय आदि लेखक किसी प्रांत के गवर्नर या मुख्य मंत्री बनने ...नहीं? योग्य और पूज्य को पहचानने की शक्ति ही आप में नहीं। चालाकी ...और धूर्तवाद से पद प्राप्त करने वाले होशियारों की जय बोलना ही आप जानते हैं। ...कितना लज्जा-जनक आप की यह मनोदशा है! हिन्दुस्तान के विश्व-विद्यालयों ...और राम कृष्ण मिशन के विभिन्न शाखाओं में ऐसे-ऐसे विलक्षण व्यक्ति विशेष प... ...हैं जिन से आप को अभी मुलाकात नहीं। भूगर्भ के हीरे जैसे वे भी आज सर्व... ...जन समक्ष दृष्टिगोचर नहीं। क्या राम कृष्ण मिशन के रंगनाथानन्द के अंग्रेजी भाषण ...आप सुने हैं? विद्वत्ता, त्याग, गुण आदि में वे किस कांग्रेसी नेता से कम हैं? क्यों ...आप ऐसे साधु पुरुषों को भारत के राष्ट्रपति पद के लिये आमंत्रण नहीं करते! ...अभागों को दौलत मिलने से भी फायदा नहीं। बिहार में बहुत आदमी थे। पर ...छोटानागपुर के खनिज पदार्थों से फायदा उठाने के लिये बम्बई के फारसी जमशे... ...जी टाटा आये और उन्हीं के परिश्रम और दूर-दृष्टि के फलस्वरूप जमशेदपुर कारखान...

हुआ तो आप भी उनके यहां नौकरी करने पहुँचे। यही तो आप की लज्जत भारत को एक सूत्र में अंग्रेजों ने बांधा, चाहे वह बल से कहिये या धूर्तता या नीति से आप भारत की अखण्डता पर भाषण ही दे सके। आपकी और नीति का यह परिचय निकला कि यह अनादिकाल का भारतवर्ष दो में बट गया और एक दूसरे का नाश करने पर अभी भी आमादा हैं। यही आप की ... है यह अगर कहे तो आप कहने लगते हैं सम्पादक जी, आप के हाथ ... नहीं कुल्हाड़ी है। साहब, कुल्हाड़ी हाथ में उठाने का किसी को भी शौक ... सार बात यही है कि आप सुधरिये, वस्तुस्थिति समझिये और कुछ कार्य सीखिये। बैठ-बैठ कर दोषान्वेषण करना कोई सेवा नहीं, कोई कार्य भी नहीं। जी संस्कृति की सबसे बड़ी खूबी यह है कि वे परचर्चा नहीं करते हैं परदोष ढूंढ़ते। मगर आप की सबसे बड़ी खूबी यही है, आप यही करेंगे। अपने जीवन क्या गुजर रहे है, स्वयं आप क्या रहे हैं, यह आप देखेंगे नहीं, नेहरू को समझाने तैयार। के मामूली गुरु जी भी आज नेहरू को समझाने वाले हैं!

इंगलैंड में एक घोड़ा दौड़ाने वाला था। उन्होंने जीवन भर यही किया था और इस में उन्हें उस्तादी हासिल थी। चर्चिल साहब जब प्रधान मंत्री थे तो उन्हें बुलाकर नैटहुड दी, यानी सर पदवी से विभूषित किया। पर इस देश में, सार्वजनिक ...न, चाहे वह सरकारी स्तर का हो या सामाजिक स्तर का, राजनीतिज्ञों को प्राप्त होता है। हिन्दी के गद्य और पद्य दोनों में सर्वश्रेष्ठ स्थान आज महादेवी का है। उन्हें आज तक कोई भी विश्वविद्यालय एक डाक्टरेट से विभूषित नहीं, न सुमित्रानन्दन पन्त को ही। राजा साहब राधिकारमण सिंह हिंदी के स्रष्टाओं ... उनकी गद्यशैली अनुपम है। शैली का वे ही प्रणेता रहे हैं। उन्हें किसी ...श्वविद्यालय आज तक डाक्टरेट नहीं दिया। रचनात्मक कार्य-क्रम के आदि ...न लक्ष्मी बाबू को किसी भी विश्वविद्यालय ने डाक्टरेट नहीं दी और वे समय ... [illegible] सम्मान के अधिकारी को सम्मान मिलना चाहिए, ना उनका हनन करना है। विश्वविद्यालयों को हिंदी साहित्यकारों को प्रतिष्ठा करने में शरम आती है! क्यों शरम आती है? हम जानते हैं। हम इस ...त्ति के खिलाफ ही नहीं, इसे सख्त घृणा भी करते हैं। तो पाठक, सुना जाय, हिन्दी की मौजूदा पीढ़ी के लोग हिन्दी के अतीत के इतिहास में दिलचस्प नहीं भविष्य के इतिहास निर्माण करने में ही दिलचस्प हैं। हम यह जान गये हैं कि ...ठा भीख मांगने से नहीं प्राप्त होती, उसे लड़कर, संघर्ष करके हासिल करनी पड़ती इसलिए प्राच्य भारती के सम्पादक को यह ललकार है, हे हिंदी के अपमानित

शेष पृष्ठ ३७ पर

तुलसी का "सुराज"

डा० गोपीनाथ तिवारी
सत्य-सदन, विन्ध्यवासिनी नगर, गोरखपुर (उ० प्र०)

स्वराज्य तो आ गया परन्तु अभी सुराज नहीं आया है। अब इमें "सुराज" और राम लाना है। तुलसी के "सुराज" "रामराज्य" में कोई अन्तर नहीं। ने "सुराज" की प्रशंसा सर्वत्र की देश में सुख समृद्धि "सुराज" से होती है। सुराज में ही प्रजा निरन्तर एवं सुख पाती है और सुराज से ही कल्याण है। इस सुराज में सज्जन पाते हैं और दुष्ट दुख भोगते हैं। का आदर्श होना भी यही चाहिए सज्जन सुख पावें और दुर्जन दुख। एक ओर राज्य अच्छे आदमियों को पूर्वक जीविका दे तो दुर्जनों से भी। तुलसी दास जी कहते हैं—

"पाय सुराज सुदेस सुखारी"
"सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा"
"जनु सुराज मंगल चहुं ओरा"

इस सुख-समृद्धि और मंगल मय "सुराज" प्रजा वृद्धि पाती ही है—

बढ़ै प्रजा जिमि पाई सुराजा।

ऐसे "सुराज" में दीन-दरिद्र नहीं सकता, कोई भूखा न भटकेगा। पेट खाना तो मिलेगा ही।

मुदित क्षुधित जनु पाय सुराजू

हां दुखी होने वाले हैं केवल दुर्जन।

जिमि सुराज खल उद्यम गयऊ

रामराज्य इसी "सुराज" का उदाहरण है। सुराज में वर्णित सुख-सम्पदा राम की प्रजा को पूर्ण रूप से प्राप्त है।

रामराज्य कर सुख सम्पदा। बरनि न सकहिं फनीस सारदा"

"सहस सेष नहिं कहि सकहिं जहं नृप राम विराज"

राम वे ही कार्य करते थे जिनसे प्रजा सुख-समृद्धि प्राप्त करे।

जेहि विधि सुखी होहिं पुर लोगा। करहिं कृपा निधि सोई संजोगा।

परिणाम हुआ—

चलहिं सदा पावहिं सुखहिं नहिं भय शोक न रोग।

उनकी प्रजा कल्याणमय है। यहां तक कि न वहां अल्प मृत्यु है, न रोग।

अल्प मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा। सब सुन्दर सब विरुज सरीरा

राम के इसी सुराज में न कोई दीन है न दरिद्र—

नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना।

जब दीन-दरिद्र नहीं तो भूखा कोई सोयेगा क्यों? राम के सुराज में यदि कोई जंगल

भी पहुंच जायेगा तो भूखा न रहेगा
ां भी—

लता विटप मागें मधु चवहीं ।
फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन

ी प्रकार पृथ्वी खेती से सम्पन्न है,

ससि सम्पन्न सदा रह धरनी ।

न राजा राम के "सुराज" में दुखो रहा पापी, चोर, जुआरी एवं वह जो ंडा है, दूसरों से जला है ।

अघ उलूक जहां-तहां लुकाने ।
मत्सर मान मोह मद चोरा
इन्हकर हुनर न कविनिग हुं ओरा

स प्रकार हमने देखा कि तुलसो के "सुराज समी विशेषताएं सुख-समृद्धि, कल्याण, था-हीनता, एवं दुष्टों की अवनति राम-ाज्य में पाई जाती है । राम का राज्य राज्य ही था ।

इस सुराज का अवलम्ब तुलसीदास राजा ो मानते हैं । भारतवर्ष में 'यथा राजा था प्रजा" वाला दृष्टिकोण रहा है । भारत ो नहीं सर्वत्र बड़ों के पीछे छोटे चलते हैं । स सुराज को लानेवाला है सुराजा । सुराजा ही है जो नोति निपुण है । परन्तु इस ीति का अर्थ अर्थनीति नहीं, धर्म नीति । धर्म नीति को पालने वाला केवल देखाने के लिए नीति का पालन करता है, जब कि धर्म नीति पालक हृदय से निभाता है । नीति निपुण राजा का राज्य सुराज है । उसके राज्य में से दुष्टों का पलायन उसी प्रकार होता है जैसे शरद ऋतु में कीचड़ गायब हो जाती है । जो ाजा नोति निपुण नहीं होगा उसकी प्रजा कष्ट पायेगी । ऐसा राजा शोचनीय है,

पंकज केतु सोह अस धरनी । नीति निपुन नृप की जस करनी"

"सोचिय नृपति जो नीति न जाना जेहिं न प्रजा प्रिय प्रान समाना"

नीति युक्त राजा अग्नि की तरह तप कर दुष्टों को जलाता है । वह सूर्य मित्र बनकर प्रजा को सुख पहुंचाता है । वह माली की नाई प्रजा की देख भाल करता है । परन्तु ऐसे "सुराजा" कलियुग में कम ही होंगे ।

माली भानु कृसानु सम नीति निपुन महिपाल
प्रजा भाग बस होहिंगे कबहुँ-कबहुँ कलिकाल

यह नीति क्या है ? तुलसीदास जी ने ऐसी दो नीतियों की ओर संकेत किया है । यदि कोई भी राजा इन दोनों नीतियों को अपनायेगा, वह "सुराज" स्थापित कर सकेगा, प्रजा को सुख दे सकेगा ।

पहिली है प्रजा से कर लेकर उसे वापिस देना । जो राजा सीधे प्रजा से धन ले और प्रजा को उस पर संदेह हो जाय कि यह हम पर पूरा खर्च नहीं करता है तो संघर्ष अवश्य होगा, असंतोष की आग में राजा-प्रजा का सुख जल जायेगा । संसार में सब झगड़ा धन का है । तुलसी दास जी एक सुन्दर नीति बताते हैं । यदि राजा इसका पालन करे तो प्रजा उस राजा पर प्राण न्योछावर करेगी । वह प्रजा से सीधे कर न ले । उस राजा के राज्य

सब अप्रत्यक्ष कर लेंगे। प्रत्यक्ष करों प्रजा की जेब से रुपया उसकी आंखों सामने जाता है और खलता है। जब मनुष्य दो गज खरीदे कपड़े पर बिक्री देता है, ४०० रु० जो पसीने बहाकर ये हैं उस पर 'आयकर' देता है, भूप- में खून कालाकर फसल उगाता है कृषिकर के रूप में रुपया देता है उसे झुंझलाहट होती है, उसका दिल जलता है पर वह देता है क्योंकि देना पड़ता है। परन्तु यदि "कर" उसकी आखों सामने न लिया जाय और उसकी सुख सुविधाओं पर रुपया व्यय होता दिखाई दे तो वह राजा के गुनगाने में सबसे आगे होगा। उससे कर तो लिया जाता है पर आंखों के पीछे पर्दे की ओट में। विदेशी वस्तुओं पर बन्दरगाह में उतरते ही कर लग जाता है, ग्राहक पर उसका भार तो है पर सामने नहीं। यदि बिक्री पर सीधे, ग्राहक रुपया न दे और जिस कारखाने से माल चला है वहीं कर ले लिया जाय तो ग्राहक न जानेगा कि रुपया उससे ले लिया गया है। ऐसे उपायों से उगाहा रुपया अप्रत्यक्ष कर है। जनता को अनुभव नहीं होता कि उससे कर लिया जा रहा है। जब जनता के लिए जलकल बन रही है, उसकी सुविधा के लिए पुल बन रहे हैं, उसकी शिक्षा का उचित प्रबन्ध हो रहा है, उसकी रक्षा की सुन्दर व्यवस्था है, तो वह प्रसन्न होकर उस राज्य की सराहना करता है। ऐसा राज सुराज है: ऐसा राजा सूर्य के समान हितकारी है। सूर्य अपने हाथों से जल खींचता है। पर किसे पता चलता है? परन्तु जब वह जल बरसाता है तो सब उससे लाभ उठा नाच उठते हैं। इसीलिए तुलसीदास जी ने कहा—

बरखत हरखत लोग सब कर ख
लखत न कोय
तुलसी भूपति भानु सम प्रजा भागबस हो

सूर्य "सुराजा" है। वह पानी खींचने परिश्रम करता है। फिर जगत को ज देकर उसकी पालना करता है। स्वयं ही उस जल को नहीं पी जाता है। इस नीति को दूसरे रूप में गोसाईं जी व्यक्त किया है—

मुखिया मुख सो चाहिए खान पा
को एक
पालै पोसै सकल अंग तुलसी सहित विवेक

राजा मुख के समान है। खाने के चबा में वह बड़ा परिश्रम करता है, चक्की पीसत है। कष्ट स्वयं सह रहा है। परन्तु उस खाने से समस्त शरीरांगों को पालता है, पुष्ट करता है। अंगों को खाना देक खाने से बने रक्त को देकर, पुष्ट करत है। देने में पक्षपात नहीं, अन्याय नहीं जिसको जितना चाहिए उतना देता है कष्ट स्वयं सहता है, लाभ पहुंचाता प्रजा को।

दोनों दोहों में राजा के लिए द शब्द प्रयुक्त हैं, भूपति, मुखिया। उ काल में राजा भूपति था, सब में मुख था। आज के परिवर्तित युग में भूप है राष्ट्रपति या प्रधान-मंत्री और वही

गया, सब में मुख्य !

दूसरी नीति भी प्रजा को संतुष्ट एवं नन्दित करनेवाली है। राजा प्रजा का नहीं बन्द करता। किसी के बोलने वह उसे जेल नहीं ठूस देता। इस राज" में भाषण स्वतंत्रता है। प्रजा वान् राम के सुराज में राजा की नीति की लोचना कर सकती थी। वह राज्य-नीति गुण दोष बता सकती थी। प्रजा के द्धमान् प्रतिनिधि राजा को उसकी नीति त्रुटियां बता सकते थे। परन्तु एक रा थी। यह गुण दोष विवेचन नीति धारण का था, कार्य का नहीं। जबतक जा नीति बता रहा है तभी तक वे के गुण दोष बता सकते थे। जहां कार्य ने लगा फिर कोई कुछ न कह सकेगा। र्य होते समय भी यदि राजा सुनता जाय कभी सम्यक् प्रकार से कार्य न कर रगा। उसके राज्य में सुव्यवस्था न जम केगी। इसी नीति को तुलसीदास ने गवान् राम के मुख से कहलाया है।

जों अनीति कछु भाखौं भाई। तो हि बरजहु भय बिसराई।

बड़ी उपादेय नीति है। राम कहते हैं— यदि मैं कुछ अनीति कहूँ तो मुझे निर्भय हो रोक दो। इतनी स्वतंत्रता होनी चाहिए सुराज में। यह स्वतंत्रता असीम नहीं, इसको एक सीमा है। स्वतंत्रता सीमा से बाहर बहुत दुखदाई होती है। प्रजा के प्रतिनिधि गुरु, द्विज, मुनि राम को रोक दें यदि वे अनीति कह रहे हों। प्रजा अनीति की आलोचना करे, दोष बताये। परन्तु यह नहीं कि अच्छे कामों में भी दोष देखे और व्यर्थ में मनुष्य नुक्ता चीनी करते..फिरें। हां, जब अनीति कही जा रही है तो दोष बतायें। इसमें "भाखौं" शब्द पर बल है। राम कहते हैं—जब मैं नीति बता रहा हूँ और वह अनीति मालूम हो तो मुझे रोक दो। परन्तु जब एक बार मौन हो नीति को स्वीकार कर लिया तो कार्य के समय, प्रबन्ध के समय कुछ नहीं कहना है।

ये दो नीतियां जहां बरती जायेंगी वहां सुराज होगा, वहां प्रजा फूलेगी, फलेगी और दूध पूतों नहायेगी, इसमें क्या सन्देह है।

स्वर्गलोक में प्यार नहीं, सुख बहुत है। मर्त्य लोक में सुख नहीं, प्यार बहुत। देवताओं ने सोचा - लात मारो इस सुख को। हम प्यार चाहते हैं, आंसू बहाने तैयार हैं। और तब से मर्त्य लोक में महामानवों का जन्म होने लगा।

आनन्द शंकर माधवन

चतुर्वेदीजी की 'मानस मूर्च्छना'

शिवनन्दन प्रसाद
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय

गतांक से आगे

नीचे की पंक्तियां जितनी सशक्त हो सकी हैं, जैसे ये 'प्रसाद' की कलम की हों, जैसे समस्त काव्य का यही अमृत-संदेश हो।

रूप-चित्रण में हमने पहले ही देखा है कि स्थल-स्थल पर मादकता छलकी-छलकी आयी है। मतलब यह कि वस्तुगत रूप का तटस्थ चित्रण कम हुआ, रूप-जन्य मानसिक आनन्द की अनुभूति एवं ऐंद्रीय उपभोग की अनुभूति के बड़े ही मनोहारी चित्र यहां प्रस्तुत मिलेंगे।

घूंघट-विहीन छवि उनकी
यदि देख स्वयं राका ले
शशि चूर-चूर हो जाए
नख देख नखत विष खा लें

'शशि' 'नखत' जैसे प्रसिद्ध उपमान का निरादर देख हम 'प्रतीप' अलंकार तो मान सकते हैं पर इसमें रूप का आतिशय्य जो ध्वनित हो रहा है, वह अलंकार की पकड़ से बहुत अधिक है। और ऐसी छवि एक नहीं अनेक हैं।

इस रूप-चित्रण में प्रकृति का जो प्रस्तुत और अप्रस्तुत रूप-विधान हुआ है, वह सुन्दर बन पड़ा है।

'इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्रः प्रकेतो अजनिष्टविभ्वा' तथा 'युवतिः शुक्रवासाः विश्वस्येशाना पार्थिवस्य वस्व उषो अप्येह सुभगे व्युच्छ' आदि ऋग्वेद सूक्तों में उषा के प्रति जो अगाध निष्ठ श्रद्धा और तन्मयकारी सम्मोहन उद्भासि हो रहा है; सम्भवतः उसका प्राणोन्मेषक स्पर्श कवि को भी छू गया है। जभी उषा की अनन्त रूप-माधुरी पर कवि सहज मौग्ध्य सर्वत्र फूट पड़ा है। उषा आधी शक्ति है, वही अनन्त रूपों में रू यित होकर विभिन्न नामों से पुक जाती है।

जिसका स्वरूप संध्या है
पर रूप निशा कहलाता
क्यों वही स्वयं ले आती
राकेश - कुसुम कुम्हलाता
+ × ×
जीर्ण मलिन परिधान फेंक
तब निशा उषा हो जाती
जब किसी अरुण से आलोकित
संसार सुनहला पाती है

नीली शय्या पर से घन-पट अंग लेनेवाली' 'विन्ध्य-अङ्क में शोण-धार, अ में—कनक-शलाका सी, वारिद-मण्डल बिजली सी, नभ-तल में स्वर्ण-वलाका उषा जब अलि-कुल सी काली अलकें केसर-कर से सुलझाती' हुई—

लहरों को देती मृदु सिहरन
लतिकाओं को आलिंगन दे
दर-भिन्न मुखों पर कलियों के
पिघले सोने के चुम्बन दे
उच्छ्वास - सुरभि मलयानिल को
परभृत को मादक तानें दे
अलि - नूपुर दे पद्मिनियों को
कलियों को मृदु मुसुकानें दे
आवर्त - पात्र में लहरों को
माणिक की पिघली हाला दे
नन्ही सी दूब - दुलहियों को
विद्रुम की मोती - माला दे,—

चल पड़ती है तब समस्त प्रकृति उसका [ऋ]ंगार करती है। 'सन्ध्या सिरहाने बैठ [क]र फूलों से गूँथा करती है' बन्धूक-राग ले [दु]पहरी पद-तल रंग जाया करती है' [पी]यूष-पूर्ण ले इन्दु-कलश रजनी नहलाया [कर]ती है' क्योंकि यह उषा—

पीकर घन-तम का कालकूट
हँस हेम-सृष्टि कर देती है
लेकर वारिज-वन का विषाद
आनन्द-वृष्टि कर देती है

उषा की अनन्त माधुरी के प्रति कवि का [य]ा तन्मयकारी संमोहन है, उसका कारण है [उष]ा में कवि का आत्म-निलय—

यह उषा नहीं, ज्वालाएँ
जलते मेरे जीवन की
जल रही मेघ-सी काया
मेरे ही नवयौवन की

किन्तु ज्वालाओं की प्रखरता और [ता]प, स्वधा और स्वाहा यदि सुकुमार होतीं

तो सम्भवतः भाव अधिक मनोज्ञ और प्रभ-विष्णु होता। फिर दूसरी बात यह कि उषा के इस विराट-गति-चित्रण में कुछ महाकाव्यात्मक गरिमा और विस्तार आ गया है। प्रगीत-मुक्तक की कोमल और सरल तरुणाई के साथ इस प्रौढ़ विन्यास का गँठ-बन्धन कैसा तो लगता है।

प्रकृति के रम्य चित्रणों के माध्यम से जीवन और जीवन के आनुषंगिक व्यापारों को सफलता से ध्वनित किया गया है। समासोक्तियों के सहारे अनेक भावों तथ्यों की व्यंजना ऊपर सकेतित हो चुकी है। और क्योंकि ध्वनन का माध्यम समासोक्तियां हैं; अतः प्रकृति का स्वरूप कुंठित नहीं हुआ है। किन्तु यह बात ठीक है कि प्रकृति मुख्यतः अपने रम्य रूप में ही आयी है; उसके रुद्र, भयंकर पक्ष की शक्तिमत्ता की अथवा उसमें निहित कर्म-सौन्दर्य की निवृति नहीं हो सकी है, फिर भी मानव का जो कर्म जगत आज है, उसकी व्यंजना स्पष्ट हुई है। मानव-सहज हाव-भाव यहां देखिए—

रवि के अनुरक्त करों से
छू गई, तनिक सकुचाई
झुक ताल-सलिल में संध्या
लखती कपोल - अरुणायी

सन्ध्या नायिका का प्रथम स्पर्श से प्राप्त व्रीड़ा, मद और हर्ष की भाव-सन्धि स्पष्ट है। संसार पर कितना क्रूर व्यंग्य यहां है— संध्या की बिखरी मणियों से
शृंगार निशा का होता है
उषा की झरती पलकों का

निर्झर प्रसून-मुख धोता है
संपन्न जगत कंकालों पर
निर्माण सौध का करता है
गहरे अभाव के गर्तों को
कंगालों से ही भरता है
× × ×
उल्का-मुख असुर अभावों के
जीवन-निशीथ को घेर रहे
दल और अतृप्त पिशाचों के
हैं तिल मानव के पैर रहे
मंगल समष्टि को ये तुंदिल
मुट्ठी भर दानव घेरे हैं
संपाति दृष्टि इनकी पड़ती
देवों के जहां बसेरे हैं

दल-बन्दियां और गुट-बन्दियां, अभाव असुर और अतृप्ति के पिशाच, मुट्ठी भर दानवों की बँधी हुई मुट्ठियां—ये ही जीवन-जगत की मंगल-समष्टि को ...न-विषण्ण किये हैं। समृद्धि को सौध ...ओं की अस्थियों पर निर्मित होता ...और जो समृद्ध हो जाता है वह अपनी ...ना को कंचन से ढँक लेता, विरूपताओं-...तियों को दुर्ललित लालसा के विष को ...न से धर्म-त्याग-दान आदि के पाखण्ड ...ढँक लेता है—

...सी तरह नारी की सार्थकता समर्पण ...है—

यदि सोम सुधा-रस की कलशी
...लि करती अलि-समान न हो
...रि भी क्या? सागर में जिसको
...य होने का अरमान न हो।—

...नीचे के तीन चित्रों में भी नारी पर जो व्यंग्य है, उसे देखिए—

संभ्रान्त शिलोच्चय से सरिजो
अपनी नीची ले राह चुकी
शतशः पद लिपट शिलाओं के
रो के भी रोके कहीं रुकी?
जो झील-वापिका-सरसी सी
गिरि कर सम्मान बँचा लेतीं
वे भी तो कुल वैभव से ही
घनश्याम-अम्बुनिधि पा लेतीं
गिरि को चुपके चंचल सरिता
दे गलबाहीं जो भाग चलीं
लेकर उन्नत विधु का प्रदीप
नग बोल उठा "निम्नगा" चली

किन्तु ऐसा लगता है कि जैसे कवि स्वयं गिरि हो, सरिता प्रेमिका हो, आकांक्षा यह थी कि वह सरिता बनकर "निम्नगा" न होती; यदि वह झील बन जाती तो वह गिरि का सम्मान बँचा लेती, घनश्याम अम्बुनिधि तो कुल-वैभव से मिलता ही।

तो समस्त काव्य विप्रलंभ-काव्य ठहरता है। लेकिन विप्रलंभ का हेतु तनिक दुर्बल सा प्रतीत होता है। यदि प्रेम उत्कट होता तो दुर्लंघ्य-अलध्य को भी लंघ्य बनाया जा सकता था। लेकिन एक ओर तरुणायी, सो भी अडोल है तो दूसरी ओर धर्म-भीरु विवेक उसे भी अडिग-अडोल ही कह लें— समाज बन्धन विवाह-बन्धन आदि प्रेम के रेशमी-बन्धन और हृदय संग्रन्थन के लिए कभी बन्धन नहीं हुए। पर रोमानी साहसिकता की कमी कहिए अथवा प्रौढ़ वयस की धर्म-भीरु नीति-निष्ठा का आधिक्य कहिए, विवेक लक्ष्मण-रेखा को लांघना नहीं

चाहता। अथवा यों कहें कि जान-बूझ कर उसे "वर्जित प्रदेश" मानकर कवि उसे विह्वल आकर्षण के सम्मोहन का शाश्वत प्रतीक बना लेता है ताकि विरह की प्रदीप्त यज्ञशाला में इन्द्रिय-मेध कर सके। क्योंकि—

जीवन की यही सफलता
जो प्रणय-सिन्धु लहराए
अरमानों की सरिताएँ
चुप-चाप लीन हो जाएँ

और सुन्दरं (भोग) की अतृप्ति को शिवं (योग) की प्राप्ति के लिए साधना बना सके, कवि के 'सद्यः सन्यास का हरापन' यही है—

उतरा न हार कुसुमों का
चढ़ उतरी रंक जवानी
वर्जित मल्हार किसी का
दीपक की करुण कहानी

विरह वास्तव में एक व्यवधान मात्र है, वह तो मूलतः आत्म-प्रसार के लिए एक महान रागात्मक उपक्रम है। वह तो व्यक्ति का अपने आदि स्रोत अथवा अपने जैसे अगणित ज्योति-कणों की समष्टि में मिलकर एक हो जाने का एक निमित्त मात्र है। अतः विरह जीवन के प्रकर्ष-गान के लिए स्वर-संधान न हो, उसकी अजेयता, आशा, उल्लास के संदेश का वाहक न हो तो वह, जीवन को महत्तर नहीं बनाता। "आँसू" में "प्रसाद" ने जीवन को जिस ऊर्जस्विता, अजेयता, और मँगलाशा का संदेश दिया है—

निर्मम जगती को तेरा
मंगलमय मिले उजाला
इस जलते हुए हृदय को
कल्याणी शीतल ज्वाला
× × ×
सबका निचोड़ लेकर तुम
सुख से सूखे जीवन में
बरसो प्रभात हिमकन-सा
आंसू इस विश्व-सदन में

वही उस खारे सागर के मंथन का अ... है। "मूर्च्छना" के कवि का भी समष्टि-जीवन को एक अमृत-संदेश है—

वरदान-तुल्य यौवन का
तू कर उपभोग घना ले
जो शक्ति अकून मिली तो
सुन्दर संसार बना ले
आनन्द-धाम इस क्षण को
तप से अनुकूल बना ले
होकर तू स्वयं किसी का
साकार बना सपना ले

आतिशय्य कहीं-कहीं उसका ही अ... रूप हो जाता है जिसका वह आतिशय्य है—प्रकाश का आतिशय्य प्रभा नहीं, अ...कार, भावनाओं का अतिशय्य मुखर... नहीं, मूकता है। सुख का आतिशय्य दुख है और दुख का अतिरेक सुख। ... के शब्दों में—

सुख-दुख दोनों तब तक हैं
जबतक न पीन हो पावें
तबतक ही निशा तमिस्रा
जबतक न अमा आ जावे

दुख की यह अमा कवि में ऐसी ... होकर आयी है, कि दुख उज्वल सुख ... भी अधिक समुज्वल, समृद्ध, और ... हो उठा है। जभी तो—

सुख माँग रहा था हमसे
दुख की झोली फैलाए
"अक्षय हो कोष तुम्हारा
कुछ भीख हमें मिल जाए"।

[अ]नुप्रास का पतझार से मधु-विन्दु माँगने' [...] अथवा 'अगम आकाश उतरे कंपनों [...] ही भिखारी' जैसा यह महादेवी-सुलभ [चि]त्र कितना रमणीय है। किन्तु मैं कहूँगा [...] जितना आह्लाद रूप-चित्रणों में, जितना [...]लास वेदना की विवृति में, दिखायी [...]ता है, उतना संदेह-कथन में नहीं, मतलब [य]ह है कि उधर फैलाव है, इधर घनत्व।

[ऊ]पर मैंने स्थल-स्थल पर 'आँसू' से [मूर्च्छ]ना' की समता दिखयी है, वह इस[लिए] नहीं कि 'प्रसाद' को मैं हल्का बना [रह]ा था अथवा आलोच्य कवि को सात [...]तों में गिनौना चाह रहा था। प्रयोजन [के]वल यह दिखलाना था कि 'आँसू' और [मूर्च्छ]ना' में प्रायः एक ही परंपरा है, [एक] ही भाव-विधान है, एक ही शब्द-विन्यास [...] फिर भी 'आँसू' की जड़ अनुकृति [मूर्च्छ]ना' नहीं। 'आँसू' की गोपनीयता [...] से लादी हुई रहस्यमयता 'मूर्च्छना' [...] तक नहीं सकी है। भले ही इससे [मूर्च्छ]ना' में गरिमा नहीं आयी, लेकिन [...]का मार्दव नष्ट नहीं हो सका, उसकी [...] कुटिल न हो सकी, उसकी वैयक्ति[क]ता, मांसलता, और ऐंद्रियता, झूठी बौद्धि[कता] और मिथ्या अतीन्द्रियता में खो सी [न]हीं पायी। 'आँसू' में जो झिझक और [...] है—जिसका अतीन्द्रिय प्रेम और [...] के—आरोप के द्वारा मोचन किया गया है—'मूर्च्छना' में नहीं, हां, जैसा अन्[यत्र] कहा गया है, तृतीय खंड में प्रेयसि पुल्लिंग-[...] अलवत्त हो उठी है। किन्तु दो खण्[डों] का संस्कार कुछ ऐसा तीव्र रहता है, [...] उसका पुंसत्व बहुत-कुछ विगाड़ता नहीं [...] झिझक और लाज मानसिक ग्रन्थियों [से] संबन्धित होती हैं। तभी गोपनीयता [के] लिए प्रयास होता है। इस तत्व को जा[न]कर ही 'मूर्च्छना' के कवि ने गोपनीयता का वर्णन किया है। गोपनीयता वह[ीं] संभव होती है जहां अनुभूति सच्ची नहीं, बौद्धिक अथवा मौखिक भर हो, हार्दि[क] नहीं। निगूढ़ आत्म-तत्व की रस-निविड़ अनुभूति यदि न होती तो इतनी द्रवण-शीलता, इतनी आर्द्रता, छलक नहीं पड़ती। स्वीकारोक्तियों में जो संवेदनीयता, प्रभ[वि]ष्णुता, और प्रेषणीयता रहती है, कुछ वैसी ही तल्लीनता 'मूर्च्छना' की है। समस्त काव्य एक अटूट लगन, सतत संधान और मौन आत्म-निलय का परिपाक है। जभी तो कवि की सम्भवत: प्रथम कृति भी शब्द-गत, चित्र-गत, भाव-गत दुर्बलताओं को संजोते हुए भी कितनी प्रौढ़ और कितनी परिपक्व है। मैं कहूँगा कि 'आँसू' में जो व्यञ्जकत्व और घनत्व है, जो सोज और घुलावट है, जो रंगारंगी और बलंदी है, जो नजाकत और टीस है 'मूर्च्छना' में वे उतनी मात्रा में नहीं, और न 'आँसू' की भाषा में जो लोच और कसावट है 'मूर्च्छना' में उतनी ही सशक्त रूप में उतर पायी है। माना कि 'आँसू' भव्य है, प्रणम्य

शेष पृष्ठ २४ पर

राष्ट्रीय शिक्षा की अनिवार्यता

त्रिशूलधारी प्रसाद सिंह
अध्यापक, उच्च विद्यालय, नारायणपुर (भागलपुर)

प्राकृतिक नियमों से मानव जीवन का ात्म्य सदा से ही रहा है। ये नियम ाव जीवन के संस्कारों से जुड़े हुए हैं। ा में धान के बीज का वपन कर हम न की ही फसल पाते हैं। गेहूँ का ज गेहूँ का पौधा ही अंकुरित करता । पीपल का लघु बीज विशाल वृक्ष ा खड़ा करता है। बबूल का बीज कण्ट-ाकीर्ण वृक्ष बनाता है। उसी तरह जैसी ाक्षा होती है, जीवन का तज्जन्य रूप बन ाता है। शिक्षा द्वारा ही जीवन के संस्कार ानते बिगड़ते हैं। यह चिरन्तन सत्य है।

इस संदर्भ में हम देश के संस्थाओं में दी जाने वाली अंग्रेजी शिक्षा एवं तज्जन्य परिणामों को उद्घाटित करना समीचीन समझते हैं। वर्त्तमान शिक्षा की लम्बी पीढ़िका है। इस देश में अंग्रेजों का आगमन हुआ। उन्होंने वाणिज्य-जगत में आशातीत उन्नति की। कई लड़ाइयां लड़कर उन्होंने इस देश पर अधिपत्य स्थापित किया। फलतः उनकी अपनी शासन-प्रणाली चली जिसके लिए विदेशी ढंग की शिक्षा अपरिहार्य हुई। मेकाले ने उसी शासन-प्रणाली को विचार-बिन्दु में रख कर ऐसी शिक्षा चलायी जो भारतीय संस्कृति के सौन्दर्य को विकृत करती हुई अद्यावधि चालू है। अस्तु, इस शिक्षा का चरम उद्देश्य विदेशी शासन के स्थायित्व के लिए प्रशासकों को तैयार करना था। पर आज स्वतंत्र भारत की नव रचना के लिए परतंत्र रखने वाली यह शिक्षा कार्यान्वित की जा रही है। यह एक दुखद स्थिति है।

अब हम शिक्षा के कुछ आधारभूत सिद्धान्तों की चर्चा करते हैं।

मानव कुछ संस्कारों के साथ इस भूतल पर आविर्भूत होता है। ये संस्कार मानव के मन, शरीर एवं हृदय से जुड़े रहते हैं। इनके लिए शिक्षा की अपरिहार्यता होती है। अस्तु, सच्ची शिक्षा के द्वारा ही ह मन, शरीर एवं हृदय का समुचित विकास कर पाते हैं। शिक्षा का मूलभूत लक्ष्य केवल पुस्तकीय ज्ञान का वर्द्धन ही नहीं यह तो कायिक, मानसिक एवं आत्मि विकास का अवसर देती है। इसीलिए तो पुरातन काल में ऋष्याश्रम में ज्ञान-समन्विता शिक्षा प्रदान की जाती थी आश्रम में श्रमदान का सर्वाधिक मह था। छात्र शास्त्रीय शिक्षण के साथ साथ शारीरिक शिक्षण भी उपलब्ध करते थे। अतः वे मेधावी विद्वान, दुर्द्धर्ष यो एवं सफल चरित्र-निर्माता होते थे।

...ने जीवन के संकटों से कठिन संघर्ष कर ...पर विजय प्राप्त करते थे। अपने ...के लिए वे जाज्वल्यमान बलिदान करते ... पर आज की स्थिति कुछ और ही ... आज तो शिक्षा का मूलतम उद्देश्य ...प्रेजियत को अक्षुण्ण रखने वाली डिग्रियां ...प्त कर नौकरियों के लिए दौड़-धूप ...ती है। यह शिक्षा जीवन को एकपक्षीय ...ष्टिकोण प्रदान करती है। यही कारण है ...के सम्प्रति शिक्षा-जगत का वायुमण्डल कलु-...षय बनता जा रहा है।

यह समुज्वल सत्य है कि शिक्षा हमें ...जीवन-दर्शन का परिज्ञान देती है। जो ...शिक्षा जीवन से दूर रहती है वह राष्ट्र-...निर्माण योजना से भी सम्बद्ध नहीं रहती। ...स्तु, वर्तमान शिक्षा से हमारी पंचवर्षीय ...योजना को पूरी शक्ति नहीं मिल रही ..., यह हम प्रत्यक्षतः देख रहे हैं। जिस ...देश के नागरिकों को राष्ट्रीय चरित्र नहीं ..., वह देश अच्छी योजना के बावजूद भी ...अभीप्सित प्रगति की ओर नहीं बढ़ पाता। ...अस्तु, राष्ट्रीय चरित्र के लिए राष्ट्रीय शिक्षा ...की ही अनिवार्यता होती है। हैजे के ...रोगी को प्लेग की टिकिया नहीं दी जाती; ...साधारण ज्वर में मियादी बुखार की औषधि ...का सेवन नहीं किया जा सकता। अस्तु, ...वर्तमान शिक्षा से उद्भूत राष्ट्रविरोधी वादों ...का उन्मूलन राष्ट्रीय शिक्षा से ही सम्भव ...है। हम देख रहे हैं कि देश के शिक्षण-...संस्थानों में भी अन्य विभागों की तरह ...जातिवाद, सम्प्रदायवाद, दलवाद आदि ...विभिन्न वादों की काली घटा छाई हुई है। छात्र, अध्यापक, अभिभावक एवं अधि-कारी एक दूसरे से असन्तोष व्यक्त कर रहे हैं। सर्वत्र इस व्यापक असन्तोष ने शिक्षा-जगत् के वायुमण्डल को विषाक्त कर दिय... है। विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्व-विद्यालय के कार्यालयों में राष्ट्रीय योजना के साफल्य सम्बन्धी उपायों की चर्चा बहुत कम हो रही है। जीवन को राष्ट्र...वाद से अलग रख कर जातिवाद, सम्प्रदायवाद, दलवाद जैसे देशद्रोहात्मक वादों ... निकट रखा जाता है। जो कार्यालय इ... घातक वादों की चर्चा के स्थल होते ... वहां के वायुमण्डल में राष्ट्रीयता का त... सम्मिलित नहीं रह सकता। अस्तु, ऐ... कार्यालय राष्ट्रविरोधी तत्त्वों को ही विकसि... करते हैं। जिस देश के शिक्षण संस्थान... का वायुमण्डल राष्ट्रीय नहीं उसके छा... प्राध्यापक एवं अधिकारी राष्ट्रीय हो ही न... सकते। जबतक वर्त्तमान शिक्षा-पद्धति चा... रहेगी तबतक इन वादों का उन्मूलन न... हो सकेगा।

अब तो देश का जब निर्माण हो र... है। तदर्थ रचनात्मक दृष्टिकोण की आ...श्यकता है। ऐसा दृष्टिकोण राष्ट्रीय शि... से ही बनाया जा सकता है।

भारत के राष्ट्रीय कर्णधारों एवं शिक्ष...विदों को इस दिशा की ओर अविल... ध्यान देना है। जो शिक्षा देश में राष्ट्... चरित्र को निर्मित करने के लिए छा... को नयी प्रेरणा देती है वही राष्ट्... योजना को सफल बना सकती है। वि...

शेष पृष्ठ २७ पर

परा

कुमार विमल

द्वारिका साहु लेन, मुसल्लहपुर, पटना—६

ओ मेरे आत्मस्थ कबीर ! जगो।
बहुत दिनों तक गले में राम की जेउड़ी रखी,
राम का कुत्ता बन मोतिया कहलाते रहे,
पर अब अपनी वह बान छोड़ो।
तुम भी अपने आप में एक लघु ब्रह्माण्ड हो
इसलिये अपनी सिद्धि स्वाबलम्बन से हासिल करो।
ओ मेरे आत्मस्थ कबीर !
जगने दो लय-योग से अपनी कुण्डलिनी को,
जो मूलाधार में सर्प की तरह गेंडुली मार बैठी है।
मेरी बात सच मानो,
कृपा पर कुछ पाना अवरोहण है
और आत्मनिर्भर लब्धि आरोहण है।
सच मानो, अपनी कमाई की रत्ती भी
दान में प्राप्त पर्वत से अच्छी है।
इसलिये अब भक्तियोग भूलकर
ज्ञानयोग-कर्मयोग धारण करो।
सच मानो मेरे कबीर !
एक दिन आत्मनिभर साधना की असम परतों को फोड़कर
सिद्धि का प्रसन्न-मुख ग्लेसियर फुटेगा।
एक 'न आये दिन' की प्रसन्न बेला में
तुम्हारी कुण्डलिनी जगकर,
चक्रों—कमल-पंखुड़ियों को पार करती हुई
सहस्रार को छू लेगी।
और, तब तुम्हारा अबका लघु ब्रह्माण्ड की विराट का पार्याय होगा।
इसीलिये कहता हूँ—
कृपा से प्राप्त सिद्धि तो 'लघु' के द्वारा 'लघु' की प्राप्ति है
किन्तु, आत्मनिर्भर सिद्धि——
मत पूछो मेरे कबीर !——
"अणोरणीयान्' के द्वारा 'महतोमहीयान' का पाना है।

पावस और कोकिल

o : o : o : o : o
गौरीशंकर मिश्र "द्विजेन्द्र"
प्राध्यापक—भागलपुर विश्वविद्यालय
o : o : o : o : o

उठे असमय क्यों सहसा बोल
अमृत - रस श्रवण - पुटों में घोल ?
आज पावस का रिमझिम मोर,
आज न मधु का मधुर प्रभात,
डोलती शीतल आर्द्र बयार
नहीं रे चंचल मादक बात !
आज गीली तरु - तरु की डार,
कहाँ पल्लव का विरल वितान ?
कहाँ लतिका का यौवन - भार ?
कहाँ भ्रमरों की वह कल तान ?
कहाँ म का सौन्दर्य अशेष ?
जिसे भर प्राणो में चुपचाप,
अहे मधु ऋतु के कविवर मान्य !
कूक उठते तुम अपने - आप।
भूल मादकना को वन प्रान्त
मनाते आज पंक में मोद ;
रक्तिमा खोलकर किसलय पुञ्ज
खेलता हरियाली की गोद।
दिये केशर ने तज खर वाण,
मृदुल मंजरियों ने कल मन्त्र
मयद पावस से हार अशोक
नीप को सौंप चुका सब यन्त्र
बरसती थी मीनी मधु गंध
बरसती अब है मूसलधार
घेरती थी शोभा सब ओर
घेरता आज हरित विस्तार

दौड़ते नभ में रहते मेघ,
कूकते रहते वन में मोर,
भला कैसे तुम सहसा शोर
उठे कर इस दुर्दिन के भोर?
ले रहा जग कर भी चुपचाप
नींद की गोदी का आनन्द;
लगा कर धीरे-धीरे हाथ
मल रहा था आंखों को बन्द।
रही अब तक कानों में गुंज
झींगुरों की झीनी झंकार,
दादुरों की ध्वनि कर्कश घोर
कर रही कर्ण-पुटों को पार।
दृगों से हटे रात्रि के स्वप्न,
नहीं मन से छूटा था संग
अचानक कूक उठे तुम बन्धु!
उतर आया ज्यों स्वप्न अभंग।
लगा जैसे कोई सन्देश
दे रहा आत्मा को सविकार,
यक्ष-पत्नी को विरह-विमुग्ध
मेघ ने ज्यों हो दिया उदार।
सुनाई पड़ी इसी क्षण अन्य
पूर्व से कुछ-कुछ गहरी कूक,
निकल ज्यों पड़े शोक-संविग्न
हृदय की छन्दमयी वर हूक।
पहुँच मन गया कल्पना-लोक,
लगा ज्यों दूत काव्य यह अन्य,
वियोगी कोई लिखता आज
ताप पाकर अति वारिद-जन्य
याद आये मन में बहु-बार
करुणातम मेघदूत के श्लोक,
मूर्त्त जिसमें है पावस जन्य
वियोगी कालिदास का शोक।

कूक तुम उठे तीसरी बार,
कल्पना - जग के मैं उस पार;
सामने प्रकट सत्य संसार
टूट सब गया स्वप्न - आधार।
नहीं तुम कवि के मूर्त रहस्य,
न विचरणशील एक स्वर - तान,
नहीं माधव के दूत अनन्य
विहंग तुम, देही बिहग - समान।
तुम्हारा काला - काला रंग
किन्तु, कितना आकर्षक रूप?
स्वर्ण को जैसे मिले सुगन्ध
मिला वैसे कलकण्ठ अनूप।
मधुर मधु की शोभा के बीच
अखिल सुन्दरता की नव सृष्टि
देखकर तुम्हें हुई थी तृप्ति
चारुतान्वेषक कवि की दृष्टि।
न फिर क्यों वह जोड़ें सम्बन्ध
तुम्हारा कुसमाकर के साथ?
तुम्हें पाकर मधुमास कृतार्थ,
और तुम पाकर उसे सनाथ।
मधुर मधु की मादकता - बीच
डूब कर गाये तुमने गान;
सरस वर्षा रिमझिम में आज
जुड़ा लो अपने आकुल प्राण!
जगत में फूलों से जो खोल
सतत करता जो निज शृंगार,
उसे करना पड़ता है बन्धु
नुकीले काँटों को भी प्यार।
नहीं मधुमास, भरी बरसात,
करो टुक गाकर हलका भार;
आये पावस के कोकिल! दूत
मधुर माधव के चिर - सुकुमार।

जवान

रूद्रेश्वरी लाल शास्त्री
क्षेत्रीय कृषि अनुसन्धान, सबौर (भागलपुर)

ओ जवान ! तेरा अभिनन्दन
तुम पौरुष पुंज
तुम हो विराट
तुम हो अर्णव वीचि-विलास
तुम में दया प्रेम और ममता
काल कूट पी जाने की क्षमता
तुम हो भैरव ध्वंस - राग
तुम हो दीपित शान्ति-चिराग
ओ महान ! तेरा अभिनन्दन

(२)

आगे बढ़ चल······
विजिगीषा क्यों मन में हलचल
स्रोतस्विनी का गायन कल कल
करता उत्तेजित तुम को प्रतिपल
आगे बढ़ चल·····
प्रलय शिखा जलती अविरल
प्रतिरोधों का झंकृत पायल
शल्य बना पथ का दुर्बादल
आगे बढ़ चल .....
मेघ मन्द्र सा गुंजित रौरव
रे डोल उठा भय संकुल सब
आंधी में तू हंसता अविकल
आगे बढ़ चल ....
शल्य तल पर बढ़ता पल पल
शैल-आंशु से लेना टक्कर
गति बढ़ा, कर दीर्ण उपल
आगे बढ़ चल·····

शेषांश पृष्ठ १७ का

। किन्तु यह जो 'मूर्च्छना' है, वह वरोह से आरोह के संगीत-ग्रामों के लिए भावनाओं का रम्य प्रकंप है—इस विषय में आश्वस्त हूँ। यदि खिन्न हूं तो केवल सोच कर कि आज जब साहित्य में ते रोध है, सर्वत्र एक घुटन, एक खीझ, सी देखी जाती है, 'मूर्च्छना' का स्थान होगा? जब कि मैं जानता कि यह उस समय प्रकाशित होती जब रची गयी थी तो एक गूँज अवश्य छोड़ती, एक समा अवश्य बाँध लेती। और अन्त में मुझे चन्दन-चर्चित करलेने दीजिए—यद्यपि इसके लिए भी मैं 'शशि' को 'कवि' में बदल कर 'मूर्च्छना' की अन्तिम पंक्तियां ही रखता हूँ—

सौन्दर्य सुभग कवि तेरा
सौभाग्य बने जग का भी
यह मंगल रूप, जगत के
मंगल प्रदीप भग का भी

डा० जानसन : एक साहित्यिक तानाशाह

नन्दकिशोर प्रसाद
शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर

(गतांक से आगे)

यह अपमान, वर्षों तक, उनके अव- ...न मन में जड़ जमाये रहा, भूलने की ...चेष्टाओं के बाद भी वे भूल नहीं पाते। ...अनजाने यह अपमान स्मृति में उभर ...। लेकिन, इससे यह नहीं अनुमान कर ...चाहिए कि उनके मन में श्रीमती ...वेल के प्रति घृणा अथवा क्रोध ने घर ...ना लिया। यह तो उनके विशाल ...त्व एवं महान आत्मीयता का सूचक ...कि उनके मन में किसी प्रकार की खोट ...आई; मैत्री-भाव में फांक नहीं आई। ...के जीवन के उज्ज्वल पक्ष के वर्णन के ...में यह स्पष्ट हो जायगा कि उनके ...द्वारा श्रीमती बासवेल के प्रति आदर ...सूचित करके किस प्रकार जानसन ...उनके मन में एक आदरपूर्ण स्थान बना ...या।"

खाने-पीने के मामले में जानसन अपने ...के अकेले थे। यों तो देखने में वे ...क्षीण-काय एवं दुर्बल थे, पर भोजन ...परिमाण में करते थे और वह भी उत्तम ...का। वे तो यहां तक कहा करते ...कि "कुछ व्यक्ति क्या खाते हैं इसकी ...परवाह नहीं करते, पर वे तो अपने ...की विशेष चिंता करते थे।" उनकी ...में जो अपने पेट की निगरानी अथवा ...नहीं कर सकते वे अन्य बातों की ...चिंता कर सकते हैं? ऐसी तो उनकी धारणा थी। उनके खाने-पीने का ढंग कितना भयानक था इसका वर्णन बासवेल और मेकाले ने बड़े ही सशक्त शब्दों में किया है। शब्द-चित्र आंखों के समक्ष मुखरित हो उठता है। भोजनकाल में उनकी आकृति बड़ी ही विकृत और भयानक हो उठती। वे भोजन पर बड़ी ही तेजी से टूट पड़ते। जब तक भोजन समाप्त नहीं हो जाता, क्षुधा-तृप्त नहीं हो जाती, न आप एक शब्द बोलते और न एक भी शब्द किसी अन्य व्यक्ति का सुनते। उनकी भाव-भंगिमा बड़ी ही विकराल रूप ग्रहण कर लेती, माथे पर की नसें उभर आतीं और सम्पूर्ण शरीर स्वेद-कणों से लथपथ हो जाता। बासवेल की यह उक्ति जानसन के जीवन के दुर्बल पहलू पर ही प्रकाश डालती है।

भोजन पर वे इस प्रकार टूट पड़ते कि लगता जैसे उन्हें वर्षों भोजन से मुलाकात नहीं हुई हो। बड़े-बड़े व्यक्तियों के साथ भी खाने के समय यही अवस्था रहती थी। खाद्यपदार्थ देखकर वे इस प्रकार क्षुधा-विह्वल हो उठते जिस प्रकार जंगली जानवर और शिकारी पक्षी क्षुधा विह्वल हो उठते हैं। मेकाले की इस उक्ति से भी जानसन का एक चरित्रगत दुर्बल पक्ष ही सामने आता है। इतना ही नहीं, खाने के समय तस्तरी को मुँह से एकदम सटा

और बड़ी ही तेजी से बिना चबाये
ो निगल जाते थे। मात्रा का तो
ही क्या ? वे एक बार में अठारह-
प्यालियां चाय पी जाते थे।
इ ठीक है कि जानसन फैशन और
ा के जानी दुश्मन थे, लेकिन उन्हें
अस्वीकार कर सकता है कि वे बड़े
ले-कुचेले ढंग से रहते थे। सादगी
होंने बड़े ही विकृत अर्थ में ग्रहण
जो उचित नहीं माना जा सकता
वस्तुतः सादगी का यह अर्थ है भी
जीवनी-लेखक बासवेल ने भी बड़ी
ानदारी से इस सत्य को स्वीकार किया
र उनके रहने वाली कोठरी, का बड़ा
ाभाविक चित्र उपस्थित किया है। एक
ासवेल जाँनसन से मिलने गया। जाँन-
ड़े ही आदर भाव से मिले, यह स्वीकार
हुए वे लिखते हैं कि उनके रहने की
, लकड़ी के सामान और सुबह में पहनने
ड़े काफी गंदे थे। उनके भूरे रंग के
में काफी जंग लगी दिखलाई पड़ रही
उनके सिर पर एक मैली बनावटी
की टोपी थी, जो उनके सिर के
बहुत छोटी थी; उनकी कमीज के कालर
ाजामे ढीले थे। उनके मोजे काले
काफी गन्दे थे। और, वे बिना फीते
बकसूए वाले जूते को स्लीपर की तरह
में लाते थे।

यों तो जानसन काफी दयाशील, क्षमा-
और सहनशील थे, लेकिन कभी-
उनका क्रोध विकराल रूप में उभर
ा था। जानसन के इस चारित्रिक दोष
की उनके मित्रों ने बड़ी ही कटु आलो-
चना की है।

एगलिटन के अर्ल, स्वर्गीय अलेक्जेंडर को जाँनसन के प्रति बड़ी ही श्रद्धा भावना थी। लेकिन, उनके व्यवहार में क्रोध का पुट देखकर, एक बार शिक्षित व्यक्तियों की मंडली में इन्होंने खेद प्रकट करते हुए कहा, "जानसन न सुसंस्कृत ढंग से शिक्षित ही हुए हैं और न सभ्य एवं संस्कृत समाज में रहे ही हैं।" सिगनर बारेट्टी ने उत्तर दिया, "आप चाहे जो कहें, वे हमेशा "एक भालू रहते तो अच्छा होता।" अर्ल ने हँसकर प्रत्युत्तर दिया, "ठीक कहा, लेकिन वे नाचने वाले भालू होते तो और भी अच्छा होता।"

सच पूछें तो यह सर्वथा अनुचित आलोचना थी, निराधार आक्षेप था। गुण-दोष किसमें नहीं ? उनका यह दोष नितांत वाह्य एवं परिस्थिति जन्य था, आभ्यन्तर अथवा स्वभाव संश्लिष्ट नहीं। अतः कविवर गोल्डस्मिथ ने जो कुछ कहा उसमें पर्याप्त सच्चाई है— "यह ठीक है कि उनके आचार-विचार में रूखापन है, लेकिन जीवित व्यक्तियों में कोई भी उनसे अधिक कोमल हृदय का नहीं है। उनमें भालू के चमड़े की अपेक्षा कुछ नहीं ? अर्थात् कहने का तात्पर्य यह था कि दोष नितांत वाह्य था।

प्रतिशोध की भावना उनमें प्रबल रूप से काम करती थी जो भी उनकी ओर आंखें टेढ़ी करते, वे उनकी दोनों आँखें निकाल लेने को उतारू हो जाते, व्यग्र हो उठते। एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट ही

कि वे अपने प्रति किए गए अनिष्ठ
कार किस प्रकार लेने की आकांक्षा
किस प्रकार उनकी तलवार प्रति-
गर्दन पर लटकती रहती थी।
मक व्यक्ति ने गौरव-मंडित जाँनसन
गत चरित्र का अनुकरण रंगमंच
त कर, उनके सदृश्य बहु-विश्रुत
के महिम व्यक्तित्व की खिल्ली उड़ा
की संपत्ति-लाम करना चाहा। पर
पंथ दो काज" जाँनसन का मजाक
र संपति का लाभ, इस उद्देश्य
द्धि में फुट असफल रहा। यह
न हो कैसे जाँनसन के कान में
वे आग-बबूला हो गये। पुस्तक
डेविड से उन्होंने पूछा, "एक छड़ी
रण कीमत कितनी है ?" उत्तर
पेंस प्रति।" जाँनसन ने कहा—
ो एक शिलिंग की छड़ी आप अपने
ारा मगवा दीजिए। मैं दो छड़ियाँ
क्योंकि मुझे पता चला है कि
ी खिल्ली, उड़ाना चाहता है और
य कर चुका हूँ कि वह बिना दंड
े नहीं कर सकेगा।"
ड ने इस बात की सूचना फुट
ी। फुट संभल गया और एक
ना होते-होते बच गई।

नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण बड़ा ही विचित्र था। अंग्रेजी के विशाल शब्द-कोष का निर्माण डा० जाँनसन ने अठहत्तर वर्ष की आयु में किया था। शब्द-कोष की बिक्री जब खूब होने लगी तब एक वयस्क महिला ने डाक्टर से आग्रह किया कि वे इस कोष से अभद्र शब्दों को निकाल दें। डा० जाँनसन ने कुछ सोचकर कहा — क्या शब्द-कोष में आपने इन्हीं शब्दों की खोज की थी! महिला शर्म से गड़ गई। नारी के प्रति बड़ी ही विकृत दृष्टि उनकी थी। एक बार उन्होंने बड़े ही सबल शब्दों में व्यंग करते हुए कहा था कि औरतों का उपदेश देना कुत्तों को अपनी पिछली टांग पर चलने के समान होता है। और उन्होंने यह भी कहा था, "अच्छे ढंग से पढ़ाना तो उनके वश से बाहर की बात होती है फिर भी वे किसी भी तरह कैसे पढ़ा पाती हैं, यह बात देखकर आपको आश्चर्य ही होगा।"

उनमें लिखने के ढंग भी विचित्र ही थे। एकाग्र चित्त लिखने की उनमें अपूर्व क्षमता थी। जो लिखते उसे दुहराने की जरूरत नहीं पड़ती। अत्यधिक कार्य-व्यस्त रहने के कारण उन्हें समय का नितांत

शेष पृष्ठ ३२ पर

शेषांश पृष्ठ १९ का

स्वदेशी भावना की उत्पत्ति नहीं हो
स्वदेशी भावना के अभाव में राष्ट्रीय
ा गठन नहीं किया जा सकता।
राष्ट्रीय शिक्षा से ही निर्मित हो
है। अस्तु, भारत की पंचवर्षीय
योजना के साफल्यार्थ देश की शिक्षण-पद्धति में आमूल परिवर्त्तन की आवश्यकता है। एकांगी शिक्षण से सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं। राष्ट्रीय योजना के लिए राष्ट्रीय शिक्षा चाहिए।

प्रोफेसर की पत्नी

आशमा

प्रोफेसर उपाध्याय को लगा उनके मस्तिष्क में अंगारे लहर रहे हैं। वे रात को बिल्कुल सो न सके थे। सुबह होते ही वे अपने घर से निकले और शहर में यत्र-तत्र बिना किसी उद्देश्य के घूमते रहे। घूमते-घूमते वे शहर के मशहूर वेश्या गली में पहुँच गये। उन्हें एकाएक मानो अन्त: चक्षु ही खुल गये हों दिव्य-चेतना जग गयी हो—अपने आप जोर-जोर से बोलने लगे, "यही उसके लिए उचित स्थान है।" वे वहां खड़े-खड़े बार-बार यह दुहराते रहे, "यही उसके लिए उचित स्थान है, यही उसके लिए उचित स्थान है।" वे जितने ही अधिक इस वाक्य को दुहराने लगे उतने ही अधिक कठोर होते गये। अन्त में कुछ तय सा करते हुए आगे की ओर कदम बढ़ाया और उस गली में कोई कमरा किराये पर मिलेगा या नहीं ढूंढ़ने लगे। कमरा बड़ी असानी से मिल गया। प्रोफेसर मकान मालिक को तीन महीने का किराया अग्रिम देकर कमरा ले लिया और बाद जल्दी जल्दी अपने घर की ओर बढ़े।

घर आकर वे अपनी उस परम प्रिय युवती पत्नी के पास आकर बहुत देर तक उसे देखते-हुए खड़े रहे। उनका शरीर अब थर-थर कांपने लगा। मन में कोलाहल मचने लगा। ललाट पर स्वेदबिन्दु झलक आये। मगर तुरन्त ही उनके सामने चित्रपट के जैसे एक दृश्य घूम गया—वह दृश्य—वह महाभयंकर दृश्य वह महाघृणित दृश्य, वह असहनीय दृश्य, वह अपमानजनक दृश्य! प्रोफेसर फिर कठोर और दृढ़-चित्त बन गये। जल्दी-जल्दी पत्नी का बिछावन आदि बांधे, कपड़े आदि बक्स में बन्द कर दिये और एक रिक्सा बुलाकर सब सामान उसमें रखवा दिये। फिर पत्नी को उन्होंने लाकर रिक्से में बिठा दिया और स्वयं भी बैठ गये और रिक्सावालों से कहा 'चलो'।

'पत्नी बेचारी जड़ सी बैठी रही। काली मा को चढ़ाये गये बकरे जैसे बैठी रही। वस्तुत: स्त्री का जीवन इससे अधिक है ही क्या? सभी स्त्रियां पुरुष रूपी काली पर चढ़ायी गयी बकरियां ही तो!

प्रोफेसर वेश्या गली में पहुँच सीधे उस कमरे में पत्नी को ले गया और उनके सामान भी उस कमरे में रखकर पत्नी से कहा, "देखो कमला, यह वेश्या गली है। यह कमरा तुम्हारे लिए मैंने किराये पर लिया है। अब यहीं रहो। तुम यहीं के ही लायक हो। अब अपना व्यापार पूरी आजादी से खुलेआम कर सकती हो। छिपाने या

...ने की कोई बात अब न रही। बच्चे ...रे हैं। वे मेरे साथ रहेंगे। मैं अब ...ता हूं। तुम्हें छोड़, हमेशा के लिए। ...ो कुछ भी त्रुटि कभी स्वप्न में भी मेरी रही ...ो तो उसका ख्याल नहीं करना। ...नमस्कार...''

बेचारी पत्नी ने यहां तक उम्मीद नहीं ...की थी। एक छोटी सी गफलत पर यह ...यंकर सजा! वह कटे वृक्ष जैसे प्रोफेसर ...के चरणों पर गिरकर गिड़गिड़ाने लगी—...बाबू, ऐसा न करो, भगवान के वास्ते ऐसा ...न करो। तुम मुझे मार डालो, पर ऐसा न ...करो, ऐसा न करो...'' बेचारी इससे ज्यादा ...कुछ कह भी न सकी। प्रोफेसर उपाध्याय ...ने घृणा से उस शरीर पर लात मारा जिस ...शरीर को उन्होंने लाखों बार दुलार किया था ...और तुरन्त ही वहां से चल दिया।

कमला को याद ही नहीं कब तक वहां ...पड़ी रही। उसे होश तब हुआ जब उसको ...बोध हुआ उसे कोई दुलार रही है, ...सहला रही है, सांत्वना दे रही है। उसने ...आंखें उठाकर देखा तो सामने चार पांच ...महिलाओं को देखा। वह बहुत देर तक ...उन्हें देखती रही। बाद उसने धीरे से पूछा—...तुम लोग कौन हो? उन लोगों ने बड़ी ही ...सहानुभूति से कहा—''बहन हमलोग इस ...गली की वेश्यायें हैं।''

कमला अपनी स्थिति समझ गयी। ...कहने लगा—''कौन स्त्री वेश्या नहीं? जो ...पुरुष की काम तृप्ति के लिए अपने शरीर ...को बेचकर जीवन-निर्वाह करती है सभी तो ...वेश्यायें ही, चाहे वह पुरुष एक हो या अनेकों जो स्त्री स्वावलम्बी होकर जीवन व्यतीत करती है कोई प्रतिष्ठित कार्य करके, वे ही स्वाभिमानी महती स्त्री कहलाने का अधिकारिणी हैं।''

कमला कुछ न बोली। चुपचाप वह पड़ी रही। स्थिति का कुछ अनुमान लगाते हुए आगन्तुक स्त्रियों ने पूछा—अब यहां रहोगी बहन?

कमला ने अत्यन्त क्षीणता और दीनता से उनकी ओर देखते हुए कहा—''हां बहन!''

हे प्रभु, उस दीनता और क्षीणता का वर्णन मां सरस्वती भी नहीं कर सकती।

कुछ क्षण बाद कमला बोली—''बहन मैं मैट्रिक पास हूँ। तुमलोगों को पढ़ाऊँगी और तुमलोगों के बाल-बच्चों को भी पर तुमलोग इसके बदले में पेट भर खाना मुझे दिया करना। दोगी न?

वेश्यायें यह सुनकर आर्द्र हो गयीं कहने लगी—''जरूर जरूर, फिक्र मत करो तुम्हें हम सब मिलकर खिलाऊँगी। तुम आराम से यहां रहो।

कमला बोली—''बहन, तुम्हें एक काम और करना होगा और वह है पुरुष राक्षस से मुझे बचाये रखना। मुझे इस जाति से घृणा हो गयी है।''

वेश्यायें यह सुनकर बोली— ''बहन घृणा के वे पात्र हैं ही। पर हमें उपाय ही क्या रह गया? वे ही तो समाज के शासक हैं वे जो चाहते हैं वही तो धर्म, सत्य, न्याय और परमेश्वर बन जाता है। हमें उपाय ही क्या रह गया? हम तो उनके शौक के नीचे बिल्कुल घृणित कुत्तियों से बढ़कर कुछ भी नहीं हैं।

कमला अब उठकर बैठ गयी। उनका सिसक अब धीरे-धीरे काम करने लगा हुत देर तक वह चुप रही। अन्त में न ाने क्या सोचकर खड़ी हुई और गरजने गी, "मैं उस नराधम प्रोफेसर से बदला ूंगी, बदला लूँगी, बदला, बदला ।

वेश्यायें हड़बड़ाकर उठीं और कमला को पकड़कर जमीन पर बिठा दीं। तब कमला धीरे से बोली-"बहन, तुमलोग घबड़ाओ मत, मैं उनकी हत्या करने नहीं जा रही हूँ। मेरा बदला यही है कि मैं उनसे भी सैकड़ों गुना अधिक विख्यात प्रोफेसर बनूँगी, उनसे भी हजारों गुना अधिक पैसा और यश कमाऊँगी और अब मैं इस देश की द्वितीय सरोजनी बनकर ही दम लूँगी। जब तक यह न कर दिखाऊँगी तब तक मैं गेरुआ वस्त्र पहनूँगी, एक ही शाम खाऊँगी और बिल्कुल मीरा जैसे जीवन व्यतीत करूँगी। मीरा बनूँगी, मीरा, मीरा, मीरा, एकदम मीरा जैसी योगिनी बनूँगी।

इसके बाद वह बहुत देर तक चुप रही। अन्त में न जाने क्या सोचकर वह पगली जैसी हाथ फैलाकर उन वेश्या बहनों के पैर पकड़कर जोर-जोर से रोने लग गयी और प्रलाप करने लगी-'बहन, ओ मेरी प्यारी बहन, ओ मेरी प्यारी मीराओं, बचाओ, मेरी जान बचाओ। मेरा उद्धार करो, मुझे मीरा बना दो, मुझे सरोजनी बना दो। मुझे उस नराधम नरक के कीड़े और व[illegible] से ही भ्रष्ट प्रोफेसर से बदला लेने [illegible] हिम्मत दो मदद करो

वेश्यायें सभी बहुत देर तक चुप रहीं [illegible] बाद उनमें से एक युवती ने कहा, "इसे [illegible] पढ़ाना चाहिए हम भी इनसे पढ़ें [illegible] गली में एक स्कूल खोला जाय। य[illegible] हमारी नेता बनेगी।"

शहर के महिला महाविद्यालय में दू[illegible] ही सप्ताह एक भिक्षुणी युवती आई [illegible] में भरती हो गयी।

अधूरे सपनों का देश

ले० —प्रो० दीनानाथ शरण, रामचन्द्र शर्मा 'किशोर'

प्रकाशक—साहित्य-संगम-प्रकाशन, पटना—४, मूल्य—तीन रुपये पचहत्तर नये पैसे

'अधूरे सपनों का देश' की यात्रा करने का हठात मुझे भी मौका मिला। हास-रुदन, मिलन-बिछुड़न, अन्याय-न्याय, सत्य-असत्य, इन्सान-हैवान, धूल-फूल, एवं प्यार और मजार भी चलचित्र की भाँति नजर से गुजर गये। लेकिन हां, जब तक मैं '......देश का भाव बिह्वल होकर चक्कर काटता रहा—अनेकों ने मजबूर किया गहराई के साथ सोचने को मुझे। खास कर प्रो० शोभन कान्त की असीम वेदना ने तो मेरे जिगर को झकझोर डाला। इस इंसान की मासूम जिंदगी के साथ इसकी जीवन-संगिनी 'कुन्तल' ने त्रिया चरित्र को चरितार्थ करते हुए जिस हैवानियत का परिचय दिया है, वह चाह कर भी नहीं भुलाया जा सकता। और आप हैं मिस्टर गुप्ता—शोभन कान्त के अन्तरंग मित्र—जिन्होंने शोभन जैसे दरिया दिल मित्र के साथ दोस्ती की आड़ में उसकी प्रियतमा कुन्तल के साथ प्यार की रंगीन दुनियां बसाकर बेचारे शोभन को असमय ही जिन्दगी की चिता सजाने को मजबूर किया। हाय रे दोस्त। कृष्ण और सुदामा भी तो एक दूसरे का मित्र ही थे। मीनक हरीन्द्र, जोशी और श्यामली आदि ने एक-एक समस्या उपस्थित कर समय की शिला पर सफल समाधान प्रस्तुत कर पावस के चांद की तरह बादल में छिपते और चमकते हुए आंखमिचौनी खेलते रहे—इससे प्रस्तुत उपन्यास की रोचकता में और भी सरसता आ गयी है।

...सपनों ...से जब वापस आया तो ए ही बात मानस पटल पर अंकित रह गयी वह है लेखक की स्पष्टवादिता। लेख ने जो कहना चाहा है इस उपन्यास माध्यम से वह पूर्णरूपेण सफल रहा है। इ जातिवाद, दलवाद, पैरवीवाद और कुटुम्बव के जमाने में रहकर भी लेखक ने जि कठोर सत्य का उद्घाटन किया है वह प्रशंसनीय नहीं। आज की शिक्षण-सं तो सजा-सजाया मैदान है जहाँ के डि धारी अधिकारी वर्ग मिड्लची राजनीति सफल मदारी के जादू भरे हाथों विवेकशील बन्दर हैं। सरस्वती के प मन्दिर में यह कुकर्म। तभी तो मुल्क भावी दौलत हमारे नौनिहालों की प्रति

किरण विकीर्ण होने के पहले ही तिरोहित हो जाती है।

सर्फ और टीनोपाल से धुली धोती कुर्ता और खजवा टोपी की चलती में मुल्क रसातल को नहीं गया तो क्यों? जोशी ने जो इस उपन्यास का एक साधारण पात्र है, क्या ही अच्छा कहा है—"यह कांग्रेसी राज तो भाई-भतीजों और कुटुम्ब-कबीलों का राज है। परिषद् और अनुसन्धान-मंडल के नाम पर सरकारी पैसे बेतरह बर्बाद हो रहे हैं। नेतावाद के इस रंगीन जमाने में औरतों की तो और बन आई है। नायलन की साड़ी, मखमल का ब्लाउज, ओठों पर लिपस्टिक, गले में गजरा और नयनों में कजरा तथा काले-काले सावन-घटा की तरह लहराते बाल, मस्ती भरी चाल और फूटती हुई मधुर मुस्कान ने तो हमारे मिनिस्टरों को लोटन कबूतर बना दिया है। फिर क्यों न उसे ही टिकट मिले? लेकिन याद रहे ये वाक्य 'जो एम० एल० ए०, एम पी, या मन्त्रिणी, उपमंत्रिणी होती हैं, तो उसे क्या। कितनों को खुश नहीं करना पड़ता! और औरतें किसी को खुश कर सकती हैं। खुश कर सकती हैं तो प्रकृति से जो उन्हें मिली है बस एक ही चीज से...एक ही चीज से जो चमड़े की है और देने से घटती भी नहीं।"

कुछ भी हो, देश-काल, भाषा-शैली, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन और अपने उद्देश्य का ख्याल रखते हुए लेखक द्वय सफल रहे हैं। इस अभिनव प्रकाशन के लिए लेखक द्वय को अँगूरी बधाई।

महेन्द्र नारायण 'मस्ताना'
शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर

शेषांश पृष्ठ २७ का

अभाव रहता था, अतः चाह कर भी वे दुहरा नहीं पाते थे। बिना एक बार दुहराये ही हस्त लिखित प्रति को प्रकाशनार्थ भेज देते थे और प्रकाशित रूप में ही दुसरी बार पढ़ पाते थे। क्या मजाल कि उनमें भाषा सम्बन्धी त्रुटियाँ रह जाय। एक बार उनके मित्र जोशुआ ने पूछा कि आखिर वे किस प्रकार शीघ्रता से लिखने के बावजूद गतिपूर्ण एवं परिमार्जित भाषा लिखने में सिद्धहस्त हो पाए। उत्तर में उन्होंने बतलाया कि साहित्यिक जीवन के प्रारंभ में ही किसी भी विषय को किसी भी समय गतिपूर्ण एवं सशक्त शैली में प्रयत्नपूर्वक व्यक्त करने का उन्होंने नियम-सा निर्धारित कर लिया था। इस क्रम का अनवरत अनुकरण करने के उपरान्त वे किसी भी विषय को सुसम्बद्ध, गतिपूर्ण एवं प्राणप्रद शैली व्यक्त करने में पूर्ण अभ्यस्त हो गए। निष्कर्षतः उनकी उक्ति से स्पष्ट है कि भाषा पर अपूर्व अधिकार प्राप्त करने के लिए यह परमावश्यक है कि लेखन-कार्य अनवरत रूप से जारी रहे, ताकि क्रमबद्ध विकास एवं क्षमता प्राप्त करने में सहूलियत हो।

वैदिक अणुशक्ति

सत्कर्म ही शरीर को और मन को शुद्ध कर सकता है। अग्नि शुद्ध कर्मों शुद्ध नियमों वाला है। जठराग्नि शरीर में सर्वत्र व्याप्त है और अन्न से को पैदा करना है। इस रस को प्राण के बल पर शरीर पान करता है। और शरीर दोनों मिलकर आत्मा को धारण किए हुए हैं।

जननायक को भी अग्नि जैसे शुद्ध कर्मों और शुद्ध आचरणों वाला रहना हिये। जननायक के सहकर्मीगण को अपने नायक के अनुकूल और अनुरूप और ...हरकर राज्य के ऐश्वर्य को बढ़ाने के यज्ञ में सदा सक्रिय रहना हिये। राष्ट्र में ऐश्वर्य को लाना ही सर्व श्रेष्ठ अध्यात्मिक अनुष्ठान है और इस में व्यस्त रहना ही उस ऐश्वर्य को भोगना भी है। राष्ट्र में दुर्व्यसन व्याप्त ना सामूहिक नाश का अन्तिम सूचना है। दुर्व्यसनों का संहार किये बगैर र्य का पदार्पण राष्ट्र में असंभव है।

सम्पूर्ण राष्ट्र ही यज्ञ वेदी है। दानशील, दिव्यगुणों से युक्त, दुर्व्यसनों से मुक्त, नाभिलाषी वीर पुरुष ही राष्ट्र निर्माण यज्ञ में अपने उत्तम व्यवहारों द्वारा योगदान सकते हैं। ऐसे कल्मष हीन व्यक्ति ही राष्ट्र नायक के सहकर्मी बनने के अधिकारी हैं।

कोई भी परमेश्वर के साक्षात्कार किये बगैर सात्विक और शुद्ध आनन्द रस का न नहीं कर सकता। सार्वभौम सुख को वे ही चख सकते। इस लिये ज्ञानी पुरुष मेश्वर तत्व का साक्षात्कार करना ही जीवन में सर्वश्रेष्ठ और परम आवश्यक कार्य सकते हैं। उसी प्रकार के ज्ञानी पुरूष ही राष्ट्र का बल है, मानवता की शोभा है और क नायक बनने का अधिकारी है।

अनन्त तेजोमय अति सुखकारी रमण करने योग्य आनन्द स्वरुप रस सागर सब कार के ज्ञान और बल के आदि सत्ता है आत्मा और उस परम जाज्वल्यमान अवि-नाशी आत्मा को यह शरीर ही धारण किये हुए है। अतः हमें इस शरीर के प्रत्येक अंग से, नाड़ी से, रक्त के कण-कण से, आचार से प्रत्येक स्पन्दन से उस आत्मतत्व को ही वाहित और प्रकाशित करते रहना चाहिये।

उस आत्मतत्व की अनन्त विभूतीमय रहस्यभरी शक्तियों के सम्बन्ध में निरन्तर ध्यान करते रहने से ही उसका समुचित रसास्वादन और प्रकाशन संभव है। इस प्रकार निरन्तर ध्यान करते अनुभव करते रहने की भीतरी क्रिया को ही आराधना अथवा उपासना कहते हैं। किसी भी वस्तु की कीमत जबतक आप अनुभव नहीं करते स्वीकार नहीं करते तबतक वह आप के लिये अगम्य दुरूह और बेकार ही सिद्ध होगा। इस अनुभव करने की क्रिया को ही साधना कहते हैं।

।*। भारत में बिहार का स्थान ।*।

रांची स्थित भारी उद्योग निगम द्वारा उत्पादन के विधिवत उद्घाटन के लिए प्रधान मंत्री का शुभ गमन बिहार के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है। इसी प्रकार के अन्य उद्योग रांची, बोकारो, जमशेदपुर, बरौनी आदि स्थानों में भी स्थापित किये जा रहे हैं।

कृषि के क्षेत्र में राज्य की तृतीय योजना के प्रथम तीन वर्षों में ५.६५ लाख टन अतिरिक्त अन्न का उत्पादन हुआ। पूरी योजना काल के लिए २०.२७ लाख टन का लक्ष्य निर्धारित है। इस प्रकार लक्ष्य का ३८ प्रतिशत पूरा किया जा चुका है।

राज्य की २५५.६३ लाख एकड़ कृषि योग्य भूमि में से २०.६६ लाख एकड़ भूमि में सुनिश्चित सिंचाई की व्यवस्था की जा चुकी है। तीसरी योजना काल के लिए २७.८२ लाख एकड़ का लक्ष्य निर्धारित है।

राज्य के ७२ प्रतिशत छात्रों की प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था की जाने वाली है। पचास प्रतिशत हाई स्कूलों को हायर सेकेन्डरी स्कूल में परिवर्तित किया जा चुका है। पूरी योजना-काल में शिक्षा के मद में ३४०३ लाख रुपये व्यय करने का लक्ष्य है।

राज्य सरकार ने मलेरिया तथा चेचक उन्मूलन का राज्य-व्यापी आंदोलन जारी किया है। राज्य के तीनों मेडिकल कालेजों से प्रतिवर्ष अधिक संख्या में चिकित्सा स्नातक राष्ट्र की सेवा के लिए तैयार हो रहे हैं।

—जन-सम्पर्क विभाग द्वारा प्रसारित

कवियों से

चीन की बर्बरता तथा सीमा-विस्तार की निति के प्रतिक्रिया स्वरूप भारत के जन-जन में राष्ट्रीय जागरण लाने के निमित्त 'हिन्दी-साहित्य-परिषद् की ओर से "आह्वान" (गीत संग्रह) अद्भुत सज-धज के साथ प्रकाशित करने का निर्णय किया गया है। अतः सभी कवियों से अनुरोध है कि वे अपनी दो-दो कविताएँ, जो राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत हैं, पांच पांच रुपये के साथ अविलम्ब भेजने क कृपा करें प्रकाशन के बाद प्रत्येक कवि को पांच रुपये की प्रतियां भेज दी जायगी। यह प्रकाशन सर्वथा सहयोग पर ही आधारित है। रचनायें तथा राशि निम्न पते पर आनी चाहिए।

"आह्वान"
हिन्दी साहित्य परिषद्
मन्दार विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार)

अमरावती प्रकाशन

१ दीपाराधना—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—५)
२ बिखरे हीरे—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—१)
३ हिन्दी आंदोलन—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—२)
४ अनामंत्रित मेहमान—आनन्द शंकर माधवन मूल्य १)
(बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा पुरस्कृत उपन्यास)
५ अनल शलाका—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—२)
६ Mandar Speaks—आनन्द शंकर माधवन मूल्य—२)
७ कागल फुलनियां के धक्का – रामनारायण सिंह 'मधुर' मूल्य १.२५
८ खलिल जिब्रान—भरत कुमार शाह मूल्य—५)

प्राप्ति स्थान
अमरावती प्रकाशन
डाकघर—मंदार विद्यापीठ
जिला—भागलपुर (बिहार)

शेषांश पृष्ठ ८ का

अवहेलित लेखकों और कथाकारों कवियों हिम्मत न हारो। पूंजिपतियों द्वारा संचालित के खरीदे गये पिठ्ठुओं द्वारा सम्पादित तथा [illegible] चित्रों से सुसज्जित देश डुबाने में प्रस्तुत इन आधुनिक पत्र-पत्रिकाओं में तुम्हें स्थान नहीं मिल सकता। अपनी ही मेहनत से प्रेस खड़ा करो, पत्र-पत्रिकाओं को चालू करो और उसी को तुम नी अमेय रचनाओं से सजाओ कि देश की ये आसुरीवृत्तियां उसमें भस्म हो जाय देश ऐसा है जहां का नारा यह रहा है 'सवालाख से एक लड़ेगा''। इसलिये हे कवि, र तू सचमुच कवि है तो बिरला डालमियां की पत्रिकाओं के मुकाविले में अपने स्वेद दों के बल पर पत्रिकायें खड़ी करो और देश के इन अवसर सेवी राजनीतिज्ञों को कार कर कहो, हिम्मत है तो अपने भीतर से चाणक्य को दर्शा, नहीं तो मैदान छोड़ दे, पढ़ी-लिखी लड़कियों से कह दो तुम्हारा बल और सौन्दर्य तुम्हारा वह शरीर नहीं, उस का चित्र अखबार में छपने देना भी एक प्रकार का व्यभिचार करना ही इन लड़कों को कह दो, देश का निर्माण करना ही तुम्हारा काम है। और इस के इन अनगिनत जिंदे लाशों पर अमृत वर्षा करके उन्हें सजीव और पराक्रमी दो इसमें जब तू सफल होने लगोगे तभी हिन्दी की प्रतिष्ठा बढ़ेगी, और देश प्रतिष्ठा बढ़ेगी। संसार में हिन्दी की प्रतिष्ठा जब तक स्थापित न होगी तब तक रतवर्ष का सिर ऊंचा न उठने का। हिन्दी के कवियों और लेखकों, पौरूष ओ, भविष्य तुम्हारा है, अपने उस फौलादी कलम से वेदव्यास को प्रकट के संसार को दर्शा दे हिन्दी की और भारतवर्ष की भी मान प्रतिष्ठा बचाने का कोई भी उपाय नहीं। हम आज अपने ही घर में अपने ही लोगों द्वारा अपमानित ! यह त्यौहीनी हम कैसे वर्दास्त कर रहे हैं?

जवाहर लाल नेहरू

भारत के पढ़े-लिखे (?) लोगों में समय समय पर तरह-तरह के रंग चढ़ते हैं। और तब यहां के वायुमण्डल में ये लोग जो आंधी खड़ा करते हैं, उससे अगर कोई अछूता रह जाता है तो वह न यहां के साहित्यिक है, न अध्यापक, न धार्मिक साधु सन्त ही। महामेरू जैसे सब प्रकार के तूफानों को भी तृणतुल्य समझ अडिग रहने वाले यहां का अनपढ़ जन-समूह है। आंधी भी, जैसे गुरूदेव रवीन्द्र नाथ कहते हैं, न जाने कहां से उठती है और कहां गायब हो जाती है। अपने जीवन में ही मैंने कई आंधियां देखी है। एक जमाना था जब कि खादी का फैशन था, आज उसे कोई नहीं पूछता। उसका मान कैसे उठा और गिरा इस का इतिहास अलग है। फिर एक युग आया, कम्यूनिष्ट कहलाना ही वौद्धिक प्रखरता

का परिचायक था और परमेश्वर एवं धर्म के खिलाफ आवाज उठाना क्रांति और अब नेहरू के खिलाफ अनाप-शनाप बकना ही राजनीतिक-चेतना, देश-प्रेम और बुद्धि-शक्ति का प्रमाण है। भारतीय जनता अगर समझदार न रहती तो जवाहर लाल नेहरू अबतक अरब समुद्र में फेंका गया रहता और साथ-साथ ये ज्ञानी लोग भी अबतक पूर्तगाल बीनेयों अथवा अन्य किसी विदेशी शक्तियों की जूतियों के नीचे रगड़ा गया होता। यह समझे आज कौन हैं कि भारत पर चीन या पाकिस्तान या अन्य कोई विदेशी राष्ट्र अबतक नहीं रौंदा तो वह यहां के राष्ट्र नायक की कूटनीतिक सफलता का ही ज्वलन्त परिचायक है। युद्ध को रोक रखकर देश को वह कहां से कहां पहुँचा दिया यह जो जानना चाहते हैं वे १९४७ में कांग्रेस सरकार ने कितने करोड़ रुपये का बजट बनाया और आज वह कितने का बजट बना रही है इसे तुलनात्मक दृष्टि से देखें बाद इस देश के विविध मुखी निर्माण सम्बन्धी कार्यों का सूक्ष्मता से अध्ययन करें। गाली देना और परिहास व्यंग आदि कसना ही जन्मजात खानदानी संस्कृति है तो उसका स्वतंत्रता को क्यों प्राप्त है, वह भी किसके चलते हुई यह भी मेहरबानी करके समझने का प्रयास करें। सारे उपद्रव ये राजनीतिक व्यक्ति ही पैदा करते हैं। मुंह में जहरीले शब्दों को भरे और मस्तिष्क में दुर्भावनों और दुर्विचारों को लादे वर्ग सर्वत्र विचरण करते हैं बगैर किसी धन्धे या योजना के। यह समझता है बोलना ही सब से बड़ा कार्य है। बोलना भी एक कार्य अवश्य है। पर विकासोन्मुख हो, क्रियात्मक हो, परगुणान्वेषक हो। ये निष्क्रिय बोलने वाले ही देश के वातावरण गन्दा करते रहते हैं। बार बार आवाज बुलन्द करते हैं सरकारी अफसर, सभी बेईमान हैं, घूसखोर हैं। मैं यह दावे के साथ कहता हूँ घूस और बेईमानी इंगलैन्ड, फ्रांस और अमेरिका में जितना है, नाना प्रकार के चारित्रिक गन्दगियां तथा कथित सभ्य देशों में जितने हैं उतने सचमुच भारतवर्ष में नहीं हैं। पर वे सामूहिक-जीवन और राजनीतिक कारोबार हमलोगों से अधिक परिष्कृत अवश्य हैं मगर यह न समझिये वहां घूस और बेईमानी एकदम नहीं। प्रोफ्यूमो-कीलर के थे? कीलर किस देश की थी? आदमी तमाम करीब-करीब बराबर ही हैं दो-चार डिग्री आगे-पीछे रहते हैं, इतना ही भेद रहता है। घूस, जिसे बिलायत speed money कहते हैं अगर कम कहीं है तो वह जरमनी में है। व्यक्तिगत रूप से वे इन सब मामलों में यूरोप में सबसे बेहतर है। रूस और चीन आदि अधिनायकत्ववादी देशों में इन सब चीजों को कौन पूछे किसी भी चीजों के लिये जनता आजाद नहीं है। इसलिये हमें अपने को हीन समझने की जरूरत नहीं है। सोलह वर्ष के स्वाधीन जीवन में हमने जितना काम किया है

ना सचमुच संसार में किसी भी देश ने नहीं किया। ऐसा अगर कोई कहता तो वह सिर्फ हल्का है प्रचार है शब्द-युद्ध है। और इस शब्द-युद्ध में अधिकत्व देश वाले अधिक निपुण रहते हैं। झूठ बोलना भी एक कला, एक विशिष्ट पुणता बन गयी है। हमारी सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि हम यह नहीं नते हैं हम स्वयं कितने श्रेष्ठ हैं, हमारे नेता और उनके कार्य कितने निस्वार्थ र महान रहे हैं, हमारे साहित्यिक और अन्य क्षेत्रों के कार्य-कर्ता कितने योग्य र समझदार हैं, स्वयं हमारी जनता भी कितना ठोस और पवित्र है। अगर जवाहरलाल नेहरु को हम मैकमिलन से किसी भी दृष्टि से कम समझते हैं तो यह मारी मूर्खता ही नहीं बेईमानी भी है। हमारे लोक सभा के सदस्य अन्य देश लोकसभा के निष्क्रिय सदस्यों से जरूर बेहतर हैं। यह हमारे भीतरी उत्कण्ठा चलते हो कि हम जल्द से जल्द आगे बढ़ जांय, बेहतरीन देश बन जाय, हम इन परम योग्य नेताओं को रात-दिन बुराभला कहने लग जाते हैं। एक-दो बातें सरकारी तौर पर करें तो देश के भीतर की बहुत सी गलत फहमियों को आसानी मिटाये जा सकते हैं। वह यह कि प्रथम हमें यहां के राजनीतिक कार्यकर्ताओं को साल में कम से कम एक बार भारत भ्रमण के लिये भेजना चाहिये और वे सर्वत्र घूम कर देश के विविध भाग के औद्योगिक क्षेत्रों को और कार्यों को देखें और अध्ययन करें और बाद कुछ समझने की भी मेहरबानी करें कि यह अनुष्ठान यहां के लोगों द्वारा ही सम्पादित हो रहा है। बाद वे हमारे सीमा प्रदेश की गतिविधि और अपनी तैयारिओं को भी जाकर देखें। चीन या पाकिस्तान आज आगे नहीं बढ़ता तो इसलिये नहीं कि वह ऐसा करना नहीं चाहता, इसलिये है कि उन लोगों ने भारत की तैयारियों को देख लिया है, जान लिया है; यहां के औद्योगिक प्रगति को देख समझ लिया है। बेकाम बैठने से भी आदमी के दिल सड़ने लगते हैं! राजनीतिज्ञों साहित्यकारों अध्यापकों और विद्यार्थियों को बराबर अपने देश के विविध औद्योगिक और शैक्षणिक क्षेत्रों का भ्रमण करते रहना चाहिये। इससे उनके मिजाज में उन्मेष और विचार में ताजगी और अपने देश के प्रति अभिमान जगने लगते हैं। मैं नम्रता से पूछता हूँ कितने पत्र-सम्पादक या सोश्यलिष्ट या जनसंघी कार्यकर्ता बाकरा या दामोदर के बांध देखे हैं? कितने दुर्गापुर या भिलाई या रूड़रकेला के कारखाने देखे हैं? हाटिया या पिंजोर या कानपुर या बेंगलोर के औद्योगिक क्षेत्रों का निरीक्षण किया है? एकबार घूम आइये। पैसा नहीं है तो भीख मांग कर भी कम से कम अपना देश घूम घूम कर देखना चाहिये। विदेश न घूम सकें तो कोई बात नहीं अपना देश घूमना बहुत ही जरूरी है। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों के लिये यह पाठ्यक्रम का एक अवश्यक अंग ही बन जाना चाहिये।

घूमने से बढ़कर कोई अध्ययन नहीं। देश घूम-घूम कर देखे बगैर मनुष्य शिक्षित नहीं हो सकेगा। सरकार को इसकी सुविधा प्रदान कर देनी चाहिये। इससे बहुमुखी लाभ होगा।

जवाहर लाल नेहरू की जय बोलने में मुझे कोई स्वार्थ नहीं है। मुझे अपनी गरीबी उनकी मेहरबानी हासिल करके मिटाना नहीं है। मैं अपनी गरीबी से शर्मिन्दा नहीं हूँ बल्कि मुझे अभिमान है। देश के इस संकटमय वेला में यथासंभव पुरुषार्थ मैं भी कर रहा हूँ। मुझे जवाहर लाल नेहरू से इसलिये प्रेम है कि वे उस के अधिकारी हैं। इस उमर में भी ऐसा तीक्ष्ण मस्तिष्क, इस उत्कट कर्मशक्ति और यह ईमानदारी और देशप्रेम सचमुच ही एक दुर्लभ चमत्कार है। उनके न जाने के बाद की स्थिति कौन कह सकता है। पर अभी मौजूदा हालात में उनके टक्कर का जनप्रिय नेता अन्य कोई भी भारतवर्ष में नहीं है। और जनप्रियता मुफ्त नहीं मिलती है। क्यों ये होशियार लोगों जनप्रिय नहीं बन जाते? और भी बहुत बोलते हैं, बहुत ज्ञानी हैं, और बहुत त्याग भी करते हैं। क्यों जन हृदय सिंहासन आप को प्राप्त नहीं होता? इसका भी अन्वेषण किया जाय। समालोचना और निन्दा-शिकायत करना। आप अपनी होशियारी द्वारा व्यक्तित्व के परिचय द्वारा उनको नहीं, अपने को ही जनहृदय से गिरा रहे हैं यह आप समझ नहीं रहे हैं! भगवान करे यह विश्व-वख्यात भारतीय नेता युग-युग जिये क्योंकि उनके हाथ में यह देश सुरक्षित है, बिकासोन्मुख है और अशोक और अकबर के उन स्वर्णमय युग की ओर फिर अग्रसर हो रहे उनके नानामुखी बिपरीत शक्तियों को नष्ट करके उनके मार्ग को प्रशस्त करके देना ही हमलोगों का आजका परम पुनीत कर्तव्य है। हमारा यह प्रजातंत्र की राज्यव्यवस्था में ही ऐश्वर्य और समृद्धि सुख और स्वतन्त्रता संभव है। आर्थिक और शैक्षणिक उन्नति भी जितने प्रजातंत्रीय देशो में संभव है उतना अधिनायकत्व देशों में संभव नहीं है। क्यों कि प्रजातंत्रीय देशों में ही व्यक्तिगत प्रतिभा और व्यक्तिगत उद्योग का नवनव हप विकसित हो सकता है। हर क्षेत्र का प्राइवेट सेक्टर के अनुष्ठान ही देश को उन्नत शिखर पर पहुँचा सकेगा। उत्साह और कार्य-क्रम का सतत विकास संभव है। इसलिये हमें जरूरत पड़ने पर अपना सर्वस्व त्याग कर भी इस प्रजातंत्रीय राज्य व्यवस्था की चिराग को सदा जलाये रखना चाहिए। अमेरिका के नये प्रेसिडेंट अपने उस अत्यन्त मार्मिक भाषण में, जिसे प्रत्येक राजनीतिज्ञ को और कम से कम प्रेसिडेंट अयूब को प्रति-दिन एक बार जरूर पढ़ना चाहिये, कहा था, कनेडी के जीवन भर का माथा दर्द, राज्य-व्यवस्था-सम्बन्धी और विश्व व्यवस्था-सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाना और सुचारू रूप से चलाना नहीं था, बल्कि अपने ही लोगों के पारसपरिक फूट, कलह और निम्नता से उत्पन्न विषमताओं को सामना करने में था। यही बात आज नेहरू की भी समस्या है।

प्राच्य भारती

का

वार्षिक विशेषांक

१५ जनवरी १९६४ को प्रकाशित होगा। [illegible] लिपियों [illegible]न लेखकों, तपस्वी कवियों और निस्वार्थ सार्वजनिक कार्यकर्ताओं से निवेदन है कि वे अपनी-अपनी रचनाओं से राष्ट्र निर्माण और साहित्य सृजन के हमारे इस महायज्ञ में योगदान दें। हमारे साधन कम हैं, प्रेस छोटा है, अतः काम बहुत पहले ही आरम्भ [illegible] पड़ता है। इसलिये प्रार्थना है कि रचनायें शीघ्र ही निम्नलिखित पते पर भेज दें।

सम्पादक
प्राच्य भारती [illegible]
पो०—मन्दार विद्या[illegible]
जि०—भागलपुर, बि[illegible]

मन्दार विद्यापीठ प्रेस में आनन्द शंकर माधवन द्वारा मुद्रित एवं हिंद[illegible] परिषद द्वारा प्रकाशित

PRACHIYA BHARTI

APRIL-NOV 1963 G.K.U